

नमस्कार स्वाध्याय

[प्राकृत विभाग]

जे णं एस पंचमंगलमहासुयक्खंधे से णं सयलागमंतरोववत्ती
तिलतेलकमलमयरंदव्व सव्वलोए पंचत्थिकायमिव ।

[जेम तलमां तेल, कमलमां मकरंद अथवा सर्वलोकमां पंचास्तिकाय व्याप्त छे तेम आ पंचमंगलमहाश्रुतस्कंध सकल आगमोमां व्याप्त छे।]

—श्रीमहानिशीथसूत्र, न स्वा पृ ४१

अनुवादक

पन्यास श्री धुरंधरविजयजी गणिवर्य
मुनिवर्य श्री जंबूविजयजी
मुनिवर्य श्री तत्त्वानंदविजयजी

संशोधक

मुनिवर्य श्री तत्त्वानंदविजयजी

प्रयोजक

अमृतलाल कालिदास दोशी, बी ए

प्रकाशक

जैन साहित्य विकास मण्डल बम्बई ५७

प्रकाशक
नवीनचन्द्र अंबालाल शाह, एम.ए.
मंत्री, जैन साहित्य विकास मण्डल
११२, घोडबंदर रोड, इरलाब्रीज
विलेपारले, मुम्बई – ५७

प्रथम आवृत्ति
५००
ईस्वीसन १९६१
विक्रम संवत २०१७
मूल्य: रु. २०

मुद्रक
(१) लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी
निर्णयसागर प्रेस
२६–२८, कोलभाट स्ट्रीट, मुम्बई २
(२) वि. पु. भागवत
मौज प्रिंटिंग ब्यूरो, खटाउ मकनजी वाडी
गिरगाव, मुम्बई ४

अनुक्रमणिका

पृष्ठ

१ मङ्गलपञ्चकम् ५

२ निवेदन ६

३ यन्त्र-चित्र सूचि १२

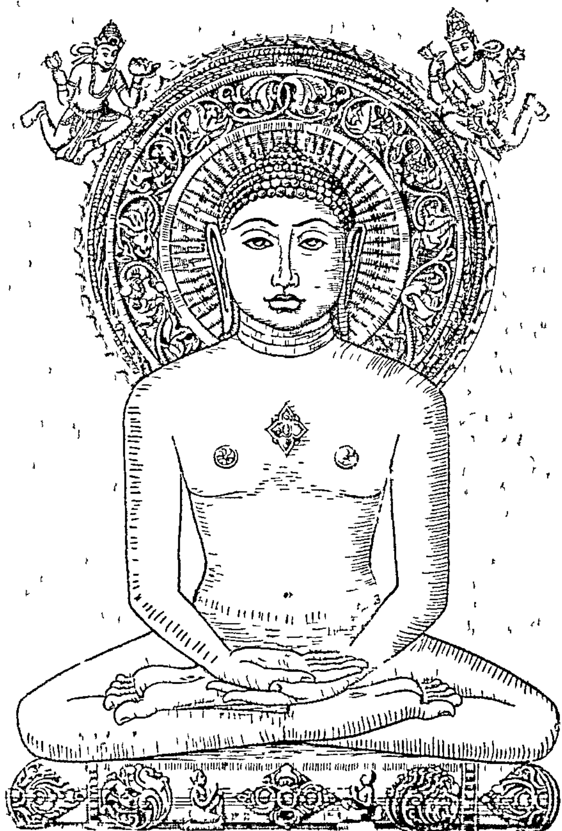
४ यन्त्र-चित्र परिचय १३

विषयानुक्रम

क्रमांक	विषय	पृष्ठ
(१)	भगवईसुत्तस्स मंगलायरण (श्रीअभयदेवसूरिरचिता भगवतीसूत्रवृत्ति)	१
*(२)	सततु स्मरणेषु प्रथम नमस्कारस्मरणम् (१) श्रीसिद्धिचन्द्रगणिकृता व्याख्या (२) श्रीहर्षकीर्तिसूरिकृता व्याख्या	१०
*(३)	नमस्कारान्तर्गत पदविशेषानेकार्थाः (१) पण्डितगुणरत्नमुनिवरकृता नमस्कारप्रथमपदार्था (२) आगमिक श्रीदेवरत्नसूरिरचिता नमस्कारमन्त्रान्तर्गत 'नमो लोए सव्वसाहूण' पञ्चमपदगत 'सव्व' शब्दस्यानेकार्था	१४
(४)	सिरिमहानिसीहसुत्तसदब्भो	३६
(५)	चैत्यवंदनमहाभाष्ये नमस्कारसूत्रस्य उल्लेख	६४
(६)	सिरिमाणदेवसूरिरइय उवहाणविहिथुत्त	९३
(७)	वद्धमाणविज्जाविही	१०४
(८)	भयवया सिरिभद्दबाहुसामिणा विरइया सिरिआवस्सयसुत्तगया णमोक्कारणिज्जुत्ती	१११
(९)	श्रीपुष्पदन्त—भूतबलिप्रणीतस्य श्रीवीरसेनाचार्यरचितधवलाटीकया समन्वितस्य षट्खण्डागमस्य सदर्भ । (छक्खडागमसदब्भो)	१६५
(१०)	अरहतणमोक्कारावलिया — अर्हन्नमस्कारावलिका (श्रीअर्हतोऽष्टोत्तरशतगुणवर्णनम्)	१८४
(११)	सिद्धणमोक्कारावलिया — सिद्धनमस्कारावलिका (श्रीसिद्धपरमात्मनोऽष्टोत्तरशतगुणवर्णनम्)	१९४
(१२)	अरिहाणाइथुत्त [पचपरमिट्ठिनमुक्कारथुत्त]	२०४
(१३)	श्रीभद्रगुप्तस्वामिप्रणीत पञ्चनमस्कारचक्रोद्धारविधि [पञ्चपरमेष्ठिचक्र, वर्धमानचक्र वा]	२१३
(१४)	ध्यानविचार	२२५
*(१५)	सिरिमाणतुंगसूरिविरइय नवकारसारथवण	२६१
*(१६)	श्रीमानतुङ्गसूरिरचित नवकारसारथवणस्य नमस्कारव्याख्यानटीका	२७१
(१७)	कुवलयमालासदब्भो	३३९
*(१७अ)	परमेष्ठ्यादिपदगर्भितम् आदय	३६०(७)
(१८)	सिरिजिणचन्दसूरिविरइय पचनमुक्कारफलथुत्त	३६३

नोंध —प्रत्येक स्तोत्रनो अनुवाद तथा तेनो टूक परिचय साथे न आप्यो छे अने जे स्तोत्रनो अनुवाद नथी तेनो आगळ * एवु चिह्न कर्यु छे।

क्रमांक	विषय	पृष्ठ
(१९)	पंचनमुक्कारफलं	३८०
(२०)	सिरिजिणदत्तसूरिविरइय नमुक्काररहस्सथवणं	३८६
(२१)	सिरिजयचंदसूरिविरइयं पण्हगब्भं पंचपरमिट्ठिथवणं	३८९
(२२)	चउव्विहज्झाणथुत्तं [चतुर्विधध्यानस्तोत्रम्]	३९६
(२३)	सिरिजिणकित्तिसूरिरइयं सोवण्णवक्खासमेयं पंचपरमिट्ठिनमुक्कारमहथुत्तं	३९९
(२४)	परमेट्ठित्थयं	४२६
(२५)	सिरिगणिविज्जाथुत्तं	४२७
(२६)	पंच-महा-परमिट्ठि-संथयं	४३५
(२७)	पंचपरमिट्ठि-जयमाला	४३६
(२८)	नवकारलहुकुलकं	४३८
(२९)	भत्तपरिन्नासंदब्भो	४४०
(३०)	पंचसुत्तसंदब्भो	४४२
(३१)	अंगविज्जापइण्णय-संदब्भो	४४३
(३२)	श्रीमद्हरिभद्रसूरिरचित संबोधप्रकरणग्रन्थागताचार्यादि-स्वरूपसंदर्भः	४४५
(३३)	प्रवचनसारोद्धार-तट्टीका-संदर्भः (मूलकर्ता – श्रीनेमिचन्द्रसूरिः—टीकाकर्ता – श्रीसिद्धसेनसूरिः)	४५०
(३४)	सिरिसिद्धरिसिरइय 'चंदकेवलिचरिय' संदब्भो	४५२
(३५)	सिरिदेवभद्दसूरिरइय 'कहारयणकोस' संदब्भो	४५७
(३६)	सिरिपउमसीहमुणिविरइय 'णाणसार' संदब्भो	४६४
(३७)	सिरिरयणसेहरसूरिविरइय—'सिरिसिरिवालकहा' तो सिद्धचक्कयंतोद्धारविहिसंदब्भो-श्रीक्षमाकल्याणगणिकृतव्याख्यासमेतः	४६६
(३८)	सिरिरयणसेहरसूरिविरइय 'सिरिसिरिवालकहा' तो पंचपरमिट्ठिपयागहणविहिसंदब्भो	४७७
(३९)	श्रीमद्रत्नशेखरसूरिरचित 'सिरिसिरिवालकहा' न्तर्गतपञ्चपरमेष्ठिनः पद्मनवकात्मकः संदर्भः	४८२
(४०)	उपदेशमालासंदब्भो	४९३
(४१)	श्रीमद्हेमचन्द्रसूरिविरचितस्य प्राकृतद्व्याश्रयकाव्यस्य श्रीपूर्णकलशगणिरचितटीकोपेतस्य सप्तमसर्गस्य संदर्भः	४९५
(४२)	सिरिजिणदत्तसूरिविरइयस्स सिरिसमयसुंदरगणिकयवक्खोपेयस्स 'तं जयउ' थवणस्स संदब्भो	५००
(४३)	सिरिदेविंदसूरिविणिम्मिय—'सुदंसणाचरिय' संदब्भो [अरिहंताइवण्णन]	५०३
(४४)	श्राद्धदिनकृत्यान्तर्गतो नमस्कारविषयकः संदर्भः	५०४
(४५)	चउसरणपयन्नासंदब्भो	५०६
	प्रकीर्ण	५१२
	यंत्र-चित्रो	५१२
	शुद्धिपत्रक	५२९



समस्तरागादिमलकलङ्कविरहाय योगक्षेमविधायिने परमेश्वर परमेष्ठिने स्याद्वादिन्नाप्ताय नमोऽस्तु ।



महाकविगुणपालविरचित 'जबुचरिय' सस्थित

॥ मङ्गलपञ्चकम् ॥



जम्मजरमरणभवजलहिउत्तारए,
सिद्धिपुरगमणसुहसपयागारए ।
असुरसुरमणुयपरिवदिए जे जिणे,
मगल पढमय हुतु ते चुहयणे ॥८१४॥

सयलससारपरिमुक्सनासए,
भनियलोयाण सद्दिन्नसुहनासए ।
कम्मवणगहणय सोसिउ सिद्धए,
मगल वीयय हुतु तुह सिद्धए ॥८१५॥

कुमयनाईकुरगाण पचाणणे,
ससमयपरसमयसब्भावपचाणणे ।
पचहायारपाडिपुन्नसंधारए,
मगल तइयय हुतु तह सुहयरे ॥८१६॥

सव्वसाहूण उनएमसपदायए,
उभयसुत्तत्थकयपनरसज्झायए ।
धम्मसुक्काण झाणाण सज्झायए,
मगल चोत्थय हुतुवज्झायए ॥८१७॥

नाणतनचरणसम्मत्तगुणपुन्नए,
कोहमयमाणभयलोहसचुन्नए ।
सयलसानज्जवानारकयसनरे,
मगल पचम हुतु तह मुणिवरे ॥८१८॥





निवेदन

घणां वर्षोनी प्रतीक्षा कराव्या बाद 'नमस्कार स्वाध्याय' ना विशाळकाय ग्रंथनो प्रथम प्राकृत विभाग समाज असमक्ष मूकता अत्यत आनद अनुभवीए छीए। लगभग सात वर्ष पहेला आ ग्रंथनुं सशोधनकार्य शरू करवामां आव्यु हतुं। शरूआतमा एम लाग्यु के आ मुख्यत्वे संग्रहनुं कार्य छे अने थोडाक समयमा पूर्ण थई जशे; परन्तु जेम जेम अनेक जैन ज्ञानभंडारो तपासता गया अने शोधखोळनी दृष्टिए ऊंडा ऊतरता गया तेम तेम जणायुं के संग्रह करवामा पण खूब चीवट, चोकसाई तथा परिश्रमनी आवश्यकता छे अने तेना अनुवाद तेमज अर्थाभिव्यक्तिमा तो तेथी पण अधिक काळजीनी जरूर पडे छे। आ कारणे ज केटलाक फर्मा छपाई गया पछी पण खास करीने तेना अनुवाद अंगे असतोष रह्यो; परतु सस्था तेमज समाजना सद्भाग्ये **पू. मुनिश्री जंबूविजयजी** तथा **पू. मुनिश्री तत्त्वानंदविजयजीनो** निकट सपर्क थता आ कार्य सरळ बन्यु। छपाई गयेल केटलोक अनुवाद न रुचता लगभग बे तृतीयांश फर्मा व्यवस्थित सुधारीने फरी छपाववानी तेओश्रीए सूचना करी। आ सूचनानो अमे सादर स्वीकार कर्यो अने आवा अपूर्व ग्रंथने बने एटलो शुद्ध, समृद्ध तेमज सुगम बनाववानी दृष्टिए पात्रीश जेटला फर्मानुं पुनःमुद्रण करवानुं पण नक्की कर्युं। आ कारणे पण आ ग्रथना प्रकाशनमा विशेष विलंब थवा पाम्यो।

आ ग्रंथप्रकाशननी पाछळनो मुख्य उद्देश नव स्मरण पैकी प्रथम स्मरण "श्री नमस्कार महामत्र" ने यथार्थ स्वरूपमा स्फुट करवानो छे। सस्था तरफथी प्रकाशित थयेल 'श्री प्रतिक्रमणसूत्र—प्रबोधटीका' ना त्रण भागमा नव स्मरण लई लेवानी भावना हती पण अति विस्तार थई जवाना कारणे मात्र पाच ज स्मरणनो तेमां समावेश करी शक्या। वळी, प्रबोधटीकानु सशोधनकार्य जेम जेम आगळ वधतु गयु तेम लाग्युं के नव स्मरणो पैकी दरेक स्मरण पर एटलुं बधुं विस्तृत अने समृद्ध साहित्य रचायेलु छे के प्रत्येक स्मरण पर एक मोटो ग्रथ प्रकट करी शकाय। आ सजोगोमा **संस्थाना प्रमुख शेठ श्री अमृतलालभाईने** दरेक स्मरण पर स्वतत्र ग्रथ प्रकट करवानी प्रेरणा थई अने ते पैकी प्रथम स्मरण "श्री नमस्कार मत्र" अगेनो ग्रथ सौथी पहेला हाथ पर लीधो। "श्री नमस्कार मंत्र" नु संग्रहकार्य आगळ वधतुं गयु तेम जणायुं के आ परममंत्रना माहात्म्य माटे एटलु बधु अने एवु सुंदर, उत्तम तेमज विस्तृत साहित्य छे के तेने मात्र एक ज ग्रथमा प्रकाशित करी शकाशे नहि; कारणके तेम करता तेनुं प्रकाशन करवामा घणो समय जशे एटलुं ज नहीं पण पुस्तकनु कद पण घणुं वधी जशे। तेथी आ बधा साहित्यने त्रण विभागमा प्रकाशित करवानो निर्णय कर्यो:—(१) नमस्कार स्वाध्याय: प्राकृत विभाग (२) नमस्कार स्वाध्याय: सस्कृत विभाग (३) नमस्कार स्वाध्याय: अपभ्रंश—हिंदी—गूजराती विभाग। तेमाथी लगभग साडा पाचसो पृष्ठ प्रमाणनो प्रथम प्राकृत विभाग रजू करीए छीए। बाकीना बे विभाग पण सपूर्ण तैयार छे। तेनुं मुद्रणकार्य झडपथी थशे तो ते बन्ने विभागोनुं प्रकाशन करता झाझो समय लागशे नहीं।

प्रस्तुत प्रकाशनमा अनेक पूज्य मुनिवरो, व्यक्तिओ तेमज सस्थाओनो महामूलो फाळो छे; एटले आ ग्रथ अनेक विद्वानोना सामूहिक प्रयासोनु शुभ परिणाम छे एम कहेवु विशेष समुचित छे।

सस्कृत अने प्राकृत भाषाना समर्थ विद्वान तेमज 'न्याय'ना ऊंडा अभ्यासी **पू. मुनिश्री जंबूविजयजीए** 'भगवतीसूत्र', 'महानिशीथसूत्र', 'चैत्यवदनमहाभाष्य', 'ध्यानविचार' वगेरे नमस्कारविषयक सदर्भोनो सपूर्ण अनुवाद करी आपी अमारा कार्यने अतीव सरळ बनाव्युं छे। **पू. मुनिश्री जंबूविजयजी** तथा तेओश्रीना पूज्य गुरुदेव **स्व. मुनिश्री भुवनविजयजीनो** आ ग्रथनी शरूआतथी ज खूब भावनाभर्यो आवकार मळ्यो छे अने तेना सशोधनमां सतत प्रेरणा, प्रोत्साहन तेमज सहकार प्राप्त थयेल छे। 'नयचक्र'ना सपादनकार्यमा सतत उद्यमी रहेवा छता **पू. मुनिश्री जंबूविजयजीए** सस्थाना सशोधनकार्य माटे ज्यारे ज्यारे जरूर पडी त्यारे पोताना किमती समयनो विना संकोचे भोग आप्यो छे अने ते उपकार बदल तेओश्रीना तथा **स्वर्गस्थ मुनिश्री भुवनविजयजीना** खूब ज ऋणी छीए।

खास करीने **पू. मुनिश्री जंबूविजयजीए** अनुवादित करेल उपर्युक्त विषयो उपरात बीजा पण घणा विषयोनी बाबतमा अमुक मूळपाठ नियत करवामा, भिन्न भिन्न पाठातरोनी नोध आपवामा तेमज उपयोगी पुस्तको अने प्रतो मेळवी आपवामा आगमप्रभाकर **पूज्य मुनिश्री पुण्यविजयजीए** अमने तात्कालिक सहकार आप्यो छे अने ते उपकार माटे तेओश्रीना अमे अत्यत आभारी छीए।

संस्कृत अने प्राकृत साहित्यना एकनिष्ठ उपासक परम **पूज्य पंन्यास श्री धुरंधरविजयजी गणिवरे** 'उवसग्गहरथुत्त', 'कुवलयमाला', 'सिरिगणिविज्जाथुत्त' 'पण्हगब्भ पंचपरमिट्ठिथवण' वगेरे विषयोनुं सुंदर भाषांतर करी आपी तेमज बीजा अनेक विषयोनी बाबतमां मूळपाठ, अनुवाद आदि अंगे उपयोगी समज मेळववानी आवश्यकता ऊभी थइ त्यारे पोताना किंमती समयनो भोग आपीने पण तेओश्रीए अमने अति महत्त्वनी सलाह सहाय आपी छे। चातुर्मास दरम्यान संस्थाना कार्यालय पासे आवेली श्री करमचंद जैन पौषधशाळामां तेओश्रीनी स्थिरता हती अने ते कारणे अमारा संशोधनकार्यने सविशेष प्रवेग तेमज प्रोत्साहन मळ्यां छे। ज्यारे ज्यारे गूंच ऊभी थाय त्यारे पं पू पंन्यासजी महाराज पासे तेना उकेल माटे दोडी जईए अने विना विलंबे अमारूं कार्य आगळ चाले। पुस्तक पूरुं थया बाद तेओश्रीए ज ग्रंथनी शरूआतमां मूकी शकाय एवा पांच श्लोको शोधी आप्या हता। तेओश्रीए सूचवेल आ श्लोको 'मङ्गलपञ्चकम्' ना शीर्षकथी आ निवेदननी शरूआतमां आपेल छे। ते श्लोको 'जम्बुचरियं' (सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ, भारतीय विद्या भवन, मुंबई ७) ना पृष्ठ १९९ २०० माथी लेवामां आव्या छे। आ श्लोको अर्थनी दृष्टिए जेवा उत्तम छे तेवा ज माधुर्यसभर, लालित्यपूर्ण अने गेयतायुक्त छे। आ रीते तेमना तरफथी अमने घणो लाभ मळ्यो छे। पू पंन्यासजीनी आवी सद्भावना माटे अमे तेओश्रीनो अंतःकरणपूर्वक आभार मानीए छीए।

आखुं पुस्तक तैयार थया पछी तेनुं समग्र रीते विहंगावलोकन करी तेने संपूर्ण शुद्ध स्वरूप आपवानुं भगीरथ कार्य हजु बाकी हतुं। आ कार्य माटे संस्कृत अने प्राकृतना गहन अभ्यासनी, व्याकरणना सचोट ज्ञाननी अने सूक्ष्म निरीक्षणशक्तिनी अनिवार्यता हती। आवो त्रिवेणीसंगम ज्यां थयो होय तेवी समर्थ व्यक्तिने शोधवानुं अने शोध्या पछी आ कार्यनी उपयोगिता दर्शावी तेने घणुं जाग्रत करवानुं कार्य पण सरळ न हतुं, परंतु **संस्थाना माननीय प्रमुख शेठश्री अमृतलालभाईना** सतत प्रयासोने कारणे सुयोग्य व्यक्तिनो संयोग थतां वार न लागी। तेओश्री जाते ज **सिद्धांतमहोदधि परम पूज्य आचार्य श्री विजयप्रेमसूरीश्वरजी महाराजसाहेब** पासे गया अने 'नमस्कार स्वाध्याय'ना शुद्धिकार्य तेमज संशोधनकार्य अर्थे एक शिष्यरत्नने आपवा खास विज्ञप्ति करी। पू आचार्यश्रीए संस्थानी संशोधन प्रवृत्तिओनी अनुमोदना करी अने ए कार्यमां अत्यंत सहायक बनी शके ते माटे **विद्वद्शिरोमणि पं पू पं श्री भानुविजयजी गणिवर्यना** शिष्यरत्न, संस्कृत—प्राकृतना एकनिष्ठ उपासक **पू मुनिश्री तत्त्वानंदविजयजीनी** भलामण करी। पं पू आचार्यश्रीनी आज्ञाने विनम्रभावे अनुमोदतां पू मुनिश्री तत्त्वानंदविजयजीए अमारुं कार्य सहर्ष आवकार्युं अने तेने जल्दी पार पाडवा माटे कठिन साधना आदरी। दररोज सात आठ कलाक सतत परिश्रम लई 'नमस्कार स्वाध्याय'नुं अथ थी इति सुधी तीक्ष्ण बुद्धिपूर्वक अवलोकन कर्युं अने एकेएक पंक्ति ध्यानपूर्वक वांची जरूरी शुद्धिपत्रक तैयार कर्युं। मूळपाठ उपरांत खास करीने भाषांतर अंगे तेओश्रीए महत्त्वनी शुद्धिओनो निर्देश कर्यो अने घणा उपयोगी फेरफारो सूचव्या। केटलांक स्तोत्रोनो अनुवाद फरी करवानी पण जरूर जणाई अने ते अनुसार 'अर्हन्नमस्कारावलिका' 'सिद्धनमस्कारावलिका', 'अरिहाणाइथुत्त', 'नमुक्काररहस्सथवण', 'भत्तपरिन्ना', 'संबोधप्रकरण', 'णाणसारसंदब्भो', 'चउसरणपयन्नासंदब्भो' वगेरेनो अनुवाद नवेसरथी करवानुं सूचन कर्युं। आ सूचनने अमे सादर स्वीकार कर्यो अने ते बधा स्तोत्रोना पुनः अनुवाद माटे तेमने ज नम्र विज्ञप्ति करी। अमारी विनंतीने मान आपी अति श्रम अने समयना भोग पर पडे एवा ए कार्यने **पू मुनिश्री तत्त्वानंदविजयजीए** अति सफळतापूर्वक पूर्ण कर्युं अने ए रीते आ ग्रंथ नवुं स्वरूप पाम्यो।

लगभग बे तृतीयांश जेटला फर्मा छपाई गया छतां थोडाक फर्माओमां केटलीक अशुद्धिओ रही गयेली हती, तेथी तेनुं एक शुद्धिपत्रक तैयार करी ग्रंथने अंते रजू कर्युं छे। शुद्धिकरणना आ कार्यमां अध्ययन थया उपरांत समयव्यय पण विशेष थयो अने परिणामे ग्रंथप्रकाशन घणुं लंबायुं, तेम छतां ए बधाने अंते समाजने जे महामूली साहित्यमूडी प्राप्त थई छे तेनो इनकार थई शके एम नथी। **पू मुनिश्री तत्त्वानंदविजयजीए** करेला श्रमने लीधे समाजने एक अति शुद्ध, समृद्ध तेमज उपयोगी ग्रंथ प्राप्त थयो छे अने आवी चीवटपूर्वकनी निःस्वार्थ महेनत बदल तेओश्रीना जेटलो उपकार मानीए एटलो ओछो छे। **पू मुनिश्री तत्त्वानंदविजयजीना** निकट परिचय माटे **सिद्धांतमहोदधि पं पू आचार्य श्री विजयप्रेमसूरीश्वरजी महाराज साहेब, पं पू पं श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य तथा पं पू पं श्री भानुविजयजी गणिवर्य** महत्त्वना निमित्तरूप बन्या छे अने आ परमार्थ बदल तेओश्री प्रति अमारो नम्र पूज्यभाव व्यक्त करी हर्षोर्मि अनुभवीए छीए।

उपर्युक्त शुद्धिपत्रक तैयार करवामा **पू. मुनिश्री अभयसागरजीए** आपेल फाळो पण खास नोंधपात्र छे। तेओश्री आ ग्रंथने साद्यंत वाची गया हता अने वांचतां वांचतां जे जे अशुद्धिओ जणाई के फेरफार करवा योग्य लाग्या तेनी नोंध करता गया। फर्माओना पुनःमुद्रणमां अमे तेओश्रीना सूचनो आमेज करी लीधा अने ते सिवायनी शुद्धिओ ग्रंथने छेडे आपेल शुद्धिपत्रकमां समाविष्ट करी लीधी। **पू. मुनिश्री अभयसागरजीनी** आ सहाय प्रशंसापात्र छे अने तेनी साभार नोंध लेतां अमने अत्यंत आनंद थाय छे।

आ उपरांत 'श्री नमस्कार महामंत्र' अंगेनुं साहित्य एकत्र करवामां, अनुवाद अंगे सूचनो करवामां, स्तोत्रोनी पसंदगीमां तेमज अन्य जरूरी माहिती पूरी पाडवामां **नमस्कारमंत्रना परम आराधक प. पू. पंन्यास श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य, प. पू. पंन्यास श्री भानुविजयजी गणिवर्य** आदिए अति किंमती सलाह आपेल छे, जे बदल ते गुरुवर्योनो हार्दिक उपकार मानीए छीए।

'नमस्कार स्वाध्याय' ना त्रणे विभाग माटे अनेक यंत्रो तथा चित्रो तैयार करवामां आव्यां छे अने ए बधुं कार्य डभोईना जाणीता चित्रकार श्री रमणीकलाले खूब परिश्रमपूर्वक कर्युं छे। चित्रोना ब्लॉको बनाववानां मेसर्स एच. पी. मित्र तथा प्रेस प्रोसेस स्टुडीओए जवाबदारी लीधी हती अने पोतानी आ फरज तेओए सारी रीते अदा करी हती, जे बदल संस्था तरफथी तेमने धन्यवाद पाठवीए छीए।

प्रस्तुत ग्रंथनुं मुद्रणकार्य निर्णय सागर प्रेसमां शरू करवामां आव्युं हतुं अने वधुंखरुं छापकाम त्यां ज थयुं छे। ए बदल ते प्रेसना कार्यवाहकोने अमे आभार मानीए छीए। पाछळथी केटलाक फर्मा बदलवानी जरूर ऊभी थतां तेमज केटलुंक मॅटर तद्दन बाकी होवाने लीधे अने वळी शीघ्रगतिए काम थाय ए दृष्टिए पंदरेक फर्मा जेटलुं मॅटर अमारे मौज प्रिंटिंग प्रेसमां छपाववुं पड्युं। आम करवा जतां कागळ, टाईप आदिमां विभिन्नता आवया पामी अने मुद्रणनी एकवाक्यता जाळवी न शकाई; तेम छतां मौज प्रेसना झटपी अने सुंदर छापकामथी अमने घणो ज संतोष थयो। आवुं संतोषकारक काम आपवा बदल मौज प्रेसना प्रोप्राईटर श्री वि. पी. भागवतनो अने तेमनी साथे निकट परिचय करावी आपनार श्री. कान्तिलाल डाह्याभाई कोरानो अमे हार्दिक आभार मानीए छीए।

संशोधन अने संग्रहना आ कार्यमां खास करीने हस्तप्रतो पूरी पाडवामां अनेक संस्थाओ, जैन ज्ञानभंडारो अने प्रतिष्ठित व्यक्तिओ तेमज विद्वानो तरफथी अमने भावभीनो सहकार मळ्यो छे। एमां मुख्यत्वे नीचे जणावेल ज्ञानभंडारो अने संस्थाओनो समावेश थाय छेः—

(१) श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालीताणा
(२) श्री विजयमोहनसूरीश्वरजी हस्तलिखित शास्त्रसंग्रह, पालीताणा
(३) शेठ श्री आणंदजी कल्याणजीनी पेढी हस्तक श्री. जैन श्वेतांबर ज्ञानभंडार, पालीताणा
(४) ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, लींबडी
(५) श्री हीरजी जैन शाळा ज्ञानभंडार, जामनगर
(६) श्री अंचलगच्छ ज्ञानभंडार, जामनगर
(७) श्री डेला जैन उपाश्रय ज्ञानभंडार, अमदावाद
(८) श्री विजयदानसूरि ज्ञानमंदिर, अमदावाद
(९) श्री संवेगीनो उपाश्रय जैन ज्ञानभंडार, अमदावाद
(१०) श्री मुक्तिकमल जैन मोहन ज्ञानमंदिर, वडोदरा
(११) श्री आत्मारामजी जैन ज्ञानमंदिर, वडोदरा
(१२) श्री जैनानंद पुस्तकालय, सूरत
(१३) श्री हेमचन्द्राचार्य ज्ञानमंदिर, पाटण
(१४) श्री अमरविजयजी जैन ज्ञानभंडार, डभोई
(१५) श्री मुक्ताबाई ज्ञानमंदिर, डभोई
(१६) श्री लावण्यविजय जैन ज्ञानभंडार, राधनपुर
(१७) श्री वीरसूरीश्वरजी जैन ज्ञानभंडार, राधनपुर

(१८) श्री आत्मकमल लब्धि जैन ज्ञानभंडार, दादर, मुंबई
(१९) श्री शांतिनाथजी जैन देरासर—श्री सागरगच्छ प्रवचन पूजक सभा, मुंबई
(२०) श्री महावीर जैन विद्यालय, मुंबई
(२१) श्री भांडारकर ओरिएन्टल रीसर्च इन्स्टिट्यूट, पूना
(२२) श्री अभय जैन ग्रंथालय, बीकानेर

उपर्युक्त संस्थाओना अमे खूब ज ऋणी छीए।

आ उपरांत **पू. मुनिश्री यशोविजयजी, श्री जिनविजयजी,** श्री अगरचन्दजी नाहटा, स्व. मोहनलाल भगवानदास झवेरीना विधवा सुधाबहेन वगेरेनो हस्तप्रतो आपवा बदल खास आभार मानीए छीए।

तदुपरांत आ विशाळ पाया परना कार्यमां अनेक व्यक्तिओ तरफथी भिन्न भिन्न रीते सहकार मळ्यो छे अने ते बधानो प्रत्यक्ष नामोल्लेख अहीं न करी शकीए तो पण ते सौनो परोक्ष रीते आभार मानवानी अहीं तक लईए छीए।

प्रस्तुत ग्रंथना वस्तु अंगे विचार करतां एटलुं स्पष्ट कही शकाय के अहीं आपेल संग्रहमांथी 'श्री नमस्कार महामंत्र'ने लगती घणी उपयोगी महत्त्वनी विगतो तारवी तेने व्यवस्थित रीते कडीबद्ध सांकळी शकाय। तेमां घणा स्तोत्रो एवा छे के ते प्रत्येक पर विस्तृत विवेचन तैयार करी स्वतंत्र पुस्तिका रूपे प्रकट करी शकाय। अहीं तो प्राकृत भाषामां रचायेल नमस्कारविषयक जे श्रेष्ठ साहित्य मळ्युं छे तेनो संग्रह मात्र करवामां आव्यो छे, परंतु आ विषयना अभ्यासीओ अने आराधको माटे ते अमूल्य सामग्री पूरी पाडे छे। आमां घणी एवी वातो छे के जे वर्षोथी भूलाई जवा पामी छे। विस्मृतिना प्रवाहमां तणाई जती आवी धर्मप्रणालीओने बचावी लई तेनुं पुनरुत्थान करवुं अनिवार्य छे। ज्यांसुधी तेनी पारिभाषिकतानुं वैज्ञानिक रीते व्यवहारु निरूपण नहीं करवामां आवे त्यांसुधी आ अचिन्त्य चिंतामणिकल्प अने सर्व महामंत्रो तथा प्रवर विद्याओना परमबीज तरीके वर्णवायेल श्री पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधने तेना यथार्थ स्वरूपमां समजी शकाशे नहीं। प्रस्तुत ग्रंथ आवा स्वाध्याय माटे पुष्कळ माहिती पूरी पाडे छे अने संशोधकोने माटे अमूल्य खजानो खुल्लो करे छे।

आ परममंत्र केटला अक्षर परिमाणनो छे, तेमां निर्दिष्ट आलापक, संपदा, स्वर, व्यंजन, वर्ण, पद, पदाक्षर, मात्रा, बिंदु वगेरे शुं छे, पंचमंगल एटले शुं, आ महामंत्रमां नमस्कार कोने करवामां आवे छे, केवी रीते करवामां आवे छे अने शा माटे करवामां आवे छे, तेनुं विनयोपधान कई विधिथी सिद्ध थई शके, क्यां लक्षणो आराधकनी योग्यता सूचवे छे, क्या समये, केवा स्थळे, कोनी पासेथी अने केवी रीते तेनी वाचना लेवी जोईए, तपोपधान केटलुं अने केवी रीते करवुं जोईए, सर्व जीवो प्रति आत्मतुल्यतानी दृष्टिने **(अत्तसमदरिसित्त)**[1] शा माटे महत्त्व आपवामां आव्युं छे, अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधु ए शब्दो शाना द्योतक छे, ए शब्दनी व्युत्पत्ति अने व्याख्यानी दृष्टिए केटली रीते विचारी शकाय, तेनो गभार्थ एटलेके परम रहस्यभूत अर्थ शो छे, ए पांच पदोनो समग्र विश्व साथे संबंध केवी रीते छे, बोधिलाभ शुं छे अने ते केवी रीते सुलभ थाय, मांत्रिक, तांत्रिक अने योगिक दृष्टिए आ महामंत्रनुं स्थान सर्वश्रेष्ठ केवी रीते छे, तेनाथी कई सिद्धिओ, रिद्धिओ अने लब्धिओ प्राप्त थाय छे—वगेरे अनेक प्रश्नो उपस्थित थाय छे अने ते बधा प्रश्नोनी समालोचना करवा माटे आ ग्रंथ अत्यंत अद्भुत माहिती प्रकाशमां लावे छे।

श्री महानिशीथसूत्रमां आ विषय अंगे जे पाठ मळ्यो छे ते श्री नमस्कार महामंत्रना आराधको माटे अजोड मार्गदर्शन करावे छे। एमां श्री अरिहंत परमात्मानुं सुंदर वर्णन पण छे। श्री चैत्यवंदनमहाभाष्य उपरनी श्री धर्मकीर्तिसूरिनी टीकामां श्रीमहानिशीथसूत्रना घणा उपयोगी फकराओनी नोंध लेवामां आवी छे, जे तेनी अनेकविध महत्ता स्थापित करे छे। ए टीकामां श्री महानिशीथसूत्र उपरांत नमस्कारपंजिका, सिद्धचक्र, अष्टप्रकाशी, उग्र शास्त्र, उपधानविधि, प्रवचनसारोद्धार, बृहन्नमस्कारफल, भगवतीसूत्र, नमस्कारनियुक्ति, प्रत्याख्याननिर्युक्ति, आवश्यकनियुक्ति, छेदसूत्र, राजप्रश्नीयसूत्र वगेरे अनेक ग्रंथोनो उल्लेख करवामां आव्यो छे। श्री नमस्कार महामंत्रना आराधके आ ग्रंथो

१ 'श्रीमहानिशीथसूत्रसंदर्भ', पृ. ३६

अवश्य अवलोकवा जोईए। आ ग्रंथोमाथी जे प्राप्त थया तेमाथी नमस्कारविषयक संदर्भो तारवीने प्रस्तुत ग्रंथमा रजू कर्या छे। ते पैकी उपधानविधि (उवहाणविहिथुत्तं) मा श्री नमस्कार महामंत्रनी वाचना लेवा माटेना उपधाननो व्यवस्थित आम्नाय आपवामा आव्यो छे अने ते मत्रना उपासकनुं स्थान केटलुं ऊंचुं छे ते सुंदर रीते बताववामा आव्युं छे; श्री नमस्कारनिर्युक्तिमा (णमोक्कारणिज्जुत्ती) उत्पत्ति, निक्षेप आदि अगियार द्वारथी तेनी विशद विचारणा करवामा आवी छे अने श्री[1] वृहन्नमस्कारफलमा नमस्कार महामत्रनो सर्वांगी महिमा गावा उपरात तेनी आराधनाथी प्राप्त थता विशिष्ट फळोनी विस्तृत नोंध लेवामा आवी छे।

उपर्युक्त तात्त्विक बाबतोनी विवेचना करता स्तोत्रो उपरात श्री नमस्कार महामंत्रनो भिन्न भिन्न दृष्टिए विविध उल्लेख करता, तेनुं उचित फळ पामेल प्रभावशाळी व्यक्तिओनो निर्देश करता, स्वानुभवने लीधे श्री नमस्कारमत्रना प्रभावथी उल्लसित थयेल महात्माओनो अहोभाव व्यक्त करता; अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधु भगवंतनुं पृथक् पृथक् रीते यशोगान करता तथा गूढ अने मंत्रगर्भित एवा अनेक स्तोत्रोनो प्रस्तुत ग्रथमा समावेश करवामा आव्यो छे।

ध्यानविचार, नवकारसारथवण, नमस्कारव्याख्यानटीका आदि कृतिओ आ ग्रथनी यशकलगीरूप छे। ध्यान, शून्य, कला, ज्योति, बिन्दु, नाद, तारा वगेरे ध्यानना चोवीश मार्गोनुं व्यवस्थित निरूपण 'ध्यानविचार' सिवाय अन्य कोई ग्रथमा मळतुं नथी। मंत्रगर्भित एवा 'अरिहाणाइथुत्तं' मा ते पारिभाषिक शब्दोनो नामोल्लेख मळे छे, पण तेनुं यथार्थ रहस्य तो 'ध्यानविचार' मा ज स्फुट थाय छे, जो के ध्यानविचारनी रचना पण कोई महान मौलिक ग्रंथने आधारे थई होवी जोईए अने ज्यासुधी एवो कोई ग्रथ प्राप्त न थाय त्यासुधी 'ध्यानविचार' नी सपूर्ण समज मेळववी कठिन पडे। **पू. मुनिश्री जंबूविजयजी** तथा **पू. मुनिश्री तत्त्वानंदविजयजीए** करेल परिश्रमने लीधे 'ध्यानविचार' ने सारी रीते गुजरातीमा उतारवानुं कार्य सफळ थयुं छे। आ किंमती कृति अनेक दृष्टिए योगाभ्यासीओने उपकारी थाय तेम होवाथी तेनी एकसो जेटली वधु नकलो अलग प्रकट करीने पोष सुद १, वि. स २०१७ ना रोज मुमुक्षुवर्गने अध्ययन अध्यापन माटे सस्था तरफथी भेट धरवामा आवी छे।

ध्यानविचारनुं रहस्य पामवा जेवो नोंधपात्र प्रयास थयो छे तेवुं 'नवकारसारथवण' अने तेना उपरनी विस्तृत 'नमस्कारव्याख्यानटीका'नी बाबतमा कई थई शक्यु नथी। नवकारसारथवणनो गुजराती अनुवाद छापवामा आव्यो हतो, परतु ए अनुवाद सतोषकारक न होवाथी ते विषयना जाणकार पूज्य गुरुवर्योनी सलाहने मान आपी ज्यासुधी आवा स्तोत्रो सतोषकारक रीते न समजाय त्यासुधी तेनुं मूळ मात्र आपवुं एम नक्की कर्युं। ए रीते प्रस्तुत ग्रंथमा नवकारसारथवण, नमस्कारव्याख्यानटीका अने परमेष्ठ्यादिपदगर्भितमन्त्रादयः एम त्रण विषयोनो अनुवाद आप्यो नथी। आमाथी नमस्कारने लगता मन्त्रो बिलकुल न ज आपवा एवुं एक सूचन हतु। ज्यासुधी आवा प्रबळ मन्त्रोनी शुद्धि अंगे छेवटना निर्णयो न लेवाय त्यासुधी तेने प्रकट करवाथी तेनो हेतु सरतो नथी; परतु पाछळथी विचारविनिमय करता पूज्य गुरुवर्योनी समति मळी के हस्तलिखित प्रतोमा जे स्वरूपे मळ्या ते स्वरूपे मात्र मूळ मंत्रोने अनुवाद कर्या विना आपवामा खास बाध नथी। आवी अनुमति मळता नमस्कारने लगता महत्त्वना मत्रोने फरी छापवानुं नक्की कर्युं। पहेला विषय न. १७ तरीके मन्त्रोने अनुवाद सहित छापवामा आव्या हता, परतु ते रद करवानु नक्की थता तेनी जगाए नबर १७ तरीके 'कुवलयमाला' माथी तारवेल नमस्कारविषयक श्लोकोने छाप्या। आ छपाई गया बाद उपर कह्यु तेम नमस्कारमन्त्रोने मूळ स्वरूपे आपवानुं जरूरी जणायुं अने तेथी तेनो विषय नं. १७अ तरीके समावेश करी लीधो। आम करवाथी बे फर्मा वध्या अने तेने ४५अ तथा ४५ब एम नंबर आपी क्रम जाळवी लीधो। अनुवाद विनानी उपर्युक्त त्रणे कृतिओ हजु ऊडु संशोधन मागे छे।

उपर प्रस्तुत ग्रंथना वस्तु प्रति जे अंगुलिनिर्देश करवामा आव्यो छे ते तो मात्र उपलक परिचय ज छे; तेनुं यथार्थ ज्ञान तो त्यारे ज प्राप्त थाय के ज्यारे आ ग्रंथमाना दरेके दरेक स्तोत्रनो निष्ठापूर्वक स्वाध्याय करवामां

---

१ प्रस्तुत ग्रथमा आ स्तोत्र 'पंचनमुक्कारफलथुत्त' नामे छापायेल छे—जुओ पृष्ठ ३६३ थी ३७८.

आवे। श्री नमस्कार महामंत्रना संशोधको तथा आराधकोने आ साहित्यसामग्री अनेक रीते उपयोगी थशे एवी आशा छे।

प्रस्तुत ग्रंथमांथी उपस्थित थता १७ यंत्र चित्रो तेमज बीजा उपयोगी यंत्रो तथा चित्रो ग्रंथने छेडे आपवामां आव्या छे। प्रथम त्रण यंत्र चित्रो पुस्तकना आकार करता मोटा होवाथी जुदी जुदी योग्य जगाए मूक्या छे। ग्रंथनी शरूआतमां पण पांच चित्रो आपवामां आव्यां छे। आ चित्रोनी सूचि तथा टूंक परिचय हवे पछी आप्यो छे।

आ ग्रंथना संपादनकार्यमां अनेक हस्तप्रतो अने आधारभूत ग्रंथोनो उपयोग करवामां आव्यो छे। ते बधानी नोंध करीए तो घणी मोटी यादी तैयार थाय, परंतु घणीखरी प्रतो अने प्रकाशित ग्रंथोनो उल्लेख दरेक स्तोत्रना छेडे आपेल परिचयमां कर्यो छे एटले तेनी जुदी यादी आ ग्रंथमां आपी नथी। आवी एक विस्तृत यादी श्री नमस्कार महामंत्रना अभ्यासीने अवश्य उपयोगी बने अने तेनो श्री 'नमस्कार स्वाध्याय' ना छेल्ला विभागमां समावेश करी लेवानी भावना छे। तदुपरांत 'नमस्कार स्वाध्याय' ना त्रणे विभागनो निचोड जेमां आवी जाय अने त्रणे विभागना समग्र वस्तुने टूंकमां छतां सचोट रीते आवरी ले एवो एक अभ्यासपूर्ण परिचयात्मक लेख तथा उपोद्घात छेल्ला विभागमां आपवानी धारणा छे।

अमे जाणीए छीए के आ ग्रंथना केटलाक विषयो अतिगूढ छे, विषयोना शुद्ध पाठो अने अर्थना विशिष्ट ज्ञान माटे जेवी जोइए तेवी सामग्री आजे उपलब्ध नथी, छतां अमारी अल्पशक्ति मुजब अमे अनुवाद वगेरेमां प्रयत्न कर्यो छे। जेओ ए विषयमां वधु जिज्ञासा धरावे छे तेमने अमारो आ प्रयत्न उपयोगी थशे अने आ माहिती परथी तेओ ते विषयोमां वधु ऊंडा जई शकशे, एवी अमारी आशा अस्थाने नथी।

आ ग्रंथना संपादन अने प्रकाशनमां जो कोई त्रुटिओ रही जवा पामी होय, तो ते माटे अमे चतुर्विध संघनी अंतःकरणपूर्वक क्षमा मागीए छीए अने श्री नमस्कार महामंत्रना अभ्यासीओ अने आराधकोने विनंती करीए छीए के तेमणे अनुग्रह करीने अमोने उदारभावे ते विषे लखी जणाववुं। आवां सूचनोनी अमे साभार नोंध लईशुं।

जो के संशोधको वगेरे माटे आ ग्रंथमां समाविष्ट करेल वस्तु अति लाभदायी नीवडशे छतां श्री '**नमस्कार महामंत्र**'नुं पारमार्थिक स्वरूप सर्व शब्दोथी पर छे—अनिर्वचनीय छे। ए स्वरूपने पामवानो मार्ग केवळ ध्यानादिद्वारा स्वानुभवनो छे। जगतना सर्व जीवो ए दिव्य परमामृततुल्य परम स्वानुभवने पामो, एवी मंगल कामना।

महा वद ४, वि. सं. २०१७
ता. ५-२-१९६१
विलेपारले, मुंबई-५७

सेवक
नवीनचन्द्र अंबालाल शाह, एम. ए.
मंत्री, जैन साहित्य विकास मंडळ



यंत्र-चित्र सूचि

ग्रंथनी शरूआतमां आपेल प्रथम पांच चित्रोनो अनुक्रम :—

(१) परमेश्वर-परमेष्ठी श्री अरिहतदेव

(२) शासनरक्षिका देवी चक्रेश्वरी—विमलवसही, देलवाडा; आबु

(३) ह्रींकारमध्यस्थित पार्श्वप्रभु

(४) पञ्चपरमेष्ठिमहामन्त्र.

(५) मङ्गलमुखपाठः

ग्रंथमांथी सूचित थतां सत्तर यंत्र-चित्रोनो अनुक्रम :—

(१) श्रीपञ्चनमस्कारचक्रम् पृष्ठ : २०७ (पं. १९), २११ (पं. २३), २१३, २२४ (पं. २०)

(२) 'ध्यानविचार' प्रस्तावे ध्यानमार्गस्य विंशतितमे भेदे परममात्रानामा चतुर्विंशतिवलयैः परिवेष्टित आत्मध्यानप्रकारः पृष्ठ : २२९ (पं. २२), पृष्ठ २२८ नी सामे

(३) वर्धमानविद्यायन्त्रपटः पृष्ठ : १०४ नी सामे

(४) परस्परावलोकनव्यग्रवामजानुन्यस्ततीर्थंकरमातर. पृष्ठ : २३० (पं. ३), २८२ (पं. ५, २४), ५१३

(५) शृखलाजाति चित्रबंध पृष्ठ : ३८९ (पं. १५), ५१४

(६) अष्टदलकमलबंध पृष्ठ : ३९५ (पं. १४), ५१४

(७) गुदलिङ्गमध्ये आधारचक्रं प्रथमम् पृष्ठ : ३९६ (पं. २०), ५१४

(८) लिङ्गमूले स्वाधिष्ठानचक्रं द्वितीयम् पृष्ठ : ३९६ (पं. २३), ५१५

(९) नाभौ मणिपूरचक्रं तृतीयम् पृष्ठ : ३९६ (पं. २७), ५१५

(१०) हृदये अनाहतचक्रं चतुर्थम् पृष्ठ : ३९६ (पं. ३१), ५१६

(११) कण्ठे विशुद्धचक्रं पञ्चमम् पृष्ठ : ३९७ (पं. १५), ५१६

(१२) घण्टिकाया ललनाचक्रं षष्ठम् पृष्ठ : ३९७ (पं. १८), ५१७

(१३) भ्रूमध्ये आज्ञाचक्र सप्तमम् पृष्ठ : ३९७ (पं. २०), ५१७

(१४) मस्तके सोमकलाचक्रं अष्टमम् पृष्ठ : ३९७ (पं. २३), ५१७

(१५) ब्रह्मद्वारे ब्रह्मबिन्दुचक्र नवमम् पृष्ठ : ३९७ (पं. २५), ५१८

(१६) ब्रह्मद्वारोपरि हंसनादचक्रं दशमम् पृष्ठ : ३९८ (पं. ५), ५१८

(१७) नादवलयितह्रींकारोदरस्थौंकारोदरस्थ—अर्हंकारः पृष्ठ : ४६७ (पं. २३), ५१८

ग्रंथने छेडे आपेल अन्य उपयोगी यंत्र-चित्रोनो अनुक्रम :—

(१) ॐकारः पृष्ठ : ५१९

(२) ॐकारयन्त्रम् पृष्ठ : ५१९

(३) ह्रींकारः पृष्ठ : ५२०

(४) नमस्कार-यन्त्रम् पृष्ठ : ५२१

(५) गीर्वाणयन्त्रम् पृष्ठ : ५२१

(६) नमस्काराष्टकम् पृष्ठ : ५२२–५२३

(७) शङ्ख-नन्दि-नवपद-ॐकाररूपावर्तचतुष्कम् पृष्ठ : ५२४

(८) ह्रीं-श्री-सिद्धात्मकावर्तत्रिकम् पृष्ठ : ५२५

(९) मुद्रापट्कम् पृष्ठ : ५२६

(१०) पञ्चपरमेष्ठि नमस्कारग्रथितरम्यसूत्रपटी पृष्ठ : ५२७

(११) वापीयन्त्रम् पृष्ठ : ५२८



शासनरक्षिका देवी चक्रेश्वरी – विमलवसही, देलवाड़ा आबु

यन्त्र-चित्र परिचय

नोंध

'नमस्कार स्वाध्याय'ना आ प्राकृत विभागनी शरूआतमां आपेल पांच चित्रोमांथी त्रण अने यन्त्रो सिवायना बीजा छपाववामां आवेला अनेक चित्रो के जे जैन शिल्प-स्थापत्यना महत्त्वना नमूनारूप छे ते मथुराना कंकालीटीलाना खोदकाममांथी मळी आवेल अवशेषोना फोटाओने आधारे तैयार करावेल छे। जेम जेम विशेष संशोधन थतुं गयुं तेम तेम जैन शिल्प स्थापत्यनी दृष्टिए कंकालीटीलानी अगत्य वधती रही छे। कंकालीटीलामांथी जूना प्राचीनतम स्मारको, अवशेषो आदि मळी आवता ते स्थळ जैनटीला 'Jaina Mound' तरीके प्रसिद्धि पामेल छे। आ रीते जैन संस्कृतिने समजवा माटे मथुरा नगरी अति महत्त्वनुं स्थान बनी गई छे।

आ मथुरा नगरीनो उल्लेख प्रस्तुत ग्रंथमां छपायेल 'श्री महानिशीथ सूत्र'मां अति विशिष्ट रीते थयो छे। पृष्ठ ५३ प १६ १७ तथा पृ ६८ प ८ ९ मां ऐतिहासिक विगत रजू करवामां आवी छे के "अचिन्त्यचिंतामणि तुल्य आ महानिशीथ श्रुतस्कंधनो ज प्राचीन आदर्श (प्रति) मथुराना सुपार्श्वनाथ भगवानना स्तूपमां हतो ते पंदर दिवसना उपवास करवाथी शासनदेवीए मने आप्यो, पण तेमां खंडित थई जवाथी तेमज उधेई वगेरे कारणोथी घणां पानां सडी गयां छे (खंडित थई गया छे) तो पण अत्यंत महान अथातिशयवाळा आ महानिशीथश्रुतस्कंधने समग्र प्रवचनना परम सारभूत परम तत्त्व तथा महा अर्थयुक्त समजीने प्रवचन उपरना वात्सल्यथी, वळी, घणा भव्य जीवोने उपकारक छे एम समजीने तेमज पोताना आत्माना कल्याण माटे आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी महाराजे ते आदर्शमां जे जोयुं ते बधुं पोतानी मति प्रमाणे शुद्ध करीने लख्युं छे।"

आ रीते मथुरा नगरीनी अनेकविध विशिष्टता छे। तेथी 'नमस्कार स्वाध्याय'ना त्रणे विभागोमां मथुराना शिल्पने खास महत्त्वनुं स्थान आप्युं छे। प्रस्तुत विभाग तेमज ते पछीना विभागोमां मथुराना शिल्पना मूळ चित्रो परथी विशेष काळजीपूर्वक नवां छतां मूळने संपूर्ण वफादार रहेतां एवां चित्रो तैयार करावी रजू कर्यां छे।

ग्रंथनी शरूआतमां आपेल प्रथम पांच चित्रोनो क्रमानुसार परिचय :—

(१) परमेश्वर परमेष्ठी श्री अरिहंतदेव

परमेश्वर परमेष्ठिनुं आ प्रतिमा चित्र विन्सेंट ए स्मिथ रचित "The Jaina Stupa and other Antiquities of Mathura" (Archaeological Survey of India New Imperial Series Volume XX published in 1901) नामना परिचयात्मक ग्रंथनी नं XCII अने XCVI—एम बे प्लेटो परथी चित्रकार पासे तैयार कराव्युं छे। प्लेट XCVI मां आपेल प्रतिमा चित्रमां बन्ने भुजाओ खंडित थयेली छे, जे अन्य प्लेटो परथी तेमज प्रतिमाने लक्ष्यमां लई चित्रकारे पोतानी बुद्धिथी पूर्ण करी छे। मुखना भाव जेवा छे एवा ज राखवा प्रयास कर्यो छे। वळी आ मूर्तिना मस्तक पाछळ [illegible] भामंडळ आ प्लेटमां नथी, जे प्लेट नं XCII मांथी लेवामां आव्युं छे। भामंडळ परनां आजुबाजुनां बे इन्द्रोमांथी एक ज इन्द्र प्लेट नं XCII मां छे अने बीजी बाजुनी मूर्ति खंडित थयेली छे, जे चित्रकार प्रथम इन्द्रना चित्रना आधारे पूर्ण करेल छे। आ रीते जुदा जुदा भागोने एकत्र करी तीर्थंकर भगवाननुं आ भव्य प्रतिमा चित्र रजू करवा प्रयास कर्यो छे। जे मुख्य प्लेट परथी आ भव्य प्रतिमा चित्र तैयार थयुं छे ते प्लेट नं XCVI ना मथाळे Colossal Image of Seated Tirthamkara, dated Samvat 1134 '— ए प्रमाणे लखेलुं छे, ज्यारे बीजी प्लेट XCII पर Life-size image of seated Jina'—लखेलुं छे।

आ प्रतिमा चित्रनी विशिष्टता ए छे के सामान्य रीते आवा आकारनी प्रतिमाओ श्री गौतमबुद्धनी प्रतिमा तरीके प्रचलित छे परंतु आ मूर्ति परथी सिद्ध थाय छे के शोभा पण एवा ज आकारनी प्रतिमा जो हती।

(२) शासनरक्षिका देवी चक्रेश्वरी विमलवसही, देलवाडा, आबु

चक्रेश्वरी देवीनुं आ शिल्प आबु परना देलवाडाना देरासरमां कोरेलुं छे। तेना फोटोग्राफ परथी चित्र तैयार करी अहीं रजू करवामां आव्युं छे।

(३) ह्रींकारमध्यस्थितः पार्श्वप्रभुः

आ आकारनी प्रतिमा मुबईना भायखला जैन देरासरमा विराजमान छे। चित्र जोता तुरत जणाशे के 'ह्रीं' कारनी मध्यमा श्री पार्श्वनाथ भगवतनी मूर्ति प्रतिष्ठित करेली छे। मूर्तिनी जमणी बाजु धरणेन्द्र छे अने डाबी बाजु पद्मावती छे। कला, बिन्दु अने नाद सहित एवा ह्रींकारनी शुद्ध आकृति आपणने अहीं शिल्पमा लभ्य थाय छे।

आवी धातुनी मूर्तिओ भाग्ये ज जोवा मळे छे अने तेथी आ मूर्तिने विशिष्ट लेखी शकाय। मूर्ति खूब ज पौराणिक छे। आ मूर्ति आरसनी नहि परतु धातुनी छे एनो ख्याल चित्रमा देखाता अंगो परनां चिह्नो परथी आवे छे। जेवी छे एवी ज तादृश मूर्ति रजू करवा अहीं प्रयास कर्यो छे।

(४) पञ्चपरमेष्ठिमहामन्त्रः

विन्सेन्ट ए. स्मिथना उपर्युक्त ग्रथमानी प्लेट XII परथी आ चित्र तैयार करवामा आव्यु छे। जेवुं छे एवु ज प्रवेशद्वार दोरवामा आव्यु छे, फक्त नीचे तेनी बे बाजुए बतावेल रक्षिकाओ आ प्लेटमा नथी। स्तूपना आ प्रवेशद्वारनी उपर तोरण छे अने तेनी उपर बन्ने बाजु 'तिलकरत्न' छे, जे 'अष्टमंगल' पैकी एक मंगल छे। आवु 'तिलकरत्न' आ सिवाय बीजी घणी प्लेटोमा (दा. त. VI, VII, X, XI) जोवा मळे छे। बे 'तिलकरत्न'नी वच्चे 'श्रीवत्स' मूकवामा आवेलुं छे। प्रवेशद्वारनी वच्चेनो नमस्कारमत्रनो मूलपाठ अमे मूकेलो छे।

आ चित्रनी प्लेटने मथाळे नीचे प्रमाणे लखेलु छे:—

"Āyāgapata or 'Tablet of Homage' The gift of Śivayaśā, the wife of the Dancer Phaguyaśā."

(५) मङ्गलमुखपाठः

आ चित्र पण उपर्युक्त विन्सेन्ट ए. स्मीथना ग्रथमानी प्लेट VII परथी तैयार करवामा आव्यु छे। आ पण आयागपट छे, जेमा वच्चेनी जगाए अरिहंत भगवंत पद्मासने स्थित छे। तेओ ध्यानमुद्रामां लीन छे अने शिर पर छत्र शोभी रह्युं छे। तेमनी आजुबाजु चार तिलकरत्न हता ते न लेता तेनी जगाए अहीं चत्तारि मंगलादिनो मूळ पाठ मूकेल छे।

आ आयागपटनी उपरनी बाजुए चार अने नीचेनी बाजुए चार — एम मळी कुल आठ मंगल आपेला छे। खूब ज प्रचलित एवा आ 'अष्टमगल' जैन रीतिना अति प्राचीन प्रतीको छे। आनाथी प्राचीनपर अने आवी सारी रीते एक साथे जळवायेल 'अष्टमंगल' हजुसुधी बीजे क्यायथी प्राप्त थया नथी। डॉ. उमाकान्त पी. शाहे पोताना 'Studies in Jaina Art' नामक कलाग्रंथमा आ मंगलोनुं नीचे प्रमाणे नामकरण कर्यु छे:—

उपरनी हरोळ (जमणी बाजुएथी)—	नीचेनी हरोळ (जमणी बाजुएथी)—
(१) A pair of Fish (मत्स्ययुगल-मत्स्ययुग्म)	(५) A Tilakaratna (तिलकरत्न)
(२) A heavenly Car (पवनपावडी)	(६) A Full Blown Lotus (पुष्पचगेरिका-पुष्पगुच्छ)
(३) A Śrīvatsa Mark (श्रीवत्स)	(७) An Indrayasti or Vaijayantī (इन्द्रयष्टि or वैजयन्ती)
(४) A Powder Box (शरावसपुट)	(८) A Mangala-Kalasa (Auspicious Vase) (मंगल-कलश)

मूळ पाठनी बे बाजु आपेल स्तभो "Persian Achaemenian" रीतिना छे अने प्रत्येक स्तंभनी उपर तथा नीचे भिन्न भिन्न प्रतीको आपेल छे। जमणी बाजुना स्तंभनी सौथी उपर 'धर्मचक्र' छे अने डाबी बाजुना स्तभनी उपर 'कुजर' (हाथी) कंडारेल छे। बन्ने स्तभोनी नीचे पण जुदाजुदा बे प्रतीको छे। आ चारे प्रतीकोनी विसवादिता शिल्पनी दृष्टिए विचारणीय लागे छे।

जे परथी आ चित्र तैयार कर्यु छे ते प्लेट न. VII ने मथाळे नीचे प्रमाणे लखेलुं छे:—

"Ayāgapata, or 'Tablet of Homage or of Worship', set up by Sihanādika for the worship of the Arhats"

ग्रथमाथी सूचित थता सत्तर यत्र चित्रोनो परिचय —

यत्र चित्र न १—श्री पञ्चनमस्कारचक्रम्

आ यत्रनी आकृति अगर तो तेना पर हजुसुधी रच थयो नथी। अहीं जे यत्र रजू करवामा आव्यु छ ते पृष्ठ २१३ पर आपेल 'पञ्चनमस्कारचक्रोद्धारविधि' माना आम्नाय अनुसार चित्रकार पासे तैयार करावु छे। आ आलेखनाविना मत्राक्षर "अरिहंताइसुत्त' मा आवे छे। (जुओ पृष्ठ २०७) आ यत्रने 'वर्धमानचक्र' अथवा 'पञ्चपरमेष्ठिचक्र' तरीके पण ओळखावामां आवे छ। विशेष परिचय माटे जुओ पृष्ठ २११ तथा पृष्ठ २२४। आ यत्र चित्र पृष्ठ २१२ नी साम आपवामां आव्यु छ।

यत्र चित्र न २—'ध्यानविचार' प्रस्तावे ध्यानमार्गान्य विंशतितमे भेदे परममात्राध्यानमा चतुर्विंशति वलयै परिवेष्टित नामध्यानप्रकार

आ यत्र पृष्ठ २२५ उपर प्रकाशित करेल ध्यानविचारान्तर्गत 'परममात्राध्यानम्' (पृ २०१) ना आम्नाय परथी तयार करवामा आव्यु छे। आ चित्र हजु विशेष विचारणा माग छे। तेना वधु परिचय माटे जुओ संस्था तरफथी अन्य प्रस्त थयेल 'ध्यानविचार' नु निवरण। यत्र चित्र पृष्ठ २२८ नी सामे आपवामा आव्यु छे।

यत्र चित्र न ३—वर्धमानविद्यापट

श्री वर्धमानविद्याना यत्रपटनी नित्य पाठक पदवीधारी मुनिवरो आराधना करे छ। आ यत्रनी आराधनाना आम्नाय गुरुगमथी जाणी लेवा। तेमा आवता मत्र वगेरे माटे जुओ प्रस्तुत ग्रथना पृष्ठ १०४ पर आपल 'वर्धमानविद्याविधि'। यत्र चित्र पृष्ठ १०४ नी सामे आपल छे।

यत्र चित्र न ४—परम्परावलोक्याध्यप्रथमानानुन्यस्ततीर्थंकरमातर

चार्वीस तीर्थंकरोना चोवीस माताओनो आ पट पाटणमा कोशना पाडाना देरासरमा तेमज श्री शत्रुंजयमा विराजमान भमतीमां पत्थरमां कोतरेला जोवा मळे छे। आ ग्रथमा प्रकाशित थयेल उपयुक्त 'ध्यानविचार' मा पृष्ठ २३० पर 'तातकमातृपद्मम्' ना टप्पण छ अने तेना अनुसधानमा आ चित्र अहीं आपलु छे। तीर्थंकरनी माताओना नाम माटे जुओ पृष्ठ २३० नीचे आपल टिप्पणी। यत्र चित्र पृष्ठ ५१३ पर आपवामा आव्यु छे। विशेष परिचय माटे जुओ संस्था तरफथी अन्य प्रसिद्ध थयेल 'ध्यानविचार'नु विवेचन।

यत्र चित्र न ५—शङ्खावर्त्ति चित्रबध

पृष्ठ २८० पर प्रकट थयेल "पञ्चनाम पञ्चपरमेष्ठिस्तव 'मा 'शङ्खावर्त्तिचित्र' ना उल्लेख छे ते परथी आ यत्र तैयार करवामां आव्यु छे। विशेष परिचय माटे जुओ पृ २९५ यत्र चित्र माटे जुओ पृष्ठ ५१४

यत्र चित्र न ६—अष्टदलकमलबध

आ यत्र पण उपयुक्त "पञ्चनाम पञ्चपरमेष्ठिस्तव" मा निर्दिष्ट 'अष्टदलकमलबध' (पृष्ठ २९४) परथी तैयार करायु छ। विशेष परिचय माटे जुओ पृष्ठ [illegible] यत्र चित्र माटे जुओ पृष्ठ ५१४

यत्र चित्र न ७ थी यत्र-चित्र न १६—पृ ५१५ थी ५१८

आ दस यत्र चित्रो (नवचित्र आ दस यत्रो) पृष्ठ २९६ पर प्रकट थयेल "[illegible]" नामना स्तव अनुसार परथी तैयार करावेल छ। [illegible] आ स्तव प्रस थयु ते [illegible] श्री [illegible] [illegible] [illegible] आ [illegible] [illegible] हती अने एने आधारे [illegible] [illegible] चित्र [illegible] चित्रकार पासे तैयार करावी रजू करवामां आव्या छे। वधु परिचय माटे जुओ पृष्ठ २९८।

आ दस यत्र पैकी यत्र चित्र न १० ([illegible]) ना '[illegible]' [illegible] '[illegible]' [illegible]। यत्र चित्र न ११ ([illegible]) ना '[illegible]' [illegible] '[illegible]' तथा '[illegible]' [illegible]

संस्थानां प्रकाशनो

प्रयोजक : अमृतलाल कालिदास दोशी, बी ए.

१ श्री प्रतिक्रमण-सूत्र प्रबोधटीका, भाग पहेलो (बीजी आवृत्ति)	रु.	५=००
२ श्री प्रतिक्रमण-सूत्र प्रबोधटीका, भाग बीजो	रु.	५=००
३ श्री प्रतिक्रमण-सूत्र प्रबोधटीका, भाग त्रीजो	रु.	५=००
४ श्री प्रतिक्रमणनी पवित्रता (बीजी आवृत्ति-अप्राप्य)	रु.	०=३७
५ श्री पचप्रतिक्रमण-सूत्र (प्रबोधटीकानुसारी) शब्दार्थ, अर्थ-संकलना तथा सूत्र-परिचय साथे (अप्राप्य)	रु.	२=००
६ श्री पचप्रतिक्रमण-सूत्र -हिंदी (प्रबोधटीकानुसारी) शब्दार्थ, अर्थ-सकलना तथा सूत्र-परिचय साथे (अप्राप्य)	रु.	२=००
७ सचित्र सार्थ सामायिक-चैत्यवदन (प्रबोधटीकानुसारी—अप्राप्य)	रु.	०=५०
८ योगप्रदीप (प्राचीन गुजराती बालावबोध अने अर्वाचीन गुजराती अनुवाद सहित)	रु.	१=५०
९ ध्यानविचारः (गुजराती अनुवाद साथे)		......
१० नमस्कार स्वाध्याय (प्राकृत विभाग)	रु	२०=००

—: छपाय छे :—

११ नमस्कार स्वाध्याय (सस्कृत विभाग)

१२ नमस्कार स्वाध्याय (अपभ्रंश-हिंदी-गूजराती विभाग)

१३ जिनस्नात्रविधि

१४ मातृका प्रकरण

१५ योगसार

१६ A Comparative Study of the Jaina Theories of Reality and Knowledge

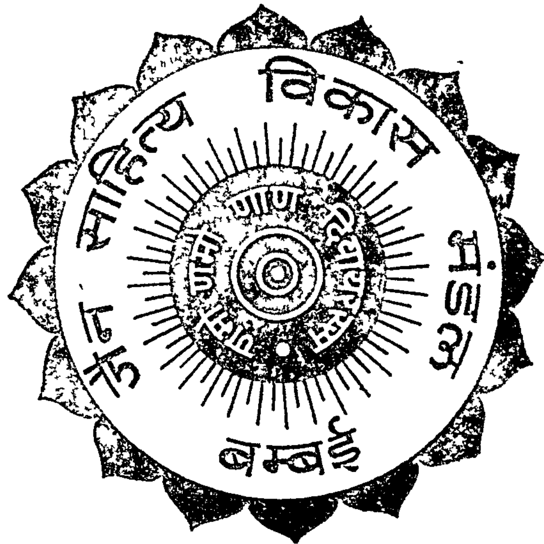
जैन साहित्य विकास मंडळ

इरलाब्रीज, ११२ घोडबंदर रोड

विलेपारले, मुंबई-५७.



ह्रीँकारमध्यस्थित पार्श्वप्रभु


जैन साहित्य विकास मंडल
बम्बई



परितोमधुरास्तूपद्वारसुशोभनविभूषितपञ्चपरमेष्टिमहामन्त्र

चत्तारि मगल – अरिहता मगल,
सिद्धा मगल, साहू मगल,
केवलिपन्नत्तो धम्मो मगल॥

चत्तारि लोगुत्तमा –



अरिहता लोगुत्तमा,
सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा,
केवलिपन्नत्तो धम्मो लोगुत्तमा॥

चत्तारि सरण पवज्जामि –
अरिहते सरण पवज्जामि,
सिद्धे सरण पवज्जामि, साहू सरण पवज्जामि,
केवलिपन्नत्त धम्म सरण पवज्जामि॥

मथुरायागपटमध्यस्थापितमगल सुपाठ

॥ श्री शङ्खेश्वरपार्श्वनाथाय नमः ॥

[१]

भगवईसुत्तस्स मंगलायरणं ॥

णमो अरहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो सव्वसाहूणं ॥

श्री अभयदेवसूरिरचिता भगवतीसूत्रवृत्तिः ।

नमो अरहंताणमित्यादि । तत्र नम इति नैपातिक पद द्रव्यभावसङ्कोचार्थम्, आह च—

"नेवाइय पय दव्वभावसंकोयण पयत्थो"[1]।

मन करचरणमस्तकसुप्रणिधानरूपो नमस्कारो भवत्वित्यर्थ । केभ्य इत्याह—'अर्हद्भ्य' अमरवरविनिर्मिताशोकादिमहाप्रातिहार्यरूपा पूजामर्हन्तीत्यर्हन्त, यदाह—

भगवतीसूत्रना मंगलाचरणनो अनुवाद

अरहंत भगवतोने नमस्कार हो ।
सिद्ध भगवतोने नमस्कार हो ।
आचार्य भगवतोने नमस्कार हो ।
उपाध्याय भगवतोने नमस्कार हो ।
सर्व साधु भगवतोने नमस्कार हो ।

श्रीअभयदेवसूरिरचित वृत्तिनो भाषानुवाद

'नमो अरहंताणं' वगेरे । अहीं 'नम' शब्द नैपातिक पद छे अने तेनो द्रव्यसंकोच तथा भावसंकोच ए अर्थ छे, (कारणके आवश्यकनिर्युक्तिमा) कह्यु छे के—"'नम' ए निपातरूप पद छे अने द्रव्यसंकोच तथा भावसंकोच ए एनो अर्थ छे ।"

मन, हाथ, पग तथा मस्तकना सुप्रणिधानरूप नमस्कार हो । कोने नमस्कार हो तो जणावे छे के, अरहंतोने नमस्कार हो । देवोए रचेली अशोकवृक्ष आदि (आठ) महाप्रातिहार्यरूप पूजाने जेओ योग्य छे ते अरहंत कहेवाय छे । (आवश्यकनियुक्तिमा) कह्यु छे के—

---

1 आव० नि० गा० ८९० । जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० ११४

निर्वृतिपुरीमगच्छन्, अथवा 'षिधु संराद्धौ'[1] इति वचनात् सिद्ध्यन्ति स्म—निष्ठितार्था भवन्ति स्म, अथवा 'षिधूञ् शास्त्रे माङ्गल्ये च'[2] इति वचनात् सेधन्ति स्म—शासितारोऽभूवन् माङ्गल्यरूपतां चानुभवन्ति स्मेति सिद्धाः, अथवा सिद्धाः—नित्याः, अपर्यवसानस्थितिकत्वात्, प्रख्याता वा भव्यैरुपलब्धगुणसन्दोहत्वात्, आह च—

"ध्मातं सितं येन पुराणकर्म्म यो वा गतो निर्वृतिसौधमूर्ध्नि ।
ख्यातोऽनुशास्ता परिनिष्ठितार्थो यः सोऽस्तु सिद्धः कृतमङ्गलो मे ॥"

अतस्तेभ्यो नमः । नमस्करणीयता चैषामविप्रणाशिज्ञानदर्शनसुखवीर्यादिगुणयुक्ततया स्वविषयप्रमोदप्रकर्षोत्पादनेन भव्यानामतीवोपकारहेतुत्वादिति ॥ २ ॥

'णमो आयरियाणं' ति । आ—मर्यादया तद्विषयविनयरूपया चर्यन्ते—सेव्यन्ते जिनशासनार्थोपदेशकतया तदाकाङ्क्षिभिरित्याचार्याः । उक्तञ्च—

"सुत्तत्थविऊ लक्खणजुत्तो गच्छस्स मेढिभूओ य ।
गणतत्तिविप्पमुक्को अत्थं वाएइ आयरियो ॥"

अथवा 'षिध्' धातुनो 'संराद्धि' (निष्ठा) एवो अर्थ थाय छे । जेओनां प्रयोजनो सिद्ध थई गयेलां छे ते सिद्ध कहेवाय छे । अथवा 'षिध्' धातुनो शास्त्र अने मांगल्य एवो अर्थ थाय छे । एटले जेओ शासक छे तथा जेओ मंगळरूप छे ते सिद्ध कहेवाय छे । अथवा सिद्ध एटले नित्य, कारणके तेमनी स्थिति अनंत होय छे । अथवा सिद्ध एटले प्रख्यात; कारणके भव्य जीवो एमना गुणसमूहने सारी रीते जाणता ज होय छे । कह्युं छे के— "बांधेलुं प्राचीन कर्म जेमणे बाळी नाख्युं छे, जेओ मोक्षरूपी महेलनी टोच उपर जईने बेठेला छे, जेओ प्रसिद्ध छे, जे अनुशासन करनार छे अने जेओ कृतार्थ छे ते सिद्ध भगवान मने मंगल करनारा थाओ ।" आवा सिद्ध भगवंतोने मारो नमस्कार हो ।

सिद्ध भगवंतो अविनाशी, ज्ञान—दर्शन—सुख—वीर्य वगेरे गुणोथी युक्त होवाने लीधे तेमना प्रति उत्कृष्ट आनंद उत्पन्न थाय छे । आ रीते तेओ आनंदने उत्पन्न करनारा होवाथी भव्य जीवोने अत्यंत उपकार करनारा छे तेथी सिद्ध भगवंतो नमस्करणीय छे ।

'णमो आयरियाणं' । जिनशासनना अर्थना उपदेशक होवाने लीधे तेना अभिलाषी मनुष्यो विनयरूपी मर्यादाथी जेमनी सेवा करे छे तेमने आचार्य कहेवामां आवे छे । कह्युं छे के "सूत्र तथा अर्थने जाणनारा, लक्षणथी युक्त, गच्छना आलंबनभूत तथा गच्छनी चिंताथी रहित एवा आचार्य भगवान् अर्थनी वाचना आपे छे ।"

---

१ पाणिनीयधातुपाठः १२६९. २ "षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये च"—पाणिनीयधातुपाठः ४१.

'अरिहंताणं' ति-पाठान्तरम्, तत्र कर्मारिहन्तृभ्य, आह च—

"अट्ठविहंपि य कम्मं अरिभूयं होइ सयलजीवाणं।
तं कम्ममरिं हंता अरिहंता तेण वुच्चंति॥"

'अरुहंताणं' मित्यपि पाठान्तरम्, तत्र 'अरोहद्‌भ्य' अनुपजायमानेभ्य, क्षीणकर्म्मबीजत्वात्, आह च—

"दग्धे बीजे यथात्यन्तं प्रादुर्भवति नाङ्कुरं।
कर्मबीजे तथा दग्धे न रोहति भवाङ्कुरं॥"

नमस्करणीयता चैषां भीमभवगहनभ्रमणभीतभूतानामनुपमानन्दरूपपरमपदपुरपथप्रदर्शकत्वेन परमोपकारित्वादिति॥ १॥

'णमो सिद्धाणं' ति। सितं-बद्धमष्टप्रकारं कर्म्मेन्धनं ध्मातं-दग्धं जाज्वल्यमानशुक्लध्यानानलेन यैस्ते निरुक्तविधिना सिद्धा। अथवा 'षिधु गतौ' इति वचनात्, सेधन्ति स्म-अपुनरावृत्त्या

अथवा 'अरहंताणं'ने बदले 'अरिहंताणं' एवो पाठ पण मळे छे। 'कर्मरूप शत्रुओने हणनारा अरिहंत भगवानोने नमस्कार थाओ' एवो अर्थ त्यां समजवो। (आवश्यकनिर्युक्तिमां) कह्युं छे के—"आठ प्रकारनुं कर्म ज सर्व जीवोने शत्रुरूप छे, ते कर्मरूपी शत्रुनो नाश करे छे तेथी अरिहंत कहेवाय छे।"

"बारसंगो जिणक्खाओ, सज्झाओ कहिओ बुहेहिं ।
तं उवइसंति जम्हा उवज्झाया तेण वुच्चंति ॥"[1]

अथवा उपाधानमुपाधिः—सन्निधिस्तेनोपाधिना उपाधौ वा आयो—लाभः श्रुतस्य येषाम्, उपाधीनां वा —विशेषणानां प्रक्रमाच्छोभनानामायो—लाभो येभ्यः, अथवा उपाधिरेव—सन्निधिरेव आयम्—इष्टफलं दैवजनितत्वेन आयानाम्—इष्टफलानां समूहस्तदेकहेतुत्वाद् येषाम्, अथवा आधीना—मनःपीडानामायो—लाभ आध्यायः, अधियां वा—नञः कुत्सार्थत्वात् कुबुद्धीनामायोऽध्यायः 'ध्यै चिन्तायाम्' इत्यस्य धातोः प्रयोगान्नञः कुत्सार्थत्वादेव च दुर्ध्यानं वाऽध्यायः, उपहत आध्यायः अध्यायो वा यैस्ते उपाध्यायाः, अतस्तेभ्यः । नमस्यता चैषां सुसम्प्रदायायातजिनवचनाध्यापनतो विनयनेन भव्यानामुपकारित्वादिति ॥ ४ ॥

'णमो सव्वसाहूणं' इति । साधयन्ति ज्ञानादिशक्तिभिर्मोक्षमिति साधवः, समतां वा सर्वभूतेषु ध्यायन्तीति निरुक्तिन्यायात् साधवः, यदाह—

"जिनेश्वरे प्ररूपेली द्वादशांगीने पंडित पुरुषो स्वाध्याय कहे छे । (उपाध्याय भगवंतो) आ स्वाध्यायनो वाचनारूपे उपदेश आपता होवाथी उपाध्याय कहेवाय छे ।"

अथवा (उपाध्याय शब्दना बीजा पण अनेक अर्थो नीकळे छे, जेम के–) 'उपाधि' एटले 'संनिधि' । जेमनी संनिधिथी अथवा जेमना सांनिध्यमां रहेवाथी श्रुत ज्ञाननो 'आय' एटले लाभ थाय अथवा जेमनी पासेथी उपाधि एटले सुंदर विशेषणोनो लाभ थाय तेमने उपाध्याय कहेवामां आवे छे । अथवा जेमनी उपाधि एटले जेमनुं सांनिध्य 'आय' एटले इष्ट फळोनां समूहमां कारणभूत छे ते उपाध्याय कहेवाय छे ।

अथवा बीजो पण अर्थ छे । 'आधि' एटले 'मननी पीडा' तेनो 'आय' एटले 'लाभ' ते 'आध्याय' । अथवा 'अधी' एटले 'कुबुद्धि' तेनो 'आय' एटले 'लाभ' ते 'अध्याय' । अथवा 'अध्याय' एटले 'दुर्ध्यान' । आ 'आध्याय' तथा 'अध्याय' ने जेमणे उपहत कर्या छे (अर्थात् हणी नाख्या छे) ते उपाध्याय कहेवाय छे । आवा उपाध्याय भगवंतोने मारो नमस्कार हो ।

सुसंप्रदायथी (प्रतिष्ठित परंपराथी) चाल्या आवता जिनवचननुं भव्य जीवोने (अध्ययन कराववा) द्वारा विनीत बनावीने उपकार करता होवाथी उपाध्याय भगवंतो नमस्कारने योग्य छे ।

'णमो सव्वसाहूणं' । ज्ञान वगेरे शक्तिओथी मोक्षनी जे साधना करे छे ते साधु कहेवाय छे । अथवा सर्व प्राणीओ प्रति समभावनुं जे ध्यान करे छे ते साधु कहेवाय छे । (आवश्यक-निर्युक्तिमां) कह्युं छे के—

---

१ आव० नि० गा० १००१ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० १५४.

अथवा आचारो—ज्ञानाचारादि पञ्चधा, आ—मर्यादया वा चारो—विहार आचार, तत्र साधव स्वयकरणात् प्रभाषणात् प्रदर्शनाच्चेत्याचार्या, आह च—

"पञ्चविह आयार आयरमाणा तहा पयासता ।[1]
आयार दसता आयरिया तेण वुच्चति ॥"

अथवा आ—ईषद् अपरिपूर्णा इत्यर्थ चारा—हेरिका ये ते आचारा, चारकल्पा इत्यर्थ, युक्तायुक्तविभागनिरूपणनिपुणा विनेया, अतस्तेषु साधवो यथावच्छास्त्रार्थोपदेशकतया इत्याचार्या, अतस्तेभ्य । नमस्यता चेषामाचारोपदेशकतयोपकारित्वात् ॥ ३ ॥

'णमो उवज्झायाणं' ति । उप—समीपमागत्याधीयते 'इङ् अध्ययने' इति वचनात् पठ्यते 'इणु गता'विति वचनाद्वा अधि—आधिक्येन गम्यते, 'इक् स्मरणे' इति वचनाद्वा स्मर्यते सूत्रतो जिनप्रवचन येभ्यस्ते उपाध्याया, यदाह—

अथवा ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चरित्राचार, तपाचार, वीर्याचार—आ पाच प्रकारना आचारने आचार कहेवामा आवे छे । अथवा मर्यादापूर्वक जे विहार करवामा आवे तेने आचार कहेवामा आवे छे । आ प्रकारना आचरने जेओ पोते पाळे छे, अर्थथी उपदेशे छे तथा क्रियाथी बीजाने करी बतावे छे ते आचार्य कहेवाय छे । (आवश्यकनिर्युक्तिमा) कह्यु छे के—"पाच प्रकारना आचार पाळता, तेनो अर्थ कहेता तथा (पडिलेहण आदि क्रिया द्वारा) आचारने दर्शावता होवाथी आचार्य कहेवाय छे ।"

अथवा बीजी व्युत्पत्ति प्रमाणे आचार शब्दनो 'योग्य—अयोग्यनो विभाग करवामा निपुण शिष्यो' एवो अर्थ थाय छे । तेमने जेओ शास्त्रनो अर्थ यथावत् बतावे छे ते आचार्य कहेवाय छे । आवा आचार्य भगवतोने नमस्कार हो । आचारना उपदेशकपणाने लीधे उपकारी होवाथी आचार्य भगवतो नमस्कार करवाने योग्य छे ।

'णमो उवज्झायाण' । उपाध्याय शब्दमा त्रण शब्दो छे । उप+ अधि+इ । आमा 'उप' एटले समीप। 'अधि' एटले आधिक्य। 'इ' धातुना त्रण अर्थ छे—अध्ययन करवु, जवु (जाणवु)[2] अने स्मरण करवु । अर्थात् जेमनी पासे जईने अधिकपणे जिनप्रवचननु सूत्रथी अध्ययन करवामा आवे छे, ज्ञान मेळववामा आवे छे अने स्मरण करवामा आवे छे तेओ उपाध्याय कहेवाय छे । (आवश्यकनिर्युक्तिमा) कह्यु छे के—

---

१ आव० नि० गा० ९९४ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १५२ २ सर्वे गत्यर्था ज्ञानार्थका —गति अर्थवाची सर्व धातुओ ज्ञानना अर्थमा पण वपराय छे । एटले अहीं 'जवु' नो अर्थ 'जाणवु' समजवो ।

'णमो लोए सव्वसाहूणं' ति क्वचित् पाठः, तत्र सर्वशब्दस्य देशसर्वतायामपि दर्शनादपरिशेषसर्वतोपदर्शनार्थमुच्यते 'लोके' मनुष्यलोके, न तु गच्छादौ, ये सर्वसाधवस्तेभ्यो नम इति। एषां च नमनीयता मोक्षमार्गसाहायककरणेनोपकारित्वात्, आह च—

"असहाए सहायत्तं, करेंति मे संयमं करेंतस्स।
एएण कारणेणं, णमामिऽहं सव्वसाहूणं॥" ति[1]

ननु यद्ययं सङ्क्षेपेण नमस्कारस्तदा सिद्धसाधूनामेव युक्तः, तद्ग्रहणेऽन्येषामप्यर्हदादीनां ग्रहणात्, यतोऽर्हदादयो न साधुत्वं व्यभिचरन्ति। अथ विस्तरेण तदा ऋषभादिव्यक्तिसमुच्चारणतोऽसौ वाच्यः स्यादिति, नैवं, यतो न साधुमात्रनमस्कारेऽर्हदादिनमस्कारफलमवाप्यते, मनुष्यमात्रनमस्कारे राजादिनमस्कारफलवदिति कर्त्तव्यो विशेषतोऽसौ, प्रतिव्यक्ति तु नासौ वाच्योऽशक्यत्वादेवेति। ननु यथा प्रधानन्यायमङ्गीकृत्य सिद्धादिरानुपूर्वी युक्ताऽत्र, सिद्धानां सर्वथा कृतकृत्यत्वेन सर्वप्रधानत्वात्, नैवम्, अर्हदुपदेशेन सिद्धानां ज्ञायमानत्वादर्हतामेव च तीर्थप्रवर्त्तनेनात्यन्तोपकारित्वादित्यर्हदादिरेव सा।

कोईक प्रतमां **'णमो लोए सव्वसाहूणं'** एवो पाठ पण मळे छे। 'सर्व' शब्द देशसर्वतानो पण वाचक होवाथी संपूर्ण सर्वता बताववाने माटे 'लोए' शब्दनो प्रयोग करेलो छे। अर्थात् मात्र गच्छ वगेरेमां नहि परंतु आखा मनुष्यलोकमां रहेला जे सर्व साधुओ तेमने मारो नमस्कार हो। ए प्रमाणे 'णमो लोए सव्वसाहूणं' नो अर्थ समजवो।

मोक्षमार्गमां चालता जीवोने सहाय करवा वडे उपकारी होवाथी साधुओ नमस्कार करवालायक छे। (आवश्यकनिर्युक्तिमां) कह्युं छे के—'असहाय एवा मने संयम पाळती वखते सहाय करे छे तेथी सर्व साधुओने हुं नमस्कार करूं छुं।'

शंका—जो आ नमस्कार संक्षेपथी करवो होय तो सिद्ध अने साधुने ज करवो योग्य छे; कारणके सिद्ध अने साधुमां अरिहंत वगेरे आवी जाय छे; केमके अरिहंत वगेरेमां साधुपणुं अवश्य होय छे ज। अने जो विस्तारथी नमस्कार करवो होय तो ऋषभदेव वगेरे भगवानोनां व्यक्तिगत नामो उच्चारीने नमस्कार करवो जोईए।

समाधान—तमारी वात बराबर नथी; कारणके जेम मात्र मनुष्यने नमस्कार करवाथी राजा वगेरेने नमस्कार करवानुं फळ प्राप्त थतुं नथी, ते प्रमाणे मात्र साधुने नमस्कार करवाथी अरिहंत वगेरेने नमस्कार करवानुं फळ प्राप्त थतुं नथी। माटे अरिहंतोने विशेषतापूर्वक नमस्कार करवो जोईए। अने व्यक्तिशः नमस्कार तो उच्चारी शकाय तेम नथी; कारणके व्यक्तिओ अनंत होवाथी ए अशक्य छे।

शंका—मुख्य होय तेने पहेलां नमस्कार करवो जोईए। आवो न्याय होवाथी सिद्ध भगवंतोने पहेलां नमस्कार करवो जोईए अने अरिहंत वगेरेने पछीथी नमस्कार करवो जोईए; कारणके सिद्धो सर्वथा कृतकृत्य होवाने लीधे बधामां मुख्य छे।

समाधान—तमारी वात बराबर नथी। सिद्धो पण अरिहंतना उपदेशथी ज जणाय छे अने अरिहंतो ज तीर्थने प्रवर्तावे छे; तेथी अत्यंत उपकारी होवाने लीधे अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधु ए क्रम ज बराबर छे।

---

१ आव० नि० गा० १०१३ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० १५६.

"निव्वाणसाहए जोए, जम्हा साहेंति साहुणो।
समा य सव्वभूएसु, तम्हा ते भावसाहुणो ॥[1]"

साहायकं वा संयमकारिणां धारयन्तीति साधवः, निरुक्तेरेव। सर्वे च ते सामायिकादिविशेषणाः प्रमत्ताद्यः पुलाकादयो वा जिनकल्पिक-प्रतिमाकल्पिक-यथालन्दकल्पिक-परिहारविशुद्धिकल्पिक-स्थविरकल्पिक-स्थितकल्पिक-स्थितास्थितकल्पिक-कल्पातीतभेदाः, प्रत्येकबुद्ध-स्वयंबुद्ध-बुद्धबोधितभेदाः, भारतादिभेदाः, सुषमदुष्षमादिविशेषिता वा साधवः सर्वसाधवः, सर्वग्रहणं च सर्वेषां गुणवतामविशेषनमनीयताप्रतिपादनार्थम्, इदं चार्हदादिपदेष्वपि बोद्धव्यं, न्यायस्य समानत्वादिति। अथवा—सर्वेभ्यो जीवेभ्यो हिताः सार्वास्ते च ते साधवश्च, सार्वस्य वा—अर्हतो न तु बुद्धादेः साधवः सार्वसाधवः, सर्वान् वा शुभयोगान् साधयन्ति—कुर्वन्ति, सार्वान् वा—अर्हतः साधयन्ति तदाज्ञाकरणादाराधयन्ति प्रतिष्ठापयन्ति वा दुर्नयनिराकरणादिति सर्वसाधवः सार्वसाधवो वा। अथवा श्रव्येषु—श्रवणार्हेषु वाक्येषु, अथवा सव्यानि—दक्षिणान्यनुकूलानि यानि कार्याणि तेषु साधवः—निपुणाः श्रव्यसाधवः सव्यसाधवो वा, अतस्तेभ्यः।

"निर्वाणना साधक योगोनी साधुओ साधना करे छे तेमज सर्व जीवो उपर समभावने धारण करे छे तेथी ते भावसाधु कहेवाय छे।" अथवा संयमनुं पालन करनारा आत्माओने सहाय करे छे तेथी साधु कहेवाय छे। 'सर्व साधु' शब्दथी सामायिकादि विशेषणोथी युक्त, प्रमत्त[2] वगेरे, पुलाक[3] वगेरे, जिनकल्पिक, प्रतिमाकल्पिक, यथालंदकल्पिक, परिहारविशुद्धिकल्पिक, स्थविरकल्पिक, स्थितकल्पिक, स्थितास्थितकल्पिक, कल्पातीत, प्रत्येकबुद्ध, स्वयंबुद्ध, बुद्धबोधित, भरत वगेरे क्षेत्रना तेमज सुषम, दुषमा वगेरे काळना साधुओ—एम सर्व प्रकारना साधुओ समजवा।

सर्व गुणवान पुरुषो भेदभाव विना नमस्कार करवालायक छे ते जणाववा माटे, 'सर्व' शब्दनो अहीं प्रयोग करवामां आव्यो छे। ए ज न्याये 'सर्व' शब्दनो योग अरिहंत वगेरे पदोमां पण समजी लेवो।

अथवा ('सव्वसाहूणं' ना बीजा पण अनेक अर्थो थाय छे, जेम के—) 'सार्व' एटले सर्व जीवोनुं हित करनारा साधुओ ते 'सार्वसाधु'। अथवा बुद्ध वगेरेना नहि परंतु 'सार्व' एटले अरिहंतना जे साधुओ ते 'सार्वसाधु'। अथवा सर्व शुभ योगने साधे ते 'सर्वसाधु'। अथवा आज्ञानुं पालन करीने 'सार्व' एटले अरिहंतने जेओ आराधे छे किंवा दुर्नयने दूर करीने (अन्य मतोनुं खंडन करीने) जिनेश्वर भगवानना मतने प्रतिष्ठित करे छे ते 'सार्वसाधु'। आवा 'सर्वसाधु' अथवा 'सार्वसाधु'ने मारो नमस्कार हो।

अथवा 'श्रव्य' एटले श्रवण करवालायक वाक्यो, तेमां निपुण ते 'श्रव्यसाधु'। अथवा 'सव्य' एटले अनुकूळ कार्यो, तेमां निपुण ते 'सव्यसाधु'। आवा 'श्रव्यसाधु' अथवा 'सव्यसाधु'-ओने नमस्कार हो।

---

1 आव० नि० गा० १०१० जुओ प्रस्तुत भाग पृ० १५ 2 प्रमत्त वगेरे एटले छट्ठा प्रमत्त गुणस्थानथी मांडी चौदमा गुणस्थान सुधीना साधुओ। 3 पुलाक ए एक प्रकारनी लब्धिनुं नाम छे।

[२]

सप्तसु स्मरणेषु प्रथमं नमस्कारस्मरणम् ।

नमो अरिहंताणं ।
नमो सिद्धाणं ।
नमो आयरियाणं ।
नमो उवज्झायाणं ।
नमो लोए सव्वसाहूणं ।
एसो पंचनमुक्कारो,
सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं;
पढमं हवइ मंगलं ॥

(१) श्रीसिद्धिचन्द्रगणिकृता व्याख्या ॥

श्रीनाभेयः श्रियं दधात्; सुरासुरनमस्कृतः । [1]विभ्रानेकपपञ्चास्यो, दधद् विश्वजनीनताम् ॥ १ ॥
अकब्बरसुरत्राणहृदयाम्बुजषट्पदः । भानुचन्द्रश्चिरं जीयाद्, गुरुर्मे वाचकाग्रणीः ॥ २ ॥
अष्टोत्तरशतानां योऽवधानाना विधायकः । दधानः खुश्फहमिति, विरुदं शाहिनाऽर्पितम् ॥ ३ ॥
तेन वाचकचन्द्रेण, सिद्धिचन्द्रेण सर्वदा । बुद्धिवृद्ध्यै वितन्द्रेण, बालानामल्पमेधसाम् ॥ ४ ॥
शश्वत् सप्तस्मरणानां, वृत्तिरेषा विधीयते । तत्र तावन्नमस्कारः, एव व्याख्यायते मया ॥ ५ ॥
त्रिभिर्विशेषकम् ।

नमो अरिहंताणमिति । नमो—नमस्कारः । केभ्यः ? 'अर्हद्भ्यः' शक्रादिकृता पूजां सिद्धिगतिं चार्हन्तस्तेभ्यः । उक्तं च (आवश्यकनिर्युक्तौ नमस्कारनिर्युक्तौ ४०६ तमे पत्राङ्के)—

"अरिहंति वंदणनमंसणाइं अरिहंति पूयाइसक्कारं । सिद्धिगमणं च अरिहा, अरिहंता तेण वुच्चंति" ॥ १ ॥

नमो—नमस्कारः । केभ्यः ? 'सिद्धेभ्यः' सितं—प्रभूतकालेन बद्धं अष्टप्रकारं कर्म शुक्लध्यानाग्निना ध्मातं—भस्मीकृतं यैस्ते निरुक्तिवशात् सिद्धास्तेभ्यः इति 'बहुव्रीहिः' । यदुक्तं (आव० नम० ४३८ तमे पत्राङ्के)—

"दीहकालरयं जं तु, कम्मं[2] से सिअमट्ठहा ।
सिअं धंतं ति सिद्धस्स, सिद्धत्तमुवजायइ ॥" ॥ २ ॥

नोंधः—१. उपाध्याय श्रीसिद्धिचंद्रगणिकृत व्याख्या अने २. श्रीहर्षकीर्तिसूरिकृत टीकानो अनुवाद अहीं आप्यो नथी केमके, तेनो भावार्थ श्रीअभयदेवसूरीए रचेली व्याख्याना अनुवादमा प्रकारान्तरे आवी ज जाय छे ।

१ अनेकपाः हस्तिनः ।

२ पाठान्तरम्—जंतुकम्मं से सिअमट्ठहा ।

नन्वेवमाचार्यादि सा प्राप्नोति, क्वचित्काले आचार्येभ्य सकाशादर्हदादीना ज्ञायमानत्वात्, अत एव च तेपामेवात्यन्तोपकारित्वात्, नैवम्, आचार्याणामुपदेशदानसामर्थ्यमर्हदुपदेशत एव, न हि स्वतन्त्रा आचार्यादय उपदेशतोऽर्थज्ञापकत्व प्रतिपद्यन्ते, अतोऽर्हन्त एव परमार्थेन सर्वार्थज्ञापका , तथा अर्हत्परिषद्रूपा एवाचार्यादयोऽतस्तान नमस्कृत्यार्हन्नमस्करणमयुक्तम् , उक्त च—

" ण य कोइवि परिसाए, पणमित्ता पणमए रन्नो " त्ति ॥[1] ५ ॥

शङ्का—जो तमे एम कहेशो तो आचार्योने ज प्रथम नमस्कार करवो जोइए, कारणके कोईक काळे अरिहत वगेरे आचार्यो द्वारा ज जणाय छे तेथी आचार्यो ज अत्यत उपकारी छे ।

समाधान—ए वात बराबर नथी, कारणके आचार्योमा उपदेश आपवानु सामर्थ्य अरिहतना उपदेशमाथी ज आवे छे, आचार्यो स्वतत्र रीते उपदेशथी अर्थोने जणावता नथी। (अरिहते जे आपेलो उपदेश तेना आधारे ज आचार्यो उपदेश आपता होय छे, परतु स्वतत्र रीते नहीं) तेथी वस्तुत अरिहतो ज सर्व अर्थोने जणावनारा छे । वळी आचार्य वगेरे तो अरिहतनी पर्षदारूप छे, माटे तेमने (आचार्य वगेरेने) नमस्कार करीने अरिहतोने नमस्कार करवो ते अनुचित छे । (आवश्यकनिर्युक्तिमा) कह्यु छे के—"कोई पण माणस पर्षदाने प्रणाम करीने पछी राजाने प्रणाम करतो नथी ।"

परिचय

जैन आगमग्रथो पैकी पाचमा अग तरीके प्रसिद्ध 'श्रीव्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्र', जेनु बीजु नाम 'श्रीभगवतीसूत्र' छे, तेमा मगलाचरणरूपे श्रीनमस्कारसूत्रना पचपरमेष्ठी पदोनो उल्लेख प्रथम करवामा आव्यो छे । ते सूत्र उपर नवागीवृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरिए व्याख्या रची छे । तेमाथी पाच पदोनी व्याख्या पूरतो भाग अहीं लेवामा आव्यो छे ।

आगमोदय समिति (सूरत) द्वारा वि स १९७४ मा प्रकाशित 'श्रीमद् भगवतीसूत्रम्' भा १ मा आ व्याख्या छपायेली छे । तेमा मुनिराज श्रीपुण्यविजयजी महाराजे प्राचीन अनेक हस्तलिखित प्रतिओ साथे मेळवीने मूळमा तथा व्याख्यामा पाठातरो नोंघेला छे । तेना आधारे आ सूत्र अने व्याख्या अमे अहीं मुद्रित करी छे । तेनो गुजरातीमा भावानुवाद करीने ते पण साथे प्रगट करेल छे ।

आ टीकाना कर्ता श्रीअभयदेवसूरि, श्रीजिनेश्वरसूरिना शिष्य हता । श्रीअभयदेवसूरिने वि स १०८८ मा आचार्यपद मळ्यु हतु अने स ११२० थी ११२८ सुधीमा नव अगो पर तेमणे टीका रची हती । ए सिवाय 'पचाशक प्रकरण', 'आगम अष्टोत्तरी प्रकरण' वगेरे अनेक ग्रथो रच्यानी माहिती मळे छे ।[2]

---

१ आव० नि० गा० १०२१ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १५९ २ तेमनी विशेष माहिती माटे जुओ 'श्रीअभयदेवसूरि'। ले प श्री बेचरदास, प्रका श्री वाडीलाल एम् पारेख, कपडवज ।

च पञ्चपरमेष्ठिनमस्काररूपं प्रथमसरणमादौ व्याख्यायते 'नमो अरिहंताणं' इत्यादि । अत्र पाठत्रयम्— अरहंताणं, अरिहंताणं, अरुहंताणं । तत्र अर्हन्ति सुरेन्द्रादिकृता पूजां इत्यर्हन्तः तेभ्योऽर्हभ्द्यः । अरीन्-रागद्वेषादीन् घ्नन्तीति अरिहन्तारः तेभ्योऽरिहन्तृभ्य. । न रोहन्ति—नोत्पद्यन्ते दग्धकर्मबीजत्वात्, पुनः संसारे न जायन्ते इत्यरुहन्तः तेभ्योऽरुहभ्द्यो नमो नमस्कारोऽस्तु । प्राकृतत्वात् चतुर्थ्यर्थे षष्ठी ॥१॥

तथा नमः सिद्धेभ्यः । 'षिञ् बन्धने' (पाणिनीयधातुपाठे १४७८) सितं—बद्धं प्रस्तावादष्टविधं कर्म तद् धमिति ध्मातं—शुक्लध्यानाग्निना दग्धं—भस्मीकृतं यैस्ते निरुक्तिवशात् सिद्धाः । यद्वा सिद्धिगतिनामधेयं स्थान प्राप्ताः सिद्धाः । यद्वा सिद्धाः—सुनिष्ठितार्था मोक्षप्राप्त्या अपुनर्भवत्वेन सम्पूर्णार्थास्तेभ्य सिद्धेभ्यो नमः ॥ २ ॥

तथा नम आचार्येभ्यः । स्वयं ज्ञानादिपञ्चविधाचारवन्तोऽन्येषामपि तत्प्रकाशकत्वाद् आचारे साधव आचार्याः तेभ्यः । योग्यः कुशलो हितश्च साधुरुच्यते ॥ ३ ॥

तथा नम उपाध्यायेभ्यः । उप—समीपमागत्य येभ्यः सकाशादधीयत इत्युपाध्यायाः । अथवा उप—समीपे अध्यायो—द्वादशाङ्ग्याः पठनं सूत्रतोऽर्थतश्च येषा ते उपाध्यायाः तेभ्यः उपाध्यायेभ्यो नमः ॥ ४ ॥

तथा नमो लोके सर्वसाधुभ्यः । सम्यग्ज्ञान—दर्शन—चारित्रादिभिः साधयन्ति मोक्षमार्गमिति साधवः । लोके—सार्धद्वयद्वीपलक्षणे पञ्चचत्वारिंशल्लक्षयोजनप्रमाणे मनुष्यलोके सर्वे च ते साधवश्च । यद्वा सार्वस्य—अर्हतः साधवः सार्वसाधवः, तेभ्यो नमः—नमस्कारोऽस्तु ॥ ५ ॥

एषः—पूर्वोक्तः 'पञ्चनमस्कारः' पञ्चानाम्—अर्हत्—सिद्धाऽऽचार्योपाध्याय—सर्वसाधूनां नमस्कारः—प्रणामः, सर्वपापप्रणाशनः—(समस्तदुरित) निवारकः ।

पुनः सर्वेषां मङ्गलानां—मङ्गलकारकवस्तूना दधि—दूर्वा—ऽक्षत—चन्दन—नालिकेर—पूर्णकलश—स्वस्तिक—दर्पण—भद्रासन—वर्धमान—मत्स्ययुगल—श्रीवत्स—नन्द्यावर्तादीनां मध्ये प्रथमं— मुख्यं मङ्गलं मङ्गलकारको भवति । यतोऽस्मिन् पठिते जपिते[1] स्मृते च सर्वाण्यपि मङ्गलानि भवन्तीत्यर्थः ॥६—९॥

इदं च सरणमनादिभूतं, यतो जिनानां चतुर्विंशतयोऽनन्ताः सञ्जाताः अनन्ताश्च भविष्यन्ति तदा सदैवेदमेव, अतोऽनाद्यनन्तमित्यर्थः ॥

अत्र पदानि नव (९), सम्पदः अष्टौ (८), अक्षराणि अष्टषष्टिः (६८), लघ्वक्षराणि एकषष्टिः (६१), गुर्वक्षराणि सप्त (७) ज्ञेयानि ॥

नागपुरीयतपोगण—राजः श्रीहर्षकीर्तिसूरिवरः ।
प्रथमसरणे व्याख्यां, सङ्क्षेपाद् विहितवान् सम्यक् ॥

॥ इति प्रथमसरणव्याख्या ॥

---

१ जप्ते ।

नमो—नमस्कार । केभ्य ? 'आचार्येभ्य' स्वय पञ्चविधाचारवन्तोऽन्येषामपि तत्प्रकाशकत्वाद् आचारे साधव आचार्यास्तेभ्य इति 'तत्पुरुष' । यथा (आव० नम० ४४८ तमे पत्राङ्के, विशेषावश्यकेऽपि गा० ३१९०)—

" पचविहमायार, आयरमाणा तहा पयासंता ।
आयार दसंता, आयरिया तेण वुच्चति ॥ "

'अनुयोगकृदाचार्य' इति हैम (अभिधानचिन्तामणा का० १, श्लो० ७८) ॥ ३ ॥

नमो—नमस्कार । केभ्य ? 'उपाध्यायेभ्य' उप एत्य—समीपमागत्य येभ्य सकाशादधीयन्त इत्युपाध्याया तेभ्य इति 'तत्पुरुष' । यदुक्त (आव० नम० ४४८ तमे पत्राङ्के, विशेषावश्यकेऽपि गा० ३१९७)—

"बारसगो जिणक्खाओ सज्झाओ कहिओ बुहेहिं ।
त उवइसंति जम्हा उवज्झाया तेण वुच्चति ॥"

"उपाध्यायस्तु पाठक" इति हेम (अभि का १ श्लो ७८) ॥ ४ ॥

नम —नमस्कार । केभ्य ? 'लोके सर्वसाधुभ्य' । लोके—मनुष्यलोके सम्यग्ज्ञानादिभिर्मोक्षसाधका सर्वसत्त्वेषु समाश्चेति साधव , सर्वे च ते स्थविरकल्पिकादिभेदभिन्ना साधवश्चेति सर्वसाधवस्तेभ्य इति 'कर्मधारय' । यथा—

"निव्वाणसाहए जोए, जम्हा साहति साहुणो ।
समा य सव्वभूएसु, तम्हा ते सव्वसाहुणो" ॥ ५ ॥

एष पञ्चनमस्कार । एष—प्रत्यक्षो विधीयमान पञ्चानामर्हदादीना नमस्कार—प्रणाम । स च कीदृश ? 'सर्वपापप्रणाशन' सर्वाणि च तानि पापानि च सर्वपापानि इति 'कर्मधारय' । सर्वपापाना प्रकर्षेण नाशनो—विध्वसक सर्वपापप्रणाशन इति 'तत्पुरुष' । सर्वेषा द्रव्य—भावभेदभिन्नाना मङ्गलाना प्रथममिदमेव मङ्गलम् । 'होइ मगल' इति पाठस्त्वप्रामाणिक , सर्वत्र "हवइ मगल" इत्येव दर्शनात् । च समुच्चये । पञ्चसु पदेषु चतुर्थ्यर्थेषु षष्ठी । अत्र चाष्टषष्टिरक्षराणि, नव पदानि, अष्टौ च सम्पदो—विश्रामस्थानानि, तत्र सप्त षट्कपदा, अन्त्या तु द्विपदा इति नमस्कारार्थ ॥ ६–९ ॥

(२) श्रीहर्षकीर्तिसूरिकृता व्याख्या ॥

प्रणिपत्य जिन वक्ष्ये, नमस्कारेषु विवरण किंचित् । यस्मान्मन्दमतीनामपि भवति सुखेन तद्बोध ॥ १ ॥

यत पर्वदिनेषु सकलश्रेयोऽर्थं क्षुद्रोपद्रवादिदोषनिवारणार्थं च पारणादौ मुनशान्त्यर्थं च सप्त जिनस्मा[नि]ण्य स्मर्यन्ते—गुण्यन्त इति सप्त स्मरणान्युच्यन्ते । तेष्वादौ चतुर्दशपूर्वाणामादिभूत अनाद्यन्त

[३]

नमस्कारान्तर्गत–पदविशेषानेकार्थाः ।

(१) पण्डितगुणरत्नमुनिवरकृता नमस्कारप्रथमपदार्थाः ॥

(नमोऽर्हद्भ्यः) नमो अरिहंताणं । नमोऽर्हद्भ्य इति मुख्योऽर्थः ॥ १ ॥

(नमोऽरि–हन्तृभ्यः) अरयः–वैरिणस्तेषां हन्तारः अरिहंतारः–सर्ववैरिविनाशकाः, चक्रवर्तिनः इत्यर्थः, तेभ्यो नमोऽस्तु इति तत्सेवकवचः ॥ २ ॥

(नमोऽरि–हन्तृभ्यः) अथवा अरा विद्यन्ते यत्र तत् अरिचक्रं, तेन हन्तारो–वैरिविनाशकाः, चक्रवर्तिन इत्यर्थः, तेभ्यो नमोऽस्तु ॥ ३ ॥

(न-मोदा-ऽरि ह-त्राणम्) हो-जलं तस्य त्राणं-रक्षणं, सरोवरमित्यर्थः, तद् वर्तते किंभूतम् ? मोदो-हर्षः तस्य अरिरिव अरिः शोकः, न विद्यते मोदारिः–शोको यस्मात् तद् नमोदारि । नखादि-[1]गणान्नञोऽवस्थानम् । "प्रक्रियां नातिविस्तरा" (सारस्वतादौ) इत्यादिवत् ॥ ४ ॥

(नम ओ अरि-हं त्राणम्) अरि-चक्रं हन्ति-गच्छति प्राप्नोति इति अरिहं–चक्रधरं, विष्णुम् । 'नम' इति क्रियापदं पञ्चम्या मध्यमपुरुषैकवचने । किंभूतं विष्णुम् ? त्राणं शरणभूतं, तत्सेवकानाम् । 'ओ' इति सम्बोधने ॥ ५ ॥

(नमोदलि ह-तानं) हो-जलं तस्मात् तानो-विस्तारः उत्पत्तिः यस्य तत् हतानं-कमलम् । [तद्] वर्तते । किंभूतम् ? 'नमोदलि' नमः–प्रह्वीभावः तेन उत्-प्रबला उद्धता [2]अलिनः–भ्रमरा यत्र एवंविधम् । अनुस्वाराभावः चित्रत्वात्, रलयोरैक्यं च तस्मादेव ॥ ६ ॥

(नमोदरि हन्ता-ऽऽनम्) नमो अरि० । नमं-नमत् उदरं नमोदरं, नमोदरं विद्यते यस्य तत् नमोदरि, बुभुक्षाक्रान्तोदरं भिक्षाचरवृन्दमित्यर्थः । तद् वर्तते, किंभूतम् ? 'हन्ताणं' हन्तशब्देन भिक्षा उच्यते । देशीभाषया हन्त-भिक्षा, तया आनं-जीवनं यस्य [तत्] हन्तानम् ॥ ७ ॥

(न मोअ-लिह-त्राणम्) मोअशब्देन प्रश्रवणम् । '[3]अणाहारे मोअनिंवाइ' इति प्रश्रवणस्य लिहः-पानकारी । 'लिहीक् आस्वादने' (सिद्ध० धा०) तस्यैवंविधकष्टकर्तुरपि त्राणं शरणं न स्यात् । ज्ञानं विनेत्युपस्कारः । "सोपस्काराणि सूत्राणि भवन्ति" इति न्यायः ॥ ८ ॥

(न मौकलि-हन्ना-ऽऽनम्) मौकुलिः-वायसः 'स्वराणां स्वराः' (सिद्ध० ८. ४. २३८.) इत्यकारः । तस्य हन्ता–घातकः, तस्य आनं–जीवनं न स्यात् । लोके हि एवं रूढिः–"वायसस्य भक्षकश्चिरजीवी स्यात् ।" तत्रायं अर्थो न समर्थः । तस्य हननेऽपि अधिकं जीवनं नैवेत्यर्थः ॥ ९ ॥

नोंध पं गुणरत्नमुनिकृत–'नमस्कारप्रथमपदार्था' अने श्रीदेवरत्नसूरिए रचेल 'पञ्चमपदगत'सव्व'–शब्दनी अनेकार्थीनो अनुवाद शब्दशास्त्रीओने मूळथी ज जाणी शकाय एवो छे, तेथी तेनो अनुवाद पण अहीं आप्यो नथी.

१ 'नखादयः' इति सिद्धहैमे (३–२–१२८)

२. 'अलयः' इति ख–पाठ ।

३. श्रीदेवेन्द्रसूरिकृतस्य प्रत्याख्यानभाष्यस्य पञ्चदशगाथायाश्चतुर्थचरणमिदम् । सम्पूर्णा गाथा चैवम्—
"खाइमे भत्तोसफलाइ साइमे सुंठि-जीर-अजमाइं । महु-गुड-तवोलाइ, अणाहारे मोअनिंवाइ ॥"

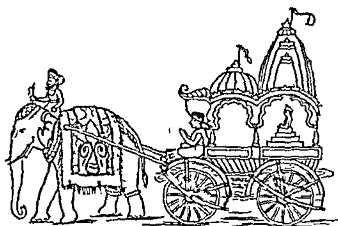
परिचय

प्रथम टीकाना रचयिता श्रीसिद्धिचद्रगणि छे, तेओ श्रीभानुचद्रगणिना शिष्य हता । तेमणे सस्कृत भाषामा अनेक ग्रथो अने टीकाओ रची छे । तेओ फारसी भाषाना पण जाणकार हता अने मात्रिक हता । सम्राट् अकबर अने जहागीरना दरबारमा एक विशिष्ट विद्वान् तरीके आदर पाम्या हता[1] ।

तेमणे सात स्मरणो उपर टीका रची छे, ते पैकी 'नमस्कारसूत्र' परनी टीका-श्रेष्ठी देवचद्र लालभाई पुस्तकोद्धार फड ग्रथाक ८१ मा प्रसिद्ध 'अनेकार्थरत्नमजूषा' ना परिशिष्टमा आपेली छे, तेमाथी उद्धृत करवामा आवी छे ।

बीजी टीकाना कर्ता श्रीचद्रकीर्तिसूरि (नागोरीतपागच्छीय)ना शिष्य श्रीहर्षकीर्तिसूरि छे । तेओ सत्तरमा सैकाना प्रसिद्ध विद्वान् हता । तेमणे अनेक टीकाग्रथो उपरात वैद्यक विषयना 'वैद्यकसारोद्धार' अने 'योगचिंतामणि' जेवा ग्रथो रचेला छे । वळी 'सारस्वत-दीपिका' नामक व्याकरण ग्रथनी टीका पण रचेली छे ।

तेमणे सात स्मरणो उपर टीका रची छे, ते पैकी नमस्कारसूत्र उपरनी टीका उपर्युक्त 'अनेकार्थरत्नमजूषा' ना परिशिष्टमाथी लेवामा आवी छे ।



१ तेमनी विशेष माहिती माटे जुओ प्रस्तावना 'भानुचद्रचरित' प्रकाशक -सिंघी जैन ग्रंथमाला, अमदावाद ।

(नमोऽर्हद्भ्यः) अर्हन्तः-सामान्यकेवलिनः तेभ्यो नमः ॥ २० ॥

(नमोऽर्हद्भ्यः) अर्हद्भ्यः-पूज्येभ्यो मातापित्रादिभ्यो नमः ॥ २१ ॥

(नं ओ अर्हन्तं अत णं) 'ओ' इति सम्बोधने। नं-बुद्धिं अर्हन्तं-प्राप्नुवन्तं बुद्धिनिधानं मन्त्रिणम्। 'अत सातत्यगमने' (सिद्ध० धा०)। अत-जानीहि। 'गत्यर्था ज्ञानार्थाः' इति। 'स्वराणां स्वराः' (सिद्ध० ८. ४. २३८.) इत्याकारः। 'णं' वाक्यालङ्कारे ॥ २२ ॥

(नमोऽर्हतः) अर्हतः-स्तुल्यान् सत्पुरुषान् [प्रति] नमः, सुग्-द्विषार्हः-सत्रि-शत्रु-स्तुत्ये इति (सिद्ध० हे० ५. २. २६) ॥ २३ ॥

(नं अर्हतः उअ) नं-ज्ञानम्, अर्हतः-प्राप्तान् श्रुतकेवलिनः। 'उअ पश्य' (सिद्ध० ८. २. २१२.) ॥ २४ ॥

(न-मा-ऊ-अरिहं ता अणं) नं-ज्ञानं तस्य मा-प्रामाण्यम्। उः-धारणं तस्य अरिहं-योग्यं। ज्ञानप्रामाण्यवादिनं जनं त्वं अण-वद। 'अणरण [वण-व्रण-त्रण-भण-भ्रण-मण-धण-ध्वण-ध्रण-कण-क्वण-चण शब्दे]' (सिद्ध० धा०) इति दण्डकधातुः। ता-तावत् प्रक्रमे। अन्तेऽनुस्वारः प्राकृतत्वात् ॥ २५ ॥

(नमः अर्हा-ऽन्त-अणं) अर्हः-प्रान्तोऽन्तो यैः। एवंविधा 'अण'त्ति अनन्तानुबन्धिनो यस्य तम्, पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात्। सम्यग्दृष्टिपुरुषं क्षायिकसम्यक्त्ववन्तं प्रति नमः ॥ २६ ॥

(नम उत-लिहं त्राणं) त्राणं-भोजनभाजनमण्डनयोग्यं वस्तु, तं नम-अन्तर्भूतणिगर्थत्वात् प्रह्वीकुरु, मण्डयेति भोजनकारिवचः। तत् किंभूतम्? उतं-सम्बद्धं, लिहं-भोजनं यस्मात् [तत्] ॥ २७ ॥

(नमौको-ऽर्हं तार्णम्) तार्णं-तृणसमूहो वर्तते। किंभूतम्? नमं-नमत् कुटीरप्रायं यत् ओको-गृहं तस्यार्हैः तृणैराच्छाद्यते गेहमिति ॥ २८ ॥

(न मोदा-ऽरि-हं तृणम्) तृण वर्तते। किंभूतम्? 'मोदारिहं' मोदो-हर्षः तत्प्रधाना अरयस्तान् हन्ति-हिनस्ति मोदारिहम्। 'न' इति निषेधे। तृणमुखास्ते वैरिणो जीवन्तीत्यर्थः ॥ २९ ॥

(न-मोदा-ऽरि हन्त ऋणम्) ऋणं वर्तते। 'हन्त' इति खेदे। किंभूतम्? 'नमोदारि' नं-बुद्धिः मोदः-हर्षः तस्य अरिः-वैरिभूतं वर्तते। ऋणे सति बुद्धिहर्षौ नश्यत इत्यर्थः ॥ ३० ॥

(नं मोऽरिभा-ऽतः णं) अरिभं-रिपुनक्षत्रं तत्र अतः-गमनं यस्य सः। 'अत सातत्यगमने' (सिद्ध० धा०) एवंविधो मः-चन्द्रः। नं-बन्धनं, विग्रहमित्यर्थः तम्। "णकारो निष्फले प्रकटे च" (सुधा० एकाक्षरनाममाला श्लो० २२) इति वचनात् णं-निष्फलम्। करोतीत्यध्याहारः। "अरिहन्ताग्रे प्रथमैकवचनस्य व्यत्ययोऽप्यासाम्" (   ) इति वचनादपभ्रंशापेक्षया 'स्यम्-जस्-शसां लुक्' (सिद्ध० ८. ४. ३४४.) इति लुक्। एवमन्यत्रापि ज्ञेयम् ॥ ३१ ॥

(न मोऽरि-भं आकः अ-णं) भशब्देन राशिरप्युच्यते, भवनमपि, ततो अरिभं-रिपुभवनम्। यदा मः-चन्द्रो न आकः-न प्राप्तः तदा अणं-सफलं कार्यं स्यादिति शेषः। षष्ठभवने चन्द्रस्त्याज्य इत्यर्थः ॥ ३२ ॥

(न-मोदा ऽऽरि भ त्राणम्) 'हताण' भानि नक्षत्राणि तेषा त्राण-रक्षण यस्य, सर्वनक्षत्रत्राता, चन्द्र इत्यर्थ । 'पश्यत' इति क्रियाऽध्याहार । चन्द्र किंभूतम् ? 'नमोआरि' नो-बुद्धि मोदो-हर्ष आर-प्रापणम्, आरो विद्यते यस्य स आरी, बुद्धिमोदयो आरी । शुभे चन्द्रे हि शुभा बुद्धि हर्षश्च प्राप्यते । 'आरि' इत्यत्रानुस्वाराभावो न दोषाय, चित्रत्वात् । 'ख घ थ-ध भा ह्' (सिद्ध० ८ १ १८७) इत्यादौ भकारस्य हकार कचित् आदावपि भवतीति वचनात्, बाहुलकाच्च ॥ १० ॥

(न-मोदा ऽर्ह त्राण) त्राण-सत्पुरुषशरण वर्तते । किंभूतम् ? 'नमोदार्ह' नो ज्ञान मोदो-हर्ष तयो अर्ह-योग्यम् ॥ ११ ॥

(नृ-मोदर्ह तानम्) तान-वस्त्रम् । लोके हि तानकयोगाद् वस्त्रनिष्पत्ति । कारणे कार्योपचारात् तान-वस्त्रम् । किंभूतम् ? 'नमो अरिह' नृणा-मनुष्याणा मा-शोभा, तस्या उदर्ह-भृश योग्यम्, मनुज-शोभाकारि इत्यर्थ ॥ १२ ॥

(नमोदरी हन्त आ-नम्) 'हन्त' इति खेदे । नम-नमत् कृश उदर यस्या सा नमोदरी कृशोदरी, स्त्री इत्यर्थ । सा 'आन' आ-समन्ताद् न-बन्धनम् । स्त्रिय सर्वत्र बन्धनरूपा इति ॥ १३ ॥

(नम अर्हदाज्ञाम्) 'अरिहताण' अर्हदाज्ञा प्रति नम-प्रह्वीभवेति शिष्यस्य कथनम् ॥ १४ ॥

(न मोपरि हन्ता) म शिव । 'शिव'शब्देन मोक्षो ज्ञेय । तस्य उपरि हन्ता-गन्ता न वर्तते कश्चिद् जीव, मुक्तेरुपरि अलोकसद्भावेन कस्यापि गमनाभावात् । 'हन्ता' इत्यत्र 'हनक् हिंसा-गत्यो' (सिद्ध० धा०) इति गत्यर्थ ॥ १५ ॥

(न म उअ र इह अ-तानम्) इह-जगति अ परब्रह्म तस्य तान-विस्तार त्व 'उअ पश्य' (सिद्ध० ८ २ २११) सर्वस्मिन् जगति ब्रह्मैवास्तीति वेदान्तिमतम् । न म-विधाता, "मश्चन्द्रे [च] विधौ शिवे" (श्रीसुधाकलशप्रणीतायामेकाक्षरनाममालिकाया श्लो० ३४), विधाता-जगत्कर्ता कोऽपि तन्मते न वर्तते इत्यर्थ ॥ १६ ॥

(न मा ऊ अ रि हा-ऽतानम्) न विद्यते रा-द्रव्य यस्य तद् अरि, निर्द्रव्य कुलमित्यर्थ । तत् किम्भूतम् ? 'हताण' हो निरास तस्य अतान-लाघव यस्य तत् । निर्धनस्य गृहलाघव स्यात् । तानो-विस्तार, अतान लाघवम् । 'न मा' इति निषेधद्वय प्रकृतमर्थं ब्रूते । 'ऊ' इति पूरणे ॥ १७ ॥

(नमोत्परिघ ता ऽऽनम्) त-तस्कर तस्य आ-समन्ताद् न-बन्धनम् । किंभूतम् ? 'नमोत्परिघ' नमन्-आरत परतोऽपि द्वारादिषु मिलन् उत्-प्रबल परिघ-अर्गला यत्र तदेव चौरबन्धन स्यात् ॥ १८ ॥

(न मा ऊ अरि-ह सन्तानम्) अरी-प्राप्नुवन् हकारो यत्र । एतावता सकार तस्मात् अन्तान इति योज्यते । तदा स(सा ?)न्तान इति स्यात् । तत सन्तान मा-लक्ष्मी च ऊ-रक्षण न स्यात्, दुर्गतिपातन इति ॥ १९ ॥

---

१ 'गमन नास्ति' इति ख-पाठ ।

२ उअ पश्येत्यस्यार्थे श्रीहेमचन्द्रसूरिभि प्राकृतव्याकरणस्य स्वोपज्ञवृत्तौ निर्दिष्टेय गाथा यथा—
"उअ निच्चलनिप्फन्दा भिसिणी पत्तम्मि रेहइ बलाआ ॥"

(नमोऽजा-ऽर्हं-ता-अणं) अजः—सर्वज्ञः तस्य अर्हः—पूजा तस्य तां—शोभां अणति—वदति उपदिशति यः तं पुरुषं [प्रति] नमोऽस्तु। पूजास्थापकः पूजार्हः स्यादित्यर्थः ॥ ४३ ॥

(न मोऽर्हा—ऽन्ता—ऽणः)

"अन्तःस्वरूपे निकटे, प्रान्ते निश्चय-नाशयोः। अवयवेऽप्यथाऽर्हन् स्यात्, पूज्ये तीर्थकरेऽपि च ॥" (हैमे का० २, श्लो० १७१.)

इति वचनाद् मः—शिवोऽस्ति। किंभूतः? 'अर्हान्ताणः' अर्हं—सर्वेषां योग्यम् अन्तः—स्वरूपं तस्य अण—उपदेष्टा। 'अण शब्दे' (सिद्ध० धा०)। "मश्चन्द्रे [च] विधौ शिवे" (सुधा० श्लो. ३४) इत्येकाक्षरनिघण्टुः। ईश्वरः सर्वपदार्थयथास्थितवादी न स्यात्, तदुक्ततत्त्वव्यभिचारात् ॥ ४४ ॥

(नमोऽजा-ऽरिहं ता-ऽणं) अजः—छागः तेन, 'ऋक् गतौ' (सिद्ध० धा०) इयर्ति अजारीः—छागवाहनो वह्निः शीलार्थे इन्। तं 'हिंट् गति-वृद्ध्योः' (सिद्ध० धा०) हाययति—वर्धयतीति अजारिहः—वह्निवर्धकोऽग्निहोत्री, तं पुरुषं नमोऽस्तु इत्युपहासः। तं किम्भूतम्? 'ताणं' तां—शोभाम् अणति ताणः, वयं अग्निहोत्रिण इत्यभिमानी ॥ ४५ ॥

(न मोचां अलि-हन् अत णं) "मोचा शाल्मलि-कदल्योर्मोचा शिग्रौ" इत्यनेकार्थः (हैम० का० २, श्लो० ७३.) मोचा-शाल्मली तां त्वं न अत। 'अत सातत्यगमने' (सिद्ध० धा०) मा गच्छेति। यतः 'अलिहन्' अलीनां-भ्रमराणां हन्—गमनं, णं—निष्फलं वर्तते। 'हनंक् हिंसा-गत्योः' (सिद्ध० धा०) क्विपि रूपम्। भ्रमराणां भ्रमणं निष्फलं, सौरभरहितत्वात्। ततस्त्वं मा गच्छेति मित्रस्योक्तिः ॥ ४६ ॥

(नमोऽरि-हतेभ्यः) [1]अरयः—वैरिणः अष्टविधकर्माणि। यदुक्तं (आवश्यकनिर्युक्तौ गा० ९२०.)—

"अट्ठविहं पि अ कम्मं अरिभूअं होइ सव्वजीवाणं। तं कम्ममरिं हंता अरिहंता तेण वुच्चंति ॥"

इति तैर्हतेभ्यः कर्मपीडितेभ्यो नमोऽस्तु। इति उपहासनमस्कारः ॥ ४७ ॥

(न मोचं अर्हत्-त्राणम्) 'अरिहं' अर्हन्—तीर्थकरः तस्य त्राणं—शरणं, न मोचं-न मोच्यमिति ॥४८॥

(न मोचं अर्हत्—त्राणम्) अर्हन्—तीर्थकरः तस्य त्राणं—शरणं न मोच्यम् ॥ ४९ ॥

(न मोचं अरि-ह-त्राणम्) अरि—अष्टविधं कर्म हतवन्तः ते अरिहाः—सिद्धाः तेषां त्राणं शरणं न मोच्यम् ॥ ५० ॥

(न मः मोदा-ऽरि—हतानाम्) मोदारिः—शोकः तेन हताना—पीडितानां न मः—शिवं न स्यात् ॥ ५१ ॥

(न मोदोऽरि—हतानाम्) अरिहतानां—बाह्यवैरिपीडितानां न मोदः—हर्षो न स्यात् ॥ ५२ ॥

(नमः अरि हतेभ्यः) अरि इति अव्ययं, सम्बोधने। हतेभ्यो निन्द्येभ्यो नम इत्युपहास्यम् ॥५३॥

---

१ 'नमो० अरिभिर्हतानाम्—अष्टविधकर्मपीडितेभ्यो नमः-उपहासनमस्कार.' इति ख—पाठः।

२ 'जिन.' इति ख—पाठः।

(नमोदरि-ह ता अन) ता—तावत् अन—शकट वर्तते । किभूतम् ? 'नमो अरिह' नमोऽरिह नम नमत् नीचैर्भवत् पुन ।।उत्-उच्चैर्भवत् एवविध यद् अरिचक्र ताभ्या हन्ति—गच्छति। । शकट हि चक्राभ्या चलतीति ॥ ३३ ॥

(न मोऽरि-हन्ता ण) म—ईश्वरो वर्तते । किभूत ? 'अरिहन्ता' अर—शीघ्रम् , इ—काम तस्य हन्ता 'ण' अलङ्कारे ॥ ३४ ॥

(न ओजोऽर्हं ता-ऽण) ता—शोभा तत्प्रधानोऽण—शब्द साधुशब्दो यश । 'न ओजोऽर्हं' ओजो—बल तस्य योग्य न, बलेन यशो न स्यादित्यर्थ । मकारोऽलाक्षणिक । 'अण' इत्यत्र 'लिङ्गमतन्त्रम्' (सिद्ध० ८ ४ ४४५) इति क्लीबत्वेन न दोष ॥ ३५ ॥

(नामू अरमिभान्ता-ऽण) अरम्-अत्यर्थम् । इभान्त—हस्तिविनाशी सिंह तस्य, अण—शब्द , सिंहनाद इत्यर्थ । त त्व अय—प्राप्नुहि । इति सुभटस्योच्यते । यतो अमू बन्धन न स्यात् । 'स्वराणा स्वरा' (सिद्ध० ८ ४ २३८) इत्योकार ॥ ३६ ॥

(नमोऽजारि-हन्तृभ्य) "अजश्छागे हरे विष्णौ रघुजे वेधसि स्मरे" (हैमे का० २, श्लो० ८०) इत्यनेकार्थवचनाद् अज—ईश्वर सोऽरिर्यस्य स अजारि—कन्दर्प , तस्य हन्तृभ्यो—नीरागेभ्यो नम ॥ ३७ ॥

(न मा ओ अ-लिह त्राणम्) कस्यचिद् धनवतो धर्मपराङ्मुखस्योच्यते । 'लिहीङ् आस्वादने' (सिद्ध० धा०) लिहन लिह् बाहुलकाद् भावे क । न विद्यते लिहो यस्य [तद्] अलिहम्—अभक्ष्यत्व अज—क्षिप, त्यजेत्यर्थ । अवतेर्वृद्ध्यर्थात् क्विपि औस्तस्यामन्त्रणे हे ओ ! धनवृद्ध ! मा—लक्ष्मी त्राण न भवतीति, विरतिरेव त्राण स्यादिति अभक्ष्यार्थ त्यजेत्यर्थ ॥ ३८ ॥

(न मोच अज-लिह-तानाम्) अज—छाग त लिहन्ति भक्षयन्तीति अजलिहा । एवविधास्ता—तस्करास्तेषा मोचो—मोक्षो न स्यात् । ते[1] कर्मभि न मुच्यन्ते इत्यर्थ । मोचन मोच इति णिगन्तादच् ॥ ३९ ॥

(न मोचा लिह-ता न) मोचा—कदली वर्तते । किभूता ? लिह—भोज्य तस्य ता—शोभा यस्या सा । भोज्ये सारभूता । न नेति निषेधद्वय प्रकृतार्थम् ॥ ४० ॥

(न मा अर्हा ऽन्ता ण) अर्हा—पूजा तस्या अन्तो—विनाशो यस्या सा अर्हान्ता । ईदृशी मा—लक्ष्मी न भवति । लक्ष्मी सर्वत्र पूजा प्राप्नोतीत्यर्थ । 'ण' अलङ्कृतौ ॥ ४१ ॥

(न मोऽजा-ऽरि-हन्ता न) मातीति म 'क्वचिड्' (सिद्ध० ५ १ १७१) प्रमाणवेदी पुरुष[2] । किभूत ? अज—परमात्मा तस्य अरि—निषेधक , प्रतिवादीति यावत् , तस्य हन्ता निवारक । परमेश्वर यो न मन्यते त निवारयति । प्रमाणवेत्ता पुरुष , सर्वेन स्थापयतीत्यर्थ । नञ्द्वय प्रकृत्यर्थे ॥ ४२ ॥

---

१ 'कर्ममुक्तिर्न स्यादित्यर्थ ' इति ख-पाठ ।

२ अलङ्कारे इति ख-पाठ ।

(नःमोच-र-हन्ता ऋणम्) ऋधातोस्तप्रत्यये 'ऋ-ह्री-घ्रा-ध्रा (त्रोन्दनुदविन्तेर्वा)' (सिद्ध० ४. २. ७६ इति ऋणप्रयोगः । न ऋणं—क्षीणम् पुरुषं, मोचः—शिग्रुः तस्य 'र'शब्देन रसो हन्ता—घातको भवति । क्षयरोगी पुरुषः शिग्रुरसेन नीरोगः स्यादिति तात्पर्यम् । पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् 'र'शब्देन रसः । नेयं स्वमतिकल्पना **श्रीजिनप्रभसूरिरपि** 'पउमाभवासुपूज्जा' इत्यस्यां गाथायां[1] चतुरनुयोगीं व्याख्यानयद्भिरेवं व्याख्यातम्—"पउ इति पौषः । मा इति माघः । भ इति भाद्रपदः । तत्र अव इति अवमरात्रे सतीत्यर्थः । असु इति असुभिक्षं-दुर्भिक्षं स्यात् । पु इति पुहवी । लोगो पुहवी सोवा, तस्य ज्या ज्यानिः—हानिः स्यादित्यर्थः" । इति द्रव्यानुयोगः ॥ ६४ ॥

(न मोऽलि-हन् त्राणम्) 'नमो अरिहंताणं' अलिः—वृश्चिकराशिः, तत्र 'हनंक् हिंसा-गत्योः' (सिद्ध० धा०) हन्ति—गच्छतीति विचि अलिहन्—वृश्चिकराशिगतो मः—चन्द्रः त्राणं—विपदूरक्षको न भवति । वृश्चिकराशौ चन्द्रस्य नीचत्वाद् दौर्बल्यम् । इति गणितानुयोगः ॥ ६५ ॥

(नमः अलि-हा-ऽन्तेभ्यः) "अलिः सुरा-पुष्पलिहोः" इति (हैमे अनेकार्थे का० २, श्लो० ४८०.) वचनात् अलि—सुरा तां जहाति, अलिहं—सुरावर्जकम् । सुराया उपलक्षणत्वाद् मांसाद्यपि ग्राह्यम् । मद्यादिवर्जकं अन्तः—स्वरूपं येषां तानि अलिहान्तानि—श्राद्धकुलानि तेभ्यो नमः—उद्यमो भवतु । श्राद्धकुलानि उदितानि सन्त्वित्यर्थः ॥ ६६ ॥

(नमः अ रे हं अताणम्) कश्चिच्छैवो वक्ति, हं—अहं रे—रामविषये नमो-नमस्कारम्, अताणं—अतनवम्, कृतवानित्यर्थः । 'र' शब्देन राम उच्यते एकाक्षरनाममालायाम् । अतनवमिति ह्यस्तन्युत्तमैकवचनम् । अकारः पादपूरणे ॥ ६७ ॥

(नमः अ रे हं अताणम्) कश्चिज्जैनो वक्ति, अहं रामे नमः नातनवम् । अकारो निषेधे "अमा—नो—नाः प्रतिषेधवाचकाः" इति माला ॥ ६८ ॥

(नमोऽर-भन्ता णम्) नमो अरहताणं नं-बन्धनं । 'मींग्श् हिंसायां' (सिद्ध० धा०) मीनाति—हिनस्ति । उप्रत्यये नमः—बन्धच्छोटकः, बन्दिमोक्षकरः स वर्तते । किम्भूतः ? 'अरहन्ता' रः—नरः, नरः अरः—अमर्त्यः—देव इत्यर्थः । अरान्—देवान् भनक्तीति अरभन्—दैत्यः । तेभ्यः 'तायृङ् सन्तान-पालनयोः' (सिद्ध० धा०) तायते इति ताः क्विपि । 'य्वोः प्वय्व्यञ्जने लुक्' (सिद्ध० ४. ४. १२१.) इति यलोपे अरहन्ता । बन्दिमोक्षकरः—मन्त्रमण्यादिः पदार्थो दैत्यभयवारको भवति । 'णं' पूरणे ॥ ६९ ॥

(न-मोऽरहन् त्राणम्) 'न' शब्देन ज्ञानं तच्च पञ्चसङ्ख्यम् । एतावता नं पञ्चसंख्याया मं—ज्ञानं यस्य स नमः—पञ्चमज्ञानवान् केवली 'माङ्क् मान-शब्दयोः' (सिद्ध० धा०) । मीयते इति मं—ज्ञानम् । बाहुलकाद् भावे डप्रत्यये सिद्धम् । केवली किम्भूतः ? 'अरहन्' अरा—देवाः तान् हन्ति-गच्छति—प्राप्नोति अरहन् । देवस्य सेव्य इत्यर्थः त्राणं षट्कायरक्षकश्च ॥ ७० ॥

---

१ सम्पूर्णा गाथा चैवम्—

"पउमाभ-वासुपूज्जा, रत्ता ससि-पुप्फदंत ससिगोरा ।
सुव्वय-नेमी काला, पासो मल्ली पियंगाभा ॥"

(नमोऽगा-ऽरि-हो-ऽन्ता-ऽण) अगा—पर्वता तेषा अरि—इन्द्र तस्य हो—निवास स्वर्ग तस्य अन्त—स्वरूप, "अन्त स्वरूपे निकटे" इति (हैमे का० २, श्लो० १७१) वचनात्, त अणति—वदति य त प्रज्ञापनादिसिद्धान्तवेदिन नम—प्रणतो-ऽस्मीत्यर्थ । अगारिरित्यत्र 'अवर्णो यश्रुति' (सिद्ध० ८ १ १८०) न, यकारबाहुल्यकाद् इति ॥ ५४ ॥

(नमोऽर्हं त्वमत णम्) ण—ज्ञ पण्डित पुरुष त्वम् अत—जानीहि । 'अत सातत्यगमने' (सिद्ध० धा०) । 'गत्यर्था ज्ञानार्था'[1] । किम्भूतम् ? नमोऽर्हं प्रणामयोग्यम् ॥ ५५ ॥

(न म-उ अर्हदृणम्) 'अरिहंताण' अर्हन्—तीर्थंकर तस्य ऋण—कर्म, तीर्थंकरनामकर्मेत्यर्थ । किम्भूतम् ? 'नमो' न—ज्ञान, म—शिव तयो ऊ प्राप्ति यस्मात् । यत् कर्मण्युदिते परमज्ञान मोक्षश्च प्राप्यत एवेत्यर्थ ॥ ५६ ॥

(नमोत्तरी हा-ऽन्ता) 'नमोत्तरी' नमा—नमन्ती उत्—ऊर्ध्व गच्छन्ती एवविधा तरी—नौ । किम्भूता ? 'हान्ता' ह्—जल तस्य अन्त—प्रान्तो यस्या एवविधा न स्यात् । क्षण नमति क्षणाच्चोर्द्ध्व याति तया नावा जलप्रान्तो न स्यात्, जलप्रान्ते न गम्यते इत्यर्थ ॥ ५७ ॥

(नृ-मोऽरि ह-ता ऽऽन) ना पुरुष तस्य म—मस्तक । किम्भूत ? 'हतान' "ह शूलिनि करे नीरे" (सुधा० श्लो० ४५) इति ह्—ईश्वर तस्य ता—शोभा ता आनयति-वर्धयति [इति] हतान । नरमस्तको हि ईश्वरशोभाकर तदाभरण शिवस्य वर्तते । 'अरि सम्बोधने' ॥ ५८ ॥

(न म अज र हता ऽनम्) अज—विष्णु, नम—प्रह्वीभव । किम्भूतम् ? 'हतान' हत अन—शकटदैत्यो येन तम् । 'इ-जे-रा पादपूरणे' (सिद्ध० ८ २ २१७) इति सूत्राद् इकारमुक्तो रेफ पादपूरणे ॥ ५९ ॥

(न मा अजोऽरिहन्ता णम्) अज—रघुतनय, अरिहन्ता—सर्ववैरिविनाशी अभूत् । 'ण' अलङ्कारे 'मा' 'न' इति निषेधद्वय प्रकृतार्थम् ॥ ६० ॥

(नृ-मोद रह तानम्) 'नमो अरहताण' अयमपि पाठोऽस्ति । ताना एकोनपञ्चाशत्, तान—गीतगान, रेह्-जानीहि । 'रहुण् गतौ' (सिद्ध० धा०)[2] गत्यर्थाश्च नानार्था । तान किम्भूत ? 'नृमोद' नृणा पुरुषाणा मोदो यस्मात् ॥ ६१ ॥

(न मोचय अर्हदाज्ञाम्) अनेन पदेन अनुयोगचतुष्टय व्याख्यायते । अरहताण अर्हदाज्ञा न मोचय । मोचा—शाल्मली मोचा करोति मोचयति । मध्यमपुरुषैकवचने मोचयेति सिद्धम् । शाल्मलि तुल्यामसारा जिनाज्ञा मा कुरु । तत्स्वरूपा ता जानीहि इति चरणकरणानुयोग ॥ ६२ ॥

(नम अर्हत्क त्राणम्) 'अरह' अर्हत्क—साधु, त्राण—शरणभूत नमस्कुरु । पदैकदेशे पदसमुदायोपचारात् अरह—अर्हत्कम् । इति धर्मकथानुयोग ॥ ६३ ॥

---

१ अनन विग्रहेण 'नमो इति पदस्य कर्मविशेषणत्वे सतीति नपुसकत्वे ह्रस्वेन भाव्यम् ।

२ अत्र 'रंह' इति रूपेण भवितव्यम्, अनुस्वाराभावश्चिन्त्यात् । चान्द्रमते णिचोऽनित्यात्वाण्णिजभावे 'रंह' इति सिद्धम् ।

वह्निवर्णसूर्यकान्तादीनि रत्नानि। उपलक्षणादन्यान्यपि रत्नानि ग्राह्याणि। तेषां गणः—समूहोऽस्ति। 'क-ग-च-ज- [त-द-प-य-वां प्रायो लुक्]' (सिद्ध० ८. १. १७७.) इति गलुक्। 'पदयोः सन्धिर्वा' (सिद्ध० ८. १. ५.) इति सन्धिः। यथा चक्काउ—चक्रवाकः। 'णिश समाधौ' (सिद्ध० धा०) नेशति—समाधिं करोति चित्तस्वास्थ्यं निर्मापयतीति डे नः॥ ९१॥

अथाग्निः। (नम ओ अज-रथं त्रि-अणम्) अजः—छागः, रथः—वाहनं यस्य सः अजरथः—वह्निः तं त्र्यणं त्रयोऽणाः शब्दा यस्य सः, त्रिविधोऽग्निरिति कविसमयः। 'ओ' इति सम्बोधने। तं नम—प्रणमेति स्वप्नाः १४॥ ९२॥

(नमो अरहंताणं) नं—ज्ञानं। अरहन्ताणं—अत्यजतां पुरुषाणां उख् भवति। 'उख्नखे' ति गत्यर्थो दण्डकधातुः। 'ओखणं ओग्' विचि सिद्धम्। अन्त्यव्यञ्जनलोपे ओ—गतिर्भवतीत्यर्थः। गतिः सैव या सद्गतिः। यथा "कुले हि जातो न करोति पापं" इत्यत्र कुलं तदेव यत् सत्कुलमिति॥ ९३॥

(नं ओ तर हन्! तां नः) हंसं अणति—श्रयति वाहनतया णिजि क्विपि हन्। 'ओ' इति सम्बोधने। हे हन्!—हे सरस्वति। नः—अस्माकं, नं—ज्ञानं, तां—शोभां च, तर—देहि। 'तॄ' धातुः दाने वर्तते। (अन्यथा विपूर्वोऽपि दाने न प्रवर्तेत) उपसर्गाणां धात्वर्थद्योतकत्वात्, तॄधातौ दानार्थोऽस्तीति॥ ९४॥

(नम् ओ अर अहर् अन्त! णं) अन्तशब्देन [पदैक] देशे [पद] समुदायोपचाराद् हेमन्त इति। अहर्—दिनं, नमतीति नमं—कृशं, हे हेमन्तऋतो! त्व नमं—कृशं दिनं, अर—प्राप्नुहि। 'णं' अलङ्कारे। हेमन्ते दिनलघुता इति प्रसिद्धम्॥ ९५॥

(नमः अरे ह—तानाम्) "रः तीक्ष्णे" इति (विश्वशम्भुनाममालायां श्लो० १०१) वचनात् रं—तीक्ष्णं उष्णमिति यावत्। न रं अरं—अतीक्ष्णः, शिशिरऋतुः इत्यर्थः, तस्मिन् अरे—शिशिरऋतावित्यर्थः। अपभ्रंशे इकारः। 'व्यत्ययोऽप्यासाम्' इति व्यत्ययः स्याच्च। हं—जलं तस्मात् तन्यन्ते—विस्तारं यान्ति, हतानि—जलरुहाणि, पद्मानीत्यर्थः। तेषा नमो नमनं—कृशता भवति। शिशिरे हि कमलानि हिमेन शुष्यन्तीति प्रसिद्धम्॥ ९६॥

(नम् उ सुरभ् हान्तास् णं) हकारोऽन्ते यस्य स हान्तः। सकार इत्यर्थः। तेन असति—शोभते हान्तास्। एवंविधो रभ्शब्दः। पुनः किम्भूतः? 'उ' 'अ' उकारेणासति—शोभते उ अष् 'अन्त्य-व्यञ्जनस्य' (सि० ८. १. ११.) इति षलोपः। उरह् (हः) इति शब्दः स सकारयुक्तः क्रियते तदा सुरह इति जातम्। कोऽर्थः? सुरभिः—वसन्तऋतुः, तमाचष्टे स्तौति इच्छति वा यः पुरुषः स सुरभ् णिजि तलोपे सिद्धम्। क्विप् लोपश्च। उ अरह् इत्यत्र अन्त्यव्यञ्जनलोपः। सुरभ्शब्देन वसन्तस्तावकः पुरुष इत्यर्थः। "णः प्रकटे निष्फले च" (सुधा० श्लो० २२) वचनात् णं—प्रकटं यथा स्यात् तथा नम् स्यात्, नमतीति नम्—प्रह्वीभावः, उद्युक्तः सर्वकर्मणीत्यर्थः॥ ९७॥

(न मोदः रः हा—ऽन्तानः) "रः तीक्ष्णे" (विश्व० श्लो० १०१) इति वचनात्। रः—उष्णः ग्रीष्मऋतुरित्यर्थः। किम्भूतः? हं—जलं अन्तं आनयतीति हान्तानः, ग्रीष्मे जलशोषः स्यादित्यर्थः। मोदयतीति मोदः। एवंविधो न। ग्रीष्मः [प्रायः] परितापकरत्वान्न मोदकृत्॥ ९८॥

(न मा-ऊ अ र-हा-ऽन्तेभ्य । अकार रियन्तीति डे अरा । 'रिंत् गतौ' अकारप्रापका । हकारोऽन्ते येषा ते हान्ता । अकारादयो हकारान्ता वर्णा -इत्यर्थ । 'नमो' न-ज्ञान, मा-शब्द 'माङ्क् मान-शब्दयो' (सिद्ध०, धा०) इति तयो औ -अवगमन भवति । अव धातुरवगमनार्थेऽपि वर्तते । अवन ऊ भावे क्विप् । 'अरहताण' इत्यत्र-चतुर्थी ज्ञेया । वर्णेभ्यो ज्ञान शब्दावगमश्च स्यादित्यथ ॥ ७१ ॥

(नमोदरा-भक्-त्राणम्) त्राणशब्देन बृहत्पूपिकोच्यते जैनमुनिभाषया । ये लोके मण्डका इति प्रसिद्धा ते साधूना त्राणका इति । त्राणाना समूहो त्राणम् । समूहार्थे अण् । त्राण किम्भूतम् ? नम-नमत् उदर यस्या सा नमोदरा-बुभुक्षा, ता भनक्तीति क्विप् ॥ ७२ ॥

(न मोक-रह ता-ऽऽन) "मूको दैत्याऽनागृदीनेषु इत्यनेकार्थसङ्ग्रह । (हैमे का० २ श्लो० ३) मूकाना समूहो मौकम् । 'षष्ठ्या समूहे' (सिद्ध० ६ २ ९) इत्यण् । 'रह त्यागे' (सिद्ध०, धा०) मौक रहति मौकरहो न स्यात् । क ? ता-लक्ष्मीं आनयतीति-तान । धनोपार्जक दीनसमूहवर्जको न स्यात् । दीनसमूह प्रीणयतीति स दीनै सेव्यत इत्यर्थ ॥ ७३ ॥

(नमो-गा ण-रहन्त) "ण प्रगटे निष्फले च प्रस्तुते ज्ञान-बन्धनयो" इति (सुधा०) एकाक्षरनाममाला (श्लो० २२) वचनात् ण-बन्ध कर्मबन्ध इत्यर्थ । त रहन्त-त्यजन्तः पुरुषा 'नमोगा' स्यु । नम-नमस्कार, गच्छन्ति-प्राप्नुवन्तीति नमोगा -नमस्कारार्हा स्यु ॥ ७४ ॥

(नमोच ण-रहन्त) ण-ज्ञान, रहन्त-प्राप्नुवन्त पुरुषाः 'नमोच' स्यु । नमन्तीति डे ना-प्रणामकारिण तान् मोचयन्ति ससारात् नमोच, णिगन्तात् क्विप् । 'रहु गतौ' (सिद्ध० धा०) रहन्त इत्यत्रानुस्वाराभावश्चित्रत्वात् ॥ ७५ ॥

(न मा ऊ अरहन्त ण) 'णसि कौटिल्ये' (सिद्ध०, धा०) नसन न-कौटिल्यम् । अरहन्त-अप्राप्नुवन्त पुरुषा ण-प्रकट यथा स्यात् तथा, अवन्ति-दीप्यन्ते इति क्विपि ऊ । प्राकृतत्वाज्जसलुक् 'स्यम्-जस्-शसा लुक्' (सिद्ध० ८ ४ ३४४) अपभ्रंशे-'व्यत्ययश्च' (सिद्ध० ८ ४ ४४७) इति भाषाव्यत्ययात् प्राकृतेऽपि ॥ ७६ ॥

(न मोऽरि-हन्ता आ न) मृद करोति णिजि अचि म-कुम्भकारोऽस्ति । किम्भूत ? अरिचक्र तेन अहते-दीप्यते अरिहन्ता सेर्लुक् । न न भवतीति भवत्येवेत्यर्थ । आ पादपूरणे ॥ ७७ ॥

(न मोक-रहन्तानाम्) मोक-कायिकी रहन्ताण-त्यजता परिष्ठापयता साधूना नो भवति अविधिना त्यजता न-कर्मबन्ध, विधिना त्यजता तु न-ज्ञान स्यादिति विवक्षयार्थद्वयम् ॥ ७८ ॥

अथ चतुर्दशस्वप्नवर्णनम्—(नम-करी ऋण-हन्ता ण) नम-प्रह्वीभाव सौम्यत्वमिति यावत्, तेन अवति-दीप्यते । अव धातुरेकोनविंशत्यर्थेषु । तत्र दीप्त्यर्थोऽप्यस्ति । नमश्चासौ करी-हस्ती । सोम्यो गज इत्यर्थ । सोऽदु खहेतुत्वात् ऋण-दु ख, कारणे कार्योपचारात् हन्ति-विनाशयति । अण-

हन्ति—गच्छति आचार्यतया प्राप्नोति अदलहन्ता—सुराचार्यः, जीव इत्यर्थः । किम्भूतः । 'आनः' आ समन्तात् नः—ज्ञानं यस्मात् स आनः—ज्ञानदाता । किम्भूतः सन् ? 'नमः' नः—बुद्धिः पञ्चमं भवनं तत्र 'मदुङ् स्तुति-मोद-मद-स्वप्न-गतिषु' मन्दते—गच्छति नमः डप्रत्यये सिद्धम् । लग्ने हि पञ्चमभवनस्थो गुरुर्ज्ञानदाता स्यादिति ॥ १०५ ॥

अथ शुक्रः । (नम उन्द—ल—भं तानम्) 'तानः' तकारस्य षोडशव्यञ्जनत्वात् तशब्देन षोडश उच्यन्ते । 'अषी असी गत्यादानयोश्च' (सिद्ध० धा०) इत्यत्र चानुकृष्टदीप्त्यर्थाद् 'अस्' धातोः क्विपि अस् इति रूपम् । असः—दीप्तयः किरणा इति यावत् । ततः ताः—षोडश, असः—किरणाः तेषा नः—बन्धो योजना यस्य स तानः—शुक्रः । सन्धौ, दीर्घे 'अन्त्यव्यञ्जनस्य' (सिद्ध० ८. १, ११.) इति सलोपे प्राकृते रूपसिद्धिः । व्यञ्जनैश्च सङ्ख्याप्रतिपादनं ग्रन्थप्रसिद्धम् । यदुक्तं आरम्भसिद्धौ[1]—

"विद्युन्मुख १-शूला २-ऽशनि ३-केतूल्का ४-५-वज्र ६-कम्प ७-निर्घाताः ८ ।
ङ ५-ज ८-ढ १४-द १८-ध १९-फ २२-व २३-भ २४ सङ्ख्ये रविपुरत उपग्रहा धिष्ण्ये ॥"

इत्यादि । "षोडशार्चिर्दैत्यगुरुः" इति (अभिधान० का० २, श्लो० ३४) वचनात् तानः—षोडशकिरणः, शुक्र इति यावत् । तं शुक्रं नम; धातूनामनेकार्थत्वाद् भजस्वेत्यर्थः । किम्भूतम् ? ऊ—अरहं । 'उन्दैप् क्लेदने' (सिद्ध० धा०) उनत्ति—रोगैः क्लिन्नो भवति उन्दः तस्य । 'लश्चामृते' इति (सुधा० श्लो० ३९) वचनाद् लः—अमृतं तं भवतेऽन्तर्भूतणिगर्थत्वात् 'भूङ् प्राप्तौ' [सौत्रधातुरयम्, 'भूङ् प्राप्तौ णिङ् ।' सिद्ध० ३—४—१९] धातोः प्रापयति डे रूपं उन्दलभः तम्; रलयोरैक्यम् । रोगार्तस्य हि शुक्रोऽमृतदाता सञ्जीवनीविद्या शुक्रस्यैवेति तद्विदः । अथवा "भश्चालिशुक्रयोः" इति (सुधा० श्लो० ३३) वचनाद् भः—शुक्रः । अरः—शीघ्रगामी चासौ भश्च अरभः तं नम—सेवस्व । उ इति सम्बोधनम् । किम्भूतं भम् ? 'तानं' शुभकार्याणि तानयति—विस्तारय[ती]ति तानः तम्, शुक्रो हि शीघ्रगामी अनस्तमितः शुभः, शुभकार्याय भवति ॥ १०६ ॥

अथ शनिः । (नमोऽरं हन्ता आनम्) "आरः क्षितिसुतेऽर्कजे" इति विश्वप्रकाश (रवर्गे २२) वचनाद् आरः—शनिः । 'स्वराणा स्वराः' (सिद्ध० ८. ४. २३८.) इति प्राकृते अर इति जातम् । अथवा अरः कथम्भूतः ? 'आनः' अकारस्य नः—बन्धो यत्रेत्यनया व्युत्पत्त्या आर इति जातम् । आरं—शनिं नमोऽस्तु इत्युपहासनमस्कारः । यतो हन्ता—जनपीडकः तस्माद् हे आर ! त्वां नमोऽस्तु इत्यर्थः ॥ १०७ ॥

अथ राहुः । (न—म उदरहः तानः) 'उअरह' उदरेण हीयते उदरहः—राहुः । राहुस्तु उदरहीनः, शिरोमात्ररूपत्वात्, तस्य । किम्भूतः ? 'नमः' 'नशौच् अदर्शने' (सिद्ध० धा०) नश्यतीति डे नः । एवंविधो मः—चन्द्रो यस्मात् सः, उपलक्षणत्वात् सूर्योऽपि । राहुस्तु चन्द्र-सूर्यौ सते इति राहोश्चन्द्रनाशः । पुनः किंविशिष्टः ? 'तानः' तः—युद्धं तस्य नः—बन्धो रचना यस्मात् स तथा । राहुसाधनापूर्वं [सूर्यशशिभ्यां] युद्धं क्रियते इतीदं विशेषणं युक्तिमत् ॥ १०८ ॥

---

१ आरम्भसिद्धौ प्रथमविमर्शे श्लोक ६३ टीकायाम् । आरम्भसिद्धौ अयं श्लोकः 'नारचंद्र' ग्रन्थाद् उद्धृतः ।

(नमोऽर हन्तान) उ अर। कोऽर्थ ? । ऋत्वर 'रह त्यागे' (सिद्ध० धा०) रह्यते त्यज्यते इति भावे डप्रत्यये र –निन्द्य , न र अर –उत्तम इत्यर्थ । ऋतुपु अर –उत्तम ऋत्वर , सर्वऋतुप्रधान इत्यर्थ । स क इति विशेषणद्वारेणाह–'हन्तान' ह–जल, तानयति–विस्तारयति हन्तान । वर्षा-ऋतुरित्यर्थ । किम्भूत ? 'नम' नमति–प्रह्वीकरोति स्वोपमान् सर्वजनान् करोति अन्तर्भूतणिगर्थत्वाद् नम् । सर्वव्यापारप्रवर्तक इत्यर्थ ॥ ९९ ॥

(नम अरहा-ऽन्त ! न) 'अरहन्त०' आप –जल । 'रह त्यागे' (सिद्ध० धा०) रहन्ति–त्यजन्ति मुञ्चन्तीति अरह –मेघा , तस्य (तेषा) अन्त –विनाशो यस्मात् स अरहान्तो–घनात्यय , शरद् इत्यर्थ । हे अरहान्त ! हे शरत् ! त्व । न निषेधे । 'नम' इति क्रियापदम् । मा नम–मा कृशीभव । शरदोऽतिरमणीयत्वादेवमुक्ति ॥ १०० ॥ इति षड् ऋतव सम्पूर्णा ॥

अथ नव ग्रहा वर्ण्यन्ते । तत्र सूर्य-चन्द्रौ पूर्वं, तत्रापि चन्द्र प्रथम सिद्धान्तवेदिना मते । (नमोऽरम त्राणम्) "र तीक्ष्णे" इति (विश्व० श्लो० १०१) वचनाद् र –तीक्ष्ण , न र अर , शीत इत्यर्थ । अरा–शीता, मा–कान्ति यस्य स अरम –शीतगु त नमोऽस्तु । चन्द्र किम्भूतम् ? त्राण–शरण, सर्वनक्षत्राणा ग्रहाणा च नायकमित्यर्थ ॥ १०१ ॥

अथ सूर्य । (नमो च रम ता–ऽऽ-नम्) रा–तीक्ष्णा, मा–कान्ति यस्य स रम सूर्य इत्यर्थ । रमाय–सूर्याय नम । 'व्यत्ययोऽप्यासाम्' [आसा] विभक्तीना व्यत्ययोऽपि स्यादिति वचनात् चतुर्थ्यर्थे द्वितीया । च ,पूर्वोक्तार्थसमुच्चये । किम्भूताय रमाय ? 'तानाय' । "तकारस्तस्करे युद्धे" (सुधा० श्लो० २३) इत्येकाक्षरवचनात् ता –चौरा तेषा आ–समन्ताद् न –बन्धन यस्मात् स तान तस्मै । सूर्योदये हि चौराणा बन्धन भवति ॥ १०२ ॥

अथ भौम । (न मौ अर ! हन्ताऽऽन !) हे अर ! । अर किम्भूत ? 'आन' अकारस्य न –च घो यत्र, एतावता आर –कुज । किम्भूत ? 'हन्त' ह –जल तस्य अन्तो यस्मात् स तथा, एवविधो न, जलदाता इत्यर्थः । किम्भूत सन् ? 'मौ' "मश्चन्द्रे [च] विधौ शिवे" इति (सुधा० श्लो० ३४) वचनात् म –चन्द्र , त अवति–प्राप्नोति क्विपि मौ । चन्द्रयुक्तो हि भौमो वर्षाकाले वृष्टिद ॥ १०३ ॥

अथ बुध । (न मोजो रै० भ तान) म –ब्रह्मा । स अवति–देवतात्वेन स्वामी भवति क्विपि मौ । स्वाम्यर्थ 'अव' धातु । ततो मौ –रोहिणीनक्षत्र, तस्मात् जायते इति मोज –बुध । "श्यामाङ्गो रौहिणेयो बुध" इति (अभिधान० का० २, श्लो० ३१) वचनाद् 'रिह्' रा –धन, तदेव भ–भवन, धनभवनमित्यर्थ । तत्र गत इति शेष । 'तान' ता–लक्ष्मीं आनयतीति तान एवविधो न ? किन्तु एवविध एवेति काकूक्त्या व्याख्येयम् । धनभवनस्थो हि बुध –लक्ष्मीप्रद इति ज्योतिर्वि॰ । रैशब्दस्य 'एत ऐद्' (सिद्ध० ८ १ १४८) 'स्वराणा स्वरा' (सिद्ध० ८ ४ २३८) इतीकार ॥ १०४॥

अथ गुरु । (नम अद–र–हन्ता आ–न) "रश्चामृते" इति (सुधा० श्लो० ३९) वचनाद् र –अमृतम् , अदनम् अद –भोजनम् , अदे–भोजने, र –अमृत येषां ते अदरा –देवा , तान्

अथ प्रकारान्तरैः साधुगुणविशेषप्रकटीकरणार्थं प्राकृतभाषामयं 'सव्व' इति पदं विव्रीयते ।

३. **सार्वाः** । सार्वो जिनस्तस्येमे सार्वाः । ते च ते साधवश्च सर्वसाधवः । जिनोक्तद्रव्य-भावलिङ्गधारिणो जैनमुनय इत्यर्थः । अस्यामवसर्पिण्या श्रीपुण्डरीकाद्याः ।

" पंच य पुत्तसयाइं, भरहस्स य सत्त नत्तूयसयाइं ।
सयराहं पव्वइया, तम्मि कुमारा समोसरणे ॥ ५ ॥"

४. **शर्वो** रुद्रस्तत्समाः । अनङ्गस्य तथा राग-द्वेष-मोहरूपत्रिपुर [पैः] वा भसीकरणात् । सकलकर्मशत्रून् प्रति संहारमूर्तित्वाद् वा । शर्वा इव शर्वाः, ते च ते साधवश्च शर्वसाधवः । भावसाधुशिवकुमारवत् ।

"धन्नो सो सिवकुमरो, जो पणसयइत्थिअग्गिकुंडम्मि ।
वसमाणो वि न दद्धो, मयणाइरिऊण संहरणो ॥ ६ ॥"

५. **श्रव्याः** । श्रोतुमुचिता दाक्षिण्य-क्षान्त्यादिगुणैः श्रवणीयचरिताः, ते च ते । श्रीचण्डरुद्राचार्यशिष्यादिवत् ।

"केइ सुसीला सुहम्माइ सज्जणा गुरुजणस्स वि सुसीसा ।
विउलं जणंति सद्धं, जह सीसो चंडरुद्दस्स ॥ ७ ॥"[१]

६. **श्राव्याः** । श्रावणीयचरित्रा अन्येषां प्रत्यनीकनिराकरणेन प्रव[च]नप्रभावनादिभिः । विष्णुकुमारादिवत् ।

" जो तित्थस्स पभावणमकासी वेउव्विदेहलद्धीए ।
तं विण्हुं गयतिण्हं, नमामि पत्तं सिवपुरम्मि ॥८॥" (२–२२) *

७. **सव्याः** । अनुश्रोतः सुखात् संसारसागरात्, कष्टानुष्ठानपरतया प्रतीपगामित्वात् प्रतिकूला भवाद् वामगामिन इत्यर्थः ।

"अणुसोअसुहो लोओ, पडिसोओ आसवो सुविहियाणं ।
अणुसोओ संसारो, पडिसोओ तस्स उत्तारो ॥ ९ ॥"[२]

मृगापुत्रादिवत् ।

" दट्ठूण समणमणहं सरित्तु जाइं य भवविरत्तमणो ।
अणुचरिउं मियचरियं, मुक्खं पत्तो मियापुत्तो ॥१०॥" (५–९३)

८. **साव्याः** । सां लक्ष्मीं विविधलब्धिरूपां तदनुपजीवकत्वेन व्ययन्ति संवृण्वन्तीति साव्याः । श्रीसनत्कुमारचक्रिसाध्यादिवत् ।

---

१ उपदेशमाला १६७ * अहीं गाथाओना ( ) आवा कौंसमां अंक आप्या छे ते श्रीधर्मघोषसूरिकृत 'ऋषिमंडलप्रकरण'ना छे । तेमा प्रथम अंक विश्रामनो अने बीजो अंक गाथानो समजवो । जेम बीजा विश्रामनी आवावीसमी गाथा छे, तेम अहीं वधे समजवुं । २ श्रीदशवैकालिकसूत्रम्, चूलिका २, गा० ३

अथ केतु । (न मा उदरह–त–ऋणम्) उदरहे –राहु । पूर्ववद् व्याख्या । तस्य त –पुच्छ केतु । "तकारस्तस्करे युद्धे क्रोडे पुच्छे च" (सुधा० श्लो० २३) इत्येकाक्षरवचनम् । केतुस्तु राहु-पुच्छत्वेन ज्योतिर्विदा सम्मत । यत –"तत्पुच्छे मधुहाया आपद्दु.ख विपक्षपरिताप" (नीलकण्ठ्या [१]) अत्र तत्पुच्छ इति राहुपुच्छ, केतुरित्यर्थ इति ताजिके । हे उदरह [त] [२] त्व ऋण–ऋणवदाचर । मा निषेधे । ऋण यथा दु खदायि तथा केतुरपि उदित सन् जनपीडाकर, तत एवमुच्यते । त्व मा ऋण । नकारोऽपि निषेधार्थे । "द्विर्नद्ध सुनद्ध भवति" इति निषेधद्वय विशेषेण निषेधाय इति ॥ १०९ ॥

अथ नव रसा वर्ण्यन्ते । तत्र पूर्वं शृङ्गाररस । (नमोदरि ! हन्त अण) यथा कश्चित् कामी कुपितकामिनीप्रसत्तिकृते वक्ति हे नमोदरि !–हे कृशोदरि ! त्व अण–वद । हन्तेति कोमलामन्त्रणे । नम–नमत्, कृश उदर यस्या सा नमोदरी–क्षामोदरी तस्या सम्बोधनम् ॥ ११० ॥

इति नमस्कारप्रथमपदार्थाः ॥

प० हर्षकुलगणिपादकृना प० समयकलशस्य लघुशिष्येणालेखि(पत) ।

(२) आगमिक–श्रीदेवरत्नसूरिरचिताः

नमस्कारमन्त्रान्तर्गत–'नमो लोए सव्वसाहूण' पञ्चमपदगत 'सव्व' शब्दस्यानेकार्था ।

॥ ॥ ॐ श्रीगुरुभ्यो नम ॥

श्रीवीरजिन नत्वा, पञ्चमपरमेष्ठिपदगत किञ्चित् ।
कुर्वेऽर्थलेशदीपनमात्मनि साधुत्वपरिवृद्धयै ॥ १ ॥

नमो लोए सव्वसाहूण । नमो लोके सर्वसाधुभ्य । तत्र 'नम' इति प्रह्वत्वार्थेऽव्ययम् । लोकेऽर्धतृतीयद्वीपसमुद्रादिलक्षणे, ऊर्ध्व तिर्यगधोलोकलक्षणे वा वर्तमानेभ्य ।

१ सर्वे सकलाश्च ते साधवश्च सर्वसाधव ॥

"केवलिणो परमोही, विउलमई सुयहरा जिणमयम्मि ।
आयरिय-उवज्झाया, ते सव्वे साहुणो सरण ॥ २ ॥[१]
चउदस-दस-नवपुव्वी, दुवालसिकारसगिणो जे य ।
जिणकप्पाऽऽहालदिय, परिहारविसुद्धिसाहू य ॥ ३ ॥
खीरासव महुआसव, सभिन्नस्सोय-कुट्ठबुद्धी य ।
चारण वेउव्वि-पयाणुसारिणो साहुणो सरण ॥ ४ ॥"

इति गाथात्रयोक्ता, उपलक्षणादन्येऽप्यशेषविशेषनन्त । अथवा–

२ सर्वे च ते सामायिकादिविशेषणा प्रमत्तादय पुलाकादयो जिनकल्पिक-प्रतिमाकल्पिक-स्थविरकल्पिका स्थितास्थितकल्पिक-कल्पातीतभेदा । प्रत्येकबुद्ध-स्वयबुद्ध–[बुद्ध]बोधितभेदा । भारतादिविभेदा सुखम-दु खमादिविशेषिता वा साधव सर्वसाधव, तेभ्य सर्वसाधुभ्यो नमोऽस्त्विति क्रियासटङ्क इति ॥

---

१ चउसरणपयन्ना ३२–३४

"जस्स समयाइवासिय, वित्ताहरिणोवि सुकयपरिणामो ।
रहकारमुणीण गइं, पासू[1] सो जयउ राममुणी ॥ १९ ॥"

१४. सव्याः । 'षूङौच् प्राणिप्रसवे' सूयन्ते जन्यन्ते जनन्या नरजन्मना एते एव महासत्त्वाः स्वप्राणप्रहाणमप्यादृत्य षड्जीवनिकायरक्षापरत्वेन भुवनोपकारिण इति सव्याः वरदत्तादिसाधुवत् ।

"तह होज्जेरियासमिओ, देहे वि अमुच्छिओ दयापरमो ।
जह संथुओ सुरेहिं वि, वरदत्तमहाभागो ॥ २० ॥"

१५. सव्याः । 'सूं प्रसवैश्वर्ययोः', सूयन्ते दुःखाकारकाः सन्तः देवेन्द्रादिभिरपि वन्द्यत्वेन ईश्वरीक्रियन्ते इति सव्याः । दशार्णभद्रराजर्षिवत् ।

"वंदे दसण्णभद्दं, समसीसाए अहो सुरिंदस्स ।
गहिऊण तहा विरइं, जेण पइन्ना सुनिव्वूढा ॥ २१ ॥"

१६. सार्वाः । सां लक्ष्मीं चक्रवर्त्यादिसंपदमपि । 'अर्व् भर्व् शर्व् हिंसायाम्' अर्वन्ति हिंसन्ति दूषयन्ति त्यजन्तीति सार्वाः । स्वयमाभरणोत्तारणसमये श्रीभरतचक्र्यादिसाधुवत् ।

"भरहमहारायरिसिं, गिहिवेसुप्पन्ननाणवररयणं ।
दसहि सहस्सेहि समं, निक्खंतं वंदिमो सिरसा ॥ २२ ॥"(१–४)

१७. शर्वाः । 'शोच् तक्षणे' शानं शा तनूकरणं, जीवानां परितापजननं तमर्वन्ति स्वदेहबाधयाऽपि स्फेटयन्तीति शार्वाः । मेतार्यादिसाधुवत् ।

"नवपुव्वी जो कुंचगमवराहिणमवि दयाइ नाइक्खे ।
तं नियजीयन्निरविक्खं, नमामि मेयज्जमंतगडं ॥ २३ ॥" (५–८६)

१८. एवं सार्वाः । 'षोच् अन्तकर्मणि' सानं सा क्विप्, अन्तकर्म प्राणिनां हिंसेत्यर्थः । तामप्यर्वन्तीति सार्वाः । कटुतुम्बकभोजिधर्मरुचिमुन्यादिवत् ।

"गुट्ठीभत्ते मासस्स, पारणए रोहिणीइ कडुतुंबं ।
दिन्नं दयाइ भुत्तुं(त्तं), धम्मरुई मुत्तिमणुपत्तो ॥ २४ ॥" (५–१२३)

१९. शर्वाः । 'अर्व् भर्व् शर्व् हिंसायाम्' शर्वन्ति हिंसन्ति परीषहादिशत्रूनिति शर्वाः । रुद्रवा चीति शर्वशब्दः 'शृ हिंसायाम्' वे प्रत्यये सिद्धः । दृढप्रहारिसाधुवत् ।

"छम्मासनिराहारो, तवसोसियघोरकम्मपब्भारो ।
सिद्धिसुहं संपत्तो, दढप्पहारी महासत्तो ॥ २५ ॥"

२०. शर्व्याः । शरं बाणं कुर्वन्ति व्यापारयन्तीति णिजि क्विपि प्रथमा-बहुवचने जसि शरः, बाणक्षेपेण युद्धकारका इत्यर्थः । तान् व्ययन्ति संवृण्वन्तीति शर्व्याः । सङ्ग्रामनिषेधका इत्यर्थः । द्रविडवालि(रि)खिल्लनृपयुद्धवारकचारणश्रमणवत् ।

1 पासू=अपश्यत्

'सो वि य सणकुमारो, सलहिज्जइ जोइ तहासमत्थो वि।
मोत्तूण दव्वरोगे, विकिच्छगो भावरोगाण ॥ ११ ॥"

९ सार्वाणः। सह अर्वणा तुरङ्गमेन वर्तते ते सार्वाण । सार्वाण इव सतुरङ्गा इव शीघ्र भवपथोलङ्घनेन लोपात् सार्वसाधव । गयसुकुमालादिवत् ।

"वदामि नेमिसीस, वयदिणगहिएगराइवरपडिम।
सोमिलकयउवसग्ग, गयसुकुमाल सिव पत्त ॥१२॥ " (३–३२)

१० सार्वाः। सार तत्त्वोपदेशमाचष्टे णिजि सारयतीति सार जिनो गुरुर्वा। त वान्ति गच्छन्ति भवोद्विग्ना सन्त शरणतया सेवन्ते इति सार्वा । रामपुत्रकुब्जवारक–हल्ल–विहल्लादिवत् ।

"जल्णाओ नेमिसीस त्ति, भणतो जमएहिं उक्खित्तो।
सिरिकुज्जवारयमुणी, रामसुओ जयउ सिद्धि गओ ॥१३॥ "[१] (३-४७)

"सामिस्स वय सीस त्ति, चत्तनेरा सुरीइ साहरिया।
सेयणए रयणाए, उववन्ने हल्लय-विहल्ला ॥१४॥" (५–१४६)

"कयगुणरयणा इक्कारसगिणो सोल-बारवरिसवया।
हल्लु जयते पत्तो, अवरो अवराइयविमाणे ॥१५॥ " (५–१४७)

११ सव्याः। वि[ ] पक्षी तस्य आ लक्ष्मी व्या, तया सह वर्तन्ते इति सव्या ।

"सनिहिं च न कुव्विज्जा, लेवमायाइ सजए।
पक्खीपत्त समादाय, निरवेक्खो परिव्वए ॥ १६ ॥ "[२]

इति वचनादल्पसङ्गतया लघुभूतविहारिण पक्षिसमा इत्यर्थ । नमिराजर्षिवत् ।

"सुह वसामो जीवामो, जेसिं मो नत्थि किंचण।
मिहिलाए डज्झमाणीए, न मे डज्झइ किंचण ॥ १७ ॥"[३]

१२ स्वद्वाः। सुष्टु शोभन कृपामयचित्ततया सयतन यथा स्यात्। अप्सु जलेषु नद्याद्युत्तरण-समये वान्ति गच्छन्तीति स्वद्वा । अन्निकासुतगुरुवत् ।

"जाय पयागतित्थ, देवेहि कयाइ(ए) जस्स महिमाए।
गगाए अतगड, त वदे अन्नियापुत्त ॥ १८ ॥" (५-१२२)

१३ शव्याः। 'श दु द्रु शु श्रु स्रु गतौ' शुश्रूयन्ते गम्यन्ते शान्ततया मृगादिभिरपि आश्रीयन्ते इति शव्या । बलदेवमुन्यादिवत् ।

---

१ उद्धि गत, प्राकृतत्वादनुस्वारलोप [जुआ—ऋषिमण्डलप्रकरण टीका] २ उत्तराध्ययनसूत्रम् ६–१५। ३ उत्तराध्ययनसूत्रम् ९–१४।

२६. स्राव्याः। स्रावो द्रुः कर्ममलगालनं स्व-परेषां दुष्टरक्तस्राववत्, तत्र साधवः 'तत्र साधौ' यः, स्राव्याः कर्ममलापनयनसमर्था इत्यर्थः। प्रदेशिराजप्रतिबोधककेशिकुमारवत्।

"बहुदुक्खसयसहस्साण, दायगा मोयगा दुहसयाणं।
आयरिया फुडमेयं, केसि पएसी य ते हेऊ ॥ ३४ ॥"[1]

२७. श्राव्याः। श्रावः सिद्धान्तस्य श्रवणं वा परेषां प्राणिनाम्। तत्र साधवः, 'तत्र साधौ' यः, ते श्राव्याः। शकुनिकानमस्कारदातृसाध्व्यादिवत्।

"भरुअच्छे करुणाए, जइ स मुणी सउणीयाए नवकारं।
न हु साविंतो तो कह, सुदंसणा हुंज्ज जयपयडा ॥३५॥"[2]

२८. शार्वाः। शर्वः शिवः, तस्येमे शार्वाः। इन्द्रियसुखाऽनिन्द्रियसुखरूपकामतत्त्व-शिवत्वप्रधाने जगति लोकरूढ्या शिवपक्षीया एते साधवः मोक्षसुखाकाङ्क्षिण इति हृदयम्। जम्बूस्वामिवत्।

"रूवेण जोव्वणेण य, कन्नाहिं सुहेहि वरसिरीए य।
न य लुब्भंति सुविहिया, निदरिसणं जंबुनामु त्ति ॥ ३६ ॥"[2]

२९. शव्वाः। शवन्ति शब्दं कुर्वन्ति। जीवन्तमपि छागादिकं गलामोटनादिना निर्जीवं 'जे णिये' क्विपि, ते शवाः याज्ञिकादयः तान्, 'वांक् गति-गन्धनयोः' गन्धनं परदोषोद्घट्टनं, वान्ति दूषयन्तीति ते शव्वाः। दत्तमातुलश्रीकालिकाचार्यवत्।

"दत्तेण पुच्छिउ जो, जन्नफलं कालओ तुरमिणीए।
समयाइ आहिएणं, सम्मं बुइअं भयंतेणं ॥ ३७ ॥"[3]

यज्ञानां नरकं फलम्।

३०. शव्वाः। 'शर्पी आक्रोशे' शपनं शप् आक्रोशस्तं वान्ति गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति परीषहकाले सहन्ते इत्यर्थः, ते शव्वाः। अर्जुनमालाकारसाध्व्यादिवत्।

"छट्ठेणं छम्मासे, सहित्तु अक्कोसतालणाईणि।
अज्जुणमालागारो, खवित्तु परिनिव्वुडो कम्मे ॥३८॥"(५-७६)

३१. पुनः सव्याः। सह विना प्रक्रमाद् गरुडपक्षिणा वर्तते यः स सविः। सव्यासौ अश्वदिग्-विजयोद्यतवासुदेवः सव्यः, तत्तुल्याः शासनप्रतिपक्षदैत्यजेतृत्वात् सव्याः सिद्धसेनभट्टजैत्रश्रीवृद्धवाद्यादिवत्।

"मद्गोः[4] शृङ्गं शक्रयष्टिप्रमाणं, शीतो वह्निर्मारुतश्चाप्रकम्पः।
यद्वा यस्मै रोचते तन्न किञ्चित्, वृद्धो वादी भाषते कः किमाह ? ॥३९॥"[5]

इति तच्छक्तिः।

३२. सव्याः। उश्च इश्च आश्च व्याः हर-काम-ब्रह्माणः, तदभेदोपचारात् तेषां विशिष्टगुणाः। लोकरूढ्या परमयोगित्व-जगत्प्रियत्व-वेदाध्ययनलक्षणास्ते व्याः, तैः सह वर्तन्ते ये ते सव्याः, श्रीगौतमस्वाम्यादिवत्।

---

१ उपदेशमाला १०२। २ उपदेशमाला १५३। ३ आवश्यक निर्युक्ति गा ८७१। ४ मुद्गो.। ५ श्रीवृद्धवादिसूरिचरितम् श्लो. ३२ [जुओः 'प्रभावक चरित' पृ० ५५-सिंघी जैन ग्रन्थमाला]।

"निवद्दविड-वालिखिल्ला, दस दस भडकोडिसजुया जुद्धे ।
पण पण कोडि भडसए, वासारत्त ठिया तत्थ ॥ २६ ॥
सरयम्मि जुद्धसज्जा, चारणसमणेण तत्थ पत्तेण ।
पडिबोहिया ससिन्ना, सिद्धा सत्तुजए सव्वे ॥ २७ ॥"

नमिनृपमातृमदनरेखा-करकण्डुमातृपद्मावतीवद् वा ।

२१ एव शार्व्याः । 'शृश् हिंसायाम्' शरण शारो वध, त करोतीति णिजि क्विपि शार वधक इत्यर्थ । त व्ययन्ति सवृण्वन्तीति शार्व्या । मृगयाप्रसक्तसजयराजप्रतिबोधकगर्दभालिगुरुवत् ।

"सिरिगद्दभालिमुणिदेसणाए मिगयापसगदोसिल्लो ।
सजयनिवो वहाओ, विणियट्टो तक्खणा चेव ॥ २८ ॥"

२२ स्वर्वा । सुष्ठु अर्वन्ति घ्नन्ति सघाद्युपद्रवमिति स्वर्वा । उपसर्गहरस्तोत्रकारश्रीभद्रबाहुस्वाम्यादिवत् ।

"उवसग्गहर थुत्त, काऊण जेण सघकल्लाण ।
करुणापरेण विहिय, स भद्दबाहुगुरू जयउ ॥ २९ ॥"

२३ स्वर्वाः । तथाविधमनोवीर्यायुष्कादिहीनतया मोक्षगमनाभावे स्व स्वर्गमेव वैमानिकदेवगतिलक्षण वान्ति गच्छन्तीति स्वर्वा । धन्यशालिभद्रवत् ।

"ते धन्न-सालिभद्दा, अणगारा दो वि तवमहड्ढिया ।
मास पाओवगया, पत्ता सव्वट्ठसिद्धम्मि ॥ ३० ॥" (४–१५२)

एवमन्येऽपि जघन्यतोऽपि यावत् सौधर्मकल्प यान्ति, नाधस्तात् ।

"छउमत्थसजयाण, उववाओ उक्कोसओ अ सव्वट्ठे ।
तेसिं सड्ढाण पिय, जहन्नओ होइ सोहम्मे ॥ ३१ ॥"

इति वचनप्रामाण्यात् ।

२४ सर्व्या । सर्वेभ्य चराचरजीवेभ्यो हिता, 'तत्र साधौ' (सिद्ध० हे० ७–१–१५) इति य प्रत्यय, ये ते सर्व्या । नौतारणक्रीडानन्तरमिथ्यादुष्कृतपरातिमुक्तकमुन्यादिवत् ।

"छव्वरिसो पव्वइओ, निग्गथ रोइऊण जिणवयण ।
सिद्ध विहुयरयमल, अइमु(त्त) रिसिं नमसामि ॥ ३२ ॥"

२५ सर्व्याः । सर्वो जिन, तस्य शासनप्रभावकत्वाद् हितास्ते सार्व्या । वज्रस्वाम्यादिवत् ।

"शिशुत्वे चारित्र सुरवरपरीक्षाऽप्रतिमघी, पदेर्वा गीर्वाणैर्धनयुवतिमोक्षोऽन्नग्रहणम् ।
सुभिक्षे सघस्यानयनमिद पुष्पैरुपहृतिर्गुरोर्नेत्राज्जैनप्रवचनहितान्येवमभवन् ॥३३॥"

"रिउगणमिव दोसे अप्पणो संहरंतो, जणपयमिव सुत्थं...जायं करिंतो ।
सिरिभरमिव लोए नाणलच्छि जणिंतो, जयइ कुसलकंदो रामचंदो मुणिंदो ॥४७॥"

३९. तथा **स्वव्याः** । सुष्ठु अतिशयेन अव्याः । 'अव् रक्षण[1]-गति[2]-कान्ति[3]-प्रीति[4]-तृप्ति[5]-अवगमन[6]-प्रवेश[7]-श्रवण[8]-स्वाम्यर्थ[9]-याचन[10]क्रिय[11]एच्छा[12]-दीप्त्य[13]वाप्त्या[14]लिङ्गन[15]-हिंसा[16]-दहन[17]-भाव[18]-वृद्धिषु[19]' । इति **रक्षणीयाः** श्रमणोपासकैः प्रत्यनीकोपद्रवेभ्यः १ । एवं शेषार्थेष्वपि भाव्यते । अव्या **गमनीयाः** सेव्या इत्यर्थः २ । एवं **कमनीयास्त**त्तद्गुणैरभिलषणीयाः ३ । **प्रीणनीयाः** सम्मानादिभिः प्रमोदनीयाः ४ । **तर्प्पणीयाः** शुद्धान्नपानादिभिस्तृप्तिं प्रापणीयाः ५ । **अवगमनीया** यथावत् तत्स्वरूपभेदपरिकलनेन ज्ञातव्याः ६ । **प्रवेशनीया** यथाकृतवसत्यादिषु स्थापनीयाः ७ । **श्रवणीया** दूरस्थिताना तत्कुशलोदन्तग्रहणेन तद्गुणाकर्णनेन वा ८ । स्वस्य **स्वामित्वं प्रापणीयाः** ९ । **याचनीयाः** सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्राणि प्रार्थनीयाः १० । **करणीयाः** सदुपदेशदानादिभिः प्रतिबोध्य प्रव्राजनीयाः ११ । **एषणीयाः** स्वयमपि चारित्रेच्छया तद्रूपतां प्रतिपत्तुकामैः श्रमणोपासकैर्वाञ्छनीयाः १२ । **दीपनीयास्त**द्गुणप्रशंसनेन प्रकाशनीयाः १३ । **अवापनीयाः** स्थानस्थिता आगच्छन्तो वाऽभियानादिना समाश्रयणीयाः १४ । **आलिङ्गनीयास्त**द्गतैकमानसमाश्लेषणीयाः १५ । एवं संयमयोगे प्रमादवन्तः सन्तः संप्रति नोदनीयाः **पीडनीयाः,** एतदपि भावहितम् १६ । **दहनीयाः** शीतलविहारिणः सन्तः क्षारवचोभिस्तापनीयाः १७ । **भावनीयास्त**त्तत्स्वरूपख्यापनेन महापुरुषपङ्क्तिषु विद्यमाना गणनीयाः कार्याः । अस्य भावस्याज्ञातज्ञापनेन दीपनाद् विशेषः १८ । श्रमणोपासकैः सुष्ठु **वर्धनीयाः** सर्वप्रकारैर्वृद्धिं प्रोत्सर्पणां नेतव्याः साधवः १९ । स्वव्याश्च ते साधवश्च स्वव्यसाधवः श्रीआर्यसुहस्तिवत् संप्रतिमहाराजेन पूजिताः ।

"जह संपइरायराइणा जह नियगुरू सूरिसुहत्थिनामधिज्जा [य] ।
महिया विविहपयारभत्तीकरणेहिं तह सावएहिं कज्जं ॥ ४८ ॥"

अत्र च धातूनामनेकार्थतावत् क्वचिदन्तर्भूतण्यर्थताऽप्यदुष्टैव । तथा श्रीगौतमस्वाम्याद्याचार्या अपि साधुत्वेन विवक्षितास्तेषामपि साधुत्वेन साधुत्वाव्यभिचारादिति शुभम् ॥

[कर्तुः प्रशस्तिः—]

निजैर्गुणैर्ये परमेष्ठिनोऽमी, व्याप्ताः समग्रा अपि पूज्यपूज्याः ।
ते साधवः सन्तु मयि प्रसन्ना, देवेन्द्रमुख्यत्रिदशाभिवन्द्याः ॥ १ ॥
पञ्चपरमेष्ठिमन्त्रे, पञ्चमपरमेष्ठिपदगतौ वर्णौ ।
पञ्चम-षष्ठौ बह्वर्थरसभृतौ शाश्वतह्रदवत् ॥ २ ॥
तद्गतसदर्थविन्दुनादात्, कश्चन साधुगुणतृषितः ।
आगमिकगुरुजयानन्दशैक्षको देवरत्नाख्यः ॥ ३ ॥
आर्षप्राकृतलक्षणमतिसंकुलं वीक्ष्य पदमिदं क्षुण्णम् ।
यदनुचितमिह तदार्यैः, शोध्यं श्रुतभक्तितः सम्यक् ॥ ४ ॥

इति संपूर्णः ॥

'सिरिवीरपढमसीसो, सोहग्गमहानिही सुअसमुद्दो ।
नाणाविहलद्धिधरो, सिरिगोयमगणहरो जयइ ॥ ४० ॥"

३३ स्वर्वाः । सुष्ठु अर्वन्ति अगम्य स्थान मोक्षमपि यावद् गच्छन्तीति स्वर्वा । अतिशयिगमन-शक्तिभाज इत्यर्थ । सप्तमपृथ्वीगमनयोग्यत्वेऽपि तत्काल केवलज्ञानोत्पत्त्यादिसिद्धिगमनयोग्या , प्रसन्नचन्द्र-राजर्षिवत् ।

"वीरजिणकहियसत्तमपुढवीसव्वट्ठसिद्धिगइजोग्गो ।
नदउ पसन्नचदो, तक्काल केवल पत्तो ॥ ४१ ॥" (५–६५)

३४ शर्वाः । शर्वन्ति गच्छन्ति नानाद्युपसर्गपविमित्त गुर्वन्तरसमीपमिति शर्वा, श्रीआर्यरक्षितादिवत् ।

"तोसलिपुत्तायरियाण सीसरयण गुरूणऽणुन्नाए ।
सिरिअज्जरक्खियमुणी, सिखियरते सुअ भणिओ ॥ ४२ ॥"

३५ सर्व्याः । सर्व्यन्ते गम्यन्ते धर्मतत्त्वार्थिभिराश्रीयन्ते इति सर्व्या । चिलातीपुत्रेण मार्गे तटस्थसाधुपार्श्वे गत्वा समासेन धर्मतत्त्वे पृष्टे तदुपदेशकचारणश्रमणसाधुवत् ।

"इत्थिवहस्सवमाणे, चिलाइपुत्तो मणम्मि उव्विग्गो ।
पुच्छित्तु धम्मतत्त, मुणिपयठाणे ठिओ अचलो ॥ ४३ ॥"

३६ पुन साव्याः । अविर्मेषस्तस्य आ लक्ष्मी , अरस विरसाहारभक्षणजलपङ्कमीरुत्व शान्तत्व-लक्षणा अव्या तया सह वर्तन्ते ये ते साव्या । श्रीवीरप्रशसिततपोरूपलक्ष्मीक काकन्दीपुरीयधन्य-साधुवत् ।

"बत्तीस जुवइवई, जो काकन्दीपुरीइ पव्वइओ ।
छट्ठस्स सया पारणमुज्झियमायविल जस्स ॥ ४४ ॥ (५–१२८)
वीरपससियतव-रूव-लच्छि(द्धि) नवमाससुकयपरियाओ ।
सो धन्नो सव्वट्ठे, पत्तो इक्कारसगविऊ ॥ ४५ ॥" (५–१२९)

३७ साप्याः । आपो जल तस्य आ लक्ष्मी , सहजनैर्मल्य–तापशान्ति-लालित्य-तृष्णाविच्छेद-मलविशुद्धिलक्षणा या, तया सह वर्तन्ते ये ते साप्या, । ऋजुता-क्षमा-मार्दव विषयवैमुख्य-केवलज्ञानो-त्पत्तिकलितकूरगडुकमुनिवत् ।

"सा कावि खमा त किपि मद्दव अज्जव च त किपि ।
जह कूरगडु अ महेसिणो समत्ताइ कज्जाइ ॥ ४६ ॥"

३८ शव्याः । श शर्वे, निर्विष्णु , अ अज स्वयम्भू , आद्यवर्णे शव्या , शिव-विष्णु-स्रष्टार , तत्तुल्या , मिथ्यात्वाविरति-कषायादीना स्वदोषाणा संहारकत्वेन तमोगुणमयत्वात् शर्वसदृशा , जगज्जन्तु-पालकत्वेन सत्त्वगुणमयत्वाद् विष्णुसमा , सम्यग्ज्ञान-दर्शनादीनामात्मगुणानामुत्पादकत्वेन रजोगुणमयत्वाद-जतुल्या । 'मिच्छामि दुक्कड' वत् प्रथमाक्षरै संज्ञा । श्रीरामचन्द्रादिमुनिवत् ।

[४]

सिरिमहानिसीहसुत्तसंदब्भो ।

स भयवं ! जइ एवं ता किं पंचमंगलस्स णं उवहाणं कायव्वं ?

गोयमा ! पढमं नाणं तओ दया, दयाए य सव्वजग[१]जीवपाणभूयसत्ताणं अत्तसमदरिसित्तं, सव्वजग[२]जीवपाणभूयसत्ताणं अत्तसमदंसणाओ य तेसिं चेव संघट्टणपरियावणकिलावणोद्दावणाइदु[३]क्खुप्पायणभयविवज्जणं, त[४]ओ अणास[५]वो, अणासवाओ य संवुडासवदारत्तं, संवुडासवदारत्तेणं च[६] दमोपसमो, तओ य समसत्तुमित्तपक्खया, समसत्तुमित्तपक्खयाए य अरागदोसत्तं, तओ य अकोहया अमाणया अमायया अलोभया, अकोहमाणमाया[७]लोभयाए य अकसायत्तं, तओ य सम्मत्तं, सम्मत्ताओ य जीवाइपयत्थपरिन्नाणं, त[८]ओ य सव्वत्थ अपडिवद्धत्तं, सव्वत्थापडिवं[९]द्धत्तेण य अन्नाणमोहमिच्छत्तक्खयं, तओ विवेगो, विवेगाओ य हेयउवाएयवं[१०]त्थुवियालणेगंतवद्धलक्खत्तं, तओ य अहियपरिच्चाओ हिय[११]गयरणे य अच्चंत[१२]मच्चुज्जमो,

अनुवाद

"भगवान, जो एम छे तो शुं पंचमंगल(नमस्कार मंत्र)नुं उपधान करवुं जोईए ?"

"गौतम, प्रथम ज्ञान प्राप्त थाय छे अने पछी दया आवे छे। (मारा आत्माने जेम सुख प्रिय छे अने दुःख अप्रिय छे तेम जगतना सर्व जीवो, प्राणीओ, भूतो अने सत्त्वोने सुख प्रिय छे अने दुःख अप्रिय छे एवी) जगतना सर्व आत्माओ प्रत्ये आत्मतुल्यतानी दृष्टि दयाथी प्राप्त थाय छे। सर्व आत्माओ प्रति आत्मतुल्यतानी भावनाथी ते जीवोने संघट्टना[१], परितापना[२], किलामणा[३], अवद्रावणा[४] वगेरे दुःखो उपजाववां तथा भय उत्पन्न करवो तेनो मनुष्य त्याग करे छे। ए त्यागथी अनास्रव थाय छे। अनास्रव थवाथी आस्रवनां[५] द्वारो वंध थई जाय छे। आस्रवनां द्वार वंध थई जवाथी दम (इंद्रियोनो निग्रह) अने उपशम थाय छे। तेथी (दम अने उपशमथी) शत्रु अने मित्र ए बन्ने उपर समभाव उत्पन्न थाय छे। शत्रु अने मित्र उपर समभाव उत्पन्न थवाथी राग अने द्वेषथी रहित थवाय छे। रागद्वेषथी रहित थवाथी क्रोध, मान, माया अने लोभथी रहित थवाय छे। क्रोध, मान, माया अने लोभथी रहित थवाथी अकषायत्व प्राप्त थाय छे। अकषायत्वथी सम्यक्त्व प्राप्त थाय छे। सम्यक्त्वथी जीव वगेरेनुं ज्ञान थाय छे। जीवादि पदार्थोनुं ज्ञान थवाथी सर्वत्र अप्रतिवद्धपणुं (निर्ममत्व) प्राप्त थाय छे। सर्वत्र अप्रतिवद्धपणाथी अज्ञान, मोह अने मिथ्यात्वनो क्षय थाय छे। परिणामे विवेक प्रगट थाय छे। विवेकथी हेय अने उपादेय वस्तुनी विचारणामां एकांते लक्ष्य वंधाय छे। तेथी अहितनो त्याग थाय छे अने हितनुं आचरण

---

१. °गज्जीव A। २. °गज्जीव B। ३. दुक्खपाय° P। ४. ततो अ° B। ५. सनो अ° P। ६. च देमो° P। ७. °या अलो° P। ८. तओ स° A। ९. °डिवंधत्ते° P। १०. वत्थूवि° P। ११. हियाग° P। १२. °मब्भुओ M।

---

१ संघट्टना = थोडो स्पर्श करवो। २ परितापना = परिताप उपजाववो, दुःख उपजाववुं। ३ किलामणा = खेद पमाडवो। ४ अवद्रावणा = विवरावववुं, अतिशय त्रास पमाडवो। ५ कर्मोना वंधनुं कारण जे हिंसा वगेरे ते आस्रव कहेवाय छे।

परिचय

प्रथम टीकाना कर्ता श्रीगुणरत्नमुनि छे । आ नामना त्रणेक आचार्योनो परिचय मळे छे । एक खरतरगच्छीय गुणरत्नमुनि, जेमणे नेमिचन्द्र भंडारीए रचेला प्रसिद्ध 'षष्टिशतक' ऊपर सं १५०१ मा टीका रची हती । बीजा आगमगच्छीय गुणरत्नसूरि, जेमना शिष्य देवरत्ने 'गज-सिंहकुमाररास'नी रचना करी हती अने त्रीजा गुणरत्नसूरि, तपागच्छीय श्रीदेवसुंदरसूरिना शिष्य हता, जेमणे 'क्रियारत्नसमुच्चय', 'षड्दर्शनसंग्रह' ऊपर टीका वगेरे ग्रंथोनी रचना करी हती । आ त्रण पैकी कया गुणरत्नसूरिए **'नमस्कारप्रथमपदपदार्थाः'** एटले **'नमो अरिहंताणं'** पदना ११० अर्थो लख्या छे, ते जाणवा मळ्यु नथी । 'शब्दोना अनेक अर्थो होय छे' ए उक्तिने ध्यानमां राखीने तेमणे अर्थो कर्या छे । आटला अर्थो उपजाववानी कर्तानी व्युत्पन्न शक्तिनो ख्याल आ जोता मळे छे । 'अनेकार्थरत्नमंजूषा' नामक ग्रंथना पृ १०३ थी ११८ मांथी आ टीकाभाग उद्धृत करवामा आव्यो छे ।

द्वितीय टीकाना कर्ता आगमगच्छीय देवरत्नसूरि छे, जेओ गुणरत्नसूरिना शिष्य हता अने उपर्युक्त 'गजसिंहकुमाररास'ना कर्ता हता । तेमणे **"नमस्कारमन्त्रान्तर्गत-नमो लोए सव्वसाहूणं-पञ्चमपदगत 'सव्व' शब्दस्यानेकार्थाः"** नामे पांचमा पदमा आवता 'सव्व' शब्दना अनेक अर्थो जुदी जुदी रीते बताव्या छे ।



अणाणुपुव्वीए सुविसुद्धं अचोरिकायएण एगत्तेण[1] सुविन्नेयं।

तं च गोयमा! अणिहणेऽणोरपार[2]सुविच्छिन्न[3]चरमोयहिं[4] पिव य सुदुरवगाहं सयलसोक्खपरमहेउ-भूयं च, तस्स य सयलसोक्खहेउभूयाओ न इट्ठदेवयानमोक्कारविरहिए केइं[5] पारं गच्छेज्जा, इट्ठदेवयाणं च[6] णमोक्कारं पंचमंगलमेव गोयमा! णो णमन्नंति, ता णियमओ पंचमंगलस्सेव पढमं ताव विणओवहाणं[7] कायव्वं ति।

से भयवं! कयराए विहीए पंचमंगलस्स णं विणओवहाणं कायव्वं?

गोयमा! इमाए विहीए पंचमंगलस्स णं विणओहावणं कायव्वं; तं जहा—

सुपसत्थे चेव सोहणे तिहिकरणमुहुत्तनक्खत्तजोगलग्गससीवले विप्पमुक्कजायाइमयासंकेण संजाय सद्धासंवेगसुतिव्वतरमहंतुल्लसंतसुहज्झवसायाणुगयभत्तीवहुमाणपुव्वं णिण्णियाणं[8] दुवालसभत्तट्ठिएणं चेइयालए जंतुविरहिओगासे भत्तिभरनिब्भरुद्धुसियससीसरोमावलीपप्फुल्ल[9]वयणसयवत्तपसन्तसोमथिरदिट्ठी णवणव[10]-

---

अनानुपूर्वीथी खूब विशुद्धरीते तेमज भूल्या विना एकांते ज्ञान मेळववुं जोईए।

हे गौतम, ते द्वादशांत श्रुतज्ञान अनंत, अपार, सुविस्तीर्ण, स्वयंभूरमण समुद्रनी पेठे महामुशीवते अवगाहन करी शकाय तेवुं छे। तेमज सकल सुखना परम हेतुभूत छे। इष्टदेवताने नमस्कार कर्या सिवाय कोईपण मनुष्य सकल सुखना हेतुभूत ए श्रुतज्ञाननो पार पामी शके नहि अने पंचमंगल (पंचपरमेष्ठिनमस्कार) ए ज इष्टदेवतानो नमस्कार छे; माटे गौतम, सौथी प्रथम पंचमंगलसूत्रनुं विनयोपधान करवुं जोईए।"

"भगवन् कई विधिथी पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधनुं विनयोपधान करवुं?"

"गौतम, पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधनुं विनयोपधान आ (नीचे मुजबनी) विधिथी करवुंः—

सुप्रशस्त अने सुंदर तिथि, करण, मुहूर्त, नक्षत्र, योग, लग्न अने चंद्रवल होय त्यारे; जाति* वगेरे मद अने आशंकाथी रहित थईने; उत्पन्न थयेल श्रद्धा, संवेग अने अत्यंत तीव्रतर महा उल्लसित शुभ अध्यवसाय सहित; भक्ति अने वहुमानपूर्वक; (आ लोक अने परलोकना पौद्गलिक सुखोनी आशंसारूप) नियाणा विना पांच उपवास करीने; जिन चैत्यमां जंतुरहित स्थानमां भक्तिथी सभर बनी; नतमस्तके, प्रफुल्लित रोमावली, विकसित वदनकमळ, प्रशांत सौम्य अने स्थिर दृष्टि, अने नवानवा संवेगथी उछळता अत्यंत निरंतर अचिंत्य परम शुभ परिणाम-

---

१. एगत्तणेण P। २. °हऽणोर° P। ३. °सुविच्छिन्न° A। ४. °मोयहिमिय P। ५ केई पा° P। ६. च नमो° A। ७. °ओहावणं A। ८. °याण दु° P। ९. °पफुल्ल° P पप्फुल्ल[ण]वयण T। १०. °णवणसं° A।

* जाति वगेरे आठ मद छे, जेनुं वर्णन नीचेना श्लोकमा छेः—

जातिलाभकुलैश्वर्यवलरूपतपःश्रुतैः।
कुर्वन् मदं पुनस्तानि हीनानि लभते जनः॥

—योगशास्त्र, चतुर्थ प्रकाश श्लो. १३

तओ य [1]परमत्थपवित्तुत्तमखंतादिदसविहअहिंसालक्खणधम्माणु[2]ट्ठाणिक्ककरणका[3]रावणासत्तचित्तया, [4]तओ य खंतादिदसविहअहिंसालक्खणधम्माणु[5]ट्ठाणिक्ककरणका[6]रावणासत्तचित्तयाए य सव्वुत्तमा खंती, सव्वुत्तम मिउत्त, सव्वुत्तम अज्जवभावत्त, सव्वुत्तम स[7]बज्झब्भंतर स[8]व्वसंगपरिच्चाग, सव्वुत्तम स[9]बज्झब्भंतरदुवालसविहअच्चंतघोरवीरुग्गकट्ठतवचरणाणुट्ठाणाभिरमण, सव्वुत्तम सत्तरसविहकसिणसंजमाणुट्ठाणपरिपालणेक्कबद्धलक्खत्त, सव्वुत्तम स[10]च्चुग्गिरण छकायहिय अणिगूहियबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमपरितोलण च सव्वुत्तम-सज्झायज्झाणसलिलेण पावकम्ममललेवपक्खालण ति ।

× × ×

ता गोयमा ! एगंतियअच्चंतियपरमसा[11]सतधुवनिरंतरसव्वुत्तमसोक्खकंखुणा पढमयरमेव तावायरेण सामाइयमा[12]इयलोगबिंदुपज्जवसाण दुवालसंग सुयनाणं कालंबिलादिज[13]हुत्तविहिणोवहाणेण हिंसा[14]दिय च तिविहंतिविहे[15]ण पडिक्कतेण य सरवंजणम[16]त्ताबिंदुपयक्खराणूणगं पयच्छेदघोसबद्धयाणु[17]पुव्विं पुव्वाणुपुव्वि-

करवामा अत्यंत उद्यम प्राप्त थाय छे। तेनाथी परम पवित्र उत्तम क्षमा आदि दश प्रकारनो* अहिंसालक्षण जे धर्म तेनु अनुष्ठान करवा अने कराववा माटे चित्तमा खूब अनुराग उत्पन्न थाय छे। ते क्षमा आदि दश प्रकारना अहिंसालक्षण धर्मनु अनुष्ठान करवा अने कराववा माटे चित्तमा अत्यंत अनुराग उत्पन्न थवाथी सर्वोत्तम क्षमा, सर्वोत्तम मृदुता, सर्वोत्तम सरलता, सर्वोत्तम बाह्य अने आभ्यंतर सर्व संगनो परित्याग, बाह्य तथा आभ्यंतर एवा बार प्रकारना अत्यंत घोर-वीर-उग्र अने कठोर तपने आचरवामा सर्वोत्तम रमणता, सत्तर प्रकारना संयमनु संपूर्ण अनुष्ठान अने परिपालन करवा माटे सर्वोत्तम बद्धलक्ष्यत्व (लक्ष्य बांधवु ते), सर्वोत्तम सत्यभाषित्व, (सर्वोत्तम) छकायनु हित, छूपाव्या विना (सर्वोत्तम) बल-वीर्य-पुरुषार्थ अने पराक्रमनु परितोलन, स्वाध्याय अने ध्यानरूपी पाणीथी पापकर्मरूपी मेलना लेपनु सर्वोत्तम प्रक्षालन—आ दश वस्तुओ प्राप्त थाय छे।"

× × ×

"माटे हे गौतम ! एकांतिक, आत्यंतिक, परम शाश्वत, ध्रुव, निरंतर एवा सर्वोत्तम (मोक्ष) सुखना आकांक्षीए सौथी प्रथम आदरपूर्वक सामायिकथी मांडीने लोकबिंदु (चौदमु पर्व) सुधीना बार अंग प्रमाणना श्रुतज्ञाननु काळ लक्ष्यमा राखीने तथा आयंबिल वगेरे विधिपूर्वक उपधानथी, हिंसा वगेरेनो त्रिविधे त्रिविधे -त्याग करीने, स्वर व्यंजन-मात्रा बिंदु पद तथा अक्षर जरापण न्यून न आवे एवी रीते, पदच्छेद, घोषबद्धता, आनुपूर्वी, पूर्वानुपूर्वी तथा

१ परमपवित्तु P । २ °ट्ठाणेक्क P । ३ °कारवणा B । ४ तओ खं B । ५ °ट्ठाणेक्क° B । ६ °कारवणा P । ७ सब्भंतर° S । ८ सत्तसग° S । ९ सव्वजप P । १० सच्चगिरण P । ११ सासय धु P । १२ °माइल्लोगबिंदुसारप P । १३ जहुत्त विहिणोवहाणाण B । १४ हिंसादीय P । १५ °हेण प M । १६ मत्तबिंदु A । १७ पुव्वि पु° P ।

* "खंती मुत्ती अज्जव, मद्दव तह लाघवे तवे चेव ।
संजम चाआऽकिंचन, बोद्धव्वे बंभचेरे य ॥"

अर्थ—"क्षमा, मुक्ति, आर्जव, मार्दव, लाघव, तप, संयम, त्याग, अकिंचन्य अने ब्रह्मचर्य ए दशविध यतिधर्म जाणवो।"

एवं अणंतरभणिएणेव कमेणं अणंतरुत्तत्थपसाहगं तिपय[1]परिच्छिन्नेगालावगं[2] सत्तक्खरपरिमाणं **'नमो आयरियाणं'**ति तइयमज्झयणं आयंबिलेणं अहिज्जियव्वं[3]।

तहा[4] अणंतरभणियत्थपसाहगं[5] तिपयपरिच्छिन्नेगालावगं सत्तक्खरपरिमाणं **'नमो उवज्झायाणं'** चउत्थमज्झयणं अहिज्जेयव्वं, तद्दियहे य आयंबिलेण पारेयव्वं।

एवं[6] **'नमो लोए सव्वसाहूणं'**ति पंञ्चम[7]मज्झयणं पंचमदिणे आयंबिलेण,

तहेव तयत्थाणुगामियं[8] एक्कारसपयपरिच्छिन्नतितयालावगतित्तीसक्खरपरिमाणं[9] **'एसो पंचनमोक्कारो, सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं'**ति चूलं ति छट्ठसत्तमट्ठमदिणे तेणेव कमविभागेणं[10] आयंबिलेहिं अहिज्जेयव्वं।

एवमेयं पंचमंगलमहासुयक्खंधं सरवन्नपयसहिय[11] पयक्खरबिंदुमत्ताविसुद्धं गुरु[12]गुणोववेयगुरूवइट्ठं कसिणमहिज्जित्ताणं तहा कायव्वं जहा पुव्वाणुपुव्वीए पच्छाणुपुव्वीए अणाणुपुव्वीए जीहग्गे तरेज्जा।

ए ज प्रमाणे उपर्युक्त क्रमपूर्वक, उपर जणावेल अर्थने सिद्ध करनार; त्रण पद, एक आलावा अने सात अक्षर प्रमाणना **'नमो आयरियाणं'** ए त्रीजा अध्ययननी आयंबिल करवापूर्वक वाचना लेवी।

ए ज रीते उपर्युक्त अर्थने सिद्ध करनार; त्रण पद, एक आलावा अने सात अक्षरोना प्रमाणवाळा **'नमो उवज्झायाणं'** ए चोथा अध्ययननी वाचना लेवी अने ते दिवसे आयंबिल करवुं।

ए ज रीते **'नमो लोए सव्वसाहूणं'** ए पांचमा अध्ययननी पांचमा दिवसे आयंबिल करवापूर्वक वाचना लेवी।

ए ज रीते ते अर्थने अनुसरनारी अगियार पदो, त्रण आलापको अने तेत्रीश अक्षरोना परिमाणवाळी—**'एसो पंचनमोक्कारो, सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।'** ए चूलिकानी छट्ठा, सातमा, आठमा दिवसे ए ज क्रमविभाग वडे आयंबिल करवापूर्वक वाचना लेवी।

ए रीते गुरुना गुणोथी युक्त एवा गुरुनी पासेथी पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधनो पाठ लईने; स्वर, वर्ण अने पद सहित; पदाक्षर, मात्रा तेमज बिंदु वडे संपूर्णपणे विशुद्ध एवी रीते अध्ययन करवुं जोईए के जेथी ते पूर्वानुपूर्वी, पश्चानुपूर्वी, अनानुपूर्वीथी जीभना टेरवे रमी रहे।

---

१. तिपदप° A। २. °लावग स° P। ३. अहिज्जेयव्वं P। ४. तहा य अ° P। ५. अणंतरुत्थ° A। ६. 'एवं'- इति पाठः B प्रतौ नास्ति। ७. पञ्चमज्झ° P। ८. तमच्छाणु° P, तहेवमत्थाणु B। ९ °तियालावगतेत्तीस° P। १०. °भागेण आ° P। ११. °वत्तयरहियं P, °वन्नयरहियं B। १२ गुरुगणो° P।

सनेगसमुच्छलतसजायवहल्लनणनिरतरअचिंतपरमसुहपरिणामविसेसुल्लासियं[1]जीववीरियाणुसमयविवड्ढतपमोयं[2]सुविसुद्धनिम्मलविमलथिरदढयरतकरणेण खितिणिहियजाणु[3]णिसिउत्तमगकरकमलमउलं[4]सोह[त]जलिपुडेण सिरिउसमाइपवरवरधम्मतित्थयरपडिमाबिबविणिवेसियणयणमाणसेगग्गतगयज्झवसाएण समय[5]ण्णुदढचरित्तादिगुणसपओ[6]ववेयगुरुसद्दत्थाणुट्ठाणकरणेक्कवद्धलक्खत[7]ऽवाहियगुरुवयणविणिगय विणयादिवहुमाणपरिओसा[8]णुकपोवलद्ध अणेगसोगसतावु[9]व्वेगमहावाहिवियणाघोरदुक्खदारिद्दकिलेसरोगजम्मजरामरणगब्भवा[11]साइदुट्ठसा[12]वगागाहमीमभवोदहितरडगभूय इणमो सयलागममज्झवत्तगस्स मिच्छत्तदोसोवहयविसिट्ठबुद्धीपरिकप्पियकुभणियअघडमाण[13]असेसहेउदिट्ठतजुत्तीविद्धसणि[14]क्कपचलपोट्टस्स पचमगलमहासुयक्खधस्स पचज्झयणेगचूलापरिक्खित्तस्स, पवरपवयणदेवयाहिट्ठियस्स तिपदपरिच्छिन्नेगालावगसत्तक्खरपरिमाण अणतगमपज्जवत्थपसाहग सव्वमहामतप[15]वरविज्जाण परमवीयभूय 'नमो अरि[16]हताण'ति, पढमज्झयण अहिज्जेयव्व, तद्दियहे[17] य आयविलेण पारेयव्व।

तहेव[18] बीयदिणे अणेगाइसयगुणसपओववेय अणतरभणियत्थपसाहग अणतरुत्तेणेव कमेण दुपयपरिच्छिन्नेगालावगपचक्खरपरिमाण 'नमो सिद्धाण'ति बीयमज्झयण[19] अहिज्जेयव्व[20] ति, तद्दियहे य आयविलेण पारेयव्व।

विशेषथी, उल्लसित आत्मवीर्य अने प्रतिसमय वृद्धि पामता प्रमोदथी विशुद्ध, निर्मळ, स्थिर दृढ एवा अत करणवाळा थईने, जमीन उपर ढींचण, मस्तक तथा करकमळ स्थापीने, अजलिपुट रचीने, श्रीऋषभदेव वगेरे श्रेष्ठ धर्मतीर्थंकरोना प्रतिमाबिंब उपर दृष्टि तथा मनने स्थिर करीने, एकाग्र अध्यवसाय करीने, समयज्ञता, दृढ चारित्र्य वगेरे गुणसपदाथी सहित, गुरु शब्दना अर्थ प्रमाणे अनुष्ठान करनामा बद्धलक्ष्य एवा अबाधित गुरुना मुखमाथी नीकळेल, विनय वगेरे बहुमानपूर्वक तेमना (गुरुना) सतोष तथा कृपाथी मळेल, अनेक शोक, सताप, उद्वेग, महाव्याधि, वेदना, घोर दु ख, दारिद्र्य, क्लेश, रोग, जन्म, जरा, मरण तथा गर्भवास वगेरे रूप दुष्ट जळजतुओना अवगाहनथी भयकर एवा ससारसमुद्रनी अदर नौका समान, सकल आगमोमा व्यापीने रहेल, मिथ्यात्वना दोषथी हणायेल विशिष्ट बुद्धिवाळाओए कल्पेल, मिथ्यात्वी तेमज अघटित सर्व हेतु, युक्ति अने दृष्टातोनो ध्वस करवामा समर्थ, पाच अध्ययन अने एक चूलिकाथी बनेल, प्रवर प्रवचनदेवताथी अधिष्ठित थयेल आ पचमगलमहाश्रुतस्कधनु, 'नमो अरहताण' एवु प्रथम अध्ययन के जे त्रण पद, एक आलावा तथा सात अक्षर प्रमाणनु छे, अनतगम पर्यवार्थनु प्रसाधक छे अने सर्व महामत्र तथा प्रवर विद्याओनु परम बीजरूप छे–तेनु अध्ययन करवु जोईए, अने ते दिवसे आयबिलथी पारवु जोईए।

ए ज रीते बीजे दिवसे अनेक अतिशय तेमज गुणसपदा सहित, पूर्वे कहेला अर्थने सिद्ध करनारु, बे पद, एक आलावा अने पाच अक्षर प्रमाणनु 'नमो सिद्धाण' नामनु बीजु अध्ययन उपर जणावेला क्रम प्रमाणे ज भणवु, अने ते दिवसे आयबिल करवु।

---

१ °सियसजीव° P। २ °यसुद्धनिम्मलथिर° A। ३ °जाणुणसि° P। ४ °सोहज° P। ५ समयतु दढचरि P। ६ °ववेयागुरुमद्दत्थत्या° P। ७ लक्खतवाहिय P। ८ °गुरुप्पोव° P। ९ अणेगमहावाहिवियणा° S। १० वुव्वेवग° P। ११ वासानिवासाइ° I। १२ °सावगागाह° P। १३ असेसेहेउ P। १४ °सणेक्कपचलपोढस्स P। १५. °पयर° P। १६ अरिह° A। १७ तद्दियहे P। १८ तहेय वी° P। १९ नितिय° P, बीयज्झ° A। २० °व्व त° A।

सनरामरासुरस्स णं सव्वस्सेव जगस्स अट्ठमहापाडिहेराइपूयाइसओवलक्खियं अणण्णसरिसमचिंत[1]माहप्पं केवलाहिट्ठियं पवरुत्त[2]मत्तं अरहंति त्ति अरहंता। असेसकम्मक्खएणं निद्दड्ढभवंकुरत्त[3]ओ न पुणेह भवंति जम्मंति उववज्जंति वा अरुहंता वा णिम्महियनिह[4]यनिद्दलि[5]यविलीयनिट्ठवियअभिभूयसुदुज्जयासेसअट्ठपयारकम्मरिउत्ताओ वा अरिहंते[6]ति वा, एवमेते अणेगहा पन्नविज्जंति परूविज्जंति आघविज्जंति पट्ठविज्जंति दंसिज्जंति उवदंसिज्जंति।

तहा सिद्धाणि परमाणंदमहूसव[7]महाकल्लाणनिरुवमसोक्खाणि णिप्पकंपसुक्कज्झाणाइअचिंतसत्तिसामत्थओ सजीववीरिएणं जोगनिरोहाइणा म[8]हापयत्तेण त्ति सिद्धा[9], अट्ठ[10]प्पयारकम्मक्खएण वा सिद्धं सज्झमेतेसिं ति सिद्धा, [11]सियं झायमेसिमिति वा सिद्धा, सिद्धे निट्ठिए पहीणे सयलपओयणवाय[12]कयंवमेतेसिमिति सिद्धा।

एवमेते इत्थीपु[13]रिसनपुंस[14]सलिंगण्णलिंगगिहिलिंगपत्तेयबुद्धबोहिय जाव णं कम्मक्खय[15]सिद्धाईभेएहि णं अणेगहा पन्नविज्जंति।

[अरिहंत (वगेरेनो संक्षिप्त) अर्थ—]

मनुष्य, देवता अने दानवोवाळा आ समग्र जगतमां आठ महाप्रातिहार्य वगेरेना पूजातिशयथी उपलक्षित, अनन्यसदृश, अचिंत्य माहात्म्यवाळी, केवलाधिष्ठित, प्रवर उत्तमताने जेओ योग्य छे ते 'अरहंत' छे। समग्र कर्मोनो क्षय थवाथी, संसारना अंकुरा बळी जवाथी फरीवार अहीं आवता नथी, जन्म लेता नथी, उत्पन्न थता नथी ते कारणे ए 'अरुहंत' पण कहेवाय छे। वळी, तेमणे आठ प्रकारना कर्मरूपी शत्रुओने मथी नाख्या छे, हणी नाख्या छे, दळी नाख्या छे, पीली नाख्या छे, नसाडी मूक्या छे अथवा पराजित कर्या छे; तेथी ते 'अरिहंत' पण कहेवाय छे। आ रीते तेओ अनेक प्रकारे कहेवाय छे, निरूपण कराय छे, उपदेश कराय छे, स्थापन कराय छे, दर्शावाय छे अने बधी रीते बतावाय छे।

[सिद्धनो अर्थ—]

परम आनंदरूप, महोत्सवरूप, महाकल्याणरूप, अनुपम सुखने अचळ एवा शुक्लध्यान-वगेरेनी अचिन्त्य शक्तिना सामर्थ्यथी जीवना पराक्रमपूर्वक योगनो निरोध करवा वगेरे वडे जेओए महाप्रयत्नथी सिद्ध कर्युं छे ते 'सिद्ध' कहेवाय छे। वळी, आठ प्रकारनां कर्मोनो क्षय करवाथी सिद्ध थया छे ते 'सिद्ध' कहेवाय छे। बांधेलां कर्मो तेमनां भस्मीभूत थयां छे तेथी पण ते 'सिद्ध' कहेवाय छे। अथवा तेमनां सकल प्रयोजनो सिद्ध एटले समाप्त थई गयां छे तेथी पण ते 'सिद्ध' कहेवाय छे।

आ रीते स्त्रीलिंग, पुरुषलिंग, नपुंसकलिंग, अन्यलिंग, (वेश) गृहस्थलिंग, प्रत्येकबुद्ध अने बुद्धबोधितथी मांडीने यावत् कर्मक्षयसिद्ध वगेरे अनेक रीते सिद्धोनी प्ररूपणा कराय छे।

१. °मप्पमेयं के° P। २. °त्तमं अ° A। ३. °त्ताउ न A। ४. °यणिहूय P। ५ विलय P; विल्लिय SB। ६. °तेइ वा P। ७. °ति महा B। ८. °महक P। ९ महपयत्तेणेति P, महापयत्तेणिति A। १० अट्ठपयार° A P। ११ सियमज्झाय° P, सियमज्झोय° B। १२ °कयं च मे° P। १३. °पुरुस° M। १४. सगलिंग° M। १५ सिद्धा य मे° P।

तओ तेणेवाणतरभणियतिहिकरणमुहुत्तनक्खत्तजोगलग्गससीबलजतुविरहिओगासचेइयालगाइकमेण अट्ठमभत्तेण समणुजाणाविऊण गोयमा ! महया पबधेण सुपरिफुड णिउण असदिद्ध सुत्तत्थ अणेगहा सोऊणावधारेयव्व, एयाए विहीए पचमगलस्स ण गोयमा ! विणओहाणो कायव्वो ।

से भयव ! किमेयस्स अचितचिंतामणिकप्पभूयस्स ण पचमगलमहासुयक्खधस्स सुत्तत्थ पन्नत्त ?

गोयमा ! एमाइय एयस्स अचितचिंतामणिकप्पभूयस्स ण पचमगलमहासुयक्खधस्स ण सुत्तत्थ पण्णत्त, त जहा–जे ण एस पचमगलमहासुयक्खधे से ण सयलागमतरोववत्ती तिलतेल्लकमलमयरद व्व सव्वलोए पचत्थिकायमिव जहत्थकिरियाणुगयसब्भूयगुणुक्कित्तणे जहिच्छियफलपसाहगे चेव परमथुइवाए ।

सा य परमथुई केसिं कायव्वा ?

सव्वजगुत्तमाण, सव्वजगुत्तमुत्तमे य जे केई भूए जे केई भविस्सति ते सव्वे चेव अरहतादओ चेव, णो णमन्नेत्ति, ते य पचहा–अरहते सिद्धे आयरिए उवज्झाए साहवो य । तत्थ एएसिं चेव गब्भत्थसब्भावो इमो । त जहा—

त्यारपछी पूर्वे कहेला तिथि, करण, मुहूर्त, नक्षत्र, योग, लग्न अने चद्रवळ होय त्यारे जंतुरहित स्थळमा चैत्यालय (जवा) वगेरेना क्रमपूर्वक त्रण उपवास करीने, सम्यक् प्रकारे (गुरुनी) अनुज्ञा मेळवीने, हे गौतम ! मोटा विस्तारथी अत्यत स्फुट, निपुण अने शकारहितपणे सूत्र तेमज अर्थोने अनेक प्रकारे साभळीने अवधारण करवा । हे गौतम ! आ प्रकारनी विधिथी पचमगलमहाश्रुतस्कधनु विनयपूर्वक उपधान करवु जोईए ।"

"हे भगवन् ! अचिन्त्य चिंतामणिकल्प श्रीपचमगलमहाश्रुतस्कध सूत्रना अर्थ केव कहेला छे ?"

"हे गौतम ! आ अचिन्त्य चिंतामणिकल्प श्रीपचमगलमहाश्रुतस्कध सूत्रना अर्थ जे कहेला छे ते आ प्रकारे छे—जेम तलमा तेल छे, कमलमा मकरद छे अने सर्व लोकमा पाच अस्तिकाय रहेल छे तेम आ पचमगलमहाश्रुतस्कध सकल आगमोमा अन्तर्गत रहेल छे, अने ते यथार्थ क्रियानुगत सद्भूत गुणोना कीर्तनस्वरूप तथा यथेच्छ फलप्रसाधक परम स्तुतिवादरूप छे ।"

"ए परमस्तुति कोनी करवी जोईए ?"

"सर्व जगतमा जे उत्तम होय तेनी परमस्तुति करवी जोईए । सर्व जगतमा जे कोई उत्तमोत्तम थई गया अने जे कोई थशे ते सर्वे अरिहत आदि ज छे, ते सिवाय बीजा नथी ज । ते (अरिहतादि) पाच प्रकारे छे–अरिहत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधु । ते पाचेनो गर्भार्थ-सद्भाव एटले परम रहस्यभूत अर्थ आ रीते छे—

१ महया वधेण P । २ °दिद्ध सु° P । ३ °वणे कायव्वे I । ४ मा इमा° S, मा इयमा° B, मा इय P । ५ 'एम' इति पाठ B प्रतौ नास्ति । ६ °णुरायया[गए]सब्भयगुणक्कित्तणे P, णुरायगब्भूय° B । ७ °मत्युइवाए सेय P । ८ केसि का° P । ९ केइ भविंसु ते P, नास्त्यय पाठ B प्रतौ । १० °ओ चेवा P ।

तहा अच्चंतकट्ठउग्गुग्गयरघोरतवचरणा[1]इअणेगवयनियमोववासनाणाभिग्गहविसेससंजमपरिवालणसम्मं परीसहोवसग्गाहियासणेणं सव्वदुक्खविमोक्खं मोक्खं [2]साहयंति त्ति साहवो।

अयमेव इमाए चूलाए भाविज्जइ–

एतेसिं[3] नमोकारो एसो पंचनमोक्कारो, किं करेज्जा ?

सव्वं पावं–नाणावरणीयादिकम्मविसेसं तं प[4]यरिअपरिसेणं दिसोदिसं[5] णासयइ सव्वपावप्पणासणो, एस चूलाए पढमो उद्देसओ। ए[6]सो पंचनमोक्कारो सव्वपावप्पणासणो [7]किंविहो उ ?

मंगो–निव्वाणसु[8]हसाहणेक्कखमो सम्म[9]दंसणाइ आरहओ अहिंसालक्खणो धम्मो, तं मे लाएज्ज त्ति मंगलं, ममं [10]भवाओ–संसाराओ [11]गलेज्जा–तारे[12]ज्जा वा मंगलं, वद्धपुट्ठनिकाइयट्ठप्पगारकम्मरासिं मे[13] गालिज्जा–विलि[14]ज्जवेज्ज त्ति[15] वा मंगलं।

एएसिं मंगलाणं अन्नेसिं च मंगलाणं सव्वेसिं किं ? पढमं–आदीए अरहंताईणं थुई चेव हवइ मंग[16]लं ति।

[साधुनो अर्थ—]

अत्यंत कठोर, उग्र, उग्रतर, घोर तपनी आचरणा वगेरे अनेक प्रकारनां व्रत, नियम, उपवास, विविध अभिग्रहविशेषथी संयमनुं परिपालन करवा वडे तेमज परीषहो अने उपसर्गोने सारी रीते सहन करवा वडे जेओ वधा प्रकारनां दुःखोथी मुक्त करनार एवा मोक्षने साधे छे ते 'साधु' कहेवाय छे।

आ ज पंचपरमेष्ठि नमस्कार नीचे प्रमाणे चूलिकाथी भावित करवामां आवे छे–(तेना महत्त्व तथा फळनो निर्देश करवामां आवे छे।)

[चूलिकानो अर्थ—]

ए पांचेने करेलो नमस्कार एटले 'एसो पंचनमोक्कारो' शुं करे छे ?

'सव्वपावप्पणासणो'–एटले के सर्व ज्ञानावरणीय जे पापकर्म तेने प्रकर्षथी नष्ट करी नाखे छे।

'एसो पंचनमोक्कारो सव्वपावप्पणासणो'–ए चूलिकानो प्रथम उद्देशो छे। ते केवो छे ?—

'मंग'–एटले निर्वाणसुख (मोक्षसुख) ने सिद्ध करवामां समर्थ सम्यग्दर्शन वगेरे अरिहंतोए प्ररूपेला अहिंसालक्षण धर्मने जे मने आणी आपे ते मंगल। १, अथवा मने संसारथी गाळे अर्थात् तारे ते मंगल। २, अथवा वद्ध, स्पृष्ट, अने निकाचित एवा आठ प्रकारना मारा कर्मना राशिने जे गाळे अर्थात् शमावे ते मंगल। ३.

आ मंगलोमां तथा वीजा मंगलोमां अरिहंतो वगेरेनी स्तुति ए ज प्रथम–उत्कृष्ट मंगल छे।

१. °णाइ अ° P। २. साहियंति B। ३. °तेसि णमोक्कारो एस पंच° P। ४. °रिसेसेणं M। ५. °दिसिं णा° B। ६. एस प° P। ७. किंविहे उ P। ८. °सुसाहणे° P। ९. सम्मद्दंस° T B। १०. भवाउ सं° S। ११. गमेज्जा P। १२. तारेज्ज वा B। १३. मे गालेज्ज वि° P, मे गलिज्जा वि° A। १४. विलेज्जवज्ज P। १५. त्ति मंगलं B। १६. °लं ते एस P।

तहा अट्ठारससीलंगसहस्साहिट्ठियतणू छत्तीसइविहमायारं जहट्ठियमगिलाए अहण्णिसाणुसमय आयरंति त्ति पवत्तयंति त्ति आयरिया, परमप्पणो अ हियमायरंति आयरिया, सव्वसत्तस्स सीसगणाण वा हियमायरंति आयरिया, पाणपरिच्चाए वि उ पुढवादीणं समारंभं नायरंति णारभंति नाणुजाणंति वा आयरिया, सुमहावरद्धे वि ण कस्सई मणसावि पावमायरंति त्ति वा आयरिया, एवमेते णामठवणादीहिं अणेगहा पन्नविज्जंति ।

तहा सुसंवुडासवदारे मणोवयकायजोगत्तउवउत्ते विहिणा सरवंजणमत्ताबिंदुपयक्खरविसुद्धदुवालसंगसुयनाणज्झयणज्झावणेण परमप्पणो अ मोक्खोवायं झायंति त्ति उवज्झाए, थिरपरिचियमणंतगमपज्जवत्थेहिं वा दुवालसंगं सुयनाणं चिंतंति अणुसरंति एगग्गमणसा झायंति त्ति वा उवज्झाए, एवमेतेहिं [भेएहिं] अणेगहा पन्नविज्जंति ।

[आचार्यनो अर्थ—]

शरीरमां अढार हजार शीलांगने धारण करनारा जेओ छत्रीश प्रकारना आचारोने यथार्थपणे ग्लानि विना प्रतिसमय आचरे छे—प्रवर्तावे छे ते 'आचार्य' कहेवाय छे । बीजाना अने पोताना हितनुं आचरण करता होवाथी पण ते 'आचार्य' कहेवाय छे । प्राणनो नाश थतां सुधीये पृथ्वीकाय वगेरे जीवनो समारंभ करता नथी, करावता नथी अने करवानी आज्ञा आपता नथी तेथी पण तेओ 'आचार्य' कहेवाय छे । कोईए मोटो अपराध कर्यो होय तोये तेओ कोईनुं मनथीये पाप आचरता नथी होवाथी 'आचार्य' कहेवाय छे । आ प्रकारे नाम-स्थापना वगेरेथी अनेक प्रकारे तेमनी प्ररूपणा करवामां आवे छे ।

[उपाध्यायनो अर्थ—]

जेओ आस्रवना द्वार बंध करी, मन, वचन अने कायाना योगमां लागी जई, विधिपूर्वक स्वर, व्यञ्जन, मात्रा, बिंदु, पद अने अक्षरोथी विशुद्ध एवां बार अंगोरूप श्रुतज्ञाननुं पोते अध्ययन करीने तथा बीजाने अध्ययन करावीने बीजाना अने पोताना मोक्षना उपायनुं ध्यान करे छे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे । अथवा जेओ अनंतगम अने पर्यायना अर्थो वडे स्थिर परिचित बार अंगोरूप श्रुतज्ञाननुं चिंतन करे छे, अनुसरण करे छे अने एकाग्र मनथी ध्यान करे छे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे । आ प्रकारे अनेक रीते उपाध्यायनी व्याख्या करवामां आवे छे ।

---

१ अहणिसा M, महण्णिसा° P । २ °रंति पव P । ३ °रंति त्ति आय° M । ४ °या भव्वसत्त सीस° P । ५ सुट्ठुमवरद्धे M, सुट्ठुमावरद्धे B । ६ °वइय° P । ७ वाय सा° P । ८ चिंतिति P । ९ माणसे ज्ञा P । १० °त्थेहिं अ P ।

विंदाणं सुरलोगाणं सोहग्गकंतिदित्तिलावन्नरूवसमुदयसिरीए[1]—साहावियकम्मक्खयजणियदिव्वकयपवरनिरुवमाणन्नसरिसविसेसा[2]इसयाइसयलक्खणकलावविच्छड्डु[3]परिदंसणेणं भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणियाहमिंद[4]सइंदच्छराकिन्नरणरविज्जाहरस्स ससुरासुरस्सावि णं जगस्स 'अहो अहो अहो अज्ज अ[5]दिट्ठपुव्वं दिट्ठमम्हेहिं' इणमो सविसेसा[6]उलमहंताचिंतपरमच्छेरयसंदोहं स[7]मगालमेवेगट्ठसमुइयं दिट्ठं[8] ति तक्खण[9]उप्पन्नघणनिरंतरबहलं[10]प्पमोया चिंतयंतो सहरिसपीयाणुरायवसपवियंभंताणुसमयअहिणवाहिण[11]वपरिणामविसेसत्तेणं[12] महमहंति जंपिर परोप्पराणं विसायमुवगयहं[13]हहधीधिरत्थुअधन्नाऽपुन्ना वयमिइ णिंदिरअत्ताण गमणंतरसंखुहियहिययमुच्छिरसुलद्धचेयणसुपुं[14]णसिढिलियसगत्तआउं[15]चणं पसण्णो उ[16]म्मेसनिमेसा[17]इसारीरियवावारमुक्केवलं[18] अणोवलक्खं[19]क्खलंतमंदमंददीहहुंहुंकारं[20] विमिस्ससुक्कदीहउण्हबहलनीसा[21]सगत्तेणं अइअभिनिविट्ठबुद्धी सुणिच्छियमणं[22]स्स णं जगस्स, 'किं पुण तं तवमणु[23]चिट्ठेमो जेणेरिसं पवरिद्धिं लभि[24]ज्जत्ति,' तग्गयमणस्स णं दंसणा[25] चेव णियणियवच्छत्थलनि[26]हिज्जंततकरयलुप्पा[27]इयमहंतमाणसचमक्कारे।

सहित देवगणोना सौभाग्य, कान्ति, दीप्ति, लावण्य अने रूपनी शोभाने ढांकी दे छे (निस्तेज बनावी दे छे)। स्वाभाविक (४) कर्मक्षयजनित (११) तथा देवकृत (१९) एवा चोत्रीश अतिशयोना ते धारक होय छे अने ते चोत्रीश अतिशयो एवा श्रेष्ठ निरुपम अने अनन्यसदृश होय छे के तेनां दर्शन करवाथी भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक, अहमिन्द्र, इन्द्र, अप्सरा, किन्नर, नर, विद्याधर अने सुर तथा असुर सहित जगतना जीवोने एटलुं बधुं आश्चर्य थाय छे के 'अहो अहो अहो आपणे कोई दिवस नहीं जोयेलुं आजे जोयुं। एक ज व्यक्तिमां एक साथे एकत्रित थयेलो अतुल, महान, अचिन्त्य परम आश्चर्योनो समूह आजे आपणे जोयो।' एवा विचारथी ते क्षणे अत्यंत आनन्दित थयेला तेओ हर्ष अने अनुरागथी स्फुरायमान थता नवा नवा परिणामोथी परस्पर अत्यंत हर्षना उद्गारो काढे छे अने विहार करीने भगवान आगळ चाल्या गया पछी साथे साथे पोताना आत्मानी निन्दा करे छे के 'अमने धिक्कार छे, अमे अधन्य छीए, अमे पुण्यहीन छीए'। भगवान चाल्या गया पछी तेमना हृदयने खूब क्षोभ थवाथी तेओ मूर्छित थई जाय छे अने महामुशीबते तेमनामां चैतन्य आवे छे। तेमनां गात्र अत्यन्त शिथिल थई जाय छे। आकुञ्चन प्रसारण उन्मेष निमेष आदि शारीरिक व्यापारो बंध पडी जाय छे। नहीं ओळखाता अने स्खलना पामता मंद मंद दीर्घ हुंकारोथी मिश्रित दीर्घ उष्ण बहु निसासाथी ज मात्र बुद्धिशाळीओ समजी शके छे के तेमनामां मन (चैतन्य) छे। जगतना जीवो भगवाननी ऋद्धि जोईने एक मात्र विचार करे छे के आपणे एवुं कयुं तप करीए के जेथी आपणने पण आवी प्रवर ऋद्धि प्राप्त थाय। भगवानने जोतां ज तेओ पोतानां वक्षःस्थल उपर हाथ मूके छे अने तेमना मनमां महान आश्चर्य उत्पन्न थाय छे।

---

१. °ए सहाविय° P। २ °सासाइसया कला° P, °साइसयकला° T B। ३. °विच्छेड्डु° B। ४. °मिंदस° P। ५ अदिट्ठ° B। ६ °साओल° P। ७. समगल° M। ८ यं चिट्ठंति P। ९. तक्खणुप्प° P। १०. °प्पमेयचिंता अतो P, प्पमेयचिंतयंतो S। ११ °णपरि° M। १२ त्तेणं महमहमह त्ति P। १३. °हहहहधी° B, °हहहवीविर° P। १४ °सुण्णपुण्ण° P। १५. °चणपसण्णा उ° P। १६. उमेस° A। १७. °निम्मेसा° B। १८. °वल अ A। १९ °क्खखलंत P। २० °विमिस्सासुक्कदीहुण्ह° P। २१. °सासेगंतेणं P। २२. °णसणं P। २३. °णुचेट्ठेमो P। २४. लभेज्जंति P। २५. दंसणं चेव M। २६. °लणिहिप्पंतक° P। २७. °इयाम° P।

एस समासत्थो, वित्थरत्थ तु इम, त जहा—

तेण कालेण तेण समएण गोयमा ! जे केई पुं[1]नगावन्नियसद्दत्थे अरहते भगवते धम्मतित्थंगरे भवेज्जा से ण परमपुज्जाण पि पुज्जयरे भवेज्जा, जओ ण ते सव्वेवि[2] एयलक्खणसमन्निए भवेज्जा, त जहा—

अचिंतअप्पमेयनिरुवमाणेण्णमरिसपवरवरुत्तमगुणोहाहिट्ठियत्तेण तिण्हपि लोगाण सजणियगुरुय-महत्माणमाणदे, तहा य जम्मतरसंचियगुरुपुण्णपब्भारसविढत्ततित्थयरनामकम्मोदएण दीहरगिम्हाय-वसतावकिलतसिहिउलाण व पढमपाउसधाराभरवरिसंतघणसंघायमिव परमहिओवएसपयाणाइणा घणराग-दोसमोहमिच्छत्ताविरइपमायदुट्ठकिलिट्ठज्झवसायाइसमज्जियासुहघोरपावकम्मायवसतावस्स णिण्णासगे भव्व-सत्ताण सव्वन्नू अणेगजम्मतरसनिढत्तगुरुयपुन्नपब्भाराइसयत्तेण समज्जियाउलबलवीरिएसरियसत्तपर-क्कमाहिट्ठियतणू सुकतदित्तचारुपायगुट्ठगरूवाइसएण सयलगहनक्खत्तचदपतीण सूरिए इव पायडप्पया-वदसदिसिपयासविप्फुरतकिरणपब्भारेण णियतेयसा विच्छायगे सयलाण वि विज्जाहरामरीण सदेवदाण-

आ प्रकारे आनो सक्षेपमा अर्थ छे, ज्यारे विस्तारथी अर्थ नीचे मुजब छे—

ते काळे ते समये, हे गौतम ! जेनो शब्दार्थ पहेला वर्णववामा आव्यो छे एवा जे कोई धर्मतीर्थंकर अरिहत भगवतो होय छे ते परमपूज्योना पण पूज्य होय छे, कारणके ते बधा ज नीचे जणावेल लक्षणोथी युक्त होय छे —

अचिंत्य, मापी न शकाय, उपमा आपी न शकाय, अनन्यसदृश, श्रेष्ठ अने उत्तमोत्तम एवा गुणसमूहथी अधिष्ठित होवाने लीधे तेओ त्रणे लोकमा महान मानसिक आनद उत्पन्न करनारा होय छे। तेमज वर्षानी प्रथम धाराओ वरसावतो मेघनो समूह जेम दीर्घ ग्रीष्म ऋतुना तापथी सतप्त थयेल मयूरोना समुदायना सतापने शमावे तेम अन्य जन्ममा सचित करेला महापुण्यना कारणे बाधेला तीर्थंकरनामकर्मना उदयथी अरिहत भगवतो परम हितोपदेश आपवा वगेरे द्वारा निबिड (गाढ) राग-द्वेष, मोह, मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, दुष्ट अने सक्लिष्ट एवा अध्यवसाय वगेरेथी बाधेला अशुभ घोर पापकर्मोथी थता भव्य जीवोना सतापने शमावनारा होय छे। तेओ सर्वज्ञ होय छे। अनेक जन्मोमा सचित करेला महान पुण्यना अतिशयथी जगतमा कोईनी तोले न आवे तेवा अतुल बळ, वीर्य, ऐश्वर्य, सत्त्व तथा पराक्रम तेमनामा होय छे। तेमना मनोहर देदीप्यमान पगना अगुठाना अग्रभागनु पण रूप एटलु बधु अतिशय होय छे के सूर्य जेम दशे दिशामा प्रकाशथी स्फुरायमान प्रकट प्रतापी किरणोना समूहथी सर्व ग्रह नक्षत्र अने चद्रनी पक्तिने निस्तेज बनावी दे छे तेम तेओ पोताना तेजथी सर्व विद्याधरो देवीओ देवेन्द्र तथा दानवेन्द्र

१ कद पु° T। २ पुव्वे वा° P। ३ तित्थकरे P। ४ नि एय ल° A। ५ °णण्णस° P। ६ धगस्य P। ७ °धगस्यपु° P, °धगुरुयपु° T। ८ 'ण च प°। ९ पनाणा° P। १० विरतिप° P। ११ ताण अणेग P। १२ °डत्तागव्य पुण्ण प° P, °डत्तगव्य° B। १३ यमत्त° P। १४ ए पा पा° P। १५ इव पयड T। १६ °दिसप° P। १७ °णप्पयारेण १८ सयलसनि P, सयलमवि B।

अहवा गोयमा[1]! [2]किमित्थ पभूयवागरणेणं ?, सारत्थं भन्नए। तं जहा—

णामं पि सयलकम्मट्ठमलकलंकेहि विप्पमुक्काणं। तियसिंदच्चियचलणाण जिणवरिंदाण जो सरइ ॥
तिविहकरणोवउत्तो खणे खणे सीलसंजमुज्जुत्तो। अविराहियवयनियमो सोऽवि हु अइरेण सिज्झेज्जा ॥
जो[3] पुण दुहउव्विग्गो सुहतण्हालू अलि व्व कमलवणे। थयथुइमंगलजयसद्दवावडो[4] रुणरुणे किंचि ॥
भत्तिभरनिब्भरो जिणवरिंदपायारविंदजुगपुरओ। भूसी[5]निट्ठवियसिरो कयंजलीवावडो चरित्तड्ढो[6] ॥
एक्कं पि गुणं हियए धरेज्ज[7] संकाइसुद्धसम्मत्तो। अक्खंडियवयनियमो तित्थयरत्ताए सो सिज्झे ॥

जेसिं च णं सुगहियनामग्गहणाणं[8] तित्थयराणं गोयमा! एस जगपायडे[9] महच्छेरयभूए भुवणस्स[10] वियडपायडे[11] महंताइसए[12] पवियंभे, तं जहा—

खीणट्ठ[13]पायकम्मा मुक्का बहुदुक्खगब्भवसहीणं। पुणरवि अपत्तकेवलमणपज्जवणाणं[14]चरिमतणू ॥
महजोइणो विविह[15]दुक्खमयरभवसागरस्स उव्विग्गा। दट्ठूणऽरहाइसए[16] भवहुत्तमणा खणं जंति ॥

अथवा गौतम! आ विशे वधारे शुं कहेवुं? सारभूत अर्थ तने कहुं छुं—

जे समग्र एवां आठ कर्मोना मळरूप कलंकथी मुक्त थयेला छे अने देवताओना इंद्रोए जेमना चरणनी पूजा करी छे ते जिनेश्वर देवोना नामनुं पण स्मरण करनार, (मन, वचन, कायारूप) त्रण करणथी उपयुक्त, क्षणे क्षणे शील अने संयममां उद्यमशील अने व्रत-नियमनी विराधना न करनारो मानवी निश्चये जलदीथी सिद्धिने मेळवे छे। दुःखथी खेद पामेलो अने सुखनी तृष्णावाळो जे मानवी कमळवनमां भ्रमरनी जेम स्तवन, स्तुति अने मांगलिक एवा जय जय शब्दनो उच्चार करतो कंईक गुंजारव करे छे, तेमज भक्तिमां अत्यंत गरकाव बनेलो, चारित्रनो अर्थी जिनेश्वर भगवंतनां बे चरणकमळो आगळ जमीन ऊपर पोतानुं मस्तक स्थापीने अंजलि करीने शंका वगेरेथी शुद्ध (रहित) सम्यक्त्ववाळो तथा अखंडित व्रत-नियमवाळो जे मानवी तेमनो एक पण गुण हृदयमां धारण करे छे ते तीर्थंकर थईने मोक्षमां जाय।

हे गौतम! जेमनुं नाम लेवुं पुण्यरूप छे ते तीर्थंकरोनो, जगतमां प्रगट महान आश्चर्यभूत त्रणे भुवने विकट प्रगट अने महान एवा अतिशयनो विस्तार आ प्रकारे छे—

जेमणे केवळज्ञान, मनःपर्यायज्ञान तथा चरम शरीर प्राप्त नथी कर्युं एवा जीवो पण अरिहंतोना अतिशयोने जोईने अष्ट प्रकारनां कर्मोनो क्षय करनारा बने छे, बहु दुःखदायक गर्भावासथी मुक्त थाय छे, महायोगी बने छे, विविध दुःखमय भवसागरथी उद्विग्न थाय छे अने संसारथी अलग थई जाय छे।

---

१ गोयमा पभूय° ATS। २. किमेत्थ P। ३. जो उण P। ४. °डो झगझणे A, °डो रुनुरुणे P। ५. भूमिनि° A। ६. चरित्तड्ढो A। ७. धरेइज्ज P। ८. °नामगह° P। ९. °पायड° A, °पयडे P। १० भुयणस्स वि पयड° P। ११ °पायडम° A। १२. °इसयपवियंभो A। १३ ट्ठकम्मपाय मु° P। १४ °चरिततणू A। १५. °णो वि बहुदुक्खगयर° P। १६ °सए लव° P।

ता गोयमा ! ण एवमाइ अणतगुणगणाहिट्ठियसरीराण तेसिं सुगहियनामधेज्जाण अरहंताण भगवंताण धम्मतित्थगराण संतिए गुणगणोहरयणसंघाए अहन्निसाणुसमयं जीहासहस्सेणपि वागरंतो सुरवई वि अन्नयरे वा केई चउनाणी, महाइसई य छउमत्थे सयंभुरमणोयहिस्स इव वासकोडीहिपि णो पारं गच्छेज्जा, जओ ण अपरिमियगुणरयणे गोयमा ! अरहंते भगवंते धम्मतित्थगरे भवंति, ता किमेत्थं भन्नउ ?, जत्थ य ण तिलोगनाहाण जगगुरूण भुवणेक्कबंधूण तेलोक्कतगुणखंभपवरधम्मतित्थकराण केई सुरिंदाईपायपुट्ठगएगदेसाउ अणेगगुणगणालंकरियाउ भत्तिभरनिब्भरिक्करसियाण सव्वेसिं पि वा पुरीसाण अणेगभवंतरसंचियअणिट्ठदुट्ठट्ठकम्मरासिजणियदोगच्चदोमणंस्सादिसयलदुक्खदारिद्दकिलेसजम्मजरामरणरोगसोगसंतावुव्वेयवाहिवेयणाईणं खयट्ठाए एगगुणस्साणंतभागमेग भणमाणाण जमगसमगमेव दिणयरकरे इव अणेगगुणगणोहे जीहग्गे विप्फुरंति ताइ च न सक्का सिंदा वि देवगणा समकाल भणिऊण, कि पुण अकेवली मसचक्खुणो ? ता गोयमा ! ण एस इत्थ परमत्थे वियाणेयव्वो, जहा ण जइ तित्थगराण संतिए गुणगणोहे तित्थयरे चेव वायरंति, ण उण अन्ने, जओ ण सातिसया तेसिं भारती ।

आथी हे गौतम ! आ वगेरे अनंत गुणसमूहथी युक्त शरीरवाळा, पुण्यशाळी नामवाळा अने धर्मतीर्थना प्रवर्तावनारा अरिहंत भगवंतोना गुणगणोरूपी रत्नसमूहनुं इन्द्र, कोई चार ज्ञानवाळा, अथवा महा अतिशयवाळा छद्मस्थ पण रातदिवस प्रतिपळे हजारो जीभथी करोडो वर्षो सुधीये वर्णन करे तोपण जेम स्वयंभूरमण समुद्रनो पार पामी शकाय नहि तेम पार न पामे । कारणके हे गौतम ! धर्मतीर्थने प्रवर्तावनार अरिहंत भगवंतो मापी न शकाय एवा गुणरत्नोवाळा होय छे, तेथी अहीं विशेष शुं कहेवुं ? ज्यां त्रण लोकना नाथ, जगतना गुरु, त्रण भुवनना एक मात्र बंधु, त्रण लोकना ते ते गुणना स्तंभरूप–आधाररूप श्रेष्ठ धर्मना तीर्थंकरोना पगना अंगूठाना टेरवानो अग्रभाग के जे अनेक गुणोना समूहथी अलंकृत छे तेना अनंतमा भागनुं सुरेन्द्रो अथवा भक्तिना ज अत्यन्त रसिक सर्व पुरुषो अनेक जन्मांतरोमां संचित अनिष्ट दुष्ट कर्मराशिजन्य दुर्गति दौर्मनस्य आदि सकल दुःख दारिद्र्य, क्लेश, जन्म, जरा, मरण, रोग, शोक, सन्ताप, उद्वेग, व्याधि, वेदना आदिना क्षयने माटे वर्णन करवा मांडे त्यारे सूर्यना किरणोना समूहनी जेम भगवानना जे अनेक गुणोनो समूह एक साथे तेमना जिह्वाग्रे स्फुरायमान थाय छे तेने इन्द्र सहित देवगणो एकी साथे बोलवा मांडे तो पण ज्यां वर्णववा समर्थ नथी त्यां चर्मचक्षुधारी अकेवलीओ शुं कही शके ? तेथी गौतम ! आ विषयमां खरी हकीकत ए छे के तीर्थंकरोना गुणोना समूहोने मात्र तीर्थंकरो ज वर्णववा समर्थ छे । बीजाओमां तेवुं सामर्थ्य नथी, कारणके तीर्थंकरोनी ज एवी अतिशयवाळी वाणी होय छे के तेओ ज वर्णववा समर्थ छे ।

---

१ तित्थकराण P । २ °णसंदोहोदस P, णसंदोहस° S । ३ °वरा वि I । ४ °गोयहिस्स चउवास P । ५ किमेण भ P, किमित्थ भ B, किमित्थ भं T । ६ भुयणे I । ७ °कराण° P । ८ तित्थयर° P । ९ °गाइ पायपुट्ठ° P । १० °साओ अ I । ११ °याओ भ I । १२ °भिभर° I । १३ वा पुरी M । १४ °णमादि° P । १५ दालिद्द B । १६ °संतापुव्वेय° A, संतावुव्वेगता वा° P । १७ इण स° I । १८ °करे वा अ° P । १९ सक्का सिंदा वि P । २० °काल भाणि P । २१ एस एत्थ P । तित्थयराणं P । २३ गणोह ति° B ।

सयलनरामरतियसिंदसुंदरीरूवकंतिलावण्णं[1] । सव्वंपि होज्ज जइ [2]एगरासिण संपिंडियं कहवि ॥[3]
तं च जिणचलणंगुट्ठगकोडिदेसेगलक्खभागस्स । संनिज्झम्मि[4] न सोहइ जह[5] छारउडं कंचणगिरिस्स ॥ त्ति
अहवा नाऊण गुणंतराइं अन्नेसिं ऊण सव्वत्थ । तित्थयरगुणाणमणंतभागमलब्भंतमन्नत्थ ॥
जं तिहुयणं पि सयलं, एगीहोऊणसुब्भमेगदिसिं[6] । भागे गुणाहिओऽम्हं[7] तित्थयरे परमपुज्जेत्ति ॥
ते च्चिय अच्चे वंदे पूए[8] अरिहे गइमइसंमन्ने[9] । जम्हा तम्हा ते चेव भावओ णमह धम्मतित्थयरे ॥
लोगे वि गामपुरनगरविसयजणवयसमग्गभरहस्स । [10]जो जित्तियस्स सामी, तस्साणत्तिं[11] ते [12]करेंति ॥
नवरं गामाहिवई [13]तुट्ठु सुतुट्ठे एक्कगाममज्झाओ । किं देज्ज ? जस्स नियंगे[14] तेलोए एत्तियं पुव्वं ॥
चक्कहरो लीलाए, सुट्ठु सुथेवंपि देइ[15] जमगण्णं । तेण य कम्मागय[16]गुरुदरिद्दनामं[17] णासेइ ॥
[18]सो मंता चक्कहरं[19] सुरवइत्तणं कंखे । [20]इंदो तित्थयरे उण, जगस्स[21] जहिच्छियसुहफलए ॥
तम्हा जं [22]इंदेहि वि कंखिज्जइ एगबद्धलक्खेहिं । अइसाणुरागहियएहिं[23] उत्तमं तं न संदेहो ॥

समग्र मनुष्यो, देवो, इंद्रो अने सुंदरीओनां रूप, कांति तेमज लावण्य—ए बधुं जे होय, तेने कोईपण रीते एकठां करीने एक बाजु पिंड बनाववामां आवे अने तेने जिनेश्वर भगवंतना चरणना अंगूठाना टेरवाना करोडमा भाग, अथवा लाखमा भागनी सामे मूकवामां आवे तो ते देवदेवीओना रूपनो पिंड एटलो बधो शोभाहीन बनी जाय छे के सुवर्णना पर्वत (मेरु) नी पासे राखनो ढगलो जेवो शोभाहीन लागे तेवो ते लागे छे ।

अथवा जगतना सर्व गुणोने भेगा करवामां आवे तो पण ते जिनेश्वरना गुणोना अनंतमा भागे पण आवता नथी । एक बाजु त्रणे जगत एकत्रित थईने एक दिशामां उभां होय अने बीजी बाजु तीर्थंकर होय तो तीर्थंकर गुणमां चडी जाय छे; तेथी तीर्थंकरो परमपूज्य छे । ते ज अर्चनीय छे, वंदनीय छे, पूजनीय छे, अर्हत छे, गति तथा मतिथी समन्वित छे; माटे ते ज धर्मतीर्थंकरोने भावथी नमस्कार करो ।

लोकोमां पण गाम, पुर, नगर, विषय, जनपद के समग्र भरतनो जे जेटला प्रदेशनो स्वामी होय छे तेनी आज्ञाने ते प्रदेशना लोको स्वीकारे छे; परंतु ग्रामाधिपति तुष्ट थाय तो एक गाममांथी केटलुं आपे ? जेनी पासे जेटलुं होय तेटलुं आपे । चक्रवर्ती थोडुं आपे तो पण तेनाथी कुळ-परंपराथी चाल्युं आवतुं दारिद्र्य नष्ट थई जाय छे । आवो चक्रवर्ती देवेन्द्रपणानी आकांक्षा सेवे छे, देवेन्द्रो यथेष्ट सुखफळने आपनारा तीर्थंकरपदनी आकांक्षा राखे छे । अतिशय अनुरागी हृदयवाळा इन्द्रो पण एक लक्ष्य बांधीने जे तीर्थंकरपदनी आकांक्षा राखे छे ते तीर्थंकरो जगतमां सौथी श्रेष्ठ छे एमां संदेह ज नथी ।

---

१. °लावन्नं A । २. एगरास सं° P, एगरासि सं° B । ३. ता तं च P । ४. सनिज्झे वि ण सो° P । ५. जह छार° P । ६. मेगदिसं P । ७. हिउन्हं P, °हिउम्हं B । ८. पूए आराहे गइ° P । ९. समण्णे य P, समण्णे T । १०. जो जेत्तिय° P । ११. तस्साणंत्ति A । १२. करिंति P । १३. तुट्ठु सतुट्ठे P, सुतुट्ठे B । १४. नियगं छेलाए तेत्तियं पुंछं P । १५. देइ न हु मन्ने M । १६. कम्मागत° P । १७. नामं समासेइ M । १८. सा मता P । १९. चक्कहर चक्कहरो सु° P । २०. इंदो तित्थयरत्त ति° P । २१. जगस्सा वि ज° P । २२. इंदेही वि A । २३. °रायहि P ।

अहवा चिट्ठउ ताव सेसवागरणं गोयमा ! एवं चेव धम्मतित्थगरेति नामं सन्निहियं पवरक्खर-व्वहणं तेसिमेव सुगहियनामधेज्जाणं भुवणेक्कबंधूणं अरहंताणं भगवंताणं जिणवरिंदाणं धम्मतित्थकराणं छज्जे, ण अन्नेसिं, जओ य णेगजम्मंतरपुट्ठमोहोवसमसंवेगनिव्वेयाणुकंपाअत्थिक्काभिवत्तीसलक्खणपवरसम्म द्दंसणुल्लसंतविरियाणिगूहियउग्गकट्ठघोरदुक्करतवनिरंतरज्जिंयउत्तुंगपुन्नखंधसमुच्चयमहपब्भारसंविढत्तउत्तमपवर-पवित्तविस्सकसिणबंधुणाहसामिसालअणंतकालवत्तमेवभावणच्छिन्नपावबंधणेक्कअविइज्जतित्थयरनामकम्मगोय-णिसियसुकंतदित्तचारुरूवन्दसदिसिपयासनिरुवमट्ठलक्खणसहस्समंडियजगुत्तमुत्तमसिरीनिवासवासवाणवी इव देवमणुयदिट्ठमेत्तकम्मंतकरणलाइयचमक्कनयणमाणमाउलमहंतनिब्भरपमोयकारया असेसकसिणपावकम्म-मलकलंकविप्पमुक्कसमचउरंसपवरपढमवज्जरिसहनारायसंघयणाहिट्ठियपरमपवित्तुत्तमसुचिधरे, ते चेव भगवंते महायसे महासत्ते महाणुभागे परमेट्ठी सद्धम्मतित्थकरे भवंति। अण्णं च—

अथवा, बीजुं वर्णन दूर रहो। हे गौतम ! आ प्रकारे धर्मतीर्थंकर एवुं श्रेष्ठ अक्षरोवाळुं जे नाम छे ते सुगृहीतनामधेय, त्रण भुवनना बंधु अरिहंत भगवंत जिनवरेंद्र धर्मतीर्थंकरोने ज छाजे छे, बीजाने नहीं, केमके तेमणे मोहनो उपशम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा तथा आस्तिक्य-लक्षणयुक्त अने अनेक जन्मोमां स्पर्शेल उल्लसित सम्यग्दर्शनना बळथी तेमज वीर्यने छूपाव्या विना उग्र कष्ट अने घोर दुष्कर तपना निरंतर सेवनथी उत्तुंग महापुण्यनो राशि उपार्जित कर्यो होय छे, उत्तम, प्रवर, पवित्र, समग्र विश्वना बंधु नाथ तथा श्रेष्ठ स्वामी थया होय छे, अनंतकाळमां थयेला भवोनी भावनाथी पापना बंधनोने छेदीने अद्वितीय तीर्थंकरनामकर्म गोत्र तेमणे प्राप्त कर्युं होय छे, अत्यंत मनोहर, देदीप्यमान, दशे दिशाओमां प्रकाशमान, निरुपम एवा एक हजार अने आठ लक्षणोथी तेओ सुशोभित होय छे, जगतमां उत्तम जे श्रेष्ठ शोभा तेना निवास माटेना तेओ जाणे के धामगृह छे, तेमना दर्शन थतानी साथे ज तेमनी शोभा जोईने देवो तथा मनुष्यो अंतःकरणमां चमकी उठे छे अने नेत्रमां तथा मनमां महान विस्मय तथा प्रमोदने अनुभवे छे, सघळाये पापकर्मोरूपी मेलना कलंकथी तेओ मुक्त थई गया होय छे, समचतुरस्र संस्थान तथा श्रेष्ठ जे प्रथम वज्रऋषभनाराच संघयण तेनाथी युक्त परम पवित्र अने उत्तम शरीरने तेओ धारण करनारा होय छे। आवा भगवंतो ज महायशस्वी महासत्त्वशाळी महाप्रभावी परमेश्वर तथा सद्धर्मना तीर्थंकरो होय छे। वळी कह्युं छे के—

---

१ एवं चेव धम्मतित्थकरे त्ति P। २ संनिहियं P। ३ पवरक्खर° P। ४ °नामधिज्जाणं भुवणबंधूणं A। ५ °जम्मंतरपत्त° P। ६ निव्वेउ° A। ७ °त्थिओगापुन्नतिरं P। ८ महप्पभार° P। ९ °बंधणाइच्छिन्नपाव° P। १० °रोवाससवाण° B, निवासवासाइ द° I। ११ °भरस अ° P। १२ पवर° बरसभ° P। १३ परमिट्ठी A।

उम्मग्गं पवत्तं ति,[1] जहा किल अम्हे अरहंताणं भगवंताणं गंधमल्लपदीवसंमज्जणोवलेवणविचित्तवत्थबलि-[2]धूवाइएहिं पूयासक्कारेहिं अणुदियहमब्भच्चणं पकुव्वाणा तित्थुच्छप्पणं करेमो, तं च णो णं तहत्ति, गोयमा ! तं [3]वायाएवि णो णं तहत्ति समणुजाणेज्जा ।

× × ×

एयं तु पंचमंगलमहासुयक्खंधस्स वक्खाणं तं महया पबंधेणं अणंतगमपज्जवेहिं सुत्तस्स य पिहब्भूयाहिं[4] निज्जुत्ती-भास-चुण्णीहिं । जहेव अणंतनाणदंसणधरेहिं तित्थयरेहिं वक्खाणियं तहेव समासओ वक्खाणिज्जंतं आसि, अहऽन्नया कालपरिहाणिदोसेणं ताओ निज्जुत्ती-भास-चुन्निओ वोच्छिन्नाओ[5] ।

इओ य वच्चंतेणं कालसमएणं महिड्ढीपत्ते पयाणुसारी वइरसामी नाम दुवालसंगसुयहरे समुप्पन्ने, तेणेयं पंचमंगलमहासुयक्खंधस्स उद्धारो मूलसुत्तस्स मज्झे लिहिओ, मूलसुत्तं पुण सुत्तत्ताए गणहरेहिं अत्थत्ताए अरहंतेहिं भगवंतेहिं धम्मतित्थगरेहिं[6] तिलोगमहिएहिं वीरजिणिंदेहिं पन्नवियं ति एस वुड्ढसंपयाओ ।

पछी पण 'अमे अरिहंत भगवंतनी गंध, माल्य, दीप, संमार्जन, उपलेपन, वस्त्र, बलि, धूप आदि पूजा-सत्कारथी हमेशां अभ्यर्चन (पूजन) करीने तीर्थनी प्रभावना करीए छीए'—ए प्रमाणे माने छे ते बधा उन्मार्गने प्रवर्तावे छे, तेमनुं आ कृत्य व्याजबी नथी; गौतम ! वचनथी पण एने अनुमति आपवी नहीं ।"

× × ×

❀ पंचमंगलमहाश्रुतस्कंध (नवकार) नी जे आ व्याख्या छे ते खूब विस्तारथी अनंतगम अने अनंत पर्यायोथी सूत्रथी पृथक्भूत निर्युक्ति, भाष्य तथा चूर्णि द्वारा—जेवी रीते अनंत ज्ञानदर्शनधारक तीर्थंकरोए व्याख्या करेली हती तेवी ज रीते संक्षेपथी—चाली आवती हती; परंतु पडता काळने लीधे कोईक समये आ निर्युक्ति, भाष्य तथा चूर्णिनो विच्छेद थई गयो ।

त्यारपछी केटलाक समये महाऋद्धिमां पदानुसारी लब्धिवाळा वज्रस्वामी नामना द्वादशान्त श्रुतज्ञानना धारक आचार्य उत्पन्न थया । तेमणे आ पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधनो उद्धार करीने मूळसूत्रनी अंदर लख्यो । मूळसूत्र ए सूत्रथी गणधरोए रचेलुं छे अने अर्थथी अरिहंत भगवंत, धर्मतीर्थंकर, त्रैलोक्यपूजित श्रीवीरजिनेश्वरे प्ररूपेलुं छे । आ प्रमाणे वृद्धसंप्रदाय छे । (अर्थात् पूर्वाचार्योथी चाली आवती मान्यता छे ।)

---

१. ति तहा P । २. °धूयाइतेहिं P । ३. † † एतच्चिह्नान्तर्गत. पाठः P प्रतौ पतितः । ४. पिहब्भूयहिं P । ५. वोच्छिन्नाओ इति पाठ. P प्रतौ नास्ति । ६. तित्थकरेहिं P । ❀ जुओ–हवे पछी छपायेल 'चैत्यवंदन-महाभाष्य'

तो सयलदेवदाणवगहरिक्खसूरिंदचंदमाईण। तित्थयरे पुज्जयरे ते चिय पाव पणासंति ॥
तेसिं य तिलोगमहियाण धम्मतित्थकराण जगगुरूण। भावच्चणदव्वच्चणभेदेण दुहच्चण भणियं ॥
भावच्चण चारित्ताणुट्ठाणकट्ठुग्गघोरतवचरण। दव्वच्चण विरयाविरयसीलपूयासक्कारदाणादी ॥

ता गोयमा ! ण एसेऽत्थ परमत्थे त जहा–

भावच्चणमुग्गविहारया य दव्वच्चण तु जिणपूया। पढमा जईण दोन्नि वि गिहीण पढम चिय पसत्था ॥

एत्थ च गोयमा ! केई अमुणियसमयसब्भावे ओसन्नविहारी णियवासिणो अदिट्ठपरलोगपच्चवाए सयमतीइड्ढिरससायगारवाइमुच्छिए रागदोसमोहाहकारममीकाराइसु पडिबद्धे कसिणसजमसद्धम्मपरम्मुहे निद्दयनित्तिंसनिग्घिणअकलुणनिक्किवे पावायरणेक्कअभिनिविट्ठबुद्धी एगतेण अइचडरोद्दकूराभिग्गहिए मिच्छदिट्ठिणो कयसव्वसावज्जजोगपच्चक्खाणे विप्पमुक्कासेससगारमपरिग्गहे "तिविहं तिविहेण पडिवन्नसामाइए य दव्वत्ताए, न भावत्ताए, नाममेत्त मुडे अणगारे महव्वयधारी समणेऽवि भवित्ताण एव मन्नमाणे, सव्वहा

तेथी समग्र देव, दानव, ग्रह, नक्षत्र, सूर्य अने चंद्रमा वगेरेने पण तीर्थंकरो पूज्य छे अने तेओ खरेखर पापनो नाश करे छे।

ते त्रण लोकथी पूजायेला धर्मना तीर्थंकरो अने जगतना गुरुनी अर्चना भावथी अने द्रव्यथी एम बे प्रकारनी कहेली छे।

चारित्रनु अनुष्ठान तेमज कष्टपूर्वकना उग्र अने भीषण तपनु आचरण–ए भावअर्चन छे, अने विरताविरतो एटले देशविरत श्रावको पूजासत्कार तेमज दान करे–ए द्रव्यअर्चनरूप प्रकार गणाय छे।

माटे हे गौतम ! अहीं आनु रहस्य आ प्रकारे छे—

भावअर्चन ए उग्र विहाररूप छे, ज्यारे द्रव्यअर्चन ए जिनपूजा छे। प्रथम प्रकार मुनिओना माटे छे अने गृहस्थ माटे बनेय प्रकारो छे, तेमा प्रथम प्रकारनु भावअर्चन ते प्रशंसनीय छे।

हे गौतम ! जे केटलाक शास्त्रनो मर्म नहीं जाणनारा, शिथिलविहारी, नित्यवासी, 'परलोकमा शु नुकसान थशे' एनो विचार नहीं करनारा, ऋद्धिगौरव, रसगौरव, शातागौरवमा मूर्च्छित थयेला, राग-द्वेष–मोह–अहंकार–ममत्वादिमा प्रतिबद्ध, सयमरूप सद्धर्मथी पराङ्मुख, निर्दय, निर्लज्ज, घृणित, क्लेश करनारा, कृपा विनाना अने जेमनी बुद्धि एक मात्र पापाचरणमा लागेली छे, एकांतपणे जे अत्यत चड, रुद्र अने क्रूर अभिग्रहोथी मिथ्यादृष्टिओ, सर्व पापकारी व्यापारना पच्चक्खाण करीने समग्र सग, आरंभ अने परिग्रहथी रहित थई, त्रिविधे त्रिविधे (मन-वचन-कायाथी कृत-कारित-अनुमतिथी) सामायिक द्रव्यथी स्वीकारे छे पण भावथी करता नथी, नामना ज मुड छे, नामना ज अणगार छे, नामना ज महाव्रतधारी छे, श्रमण थवा

१ ता ग P। २ दानवें I। ३ °रिक्ख° B। ४ °गुरूण° P। ५ °त्थन I। ६ पढम P। ७ °विहारीनीर° P। ८ पढ्ढे ह° P। ९ °निमीरुदट्ठिणो P। १० कयाग हि° P। ११ 'तिविहं' इति पाठो P प्रतौ नास्ति। १२ °माइए P।

एवं चाभिग्गहबंधं काऊणं जाव[1]ज्जीवाए, ताहे य गोयमा ! इमाए चेव विज्जाए अहिमंतिया[2]ओ सत्त[3]गंधमुट्ठीओ तस्सुत्तमंगे नित्थ[4]ारगपारगो भवेज्जासि त्ति उच्चारेमाणेणं गुरुणा[5] खेत्तव्वाओ—

"अउम् णमउ भगवओ अरहओ सिज्झउ[6] मए भगवती महाविज्जआ वीरए महावीरए[7] जयए वीरए सेणवीरए वद्धमाणवीरए जंयए[8] वइजयए जयअंतए अपराजिए[9] स्वा हा ॥"

उपचारो चउत्थभत्तेणं साहिज्जइ, एयाए[11] विज्जाए सव्वगओ नित्थारगपारगो होइ, उवट्ठावणाए वा गणिस्स वा अणुन्नाए वा सत्तवार परिजवेयव्वा। नित्थारगपारगो होइ, उत्तिम[12]ट्ठपडिवण्णे वा अभिमंतिज्जइ आराहगो भवइ, विग्घविणायगा उवसमंति, सूरो संगामे पविसंतो अपराजिओ भवइ[13], कप्पसमत्तीए मंगलवहणी खेमवहणी हवइ।

तहा साहुसाहु[14]णीसमणोवासगसड्ढिगासेसासन्नसाहम्मियजणचउव्विहेणंपि समणसंघेणं नित्थारग[15]-पारगो भवेज्जा, धन्नो[16] सुपुन्नसलक्खणोऽसि तुमं ति उच्चारेमाणेणं गंधमुट्ठीओ घे[खे]त्तव्वाओ, तओ जगगुरूणं जिणिंदाणं पूएगदेसाओ गंधड्ढामिलाणसियमल्लदामं गहाय सहत्थेणोभयखंधेसुमारोवयमाणेणं गुरुणा

हे गौतम ! आ प्रकारे यावज्जीवपर्यंत अभिग्रहनो नियम लईने आ (नीचे आपेली) विद्याथी सारी रीते मंत्रेली गंध (वासक्षेप) नी सात मूठीओ उपधान करनारना मस्तक उपर 'तुं संसारसमुद्रने तरीने पार था' ए प्रकारे उच्चारण करवापूर्वक (ते मूठीओ) नाखवी जोईए। ए विद्या आ प्रकारे छे—

"ॐ नमो भगवओ अरहओ सिज्झउ मे भगवती महाविज्जा, वीरे महावीरे जयवीरे सेणवीरे वद्धमाणवीरे जये विजये जयंते अपराजिते स्वाहा ॥"

आ मंत्रनो प्रयोग चतुर्थभक्त—एक उपवास करीने करवो जोईए। आ विद्याथी सर्वज्ञ तथा संसारपारगामी थवाय छे। वडी दीक्षामां अथवा गणिपदनी अनुज्ञामां आ विद्याने सात वार भणवी तेथी संसारपारगामी थवाय छे, अथवा मरण वखते, अंतिम अनशनवेळाए जे आ मंत्रने भणे ते आराधक बने छे। तेनां विघ्नकारक तत्त्वो शांत थाय छे। शूरवीर माणस जो संग्राम—युद्धमां प्रवेश करे तो ते अपराजित थाय छे। कल्पनी समाप्तिमां (आ विद्या) मंगल आपनारी अने सुख देनारी बने छे।

तेमज साधु, साध्वी, श्रमणोपासक तथा श्राविकाओ रूप जे समग्र साधर्मिक चतुर्विध जैनसंघ हाजर होय ते साथे श्रमणसंघे पण 'नित्थारग—पारगो भवेज्जा (संसारना समुद्रने तमे तरी जाओ), तेमज तमे धन्य छो, पुण्यशाळी लक्षणवाळा छो' ए प्रकारे उच्चारण करी, वासक्षेप लईने नाखवो। ते पछी जगतना गुरु एवा जिनेश्वर भगवंतनी पूजामांथी गुरु अत्यंत सुगंधी करमायेली न होय एवी श्वेत पुष्पोनी माला ग्रहण करी पोताना हाथ वडे तेने बंने खभे आरोपण

---

१. जावजीवाए A। २. °याउ स° A। ३. सव्वगंधसुद्धीओ P। ४. नित्थारपारगो P। ५. °णा घेत्त° P। ६ °उ स् ए P। ७. ए ज्जय व् P। ८. आणाव् P। ९. जय् अंतए P। १०. आज्इए P। ११. एगाए P। १२. उत्तिमट्ठ° P। १३. भवति क° P। १४. °हुणिस° P। १५. °त्थारपा° P। १६. धण्णो सपुण्ण स° P।

एत्थ य जत्थ जत्थ पयपएणाणुलग्गं सुत्तालावगं न संपज्जइ तत्थ तत्थ सुयहरेहिं कुलिहियदोसो न दायव्वो त्ति, किंतु जो सो एयस्स अचिंतचिंतामणिकप्पभूयस्स महानिसीहसुयक्खंधस्स पुव्वायरिसो आसी तहिं चेव खंडाखंडिए उद्देहियाइएहिं हेऊहिं बहवे पत्तगा परिसडिया तहावि अच्चंतसुमहत्थाइसयं ति इमं महानिसीहसुयक्खंधं कसिणपवयणस्स परमसारभूयं परं तत्तं महत्थं ति कलिऊण पवयणवच्छल्लत्तणेण बहुभव्वसत्तोवयारियं च काउं तहाय आयहियट्ठाए आयरियहरिभद्देण जं तत्थायरिसे दिट्ठं तं सव्वं समतीए सोहिऊण लिहियं ति, अन्नेहिं पि सिद्धसेणदिवाकरवुड्ढवाइ-जक्खसेण-देवगुत्त-जसवद्धण-खमासमणसीसरविगुत्त-णेमिचंद-जिणदासगणि-खमगसच्चसिरिपमुहेहिं जुगप्पहाणसुयहरेहिं बहु मन्नियमिणं ति ।

से भयवं ! एवं जहुत्तविणओवहाणेण पंचमंगलमहासुयक्खंधमहिज्जित्ताणं पुव्वाणुपुव्वीए पच्छाणुपुव्वीए अणाणुपुव्वीए सरवंजणमत्ताबिंदुपयक्खरविसुद्धं थिरपरिचियं काऊण महया पबंधेण सुत्तत्थं च विन्नाय तओ य णं किमहिज्जेज्जा ?

गोयमा ! ईरियावहियं ।

×　　　　×　　　　×

आमां परस्पर एक पदनो बीजा पद साथे संबंध होय एवी रीते सळंग सूत्रना आलावा ज्यां ज्यां जोवामां न आवे त्यां त्यां बराबर लख्युं नथी एवो दोष श्रुतधरोए काढवो नहि, कारणके अचिंत्यचिंतामणि तुल्य आ महानिशीथश्रुतस्कंधनो जे प्राचीन आदर्श (प्रति) मथुराना सुपार्श्वनाथ भगवानना स्तूपमां हतो ते पंदर दिवसना उपवास करवाथी शासनदेवीए मने आप्यो, पण तेमां खंडित थई जवाथी तेमज उधेई वगेरे कारणोथी घणां पानां सडी गयां छे (गळित थई गया छे) तो पण अत्यंत महान अर्थातिशयवाळा आ महानिशीथश्रुतस्कंधने समग्र प्रवचनना परम सारभूत परम तत्त्व तथा महा अर्थयुक्त समजीने प्रवचन उपरना वात्सल्यथी, वळी, घणा भव्य जीवोने उपकारक छे एम समजीने तेमज पोताना आत्माना कल्याण माटे आचार्य हरिभद्रे ते आदर्शमां जे जोयुं ते बधुं पोतानी मति प्रमाणे शुद्ध करीने लख्युं छे । अने बीजा पण सिद्धसेन दिवाकर, वृद्धवादी, यक्षसेन, देवगुप्त, यशोवर्धन क्षमाश्रमणना शिष्य रविगुप्त, नेमिचन्द्र, जिनदासगणि, क्षमक, सत्यश्री वगेरे युगप्रधान श्रुतधरोए एने बहुमान्य राख्युं छे ।

प्रश्न—भगवन् ! आगळ कह्या मुजबना विनय-उपधान वडे पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधने पूर्वानुपूर्वी, पश्चानुपूर्वी अने अनानुपूर्वी वडे स्वर, व्यंजन, मात्रा, बिंदु अने पदाक्षरोथी शुद्ध रीते भणी, तेने (हृदयमां) स्थिर अने परिचित करी महाप्रबंध वडे सूत्र तेमज अर्थने जाण्या पछी शुं भणवुं जोईए ?

उत्तर—हे गौतम ! ते पछी 'ईरियावहिय' मंत्र भणवुं ।

×　　　　×　　　　×

---

१ जय पयं A । २ ... । ३ ... । ४ ... P । ५ वुड्ढवाइ A ।
६ सच्चसिरिप° P । ७ ... ।

से भयवं! सुदुक्करं पंचमंगलमहासुयक्खंधस्स विणओवहाणं पन्नत्तं, महती य एसा णियंतणा कहं बालेहिं कज्जइ?

गोयमा! जे णं केई ण इच्छेज्जा एयं नियंतणं अविणओवहाणेणं चेव पंचमंगलाइसु[1]यनाणं अहिज्जिणे अज्झावेइ वा अज्झावय[2]माणस्स वा अणुन्नं वा[3] पयाइ से णं ण भविज्जा पियधम्मे ण हवेज्जा दढधम्मे ण भवेज्जा भत्तीजुए हीलिज्जा[4] सुत्तं, हीलेज्जा अत्थं, हीलिज्जा[5] सुत्तत्थ उभये, हीलिज्जा[6] गुरुं, जे णं हीलिज्जा सुत्तत्थोभए जाव णं गुरुं से णं आसाएज्जा अतीताणागयवट्टमाणे तित्थयरे आसाइज्जा[7] आयरिय-उवज्झाय-साहुणो जे णं आसाइज्जा[8] सुयणाणमरिहंत-सिद्ध-साहू से तस्स णं सुदीह[9]यालमणंत-संसारसागरमाहिंडेमाणस्स तासु तासु संवुडवियडासु[10] चुलसीइलक्खपरिसंखाणासु[11] सीओसिणमिस्सजोणीसु तिमिसंधयारदुग्गंध[12]ऽमिज्झविलीणखारसुत्तोज्झसिभपडिहत्थवसा[13]जलुल[स]पूयदुद्दिण[14]चिलिचिल्लरुहिरचिलिंदु[15]-दंसणजंबालपंकवीभच्छ[16]घोरगब्भवासेसु कढकढकढेंत चलचलचलस्स टलटलटलस्स[17] रज्जंतर[18][ज्जंत]-संपिंडियंगमंगस्स सुइरं नियंतणा, जे उण एयं विहिं फासेज्जा नो णं मणयं पि अइयरेज्जा, जहुत्तविहाणेणं चेव पंचमंगलपभिइसुयनाणस्स विणयो[19]वहाणं करेज्जा, से णं गोयमा! नो हीलिज्जा[20] सुत्तं,

प्रश्न—हे भगवन्! पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधनुं अत्यंत दुष्कर एवुं विनयोपधान आपे कह्युं; आ तो महानियंत्रणा स्वरूप छे, तो ते बाळ जीवो कई रीते करे?

उत्तर—हे गौतम! जे कोई आ प्रकारनी नियंत्रणाने न इच्छे, विनय–उपधान विना पंचमंगल श्रुतज्ञानने भणे, भणावे अने तेवी रीते भणावनारने अनुज्ञा आपे तेने खरेखर धर्म प्रिय नथी, ते धर्ममां दृढतावाळो नथी, ते भक्तिवाळो नथी, ते सूत्रनी हीलना करे छे, अर्थनी हीलना करे छे, सूत्र अने अर्थ ए बंनेनी अवहेलना करे छे, ते गुरुनी पण अवहेलना करे छे। अने जे माणस सूत्र अने अर्थनी उभय तथा गुरुनी अवहेलना करे छे ते भूत, भविष्य अने वर्तमानकाळना तीर्थकरोनी, आचार्यो अने उपाध्यायो तेमज साधुओनी पण आशातना करे छे। जे मनुष्य श्रुतज्ञान, अरिहंत, सिद्ध अने साधुनी आशातना करे छे ते लांबा काळ सुधी अनंत एवा संसारसागरमां ते ते संवृत अने विवृत एवी चोराशी लाखनी संख्यावाळी शीत, उष्ण अने मिश्र एवी योनिओमां भमे छे; गाढ अंधकार, दुर्गंध अने अपवित्र पदार्थोथी लेपायेल; क्षार, मूत्र, बळखाथी पूर्ण, चरबी, पाणीना कीडाओ, परु, दुर्दिनथी भींजायेल; रुधिर, आर्द्र अने दुःखे जोई शकाय एवा कीचड–कादवथी बीभत्स, घोर एवा गर्भावासमां कढकढे छे, आमतेम आळोटे छे, टळवळे छे, अंदरोदर एकबीजां अंगो साथे जकडाईने पडी रहे छे—आ रीते लांबा काळ सुधी नियंत्रणा पामे छे। परंतु जे कोई आ विधिने स्पर्शे छे अने जरा पण विधिनी अतिचरणा (उल्लंघना) करतो नथी, उक्त विधिपूर्वक ज पंचमंगल वगेरे श्रुतज्ञाननुं विनयोपधान करे छे ते

१. °सुयणाण अ° P। २. माणसस्स P। ३. वा एयाइ P। ४. हीलेज्जा P। ५. हीलेज्जा P। ६. हीलेज्जा P। ७. आसाएज्जा P। ८. आसाएज्जा P। ९. सुद्दीह° P। १०. संकुड° P। ११. संखणासु P। १२. °दुग्गंधा मिज्झ° B, °दुग्गंधा मज्झ°। १३. °हच्छवसज° P। १४. चिलिव्विल्लरुहिरचिक्खल्ल° P। १५. °चिल्लखलदु° B। १६ °बीभतसघो° B। १७. ढलढलढलस्स B। १८. °रस B। १९. वि ओहा° P। २०. हीलेज्जा P।

णीसदेहमेव भणियव्व जहा–'भो भो जम्मतरसचिय[1]गुरुयपुन्नपब्भार ! सुलद्ध[2]सविढत्तसुसहलमणुयजम्म ! देवाणुप्पिया ! ठइय च णरय तिरियगइदार तुज्झ ति, अनसगोय अयस[3]अकित्तीनीयागोत्तकम्मविसेसाण तुम ति, भवतर[4]गयस्सावि उ णई[5]दुल्हो तुज्झ पचनमोकारो, भाविजम्मतरे पचनमोकार[6]पभावओ य जत्थ जत्थो-ववँ[7]ज्जिज्जा तत्थ तत्थुत्तमा जाई उत्तम च कुलरूवारोगसपय ति,[8] एय ते निच्छइओ भवेज्जा ।'

अन्न च–पचनमोकारपभावओ ण भवइ दासत्त, ण दारिद्द[9]दोहग्गहीणजोणियत्त, ण विगलिंदि-यत्त ति, किं बहुएण ?

गोयमा ! जे केई[10] एयाए विहीए पचनमोकारादिसुयणाण[11]महिजित्ताण तयत्थाणु[सा]रेण पयओ सव्वा-वस्सगाइणिच्चाणुट्ठणिज्जेसु अट्ठा[12]रससीलगसहस्सेसु अभिरमेज्जा, से ण सरागत्ताए जइ ण ण[13] निव्वुडे तओ गवेज्जणुत्तरादीसु[14] चिरमभिरमे[15]ऊणेह उत्तमकुलप्पसुई उक्किट्ठलट्ठसव्वगसुदरत्त सव्वकलापत्तट्ठजणमणाण-दयारियत्तण च पाविऊण सुरिंदो[16]वमाए रिद्धीए एगतेण च दयाणुकपापरे निव्विन्नकामभोगे सद्धम्ममणु-ट्ठेऊण विहुयरयमले सिज्झेज्जा ।

× × ×

करती वखते नि शक रीते आम कहे, जेम के–"हे जन्मातरमा मोटा पुण्यने मेळवनार ! वळी, सारी रीते प्राप्त अने उपार्जन करेला मनुष्यजन्मने सफळ करनार ! हे देवानुप्रिय ! तारा नरक अने तिर्यंचगतिना द्वार बध थया छे, वळी अपयश, अकीर्ति, नीच गोत्ररूप कर्मविशेषो पण तारे बधाशे नहीं । भवातरमा जता पचनस्कार तने अतिदुर्लभ नहीं थाय, जन्मातरमा पचनमस्कारना प्रभावथी ज्या ज्या तु उत्पन्न थईश त्या त्या उत्तम जाति, उत्तम कुळ, रूप, आरोग्य अने सपत्ति–आ बधु तने निश्चयथी मळशे ।"

वळी, पचनमस्कारना प्रभावथी दासपणु मळतु नथी, दारिद्र्य, दौर्भाग्य, हीनयोनिपणु अने विकलेन्द्रियपणु पण मळतु नथी । बहु कहेवाथी शु ?

हे गौतम ! जे कोई पण आ विधिथी पचनमस्कार वगेरे अने श्रुतज्ञानने भणीने तेना अर्थ प्रमाणे प्रयत्नशील बनीने आवश्यक आदि सर्व क्रियाओमा अने अढार हजार शीलागमा अभिरमण करे छे ते जो सराग सयमने लीधे मोक्ष प्राप्त न करे तो ग्रैवेयक अने अनुत्तरविमान वगेरेमा लाबा काळ सुधी रमण करीने अहीं (मनुष्यलोकमा) उत्तम कुळमा जन्मे छे अने उत्कृष्ट, पुष्ट, सर्व अगोथी पूर्ण सौंदर्यवान अने बधीये कळाओनो अर्थ पामीने मनुष्योना मनने आनदकारकपणु प्राप्त करीने, तेमज सुरेन्द्र जेवो महा ऋद्धिमान, एकान्ते दया अने अनुकपामा तत्पर तथा काम अने भोगोथी पराङ्मुख थयेलो ते सद्धर्मनु आचरण करीने कर्मरूप मेल धोई नाखीने सिद्धि पामे छे ।

× × ×

१ °सचिय P, यगरुय° B । २ द्धसुवि° A । ३ °सऽकित्तीणीया P । ४ तरभयस्साधि P । ५. ण दुल्हो P । ६ पभावाओ P । ७ वज्जेज्जा P । ८ ति पयते निच्छयओ I । ९ ददुहग्ग° P । १० केइए° T । ११ महीएत्ताण P, महीयत्ताण B । १२ रसील्ग B । १३ ण स नि °P, ण नि° B । १४ °दीसु चि P । १५ मेऊणेह P । १६ सुरिंदे विव महरि° P, सुरिंदोवमरि B ।

ता[1] गोयमा ! णं पणयालाए[2] नमोक्कारसहियाणं चउत्थं चउवीसाए पोरुसीहिं[3] बारसहिं पुरिमड्ढेहिं दसहिं अवड्ढेहिं तिहिं निव्वीइएहिं चउहि एगट्ठाणगेहि दोहिं आयंबिलेहिं एगेणं सुद्धच्छायंबिलेणं, अव्वावारत्ताए रोद्दट्ट[4]ज्झाणविगहाविरहियस्स सज्झाएगग्गचित्तस्स गोयमा ! एगमेयायंबिलं मासखमणं[5] विसेसेज्जा, तओ य जावइयं तवोवहाणगं[6] वीसमंतो करेज्जा तावइयं अणुगणेऊणं जाहे जाणेज्जा जहा णं एत्तियमित्तेणं तवोयहाणेणं पंचमंगलस्स जोगीभूओ ताहे आउत्तो[7] पाढेज्जा, ण अन्नह त्ति।

से भयवं पभूयं कालाइक्कमं एयं, जइ कयाइ[8] अवंतराले पंचत्तमुवगच्छे तओ नमोक्कारविरहिए कहमुत्तिमट्ठं साहेज्जा ?

गोयमा ! जं समयं चेव सुत्तोवयारनिमित्तेणं असढभावत्ताए जहासत्तीए किंचि तवमारभेज्जा तं समयमेव तदहीय[9] सुत्तत्थोभयं दट्ठव्वं, जओ णं सो तं पंचनमोक्कारं सुत्तत्थोभयं ण अविहीए[10] गिण्हे, किंतु तं[11]ह गेण्हे जहा भवंतरेसुं पि ण विप्पणस्से एयज्झवसायत्ताए आराहगो भवेज्जा।

से भयवं ! जेणं[12] पुण अन्नेसिमहीयमाणाणं सुयावरणक्खओवसमेणं[13] कण्णहाडित्तणेणं पंचमंगलमहीयं भवेज्जा सेऽवियं[14] किं तवोवहाणं करेज्जा ?

तेथी हे गौतम ! पिस्तालीस नवकारसीए, चोवीश पोरसीए, वार पुरिमड्ढथी, दश अवड्ढथी, त्रण नीवीए, चार एकासणाथी, वे आयंविलथी अथवा एक आयंविल शुद्धपणे करवाथी ते एक उपवास बरावर थाय छे। तेमां (कोई जातना) व्यापार विना अने आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान तेमज विकथाओना त्यागपूर्वकना स्वाध्यायमां एकाग्रचित्तवाळो थाय तेने, हे गौतम ! एक ज आयंविल पण मासखमणथी अधिक गणाय। तेथी विश्रांति लेतो लेतो जेटलुं तपोपधान करे तेटलुं गणतरीपूर्वक करीने ज्यारे जाणे के, आटला प्रमाणना तपोपधानथी पंचमंगलने ए योग्य बन्यो छे त्यारे तेने उपयोगपूर्वक भणावे, अन्यथा नहीं।

प्रश्न—हे भगवन् ! आमां घणो काळ व्यतीत थाय। जो कदाचित् अंतराले नमस्कार विना ज पंचत्वने पामे तो ते कई रीते मरणने साधे ?

उत्तर—हे गौतम ! जे समये सूत्रना उपचार निमित्ते सरळभावथी शक्तिपूर्वक कंई पण तपनी शरूआत करे ते समयथी ज तेणे सूत्र, अर्थ अने सूत्रार्थ—ए उभयनुं अध्ययन करी लीधुं एम समजवुं जोईए, कारणके ते पंचनमस्कारना सूत्र, अर्थ अने ते वंनेने ए अविधिए ग्रहण करतो नथी, परंतु एवी रीते विधिथी ग्रहण करे छे के जेथी जन्मांतरमां पण नमस्कार नाश पामतो नथी। आ अध्यवसायने लीधे ते आराधक थाय छे।

प्रश्न—वळी, जेणे वीजाओ भणता होय त्यारे श्रुतज्ञानना क्षयोपशमने कारणे पंचनमस्कारने कानथी सांभळीने भणी लीधो होय तो शुं तेणे पण तप—उपधान करवां जोईए ?

---

१ मा गो° P। २ पणयलाए A। ३. पोरिसीहिं P। ४. रोद्दज्झाण° P। ५. °खवणं P। ६. °णग वी° P। ७. °त्तो पढेज्जा P। ८. कहाइ P। ९. तमहीय सुत्तोभयं P। १०. °ए गेण्हे P। ११ तहा गेण्हे P। १२. जेण ऊण P। १३. °सेणं क° P। १४ सेऽविउ कि P।

णो हीलिज्जा अत्थ, णो हीलिज्जा सुत्तत्थोभए से ण नो आसाइज्जा तिकालभावी तित्थकरे, णो आसाइज्जा तिलोगसिहरवासी विहुयरयमले सिद्धे, णो आसाइज्जा आयरिय-उवज्झाय-साहुणो, सुट्ठयरं चेव भवेज्जा पियधम्मे दढधम्मे भत्तीजुत्ते एगंतेण भवेज्जा । सुत्तत्थाणुरजियमाणसे सद्धासवेगमावन्नो, से एस ण ण लभेज्जा पुणो पुणो भवचारगे गब्भवासाइय अणेगहा जतण ति ।

णवर गोयमा ! जे ण बाले जाव अविन्नायपुन्नपावाण विसेसो ताव ण से पचमगलस्स ण गोयमा ! एगतेण अओगे, ण तस्स पचमगलमहासुयक्खध दायव्व न तस्स पचमगलमहासुयक्खधस्स एगमवि आलावग दायव्व, जओ अणाइभवतरसमज्जियासुहकम्मरासिदहणट्ठमिण लभेत्ताण न बाले सम्ममाराहेज्जा लहुत्त च आणेइ, ता तस्स केवल धम्मकहाए गोयमा ! भत्ती समुप्पाइज्जइ, तओ नाऊण पियधम्म दढधम्म भत्तिजुत्त, ताहे जावइय पच्चक्खाण निव्वाहेउ समत्थो भवेइ तावइय कारवेज्जइ, राईभोयण दुविह तिविह-चउव्विहेण वा जहासत्तीए पच्चक्खाविज्जइ ।

मनुष्य हे गौतम ! सूत्रनो अनादर करतो नथी, अर्थनो अनादर करतो नथी, सूत्र अने अर्थ ए बन्नेनो अनादर करतो नथी, त्रणे काळमा थनारा तीर्थंकरोनी आशातना करतो नथी, त्रण लोकना शिखर उपर रहेला कर्ममलरहित सिद्ध भगवतोनी आशातना करतो नथी तेमज आचार्य, उपाध्याय अने साधुओनी पण ते आशातना करतो नथी । ते सारी रीते प्रियधर्मा, दृढधर्मा अने एकात भक्तियुक्त बने छे । सूत्र अने अर्थनी अन्दर अनुरागी मनवाळो अने श्रद्धासवेगथी युक्त बनेलो ते भवरूपी कारावासमा गर्भावासनी अनेकविध यत्रणाओने वारवार पामतो नथी ।

परतु हे गौतम ! जे बाळ छे अने जेणे पुण्य अने पापनी विशेषता ज्या सुधी जाणी नथी त्या सुधी तेनो जीव हे गौतम ! ए पचमगलने माटे एकाते अयोग्य छे । एवा (बाळक)ने समग्र पचमगलमहाश्रुतस्कध न आपवो जोईए, पचमगलमहाश्रुतस्कधनो एक आलापक पण आपवो न जोईए, केमके अनादिकाळनी जन्मातरमा उपार्जन करेला अशुभ कर्मोना समूहने बाळनार आ (नमस्कार)ने मेळवीने बाळक सारी रीते आराधना करतो नथी अने उल्टी ए (नमस्कार)नी लघुता करे छे । ए माटे हे गौतम ! तेवा (बाळक)ने प्रथम धर्मकथामा भक्ति उपजाववी जोईए । ते पछी धर्ममा प्रेम, धर्ममा दृढता अने (धर्ममा) भक्तियुक्त थयेलो जाणीने पछी जेटलु पच्चक्खाण पाळवाने शक्तिमान होय तेटलु (पच्चक्खाण) कराववु जोईए । बे प्रकारे, त्रण प्रकारे अथवा चार प्रकारे रात्रिभोजनना शक्ति मुजब पच्चक्खाण कराववा जोईए (अर्थात् दुविहार तिविहार के चउविहारनु पच्चक्खाण कराववु जोईए ।)

---

१ हालेज्जा P । २ हीलेज्जा I । ३ आसाएज्जा P । ४ विहूय° P । ५ सिद्धो णं I । ६ आसाएज्जा P । ७ °माणस ग° P । ८ विसेसे ताव B । ९ °सुयक्खंधस्स A B । १० लभित्ताणं P । ११ भवति ता I । १२ कारविज्जइ I । १३ राइभो I, रायभो° S, राइभो° T ।

श्रीमहानिशीथसूत्रमां नमस्कारसूत्रना तपोमय अनुष्ठान
अने
अध्ययन-अध्यापन माटे सूचित विगतोनुं कोष्टक

प्रवरदेवता अधिष्ठित नमस्कारसूत्र	अध्ययन	पद	पदच्छेद	आलापक	अक्षर	स्वर	व्यञ्जन	मात्रा	बिंदु	तप (उपधानविधि मुजब)	तपना दिवसो
१ णमो अरिहंताण	पहेलुं	१	३	१	७	७	६	११	२	पाच उपवास प्रमाण तपथी पांच पदनी वाचना	९
२ णमो सिद्धाणं	बीजुं	१	२	१	५	५	६	९	१		
३ णमो आयरियाणं	त्रीजुं	१	३	१	७	७	६	११	१		
४ णमो उवज्झायाणं	चोथुं	१	×३	१	७	७	७	१२	१		
५ णमो लोए सव्वसाहूण	पाचमुं	१	+४	१	९	९	९	१६	१		
६ एसो पंचणमुक्कारो।	चूलिका (६)	१	२	१	८	८	८	१४	१	साडा सात उपवासप्रमाण तपथी चार पदनी वाचना	९
७ सव्वपावप्पणासणो		१	३	१	८	८	१०	१३	–		
८ मगलाण च सव्वेसिं		१	३	१ }	८	८	९	१४	३		
९ पढम हवइ मंगलं		१	३		९	९	८	१२	३		
		९	२६	८	६८	६८	६९	११२	१३	साडा बार उपवास	१८

उपरना कोष्टकमां आवता केटलाक पारिभाषिक शब्दोनी टूंकी समजः—

अध्ययनः—चित्तने जे सारी रीते अध्यात्मवाळुं बनावे ते 'अध्ययन' कहेवाय।

चित्तने जे सारी रीते अध्यात्म तरफ खेंची जाय ते 'अध्ययन' कहेवाय।

बोध, संयम अथवा मोक्षनो अधिक लाभ करावे तेने पण 'अध्ययन' कहे छे।

जेण सुहज्झप्पजणं अज्झप्पाणयणमहियमयणं वा।
बोहस्स संजमस्स व मोक्खस्स व जं तमज्झयणं॥ (वि. भा. ९६०)

※ उपधान तपनी विशेष हकीकत प्रस्तुत ग्रंथमा हवे पछी शीर्षक ६ हेठळ छपायेल 'उवहाणविहिथुत्तं' नामना स्तोत्रमा जणावी छे।

× 'णमो उवज्झायाणं' नी संपदामा 'उवज्झायाणं' पदमा उ+ज्झा अने प्रथमनुं 'णमो' पद उमेरता त्रण पदो थाय, ते माटे 'आवश्यकसूत्र-निर्युक्ति'मा कह्युं छे के—

"उ त्ति उवयोगकरणे ज्झ त्ति य ज्झाणस्स होइ निद्देसो।
एएण उवज्झाओ एसो अण्णो वि पज्जाओ॥ ३१९८॥" (३३४)

अथवा, उपाधि+आय, अने 'णमो' पद गणता पण त्रण पद थाय। जुओः—भगवतीसूत्र व्याख्या, प्रस्तुत ग्रंथ पृ० ६; पं. ३

+ 'णमो लोए सव्वसाहूण' ए पदमा 'श्रीमहानिशीथसूत्र'मा पदच्छेद अने आलापक जणाव्या नथी ते अहीं बीजा पदोनी माफक गणीने मूक्या छे। संभव छे के 'श्रीमहानिशीथसूत्र' मा आ पाठ पडी गयो होय।

। जुओ 'पदच्छेद' शब्द परनी नोंध।

गोयमा ! करेज्जा ।

से भयवं ! केण अट्ठेण [2]

गोयमा ! सुलभबोहिलाभनिमित्तेण, एवं चेयाइ अकुव्वेमाणे णाणकुसीले णेए ।

तहा गोयमा ! ण पव्वज्जादिवसप्पभिईए जहुत्तविणओवहाणं जे केइ साहू वा साहुणी वा अपुव्वनाणगहणं न कुज्जा, तस्सावि विराहिज्ज सुत्तत्थोभयं, सरमाणे एगग्गचित्ते पढमचरमपोरिसीसु दिया राओ य णाणुगुणेज्जा, से ण गोयमा ! णाणकुसीले णेए ।

से भयवं ! जस्स अइगरुयनाणावरणोदएणं अहन्निसं पहोसेमाणस्स ण संवच्छरेणावि सिलोगद्धमवि थिरपरिचियं भवेज्जा, तेणावि जावज्जीवाभिग्गहेणं सज्झायसीलाणं वेयावच्चं तहा अणुदिणं अड्ढाइज्जे सहस्से पंचमंगलाणं सुत्तत्थोभए सरमाणेगग्गमाणसे पहोसिज्जा, से भयवं ! केण अट्ठेण [2]

गोयमा ! जे भिक्खू जावज्जीवाभिग्गहेणं चाउक्कालियं वायणाइ जहासत्तीए सज्झायं न करेज्जा, से ण[1] णाणकुसीले णेए ।

अन्न च—जे केई जावज्जीवाभिग्गहेणं अपुव्वं नाणाहिगमं करेज्जा तस्सासत्तीए पुव्वाहियं गुणेज्जा तस्सावि यासत्तीए पंचमंगलाणं अड्ढाइज्जे सहस्से परावत्ते, सेवि आराहगे, तं च नाणावरणं खवेत्ताणं तित्थयरेइ वा गणहरेइ वा भवेत्ताण सिज्झेज्जा ।

उत्तर—हे गौतम ! तेणे पण (तप–उपधान) करवा जोईए ।

प्रश्न—हे भगवन् ! शा माटे (तेणे तप–उपधान) करवा जोईए ?

उत्तर—हे गौतम ! बोधिलाभ सुलभ थाय ए माटे करवा जोईए । आ प्रमाणे न करे तो तेने ज्ञानकुशील जाणवो ।

वळी, हे गौतम ! जे कोईपण साधु अथवा साध्वी प्रव्रज्या–दीक्षाना दिवसथी लईने यथोक्त प्रकारे विनय–उपधान पूर्वक अपूर्व एवुं ज्ञान ग्रहण न करे तो तेने सूत्र, अर्थ–ए बन्नेनी वारवार विराधना लागे । पहेली अने छेल्ली पोरसीमां दिवस अने राते एकाग्रचित्ते स्मरण करतो गणे नहीं (पुनरावर्तन करे नहीं) तो, हे गौतम ! तेने ज्ञानकुशील जाणवो ।

प्रश्न—हे भगवन् ! अत्यंत भारे एवा ज्ञानावरणकर्मना उदयथी निरंतर गोखवा छतांये वर्ष सुधीये अडधो श्लोक पण जेने स्थिरपरिचित न थाय (न समजाय) तेणे पण यावज्जीवनो अभिग्रह करीने स्वाध्यायशील (साधुओ)नी वेयावच्च–सेवा करवी जोईए, तेमज प्रतिदिन अढी हजार वार पंचमंगलसूत्र, अर्थ अने ते बन्नेनुं एकाग्र मनथी स्मरण करता रटण करवुं जोईए । हे भगवन् एम शा माटे ?

उत्तर—हे गौतम ! जे भिक्षु यावज्जीव अभिग्रहपूर्वक चारे कालमां शक्ति मुजब वाचना आदि स्वाध्याय न करे तेने ज्ञानकुशील जाणवो ।

वळी, जे यावज्जीव अभिग्रह करवापूर्वक अपूर्व एवा ज्ञाननी प्राप्ति करे, तेनी शक्ति न होय तो ते पहेलां जे भणेलुं होय तेनुं पुनरावर्तन करे, ते माटे पण अशक्त होय तो पंचमंगलनो अढी हजार वार जाप–पुनरावर्तन करे तो ते पण आराधक छे । ते ज्ञानावरणकर्म खपावीने तीर्थंकरपणाने अथवा गणधरपणाने पामीने सिद्ध थाय छे ।

---

१ चइयाई P । २ °णेनागगु° P । ३ विहीणोव° P । ४ °गई विगहीअ P । ५ अनिस A । ६ सग संवसरे° B । ७ सिलोगद्धमवि थो थिर I । ८ स्से २५०० य वं° P । ९ °गउ मा° I । १० णं कुसीले I । ११ अपुव्वनाणा P । १२ तस्सामत्तीए P । १३ °वि य से तीए । १४ से भिक्खू आ° I । १५ रावेत्तुणं P ।

परिचय

श्रीमहानिशीथसूत्रना त्रीजा अध्ययननो आ संदर्भ श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालीताणाथी प्रकाशित "आगमरत्नमञ्जूषा" अंतर्गत महानिशीथसूत्रना पृ. २८२-१ थी २८३-३ मांथी लेवामां आव्यो छे । तेना पाठभेदो पू० मुनिराज श्रीपुण्यविजयजीनी प्रेसकॉपीमांथी लीधा छे । तेमणे जे प्रतिओनो उपयोग कर्यो छे तेनी जे संज्ञा तेमां आपेली छे ते संज्ञाओनो अहीं आ रीते परिचय आप्यो छे :–

P संज्ञा ए पू. मु. श्रीपुण्यविजयजी महाराजे ह. लि. ताडपत्रीय प्रति उपरथी मूळ आदर्शरूपे प्रेस कॉपी करावी ते ।

B पू. महाराजश्रीनी प्रेसकॉपीमां B संज्ञाथी पाठो लेवाया छे ते ।

T पू. महाराजश्रीनी प्रेसकॉपीमां २ संज्ञाथी पाठो लेवाया छे ते ।

S पू. महाराजश्रीनी प्रेसकॉपीमां 'सु' नी संज्ञाथी पाठो लीधा छे ते ।

A संज्ञा आगमरत्नमंजूषा–पू. आ. श्रीसागरानंदसूरिजीए जे प्रति उपरथी पाठ तैयार करेल छे ते ।

पू. पुण्यविजयजीए जे पाठांतरो नोंध्यां छे तेमांथी केटलांक पाठांतरो मूळपाठना व्यवस्थित अनुवाद माटे खूब ज जरूरी अने उपयोगी होवाथी ते पू. मुनिश्री जंबूविजयजीनी सूचनानुसार मूळपाठमां उपर लई लीधां छे अने तेनी जगानो पाठ नीचे M संज्ञाथी निर्देश्यो छे।

आ पाठभेदोमां ण, न अने अशुद्ध पाठोने अहीं लीधा नथी ।

समग्र रीते नमस्कारमंत्रनी चूलिका साथेनी संकलना अने ते पदोनुं महत्त्व आ सूत्रमां जोवा मळे छे । उपधानतप विना नमस्कार वगेरे सूत्रोनी वाचना लई न शकाय ए विशे आ सूत्र भारपूर्वक निर्देश करे छे । वळी, आ नमस्कारमंत्रनी संहिता (उच्चारण पद्धति) विशे जेटली माहिती अहीं मळे छे तेटली बीजे मळती नथी । मंत्रना उच्चार विशे स्वर, वर्ण, पद, पदाक्षर, मात्रा, बिंदु अने घोष (उदात्त, अनुदात्त, स्वरित भेदपूर्वक) उच्चार करवानुं विधान करे छे । एटलुं ज नहीं, परंतु तेनी बहुमानपूर्वक कराती तपोमय आराधना प्रसंगे विघ्नो आवी न पडे ते माटे तेना आरंभयोग्य शुभ काळनुं निरीक्षण करी ते करवानुं विधान छे अने ते माटे एनी पवित्रता बतावबा अने जाळवबा वाचना लेतां शुभ तिथि, करण, मुहूर्त, नक्षत्र, योग, लग्न अने चंद्रबळ जोवानो आदेश करे छे । आ सूत्रने महामंत्र अने प्रवर विद्याओना बीजभूत जणावे छे ।

श्रीहरिभद्रसूरि आ महानिशीथसूत्रना आदर्श माटे ऐतिहासिक विगत रजू करे छे के–आ सूत्रमां ज्यां सूत्रना आलापकोनो संबंध न मळे त्यां श्रुतधरोनी खामी न काढवी । तेओ तेनुं कारण आपतां कहे छे के–आ महानिशीथसूत्रनो प्राचीन आदर्श खंडित–त्रुटित हतो, ऊधेईथी केटलांये पानां सडीने जीर्णशीर्ण थई गयां हतां, छतां अत्यंत महार्थवाळो 'महानिशीथ–श्रुतस्कंध' ए समग्र प्रवचनना सारभूत छे एम समजीने प्रवचनवात्सल्यथी आचार्य श्रीहरिभद्रसूरिए

शास्त्रनु प्रकरण ते 'अध्ययन' (अर्ध० को०)

पदः—अतमा विभक्तिवाळा शब्दने 'पद' कहेवाय । "तदन्त पदम्"

(सिद्धहेम व्या० १ १ २०)

अर्थनु जे वाचक होय अथवा द्योतक होय तेने 'पद' कहे छे ।

"पयमत्थवायग जोयग च त नामियाइ पंचविह" (वि० भा० १००३)

शब्दोनो समूह, वाक्य तेने 'पद' कहे छे ।

पद्यना चोथा भाग (पाद) ने 'पद' कहे छे । (पा० म०)

अर्थनी परिसमाप्तिवाळु वाक्य ते 'पद' कहेवाय ।

'अत्थुवलद्धी जत्थ तु त होति पद ति' (पचकल्पभाष्य, १)

पदच्छेदः—अर्थना नियमन माटे (प्राय) सामासिक पदोनु ज विश्लेषण (विग्रह) तेने पदविच्छेद अगर 'पदच्छेद' कहे छे—

'पाय पयविच्छेओ समासविसओ तयत्थनियमत्थ ॥' (वि० भा० गा० १००६)

जेम 'नमस्कारसूत्र' मा "अरि, हताण," वगेरे, ए ज प्रकारे 'आयरियाण, उवज्झायाण' वगेरेनो पण पदच्छेद समजवो । 'पचणमुक्कारो'—ए अखडित विशेषनाम होवाने कारणे तेनो पदच्छेद गणतरीमा लीधो नथी ।

आलापकः—एक सवधवाळा वाक्योनो समूह । (अर्ध० को०), पॅरो, पॅरेग्राफ (पा० म०)

अक्षरः—जे (आत्माथी) प्रच्यवे नहीं ते 'अक्षर' (वर्ण) कहेवाय, ते ज्ञान, चेतनना अर्थमा पण वपराय छे ।

"न क्षरतीत्यक्षरम्, तच ज्ञान, चेतनेत्यथ ॥" (आवश्यकसूत्र, गा० १९,—व्याख्या)

मात्राः—ह्रस्व वर्णनो उच्चारणकाळ (शब्दचिन्तामणिकोश) अहीं 'छन्द शास्त्र' अनुसार ह्रस्वनी एक मात्रा अने दीर्घनी बे मात्रा गणीने जणावी छे ।

बिंदुः—सानुनासिक उच्चारण दर्शावतो अनुस्वार (पा० म०)

चूला—चूलिकाः—चूला एटले अलकार अथवा शिखर ।

"चूला विभूसण ति य सिहर ति य होंति एगट्ठे ।" (निशीथचूर्णि—१)

श्रुतरूपी पर्वत उपर चूला शिखरनी माफक शोभे ते 'चूला' कहेवाय ।

"श्रुतपर्वते चूला इव राजन्ते इति चूला ।"

(—नदीसूत्र—५७, व्याख्या पृष्ठ २४६ अ)

मूळसूत्रमा न बतावेल हकीकत बतावनारी तेने 'चूलिका' कहे छे । (अर्ध० को०), अथवा ग्रन्थनु परिशिष्ट । (पा० म०)

[.५]

चैत्यवंदनमहाभाष्ये नमस्कारसूत्रस्य उल्लेखः

वन्नऽट्ठसट्ठि नव पय नवकारे अट्ठ संपया तत्थ ।
सग संपय पयतुल्ला सतरक्खर अट्ठमी दुपया ॥ ३० ॥

धर्मकीर्तिसूरिरचिता टीका—

वर्णा–अक्षराणि अष्टषष्टिः नमस्कारे–पंचपरमेष्ठिमहामंत्ररूपे भवन्तीति शेषः, उक्तं च नमस्कारपञ्जिका–सिद्धचक्रादौ–

"पंचपयाणं पणतीस वण्ण चूलाइ वण्ण तित्तीसं ।
एवं इमो समप्पइ फुडमक्खरअट्ठसट्ठीए ॥"

तथा अष्टप्रकाश्यां—

"आग्नेय्यादिविदिग्व्यवस्थितेषु दलेषु चूला पादचतुष्कम् ।" 'एसो पंचनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो । मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥' इति ध्यायेत्, तथा नव पदानि विवक्षितावधियुक्तानि नमोऽरिहंताणमित्यादीनि, न तु स्याद्यंतानि, भणितं च—

"सत्त पणे सत्त सत्त य नवं अट्ठ य अट्ठ अट्ठ नवं हुंति ।
इय पय अक्खरसंखा असट्ठ पूरेइ अडसट्ठी ॥"

अनुवाद

गाथार्थ—नमस्कार महामंत्रमां वर्ण एटले अक्षरो अडसठ छे, पदो नव छे अने संपादाओ आठ छे । तेमां सात संपदाओ एक एक पदनी बनेली छे अने आठमी संपदा सत्तर अक्षरोनी तथा बे पदनी बनेली छे ।

टीकार्थ—पंचपरमेष्ठिमहामंत्ररूप नमस्कारसूत्रमां वर्ण एटले अक्षरो अडसठ छे । **नमस्कारपञ्जिका** तथा **सिद्धचक्र** वगेरेमां कह्युं छे के–"पांच पदना पांत्रीश अक्षरो तथा चूलिकाना तेत्रीश अक्षरो–ए प्रमाणे मळीने आ नमस्कारमंत्र अडसठ अक्षरोमां स्फुट रीते समाई जाय छे ।"

तथा **अष्टप्रकाशीमां** (श्रीमद् हेमचंद्रसूरिमहाराजप्रणीत **योगशास्त्रना** आठमा प्रकाशना ३४ मा श्लोकनी स्वोपज्ञवृत्तिमां) कह्युं छे के–"आग्नेय आदि विदिशाओमां रहेली चार पांखडीओमां–१ एसो पंचनमुक्कारो २ सव्वपावप्पणासणो ३ मंगलाणं च सव्वेसिं ४ पढमं हवइ मंगलं—(नवकारनी) आ चार चूलिकाना पदोनुं ध्यान करवुं ।"[1] अहीं 'पद' शब्दथी विवक्षित अवधिवाळा 'नमो अरिहंताण' वगेरे नव पदो अभिप्रेत छे, परंतु 'सि' अने 'ति' वगेरे जेना अंतमां होय एवां (व्याकरणनी परिभाषावाळां) पदो अभिप्रेत नथी । कह्युं छे के–"सात, पांच, सात, सात, नव, आठ, आठ, आठ, अने नव–आ प्रमाणे पदना अक्षरोनी संख्या अडसठ छे ।"

---

१. आ पहेला 'योगशास्त्र' मा नीचे मुजब उल्लेख छे —

"हृदयकमळमा मध्यनी कर्णिकामा 'नमो अरिहंताणं' पदनुं, तथा पूर्व आदि चार दिशामा रहेली चार पाखडीओमा अनुक्रमे 'नमो सिद्धाणं' 'नमो आयरियाणं' 'नमो उवज्झायाणं' तथा 'नमो लोए सव्वसाहूणं' नुं ध्यान करवुं"

—'योगशास्त्र' आठमो प्रकाश श्लो० ३३–३४

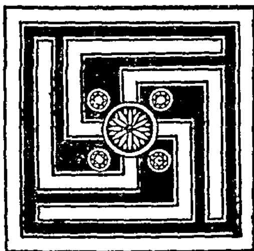
अनेक भव्य जीवोना उपकार माटे अने पोताना आत्महितार्थे ते आदर्शमा जे लख्यु हतु तेने बुद्धिपूर्वक सशोधीने लख्यु छे, अने बीजा आचार्यो पैकी सिद्धसेन दिवाकर, वृद्धवादी, यक्षसेन, देवगुप्त, यशोवर्धन क्षमाश्रमणना शिष्य रविगुप्त, नेमिचन्द्र, जिनदासगणि, क्षमक, सत्यश्री वगेरे युगप्रधान श्रुतधरोए ते सूत्रने बहुमान्य कर्यु हतु ।

हवे पछी तुरत ज शीर्षक ५ हेठळ छपायेल श्रीदेवेन्द्रसूरिकृत 'चैत्यवदन महाभाष्य' उपर श्रीधर्मकीर्तिनी जे टीका छे तेमा पण आ महानिशीथसूत्रना सकलयिता आचार्य श्रीहरिभद्रसूरि विशे खास नोंध लीधी छे के–आचार्य श्रीहरिभद्रसूरिए मथुराना श्रीसुपार्श्वनाथना स्तूपमा रहीने पदर दिवसना उपवास कर्या तेथी प्रसन्न थयेली शासनदेवीए आ महानिशीथसूत्रनो प्राचीन आदर्श तेमने आप्यो । [आ हकीकतनो निर्देश करती पक्ति ("महुराए अप्पिउ त्ति" जुओ – 'चैत्यवदन महाभाष्य' पृ ६८, प ८–९) 'श्रीमहानिशीथसूत्र'मा मळती नथी, जो के तेनो अनुवाद नीचे आप्यो छे । जुओ पृ ५३, प १६–१७]

आ हकीकत उपरथी ए जणाय छे के श्रीहरिभद्रसूरिए महानिशीथसूत्रनु सकलन कर्यु एटलु ज नहीं, ए सूत्रनो मूळ आदर्श मेळववा माटे तेमने खास आराधना करवी पडी ।

नमस्कारसूत्रनो इतिहास आपता आचार्य श्रीहरिभद्रसूरि कहे छे के–पूर्वे पचमगलश्रुतस्कध (पचनमस्कार) पृथक् सूत्र हतु, तेनी उपर घणी निर्युक्तिओ, घणा भाष्यो अने घणी चूर्णिओ हती, पण काळदोषथी ते बधानो नाश थई गयो । ए पछी महर्द्धिप्राप्त पदानुसारी शक्तिवाळा द्वादशागधारी वज्रस्वामी थया, जेमणे पचमगलश्रुतस्कधने मूळसूत्रोमा लख्यो । आ उपरथी एम समजाय छे के, पूर्वे नमस्कारसूत्र स्वतत्र सूत्र हतु पण श्रीवज्रस्वामीए सूत्रग्रथोना आरभमा गोठव्या पछी आज सुधी ते सूत्रोना आरभ-मगळ तरीके सूत्रोनी साथे ज जोडायेलु मळे छे ।

अनुवाद मूळपाठनी नीचे आपवामा आव्यो छे । महानिशीथमा अनेक स्थळे सूत्रपाठ खडित होवाने लीधे अर्थ सतोषकारक समजातो नथी, छता अनुवादनी सळगसूत्रता जाळववाना हेतुथी ज पूर्वापर भागोने ख्यालमा राखीने अर्थ जोडवानो ते ते स्थळे प्रयास कर्यो छे ए बाबत लक्ष्यमा राखवा वाचकोने खास विनती छे । तेनु एक कोष्टक अने केटलीक विगतो पण साथे ज मूकेली छे ।



तथा अष्टौ संपदो– महापदापरनामानि विश्रामस्थानानि, उपधानविध्यादावष्टाध्ययनाद्यात्मकतया प्रत्यध्ययनाद्येकैकाचामाम्लकरणेनाष्टानामेवाचामाम्लानां भणनात्, शेषविशेषस्तु प्रागुक्तसंपद्द्वारव्याख्यानुसारतो बोध्यः।

अथ कथं नवसु पदेषु अष्टसंपद इत्याह– 'तत्थ' त्ति तासु अष्टासु संपत्सु मध्ये क्रमेण सप्त संपदः पदैः पूर्वोक्तस्वरूपैस्तुल्याः– समानाः, अष्टमी पुनः संपत् सप्तदशाक्षरप्रमाणा पर्यंतवर्तिपदद्वयात्मिका च यथा–'मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं,' यदुक्तं चैत्यवंदनाभाष्यप्रवचनसारोद्धारादिषु—

"पंचपरमिट्ठिमंते पए पए सत्त संपया कमसो।
पज्जंत सत्तरक्खरपरिमाणा अट्ठमी भणिया॥"

एवं वा चतुर्थपदस्य पाठः– 'नवक्खरऽट्ठमि दुपय छट्ठी' अष्टमी सपत् 'पढमं हवइ मंगलं' इति नवाक्षरप्रमाणा ज्ञेया, षष्ठी पुनः 'एसो पंचनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो' त्ति द्विपदमाना, अभ्यधायि

तथा नवकारमां आठ संपदाओ छे अर्थात् विश्रांतिनां आठ स्थानो छे, जेने महापद पण कहेवामां आवे छे[1]; कारणके उपधानविधि[2] वगेरेमां (नवकार) आठ अध्ययनादिरूप होवाथी अने दरेक अध्ययनादि दीठ एक एक आयंबिल करवानी विधि मुजब आठ ज आयंबिल करवानुं कह्युं होवाथी नवकारमां आठ संपदाओ छे। बाकी जे विशेषता छे ते पहेलां जणावेला संपद्द्वारनी व्याख्याने अनुसारे समजी लेवी।

नवपदमां आठ संपदाओ शी रीते समजवी? तेनो उत्तर आपतां जणावे छे के ते आठ संपदाओमां पहेली सात संपदाओ एक एक पद जेटली छे, ज्यारे आठमी संपदा 'मंगलाणं च सव्वेसि पढमं हवइ मंगलं'–ए प्रमाणे सत्तर अक्षरनी अने बे पदनी बनेली छे। चैत्यवंदनाभाष्य तथा प्रवचनसारोद्धारमां[3] कह्युं छे के "–पंचपरमेष्ठिमंत्रमां एक एक पदमां अनुक्रमे सात संपदाओ छे अने छेल्ली आठमी संपदा सत्तर अक्षर प्रमाणनी छे।"

अथवा अहीं गाथाना[4] चोथा पादमां 'नवक्खरऽट्ठमी दुपय छट्ठी' एवो पाठ समजवो। तेथी आठमी संपदा 'पढमं हवइ मंगलं' ए प्रमाणे नव अक्षर प्रमाणनी समजवी। छट्ठी संपदा 'एसो पंचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो' एम बे पदनी समजवी।

---

१ सळंग बोलता बोलता थाकी न जवाय तथा अर्थनी संगति सचवाय ए माटे वचमा ते ते पदो आगळ थोडी विश्रांति लेवानी होय छे। आवा विश्रातिना स्थानोने सपदा कहेवामा आवे छे। आ सपदाओमा केटलीकवार अनेक पदोनो समावेश होय छे तेथी एने 'महापद' पण कहेवामा आवे छे।

२ प्रस्तुत ग्रंथमा आ पछी तुरत ज 'उपधानविधि' छपायेल छे।

३ प्रस्तुत ग्रंथमा पृ० ४५० पर 'प्रवचनसारोद्धार'नी आ गाथा छपायेल छे।

४ अहीं भाष्यनी जे गाथानुं विवेचन चाले छे ते प्रस्तुत संदर्भनी शरुआतमा जे गाथा आपेली छे ते अभिप्रेत जणाय छे।

न चेव एसो पचेत्यत्र श्लोकच्छदोभग इति वाच्य, गाथानाम छदोऽन्तररूपत्वादस्य, उक्त च छन्द शास्त्रे—

"विषमाक्षरपाद वा पादैरसम दशधर्मवत्
यच्छन्दो नोक्तमत्र गाथेति तत्सूरिभि प्रोक्ता ।"

एवविधाश्च त्रयस्त्रिंशदक्षरप्रमाणा अनेकश आगमे दृश्यन्ते तथाहि—

'जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आवियइ रस' तथा—
'अह च भोगरायस्स, त च सि अधगवण्हिणो' इत्यादि ।

शङ्का—आ प्रमाणे अक्षरोनी सख्या स्वीकारवाथी 'एसो पचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो मगलाण च सव्वेसिं पढम हवइ मगल' मा श्लोक (अनुष्टुप) नामना छदनो भग थशे ।[1]

समाधान—अहीं श्लोक (अनुष्टुप) नामनो छद नथी, पण 'गाथा' नामनो जुदा प्रकारनो छद छे । (तेथी छदोभगनो दोष अहीं लागतो नथी) छदःशास्त्रमा कह्यु छे के—"विषम अक्षरवाळा जेमा पादो होय अथवा 'दशधर्म'वाळा[2] श्लोकनी जेम जेमा पादो विषम होय तेवा जे छन्दु अहीं (छद शास्त्रमा) वर्णन जोवामा न आवे तेने आचार्यो 'गाथा' कहे छे ।"

आवी तेत्रीश अक्षरनी गाथाओ आगमोमा अनेकवार जोवामा आवे छे, जेमके—

'जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आवियइ रस ।[3] ' तेमज
'अह[4] च भोगरायस्स, त च सि अधगवण्हिणो ।[5] ' वगेरे'

---

१ श्लोक (अनुष्टुप) नामना छदमा चार पाद होय छे अने दरेक पादमा आठ आठ अक्षर होय छे । अहीं 'पढम हवइ मगल'–ए पादमा नव अक्षर होवाथी छदनो नियम जळवातो नथी, तेथी छदोभंग थशे एवो शंकाकारनो आशय छे ।

२ महाभारतना पांचमा पर्वना तेत्रीसमा अध्यायमा 'दश धर्म' थी शरू थतो नीचे मुजबनो ८२ मो श्लोक छे –

दश धर्मं न जानन्ति धृतराष्ट्र निबोधनात् ।
मत्त प्रमत्त उन्मत्त क्रुद्ध श्रान्तो बुभुक्षित ।
त्वरमाणश्च भीरुश्च लुब्ध कामीति ते दश ॥

[अर्थ –हे धृतराष्ट्र ! १ गर्विष्ठ २ प्रमादी ३ उन्मत्त ४ क्रोधी ५ थाकेला ६ भूख्यो ७ उतावळ करी रहेलो ८ बीकण ९ लोभी अने १० कामी–आ दश माणसो समर्थ होवा छता पण धर्मने समजी शकता नथी ।]

आमां छ पाद छे । एटले त्रण त्रण पादनी बे गाथाओ अथवा छ पादनी एक गाथा समजवी, एम आचार्य श्रीहेमचंद्रसूरिमहाराजे स्वोपज्ञवृत्तिसहित छदोनुशासन मा नीचे प्रमाणे जणाव्यु छे —

'गाथाऽनुष्टुभम् । अत्र शास्त्रे यन्नोक्त छन्दस्तद् गाथासंज्ञम्, यथा–'दश धर्मं न जानन्ति धृतराष्ट्र निबोधनात् । मत्त प्रमत्त उन्मत्त क्रुद्ध श्रान्तो बुभुक्षित । त्वरमाणश्च भीरुश्च लुब्ध कामीति ते दश ॥' अत्र त्रिभि पञ्चिवा पादै श्लोक ॥' –पृ० ४६

३ 'श्रीदशवैकालिकसूत्र' ना प्रथम अध्ययननी आ बीजी गाथा छे अने आखी गाथा नीचे प्रमाणे छे –

'जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आवियइ रस ।
ण य पुप्फ किलामेइ सो अ पीणेइ अप्पय ॥ २ ॥'

४ 'श्रीदशवैकालिकसूत्र' ना द्वितीय अध्ययननी आ आठमी गाथा छे अने आखी गाथा नीचे प्रमाणे छे –

'अह च भोगरायस्स, तं च सि अधगव(वि)ण्हिणो ।
मा कुले गधणा होमो, सजम निहुओ चर ॥ ८ ॥'

५ आ बन्ने छदोमा बीजा पादमा नव अक्षरो छे तेथी तेत्रीस अक्षरनी गाथा अहीं समजवानी छे ।

"एयं तु जं पंचमंगलमहासुअक्खंधस्स वक्खाणं तं महया पबंधेणं अणंतगमपज्जवेहि सुत्तस्स पिहब्भूयाहिं निज्जुत्ति-भास-चुण्णीहिं जहेव अणंतनाण-दंसणधरेहि तित्थयरेहिं वक्खाणिअं, तहेव समासओ वक्खाणिज्जंतं आसि, अहऽन्नया कालपरिहाणिदोसेणं ताओ निज्जुत्ति-भास-चुन्नीओ वुच्छिन्नाओ, इओ य वच्चंतेणं कालसमएणं महिड्ढीपत्ते पयाणुसारी वइरसामी नाम दुवालसंगसुअहरे समुप्पन्ने, तेणेसो पंचमंगलमहासुअक्खंधस्स उद्धारो मूलसुत्तस्स मज्झे लिहिओ, मूलसुत्तं पुण सुत्तत्ताए गणहरेहि, अत्थत्ताए अरिहंतेहिं भगवंतेहिं धम्मतित्थगरेहि तिलोयमहिएहिं वीरजिणिंदेहि पन्नविअंति, एस वुड्ढसंपयाओ।

इत्थ य जत्थ जत्थ पयं पएणाणुलग्गं सुत्तालावगं न संवज्झइ तत्थ तत्थ सुयहरेहि कुलिहियदोसो न दायव्वु त्ति, किं तु जो सो एयस्स अचिंतचिंतामणिकप्पभूयस्स महानिसीहसुयक्खंधस्स पुव्वायरिसो आसी महुराए सुपासनाहथूहे, पनरसहि उववासेहि विहिएहिं सासणदेवीए मम अप्पिउ त्ति, तहिं चेव खंडाखंडीए उद्देहियाइएहिं हेऊहिं वहवे पत्तगा परिसडिया, तहावि अच्चंतसुमहत्थाइसय इमं महानिसीहसुअक्खंधं कसिणपवयणस्स परमसारभूयं परं तत्तं महत्थं ति कलिऊण पवयणवच्छल्लत्तणेणं वहु भव्वसत्तोवयारयं च काउं तहा य आयहियट्ठयाए आयरियहरिभद्देणं जं तत्थायरिसे दिट्ठं तं सव्वं समईए सोहिऊण लिहिअं ति,

---

"पंचमंगलमहाश्रुतस्कंध(नवकार)नी जे आ व्याख्या छे ते खूब विस्तारथी अनंतगम अने अनंत पर्यायोथी सूत्रथी पृथक्भूत निर्युक्ति, भाष्य तथा चूर्णि द्वारा—जेवी रीते अनंत ज्ञानदर्शनधारक तीर्थंकरोए व्याख्या करेली हती तेवी ज रीते संक्षेपथी—चाली आवती हती, परंतु पडता काळने लीधे कोइक समये आ निर्युक्ति, भाष्य तथा चूर्णिनो विच्छेद थई गयो। त्यारपछी केटलाक समये महाऋद्धिमां पदानुसारी लब्धिवाळा वज्रस्वामी नामना द्वादशान्त श्रुतज्ञानना धारक आचार्य उत्पन्न थया। तेमणे आ पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधनो उद्धार करीने मूलसूत्रनी अंदर लख्यो। मूलसूत्र ए सूत्रथी गणधरोए रचेलुं छे अने अर्थथी अरिहंत भगवंत, धर्मतीर्थंकर, त्रैलोक्यपूजित श्रीवीरजिनेश्वरे प्ररूपेलुं छे। आ प्रमाणे वृद्ध संप्रदाय छे (अर्थात् पूर्वाचार्योथी चाली आवती मान्यता छे।)

आमां परस्पर एक पदनो वीजा पद साथे संवंध होय एवी रीते सळंग सूत्रना आलावा ज्यां ज्यां जोवामां न आवे त्यां त्यां वरावर लख्युं नथी एवो दोष श्रुतधरोए काढवो नहि; कारणके अचिंत्यचिंतामणि तुल्य आ महानिशीथश्रुतस्कंधनो जे प्राचीन आदर्श (प्रति) मथुराना सुपार्श्वनाथ भगवानना स्तूपमां हतो ते पंदर दिवसना उपवास करवाथी शासनदेवीए मने आप्यो, पण तेमां खंडित थई जवाथी तेमज उधेई वगेरे कारणोथी घणां पानां सडी गयां छे (खंडित थई गयां छे) तो पण अत्यंत महान अर्थातिशयवाळा आ महानिशीथश्रुतस्कंधने समग्र प्रवचनना परम सारभूत परम तत्त्व तथा महा अर्थयुक्त समजीने प्रवचन उपरना वात्सल्यथी, वळी, घणा भव्य जीवोने उपकारक छे एम समजीने तेमज पोताना आत्माना कल्याण माटे आचार्य हरिभद्रे ते आदर्शमां जे जोयुं ते वधुं पोतानी मति प्रमाणे शुद्ध करीने लख्युं छे।

च नवकारपञ्जिका सिद्धचक्रादो—

'अतिमचूलाइ तिय सोलऽट्ठनवक्खराजुय चेव ।
जो पढइ भत्तिजुत्तो, सो पावइ सासय ठाण ॥'

एव च वाचनाद्वयेऽपि त्रयस्त्रिंशदक्षरप्रमाणचूलिकासहितो नमस्कारो भणनीय इत्युक्त भवति, तथा चोक्त बृहन्नमस्कारफले[1]—

'सत्त पण सत्त सत्त य, नवक्खर पमाण पयडपचपय ।
तित्तीसक्खरचूल, सुमरह नवकारवरमत ॥'

सिद्धान्तेऽपि स्फुटाक्षरै 'हवइ मगल' इति भणितम्, तथाहि महानिशीथचतुर्थाध्ययनसूत्र— "तहेव य तदत्थाणुगमिय इक्कारसपयपरिच्छिन्न तिआलावगतित्तीसक्खरपरिमाण 'एसो पचनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो । मगलाण च सव्वेसिं, पढम हवइ मगल' इय चूल" ति 'अहिज्जति' इति तत्र प्रकृत, तदेव 'हवइ मगल' इति अस्य साक्षादागमे भणितत्वात् प्रभुश्रीवज्रस्वामिप्रभृति-सुबहुबहुश्रुतसुविहितसविग्नपूर्वाचार्यसमतत्वाच्च पढम हवइ मगलमिति पाठेन अष्टषष्टिअक्षरप्रमाण एव नमस्कार पठनीय । तथा च महानिशीथे—

नमस्कारपजिका तथा सिद्धचक्र वगेरेमा कह्यु छे के "छेवटनी सोळ, आठ अने नव अक्षरनी त्रण चूलिकाओ सहित नवकारने भक्तिपूर्वक जे मनुष्य गणे छे ते शाश्वत स्थान-(मोक्ष)ने प्राप्त करे छे ।"

आ प्रमाणे बन्ने वाचना मुजब तेत्रीश अक्षरनी चूलिकासहित नवकार गणवो जोईए एम फलित थाय छे । बृहन्नमस्कारफलमा कह्यु छे के—"सात, पाच, सात, सात अने नव अक्षरना प्रमाणवाळा पाच पदो जेमा प्रगट छे तथा तेत्रीश अक्षरनी जेमा चूलिका छे तेवा नमस्कार महामत्रनु स्मरण करो ।"

सिद्धातमा पण स्पष्ट अक्षरोमा 'हवइ मगल' एवो पाठ जणावेलो छे । महानिशीथसूत्रना चोथा अध्ययनमा नीचे मुजब उल्लेख छे—"ते ज प्रमाणे तेना अर्थने अनुसरती अगियार पदनी त्रण आलावानी अने तेत्रीश अक्षरना परिमाणवाळी 'एसो पचनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो। मगलाण च सव्वेसिं पढम हवइ मगल' ए चूलिकानो पाठ गणवो ।" आ रीते 'हवइ मगल' एवो पाठ साक्षात् आगममा जणावेलो छे तेमज प्रभुश्री वज्रस्वामी वगेरे अनेक बहुश्रुत सुविहित सविग्न पूर्वाचार्योए ए पाठने मान्य करेलो छे तेथी 'पढम हवइ मगल' एवो पाठ अडसठ अक्षरो प्रमाणमा ज नवकारमत्र गणवो जोईए । महानिशीथसूत्रमां[3] कह्यु छे के—

---

१ 'बृहन्नमस्कारफलस्तोत्र' प्रस्तुत ग्रथमां 'पचनमुक्कारफलथुत्त' नामे पृ० ३६३ थी ३७८ सुधीमां छपायेल छे। तेमां आ ११७ मी गाथा छे ।

२ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० ४० प० १८

३ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ ५२, प ५ थी पृ ५३, प २४

"सो नमुक्कारो कइ पयाणि दस वा छ वा। तत्थ छ पयाणि– 'नमो[1] अरिहंत[2]-सिद्ध[3]-आयरिय[4]-उवज्झाय[5]-साहूणं[6]' ति, दश त्वेवं– 'नमो १, अरिहंताणं २, नमो ३, सिद्धाणं ४, इत्यादि,"

यत् पुनर्नमस्कारनिर्युक्तावशीतिपदमाना विंशतिर्गाथाः सन्ति यथा— 'अरिहंतनमुक्कारो, जीवं मोएइ भवसहस्साओ।' इत्यादयः ता नवकारमाहात्म्यप्रतिपादिकाः, न पुनर्नवकाररूपा भवितुमर्हन्ति, बहुपदत्वात् तासां, नवकारस्य तु नवपदाद्यात्मकत्वात्। किञ्च–तास्वपि गाथासु वर्षशतात् तद्‌द्वयाच्च पूर्वपूर्वतरप्रतिषु 'हवइ' इति पाठो दृश्यते, श्रीमलयगिरिणाऽप्यावश्यकवृत्तिं[1] कुर्वता वृत्तिमध्ये ता गाथा 'हवइ' इति पाठत एव लिखिताः, एतन्निश्चयार्थिना तद्वृत्तिर्निरीक्षणीया, इति परमार्थं ज्ञात्वा कदाग्रहाभिनिवेशादिविलसितकल्पितं आगमानुक्तं 'होइ' इति मुक्त्वा साक्षात् परमागमसूत्रान्तर्गतं श्रीवज्रस्वामिप्रभृतिदशपूर्वधरादिबहुश्रुतसंविग्नसुविहितव्याख्यासमादृतं 'हवइ' त्ति पाठयुतं अष्टषष्टिवर्णप्रमाणं परिपूर्णं नवकारसूत्रमध्येतव्यं, तच्चैवम्—

'नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं। एसो पंचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥'

अस्य च व्याख्यानं यदेव श्रीवज्रस्वाम्यादिभिः च्छेदग्रन्थादिमध्ये लिखितं तदेव भक्तिबहुमानातिशयतो विशेषतश्च भव्यसत्त्वोपकारकमिति दर्श्यते, तथाहि—

"नमुक्कार ते नमस्कार केटला पदनो छे? छ अथवा दस पद। तेमां छ पद आ प्रमाणे छेः—'नमो अरिहंत-सिद्ध-आयरिय-उवज्झाय-साहूणं' अने दस पद आ प्रमाणे छेः—'१ नमो २ अरिहंताणं ३ नमो ४ सिद्धाणं ५ नमो ६ आयरियाणं ७ नमो ८ उवज्झायाणं ९ नमो १० सव्व साहूणं'—

नवकारनिर्युक्तिमां ८० पदना प्रमाणनी 'अरिहंतनमुक्कारो जीवं मोएइ भवसहस्साओ' (गा० ९२३) वगेरे जे वीश गाथाओ जोवामां आवे छे ते नवकारनुं माहात्म्य प्रतिपादन करनारी छे, परंतु ते नवकाररूपे समजवानी नथी; कारणके एमां घणां पदो छे, ज्यारे नवकारमां तो नव ज पद छे। वळी ए गाथामां पण सो वर्ष तथा बसो वर्ष पूर्वेनी प्राचीन प्राचीनतर प्रतिओमां 'हवइ' एवो पाठ जोवामां आवे छे। आचार्य श्री**मलयगिरिए** पण **आवश्यकनिर्युक्ति** रचती वखते ते गाथाओने 'हवइ' एवा पाठ साथे लखेली छे। आ बाबतनी जेमणे खातरी करवी होय तेमणे **आवश्यकनिर्युक्ति** जोई लेवी। माटे परमार्थथी आ प्रमाणे वस्तुस्थिति छे एम समजीने (सुज्ञ मनुष्योए) बीजा कोईए कदाग्रह, अभिनिवेश वगेरेथी कल्पेलो तथा आगममां नहि कहेलो 'होइ' पाठ त्यजी दईने परम आगमसूत्रमां साक्षात् जणावेलो तथा श्री**वज्रस्वामी** वगेरे दश पूर्वधर वगेरे बहुश्रुत संविग्न सुविहित गीतार्थोए व्याख्या करीने मान्य करेलो 'हवइ' पाठवाळो ज अडसठ अक्षर प्रमाणनो संपूर्ण नवकार आ प्रमाणे गणवोः—

'नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्व साहूणं। एसो पंचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं॥'

आ नमस्कारमंत्रनी **वज्रस्वामी** वगेरेए **छेदसूत्र** वगेरे ग्रंथमां जे व्याख्या रची छे ते ज व्याख्या अमे अतिशय भक्ति तथा बहुमानथी प्रेराईने तेमज भव्य जीवोने विशेषतः उपकारक छे एम समजीने नीचे मुजब जणावीए छीएः—

---

१ जुओ-मलयगिरिरचित आवश्यकवृत्ति पृ० ५११

अन्नेहिपि सिद्धसेणदिवायर-वुड्ढवाई-जक्खसेण देवगुत्त-जसवद्धण-खमासमणसीसरविगुत्त-नेमिचद जिनदास गणिखमग- सच्चसिरिपमुहेहि जुगप्पहाणसुअहरेहि बहु मन्नियमिण " ति।

अन्यत्र तु सप्रति वर्त्तमानागमसूत्रमध्ये न कुत्राप्येव नवपदाष्टसपदादिप्रमाणो नमस्कार उक्तो दृश्यते, यतो भगवत्यादौ चेव पञ्चपदान्युक्तानि—

'नमो अरहताण, नमो सिद्धाण, नमो आयरियाण, नमो उवज्झायाण, नमो सव्वसाहूण नमो बभीए लिवीए' इत्यादि।

क्वचित् 'नमो लोए सव्वसाहूण' ति पाठ इति तद्वृत्ति। प्रत्याख्याननिर्युक्तौ तु–नमस्कार सहितप्रत्याख्यानपारणप्रस्तावे चूर्णाविदमुक्तम्– नमो अरिहताण ५ भणित्वा पारयति, नवकारनिर्युक्ति-चूर्णो त्वेवमुक्त, तथाहि–

अने वीजा पण सिद्धसेन दिवाकर, वृद्धवादी, यक्षसेन, देवगुप्त, यशोवर्धन क्षमाश्रमणना शिष्य रविगुप्त, नेमिचद्र, जिनदासगणि, क्षमक, सत्यश्री वगेरे युगप्रधान श्रुतधरोए एने बहुमान्य राखेलु छे।"

महानिशीथ सिवाय अत्यारे जे आगमसूत्रो वर्तमान छे एमा तो कोईपण स्थळे आ रीते नव पद अने आठ सपदा वगेरे प्रमाणवाळो नमस्कारमत्र जोवामा आवतो नथी, कारणके भगवतीसूत्र वगेरेमा तो पाच ज पद कहेला छे, जेमके–

'नमो अरहताण, नमो सिद्धाण, नमो आयरियाण, नमो उवज्झायाण, नमो सव्वसाहूण, नमो बभीए लिवीए' वगेरे।

तेनी (अभयदेवसूरिए) रचेली वृत्तिमा कहेलु छे के "कोईक प्रतिमा 'नमो लोए सव्वसाहूण' पाठ पण मळे छे" प्रत्याख्याननिर्युक्तिमा नमस्कारसहित(नोकारशी)नु पच्चक्खाण पारवाना प्रसगमा चूर्णिमा आ प्रमाणे कह्यु छे के "नमो अरिहताण ५ बोलीने पच्चक्खाण पारे"। नमस्कारनिर्युक्तिनी चूर्णिमा तो आ प्रमाणे कह्यु छे–

---

१ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १

२ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ ८, प १२,

३ भद्रबाहुस्वामिप्रणीत आवश्यकनिर्युक्तिमां 'प्रत्याख्यान' उपर जे निर्युक्ति छे तेटलो भाग 'प्रत्याख्याननिर्युक्ति'ना नामथी ओळखाय छे।

४ णमोक्कारं अकाऊण जेमेउ ण वट्टति तम्हा जेमणवेलाए भाणियव्व–नमो अरहताण मत्थएण वदामो खमासमणो! णमोक्कारं पारेमित्ति।—आवश्यकचूर्णि (उ भाग) पृ० ३१५

५ नमो अरिहताण पछी ५ अक लख्यो छे ते परथी 'नमो अरिहताण, नमो सिद्धाण, नमो आयरियाण, नमो उवज्झायाण, नमो लोए सव्वसाहूण' ए पांच पद समजवानां होय एम लागे छे।

६ भद्रबाहुस्वामीरचित आवश्यकनिर्युक्तिमां नवकार उपर जे निर्युक्ति छे तेटला भागने 'नमस्कारनिर्युक्ति' कहेवामा आवे छे।

७ आवश्यकचूर्णिमां पृ० ५०४ मां जे पाठ छपायेलो छे तेमां 'नमो अरहताण, सिद्धाण, आयरियाण, उवज्झायाण सव्वसाहूणं' ते प्रमाणे छ पद जणावेलां छे।

"सो पुण णमोक्कारो कति पदाणि? छ वा दस वा, तत्थ छप्पदाणि णमो अरहताण सिद्धाण आयरियाण उवज्झायाणं सव्वसाहूण एते छप्पदा, इमाणि दस पदाणि–णमो अरहंताण णमो सिद्धाणं एवं दस।"—आवश्यकचूर्णि (पूर्व भाग) पृ० ५०४

एतदर्थः—'वंदण' त्ति–सामान्येन वचःकायादिकृतस्तुत्यवनामनादीनि, उक्तं च चूर्णौ–प्रशस्तवागादीनां दानं वंदणं, नमस्यनानि अञ्जलिबन्धादिबहुमानादिप्रणिधानादिभिः सम्यग्मानादीनि, 'पूय' त्ति–गंधमाल्यादिभिः, उक्तं च उमास्वातिवाचकेन—'पूजाश्च गन्धमाल्याधिवासधूपदीपाद्यैः' अधिवासो युगपद् गंधमाल्यादिभिः पूजाविशेषः। दृष्टश्चायमन्यत्राप्यागमे गंधमाल्यपूजादिभ्यः पृथग्, तथा च द्वितीयोपाङ्गादौ "अग्गेहिं वरेहिं य गंधेहि मल्लेहिं य अच्चेइ २ पुप्फारुहणं मल्लारुहणं गंधारुहणमित्यादि जाव करेइ। सत्कारो जुवलिकाभरणादिभिः।"

तथाभव्यत्वपरिपाकादिना परमार्हन्त्यमहिमोपयोगपूर्वं सिद्धिगमनार्हास्तेभ्योऽर्हद्भ्यः नमः—नमस्कारो द्रव्यतो भावतश्च, मदीयो भवत्विति गम्यम्, भणितं च—

"इत्थ नमु त्ति पयं दव्व-भावसंकोयरूवपूयत्थं।
करसिरनमाई दव्वे मण पणिहाणाई भाव नमो ॥"

अहीं वंदन शब्दथी सामान्य रीते वचनथी करेली स्तुति तथा कायाथी करेलुं नमन वगेरे समजवां। चूर्णिमां[1] कह्युं छे के–"प्रशस्त वाणी वगेरेनुं जे दान ते वंदन अने हाथ जोडवा, बहुमान तथा प्रणिधान वगेरेथी सारी रीते जे सन्मान वगेरे करवुं ते नमस्यन समजवुं। गंध, माल्य वगेरेथी पूजा समजवी। उमास्वातिवाचके कह्युं छे के–"गंध, माल्य, अधिवास, धूप तथा दीप वगेरेथी पूजा करवी।" आमां एकी साथे गंध अने माल्य वगेरेथी जे पूजा करवामां आवे ते अधिवास-पूजा कहेवाय छे। आगममां पण अन्य स्थळे गंध, माल्य, पूजा वगेरेथी जुदो आ अधिवास नामनो पूजाविशेष जोवामां आवे छे। बीजा उपांग (राजप्रश्नीयसूत्र) वगेरेमां नीचे मुजब उल्लेख छे :—

"अग्गेहिं वरेहिं य गंधेहिं मल्लेहिं य अच्चेइ।
पुप्फारुहणं मल्लारुहणं गंधारुहणमित्यादि जाव करेइ।"[2]

जुवलिका तथा आभरण वगेरेथी जे पूजा करवामां आवे तेने सत्कार समजवो।

तथा भव्यत्वना परिपाक वगेरेथी परम आर्हन्त्य महिमाना उपयोगपूर्वक सिद्धिगमनने जे योग्य छे ते अरिहंत कहेवाय छे। ते अरिहंतोने द्रव्य तथा भावथी मारो नमस्कार हो। (आवश्यकनिर्युक्तिमां) कह्युं छे के–"अही 'नमो अरिहंताणं' मां 'नमो' ए पद द्रव्यसंकोच तथा भावसंकोचरूपी पूजाना अर्थमां छे। द्रव्यसंकोच एटले हाथ, मस्तक आदि अवयवोनो संकोच अने भावसंकोच एटले मननुं प्रणिधान वगेरे।"

---

१ अरिहति वंदणणमंसणाणि० ॥ ९-३५ ॥ ९२१ ॥ वंदणं सिरसा, णमंसणं वयसा, पूया वत्थादीहि, सक्कारो अब्भुट्ठादीहिं। आवश्यकचूर्णि पूर्वभाग पृ० ५३७

२ राजप्रश्नीयसूत्र ४३ मा आ पाठ छूटो छूटो नीचे मुजब मळे छे—"पुप्फारुहण मल्लारुहणं गंधारुहणं—चुण्णारुहणं वन्नारुहणं वत्थारुहणं आभरणारुहणं करेइ"

आ पाठ पछी थोडे दूर गया बाद नीचे प्रमाणे पाठ छे—"सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालेइ पक्खालित्ता अग्गेहिं वरेहि गंधेहि य मल्लेहि य अच्चेइ धूवं दलयइ।"

'से भयवं ! किमेयस्स अचिंतचिंतामणिकप्पभूयस्स पंचमंगलमहासुअक्खंधस्स सुत्तत्थं पन्नत्तं ? गोयमा ! इय एयस्स अचिंतचिंतामणिकप्पभूअस्स पंचमंगलमहासुअक्खंधस्स णं सुत्तत्थं पन्नत्तं, तं जहा—जे णं पंचमंगलमहासुअक्खंधे से णं सयलागमंतरोववत्ती तिलतिल्लं १ कमलमयरंद २ सव्वलोअपंचत्थिकायमिव ३ जहत्थकिरियाणुगायसब्भूयगुणकित्तणे जहिच्छियफलपसाहगे चेव परमथुइवाए।

सा य परमथुई केसिं कायव्वा ?

सव्वजगुत्तमुत्तमाणं, सव्वजगुत्तमुत्तमे य जे केइ भूए, जे केइ भवंति, जे केइ भविस्संति ते सव्वेवि अरहंतादओ चेव, नो णमन्ने त्ति, ते य पंचहा—अरिहंते १ सिद्धे २ आयरिए ३ उवज्झाए ४ साहुणो ५।

तत्थ एएसिं चेव गब्भत्थसब्भावो इमो, तं जहा—सनरामरासुरस्स णं सव्वस्सेव जगस्स अट्ठमहापाडिहेराइपूयाइसउवलक्खिअं अणन्नसरिसमचिंतमप्पमेयं केवलाहिट्ठिअं पवरुत्तमत्तं अरहंत त्ति, वंदणादि ते अरहंता आह च—

'अरहंति वंदणनमंसणाणि अरिहंति पूअसक्कारं।
सिद्धिगमणं च अरहा, अरहंता तेण वुच्चंति ॥'

"(प्र०) 'भगवन् ! आ अचिंत्यचिंतामणि समा पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधना सूत्रनो अर्थ शो छे ?'

(उ०) 'गौतम ! आ अचिंत्यचिंतामणि तुल्य पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधना सूत्रनो अर्थ आ प्रमाणे छे—जेम तलमां तेल छे, कमलमां मकरंद छे अने सकल लोकमां जेम पांच अस्तिकाय व्यापीने रहेला छे तेम पंचमंगलमहाश्रुतस्कंध सर्व आगमोमां व्यापीने रहेलो छे, यथार्थ क्रियानुगत सद्भूत गुणोनी स्तुतिरूप छे, तथा यथेच्छित फळने सिद्ध करनार परम स्तुतिवाद छे।'

'आ परमस्तुति कोनी करवी जोईए ?'

सर्व जगतमां जे उत्तमोत्तम होय तेनी स्तुति करवी जोईए। सर्व जगतमां उत्तमोत्तम जे कोई थया छे, थाय छे अने थशे ते बधा अरिहंत वगेरे ज छे। अरिहंत वगेरे सिवाय सर्व जगतमां बीजा कोई उत्तमोत्तम नथी। ते अरिहंत वगेरे पांच प्रकारे छे—अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु।

आ बधानो रहस्यभूत अर्थ आ प्रमाणे छे—मनुष्य, अमर तथा असुर सहित सर्व जगतमां जेओ आठ महाप्रातिहार्य वगेरे पूजातिशयथी उपलक्षित, बीजामां न होय तेवी, अचिंत्य माहात्म्यवाळी तथा केवलज्ञानथी युक्त श्रेष्ठ उत्तमताने योग्य छे तेओ अरिहंत कहेवाय छे।"

(महानिशीथसूत्र)[1]

वंदन वगेरेने जे योग्य छे तेओ अरिहंत कहेवाय छे। (आवश्यकनिर्युक्तिमां[2]) कह्युं छे के—"वंदन, नमस्कार, पूजा, सत्कार तथा सिद्धिगमनने योग्य होवाथी अरहंत कहेवाय छे"

१ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ ४१ पं ४ थी पृ ४२, पं १५
२ आवश्यकनियुक्ति गा० ॥ ९२१ ॥ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० ११२

अडविं सपच्चवायं, वोलित्ता देसिओवएसेणं । पावेंति जहिट्ठपुरं भवाडविं पी तहा जीवा ॥
पावेंति निव्वुइपुरं, जिणोवइट्ठेण चेव मग्गेणं । अडवीइ देसियत्तं, एवं नेयं जिणिंदाणं ॥
जह तमिह सत्थवाहं, नमइ जणो तं पुरं तु गंतुमणो । परमुवगारित्तणओ, निव्विग्घत्थं च भत्तीए ॥
अरिहो उ नमुक्कारस्स भावओ खीणरागमयमोहो । मुक्खत्थीणं पि जिणो, तहेव जम्हा अओ अरिहा ॥
संसारअडवीए, मिच्छत्तऽन्नाणमोहिअपहाए । जेहि कयं देसिअत्तं, ते अरिहंते पणिवयामि ॥
सम्मद्दंसणदिट्ठो, नाणेण य तेहिं सुट्ठु उवलद्धो । चरणकरणेण पहओ, निव्वाणपहो जिणिंदेहिं ॥
सिद्धिवसहिमुवगया, निव्वाणसुहं च ते अणुप्पत्ता । सासयमव्वावाहं, पत्ता अयरामरं ठाणं ॥
पाविंति जहा पारं सम्मं निज्जामया समुद्दस्स । भवजलहिस्स जिणिंदा, तहेव जम्हा अओ अरिहा ॥
मिच्छत्तकालियावायविरहिए सम्मत्तगज्जभपवाए । एगसमएण पत्ता, सिद्धिवसहिपट्टणं पोआ ॥
निज्जामगरयणाणं, अमूढनाणमइकण्णधाराणं । वंदामि विणयपणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥

अनेक विघ्नोवाळी अटवीने ओळंगवामां साचा मार्गनो उपदेश करवाथी जेम जीवो पोताने इष्ट एवा नगरमां पहोंचे छे तेम भवरूप अटवीमांथी पण मुक्तिरूप नगरीमां पहोंचे छे ।

जिनेश्वरोए उपदेशेला मार्गथी जीवो निर्वृत्तिपुर–मोक्षपुरमां पहोंचे छे । आथी जिनेश्वरो संसाररूप अटवीमां उपदेशकरूप छे, एम समजाय छे ।

जेवी रीते (कोई) सार्थवाह ते ते नगरमां जवानी इच्छावाळा मनुष्योने मार्ग वतावावाना कारणे ते मनुष्यो सार्थवाहने भक्तिपूर्वक नमे छे तेम राग, द्वेष अने मोह जेना नष्ट थई गया छे एवा जिनेश्वर भगवान पण मोक्षार्थीओने निर्विघ्नपणे मोक्षमार्गे लई जवाना कारणे भावथी नमस्कारने योग्य छे । ए ज कारणे तेओ अर्हत्–अरिहंत कहेवाय छे ।

(तेथी) मिथ्यात्व अने अज्ञानथी मोहित वनेल पंथवाळी संसाररूप अटवीमां जेमणे उपदेशकपणुं कर्युं छे ते अरिहंतोने हुं नमस्कार करूं छुं ।

श्रीजिनेश्वर भगवंतोए सम्यग्दर्शनथी जोयेलो, ज्ञानथी सारी रीते जाणेलो अने चरण–करण वडे सेवेलो एवो निर्वाणमार्ग छे ।

सिद्धिवसतिए पहोंचीने तेमणे (जिनेश्वरोए) जे शाश्वत वाधा-पीडा रहित, अजर अने अमर स्थान छे तेवा निर्वाणसुखने प्राप्त कर्युं छे ।

समुद्रमां वहाणना निर्यामको एटले कर्णधारो सारी रीते पार पहोंचाडे छे ते रीते जिनेश्वरो पण भवरूप समुद्रनी पार पहोंचाडे छे तेथी तेओ अरिहंत–नमस्कारने योग्य–छे, एम कहेवाय छे ।

समुद्रमां जेम कालिकावात न होय पण गर्जभनो अनुकूळ वायु होय तो कुशळ कर्णधारो साथेनुं, छिद्र विनानुं वहाण इच्छित नगरे पहोंचे छे तेम मिथ्यात्वरूप कालिकावातथी रहित अने सम्यक्त्वरूप गर्जभ वायुनी अनुकूळताथी एक ज समयमां वहाणो सिद्धिवसतिरूप नगरने पहोंचे छे ।

यथार्थ ज्ञान अने मति ए ज जेमना कर्णधार स्वरूप छे अने जेओ त्रिदंड (मन, वचन अने कायाना दंड)थी रहित छे एवा निर्यामकरत्नस्वरूप अरिहंतोने त्रण प्रकारे (मन, वचन अने कायाथी) विनयथी नमीने वंदन करूं छुं ।

नमोयोगे चतुर्थीप्राप्तो षष्ठीह प्राकृतवशाद् , बहुवचन सर्वकालिकार्हत्प्रतिपत्त्यर्थम् । तत्रातीता केवलज्ञानिप्रभृतय , अनागता पद्मनाभादय , वर्तमाना ऋषभादय सीमन्धरादयो वा, अथवा अर्हद्भ्य —स्तवनादियोग्याना सर्वेषामपि मध्ये प्रधानेभ्य , सर्वगुणसम्पूर्णतया सर्वोत्तमत्वात्, आह च–

'देवासुरमणुएसु, अरिहा पूआसुरुत्तमा जम्हा ।'[1] तथा—

'अरिहा थुणा उचिय त्ति सुगुणपुन्नत्तणा ययाईण ।
तेसु वि अन्ता पगरिसपत्ता जमिहेरसानने ॥'

भीमभवगहनभ्रमणभीतभूतानामनुपमानन्दरूपपरमपुरपथप्रदर्शकत्वेन सार्थवाहादिभ्य परमोपकारित्वाच्च, उक्त च निर्युक्तौ—

" अडवीइ देसिअत्त, तहेव निज्जामया समुद्दम्स । छक्कायरक्खणट्ठा, महगोवा तेण वुच्चंति ॥

'नमो' शब्दना योगमा (सस्कृत) व्याकरणना नियम मुजब चतुर्थी विभक्ति थवी जोईए, छता ('अरिहताण' शब्दमा) प्राकृतभाषा होवाने लीधे षष्ठी विभक्तिनो प्रयोग करेलो छे । 'अरिहताण' मा बहुवचनथी सर्व काळना अरिहतो समजवाना छे । तेमा अतीतकाळना केवळज्ञानी वगेरे तीर्थंकरो समजवा । 'पद्मनाभ' वगेरे भविष्यकाळना अने 'ऋषभदेव' वगेरे तथा 'सीमधरस्वामी' वगेरे वर्तमानकाळना तीर्थंकरो समजवा । अथवा अरहताणनो अर्थ 'अर्हान्तेभ्य ' एम लेवो । अर्थात् 'अर्ह' एटले 'स्तुति' आदिने योग्य जे पुरुषो ते बधामा ('अत' एटले) श्रेष्ठ एवा अरिहत भगवतोने नमस्कार हो, कारणके तेओ सर्व गुणोथी सपूर्ण होवाने लीधे सर्वोत्तम छे । (आवश्यकनिर्युक्ति गाथा न ९२२ मा) कह्यु छे के—

"देवो करता पण उत्तम होवाने लीधे देव, असुर तथा मनुष्योथी कराती पूजाने प्राप्त करे छे तेथी अरिहत कहेवाय छे ।" तथा कह्यु छे के—"सद्गुणोथी पूर्णपणाने लीधे जे पुरुषो स्तुति आदिने योग्य होय तेओ 'अर्ह' कहेवाय छे अने तेमा अत एटले प्रकर्षने पामेला होवाथी अरिहतो 'अर्हान्त' पण कहेवाय छे, कारणके तेमना जेवा बीजा कोई श्रेष्ठ पुरुषो होता नथी ।"

भयकर ससाररूपी अटवीमा परिभ्रमण करवाथी भय पामेला प्राणीओने अनुपम आनदरूप जे परमपुर (मोक्षना) मार्गने दर्शावनार होवाने लीधे अरिहत भगवतो सार्थवाह वगेरेथी पण परम उपकारी छे, तेथी तेओ जगतमा सर्वोत्तम छे । (आवश्यक) निर्युक्तिमा कह्यु छे के—

"अरिहतोए (ससाररूप जगलमा भूला पडेला मानवीओने) मार्ग बताव्यो ते कारणे तेओ 'मार्गदर्शक' कहेवाय छे । तेओ ससाररूप समुद्रमा डूबता अगर खोटवाई गयेला नावने पार पहोंचाडवामा कर्णधारपणु करता होवाना कारणे 'निर्यामक' कहेवाय छे अने ते भगवतो छ काय जीवोना रक्षण माटे प्रयत्न करता होवाने कारणे 'महागोप' कहेवाय छे ।

1 आवश्यकनिर्युक्ति पूर्व भाग गा० ९२२ । आवी गाथा माटे जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० १३३ [देवासुरमनुजेभ्य पूजामर्हन्ति–प्राप्नुवन्ति तद्योग्यत्वात्, सुरोत्तमत्वादिति युक्ति —आ नि गा ९२२ टीका]

तच्चानेकविधत्वमेवं भगवत्यादावुक्तं—

'अरहोन्तर्भ्यः' अविद्यमानं रहः—एकान्तरूपो देशोऽन्तश्च— मध्यं गिरिगुहादीनां सर्ववेदितया समस्तवस्तुस्तोमगतप्रच्छन्नत्वस्याभावेन येषां ते अरहोऽन्तरस्तेभ्यः, यदाह—

"नत्थि व रहो य छन्नं, अंतो मज्झं च सयलवत्थूणं ।
पर-अवरभागवेइत्तणेण जेसिं ति अरहंता ॥"

अथवा अत्यर्थ राजन्ते समवसरणादिबहिर्लक्ष्म्या सज्ज्ञानाद्यान्तरलक्ष्म्या वा, रान्ति सद्दर्शनादि, घ्नन्ति च मोहादीन्,गच्छेन्ति वा तदुपकृत्यै ग्रामानुग्रामं तन्वन्ति च धर्मदेशनां, तायन्ते तारयन्ति वा सर्वजीवानिति निरुक्तिवशादरहन्तास्तेभ्यः, अथवा अरहयन्भ्यः प्रकृष्टरागादिहेतुभूतमनोज्ञेतरविषयसंपर्केऽपि क्वचिदप्यासक्तिमगच्छद्भ्यः क्षीणरागत्वात्, यद्वा अरहयद्भ्यः सिद्धिगतावप्यनन्तज्ञानमयत्वाद् आत्मस्वभावमत्यजद्भ्यः 'रह त्यागे' इति वचनात्, अनेकार्थत्वाद् वा धातूनामवस्थित्यर्थे,

आ अनेक रीते जे व्याख्या करवामां आवे छे ते **भगवती(सूत्रनी वृत्ति)**[1] वगेरेमां नीचे मुजब जणावेली छे :—

"अथवा अहीं 'अरहंताणं' नो 'अरहोन्तर्भ्यः' एवो अर्थ पण नीकळे छे । 'रहः' एटले एकान्तरूप गुप्त प्रदेश अने 'अंतर्' एटले पर्वतनी गुफा वगेरेनो मध्यभाग । भगवान सर्वज्ञ होवाने लीधे जगतनी सर्व वस्तुओ पैकी कोईपण वस्तु एमनाथी गुप्त होती नथी, तेथी भगवानने 'रहः' तथा 'अंतर्' न होवाथी भगवान 'अरहोन्तर्' कहेवाय छे । आवा 'अरहोन्तर्' (अरहंत) भगवानने नमस्कार हो ।" कह्युं छे के—"जेमने कशुं छानुं नथी तेमज समग्र वस्तुओना पर-अपर भागोने जाणता होवाने लीधे जेमने कंई मध्य नथी तेओ 'अरहंत' कहेवाय छे ।"

अथवा समवसरण आदि बहारनी शोभाथी तेमज साचा ज्ञानरूप आंतरिक शोभाथी जेओ अत्यंत शोभे छे तथा मोह वगेरेने जेओ हणे छे तेओ 'अरहंत' कहेवाय छे । अथवा जेओ सर्व जीवोना उपकारने माटे एक गामथी बीजे गाम विचरे छे, धर्मदेशना आपे छे, सर्व जीवोनुं रक्षण करे छे तथा तेमने तारे छे तेओ 'अरहंत' कहेवाय छे । अथवा मोक्षमां गया पछी पण अनंत ज्ञानमय होवाने लीधे पोताना आत्मस्वभावने नहीं त्यजता तेवा अरहंत भगवंतोने नमस्कार हो । अथवा 'अरहंताणं' नो अहीं 'अरहयन्भ्यः' एवो अर्थ समजवो । अर्थात् रागनो क्षय थयो होवाथी प्रकृष्ट राग तथा द्वेषना कारणभूत अनुक्रमे मनोहर के अमनोहर विषयनो संपर्क थवा छतां पण कोईपण पदार्थ उपर आसक्ति नहीं पामता एवा अरहंत भगवंतोने मारो नमस्कार हो । अथवा 'रह्' धातुनो 'त्याग' एवो पण अर्थ थाय छे । एटले मोक्षमां गया पछी पण अनंत ज्ञानमयपणुं तेमने विद्यमान होय छे तेथी आत्मस्वरूपनो त्याग नहीं करता अरहंत भगवंतोने नमस्कार हो । अथवा धातुना अनेक अर्थो थता होवाथी 'रह्' धातुनो 'अवस्थान' एवो अर्थ समजवो ।

१ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० २, पं. १३ थी पृ. ३, पं. २२ ।

पालेंति जहा गावो, गोवा अहि (इद[२]) सावयाइदुग्गेहि। पउरतणपाणि आणि य, वणाणि पावेंति तह चेव ॥ जीवनिकाया गावो, ज ते पालति ते महागोवा। मरणाइ भयाउ तहा निव्वाणसुह (वण[२]) च पावति ॥ तो उवगारित्तणओ, नमोऽरिहा भवियजीवलोगस्स। सव्वस्सेह जिणिंदा, लोगुत्तमभावओ तह य ॥[१]"

उपदेशित्वादेव च प्रथममर्हता नमस्कार, आह च—

"अरिहतुवएसेण, सिद्धा नज्जति तेण अरिहाई।"[२]

अथवा अरिहताण ति पाठ, तत्राह—'निम्महिय–निहय–निद्दलिय पेल्लिय निद्दविअ-अभिभूअ सुदुज्जयासेसअट्ठपयारकम्मरिउत्ताओ वा अरिहता।'

अरुहता वा पाठ, असेसकम्मक्खण्ण निदड्ढभवकुरत्ताओ न पुणेह रुहति—जम्मति उववज्जति वा अरुहता, एवमेए अणेगहा पन्नविज्जति परूविज्जति आघविज्जति पट्ठविज्जति निदसिज्जति उवदसिज्जति।

जेम गोवाळियो गायोनु सर्प, जगली पशुओ वगेरेना कष्टोथी रक्षण करे छे अने घास तेमज पाणीथी भरेला जगलमा लई जाय छे तेम जीवसमूहरूप गायोनु मरण वगेरे भयोथी जिनेश्वरो रक्षण करे छे अने तेमने निर्वाणस्वरूप वनमा लई जाय छे। ए रीते जिनेश्वरो सर्व भव्य जीवलोकनो उपकार करता होवाथी लोकोत्तम पुरुषनी भावनाथी नमस्कारने योग्य छे।"

उपदेशक होवाने लीधे प्रथम अरिहतने नमस्कार करवामा आवे छे (आवश्यकनिर्युक्ति गा १०२१) मा कह्यु छे के—"अरिहतना उपदेशथी ज सिद्धोनु ज्ञान थाय छे तेथी पचपरमेष्ठिमा अरिहतो आदि (प्रथम) छे।"

अथवा 'अरिहताण' एवो पण पाठ छे। ते सबधमा (महानिशीथसूत्रमा)[३] कह्यु छे के—"दु खे करीने समजी शकाय एवा आठ प्रकारना कर्मरूपी समग्र शत्रुओने मथी नाख्या होवाथी, हणी नाख्या होवाथी, दळी नाख्या होवाथी, पीली नाख्या होवाथी, खलास करी नाख्या होवाथी अने पराजित कर्या होवाथी तेओ अरिहत पण कहेवाय छे।"

'अरुहताण' एवो पाठ पण छे। सर्व कर्मोनो क्षय थई जवाथी ससारना अकुराओ बळी गया होवाने लीधे जेओ फरीवार ऊगता नथी अर्थात् जन्म लेता नथी, उत्पन्न थता नथी तेओ 'अरुहत' पण कहेवाय छे। आ प्रमाणे अनेक रीते तेओनी प्रज्ञापना, प्ररूपणा, उपदेश, प्रस्थापना, निदर्शन तथा उपदर्शन कराववामा आवे छे। (अर्थात् अनेकरीते तेमनी व्याख्या करवामा आवे छे।)

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति पूर्व भाग गा० ९०४ थी ९१७। जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १२७ थी १३०।

२ आवश्यकनिर्युक्ति गा० १०२१। आखी गाथा माटे जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १५९।

३ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ ४२ प १७–१८।

अरिणा वा धर्मचक्रेण भान्तस्तेभ्यः, अरिसमुपलक्षिताखिलहत[१]हेतिसंहतिहानिकृद्भ्यो वा, आह च—

"अरिणा व धम्मचक्केण, भंति सोहंति ते उ अरिहंता ।
अरिउवलक्खियसत्थे जहंति व चयंति अरिहंता ॥"

'अरुहंताणं' ति तु पाठे—

"दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः ।
कर्मबीजे तथा दग्धे, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः (न रोहति भवाङ्कुरः) ॥"

अरुरुपलक्षितपीडादिकृद्रोगादि तत्कारणभूत कर्मादि च घ्नन्ति वा अरुहंतारः तेभ्य अरुहन्तृभ्यः, अरुन्धद्भ्यो वा आवरणाभावेन पुनर्भवेऽवरोधाभावादित्यादि ।

तथा **'नमो सिद्धाणं'** परमानन्दमहूसवमहाकल्लाणनिरुवमसुक्खाणि सिद्धाणि निप्पकंपसुक्कज्झाणाइअचिंतसत्तिसामत्थओ सजीववीरिएणं जोगनिरोहणाइणामहापयत्तेणमेसिं ति सिद्धा १, अट्ठपयारकम्मक्खएण

अथवा 'अरि'[२] एटले धर्मचक्रवडे शोभता अरिहंत भगवंतने नमस्कार थाओ । अथवा अहीं अरि शब्द उपलक्षणरूप छे अर्थात् 'अरि' एटले जे सर्व विनाशक शस्त्रो तेना समुदायनो त्याग करनारा ते अरिहंत कहेवाय छे । कह्युं छे के—"अरि एटले धर्मचक्रथी जेओ शोभे छे अने अरिथी उपलक्षित जे शस्त्र तेनो त्याग करे छे ते अरिहंत कहेवाय छे ।"

'अरुहंताणं' ए पाठमां (आ प्रमाणे अर्थ समजावो के 'फरीथी जन्म नहि धारण करता' अरुहंत भगवंतने मारो नमस्कार हो । कह्युं छे के–) "जेम बीज अत्यंत बळी गया पछी अंकुरो उत्पन्न थतो नथी ते प्रमाणे कर्मबीज बळी गया पछी संसाररूपी अंकुरो प्रगट थतो नथी ।"

अथवा 'अरु' ए उपलक्षणरूप छे एटले पीडा वगेरे करनार रोगादि अने तेना कारणभूत कर्मादिनो नाश करे छे ते अरुहंत–तेमने मारो नमस्कार हो । अथवा 'अरुहंताणं' नो अर्थ 'अरुन्धद्भ्यः' थाय छे एटले के आवरणना अभावने लीधे अवरोध नहि करता अरुहंत भगवानने मारो नमस्कार हो, कारणके फरीथी संसारमां तेमनो अवरोध होतो नथी ।...... वगेरे अनेक अर्थो थाय छे ।

नमो सिद्धाणं—

"निष्प्रकंप (अचल) शुक्लध्यान वगेरेनी अचित्य शक्तिना सामर्थ्यथी सजीव वीर्य वडे योगनिरोध वगेरेथी महाप्रयत्ने परम आनंदरूप, महा उत्सवरूप, महा कल्याणरूप निरुपम सुखो जेमने सिद्ध थया छे ते 'सिद्ध' कहेवाय छे । अथवा आठ प्रकारना कर्मोनो क्षय

---

१ हेतिः अस्त्रम्, हति· शस्त्रं विघ्नं वा, संहति· विनाश· ।
२ 'अर' एटले आरा अने आरा जेमा होय ते 'अरि' अथवा 'चक्र' ।

अरहयद्भ्य सर्वकर्मक्षयानन्तरसमय एव लोकाग्रगमनाद् भवमध्येऽतिष्ठद्भ्य , भणित च—

“ न रहन्ति व न चयन्ती नाणाइ सिवेऽवि तेउ अरिहता ।
न रहन्ति न चिट्ठन्ति य भवम्मि ज तेण अरिहता ॥”

यदा 'अरथान्तेभ्य ' अविद्यमानो रथ—स्यन्दन सकलपरिग्रहोपलक्षणभूतोऽन्तश्च—विनाशो जराद्युपलक्षणभूतो येषा ते अरथान्ता 'खघथधभाम्'† इतिसूत्रात् थस्य हत्वे अरहता, भणित च—

“ सगुवलक्खणभूओ रहो अ जाण न जेसि अतो य ।
नासो जराइउवलक्खण तु ते हुति अरहता ॥”

अरभमानेभ्यो वा— अतुच्छस्वच्छतादिभावमयत्वेन राभसिकवृत्त्यादिनिवृत्तेभ्य इत्यादिव्याख्यान्तराण्यपि भावनीयानि ।

अरिहताणमिति वा पाठे इन्द्रियविषयाद्यरिहन्तृभ्य , न्यगादि च—

“ इदियविसयकसाए, परीसहे वेयणा य उवसग्गे ।
रागद्दोसे कम्मे, अरी हणतीति अरिहता ॥”

अर्थात् 'अरहयद्भ्य ' एटले सर्व कर्मनो क्षय थया पछी तरतना समये लोकना अग्रभागे जता होवाथी जेओ ससारनी अन्दर रहेता नथी तेवा अरहत भगवतोने मारो नमस्कार हो । कह्यु छे के—

"मोक्षमा गया पछी ज्ञानादिने त्यजता नथी ते अरिहत कहेवाय छे तथा ससारमा रहेता नथी तेथी पण तेओ अरिहत कहेवाय छे ।"

अथवा अहीं 'अरहताण' नो 'अरथान्तेभ्य ' एवो अर्थ पण नीकळे छे । 'रथ' शब्दनो उपलक्षणथी 'सर्व प्रकारनो परिग्रह' एवो अर्थ समजवो । 'अत' एटले 'विनाश' तथा उपलक्षणथी (जन्म) जरा वगेरे समजवा । अर्थात् 'रथ' एटले 'सर्व प्रकारनो परिग्रह' अने 'अत' एटले जन्म-जरा-मृत्यु जेमने नथी तेओ 'अरथान्त' कहेवाय छे । 'खघथधभाम्' ए प्राकृत सूत्रथी 'थ' नो 'ह' थवाथी 'अरथान्त' नु 'अरहत' एवु रूप बने छे । कह्यु छे के—

"परिग्रहना उपलक्षणभूत जेमने 'रथ' एटले 'वाहन' नथी अने जरा वगेरेना उपलक्षणभूत जेमने अत (एटले नाश) नथी ते अरहत कहेवाय छे ।"

अथवा 'अरभमानेभ्य ' एवो पण अर्थ नीकळे छे । अर्थात् अत्यत श्रेष्ठ स्वच्छता वगेरे भावोवाळा होवाथी जेओ राभसिक वृत्ति (उतावळियापणु) वगेरेथी निवृत्त थयेला छे तेमने मारो नमस्कार हो । आ वगेरे बीजी व्याख्याओ पण समजी लेवी ।

अथवा 'अरिहताण' ए पाठमा इद्रिय, विषय वगेरे शत्रुओने हणनारा अरिहत भगवतोने मारो नमस्कार हो—ए प्रमाणे अर्थ समजवो । कह्यु छे के—

"इद्रिय, विषय, कषाय, परीषह, वेदना, उपसर्ग, राग, द्वेष तथा कर्मरूपी शत्रुओनो नाश करे छे ते अरिहत कहेवाय छे ।"

---

† जुओ –'श्रीसिद्धहेमचद्रशब्दानुशासनम्' अध्याय ८, पाद १, सूत्र ॥ १८७ ॥

प्रागवद् विशेषाद् व्याख्या इमा । यथा–

'षिधू गत्याम्' षेधन्ति स्म–अपुनरावृत्त्या निर्वृतिपुरीमगच्छन्, अथवा 'षिधूं च संराद्धौ' सिद्ध्यन्ति स्म–निष्ठितार्था भवन्ति स्म, यदिवा 'षिधू शास्त्रमाङ्गल्ययोः' सेधन्ति स्म–शासितारोऽभूवन् माङ्गल्यरूपतां चानुभवन्ति स्मेति सिद्धाः, अथवा सिद्धा–नित्या अपर्यवसानस्थितिकत्वात् प्रख्याता वा भव्यैरुपलब्धगुणसन्दोहत्वात्, उक्तं च––

" ध्मातं सितं येन पुराणकर्म्म, यो वा गतो निर्वृतिसौधमूर्ध्नि ।
ख्यातोऽनुशास्ता परिनिष्ठितार्थो, यः सोऽस्तु सिद्धः कृतमङ्गलो मे ॥"

तेभ्यो नमः इत्यादि प्राग्वत् । नमस्करणीयता चैषामविप्रणाशिज्ञान-सुख-वीर्यादिगुणयुक्ततया स्वविषय-प्रमोदप्रकर्षोत्पादनेन भव्यानामतीवोपकारहेतुत्वादिति ।

तथा **'नमो आयरियाणं'** अट्ठारससीलंगसहस्साहिट्ठियतणू छत्तीसइविहमायारं जहट्ठियमगिलाए अहन्निसाणुसमयं आयरंति पवत्तयंति आयरिया १,

---

'अरिहंत' पदमां जेम अनेक प्रकारे व्याख्या करी हती तेम 'सिद्ध' पदनी व्याख्या पण नीचे मुजब अनेक प्रकारे थाय छे, जेमकेः–

'षिध्' धातुनो अर्थ 'गति' थाय छे । एटले जेओ फरीथी पाछा फरवुं न पडे ए रीते मोक्षनगरीमां गया छे ते 'सिद्ध' कहेवाय छे । अथवा 'षिध्' नो 'संराद्धि' अर्थ थाय छे एटले जेओ निष्ठितार्थ (कृतार्थ) थयेला छे तेओ 'सिद्ध' कहेवाय छे । अथवा 'षिध्' धातुनो अर्थ 'शास्त्र' अने 'मांगल्य' थाय छे एटले जेओ शासक थया अने जेओ मांगल्यरूपताने पाम्या ते 'सिद्ध' कहेवाय छे । अथवा सिद्ध एटले 'नित्य', कारणके तेमनी स्थिति अनंत होय छे । अथवा सिद्ध एटले प्रख्यात; कारणके भव्य जीवो एमना गुणसमूहने सारी रीते जाणता होय छे । कह्युं छे के–

"बांधेलुं प्राचीन कर्म जेमणे बाळी नाख्युं छे, जेओ मोक्षरूपी महेलनी टोच उपर जईने बेठेला छे, जेओ प्रसिद्ध छे, जे अनुशासन करनार छे अने जेओ कृतार्थ छे ते सिद्ध भगवान मने मंगल करनारा थाओ ।" आवा सिद्ध भगवंतोने मारो नमस्कार हो । सिद्ध भगवंतो अविनाशी ज्ञान–दर्शन–सुख–वीर्य वगेरे गुणोथी युक्त होवाने लीधे तेमना प्रति उत्कृष्ट आनंद उत्पन्न थाय छे । आ रीते तेओ आनंदने उत्पन्न करनारा होवाथी भव्य जीवोने अत्यंत उपकार करनारा छे । तेथी सिद्ध भगवंतो नमस्करणीय छे ।

नमो आयरियाणं

"अढार हजार शीलांगने धारण करनारा छत्रीश प्रकारना आचारने यथास्थित रीते ग्लानि विना रात अने दिवस प्रतिसमय जेओ आचरे छे अने प्रवर्तावे छे ते 'आचार्य' कहेवाय छे"

(महानिशीथसूत्र)[1]

---

१ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ. ४३, पं ११–१२ ।

वा [1]सिद्ध सज्झमे एसिं ति सिद्धा २, सिय–बद्ध कम्म आज्झाय–भसमीभूयमेएसिमिति वा सिद्धा ३, अत्र गाथा–

" दीहकालरय ज तु कम्म से सिअमट्टहा ।
सिअ धतंति सिद्धस्स सिद्धत्तमुवजायइ ॥"[2]

सिद्धे निट्ठिए पहीणे सयलपओयणजाए कय वा एएसिमिति वा सिद्धा ॥ ४ ॥ एवमेए इत्थी-पुरिस-नपुसग-मुणिलिंग-अन्नलिंग गिहिलिंग-पत्तेयबुद्ध बुद्धबोहिय जाव ण कम्मक्खयसिद्धाइभेएहि ण अणेगहा पन्नविज्जति इत्यादि,

अत्र गाथा—

" तित्थातित्थ जिणाजिण-गिहि-ऽन्नमुणिलिंग थी-नर-नपुसा ।
पत्तेय सयबुद्धा बुद्ध बोहिय अणेग-इग सिद्धा ॥"

थवाथी जेमने साध्य 'सिद्ध' थयेलु छे ते सिद्ध कहेवाय छे । अथवा बाधेलु कर्म जेमनु भस्मीभूत थई गयु छे ते सिद्ध कहेवाय छे" (महानिशीथसूत्र)[3]

(आवश्यकनिर्युक्तिमा) गाथा छे के–"दीर्घस्थितिवाळु आठ प्रकारनु बाधेलु जे कर्म तेने ध्यानरूपी अग्निथी भस्मीभूत कर्युं होवाथी सिद्धने सिद्धपणु प्राप्त थाय छे ।"

"अथवा जेमना सकल प्रयोजनो अने कार्य परिपूर्ण थया छे ते सिद्ध कहेवाय छे । आ प्रमाणे स्त्रीलिंगसिद्ध, पुरुषलिंगसिद्ध, नपुसकलिंगसिद्ध, मुनिलिंगसिद्ध, अन्यलिंगसिद्ध, गृहस्थलिंग-सिद्ध, प्रत्येकबुद्धसिद्ध, बुद्धबोधितसिद्ध यावत् कर्मक्षयसिद्ध वगेरे भेदोथी अनेक प्रकारे सिद्ध भगवतोनी प्ररूपणा करवामा आवे छे ।" (महानिशीथसूत्र)[4]

आ सबधमा आ प्रमाणे गाथा जोवामा आवे छे–

"तीर्थसिद्ध, अतीर्थसिद्ध, जिनसिद्ध अजिनसिद्ध, गृहलिंगसिद्ध, अन्यलिंगसिद्ध, मुनिलिंग-सिद्ध, स्त्रीसिद्ध, पुरुषसिद्ध, नपुसकसिद्ध, प्रत्येकबुद्धसिद्ध, स्वयबुद्धसिद्ध, बुद्धबोहितसिद्ध, अनेक-सिद्ध, एकसिद्ध–एम अनेक प्रकारना 'सिद्धो' छे ।"

---

१ मूळमा आ पाठ 'सिद्धी सद्धाम' छे । तेने महानिशीथसूत्रने आधारे उपर मुजब सुधारेल छे ।

२ आवश्यकनिर्युक्ति गा ९५३ । जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १४३

३ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० ४२, प २३ थी २५

४ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० ४२, प २६ थी २८

"सुत्तत्थविऊ लक्खणजुत्तो गच्छस्स मेढिभूओ य ।
गणतत्तिविप्पमुक्को अत्थं भासेइ आयरियो ॥"

अथवा, आचारो ज्ञानाचारादिभिः पञ्चधा, आ–मर्यादया वा मासकल्पादिकरणरूपया चारो–विहारः आचारः तत्र साधवः स्वयंकरणादन्यप्रदर्शनाच्चेत्याचार्याः, आह च—

"पंचविहं आयारं, आयरमाणा तहा पयासंता ।
आयारं दंसंता, आयरिया तेण वुच्चंति ॥"[1]

तथा—

"पडिमापडिवन्नाणं एगाहं पंच हुंतिऽहालंदे ।
जिणसुद्धाणं मासो निक्कारणओ य थेराणं ॥
मासं व चउम्मासं परं पमाणं तहेगखित्तम्मि ।
बीयं तइयं च तहिं मासं वासं व न वसिज्जा ॥"

अथवा आईषत् अपरिपूर्णा इत्यर्थः चारा हेरिका ये ते आचाराः चरकल्पा इत्यर्थः । युक्तायुक्तविभागनिरूपणनिपुणाः मुनयः तेषु साधवो यथावच्छास्त्रोपदेशकत्वात् इति आचार्यास्तेभ्यो नमः, नमस्करणीयता चैतेषां आचाराद्युपदेशकतयोपकारित्वात् ॥

"सूत्र अने अर्थने जाणनारा, लक्षणथी युक्त, गच्छना आलंबनभूत अने गच्छनी चिंताथी रहित एवा आचार्य अर्थनो उपदेश आपे छे ।"

अथवा ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार अने वीर्याचार—ए पांच प्रकारना आचारनो आचार ते आचार कहेवाय छे । अथवा 'मासकल्प'[2] वगेरे मर्यादाथी जे विहार करवो ते पण आचार कहेवाय छे । आ बन्ने प्रकारना आचारने जेओ पोते सुंदर रीते पाळे छे अने बीजाओने पण दर्शावे छे ते आचार्य कहेवाय छे । कह्युं छे के–

"पांच प्रकारना आचारने आचरनारा तथा उपदेश आपनारा तेमज आचारने बतावनारा होवाथी ते आचार्य कहेवाय छे ।"[3]

तथा कह्युं छे के —"भिक्षु प्रतिमा जेमणे स्वीकारी छे एवा साधु एक क्षेत्रमां एक दिवस रही शके, यथालंदक मुनि एक क्षेत्रमां पांच दिवस रही शके, जिनकल्पीओ अने परिहारविशुद्धिक एक महिनो रही शके, स्थविरकल्पीओ निष्कारण एक महिनो अथवा तो चार मास एक क्षेत्रमां रही शके, परंतु शेषकाळमां एक मासथी विशेष अथवा चोमासा बाद एक मासथी विशेष बीजो के त्रीजो मास रही शके नहीं ।"

अथवा आ+चार एटले योग्य अने अयोग्यनो विभाग करवामां निपुण एवा साधुओने शास्त्रोनो यथावत् उपदेश आपे छे तेथी पण 'आचार्य' कहेवाय छे । तेमने मारो नमस्कार हो । आचार वगेरेना उपदेशक होवाथी उपकारीपणाने लीधे आचार्यो नमस्करणीय छे ।

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति गा. ९९४ । जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० १५२ ।

२ सामान्य रीते साधुओ चातुर्मास सिवायना समयमां एक ज ठेकाणे एक महिना सुधी रही शके ते नियमने 'मासकल्प' कहेवामा आवे छे ।

३ पंचविध आचार ते–१ ज्ञानाचार २ दर्शनाचार ३ चारित्राचार ४ तप आचार अने ५ वीर्याचार–आ आचारोने पाळनारा, अनुष्ठानथी आचरण करनारा, व्याख्यानथी उपदेश देता, तेमज पडिलेहणा वगेरे आचारने बतावता होवाथी आचार्य कहेवाय छे ।

अत्र गाथा—

" नाणाई छत्तीस तम्सायरणा पयासणाओ अ ।
जे ते भावायरिया भावायारोवउत्ता य ॥[1] "

परमप्पणो अ हियमायरति वा आयरिया २, सव्वसत्ते सीसगणाण वा हियमायरति आयरिया ३,

" जिणपहअपडियाण पाणहराण पि पहरमाणाण ।
न करती पावाइ पावस्स फल वियाणता ॥ "

पाणपरिच्चाएऽवि पुढवाईण समारभ नायरति नारमति नाणुजाणति वा आयरिया ४, सुट्ठु अवरुद्धे वि न कस्सइ मणसावि पावमायरति त्ति वा आयरिया ५, एवमेए नाम-ट्ठवणाईहि अणेगहा पन्नविज्जति इत्यादि ६ ।

तत्र प्रागुवद् अर्थविशेष, आ-मर्यादया तद्विपयविनयरूपया चर्यते– सेव्यते जिनशासनार्थोप देशकतया तदाकाङ्क्षिभिरित्याचार्या, उक्त च—

(आव नि नी ९९५ मी) गाथामा कह्यु छे के– "ज्ञान वगेरे छत्रीश वस्तुओनु आचारण करता होवाथी तेमज उपदेश देता होवाथी जे भाव आचारथी युक्त होय ते 'भावाचार्य' कहेवाय छे ।"

"अथवा पारकाना अने पोताना हितने जे आचरे छे ते 'आचार्य' कहेवाय छे । अथवा सर्व जीवो अने शिष्यसमुदायनु हित आचरे ते आचार्य" (महानिशीथसूत्र)[2]

(कह्यु छे के–) "जिनमार्गने नहि जाणनारा, बीजानु प्राणहरण करनारा अने प्रहार करनारा जीवो प्रत्ये पापना फळने जाणनारा (आचार्य) पापाचरण करता नथी ।"

"प्राण जाय तो पण पृथ्वीकायिक आदि जीवोनो जेओ आरंभ-समारभ करता नथी अने तेनी अनुज्ञा पण आपता नथी ते आचार्य । कोईए खूब अपराध कर्यो होय तो पण तेना उपर मनथीए जेओ पापी आचरण करता नथी ते 'आचार्य' कहेवाय छे । आ प्रमाणे नाम-स्थापना वगेरे अनेक प्रकारे आचार्यनी प्ररूपणा करवामा आवे छे ।" (महानिशीथसूत्र)[3]

पहेलानी जेम अहीं अर्थविशेष आ प्रमाणे छे –"जिनशासनना अर्थोना उपदेशक होवाने लीधे तेना अर्थी आत्माओ विनयरूपी मर्यादाथी जेमनी सेवा करे छे ते 'आचार्य' कहेवाय छे । कह्यु छे के—

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति गा ९९५ । जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १५३ ['णमोक्कारविज्जुती'मा छपायेल आ गाथामा 'नाणाइ छत्तीस' ने बदले 'आयारो नाणाइ' पाठ छे]

२ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ ४३, प १२-१३ ।

३ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ ४३, प १३-१६ ।

४ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ ४-५ ।

'उ' त्ति उवओगकरणे, 'झ' त्ति य झाणस्स होइ निद्देसो।
एएण हुंति 'उज्झा' एसो अन्नो वि पज्जाओ ॥[१]

तथा उप-समीपमागत्याधीयते 'इङ्' अध्ययने इति वचनात् पठ्यते, इण् गताविति वचनाद्वा 'अधि' आधिक्येन गम्यते, इक् स्मरणे इति वचनाद्वा स्मर्यते सूत्रतो जिनवचनं येभ्यः ते उपाध्यायाः, यदाह—बारसंगो जिणक्खाओ०[२] गाथा।

अथवा उपाधानमुपाधिः-सन्निधिः तेन उपाधिना उपाधौ वा आयो लाभः श्रुतस्य येषाम्। उपाधीनां वा विशेषणाना प्रक्रमाच्छोभनानामायो लाभो येभ्यः। अथवा उपाधिरेव संनिधिरेव आयम्—इष्टफलं दैवजनितत्वेन आयानामिष्टफलानां समूहस्तदेकहेतुत्वाद् येषाम्।

अथवाऽऽधीनां मनःपीडानामायो लाभ आध्यायः, अधियां वा, नञः कुत्सार्थत्वात् कुबुद्धीनामायोऽध्यायः, 'ध्यै चिंतायाम्' इत्यस्य धातोः प्रयोगान्नञः कुत्सार्थत्वादेव च दुर्ध्यानं वा अध्यायः, उपहत आध्यायो अध्यायो वा यैस्ते उपाध्यायाः, तेभ्यो नमः इत्यादि चर्चः प्राग्वत्। नमस्यता चैषां सुसम्प्रदायायातजिनवचनाऽध्यापनतो विनयविनयनेन भव्यानामुपकारित्वात्॥

"'उ' एटले उपयोग करवो, अने 'ज्झ' एटले ध्यान करवुं। आथी 'उज्झा' अर्थात् उपयोगपूर्वक ध्यान करनार एवो एनो वीजो पर्याय—नाम छे।"

अथवा 'उपाध्याय' शब्दना वीजा अर्थो नीचे मुजब छे—

"उपाध्याय" शब्दमां त्रण शब्दो छेः उप+अधि+इ। आमां 'उप' एटले समीप, 'अधि' एटले आधिक्य। अने 'इ' धातुना त्रण अर्थ थाय छेः अध्ययन करवुं, जवुं (जाणवुं) अने स्मरण करवुं। एटलेके जेमनी पासे जईने सूत्रथी जिनवचननुं अध्ययन करवामां आवे छे, अधिकपणे ज्ञान मेळववामां आवे छे तथा स्मरण करवामां आवे छे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे। (**आवश्यकनिर्युक्तिमां**) कह्युं छे के—"जिनेश्वरोए प्ररूपेल द्वादशांगीने गणधर आदि पुरुषो स्वाध्याय कहे छे। एवा स्वाध्यायनो शिष्योने (सूत्रथी) उपदेश आपे छे तेथी ते 'भाव उपाध्याय' कहेवाय छे।"

अथवा ('उपाध्याय' शब्दाना वीजा पण अनेक अर्थो नीकळे छे, जेमके—) 'उपाधि' एटले 'संनिधि'। जेमनी संनिधिथी अथवा जेमना सांनिध्यमां रहेवाथी श्रुतज्ञाननो 'आय' एटले 'लाभ' थाय अथवा जेमनी पासेथी 'उपाधि' एटले सुंदर विशेषणोनो लाभ थाय तेमने 'उपाध्याय' कहेवामां आवे छे। अथवा जेमनी उपाधि एटले जेमनुं सांनिध्य 'आय' एटले इष्ट फळोना समूहमां कारणभूत छे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे।

अथवा बीजो पण अर्थ छे। 'आधि' एटले 'मननी पीडा' तेनो 'आय' एटले 'लाभ' ते 'आध्याय'। अथवा 'अधि' एटले 'कुबुद्धि' नो 'आय' एटले 'लाभ' ते 'अध्याय'। अथवा अध्याय एटले 'दुर्ध्यान'। आ 'आध्याय' तथा 'अध्याय' ने जेमणे उपहत कर्या छे अथवा हणी नाख्या छे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे। आवा उपाध्याय भगवंतोने मारो नमस्कार हो। वगेरे चर्चा पहेलांनी जेम समजी लेवी। सुसंप्रदायथी (प्रतिष्ठित परंपराथी) चालया आवता जिनवचननुं भव्य जीवोने अध्यापना करवा द्वारा विनीत बनावीने उपकार करता होवाथी उपाध्याय भगवंतो नमस्कारने योग्य छे।

(**भगवतीसूत्र**)[३]

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति गा० १००२। जुओ—प्रस्तुत ग्रंथ पृ० १५४।

२ आवश्यकनिर्युक्ति गा० १००१, जे उपर आवी गई छे।

३ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० ५—६

तथा **'नमो उवज्झायाणं'** ॥ सुसवुडासवदारे मणोवइकायजोगत्तयउवउत्ते विहिणा सरवजणमत्त-विंदुपयक्खरविसुद्ध दुवालसग सुयनाणऽज्झयणज्झावणेण परमप्पणो य मुखोवाय झायतित्ति उवज्झाया १ ॥

अत्र गाथा—

वारसगो जिणक्खाओ, सज्झाओ कहिओ वुहेहिं ।
त उवइसति जम्हा, उवज्झाया तेण वुच्चति ॥[1]

थिरपरिचियमणतगमपज्जवत्थेहि वा दुवालसंग सुयनाण चिंतति अणुसरति एगग्गमाणसा झायतित्ति वा उवज्झाया ३, एवमेए अणेगहा पन्नविज्जति अनेकविधत्वम् लिदम्—

'उ' त्ति उवओगकरणे, 'व' त्ति य पावपरिवज्जणे होइ ।
'झ' त्ति य झाणस्स कए, 'उ' त्ति य ओसक्कणा कम्मे ॥[2] त्ति निरुक्तिवशादुपाध्याया ।

नमो उवज्झायाण

"जेमणे आश्रवना द्वारो बंध करेला छे, मन–वचन अने काया ए त्रणेना योगोमा उपयोगवाळा, विधिपूर्वक स्वर, व्यजन, मात्रा, बिंदु, पद अने अक्षरोथी विशुद्ध द्वादशाग जे श्रुत-ज्ञान तेनु अध्ययन अने अध्यापन करवा वडे पोताना तथा पारकाना मोक्षना उपायनु जेओ ध्यान करे छे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे।" (महानिशीथसूत्र)[3]

आ विशे (आवश्यकनिर्युक्तिमा)गाथा छे के–"जिनेश्वरोए प्ररूपेल द्वादशागीने गणधर आदि पुरुषो स्वाध्याय कहे छे। एवा स्वाध्यायनो शिष्योने (सूत्रथी)उपदेश आपे छे तेथी ते 'भाव उपाध्याय' कहेवाय छे।"

"चिरपरिचित द्वादशाग श्रुतज्ञानने अनतगम अने पर्यायार्थ वडे जेओ चिंतवे छे, अनुसरण करे छे अने एकाग्र मनवाळा थईने तेनु ध्यान धरे छे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे। आ प्रमाणे 'उपाध्याय' शब्दनी अनेक प्रकारे व्याख्या करवामा आवे छे।" (महानिशीथसूत्र)[4]

व्याख्याना अनेक प्रकारो आ प्रमाणे छे —

" 'उ' एटले उपयोग करवो, 'व' एटले पापनु वर्जन, 'झ' एटले ध्यान करवु अने 'उ' एटले कर्मो दूर करवा–अर्थात् उपयोगपूर्वक पापने छोडतां ध्यान आरूढ थईने कर्मोने दूर करे ते 'उपाध्याय' कहेवाय। (आ अक्षरार्थ छे, अक्षरार्थना अभावे पदार्थना अभावनो प्रसग आवे। पद ए समुदायरूप होवाथी अहीं अक्षरार्थ समजवो।)" आ प्रमाणे निर्युक्तिथी 'उपाध्याय' शब्द बने छे।

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति गा १००१। जुओ—प्रस्तुत ग्रंथ पृ १५४।
२ आवश्यकनिर्युक्ति गा० १००३। जुओ—प्रस्तुत ग्रंथ पृ १५४।
३ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ ४३, प १९–२२।
४ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ ४३, प २२–२४

" नाणं च दंसणं वा, तवो य तह संजमो य साहुगुणा।
इक्के सव्वेसुवि हीलिएसु ते हीलिया हुंति ॥[1]
" एमेव पूइयम्मी, इक्कंमी वि पूइया जइगुणाउ।
थोवं बहुनिव्विसं, इय नच्चा पूयए मइमं ॥[2] "

[3]तत्र सर्वशब्दस्य देशसर्वतायामपि दर्शनात् अपरिशेषसर्वतोपदर्शनार्थमुच्यते। 'लोके' मनुष्यलोके न तु गच्छादौ ये सर्वसाधवः सर्वान् वा शुभयोगान् साधयन्ति कुर्वन्ति सर्वसाधवः अथवा सर्वेभ्यो जीवाऽजीवादिपदार्थसार्थेभ्यो यथावस्थितावितथस्वरूपनिरूपणरक्षणादिना हिताः सार्वाः अरिहन्तारः तेषां साधवः, न तु बुद्धादेः सार्वसाधवः। उक्तं च चूर्णौ[4]—

" ए ए ताव न वंदिज्जंति समणसद्दे हुंतए वि बुद्धा तावसा गेरुया आजीवगा बोडिया य। "

यद्वा सार्वानर्हतः साधयन्ति तदाज्ञाकरणादाराधयन्ति प्रतिष्ठापयन्ति वा दुर्णयनिराकरणादिभिः सार्वसाधवः।

"ज्ञान, दर्शन, तप तथा संयम–आ साधुना गुणो छे एटले एक अथवा सर्व साधुनी हिलना (अपमान) करवामां आवे तो तेमां गुणोनी ज हिलना थाय छे।"

"ते ज प्रमाणे एक साधुनी पूजा करवामां आवे तो पण तेमां साधुना सर्व गुणोनी ज पूजा रहेली छे, माटे थोडी पण साधुनी पूजा बहु लाभकारक छे एम समजीने बुद्धिमान पुरुषोए साधुओनी पूजा करवी जोईए।"

'सर्व' शब्द देशसर्वतानो पण वाचक होवाथी संपूर्ण सर्वता बताववाने माटे 'लोए' शब्दनो प्रयोग करेलो छे। अर्थात् मात्र गच्छ वगेरेमां नहि परंतु आखा मनुष्यलोकमां रहेला जे सर्व साधुओ अथवा सर्व शुभयोगोने जे करे ते 'सर्वसाधु'। अथवा सर्व जीव अजीव वगेरे पदार्थसमूहनुं जे यथावस्थित अने सत्यस्वरूप निरूपण तेमज रक्षण वगेरे करवा वडे सर्व पदार्थोने हित करनारा (न्याय आपनारा) ते 'सार्व', एटले अरिहंत भगवान अने तेमना साधु ए 'सार्वसाधु', बुद्ध वगेरेना साधु नहीं। **चूर्णिमां** कह्युं छे के—

"श्रमण कहेवाता होवा छतां पण बौद्ध साधुओ, तापसो, गेरुक (परिव्राजक), आजीवक अने बोटिकने वंदन करवुं नहि।"

अथवा 'सार्व' एटले अरिहंतोने जेओ आज्ञानुं पालन करीने आराधे छे अथवा दुर्नयने दूर करीने (अन्य मतोनुं खंडन करीने) जिनेश्वर भगवंतना मतने प्रतिष्ठित करे छे ते 'सार्वसाधु'।

---

१ ओघनिर्युक्ति गा ५३१

२ ओघनिर्युक्ति गा. ५३२

३ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ. ८.

४ " किं च–इमेवि पंच ण वंदियव्वा समणसद्देवि सति, जहा आजीवगा तावसा परिव्वायगा तच्चंणिया, वोडिया... .. "

आव० चूर्णि पृ. २० पं. ४, उत्तरभाग,

तथा **'नमो लोए सव्वसाहूण'** ॥ अच्चतकट्ठउग्गतरघोरतवचरणाइअणेगवयनियमोववासानाणा-भिग्गहविसेससजमपरिपालणेण सम्म परीसहोवसग्गाहियासणेण सव्वदुक्खविमोक्खं मोक्खं साहयति साधवो ५।

अत्रापि विशेषार्थ । साधयन्ति मोक्षसाधकज्ञानादिशक्तीरिति साधव, साम्य वा सर्वभूतेषु ध्यायन्ति निरुक्तिवशात् साधव । यदाह—

" निव्वाणसाहए जोए जम्हा साहति साहुणो ।
समा हि सव्वभूएसु तम्हा ते भावसाहुणो ॥[1] "

साहायक वा सयमकारिणा धारयन्तीति साधव निरुक्तेरेव । सर्वे च ते सामायिकादिविशेषणा प्रमत्तसंयतादय पुलाकादयो जिनकल्पिक-प्रतिमाकल्पिक-यथालन्दकल्पिक-परिहारविशुद्धिकल्पिक-स्थविरकल्पिक-स्थितकल्पिकाऽस्थितकल्पिकभेदा प्रत्येकबुद्ध-स्वयबुद्ध-बुद्धबोधितभेदा भारतादिभेदा सुषमदु ष-मादिविशेषान्ता वा साधवश्च सर्वसाधव । सर्वग्रहण च सर्वेषा गुणवतामविशेषेणनमनीयताप्रति पादनार्थ, यदाह—

नमो लोए सव्वसाहूण

"तथा अत्यत कठिन उग्रतर अने घोर तपश्चर्या वगेरे अनेक व्रत, नियम, उपवास, अनेक प्रकारना अभिग्रहविशेष तथा सयमनु परिपालन करीने अने सारी रीते परीषह तेमज उपसर्गोने सहन करीने जेओ सर्व दु खमाथी मुक्तिने साधे छे ते 'साधु' कहेवाय छे ।" (महानिशीथसूत्र)

अहीं विशेषार्थ आ प्रमाणे छे —मोक्षसाधक ज्ञान वगेरे शक्तिओने जे साधे छे ते साधु कहेवाय छे । अथवा सर्व प्राणीओ प्रति समभावनु जे ध्यान करे छे ते 'साधु' कहेवाय छे । **(आवश्यकनिर्युक्तिमा)** कह्यु छे के–

"निर्वाणना साधक योगोनी साधुओ साधना करे छे तेमज सर्व जीवो उपर समभावने धारण करे छे तेथी ते 'भावसाधु' कहेवाय छे ।"

अथवा सयमनु पालन करनारा आत्माओने सहाय करे छे तेथी साधु कहेवाय छे । 'सर्व साधु' शब्दथी सामायिकादि विशेषणोथी युक्त, प्रमत्त वगेरे, पुलाक वगेरे जिनकल्पिक, प्रतिमाकल्पिक, यथालदकल्पिक, परिहारविशुद्धिकल्पिक, स्थविरकल्पिक, स्थितकल्पिक, अस्थितकल्पिक, प्रत्येकबुद्ध, स्वयबुद्ध, बुद्धबोधित, भरत वगेरे क्षेत्रना तेमज सुषम, दु षमा वगेरे कालना साधुओ–एम सर्व प्रकारना साधुओ समजवा । सर्व गुणवान पुरुषो भेदभाव विना नमस्कार करवा लायक छे ते जणाववा माटे 'सर्व' शब्दनो अहीं प्रयोग करवामा आव्यो छे । कह्यु छे के–

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति गा १०१० । जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ १५५

२ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ ४४, प १३–१६

३ जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ ६–७

एएसिं पञ्चण्हं नमुक्कारो—एसो पंचनमुक्कारो । किं करिज्जा ?

सव्वं पावं नाणावरणीयाइकम्मं निस्सेसं पयरिसेणं दिसोदिसं नासइ सव्वपावप्पणासणो, तक्कज्जं वा नरगभवाइ। इत्थ गाहाओ—

जेणेस नमुक्कारो पत्तो पुण्णाणुबंधिपुण्णेण ।
नारयतिरियगईओ, तस्सावस्सं निरुद्धाओ ॥ १ ॥[1]
पंचनमुक्कारसमं अंते वच्चंति जस्स दसपाणा ।
सोजइ न जाइ मुक्खं, अवस्समरत्तणं लहइ ॥ २ ॥
अन्नं च इमाउ च्चिय, न होइ मणुओ कयाइ संसारे ।
दासो पेसो दुहिओ, नीओ विगलिंदिओ चेव ॥ ३ ॥[2]

तथा—

करआवत्ते जो पंचमंगलं साहुपडिमसंखाए ।
नववारा आवत्तय(इ) छलंति तं नो पिसायाई ॥ ४ ॥

जओ—

मंताण मंतो परमो इमो त्ति, धेयाण धेयं परमं इमं ति ।
तत्ताण तत्त परमं पवित्तं, संसारसत्ताणंदुहाहयाणं ॥ ५ ॥[3]

एसो पंचनमुक्कारो एटले आ पांच परमेष्ठिने करेलो नमस्कार शुं करे छे ?

'सव्वपावप्पणासणो'—एटले सर्व प्रकारना ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मोने संपूर्णपणे नष्ट करे छे, अने कर्मनुं फळ जे नरकादि गति तेनो पण नाश करे छे ।" (**महानिशीथसूत्र**)[4]

आ संबंधमां नीचे प्रमाणे गाथाओ मळे छेः—

"पुण्यानुबंधी पुण्यवाळा जे आत्माए आ नवकारने प्राप्त कर्यो छे, तेनी नरक अने तिर्यंच गतिओ अवश्य रोकाई गई छे ।" ॥ १ ॥

"दश प्राणो जाय त्यारे (मृत्युसमये) पंचपरमेष्ठि नमस्कारनुं जे स्मरण करे छे ते भले मोक्षमां न जाय तो पण देवलोकमां अवश्य जाय छे ।" ॥ २ ॥

"वळी, आ नमस्कारथी मनुष्य संसारमां कदीपण दास, प्रेष्य, दुर्भग, नीच के विकलेन्द्रिय-अपूर्ण इन्द्रियवाळो थतो नथी" ॥ ३ ॥

तथा—

"हाथनी आंगळीना वेढा उपर बारनी संख्याथी नववार (१०८ वार) नमस्कारमंत्रने जे गणे छे तेने पिशाच वगेरे छळी शकतां नथी ।" ॥ ४ ॥

"दुःखोथी आघात पामेला संसारी मनुष्योने माटे आ (नवकारमंत्र) मंत्रोमां परममंत्र छे, ध्यान करवा योग्यमां आ परमध्येय छे अने तत्त्वोमां परमतत्त्व छे" ॥ ५ ॥

---

१ पंचनमुक्कारफलथुत्तं गा० ५५ । जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० ३७० ।
२ पंचनमुक्कारफलथुत्तं गा० ६० । जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० ३७० ।
३ नवकारलहुकुलकं गा० २ । जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० ४३८ ।
४ जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ. ४४, पं. १७–२२

अथवा सार्वा सर्वजीवादिहितकारिण ते च ते साधवश्च सार्वसाधव । उक्त च—

'पाणच्चए वि पाव०' गाहा ॥

यदि वा सव्यानि—दक्षिणानि अनुकूलानि यानि कार्याणि तेषु, श्रव्येषु वा श्रवणार्हेषु मृदुमधुरादि वाक्येषु साधवो निपुणा सव्यसाधव –श्रव्यसाधवो वा तेभ्यो नम इत्यादि प्राग्वत् । एषा च नमनीयता मोक्षमार्गसाहायककरणेनोपकारित्वात् । आह च—

" असहाए सहायत्त करेंतिमे सजम कुणतस्स
एएण कारणेण नमामि हं सव्वसाहूण ॥ "[1]

अथैतन्नमस्कारप्रयोजनफलनिरूपणार्थमाहु श्रीवज्रस्वामिपादा –☞अयमेव इमाए एक्कारस-पयपरिच्छिन्न तिआलावग तित्तीसक्खरपरिमाणाए चूलाए भाविज्जइ ! 'एसो पचनमुक्कारो, सव्वपावप्प णासणो। मगलाण च सव्वेसिं, पढम हवइ मगल ॥ १ ॥'

अथवा 'सार्व' एटले सर्व जीव वगेरेनु हित करनारा साधुओ ते 'सार्वसाधु' । कह्यु छे के—

"प्राणनो अत्यय थाय तो पण " वगेरे

अथवा 'सव्य' एटले जे अनुकूळ कार्यो तेमा निपुण ते 'सव्यसाधु' । अथवा 'श्रव्य' एटले श्रवण करवा लायक जे मृदु मधुर आदि वाक्यो तेमा निपुण ते 'श्रव्यसाधु' । आ 'सर्वसाधु', 'सार्वसाधु', 'सव्यसाधु' तथा 'श्रव्यसाधु'ओने मारो नमस्कार हो । मोक्षमार्गमा सहाय करवा वडे उपकारी होवाथी आ साधुपुरुषो नमस्करणीय छे । (आवश्यकनिर्युक्तिमा) कह्यु छे के—

"असहाय एवा मने सयमनु पालन करवामा सहाय करे छे ते कारणथी सर्व साधुओने नमस्कार करू छु।"

हवे आ नमस्कार करवाना प्रयोजन अने फळनु निरूपण करता वज्रस्वामी महाराज जणावे छे के—"आ ज नमस्कार अगियार पद प्रमाणनी त्रण आलावानी अने तेत्रीश अक्षरनी 'एमो पचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो । मगलाण च सव्वेसिं, पढम हवइ मगल' ए चूलिकाथी भावित कराय छे ।

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति गा० १०१३ । जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० १५६

२ चैत्यवदनमहाभाष्यनी त्रण प्रकारनी हस्तप्रतो मळे छे। एक लघुप्रत छे, जेमा अमुक बाबतो टूकमा समजावी छे ज्यारे बीजी बृहत् प्रत मळे छे जेमा एनी ए हकीकतो विस्तृत रीते समजावेली छे अने त्रीजा प्रकारनी प्रत मध्यमप्रत छे, जे आ बे करता जुदी पडे छे। आवी प्रतो पू० पुण्यविजयजी महाराजसाहेबे खभातना श्री शांतिनाथजी ताडपत्रीय भडारमाथी मेळवीने श्री चैत्यवदनमहाभाष्यनो पाठ तैयार कर्यो छे, अने तेने आधारे आ बे हाथ ☞ ☜ वच्चेनो पाठ अहीं लीधो छे । श्रीऋषभदेवजी केशरीमलजी जैन पेढी, रतलाम तरफथी छपायेल ग्रथमा तेनी जगाए नीचे प्रमाणे पाठ मळे छे.–

अयमेव इमाए चूलाए भाविज्जइ एएसिं नमुक्कारो एमो पचनमुक्कारो, किं करेज्जा १–सव्व पाव–नाणावरणीयाइ कम्म निस्सेस तं पयरिसेण दिमोदिसिं नासइ सव्वपावप्पणासणो, (जुओ–महानिसीहसुत्तसदर्भो प्रस्तुत ग्र पृ ४४१ ३–६)

एएसिं सव्वेसिं अन्नेसिं च दव्वभावभेदभिन्नाणं दधिदुव्वाइतवोविहाणाईणं मंगलाणं किं [1], पढमं आईए, अरिहंताईणं थुई चेव हवइ मंगलं हितादिविधानसमर्थम्, मंग्यते हितादि अनेनेति व्युत्पत्तेः भावमंगलतया ऐकान्तिकत्वात् आत्यन्तिकत्वाच्च। एवं प्रयोजनाद्यप्युक्तम्। तथा निर्युक्तिः—

इत्थ य पओयणमिमं कम्मखय मंगलागमो चेव।
इहलोयपारलोइय दुविहफलं तत्थ दिट्ठंता ॥[1]
इहलोइ अत्थकामा आरुग्गं अभिरईइ णिप्फत्ती।
सिद्धी य सग्ग सुकुले उववाओ ईय परलोए ॥[2]

किंच—

ताव न जायइ चित्तेण चिंतियं पत्थियं च वायाए।
काएण समाढत्तं जाव न सुमरिओ नमुक्कारो ॥

एस समासत्थुत्ति। विस्तरार्थिना तु नवकारपंजिका नवकारपटल सिद्धचक्र बृहन्नमस्कार-फलादि शास्त्राण्यवलोकनीयानीति ॥ छ ॥

आ मंगलोमां अने बीजां पण सर्व दहींदुर्वा वगेरे द्रव्यमंगलो अने तपोनुष्ठान वगेरे भावमंगलोमां अरिहंत वगेरेनी स्तुति प्रथम मंगल छे। अर्थात् हित वगेरे करवामां समर्थ छे, कारणके जे हित वगेरे करे तेनुं नाम मंगल। आ प्रमाणे ' मंगल ' शब्दनी व्युत्पत्ति थती होवाने लीधे अरिहंत वगेरेनी स्तुति भावमंगलपणाथी एकांते अत्यंत हित करनार छे। आ रीते आमां प्रयोजन वगेरे पण कहेवाई गयुं। (आवश्यक) **निर्युक्तिमां** कह्युं छे के—

"नमस्कार करवामां कर्मनो क्षय अने मंगलनुं आगमन ए प्रयोजन छे तेमज लोकसंबंधी अने परलोकसंबंधी एम बे प्रकारनुं फळ छे। तेनां दृष्टांतो नीचे प्रमाणे छे।":—

"आ लोकमां अर्थ, काम, आरोग्य, अने अभिरतिनी प्राप्ति थाय छे। अने परलोकमां सिद्धि, स्वर्ग अने उत्तम कुळनी प्राप्ति थाय छे।"

बीजुं पण कह्युं छे के—

"मनथी चिंतवेलुं, वचनथी प्रार्थेलुं अने कायाथी आरंभेलुं कार्य त्यांसुधी ज सिद्ध थतुं नथी ज्यांसुधी नमस्कारमंत्रनुं स्मरण करवामां आवतुं नथी।" (अर्थात् नमस्कारमंत्रनुं स्मरण करवामां आवे तो मनथी ईच्छेलुं, वचनथी प्रार्थेलुं अने कायाथी प्रारंभेलुं दरेक कार्य सिद्ध थई जाय छे.।)

आ प्रमाणे नमस्कारमंत्रनो संक्षिप्त अर्थ छे। विस्तारना अर्थीए नवकारपंजिका, नवकारपटल, सिद्धचक्र, बृहन्नमस्कारफल वगेरे शास्त्रोनुं अवलोकन करवुं।

---

१ आवश्यकनिर्युक्ति गा० १०२२। जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० १५९

२ आवश्यकनिर्युक्ति गा० १०२३। जुओ प्रस्तुत ग्रंथ पृ० १६०

ताण अन्न तु नो अत्थि जीवाण भवसायरे ।
बुड्डताण इम, मुत्तु नमुक्कार सपोयय ॥ ६ ॥
अणेयजम्मतरसचियाण, दुहाण सारीरियमाणसाण ।
कत्तो य भव्वाण भविज्ज नासो, न जाव पत्तो नवकारमतो ॥ ७ ॥[1]

अवि य—

नवकाराओ अन्नो, सारो मतो न अत्थि तियलोए ।
तम्हाउ अणुदिण चिय पढियव्वो परमभत्तीए ॥ ८ ॥[2]

एस चूलाए पढमो उद्देसओ–एसो पचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो, किंविहो उ ?

मगो निव्वाणसुक्खसाहणिक्कवमो सम्मदसणाइआरहओ अहिसालक्खणो धम्मो त मे लाइज्जति मगल १, म वा भवाओ–ससाराओ गलिज्जा तारिज्ज वा इति मगल २, बद्धपुट्ठनिधत्तनिकाइयट्ठपयारकम्मरासिं मे गालिज्जा विलिज्जाविज्जत्ति वा मगल ३ ।

"ससाररूपी समुद्रमा डूबता जीवोने नमस्काररूपी नौका सिवाय बीजु कई रक्षण करनार नथी" ॥ ६ ॥

"भव्य मनुष्योए ज्यासुधी नवकारमत्रने प्राप्त कर्यो नथी त्यासुधी अनेक जन्मोमा एकठा करेला तेमना शारीरिक अने मानसिक दु खोनो नाश शी रीते थाय ? ।" ॥ ७ ॥

"त्रण लोकमा नवकारथी सारभूत (प्रधान) अन्य कोई मत्र नथी, तेथी प्रतिदिन परमभक्तिथी तेनु ध्यान करवु जोईए ।" ॥ ८ ॥

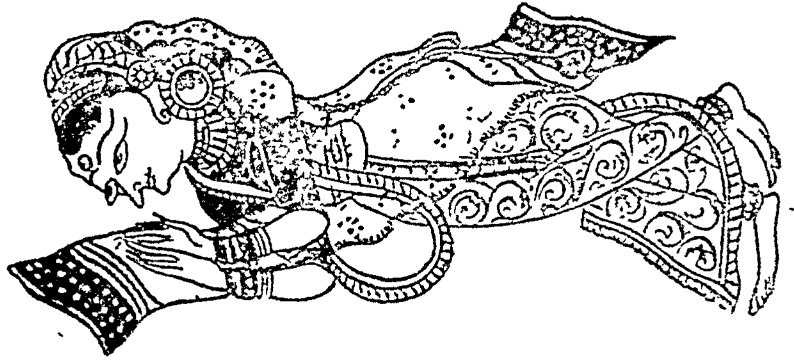
'एसो पचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो'–ए चूलिकानो प्रथम उद्देशो छे । ते केवो छे ?–

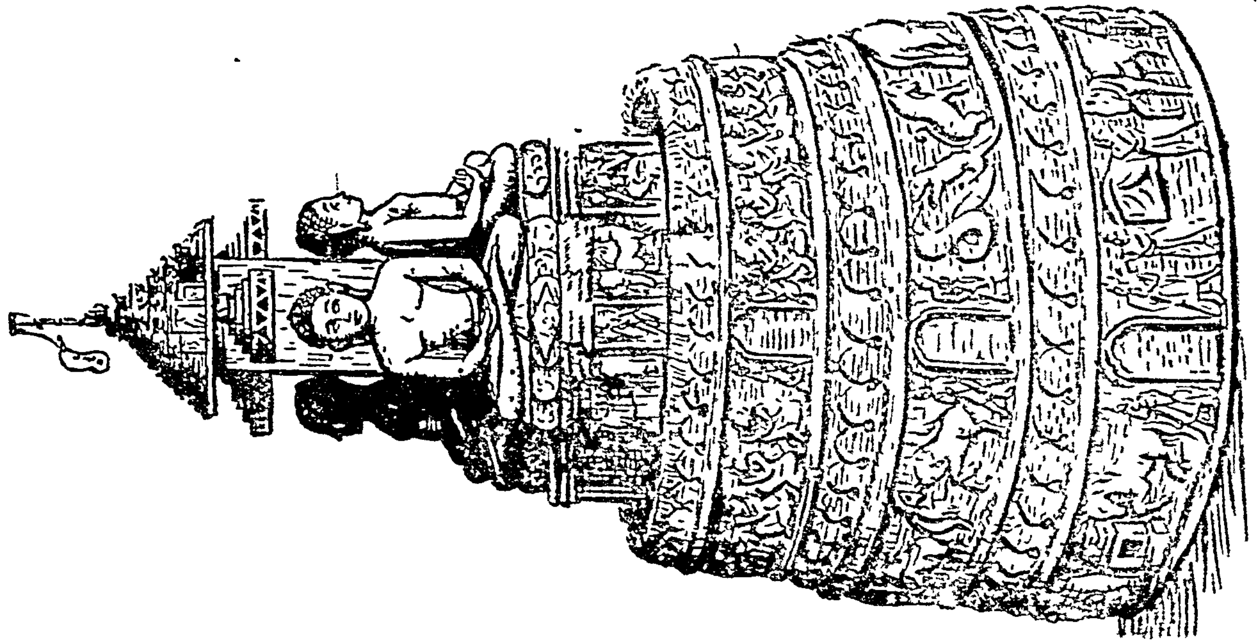
'मग' एटले निर्वाणसुख (मोक्षसुख)ने सिद्ध करवामा समर्थ सम्यग्दर्शन वगेरे अरिहतोए प्ररूपेल अहिंसालक्षण धर्मने जे मने आणी आपे ते मगल १, अथवा मने ससारथी गाळे अर्थात् तारे ते मगल २, बद्ध, स्पृष्ट, निधत्त अने निकाचित एवा आठ प्रकारना मारा कर्मना राशिने जे गाळे अर्थात् शमावे ते मगल ३ ।

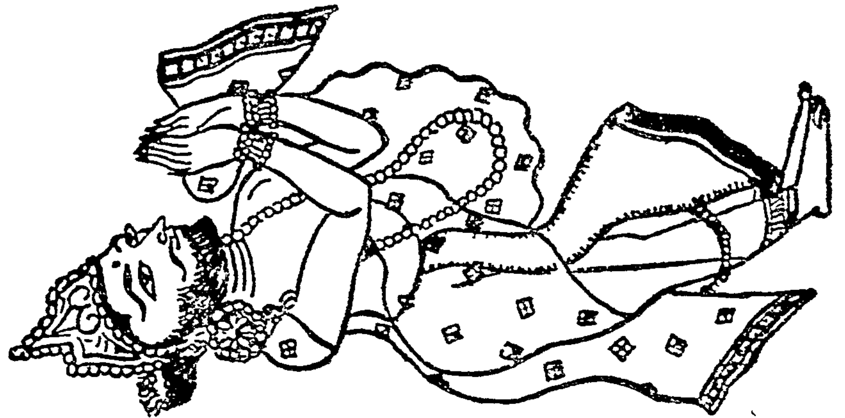
---

१ नवकारलहुफल गा० १ । जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० ४३८ ।

२ पचनमुक्कारफल गा० २६ । जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० ३८३ । तथा नवकारलहुफल गा० ८ । जुओ प्रस्तुत ग्रथ पृ० ४३९ ।







चैत्यवन्दनमहाभाष्यमा नमस्कारसूत्र विशे सूचित विगतोनुं कोष्टक

नमस्कारसूत्र (पचपरमेष्ठी पद)	पद	सपदा	अध्ययन	आलापक	अक्षरो	गुरु अक्षर	लघु अक्षर	तप आयविल	चूला
१ णमो अरिहताण	१	१	१	१	७	–	७	१	–
२ णमो सिद्धाण	१	१	१	१	५	१	४	१	–
३ णमो आयरियाण	१	१	१	१	७	–	७	१	–
४ णमो उवज्झायाण	१	१	१	१	७	१	६	१	–
५ णमो लोए सव्वसाहूण	१	१	१	१	९	१	८	१	–
(चूलिका)									
६ एसो पचणमुक्कारो	१	१	१	१	८	१	७	१	१
७ सव्वपावप्पणासणो	१	१	१	१	८	२	६	१	१
८ मगलाण च सव्वेसिं	१	१ }	१ }	१ }	८	१	७	१ }	१ }
९ पढम हवइ मगल	१				९	–	९		
	९	८	८	८	६८	७	६१	८	३

परिचय

श्रीचैत्यवदनमहाभाष्यना कर्ता श्रीदेवेन्द्रसूरि छे। तेओ तपागच्छना स्थापक श्रीजगचद्रसूरिना शिष्य हता अने वि स १२७० थी १३२७ सुधीमा विद्यमान हता। तेओ एमना समयना महाप्रभावशाळी विद्वान् हता। तेमणे 'षट्कर्मग्रथ–स्वोपज्ञटीका सहित' 'श्राद्धदिनकृत्यसूत्र–वृत्ति' वगेरे अनेक प्रकरणग्रथो अने 'सुदर्शनचरित' जेवा चरितग्रथोनी प्राकृतमा रचना करेली छे। श्रीचैत्यवदनमहाभाष्य उपर श्रीधर्मकीर्तिसूरिए टीका रची छे।

श्रीधर्मकीर्तिसूरिनु बीजु नाम श्रीधर्मघोषसूरि हतु। तेओ महाविद्वान् हता। तेमना उपदेशथी माडवगढना पेथडकुमारे स १३२० लगभगमा जुदे जुदे स्थळे ८४ जिनप्रासादोनु निर्माण कर्यु हतु[1]।

चैत्यवदनमहाभाष्यमा गा ३० मा 'नमस्कारसूत्र'नो उल्लेख कर्यो छे, तेना उपर श्रीधर्मकीर्तिसूरिए नमस्कारविषयक अनेक हकीकतोनो टीकामा सग्रह कर्यो छे।

आ सदर्भ 'देववदनभाष्य' प्रकाशक –श्रीऋषभदेव केशरीमलजी जैन पेढी, रतलाम, स० १९९४ ना पृष्ठ २१० थी २१८ माथी उद्धृत कर्यो छे, परतु ते सीधेसीधो न लेता तेमा पू पुण्यविजयजी महाराजसाहेबे प्राप्त थयेल हस्तप्रतो परथी जे सुधारा वधारा कर्या छे तेने आधारे आ मूळपाठ तैयार करेल छे।

---

१ जुओ श्रीमुनिसुदरसूरिकृत–'गुर्वावली' अने विशेष माहिती माटे जुओ मो द कृत 'जैनसाहित्यनो सक्षिप्त इतिहास' पृ ४०४।

एवं कयउवहाणो भवंतरे सुलभबोहिओ होज्जा ।
एयज्झवसाणो वि हु गोयम! आराहगो भणिओ ॥ १५ ॥
जो उ अकाऊणमिमं गोयम! गिण्हिज्ज भत्तिमंतो वि ।
सो मणुओ दट्ठव्वो अगिण्हमाणेण सारिच्छो ॥ १६ ॥
आसायइ तित्थयरं तव्वयणं संघ-गुरुजणं चेव ।
आसायणबहुलो सो गोयम! संसारमणुगामी ॥ १७ ॥
पढमं चिय कन्नाहेडएण जं पंचमंगलमहीयं ।
तस्स वि उवहाणपरस्स सुलहिया बोही निद्दिट्ठा ॥ १८ ॥
इय उवहाणपहाणं निउणं सव्वं पि वंदणविहाणं ।
जिणपूयापुव्वं चिय पढिज्ज सुयभणियनीईए ॥ १९ ॥
तं सर-वंजण-मत्ता-बिंदु-परिच्छेयठाणपरिसुद्धं ।
पढिऊणं चियवंदणसुत्तं अत्थं वियाणिज्जा ॥ २० ॥
तत्थ वि य जत्थे (जत्थ) य सिया संदेहो सुत्त-अत्थविसयम्मि ।
तं बहुसो वीमंसिय सयलं निस्संकियं कुणसु ॥ २१ ॥

आ प्रकारे जेणे उपधान कर्या छे ते जीव भवांतरमां सुलभबोधि थाय छे। हे गौतम! आ (उपधान)ना अध्यवसायवाळो जीव आराधक कहेवाय छे ॥ १५ ॥

हे गौतम! आ उपधान कर्या विना जे भक्तिवाळो मनुष्य आ नवकारने ग्रहण करे ते नवकारने नहि ग्रहण करवावाळा मनुष्यना जेवो छे एम जाणवुं। (अर्थात् नमस्कारनी वाचना माटे उपधानतप आवश्यक अंग तरीके कहेलुं छे।) ॥ १६ ॥

ए रीते (उपधान कर्या विना ज नवकार ग्रहण) करनार मानवी श्रीतीर्थंकरदेवनी, तेमना वचननी, संघ अने गुरुनी अशातना करे छे। हे गौतम! अनेक आशातनावाळो ते संसारमां परिभ्रमण करे छे ॥ १७ ॥

पहेली ज वार जेणे पंचमंगल कर्ण द्वारा सांभळ्युं छे ते पण जो उपधान करे तो तेने बोधिबीज—सम्यक्त्व सुलभ थाय छे एम कह्युं छे ॥ १८ ॥

आ प्रकारे जिनपूजापूर्वक ज श्रुतमां बतावेली विधिथी उपधानप्रधान समग्र वंदनविधान निपुणताथी भणवुं जोईए ॥ १९ ॥

ते चैत्यवंदनसूत्रने स्वर, व्यंजन, मात्रा, बिंदु, पदच्छेद अने विश्रामस्थान वडे परिशुद्ध भणीने तेनो अर्थ जाणवो जोईए (अथवा—स्वर, व्यंजन, मात्रा, बिंदु, पदच्छेद अने विश्रामस्थान वडे परिशुद्ध एवा ते चैत्यवंदनसूत्रने भणीने तेनो अर्थ जाणवो जोईए।) ॥ २० ॥

ते सूत्र अने अर्थना विषयमां ज्यां क्यांय संदेह थाय ते स्थळे खूब विचार करीने बधुं शंकारहित करे ॥ २१ ॥

[६]

सिरिमाणदेवसूरिरइय

उवहाणविहिथुत्त ॥

पंच नमोक्कारे किल दुवालस तवो उ होइ उवहाण ।
अट्ठ य आयामाइ एगं तह अट्ठम अते ॥ १ ॥

एव चिय निस्सेस इरियावहियाइ होइ उवहाण ।
सक्कत्थयम्मि अट्ठममेग वत्तीस आयामा ॥ २ ॥

अनुवाद

'नमस्कार' (पचमगल महाश्रुतस्कधसूत्र)नु उपधान[1] (ज्ञान आराधन माटेनु तपोमय अनुष्ठान) बार उपवासना तपथी कराय छे । तेमा प्रथम पाच लागट उपवास पछी पहेली वाचना अने ते पछी आठ आयविल तेमज अते एक अट्ठम (त्रण उपवास लागट) करवाना होय छे । (ते पछी बीजी वाचना आपवामा आवे छे ।)

[नमस्कार मत्रना उपधानमा १२ (चालु विधि प्रमाणे १२॥) उपवास १८ दिवसमा करवाना होय छे । प्रथम वाचना 'नमो लोए सव्वसाहूण' सुधीनी अने बीजी वाचना 'पढम हवइ मगलं' सुधीनी छे ।] ॥ १ ॥

'ईरियावहिय' (सूत्र)ना उपधानमा पण आ प्रकारे (नमस्कार मत्र माटे जणाव्यो छे ते) तप करवानो होय छे । (अर्थात् पाच लागट उपवास पछी पहेली वाचना अने आठ आयविल तेमज त्रण लागट उपवास कर्या पछी बीजी वाचना अपाय छे ।)

[ईरियावहियना उपधानमा १२ (चालु विधि प्रमाणे १२॥) उपवास १८ दिवसमा करवाना होय छे । प्रथम वाचना 'जे मे जीवा विराहिआ' सुधीनी अने बीजी वाचना 'ठामि काउस्सग्ग' सुधीनी छे ।]

'शक्रस्तव' (नमोत्थु ण) सूत्रना उपधानमा एक अट्ठम अने बत्रीश आयबिल करवाना होय छे (एटले तेमा लागट त्रण उपवास पछी पहेली वाचना, सोळ आयबिल पछी बीजी वाचना अने ते पछी बीजा सोळ आयबिल पछी त्रीजी वाचना अपाय छे ।)

[शक्रस्तवना उपधानमा १९ (चालु विधि प्रमाणे १९॥) उपवास ३५ दिवसमा करवाना होय छे । पहेली वाचना 'पुरिसवरगधहत्थीण' सुधीनी, बीजी वाचना 'चाउरतचक्कवट्टीण' सुधीनी अने त्रीजी वाचना 'सव्वे तिविहेण वदामि' सुधीनी छे ।] ॥ २ ॥

---

१ उपधानना अर्थविस्तार माटे जुओ–'श्री प्रतिक्रमणसूत्र-प्रबोधटीका' भा २, पृ० ५९ थी ६१

तयणंतरं गुणड्ढे साहू वंदिज्ज परमभत्तीए ।
साहम्मियाण कुज्जा जहारिहं तह पणामाई ॥ ३० ॥

जाव य महग्घ-माउक्क-चोक्ख-वत्थप्पयाणपुव्वेणं ।
पडिवत्तिविहाणेणं कायव्वो गुरुयसम्माणो ॥ ३१ ॥

एयावसरे गुरुणा सुविइयगंभीरसमयसारेण ।
अक्खेवणि-विक्खेवणि-संवेयणिपमुहविहिणा उ ॥ ३२ ॥

भवनिव्वेयपहाणा सद्धासंवेगसाहणे पउणा ।
गुरुएण पबंधेणं धम्मकहा होइ कायव्वा ॥ ३३ ॥

सद्धासंवेगपरं सूरी नाऊण तं तओ भव्वं ।
चिइवंदणाइकरणे इय वयणं भणइ निउणमई ॥ ३४ ॥

भो भो देवाणुप्पिय ! संपावियसयलजम्मसाफल्ल ! ।
तुमए अज्जप्पभिई तिकालं जावजीवाए ॥ ३५ ॥

वंदेयव्वाइं चेइयाइं एगग्गसुथिरचित्तेणं ।
खणभंगुराओ मणुयत्तणाओ इणमेव सारं ति ॥ ३६ ॥

ते पछी गुणाढ्य एवा साधुओने परमभक्तिथी वंदन करे अने साधर्मिकोने यथोचित रीते प्रणामादि करे ॥ ३० ॥

ते समये बहुमूल्य, मृदु अने चोक्खां वस्त्रो आपवापूर्वक प्रतिपत्तिविधानवडे (सेवा-भक्ति वडे) गुरुनुं सन्मान करवुं जोईए ॥ ३१ ॥

ए अवसरे सारी रीते जाण्यो छे गंभीर एवा सिद्धांतना सारने जेणे एवा गुरुए आक्षेपणी (श्रोताओना मनने आकर्षण करनारी), विक्षेपणी (कथानो एक भेद), संवेदनी (वैराग्यजनक कथा) प्रमुखविधिथी भवनिर्वेदप्रधान तथा श्रद्धा अने संवेगने साधवामां (प्राप्त कराववामां) प्रगुण (पटु, निपुण) एवी धर्मकथाने मोटा प्रबंधपूर्वक करवी जोईए ॥ ३२-३३ ॥

ते पछी श्रद्धा अने संवेगमां परायण एवा तेने 'भव्य' जाणीने (ते व्यक्तिमां देखाता श्रद्धा अने संवेगना चिह्नोथी "ते भव्य छे" एम जाणीने) निपुणमतिवाळा आचार्य चैत्यवंदन करवा माटे आ प्रकारनां वचन भणे ॥ ३४ ॥

हे देवानुप्रिय ! आ जन्मनी समग्र सफळताने प्राप्त करनार ! तारे आजथी जीवनपर्यंत त्रणे काळ एकाग्र अने अत्यंत स्थिर चित्तथी चैत्योनुं वंदन करवुं जोईए; कारणके आ क्षणभंगुर एवा मनुष्यपणानो सार आ ज छे ॥ ३५-३६ ॥

अह सोहणतिहि-करणे-मुहुत्त-नक्खत्त जोग-लग्गम्मि ।
अणुकूलम्मि ससिनले सस्से सस्सेयसमयम्मि[1] ॥ २२ ॥
निययविहवाणुरूप सपाडियभुवणनाहपूएण ।
फुडभत्तीए विहिणा पडिलाहियसाहुवग्गेण ॥ २३ ॥
भत्तिभरनिब्भरेण हरिसवसोल्लसियबहलपुलएण ।
सद्धा सवेग विवेग-परमवेरग्गजुत्तेण ॥ २४ ॥
निद्वियघणराग दोस मोह-मिच्छत्त मलकलंकेण ।
अइउल्लसतनिम्मलअज्झवसाएण अणुसमय ॥ २५ ॥
तिहुयणगुरुजिणपडिमाविणिवेसियनयणमाणसेण तहा ।
जिणचदवदणाए धन्नोऽहि मन्नमाणेण ॥ २६ ॥
नियसिररइयकरकमलमउलिणा जतुविरहिओगासे ।
निस्सक सुत्तत्थ पय पय भावयतेण ॥ २७ ॥
जिणनाहदिट्ठगमीरसमयकुसलेण सुद्धचरित्तेण ।
अपमायाईबहुविहगुणेण गुरुणा तहा सद्धिं ॥ २८ ॥
चउविहसघजुएण विसेसओ नियंयबधुसहिएण ।
इय विहिणा निउणेण जिणबिंब वदणिज्ज च ॥ २९ ॥

शुभ तिथि, करण, मुहूर्त, नक्षत्र, योग, लग्न अने अनुकूळ तेमज प्रशस्त चद्रबळ होय त्यारे प्रशस्त समयमा पोताना वैभव अनुसार भुवननाथ (श्री जिनेश्वरदेव)नी पूजा करीने अने विधिपूर्वक प्रगट भक्तिथी साधुवर्गने वहोरावीने भक्तिना भारथी नम्र बनेलो, हर्षथी उल्लसित थयेला पुष्कळ रोमयुक्त (हर्षथी विशेष रोमाचित थयेलो), श्रद्धा, सवेग, विवेक अने परम वैराग्यवाळो, जेना घन राग, द्वेष, मोह, मिथ्यात्वरूप कलको दूर थया छे एवो, प्रतिसमय अत्यत प्रवर्धमान निर्मळ अध्यवसायवाळो, त्रिभुवनना गुरु एवा श्रीजिनेश्वरभगवतनी प्रतिमामा दृष्टि अने मनने परोवतो, श्रीजिनेश्वरदेवने करायेल वदना वडे 'हु धन्य थयो छु' एम मानतो, जतुथी रहित स्थळमा पोताना मस्तक उपर रची छे करकमळनी अजलि जेणे एवो अने पदे पदे सूत्रना अर्थने नि शकपणे भावतो एवो ते श्री जिनेश्वर भगवाने बतावेला गभीर सिद्धातमा निपुण, पवित्र चारित्रवाळा तेमज अप्रमाद वगेरे बहुविध गुणवाळा एवा गुरुनी साथे, चतुर्विध सघनी साथे तथा विशेषत पोताना स्वजन सबधी बधुवर्गनी साथे आ (कहेली) विधिथी कुशळपणे श्री जिनेश्वर भगवानना बिंबने वदन करे ॥ २२ थी २९ ॥

1 सस्सेय समय=मांगलिक समय ।

'भो भो सुलद्धनियजम्म! निचियअइगुरुअ-पुण्णपब्भार! ।
नारय-तिरियगईओ तुज्झ अवस्सं निरुद्धाओ ॥ ४५ ॥

नो बंधगो य सुंदर! तुममित्तो अयस-नीयगोत्ताणं ।
न य दुलहो तुह जम्मंतरे वि एसो नमोकारो ॥ ४६ ॥

पंचनमोक्कारपभावओ य जम्मंतरे वि किर तुज्झ ।
जातीकुलरूवारोग्गसंपयाओ पहाणाओ ॥ ४७ ॥

अन्नं च इमाउ चिय न हुंति मणुया कयावि जियलोए ।
दासा पेसा दुभगा नीया विगलिंदिया चेव ॥ ४८ ॥

किं बहुणा जे गोयम ! विहिणा एयं सुयं अहिज्झित्ता ।
सुयभणियविहाणेणं सुद्धे सीले अभिरमिज्झा ॥ ४९ ॥

ते जइ नो तेणं चिय भवेण निव्वाणमुत्तमं पत्ता ।
ताऽणुत्तरगेविज्जाइएसु सुइरं अभिरमेउं ॥ ५० ॥

उत्तमकुलम्मि उक्किट्ठलट्ठसव्वंगसुंदरा पयडी ।
सयलकलापत्तट्ठा जणमणआणंदणा होउं ॥ ५१ ॥

पोताना जन्मने सारी रीते सफळ करनार, मोटा पुण्यभारने एकत्रित करनार हे (उपधान करनार) आराधक! तारी नारक अने तिर्यंच गतिओ अवश्य रोकाई गई छे ॥ ४५ ॥

हे सुंदर! तुं हवे पछी अपयशनामकर्म अने नीचगोत्रकर्मनो बंधक नहीं बने! अने तने बीजा जन्मोमां पण आ नमस्कार दुर्लभ नहीं थाय ॥ ४६ ॥

पंच नमस्कारना प्रभावथी तने बीजा जन्ममां पण उच्च जाति, कुळ, रूप अने आरोग्यरूप संपत्तिओ अवश्य प्राप्त थशे ॥ ४७ ॥

वळी, खरेखर आथी मनुष्यो कोईपण काळे जीवलोकमां दास, चाकर, दुर्भागी, नीच अने इन्द्रियोनी खोडखांपणवाळा थता नथी ॥ ४८ ॥

हे गौतम! वधु शुं कहुं? विधिपूर्वक आ श्रुतनो अभ्यास करीने श्रुतमां दर्शावेला विधान अनुसार शुद्ध शीलमां तुं रमणशील बन ॥ ४९ ॥

जो तेओ ते ज भवमां उत्तम निर्वाण (मोक्ष)ने प्राप्त न करे तो अनुत्तरविमान अथवा ग्रैवेयक वगेरेमां लांबा समय सुधी सुखो भोगवीने; उत्तम कुळमां (जन्म लईने); शरीरथी उत्कृष्ट, लष्ट अने सर्वांगसुंदर, सर्व कळाओमां निष्णात, मनुष्योना मनने आनंद आपनारा थईने;

तत्थ तुमे पुव्वण्हे पाण पि न चेव ताव पेयव्व ।
नो जाग चेइयाइ साहू विय वदिया विहिणा ॥ ३७ ॥
मज्झण्हे पुणरवि वदिऊण नियमेण कप्पए भोत्तु ।
अवरण्हे पुणरवि वदिऊण नियमेण सयणं ति ॥ ३८ ॥
एवमभिग्गहबध काउ तो वद्धमाणविज्जाए ।
अभिमतिऊण गेण्हइ सत्त गुरू गधमुट्ठीओ ॥ ३९ ॥
तस्सोत्तमगदेसे 'नित्थारगपारगो भविज्ज' त्ति ।
उच्चारेमाणु चिय निक्खिवइ गुरू सुपणिहाण ॥ ४० ॥
एयाए विज्जाए पभावजोगेण जो स किर भव्वो ।
अहिगयकज्जाण लहुं नित्थारगपारगो होइ ॥ ४१ ॥
अह चउविहो वि सघो 'नित्थारगपारगो भविज्ज तुम धन्नो ।
सुलक्खणो' जपिरो त्ति से निक्खिवइ गधे ॥ ४२ ॥
तत्तो जिणपडिमाए पूयादेसाउ सुरहिगधड्ढ ।
अमिलाण सियदाम गिण्हिय विहिणा सहत्थेण ॥ ४३ ॥
तस्सोभयखधेसु आरोवितेण सुद्धचित्तेण ।
निस्सदेह गुरुणा वत्तव्व एरिस वयण ॥ ४४ ॥

तेथी तु दिवसना पूर्व भागमा-सवारे ज्या सुधी चैत्यो अने साधुओने विधिपूर्वक वदन न करे त्या सुधी तारे पाणी पण न पीवु, मध्याह्ने पण फरीथी चैत्यो अने साधुओने वादीने ज (वाद्या पछी ज) आहार करवो तने कल्पे (भोजन करवु) अने दिवसना पाछला भागमा पण फरीथी ए ज रीते वदन कर्या पछी ज रात्रिए शयन करवु तने कल्पे ॥ ३७ ३८ ॥

आ प्रकारे अभिग्रहबध करीने (अभिग्रह करावीने) गुरु गध(वासक्षेप)नी सात मूठीओने वर्धमानविद्याथी मतरीने ग्रहण करे छे अने ते (उपधान करनार)ना मस्तक उपर 'नित्थारगपारगो भविज्ज'–'तु ससारने पार करनारो था' ए प्रकारे कहेता तेओ (गुरु) प्रणिधान-पूर्वक (वास) निक्षेप करे छे ॥ ३९-४० ॥

आ विद्याना प्रभावनायोगथी जो ते खरेखर भव्य होय तो स्वीकारेला कार्योना पारने शीघ्रत पामनारो थाय छे ॥ ४१ ॥

हवे चतुर्विध सघ पण–'तमे ससारने पार करनारा थाओ, तमे धन्य छो, सुलक्षण छो' एम बोलीने ते गध (वासक्षेप) तेना उपर नाखे छे ॥ ४२ ॥

ते पछी (गुरुए) श्री जिनेश्वर भगवाननी प्रतिमानी पूजाना आदेशथी सुरभिगधथी आढय, नहीं करमायेली एवी श्वेत माळाने ग्रहण करीने पोताने हाथे विधिपूर्वक शुद्ध चित्तथी तेना बन्ने खभा उपर नाखता गुरुए आ प्रकारे नि सदेह कहेवु जोईए ॥ ४३-४४ ॥

[७]

वद्धमाणविज्जाविही ॥

ॐ नमो अरिहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं ॐ नमो आयरियाणं, ॐ नमो उवज्झायाणं, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं; ॐ नमो अरहओ भगवओ महईमहावीरवद्धमाणसामिस्ससिज्झउ मे भगवई महई महाविज्जा वीरे महावीरे जयवीरे सेणवीरे वद्धमाणवीरे जए विजए जयंते अपराजिए अणिहए ॐ ह्रीँ हः ठः ठः स्वाहा ॥

॥ विधिः ॥

(पूज्याराध्यपं० श्रीअमरहंसगणिचरणपादुकेभ्यो नमः ॥ श्रीवर्द्धमानस्वामिने नमः ।)

पञ्चाङ्गशौचं कृत्वा—'ॐ भूरिसि भूतधात्रि सर्वभूतहिते भूमिशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।' त्रिः सृष्ट्वा वासक्षेपेण भूमिशुद्धिं कुर्यात् ॥ १ ॥

'ॐ अमले विमले सर्वतीर्थजले पॉ पॉ वां वां अशुचिः शुचिर्भवामि स्वाहा ।' अञ्जलौ सर्वतीर्थजलं संकल्प्य ललाटादारभ्य पादतलं यावत् स्नायात् ॥ २ ॥

'ॐ ह्रीँ इवीँ क्ष्वीँ पाँ पॉ वस्त्रशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा' इति वस्त्रशुद्धिः ॥ ३ ॥

'ह्रॉ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ हः ।' अङ्गुष्ठादिषु वामकरेण न्यसेत् ॥ ४ ॥

अनुवाद

प्रथम पंचांग एटले बे हाथ, बे ढींचण अने मस्तक एम पांचे अंग उपर हाथ फेरवी पवित्र बनाववां, ते पछी भूमिने शुद्ध करवा माटे आ मंत्र बोलवो—

"ॐ भूरिसि भूतधात्रि सर्वभूतहिते भूमिशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।"

आ मंत्र बोलीने (भूमिनी आसपास) त्रण वार जमणा आवर्त (एटले घडियाळना कांटा जे बाजुएथी फरे ते रीत)थी वासक्षेप वडे भूमिने शुद्ध करवी ॥ १ ॥

पछी—"ॐ अमले विमले सर्वतीर्थजले पॉ पाँ वां वां अशुचिः शुचिर्भवामि स्वाहा ।"

आ मंत्र बोलतां अंजलि–खोबामां समग्र तीर्थोनुं पाणी छे एवो संकल्प करीने ललाटथी मांडीने पगनां तळियां सुधी स्नान करुं छुं एवो विचार करवो ॥ २ ॥

पछी—"ॐ ह्रीँ इवीँ क्ष्वीँ पाँ पाँ वस्त्रशुद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।"

आ मंत्र बोलतां बोलतां वस्त्रो उपर हाथ फेरवीने वस्त्रोनी शुद्धि करवी ॥ ३ ॥

पछी–"ह्रॉ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ हः"—आ मंत्राक्षरो बोलतां डाबा हाथ वडे जमणा हाथनो अंगूठो वगेरे पांचे आंगळीमां क्रमशः एकेक अक्षरनो न्यास करवो ॥ ४ ॥

देविंदोवमरिद्धी दयापरा विणयदाणसपन्ना ।
निव्विन्नकामभोगा धम्म सयल अणुट्ठेउ ॥ ५२ ॥
सुहझाणानलनिद्दङ्घघाइकम्मिधणा महासत्ता ।
उप्पन्नविमलनाणा निहुयमला झत्ति सिज्झति ॥ ५३ ॥
इय विमलफल सुणिउ जिणस्स महमाणदेवसूरिस्स ।
वयणा उवहाणमिण साहेह महानिसीहाओ ॥ ५४ ॥

उवहाणविही समत्तो ॥

देवेन्द्र जेवी ऋद्धिवाळा, दयामा तत्पर, विनय अने दानथी युक्त, कामभोगथी निर्वेद पामेला, सकल धर्मने सेवीने शुभ ध्यानरूपी अग्निथी घातीकर्मरूपी इधणने बाळनार एवा ए महान (सत्त्ववाळा) आत्माओ निर्मळ ज्ञाननी प्राप्तिवाळा मलरहित (बनीने) सिद्धिपदवीने शीघ्रत पामे छे ॥ ५०–५३ ॥

आवी रीते (उपर कह्या मुजब) देवो अने आचार्योवडे (पण) पूजाता[1] एवा श्री जिनेश्वर भगवानना वचनथी श्री महानिशीथसूत्रना आधारे 'आ उपधान विमल फळवाळु छे' एम साभळीने तेने तमे साधो ॥ ५४ ॥

परिचय

आ 'उपधानविधिस्तोत्र' श्रीजिनप्रभसूरिरचित 'विधिमार्गप्रपा' नामक ग्रथ (प्रकाशक श्रीजिनदत्तसूरि प्राचीन पुस्तकोद्धार फड, सूरत, ग्रथाक ४४, वि० स० १९९७) माथी उपलब्ध थयु छे। नमस्कारमत्रनी वाचना लेवा माटे जे प्रकारनी तपस्या करवानी आवश्यकता रहे छे ते तपस्याप्रकार उपर श्रीमानदेवसूरिए करेली आ रचना ठीक ठीक प्रकाश पाडे छे। श्रीजिनप्रभसूरिए आ स्तोत्रने पोताना ग्रथमा मानभेर स्थान आप्यु छे।

श्रीमानदेवसूरि नामना बे आचार्यो थयानु वर्णन पट्टावलीओमाथी जाणवा मळे छे। तेमा पहेला मानदेवसूरिनो २० मा पट्टधर तरीके अने बीजा मानदेवसूरिनो २८ मा पट्टधर तरीके उल्लेख करायो छे। पहेला मानदेवसूरि ते 'लघुशातिस्तोत्र' ना कर्ता, जेओ वीर निर्वाण स० ७३१ (वि० स० २६१) पछी स्वर्गवासी थया, अने बीजा मानदेवसूरि प्रसिद्ध आचार्य श्रीहरिभद्रसूरिना मित्र हता एम जाणवा मळे छे। केटलीक पट्टावलीओमा बने मानदेवसूरिनो २१ मा अने २९ मा पट्टधर तरीके पण क्रम बताव्यो छे। आ बने पैकी कया मानदेवसूरिए आ स्तोत्रनी रचना करी ए जाणवानु साधन उपलब्ध नथी।

---

१ बीजो अर्थ बधु सगत न लागवाथी 'महमाण' ना अर्थ 'पूजाता' एवो करीने, आ अर्थ कर्यो छे

'ॐ ॐ नमः' सामान्यार्थः, वासैः संवृतपट्टपूजा। ततो मण्डलोद्घाटनं पट्टनिश्चलीकरणं, गर्भादारभ्य मण्डलपूजां कृत्वा आवाहनादिपञ्चकं स्वस्वमुद्राभिः कुर्यात्। तद् यथा—

'ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवन्! वर्धमानस्वामिन्! एह्येहि संवौषट्।' इत्याह्वानं आवाहन्या मुद्रया ॥ १ ॥

'ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवन्! वर्द्धमानस्वामिन्! तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।' स्थापन्या स्थापनम् ॥ हृत्कमलादवतार्य पटे स्थापयेत् ॥ २ ॥

'ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवन्! वर्द्धमानस्वामिन्! मम संनिहितो भव वषट्।' संनिधापन्या संनिधापनम् ॥ ३ ॥

नाभिमां श्वेतवर्णनो 'प' छे एवो संकल्प करवो।
हृदयमां लाल वर्णनो 'ॐ' छे एवो संकल्प करवो।
मुखमां नील वर्णनो 'स्वा' छे एवो संकल्प करवो।
ललाटमां कस्तूरी जेवा (श्याम) वर्णनो 'हा' छे एवो संकल्प करवो।
ते पछी ऊलटा क्रमे—ललाटमां श्याम वर्णनो 'हा' छे एवो संकल्प करवो।
मुखमां नील वर्णनो 'स्वा' छे एवो संकल्प करवो।
हृदयमां लाल वर्णनो 'ॐ' छे एवो संकल्प करवो।
नाभिमां श्वेत वर्णनो 'प' छे एवो संकल्प करवो।
पगमां पीत वर्णनो 'क्षि' छे एवो संकल्प करवो।

आ रीते पृथ्वी, अप्, तेज, वायु अने आकाश ए पंच महाभूतोनो विचार करतां 'सकलीकरण' थाय छे ॥ ८ ॥

'ॐ ॐ नमः' ए सर्वसाधारण अर्थसूचक मंत्र छे। ए मंत्र बोलीने बांधेला अने वींटी राखेला 'वर्धमानविद्या' ना पटनी पूजा करवी।

ते पछी ए पटने खोलवो अने बराबर स्थिर करवो। तेमां गर्भ-वच्चेना बिंदुथी मांडीने समग्र पटनां मंडलो-आवर्तोनी पूजा करवी। ते पछी आवाहन वगेरे (१ आवाहन, २ स्थापना, ३ संनिधान, ४ संनिरोधन अने ५ अवगुंठन) पांच उपचार-पूजाओ पोतपोतानी मुद्राओथी करवी; ते आ रीते—

"ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवन्! वर्धमानस्वामिन्! एह्येहि संवौषट्।"
आ मंत्र बोलीने आवाहनी मुद्रावडे आवाहन करवुं। (१)

"ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवन्! वर्धमानस्वामिन्! तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।"
आ मंत्र बोलीने स्थापनी मुद्रावडे स्थापना करवी। अर्थात् (भगवानने) हृदयकमळमांथी उपाडीने पटमां स्थापन करवा। (२)

"ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवन्! वर्धमानस्वामिन्! मम संनिहितो भव वषट्।"
आ मंत्र बोलतां संनिधापनी मुद्रावडे संनिधापन करवुं एटले सामीप्य करवुं। (३)

'ॐ विद्युत्स्फुलिङ्गे सर्वकल्मष दह दह स्वाहा ।' त्रिर्भुजामध्यस्पर्शेन कल्मषदहन कुर्यात् ॥ ५ ॥

'ॐ विमलाय विमलचित्ताय झ्वी क्ष्वीँ स्वाहा ।' हृदयशुद्धि कुर्यात् ॥ ६ ॥

'नमो अरिहताण अङ्गुष्ठयो, नमो सिद्धाण तर्जन्यो, नमो आयरियाण मध्यमयो, नमो उवज्झायाण अनामिकयो, नमो लोए सव्वसाहूण कनिष्ठयो, हृत्[1]-कण्ठ[2]-तालु[3]-भ्रूमध्य[4]-ब्रह्मरन्ध्रेषु[5] यथासख्य ह्राँ[1] ह्रीँ[2] ह्रूँ[3] ह्रैँ[4] ह्रौँ[5] वामकरेण न्यसेत् । तत 'ॐ कुं रुं कुं ह्ले स्वाहा' वामकरेण वामास[1]-वामकुक्षि[2]-वामचरण[3] दक्षिणचरण[4]-दक्षिणकुक्षि[5]-दक्षिणासेषु, ततो वैपरीत्येन तेष्वङ्गेषु 'हा स्वा ह्ले कुं रु कुं ॐ' दु स्वप्न दुर्निमित्ताशनि विद्युत् शत्रुभयादिरक्षा ॥ ७ ॥

तत 'क्षिप ॐ स्वाहा' 'क्षि' पीतवर्ण पदो, 'प' श्वेतवर्ण नाभौ, 'ॐ' रक्तवर्ण हृदि, 'स्वा' नीलवर्ण मुखे, 'हा' मृगमदवर्ण भाले, ततो वैपरीत्येन 'हा स्वा ॐ प क्षि' इति पृथिव्यप्-तेजो-वाय्वाकाशैर्महाभूतै सकलीकरणम् ॥ ८ ॥

पछी–"ॐ विद्युत्स्फुलिङ्गे सर्वकल्मष दह दह स्वाहा ।"

आ मत्र बोलता त्रण वार भुजाओ उपर स्पर्श करीने पापने दहन करवु ॥ ५ ॥

पछी–"ॐ विमलाय विमलचित्ताय झ्वीँ क्ष्वीँ स्वाहा ।"

आ मत्र बोलता हृदय उपर हाथ फेरवीने हृदयशुद्धि करवी ॥ ६ ॥

पछी– अगूठामा 'नमो अरिहताण' बोलीने न्यास करवो ।

तर्जनीमा 'नमो सिद्धाण' बोलीने न्यास करवो ।

मध्यमामा 'नमो आयरियाण' बोलीने न्यास करवो ।

अनामिकामा 'नमो उवज्झायाण' बोलीने न्यास करवो ।

कनिष्ठामा 'नमो लोए सव्वसाहूण' बोलीने न्यास करवो ।

पछी–हृदयमा 'ह्राँ', कठमा 'ह्रीँ', ताळवामा 'ह्रूँ', भ्रमर वच्चे 'ह्रैँ' अने मस्तकमा–ब्रह्मरध्रमा 'ह्रौँ' नो क्रमश डावा हाथे न्यास करवो ।

पछी– डावा पडखामा 'कु' नो न्यास करवो, डावी कुक्षीमा 'रु' नो न्यास करवो, डावा पगमा 'कु' नो न्यास करवो, जमणा पगमा 'ह्ले' नो न्यास करवो, जमणी कुक्षीमा 'स्वा' नो न्यास करवो अने जमणा पडखामा 'हा' नो न्यास करवो ।

ते पछी ऊलटा क्रमे– जमणा पडखामा 'हा' नो न्यास करवो, जमणी कुक्षीमा 'स्वा' नो न्यास करवो, जमणा पगमा 'ह्ले' नो न्यास करवो, डावा पगमा 'कु' नो न्यास करवो, डावी कुक्षीमा 'रु' नो न्यास करवो, डावा पगमा 'कु' नो न्यास करवो ।

आ रीते "कुरुकुल्ले स्वाहा" ए रक्षामत्रथी विधि करता खराब स्वप्नो, खराब निमित्तो, अग्नि, वीजळी अने शत्रु वगेरेना भय सामे रक्षण थाय छे ॥ ७ ॥

ते पछी–'क्षिप ॐ स्वाहा' ए मत्रथी सकलीकरण करवु, ते आ रीते—

पगमा पीतवर्णनो 'क्षि' छे एवो सकल्प करवो ।

इति देवतावसरे नित्यकृत्यं वाचनाचार्योपाध्याययोः ॥

यदा वर्धमानविद्याजापप्रारम्भो विधीयते तदा–'इमं विज्जं पउंजामि सिज्झउ मे पसिज्झउ ।' इति प्राक् स्मर्यते । जापः सफलीभवति सर्वः ।

सावित्रीमूलस्थापिताङ्गुष्ठाञ्जलिरावाहनी ॥ १ ॥
सैवाधोमुखी स्थापनी ॥ २ ॥
ऊर्ध्वाङ्गुष्ठे मुष्टी मिलिते संनिधापनी ॥ ३ ॥
अभ्यन्तराङ्गुष्ठे मुष्टी मिलिते संनिरोधिनी ॥ ४ ॥
मुष्टिं बद्ध्वा प्रसारिततर्जनी-मध्यमोपरि निवेशिताऽङ्गुष्ठाऽवगुण्ठनी ॥ ५ ॥
दक्षिणमुष्टिं बद्ध्वा तर्जनी-मध्यमे प्रसारयेद् इति अस्त्रमुद्रा ॥ ६ ॥
अङ्गुलीक्रमसंकोचनलक्षणः दक्षिणकरसंनिवेशः संहारमुद्रा ॥ ७ ॥

यासां विद्याना यावान् जापः तावतो समाप्तौ स्वापस्खलिते जापनैष्फल्यं, अतः पुनः प्रारब्धव्यः ॥

आ श्लोक वोलीने नीचेनो मंत्र भणवो—

"ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवन् ! वर्धमानस्वामिन् ! पुनरागमनाय स्वस्थानं गच्छ गच्छ यः यः यः ।"

आ मंत्र वोलतां संहारमुद्रा करीने (देवनुं) विसर्जन करवुं । एटले सुषुम्णा नाडीमां पूरक करीने (श्वास लईने) हृदयकमलमां (भगवानने) पाछा स्थापन करवा ।

आ रीते देवनी पूजा करतां वाचनाचार्य अने उपाध्याये आ कृत्यविधि नित्य करवी ।

ज्यारे वर्धमानविद्याना जाप करवामां आवे त्यारे सौ प्रथम–**"इमं विज्जं पउंजामि सिज्झउ मे पसिज्झउ"** एम वोलीने जापनी शरूआत करवी जोईए । आम वोलवाथी वधो जाप सफळ थाय छे ।

(मुद्राओ)

१. वे हाथ वडे अंजलि करीने अनामिकाना मूळना पर्वमां अंगूठा लगाडी राखवा तेने 'आवाहनी मुद्रा' कहे छे ।

२. आह्वाहनी मुद्राने ज ऊलटी रीते बतावववी तेने 'स्थापनी मुद्रा' कहे छे ।

३. वंने हाथनी मूठीओ वाळी अंगूठाने ऊंचा करवा तेने 'संनिधापनी मुद्रा' कहे छे ।

४. वंने हाथनी मूठीओमां अंगूठा दवावी राखवा तेने 'संनिरोधिनी मुद्रा' कहे छे ।

५. वंने हाथनी मूठीओ वाळी तर्जनी आंगळीओने लांवी करवी अने मध्यमा आंगळी उपर अंगूठा लगाडवा तेने 'अवगुंठनी मुद्रा' कहे छे ।

६. जमणा हाथनी मूठी वाळी तर्जनी अने मध्यमा आंगळीओने लांबी करवी तेने 'अस्त्रमुद्रा' कहे छे ।

७. जमणा हाथनी आंगळीओने एक पछी एक एम संकोची लेवी तेने 'संहारमुद्रा' कहे छे ।

'ॐ ह्रीं नमोऽस्तु भगवन्! वर्द्धमानस्वामिन्! पूजान्त यावदत्रैव स्थातव्यम्' सनिधिन्यास-निरोधनम्॥ ४॥

'ॐ ह्रीं नमोऽस्तु भगवन्! वर्द्धमानस्वामिन्! परेपामदृश्यो भव।' अवगुण्ठन्याऽवगुण्ठनम् इति॥ ५॥

तत 'ॐ ह्रीं नमोऽस्तु भगवन्! वर्द्धमानस्वामिन्! गन्धादीन् गृह्ण गृह्ण नम।' गन्धादीभि पूजा। अमृतमुद्रया सजीवितापादन, समवसरणभगवद्रूपध्यानम्॥ ६॥

ततश्छोटिका विघ्नत्रासार्थम्॥ ७॥

सौभाग्य-परमेष्ठि-प्रवचन-सुरभि-कृताञ्जलीलक्षणमुद्रापञ्चक मूलमन्त्रजापपूर्वं दर्शयेत्। ततो १०८ जापो मेरूल्लङ्घन-शिरःकम्पोष्ठचालनदन्तविवृतित्याग। जापान्तेऽस्त्रमुद्रयाऽऽसनक्षोभणम्॥ ८॥

"ॐ आज्ञाहीन क्रियाहीन, मन्त्रहीन च यत् कृतम्।
तत् सर्वं कृपया देव! क्षमस्व परमेश्वर!॥"

इति श्लोक पठित्वा—'ॐ ह्रीं नमोऽस्तु भगवन्! वर्द्धमानस्वामिन्! पुनरागमनाय स्वस्थान गच्छ गच्छ य य य।' इति संहारमुद्रया विसर्जनम्। सुप(पु)ष्पया पूरकेण हृत्कमल प्रत्यानयेत्॥

"ॐ ह्रीं नमोऽस्तु भगवन्! वर्धमानस्वामिन्! पूजान्त यावदत्रैव स्थातव्यम्।"

आ मत्र बोलता सनिधिन्यासनो निरोध करवो—(अर्थात् भगवानना सामीप्यने वधु स्थिर करवु।) (४)

"ॐ ह्रीं नमोऽस्तु भगवन्! वर्धमानस्वामिन्! परेपामदृश्यो भव।"

आ मत्र बोलता अवगुठनी मुद्रावडे अवगुठन एटले आच्छादन करवु। (५)

ते पछी— "ॐ ह्रीं नमोऽस्तु भगवन्! वर्धमानस्वामिन्! गन्धादीन् गृह्ण गृह्ण नमः।"

आ मत्र बोलता गध(वासक्षेप)वडे पूजा करवी। अमृतमुद्राथी तेओ जीवत छे एवो सकल्प करवो अने भगवान समवसरणमा बेठेला छे एवु ध्यान करवु। (६)

पछी विघ्नोना नाश माटे छोटिका करवी (अर्थात् दश दिशाओने बाधी लेवी।) (७)

वर्धमानविद्याना मूळ मत्रनो जाप करता १ सौभाग्यमुद्रा, २ परमेष्ठीमुद्रा, ३ प्रवचनमुद्रा, ४ सुरभिमुद्रा अने ५ अंजलीमुद्रा—ए पाच मुद्राओ करी बताववी।

ए पछी (वर्धमानविद्या) मत्रनो १०८ वार जाप करवो। जापमा नवकारवाळीना मेरुने ओळगवो नहीं, (एटले मेरुपूर्वक जाप करवो,) माथु हलाववु नहीं, ओठ फफडाववा नहीं, दात खुल्ला करवा नहीं। जाप पूरो कर्या पछी अस्त्रमुद्रा वडे आसनने हलाववु। (८)

पछी— "ॐ आज्ञाहीन क्रियाहीन मन्त्रहीन च यत् कृतम्।
तत् सर्वं कृपया देव! क्षमस्व परमेश्वर!॥" *

---

* (आ प्रकारे विधि करतां—) हे देव परमेश्वर! आपनी आज्ञा उठाववामां, क्रिया-विधिमां अने मंत्रमां जे कंई खामी आवी होय ते कृपा करीने माफ करजे।

निह्नाइ दव्व-भावोवउत्त जं कुज्ज सम्मदिट्ठी उ।
नेवाइअं पयं दव्व-भावसंकोयणपयत्थो॥ ४॥ ८९०॥

कर्मी जीव वाचना लेवा छतां नमस्कारने पामतो नथी ज्यारे लघुकर्मी जीव वाचना विना पण तदावरण कर्मना क्षयोपशमथी ते नमस्कारने अवश्य पामे छे, माटे लब्धि ज तेनो हेतु छे, वाचना नथी[1]।

पहेला त्रण नयो समुत्थान, वाचना अने लब्धिने कारण माने छे। ऋजुसूत्र वाचना अने लब्धिने कारण माने छे अने शब्द, समभिरूढ तेमज एवंभूत ए नयो एक ज लब्धिने ज कारण माने छे[2]। २–३, (८८८–८८९)

२. निक्षेप द्वार।

श०—निह्नव वगेरे जे नमस्कार करे ते द्रव्य नमस्कार छे अने उपयोगवंत सम्यग्दृष्टि जे नमस्कार करे ते भाव नमस्कार छे। 'नमः' ए नैपातिक 'पद' छे अने द्रव्य, तथा भावनो संकोच ते 'नमो' शब्दनो 'पदार्थ' छे। (४)

वि०—निक्षेप एटले न्यास। दरेक शब्दना ओछामां ओछा चार अर्थो जोवामां आवे छे। ए ज चार अर्थ ए शब्दना अर्थ-सामान्यना चार विभाग छे। ए विभागने ज निक्षेप एटले 'न्यास' कहे छे, ते न्यास चार प्रकारनो छे।

१. नाम निक्षेप—जे अर्थ व्युत्पत्तिसिद्ध न होय पण फक्त लोकोना संकेतवळथी जाणी शकाय ते। २. स्थापना निक्षेप—जेमां मूळ वस्तुनो आरोप करायो होय ते। ३. द्रव्य निक्षेप—भाव निक्षेपनी पूर्व अथवा उत्तर अवस्था होय ते। ४. भाव निक्षेप—जे अर्थमां व्युत्पत्तिनिमित्त अने प्रवृत्तिनिमित्त घटतुं होय ते। ए रीते नमस्कारना चार निक्षेपो थाय छे।

१. नाम नमस्कार—कोई वस्तुविशेषने 'नमः—नमस्कार' एवुं नाम आप्युं होय ते नाम नमस्कार।

२. स्थापना नमस्कार—कोई वस्तुविशेषमां 'नमः' एम लखीने स्थापना करवामां आवे, ते स्थापना नमस्कार।

३. द्रव्य नमस्कार—निह्नव वगेरे जे नमस्कार करे ते अथवा भाव नमस्कारनी पूर्व के उत्तर अवस्था होय ते द्रव्य नमस्कार।

---

१. प्र०—वाचना क्षयोपशमरूप कारणनुं परंपरा कारण होवाथी नमस्कारनुं कारण छे एम केम न मनाय?

उ०—ना, एम मानवामा आवे तो, बधी बाह्य वस्तु पृथ्वी, आसन, शयन, आहार, वस्त्र, पात्र वगेरे जे क्षयोपशमना कारण छे तेथी ते पण परंपराए नमस्कारनुं कारण बनी जशे।

प्र०—वाचनारूप शब्द मात्रमा ज कारणनो नियम शा माटे कहो छो? परंपराए तो बधी बाह्य वस्तुओ पण नमस्कारना कारणने उपकारी छे, तोपण वाचना नजीकनुं उपकारी होवाथी ते तेनुं कारण छे एम केम न मनाय?

उ०—एम थाय तो तो मात्र लब्धिने ज तेनुं ऐकांतिक कारण मानी लेवुं जोईए; केमके ते ज नमस्कारनुं नजीकनुं कारण छे। जो एम मानवामा आवे तो वाचना मात्रनो नियम सिद्ध नहीं थाय, अने पूर्वोक्त पृथ्वी, आसन, शयन वगेरे पण तेना कारण बनी जशे।

"ॐ नमो भगवओ महइ महावद्धमाणसामिस्स सिज्झउ मे भगवई महई महाविज्जा वीरे वीरे महावीरे जयवीरे सेणवीरे वद्धमाणवीरे जये विजये जयते अपराजिए स्वाहा ॥

प्रातरवश्य वार २१ वा—अथवा १०८ [जप्त्वा] भुञ्जीत । एतत्प्रभावात्—

सौभाग्यमापदा नाशो, राजपूज्य श्रिया पति ।
दीर्घायु शाकिनीरक्षा, सुगति स्याद् भवान्तरे ॥

इमा ग्रामप्रवेशे २१ वार जप्त्वा प्रविशेत्, शोभन कार्यं भवति ।

तथा गोरोचन-कुङ्कुम-चन्दन-केसर-जाती-फल-कर्पूर-कस्तूरी—एतच्चूर्णमनुकूले चन्द्रे प्रीतौ सौभाग्ये वा योगे वा १०८ अभिमन्त्र्य चूर्णेन तिलके कृते राजकुले राजकार्यकारी स्यात् ।

'ॐ नमो भगवओ महइ महावद्धमाणसामिस्स सिज्झउ मे भगवई महई महाविजा वीरे वीरे महावीरे जयवीरे सेणवीरे वद्धमाणवीरे जये विजये जयते अपराजिते स्वाहा ॥'

उत्तरफाल्गुन्यामुपवासो जातिकुसुमैर्वर्द्धमानजिनस्याग्रत सहस्रजापात् सिद्धयति । उत्तरकाल शुचिर्भूत्वा वार २१ मुखमभिमन्त्र्य यत्र व्रजेत् तत्र सर्वजनप्रियो भवति । अनयैव विद्यया बीजमभि

जे विद्यानो जेटलो जाप कहेवामा आव्यो होय ते पूर्ण करता वचे ऊघ आवी जाय तो जाप निष्फल थाय छे, तेथी ए जाप फरी करवो जोईए ।

"ॐ नमो भगवओ महइ महावद्धमाणसामिस्स सिज्झउ मे भगवई महई महाविज्जा वीरे वीरे महावीरे जयवीरे सेणवीरे वद्धमाणवीरे जये विजये जयंते अपराजिए स्वाहा ॥"

आ 'वर्धमानविद्या'नो प्रतिदिन सवारे २१ अथवा १०८ वार जाप कर्या पछी जमवु जोईए ।

आ विद्याना प्रभावथी—सौभाग्य मळे, आपत्तिओनो नाश थाय, राज्यमा मान वधे, धनवान् थाय, लाबु आयुष्य मळे, शाकिनीओ तेनु रक्षण करे अने भवातरमा तेने सद्गतिनी प्राप्ति थाय छे ।

गाममा प्रवेश करवानो होय त्यारे आ विद्यानो २१ वार जाप करीने प्रवेश करता बधा कार्यो सारी रीते पार पडे छे ।

वळी, गोरोचन, कुकुम, केसर, जाईनु फूल, फल, (श्रीफळ ?) कपूर, कस्तूरी—ए बधानु चूर्ण बनावीने चद्र अनुकूल होय अने प्रीतियोग अगर सौभाग्ययोग होय त्यारे आ वर्धमान-विद्याथी १०८ वार मतरीने ए चूर्णथी तिलक करवामा आवे तो राजकुलमा—राज्यकार्योमा यश मळे ।

"ॐ नमो भगवओ महइ महावद्धमाणसामिस्स सिज्झउ मे भगवई महई महाविजा वीरे वीरे महावीरे जयवीरे सेणवीरे वद्धमाणवीरे जये विजये जयते अपराजिते स्वाहा ॥"

आ वर्धमानविद्यानो, जे दिवसे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र होय ते दिवसे, उपवास करीने, जाईना पुष्पो वडे, श्रीवर्धमानस्वामीनी मूर्ति आगळ एक हजार वार जाप करवाथी ते विद्या सिद्ध थाय छे ।

पछी (विद्या सिद्ध थया पछी कार्यप्रसगे) पवित्र थईने २१ वार पोतानु मुख मतरीने ते ज्या जशे त्या दरेक माणसने प्रिय थई पडशे ।

(जीवस्वरूप नमस्कार पंचास्तिकायात्मक स्कंधरूप नथी, तेमज अविशिष्ट ग्रामरूप पण नथी, परंतु जीवरूप नमस्कार पंचास्तिकायात्मक स्कंधनो एकदेश छे तेथी ते 'नोस्कंध'रूप छे अने चौद भूतग्रामनो पण एक देश होवाथी ते नोग्रामरूप छे[2]।)

तात्पर्य ए के, नैगम आदि नयोनी अपेक्षाए जीव ज नमस्कार छे। केमके जीव ज्ञानमय छे अने नमस्कारमंत्र श्रुतज्ञानात्मक छे। आथी पंच परमेष्ठीवाचक नमस्कारमंत्र जीव छे। तेनी रूपाकृति स्वरूप शब्दो अजीव कही शकाय पण तेनो भाव तो ज्ञानमय छे ते जीवस्वरूप छे। द्रव्य अने गुणना प्रश्नोमां गुणोनो समुदाय द्रव्य कहेवाय छे, अने द्रव्य तेमज गुणमां कथंचित् भेदाभेदात्मक संबंध छे तेथी नमस्कारमंत्र कथंचित् द्रव्यात्मक अने कथंचित् गुणात्मक छे।

(२. स्वामित्व-अधिकारित्व—'नमस्कार कोने करवामां आवे छे?')

नमस्कार पामता जीवो एक अथवा अनेक होय छे एम संग्रहनय सिवायना बधा नयो माने छे। पूर्वप्रतिपन्न नमस्कारवाळा जीवो तो अवश्य अनेक होय छे, एम ते नयोथी जणाय छे। केमके, चारे गतिमां पूर्वप्रतिपन्न नमस्कारवाळा सम्यग्दृष्टि जीवो सदा असंख्याता होय छे। संग्रहनय सामान्यवादी होवाथी पूर्वप्रतिपन्न अने प्रतिपद्यमान ए उभय पक्षमां बहुत्व मानतो नथी। आ उपरथी 'नमस्कार कोनो छे?' ए प्रश्नना उत्तरमां एक जीव अथवा अनेक जीवो नमस्कारना स्वामी छे एम सिद्ध थाय छे।

प्र०—नमस्कारनो स्वामी जीव छे तो ते नमस्कार करवायोग्य पूज्य जीव स्वामी छे के नमस्कार करनार जीव स्वामी छे?

पर्यायनयना मते पर्याय ज सत्य वस्तु छे। द्रव्य तो उपचारथी छे। पर्यायथी भिन्न द्रव्य होतुं नथी, आथी (ज्ञान) गुण पर्याय ज नमस्कार छे। जेम घट तेना रूपथी भिन्न नथी तेम ज्ञान आदिथी भिन्न एवो जीव नथी, एवो पर्यायनयनो अभिप्राय छे।

२ सर्वपंचास्तिकाय ते 'स्कंध' कहेवाय छे। जीव ते स्कंधनो एक देश-भाग होवाथी नमस्कार पण तेनो एक देश छे, केमके, नमस्कारवान् अने नमस्कार ए बंनेनो अहीं अभेद उपचार छे, तेथी ते तेनो एकदेश छे। ए कारणे नमस्कारवान् जीव 'नोस्कंध'रूप कहेवाय छे।

एकेन्द्रिय आदि जीवना चौद भेदरूप भूतग्राम ते 'ग्राम' कहेवाय छे। ते ग्रामनो देव, मनुष्य आदिरूप नमस्कारवान् जीव एकदेश होवाथी नमस्कार 'नोग्राम' कहेवाय छे। वळी शब्द, समभिरूढ अने एवंभूत—ए त्रणे नयोना अभिप्राये जीव ज्यारे नमस्कारना परिणामवाळो थाय त्यारे ज नमस्कार कहेवाय छे, अने बाकीना नैगम आदि अशुद्ध नयोनी अपेक्षाए नमस्कारमा उपयोग रहित होय तो पण जो लब्धिसहित होय अथवा नमस्कारने योग्य होय तेवो जीव नमस्कार कहेवाय छे।

प्र०—नमस्कार भूतग्रामनो एकदेश होवा छता ते एक छे के अनेक?

उ०—आ हकीकत नयोना अभिप्रायथी जाणी शकाय एम छे। सग्रहनय नमस्कार जातिसामान्यथी सदा एक ज नमस्कार होय छे एम जणावे छे अने व्यवहारनय एक नमस्कारवान् जीवने एक नमस्कार माने छे, तेमज बहु जीवोने बहु नमस्कार माने छे। वळी, ऋजुसूत्र वगेरे नयो वर्तमान समयवर्ती स्वकीय वस्तुने ज वस्तु माने छे तेथी तेमना मते उपयोगवान् बहु जीवो नमस्कार छे।

---

४ भाव नमस्कार—उपयोगयुक्त सम्यग्दृष्टि जीव अरिहंत वगेरेने नमस्कार करे ते भाव नमस्कार।

नमस्कार अने नमस्कारवानना अभेद उपचारथी निह्नव तेमज द्रव्यने माटे जे कोई विद्या, मंत्रदेवता वगेरेने नमस्कार करे ते 'द्रव्य नमस्कार' कहेवाय छे, ज्यारे उपयोगयुक्त सम्यग्दृष्टि जीव अरिहंत वगेरेने नमस्कार करे ते 'भाव नमस्कार' कहेवाय छे ।

द्रव्य नमस्कार बे प्रकारनो छे—१ आगमथी अने २ नोआगमथी । जे उपयोग रहितपणे 'नमो' नमस्कार भणे ते आगमथी द्रव्य नमस्कार कहेवाय ।

नोआगमथी द्रव्य नमस्कार त्रण प्रकारे छे—१ ज्ञशरीर (ज्ञायक), २ भव्य शरीर अने ३ तद्व्यतिरिक्त । जेणे नमस्कार जाणेल छे एवा आत्मानुं शरीर ते 'ज्ञशरीर द्रव्यनमस्कार' कहेवाय छे । जे शरीरथी आत्मा भविष्यमां नमस्कार जाणशे ते शरीर 'भव्यशरीर द्रव्यनमस्कार' कहेवाय छे अने मिथ्यात्वथी रंगायेल निह्नव वगेरे भावथी जे नमस्कार करे छे ते अने सम्यग्दृष्टि जीव उपयोग रहितपणे जे नमस्कार करे ते 'तद्व्यतिरिक्त द्रव्यनमस्कार' कहेवाय छे ।

मिथ्यादृष्टिनुं ज्ञान सद्, असद्ना विशेषोथी रहित होय छे, ते भवहेतुक होय छे, स्वेच्छाए प्राप्त करेलुं होय छे अने तेमां ज्ञानना फलनो अभाव होय छे तेथी ते अज्ञानरूप छे । एटले भावपूर्वक नमस्कार करनारा निह्नवो जे नमस्कार करे ते, तेमज द्रव्यने माटे देवता वगेरेने नमस्कार कराय ते, अगर भय वगेरेना कारणथी, जेम भिखारी राजाने नमस्कार करे तेम, असंयतिने नमस्कार कराय ते 'द्रव्य नमस्कार' कहेवाय छे ।

भाव नमस्कार पण बे प्रकारनो छे—१ आगमथी अने २ नोआगमथी । नमस्कारना अर्थने जाणनार अने तेमां उपयोगवान् जे होय ते 'आगमथी भावनमस्कार' कहेवाय छे, अने नमस्कार करवामां मन वडे उपयोगयुक्त 'अरिहंतने नमस्कार थाओ' एम वचनवडे बोले तेमज हाथ–पग संकोचवा वडे नमस्कार करे त्यारे ते नमस्कार 'नोआगमथी भावनमस्कार' कहेवाय छे ।

३ पद द्वार ।

जेनी द्वारा अर्थनो बोध थाय ते 'पद' कहेवाय छे । तेना पांच प्रकारो छे—१ नामिक, २ नैपातिक, ३ औपसर्गिक, ४ आख्यातिक अने ५ मिश्र ।

१ सह्यादिक प्रत्ययोथी सिद्ध थता शब्दो ते 'नामिक पद' कहेवाय छे, जेम–अश्व, घट वगेरे ।

२ अव्ययवाची शब्द 'नैपातिक पद' कहेवाय छे, जेम–खलु, ननु वगेरे ।

३ उपसर्गवाचक शब्द 'औपसर्गिक पद' कहेवाय छे, जेम–परि, परा वगेरे ।

४ क्रियावाचक धातुओथी निष्पन्न थता शब्दो 'आख्यातिक पद' कहेवाय छे, जेम–धावति, पचति वगेरे ।

५ कृदन्त–तद्धितय अने तद्धित प्रत्ययोथी निष्पन्न शब्दो 'मिश्रपद' कहेवाय छे, जेम–संयत, नायक, पावक वगेरे ।

नाणाऽऽवरणिज्जस्स य दंसणमोहस्स तह खओवसमो।
जीवमजीवे अट्ठसु भंगेसु उ होइ सव्वत्थ ॥ ७ ॥ ८९३ ॥

शब्द, समभिरूढ अने एवंभूत–ए त्रण नयोना मते ज्ञान ज नमस्कार छे, उपयोगवान् कर्ता ज स्वामी छे, कारण के, नमस्कार ज्ञान स्वरूप ज छे, पण शब्द तथा क्रिया नमस्कार नथी। केमके उपयोगथी ज फळनी प्राप्ति थाय छे। उपयोग न होय तो शब्द तथा क्रिया फळ आपतां नथी। तेथी तेवा प्रकारना उपयोगवाळा पूजकनो नमस्कार छे एम माने छे। ५–६, (८९१–८९२)॥

(३. साधन–कारण—'नमस्कार शा वडे थाय छे?')

श०—ज्ञानावरणीय अने दर्शनमोहनीयना क्षयोपशमथी नमस्कार प्राप्त थाय छे अने जीव तथा अजीव वगेरे आठे भांगा–प्रकारोमां नमस्कार होय छे। (७)

वि०—नमस्कार मंत्रनी उपलब्धि कयी रीते थाय छे तेनी प्ररूपणामां ज्यां सुधी अंतरंगमां कर्मोने क्षयोपशम[1] न थाय त्यां सुधी आ नमस्कारमंत्र उपर श्रद्धा उत्पन्न थती नथी, तेथी ज्ञानावरणीय अने दर्शनमोहनीय कर्मोना क्षयोपशमथी नमस्कारनी प्राप्ति थई शके छे।

नमस्कारनो उपघात करनारां मति–श्रुतज्ञानावरण अने दर्शन–मोहनीय कर्मनां स्पर्धको बे प्रकारनां छे। १ सर्वघाती अने २ देशघाती। तेमां सर्वघाती स्पर्धको सर्व नाश पाम्या पछी देशघाती स्पर्धकोना अनंतमा भागोथी समये समये मुकाता जीवने प्रथम नकार अक्षर प्राप्त थाय अने ते पछी उत्तरोत्तर विशुद्ध थतां अनुक्रमे बीजा पण एकेक अक्षर प्राप्त थाय छे अने ए रीते समस्त नमस्कारमंत्र प्राप्त थाय छे।

नमस्कार स्वयं श्रुतरूप छे अने ते श्रुत मतिपूर्वक होय छे। ए बंने सम्यग्दृष्टि जीवने होय छे। तेथी नमस्कारनो लाभ थतां एकीसाथे मतिज्ञान, श्रुतज्ञान अने सम्यक्त्वनो लाभ थाय छे, आ कारणे ज मति–श्रुतज्ञानावरण अने दर्शनमोहनीयनो क्षयोपशम अहीं ग्रहण कर्यो छे।

वास्तवमां आनुं तात्पर्य ए छे के, जीवने ज्ञानावरण आदि आठ कर्मोमांथी मतिज्ञानावरण कर्मना क्षयोपशमनी साथे ज मोहनीय कर्मनो क्षयोपशम थतां नमस्कारमंत्रनी प्राप्ति थाय छे। नमस्कारमंत्र श्रुतज्ञानरूप छे अने श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक ज थाय छे, आथी मतिज्ञानावरण कर्मना क्षयोपशमनी साथे मोहनीय कर्मनो क्षयोपशम थवो आवश्यक छे। केमके मिथ्यात्वकर्मना अभावमां ज आत्मस्वरूप प्रत्ये श्रद्धा उत्पन्न थाय छे। अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभनी साथे मिथ्यात्वनो क्षय, उपशम अथवा क्षयोपशम थाय ए नमस्कारमंत्रनी उपलब्धिने माटे आवश्यक छे। आ मंत्रनी प्राप्तिमां अंतरायकर्मनो क्षयोपशम पण एक कारण छे, जेथी आंतरिक योग्यता प्रगट थतां ज आ नमस्कार महामंत्रनी प्राप्ति थई शके छे।

---

१. उदित कर्मोनो क्षय अने बाकीना अनुदित कर्मोनो उपशम तेने 'क्षयोपशम' कहे छे। क्षय सहित उपशम ते 'क्षयोपशम' कहेवाय।

उ०—आ प्रश्नो जवाव पण नयथी विचारवो जोईए। तेमा प्रथम नैगमनय तथा व्यवहारनयना अभिप्राय प्रमाणे नमस्कार करवायोग्य पूज्य आत्मा ज नमस्कारनो स्वामी छे, पण नमस्कार करनार जीव तेनो स्वामी नथी, कारण के, नमस्कार पूज्यने अपाय छे। लोकव्यवहारमा पण जेम–'भिक्षा कोनी ?' तो ते 'भिक्षुकनी, यतिनी' एम कहेवाय छे पण आपनारनी कहेवाती नथी तेवी रीते अहीं पण समजवु।

अथवा घडाना पोताना रूप आदि धर्मो घटानी अदर घडानी प्रतीति करावनार होवाथी घडाना पर्यायो छे तेम नमस्कार पण पूज्यनी अदर 'आ पूज्य छे' एवी प्रतीति करावनार होवाथी ते पूज्यनो पर्याय छे। अथवा घट सबधी ज्ञान अने तेनु कथन घडाना हेतु होवाथी घडाना पर्यायो छे तेवी ज रीते नमस्कार करवायोग्य अरिहत आदिने जोवाथी भव्य जीवने विशिष्ट उल्लासथी नमस्कार करवानो अभिप्राय उत्पन्न थाय छे तेथी ते पूज्य आत्मा नमस्कारनो हेतु होवाथी नमस्कार ए पूज्यनो पर्याय छे।

वळी, नमस्कार करनार ते पूज्य नमस्कार्य जीवात्मानु दासत्व पामे छे तेथी नमस्कार उपर नमस्कार करनारनो अधिकार नथी।

अहीं एक विशेष वात ए समजवानी छे के, पूज्य वस्तु जीव अने अजीवरूपे वे प्रकारनी होय छे। जीवरूप ते अरिहत वगेरे होय छे अने अजीवरूप तेमनी प्रतिमाओ वगेरे होय छे। आ जीव, अजीव पदना एकवचन अने बहुवचन वडे आठ प्रकारो नीचे मुजब थाय छे —

१ जिनेश्वरने नमस्कार करवा ते जीवनो नमस्कार।
२ जिनेश्वरनी प्रतिमाने नमस्कार करवो ते अजीवनो नमस्कार।
३ मुनिओने नमस्कार करवो ते जीवोनो नमस्कार।
४ प्रतिमाओने नमस्कार करवा ते अजीवोनो नमस्कार।
५ मुनिने तथा प्रतिमाने नमस्कार करवो ते जीवनो अने अजीवनो नमस्कार।
६ मुनिने तथा प्रतिमाओने साथे नमस्कार करवो ते जीवनो अने अजीवोनो नमस्कार।
७ घणा मुनिओने तथा एक प्रतिमाने साथे नमस्कार करवो ते जीवोनो तथा अजीवनो नमस्कार।
८ घणा मुनिओ तथा घणी प्रतिमाओने साथे नमस्कार करवो ते जीवो तथा अजीवोनो नमस्कार।

संग्रहनयना मते 'नमः' ए सामान्य मात्र छे अने तेनो स्वामीमात्र वस्तुनो जीव ते ज 'नमः' छे। एटले ए बनेनो अभेद अर्थ लईए तो बनेनु अधिकरण एक ज छे पण कोई शुद्धतर सग्रहनय पूज्य जीव अने पूजक जीव ए बनेना सबधी 'जीवनो ज नमस्कार' एवा एक ज भागने स्वीकारे छे। ऋजुसूत्रना मते ते नमस्कार ए ज्ञान, क्रिया अने शब्दरूप होवाथी अने ते ज्ञान–क्रिया–शब्द कर्ताथी अभिन्न होवाथी नमस्कारनो कर्ता ए ज स्वामी छे, एम माने छे।

संतपयपरूवणया[1] दव्वपमाणं[2] च खित्तं[3] फुसणा[4] य।
कालो[5] अ अंतरं[6] भागं[7] भावं[8] अप्पाबहुं[9] चेव ॥ ९ ॥ ८९५ ॥

(५. स्थिति–काळमर्यादा–'नमस्कार केटलो काळ सुधी होय छे?')

वि०—नमस्कारनी स्थिति उपयोगनी अपेक्षाए जघन्य अने उत्कृष्टथी अन्तर्मुहूर्तनी छे, अने क्षयोपशमरूप लब्धिनी अपेक्षाए जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्तनी छे, ज्यारे उत्कृष्ट स्थिति छासठ सागरोपमथी किंचित् अधिक होय छे। (सम्यक्त्वनी पण आ ज काळमर्यादा छे।)

एक जीवने आश्रयीने आ स्थिति जणावी छे। विविध जीवोनी अपेक्षाए पण जघन्य अने उत्कृष्टथी ए ज स्थिति जाणवी। लब्धिथी तो समग्र काळ समजवो।

(६. विधान–प्रकार–'नमस्कार केटला प्रकारे छे?')

नमस्कार केटला प्रकारे छे ए प्ररूपणामां अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधु आ पाच पदोनी पूर्वमां 'नमः' पद जोवाय छे, तेथी अरिहंत वगेरे पाच प्रकारना अर्थ साथे संबंधित होवाथी अरिहंत आदिथी पांच प्रकारे नमस्कार थाय छे, तेथी नमस्कार पांच प्रकारे छे।

पूर्वे (पदद्वारमा) नैपातिक पदनो पदार्थ मात्र नमस्कार कह्यो छे अने अहीं नमस्कार केटला प्रकारे छे ते द्वारमां अरिहंत आदि पाच प्रकारना पदोना पदार्थ साथे संबंधित होवाथी नमस्कार पाच प्रकारनो छे एम कह्युं छे। ८, (८९४)

नव प्रकारनी प्ररूपणा।

श०—१ सत्पद प्ररूपणा, २ द्रव्यप्रमाण, ३ क्षेत्र, ४ स्पर्शना, ५ काळ, ६ अंतर, ७ भाग, ८ भाव अने ९ अल्पबहुत्व—आ नव द्वारोथी नमस्कारनी नव प्रकारे प्ररूपणा करवी।

(नमस्काररूप) सत्पदने पामेला अने पामता जीवोनी अपेक्षाए मार्गणाओ–१ गति, २ इन्द्रिय, ३ काय, ४ योग, ५ वेद, ६ कषाय, ७ लेश्या, ८ सम्यक्त्व, ९ ज्ञान, १० दर्शन, ११ संयम, १२ उपयोग, १३ आहारक, १४ भाषक, १५ परित्त, १६ पर्याप्त, १७ सूक्ष्म, १८ संज्ञी, १९ भव्य अने २० चरमद्वारमां विचारणा करवी।

१. (नमस्कार) पूर्वप्रतिपन्न जीवो (जघन्यथी) सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपमना असंख्यातमा भागना प्रदेशराशीप्रमाण होय छे। (उत्कृष्टथी तेथी विशेष अधिक होय।) २ (नमस्कारवाळा जीवो) क्षेत्र-लोकना चौद भागमाथी सात भाग प्रमाण क्षेत्रमां होय छे। ३ (नमस्कारवाळा जीवोनी) स्पर्शना पण ए ज प्रमाणे समजवी। ४ एक जीवनी अपेक्षाए नमस्कारनो काळ ८९४ मी गाथामा कह्या प्रमाणे छे। नानाविध जीवोनी अपेक्षाए सर्वकाळ छे। ५ एक जीवनी अपेक्षाए नमस्कारनुं अंतर जघन्यथी अंतर्मुहूर्त काळनुं छे अने उत्कृष्टथी अर्धपुद्गलपरावर्तमां कंईक न्यून अनन्त काळ सुधीनुं छे। नाना जीवोनी अपेक्षाए

उवओग पडुच्चतोमुहुत्त लद्धीइ होइ उ जहन्नो।
उक्कोसट्ठिइ छावट्ठि सागराऽरिहाइ पचनिहो ॥ ८ ॥ ८९४ ॥

(४. अधिकरण–आधार–'नमस्कार शेमा होय छे?')

नमस्कारमत्रनो आधार शो छे? आधार चार प्रकारनो छे। १ व्यापक, २ औपश्लेषिक, ३ सामीप्यक अने ४ वैषयिक।

१ 'तलमा तेल छे' ते व्यापक आधार कहेवाय। २ 'सादडी ऊपर बेठेलो छे' ते औपश्लेषिक आधार कहेवाय। ३ 'गगामा गोवाळियाओनो वाडो छे' (अर्थात् गगाना किनारा उपर गोवाळियाओनो वाडो छे) ते सामीप्यक आधार कहेवाय। ४ 'रूपमा आख छे' ते वैषयिक आधार कहेवाय।

आ चार प्रकारोमा प्रथम प्रकार 'व्यापक आधार' ए अभ्यतर छे, ज्यारे बीजा त्रण प्रकारो बाह्य छे। नैगम अने व्यवहार नय ए बाह्य प्रकारोने अवलबे छे।

नमस्कार ए जीवनो गुण होवाथी जीव छे। ते (नमस्कार) नमस्कार करनारं जीव ज्यारे हाथी वगेरे पर स्थित होय त्यारे जीवमा, अने सादडी वगेरे पर बेठेलो होय त्यारे अजीवमा, अने बने पर (जीव अने अजीव पर) स्थित होय त्यारे जीवमा अने अजीवमा छे एम समजवु। आ प्रकारे एकवचन अने बहुवचनना प्रयोगथी एना आठ प्रकारो अगाऊ जणाव्या मुजब थाय छे—

आ नमस्कार १ जीवमा, २ अजीवमा, ३ जीवोमा, ४ अजीवोमा, ५ जीव-अजीवमा, ६ जीव अजीवोमा, ७ जीवो-अजीवमा अने ८ जीवो-अजीवोमा कथचित् भेदाभेदात्मकता होवाना कारणे उपर्युक्त आठ भागोमाथी कोइ पण समये कोइ पण एक भगनो आधार बने छे।

प्र०—नैगम अने व्यवहार नयनी अपेक्षाए पूज्यनो नमस्कार होय छे तेथी ते ज आधार केम न बने? शा खातर अलग आधार मानवो पडे छे?

उ०—ते नमस्कार पूज्यनो होवाथी पूज्यमा ज रहे एवो नियम नथी, केम के जे वस्तु जेनी होय ते ज तेनो आधार होय एवो नियम नथी, बीजे पण ए जणाय छे। जेम—'देवदत्तनु धान्य'। अहीं धान्य देवदत्तमा होतु नथी पण आधारभूत क्षेत्रमा होय छे, तेम अहीं पण समजवु।

बीजा नयोथी पण आ आधार विशे विशेष समजूती मळे छे। जेम सग्रहनय अभेदने परमार्थ मानतो होवाथी शुद्ध सग्रहनय वस्तुमात्रमा तेने ग्रहण करे छे, तो अशुद्ध सग्रहनय जीवनो धर्म होवाथी जीवमा रहे छे एम कहे छे। ऋजुसूत्र तो नमस्कार जीवनो गुण होवाथी ए जीवमा रहे छे, एम कहे छे। शब्दादि नयो तो उपर्युक्त ज्ञानरूप जीवमा ज छे, पण बीजे नहि एम माने छे। ७, (८९३)

शब्दार्थ—उपयोगनी अपेक्षाए नमस्कारनी स्थिति (जघन्य तेमज उत्कृष्टथी) अन्तर्मुहूर्तनी छे अने लब्धिनी अपेक्षाए जघन्य स्थिति अतर्मुहूर्तनी अने उत्कृष्टथी छासठ सागरोपमथी अधिक छे। नमस्कार अरिहत आदिना सबधथी पाच प्रकारनो छे। (८)

४. स्पर्शना—निवास स्थानरूप आकाशना चारे बाजुना प्रदेशोने अडकवुं ए ज स्पर्शना छे। क्षेत्र अने स्पर्शनामां तफावत एटलो के, क्षेत्रमां फक्त आधारभूत आकाश ज लेवाय छे अने स्पर्शनामा आधारक्षेत्रनी चारे बाजुनो आकाशप्रदेश, जेने अडकीने आधेय रहेल होय ते लेवाय छे। एटले नमस्कार-वान् जीवनी स्पर्शना पण क्षेत्रद्वार पेठे समजवी।

५. काळ—नमस्कारनो काळ बे प्रकारे छे। १ उपयोगथी अने २ लब्धिथी। उपयोगनी अपेक्षाए नमस्कारनो काळ जघन्यथी अने उत्कृष्टथी अंतर्मुहूर्तनो छे। लब्धिनी अपेक्षाए जघन्य स्थिति अंतर्मुहूर्तनी अने उत्कृष्ट स्थिति छासठ सागरोपमथी कंईक अधिक होय छे, नाना जीवोनी अपेक्षाए सर्वकाळ छे।

६. अंतर—विरहकाळ। एक जीवनी अपेक्षाए नमस्कारनुं अंतर जघन्यथी अंतर्मुहूर्त अने उत्कृष्टथी अर्धपुद्गल परावर्तमां कंईक न्यून एवा अनतकाळ सुधीनु छे। नाना जीवोनी अपेक्षाए तो अंतर ज नथी। नाना जीवोनी अपेक्षाए तो विरहकाळ बिलकुल होतो नथी। केमके, विविध जीवोमां कोईने अने कोईने तो नमस्कार होय छे ज।

७. भाग—जीवराशिना केटलामे भागे नमस्कार होय ते भागद्वार। तेनी विचारणामा तो नमस्कार पामेला जीवो सर्व जीवोना अनंतमा भागे होय छे अने बाकीना एटले नमस्कार नहि पामेला जीवो तेथी (पामेलाथी) अनतगुणा होय छे।

८. भाव—उपशम, क्षयोपशम अने क्षायिक ए त्रण भावो पैकी नमस्कार क्षयोपशम भावमां होय छे। (केटलाकनुं कहेवुं छे के आ बाहुल्यथी समजवुं, कारण के क्षायिक अने औपशमिक भावमां पण होय छे। क्षायिकभावमां श्रेणिक वगेरेने हतो अने उपशमभावमा उपशमश्रेणिमां रहेला जीवोने होय छे।)

९. अल्पबहुत्व—ओछावत्तापणु, नमस्कार पामेला अने पामताओनु ओछावत्तापणुं आ द्वारथी जणाय छे। नमस्कार पामता होय एवा जीव सर्वथी थोडा होय अने ते करतां नमस्कार पामेला होय ए जीव ओछामां ओछा तेनाथी असंख्यात गुणा होय छे, तथा नमस्कार पामेला होय एवा जीवो जघन्यपद करतां उत्कृष्टपदमां विशेष अधिक होय छे। नमस्कारने पामेला उपशमभाववाळा सौथी अल्प होय छे, क्षयोपशमभाववाळा तेथी विशेष होय छे अने क्षायिक भाववाळा (सिद्धोनी अपेक्षाए) सर्वथी अधिक होय छे। ससारीनी अपेक्षाए क्षायिक भाववाळा करतां क्षयोपशमभाववाळा अधिक होय छे। ९-१५, (८९५-९०१)

सतपय पडिवन्ने पडिवज्जते अ मग्गण गइसु[1] ।
इंदिअ[2] काए[3] वेए[4] जोए[5] अ कसाय[6] लेसासु[7] ॥ १० ॥ ८९६ ॥
सम्मत्त[8]-नाण[9]-दंसण[10] संजय[11]-उवओगओ[12] अ आहारे[13] ।
भासग[14] परित्त[15] पज्जत्त[16] सुहुमे[17] सन्नी[18] अ भव[19] चरमे[20] ॥ ११ ॥ ८९७ ॥
पलिआसंखिज्जइमे पडिवन्नो हुज्ज खित्त लोगस्स ।
सत्तसु चउदसभागेसु हुज्ज फुसणा वि एमेव ॥ १२ ॥ ८९८ ॥
एग पडुच्च हिट्ठा तहेव नाणाजिआण सव्वद्धा ।
अतर पडुच्च एग जहन्नमतोमुहुत्त तु ॥ १३ ॥ ८९९ ॥
उक्कोसेण चेय अद्धापरिअट्टओ उ देसूणो ।
णाणाजीवे णत्थि उ भाव य भवे खओवसमे ॥ १४ ॥ ९०० ॥
जीवाणऽणतभागो पडिवण्णो सेसगा अणतगुणा ।
वत्थु तऽरिहताइ पच भवे तेसिमो हेऊ ॥ १५ ॥ ९०१ ॥

तो अतर ज नथी। ६ भावमा क्षयोपशमभावमा घणु करीने नमस्कार होय छे। ७ सर्व जीवोना अनतमा भागे नमस्कार पामेला जीवो होय छे, अने बाकीना नहि पामेला तेथी अनतगुणा होय छे। (८ अल्पबहुत्वद्वार * मतिज्ञाननी पेठे समजवु।) ९ नमस्कारने योग्य अरिहत आदि पाच वस्तु द्रव्य छे, तेमनी ते योग्यतामा जे हेतु छे, ते आगळ कहेवाशे। (९–१५)

वि० १ सत्—सत्ता नमस्काररूप सत्पदने पूर्वे पामेला अने पामता जीवोनी अपेक्षाए गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, लेश्या, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, सयम, उपयोग, आहारक, भाषक, परित्त, पर्याप्त, सूक्ष्म, सज्ञी, भव्य अने चरमभावनी आ द्वारमा विचारणा करवी।

सत्ताद्वारनो विचार करता नमस्कारने पहेला पामेला जीवो चारे गतिमा नियमथी होय छे ज, पण नमस्कार पामतानी भजना होय छे। अर्थात् नमस्कार पामता जीवद्रव्यो कदाचित् होय अने कदाचित् न होय। जो होय तो जघन्यथी एक, बे अथवा त्रण होय अने उत्कृष्टथी सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपमना असख्येय भागना प्रदेशराशिप्रमाण होय छे।

२ द्रव्य प्रमाण—सख्या, नमस्कार पूर्वप्रतिपन्न जीवद्रव्यो जघन्यथी सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपमना असख्यातमा भागना प्रदेशराशिप्रमाण होय अने उत्कृष्टथी ते करता विशेषाधिक होय।

३ क्षेत्र—लोकाकाश। नमस्कारवान् जीव उचे अनुत्तर विमानमा जता लोकना सात भाग प्रमाण क्षेत्रमा होय अने नीचे छट्ठी पृथ्वीमा जता पाच भाग प्रमाण क्षेत्रमा होय छे।

---

* जुओ आवश्यकसूत्रनी पीठिका।

निज्जामगरयणाणं अमूढनाणमइकण्णधाराणं ।
वंदामि विणयपणओ तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥ २८ ॥ ९१४ ॥
पालंति जहा गावो गोवा अहि-सावयाइदुग्गेहिं ।
पउरतणपाणिआणि अ वणाणि पावंति तह चेव ॥ २९ ॥ ९१५ ॥
जीवनिकाया गावो जं ते पालंति ते महागोवा ।
मरणाइभया उ जिणा निव्वाणवणं च पावंति ॥ ३० ॥ ९१६ ॥
तो उवगारित्तणओ नमोऽरिहा भविअजीवलोगस्स ।
सव्वस्सेह जिणिंदा लोगुत्तमभावओ तह य ॥ ३१ ॥ ९१७ ॥

श०—यथार्थ ज्ञान अने मति ए ज जेमना कर्णधार स्वरूप छे अने जेओ त्रिदंड (मन, वचन अने कायाना दंड)थी रहित छे एवा निर्यामकरत्न स्वरूप अरिहंतोने त्रण प्रकारे (मन, वचन अने कायाथी) विनयथी नमीने वंदन करुं छुं । २८, (९१४)

(त्रीजुं द्वार कहे छे—)

श०—जेम गोवाळियो गायोनुं सर्प, जंगली पशुओ वगेरेना कष्टोथी रक्षण करे छे अने घास तेमज पाणीथी भरेलां जंगलमां लई जाय छे तेम जीवसमूहरूप गायोनुं मरण वगेरे भयोथी जिनेश्वरो रक्षण करे छे अने तेमने निर्वाणस्वरूप वनमां लई जाय छे । ए रीते जिनेश्वरो सर्व भव्य जीवलोकनो उपकार करता होवाथी लोकोत्तम पुरुषनी भावनाथी नमस्कारने योग्य छे । २९–३१, (९१५–९१७)

(बीजा प्रकारे अरिहंतना नमस्कारनी योग्यताना कारणरूप गुणो कहे छे—)

श०—राग, द्वेष, कषाय[1], पांच इंद्रियो[2], परीषह अने उपसर्गोने नमावे ते नमस्कारने योग्य छे । (३२)

वि०—स्वीकारेला धर्ममार्गमां टकी रहेवा अने कर्मबंधनोने खंखेरी नाखवा माटे जे जे स्थिति समभावपूर्वक सहन करवी घटे छे ते 'परीषह' कहेवाय छे ।

जो के परीषहो ओछावत्ता गणावी शकाय छतां त्यागने विकसाववा माटे जे खास आवश्यक छे ते बावीश परीषहो शास्त्रमां गणावेला छे[3] । एवा परीषहोने जे नमावे ते अरिहंत छे ।

---

१. क्रोध, मान, माया अने लोभ ए चार कषाय कहेवाय छे । २. (१) श्रोत्र (कान), (२) चक्षु (३) घ्राण (नासिका), (४) रसना (जीभ), (५) स्पर्श (त्वक्) आ पांच इंद्रियो कहेवाय छे ।

३. बावीश परीषहोने नीचे प्रकाणे सहन करीने जीती लेवाना होय छे—(१–२) गमेतेवी क्षुधा अने तृषानी वेदना छता स्वीकारेली मर्यादा विरुद्ध आहार–पाणी न लेता समभावपूर्वक एवी वेदनाओ अनुक्रमे 'क्षुधापरीषह अने' 'पिपासापरीषह'मां सहन करवानी होय छे । (३–४) गमे तेवी टाढ अने गरमीनी मुश्केली छता तेने दूर करवा अकल्प्य–न खपे तेवी कोई पण वस्तुनुं सेवन कर्या विना ज ए वेदनाओ अनुक्रमे 'शीतपरीषह' अने 'ऊष्णपरीषह'मां सहन करवानी होय छे । (५) डास, मच्छर, वगेरे जंतुओना आवी पडेल उपद्रवमा खिन्न न थता तेने समभावपूर्वक सही लेवाथी 'दंशमशकपरीषह' जिताय छे । (६) नग्नपणाने एटले सर्वथा वस्त्र न मळे अगर जीर्णप्रायः मळे तो पण समभाव-

आरोवणा य भयणा पुच्छा तह दायणा य निज्जवणा।
नमुक्कारऽनमुक्कारे नोआइजुए य नवहा वा॥ १६ ॥ ९०२ ॥

नव प्रकारनी परूपणा।

श०—१ आरोपणा, २ भजना ३ पृच्छा, ४ दायना (दर्शना के दापना) अने ५ निर्यापणा, ६ नमस्कार, ७ अनमस्कार, ८ नोनमस्कार अने ९ नोअनमस्कार एम नव प्रकारे पण प्ररूपणा छे। (१६)

वि०—१ जीव ज नमस्कार छे के नमस्कार ज जीव छे? ए प्रमाणे परस्पर अवधारणथी जे अध्यारोप करवो अथवा पर्यनुयोग करवो ते 'आरोपणा' कहेवाय छे।

२ सम्यग्दृष्टि जीव नमस्कार होय अने मिथ्यादृष्टि न होय तेथी जीव नमस्कार होय अथवा न पण होय, परतु नमस्कार तो अवश्य जीव छे। आ रीते एक पदना व्यभिचारने 'भजना' कहे छे।

३ जो सर्व जीव नमस्कार न होय तो शु कोईक जीव ज नमस्कार छे? जो एम होय तो ते केवा प्रकारनो जीव नमस्कार छे अथवा कयो जीव नमस्कार छे? आवा प्रश्नने 'पृच्छा' कहे छे।

४ नमस्कारथी परिणत जे जीव ते नमस्कार अने तेथी अपरिणत होय ते अनमस्कार ए प्रमाणे अगाऊ पूछेला प्रश्ननी निर्वचना ते 'दायना' कहेवाय छे।

५ नमस्कार परिणत जे जीव ते ज नमस्कार अने नमस्कार पण जीव परिणाम ज छे, अजीव परिणाम नथी एवी विचारणाने 'निर्यापना' कहे छे।

प्र०—दायना अने निर्यापनामा शो तफावत छे?

उ०—दायना नमस्कारना अर्थनु व्याख्यान करे छे ज्यारे निर्यापना ए बतावेला अर्थनु वारवार उच्चारण करवारूप निगमन करे छे।

दायनामा जेम नमस्कार परिणत जे जीव होय ते ज नमस्कार छे, अन्य नथी, एम नियमित छे, तेवी रीते निर्यापनामा नमस्कार परिणत जे जीव होय ते ज नमस्कार मानेल छे अन्य नहीं, ए प्रमाणे फरीथी अवधारण कराय छे, केमके ते बने अभिन्न छे

६ नमस्कार=नमस्कार परिणत जीव।

७ अनमस्कार=नमस्कारापरिणत जीव।

८ नोनमस्कार=नमस्कारनो एक देश अथवा अनमस्कार।

९ नोअनमस्कार=अनमस्कारनो एक देश अथवा नमस्कार।

आ चारने अनुक्रमे प्रवृत्ति, अकार, नोकार अने नोकार-अकार प्ररूपणा कहेवाय छे।

जेमके नमस्कार परिणत जीव नमस्कार छे, ए प्रवृत्ति प्ररूपणा छे। एथी विपरीत 'नमस्कार अपरिणत जीव नमस्कार नथी' ए निषेधवाचक अकार प्ररूपणा छे। ए ज रीते प्रवृत्तिने नोकार अने नोअकार लगाडीने पण प्ररूपणा थई शके छे। 'नो' देशनिषेध अथवा सर्वनिषेधमा वपराय छे। १६, (९०२)

६ वस्तु द्वार।

[पच परमेष्ठीओने नमस्कार]

नमस्कारने योग्य अरिहत आदि पाच वस्तु छे (जुओ गाथा १५–९०१), अहीं तेनो विशेषार्थ कहे छे—

अरिहंतनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं ॥ ४० ॥ ९२६ ॥
कम्मे[1] सिप्पे[2] अ विज्जा[3] य मंते[4] जोगे[5] अ आगमे[6]।
अत्थ[7] जत्ता[8] अभिप्पाए[9] तवे[10] कम्मक्खए[11] इय ॥ ४१ ॥ ९२७ ॥

अन्वर्थ एवुं शस्त्र धारण कराय छे ते प्रमाणे मरण समये बारे अंगोने छोडीने जे कारणे अरिहंतने नमस्कार करवामां आवे छे ते कारणथी ते बार अंगना अर्थवाळो कहेवाय छे।

बधांये बारे अंगो परिणामनी विशुद्धि मात्रनां कारण छे, अने नमस्कार पण तेनुं ज कारण छे, तेथी नमस्कारने बार अंगनो सार कह्यो छे।

एवा प्रकारना (मरण समयना) देश-काळमां समग्र बार प्रकारना श्रुतस्कंधनुं अनुचिंतन करवानुं अत्यंत शक्तिशाळी चित्तवाळाने पण शक्य होतुं नथी। माटे अरिहंत नमस्कारनुं ज अनुस्मरण-चिंतन शुभचित्ते करवुं जोईए। ३९, (९२५)

(अरिहंत विशे उपसंहार करतां कहे छे—)

श०—अरिहंतने करेलो नमस्कार बधांये पापनो नाश करनारो छे अने बधांये मंगलोमां उत्कृष्ट मंगल स्वरूप छे। (४०)

वि०—जे नीचे पाडे ते 'पाप', अथवा हितने पी जाय तेने 'पाप' कहे छे। जाति सामान्यनी अपेक्षाए आठे प्रकारनां कर्म पाप कहेवाय छे। अरिहंतने करेलो नमस्कार, ते पापोनो नाश करे छे।

बधांये नाम आदि मंगलोमां उत्कृष्ट अर्थकारी होवाथी प्रथम मंगल कहेवाय छे अथवा पांचे परमेष्ठीओ जे भावमंगल स्वरूप छे तेमां आ अरिहंत प्रथम मंगलरूप छे। ४०, (९२६)

(२) सिद्ध भगवंतने नमस्कार।

सिद्ध शब्द षिधु, साध् अथवा षिधू ए धातुओथी बने छे। जेणे ते ते गुणो पूर्णरूपे प्राप्त करी लीधा छे तेने 'सिद्ध' कहे छे। ते सिद्ध सामान्यथी चौद प्रकारे छे। तेमां १ नामसिद्ध, २ स्थापनासिद्ध अने ३ द्रव्यसिद्ध।

१. कोईनुं सिद्ध एवुं नाम राख्युं होय ते 'नामसिद्ध' कहेवाय।

२. कोई वस्तुविशेषनी सिद्धरूपे स्थापना करीए ते 'स्थापनासिद्ध' कहेवाय। ३. द्रव्य सिद्ध (रंधाई गयेला चोखानी माफक) जे गुणवडे संपूर्ण छे अने सामान्यपणे ते द्रव्य पण छे तेथी ते 'द्रव्यसिद्ध' कहेवाय।

(आ त्रण भेद पछी बाकीना अगियार भेदो विशे गाथामां कहे छे—)

श०—४ कर्मसिद्ध, ५ शिल्पसिद्ध, ६ विद्यासिद्ध, ७ मंत्रसिद्ध, ८ योगसिद्ध, ९ आगमसिद्ध, १० अर्थसिद्ध, ११ यात्रासिद्ध, १२ अभिप्रायसिद्ध, १३ तपसिद्ध, अने १४ कर्मक्षयसिद्ध—ए प्रकारे सिद्धो छे। ४१, (९२७)

रागद्दोसकसाए इंदियाणि अ पंच वि परीसहे ।
उवस्सग्गे नामयंता नमोऽरिहा तेण वुच्चंति ॥ ३२ ॥ ९१८ ॥
इंदियविसयकसाए परीसहे वेयणा उवस्सग्गे ।
एए अरिणो हंता अरिहंता तेण उच्चंति ॥ ३३ ॥ ९१९ ॥

जे वडे अथवा जेनाथी पीडा थाय ते 'उपसर्ग' कहेवाय छे । ए उपसर्ग चार प्रकारे थाय छे[4]। एवा उपसर्गोने जे नमावे ते अरिहंत कहेवाय छे । ३२, (९१८)

(अरिहंतनी निरुक्ति बतावे छे—)

शु०—इंद्रिय, विषयकषाय, परीषह, वेदना, उपसर्गो—आ बधा शत्रुओनो नाश करनार जे होय ते अरिहंत कहेवाय छे । (३३)

वि०—आमां इंद्रिय, विषयकषाय, परीषह, अने उपसर्गोनुं वर्णन आगळनी (९१८ मी) गाथामां आवी गयुं छे पण वेदना विशे अहीं जणावे छे के, वेदना त्रण प्रकारनी होय छे ।

पूर्वक सहन करवाथी ते 'नग्नपरीषह' जिताय छे । (७) स्वीकारेल मार्गमां अनेक मुश्केलीओने लीधे कंटाळानो प्रसंग आवे त्यारे कंटाळो न लावतां धैर्य अने स्वस्थतापूर्वक आत्मरमणता करवाथी 'अरतिपरीषह' जिताय छे । (८) साधक पुरुष के स्त्रीए पोतानी साधनामां विजातीय आकर्षणथी न ललचावाथी 'स्त्रीपरीषह' जिताय छे । (९) स्वीकारेल धर्म जीवनने पुष्ट राखवा असंगपणे जुदा जुदा स्थानोमां विहार करवो अने कोइ पण एक स्थानमां नियतवास न स्वीकारवाथी 'चर्यापरीषह' जिताय छे । (१०) साधनाने अनुकूल एकांत जग्यामां मर्यादित वखत माटे आसन बांधी बेसतां आवी पडतां भयोने अडोळपणे जीतवा अने आसनथी च्युत न थवाथी 'निषद्यापरीषह' जिताय छे । (११) कोमळ के कठिन ऊंची के नीची जेवी सहज भावे मळे तेवी जग्यामां समभावपूर्वक वसवाथी 'शय्यापरीषह' जिताय छे । (१२) कोई आवीने कठोर के अणगमतुं कहे तेने सही लेवाथी 'आक्रोशपरीषह' जिताय छे । (१३) कोइ ताडनतर्जन करे त्यारे तेने क्षमापूर्वक सहन करवाथी 'वधपरीषह' जिताय छे । (१४) दीनपणुं के अभिमान राख्या सिवाय मात्र धर्मयात्राना निर्वाह अर्थे याचकवृत्ति स्वीकारवाथी 'याचनापरीषह' जिताय छे । (१५) याचना कर्या छतां जोइतुं न मळे त्यारे प्राप्ति करतां अप्राप्तिने खरुं तप गणी तेमां संतोष राखवाथी 'अलाभपरीषह' जिताय छे । (१६) कोइ पण रोगमां व्याकुळ न थतां समभावपूर्वक तेने सहन करवाथी 'रोगपरीषह' जिताय छे । (१७) संथारामां के अन्यत्र तृण आदिनी तीक्ष्णतानो के कठोरतानो अनुभव थाय त्यारे मृदुशय्यामां रहे तेवो उल्लास राखवाथी ए 'तृणस्पर्शपरीषह' जिताय छे । (१८) गमे तेटलो शारीरिक मळ थाय छतां तेमां उद्वेग न पामवो अने स्नान आदि संस्कारोनी इच्छा न करवाथी 'मलपरीषह' जिताय छे । (१९) गमे तेटलो सत्कार मळ्या छतां तेमां न फुलावाथी अने सत्कार न मळे तो खिन्न न थवाथी 'सत्कारपुरस्कारपरीषह' जिताय छे । (२०) प्रज्ञा—चमत्कारी बुद्धि होय तो तेनो गर्व न करवो अने न होय तो खेद न करवाथी 'प्रज्ञापरीषह' जिताय छे । (२१) विशिष्ट शास्त्रज्ञानथी गर्वित न थवुं अने तेना अभावमां आत्माव मानना न राखवाथी 'ज्ञानपरीषह' अथवा 'अज्ञानपरीषह' जिताय छे । (२२) सूक्ष्म अने अतींद्रिय पदार्थोनुं दर्शन न थवाथी स्वीकारेल त्याग नकामो भासे त्यारे विवेकी श्रद्धा केळवी ते स्थितिमां प्रसन्न रहेवाथी 'अदर्शनपरीषह' जिताय छे ।

४ (१) देवथी, (२) मनुष्यथी, (३) तिर्यंचथी अने (४) आत्मसंवेदनथी उपसर्ग थाय छे ।

देवो हास्यथी, पूर्वभवना द्वेषथी विमर्श (परीक्षा करवाना उद्देश) अने विमात्राथी (कंइक हास्यथी कंइक द्वेषथी, कंइक विमर्शथी) उपसर्गो करे छे । ए ज प्रमाणे मनुष्यो पण चार प्रकारे उपसर्ग करे छे तेमां चोथो प्रकार कुशीलनी प्रतिसेवा माटे करातो उपसर्ग समजवो । तिर्यंचो भयथी द्वेषथी आहार माटे, बच्चाओना माळा के गुफाना रक्षण माटे उपसर्ग करे छे अने आत्मसंवेदनथी ते आंखमां कचरो वगेरे खूंचवाथी अंगो जकडाई जवाथी, अगमां खाडा पडवाथी, हाथ वगेरे अंगोने परस्पर मसळवाथी जे पीडा थाय छे ते समजवी ।

आ चारेना आवा गुणो हता।

ते राजाने पुत्र नहोतो, तेथी काम-भोगथी निर्वेद पामीने प्रव्रज्या लेवानी इच्छा राखतो हतो।

आ तरफ पाटलीपुत्र नगरना जितशत्रु राजाए तेनी नगरीने घेरो घाल्यो। ए वेळाए राजाने पूर्वकर्मना परिणामथी भारे शूळ ऊपज्युं। तेथी एणे भोजन न लेवानुं पच्चक्खाण कर्युं। ए मरीने स्वर्गे गयो। नगरजनोए ए नगर जितशत्रुने आपी दीधुं। एणे पेला चार श्रावकोने बोलावीने पूछ्युं के, तमे शुं काम करो छे?

भंडारीए राजाने भंडारमां दाखल कर्यो पण एणे कंई दीठुं नहीं। बीजा द्वारथी (प्रवेश करावी भंडार) बताव्यो। शय्यापाले एवी शय्या रची के, मुहूर्ते मुहूर्ते ने ऊठी जतो। रसोईयाए एवी रसोइ बनावी के जेथी ते वारंवार जमवा लाग्यो। तेल चोळनारे (बंने पगमां तेल चोळी) एक पगमांथी बधुं तेल बहार काढ्युं, पण बीजामांथी काढ्युं नहीं, अने मारा जेवो बीजो कोई चालाक होय तो ते काढी आपे, एम कह्युं।

चारे जणे दीक्षा लीधी। पेलो जितशत्रु राजा तेलथी दाझ्यो अने ए काळो पडी गयो। आथी एनुं नाम काकवर्ण पड्युं।

आ तरफ सोपारामां दुकाळ पड्यो। कोकास उज्जैनी गयो। राजाने केवी रीते जाण करवी ए विचारतां (यांत्रिक) कबूतरो द्वारा राजाना गंधशालि (एक जातना सुगंधी चोखा) हरवा मांड्या। कोठारीओए (राजाने) कह्युं, तपास करतां कोकास नजरे पड्यो, एने (राजा पासे) लाववामां आव्यो। राजाए एने ओळख्यो अने एना भरणपोषणनी व्यवस्था करी।

कोकासे गरुडयंत्र बनाव्युं। राजा, राणी अने आ कोकास साथे (आकाशमां) विहरवा लाग्या। जे कोई राजा एने नमतो नहि तेने ए कहेतो के, हुं आकाशमांथी आवीने तमने मारीश। (बीकना मार्या) बधा (राजाओ) वश थया।

काकवर्णनी राणीने बीजी राणीओ (एमां बेसवाने) पूछ्या करती। एके आ (गरुडयंत्र) जतुं हतुं त्यारे एनी पाछा फरवानी एक खीली ईर्ष्याना कारणे लई लीधी। गरुडयंत्र ऊड्युं। पाछा फरवानो विचार थयो त्यारे पाछुं फरतुं नथी एवी खबर पडी। (आखरे ए यंत्र) ऊंचे ऊंचे जतां कलिंगमां तरवारनी धारा जेवी वेलथी एनी पांखो भांगी गई अने ए त्यां पड्युं।

कोकास ए जोडवा माटेनां साधनो लेवा ते नगरमां गयो। त्यांनो सुथार रथ बनावतो हतो। एणे एक चक्र पूरूं बनाव्युं हतुं, बीजुं कंईक बाकी हतुं, त्यारे कोकासे ओजारो माग्यां। रथकारे कह्युं, आ तो राजानां होवाथी बहार कढातां नथी एटले घेरथी लावी आपुं। (एम कही) ए गयो। एटलामां कोकासे एवुं चक्र बनाव्युं के, ऊंचुं राखवामां आवे तो (उपर) जाय। कोई साथे अथडाय तो पाछुं फरे अने पाछळ मों राखीने जाय तो पडे नहीं, बीजानुं (कोई यंत्र) होय तो नाश पामे, अथडाय तो पडे।

ते (रथकार) आव्यो अने जूए छे तो ते (यंत्र) तैयार थई गयुं हतुं। एणे वेगथी जईने राजाने खबर आपी के कोकास आव्यो छे, जेना बळना कारणे काकवर्णे बधा राजाओने वश कर्या छे।

कम्म जमणायरिओवएसयं सिप्पमन्नहाऽभिहिअं ।
किसिवाणिज्जाईयं घडलोहाराइभेअं च ॥ ४२ ॥ ९२८ ॥
जो सव्वकम्मकुसलो जो वा जत्थ सुपरिनिट्ठिओ होइ ।
सिज्झगिरिसिद्धओविव स कम्मसिद्ध त्ति विन्नेओ ॥ ४३ ॥ ९२९ ॥
जो सव्वसिप्पकुसलो जो वा जत्थ सुपरिनिट्ठिओ होइ ।
कोकासवड्ढइव्विव साइसओ सिप्पसिद्धो सो ॥ ४४ ॥ ९३० ॥

शु०—आचार्यना उपदेश विना ज अनन्य साधारण जे कळा प्राप्त होय ते 'कर्म' कहेवाय। आथी विपरीत एटले आचार्यना उपदेशथी जे कळा जाणी होय ते 'शिल्प' कहेवाय छे, तेमा खेती, वेपार वगेरे कर्मो कहेवाय छे, ज्यारे कुंभार अने लुहार वगेरेना कार्योने 'शिल्प' कहे छे। बनेमा एटलो तफावत छे। ४२, (९२८)

(कर्मसिद्धने उदाहरणपूर्वक समजावे छे—)

शु०—जे बधाये कर्मोमा कुशळ होय अथवा कर्ममा बराबर ओतप्रोत थयेलो होय ते 'कर्मसिद्ध' कहेवाय। जेम, सह्याद्रिमा जे सिद्ध रहेलो हतो तेने कर्मसिद्ध जाणवो। ४३, (९२९)

(शिल्पसिद्धने दृष्टांत साथे जणावे छे—)

शु०—जे कोई बधा शिल्पोमा कुशळ होय ते अथवा गमे ते एक शिल्पमा निष्णात होय ते शिल्पसिद्ध कहेवाय छे। जेमके—कोकास नामनो सुथार। (तेनी कथा प्रकारे छे—)

"सोप्पारकमा[1] एक सुथार रहेतो हतो। एनी दासीने ब्राह्मणथी एक पुत्र थयो। ए दासचेट गुप्तरीते रहेवा लाग्यो। सुथारे, हवे हु जीवीश नहि, एम विचारीने ते पोताना पुत्रोने शीखवबा लाग्यो, पण ते मंदबुद्धि होवाथी कंई शीख्या नहीं, परंतु ते दासचेटे (कोकासे) बधु ग्रहण कर्युं। पेलो सुथार मरण पाम्यो। ए नगरना राजाए दासचेटने आखु घर आपी दीधु। ए घरनो स्वामी बन्यो।

आ तरफ उज्जैनीमा एक जैन राजा हतो। ए राजाने चार श्रावको हता।

१. एक रसोईओ हतो, जे रांधतो। (ए एवी रसोई बनावतो के जे जमवाथी राजाने) जमतावेंत ज्यारेलु पची जतु। अथवा एक, बे, त्रण, चार, अगर पांच पहोर पछी पची जाय एवी इच्छा करे तो पण पचे नहीं।

२ तेल चोळनार हतो। ए कुडव[2] जेटलु तेल शरीरमा समावी देतो अने ए बधु पाछु काढतो।

३ शय्या रचनार हतो। राजाने बीजे, त्रीजे के चोथे पहोरे (ज्यारे जागवु होय त्यारे) जागी शके तेवी के ऊंघ्या करवु होय तो ते प्रकारनी शय्या ए रचतो।

४ भंडारी हतो। ए एवो भंडार बनावतो के जेनी अंदर गया पछी कंई ज न देखाय।

---

१ कोंकण देशना दरियाकिनारे आवेलुं नगर। आने मुंबाइ पासे नालासोपारा मनाय छे। २ कुडव-वज्र एटले चार मुठी अथवा आठ हलनुं माप।

साहीणसव्वमंतो बहुमंतो वा पहाणमंतो वा ।
नेओ स मंतसिद्धो खंभागरिसु व्व साइसओ ॥ ४७ ॥ ९३३ ॥

वस्त्रने बरावर लपेटीने सूता हता, तेथी तेमने उठाडवानो प्रयत्न नकामो गयो । राजाने जईने निवेदन कर्युं, तेमणे पण आवीने जोयुं । लाकडीथी तेमना उपर प्रहारो करवामां आव्या । ते प्रहारो अंतः-पुरमां थवा लाग्या, एटले मारवानुं छोडी दीधुं । आचार्य ऊठ्या अने तेमनी पाछळ बृहत्कर अने बीजा व्यंतरो आगळपाछळ चालवा लाग्या । लोको पण आचार्यने पगे पडीने विनंति करवा लाग्या के हवे छोडो ।

ए यक्षमंदिरमां पथ्थरनी बे मोटी कुंडीओ हती । तेने पण आचार्ये पाछळ पाछळ चलावी । व्यंतरो अवाज करता करता आचार्यनी पाछळ चाल्या आवता हता । माणसोए आचार्यने विनंति करीने ते बृहत्कर अने व्यंतरोने छोडाव्या । ते कुंडीओने पण सूरिजीए आगळ करी अने जे कोई मारा जेवो आवशे ते आ कुंडीओने पाछी मूकशे एम कहीने ते कुंडीओ नगरमां मूकी ।

आ तरफ भरूचमां तेमनो भाणेज आहारनी लोलुपताथी बौद्ध साधु बनीने रह्यो छे । तेनी विद्याना प्रभावथी पात्रो आकाश मार्गे भराईने भक्तोना त्यां आवे छे । आ प्रभावथी केटलाये माणसो तेना भक्त बनी गया छे । आ हकीकत आचार्यने जणाववा श्रीसंघे माणसने मोकल्या । ते त्यां पहोंच्या ने आचार्यने बधी वात करी । आचार्य भरूचमां पधार्या ।

एवा प्रकारनी अक्रिया उत्पन्न थई छे के आकाशमार्गे गयेलां पात्रोनी आगळ वस्त्रथी वींटायेलुं एक मोटुं पात्र भराईने आवे छे अने तेने श्रेष्ठ आसन उपर स्थापन करीने बीजां पात्रोथी भरवामां आवे छे ।

आचार्ये आकाशमार्गनी वच्चे एक शिला विकुर्वीने स्थापन करी, तेथी ते पात्रो फूटी गयां । आथी ते क्षुल्लक भय पामीने नासी गयो । आचार्य ए स्थळे (बौद्धोना आवासमां) गया । बौद्ध साधुओ आचार्यने कहेवा लाग्या 'आवो, बुद्ध भगवानना पगे पडो ।' आचार्ये जवाब आप्यो के, 'आव, हे शुद्धोदनपुत्र बुद्ध ! मने वंदन कर ।' त्यारे प्रतिमारूपे रहेल बुद्ध तेमना चरणमां पड्या । त्यांना स्तूपना दरवाजामां जे सेवकनी मूर्ति हती तेने आचार्ये कह्युंः 'आव, पगे पड ।' आथी ते पण पगमां पडी । आचार्ये ते मूर्तिने कह्युंः 'हवे ऊठ' । त्यारे अर्ध नमेली दशामां हती ते वखते आचार्ये कह्युंः 'बस, आ प्रकारे रहे ।' आथी ते अर्ध नमेली दशामां रही । पडखे नमेली होवाथी ते मूर्ति 'निर्ग्रन्थनामित' नामे ओळखावा लागी ।"

विद्यासिद्ध आवा प्रकारना होय छे । ४६, (९३२)

(मंत्रसिद्धने जणावे छे—)

श०—जेमणे समग्र मंत्रोने स्वाधीन कर्या होय अगर घणा मंत्रो के प्रधान मंत्रने सिद्ध कर्यो होय ते मंत्रसिद्ध कहेवाय छे । जेमके, स्तंभनुं आकर्षण करनारा अतिशयवान् साधु । तेमनी कथा आ प्रकारे छे—

इत्थी विज्जाऽभिहिया पुरिसो मंतु त्ति तव्विसेसोय ।
विज्जा ससाहणा वा साहणरहिओ अ मंतु त्ति ॥ ४५ ॥ ९३१ ॥
विज्जाण चक्कवट्टी विज्जासिद्धो स जस्स वेगावि ।
सिज्झिज्ज महाविज्जा विज्जासिद्धऽज्जखउडु व्व ॥ ४६ ॥ ९३२ ॥

तेने पकडी लेवामा आव्यो । एने मार मारवामा आव्यो त्यारे एणे (राजा, राणी अमुक स्थळे होवानु) कही दीधु । राजाने राणीनी साथे पकडी लेवामा आव्यो । एमने भोजन आपवानो निषेध कर्यो । नगरजनोए अपयशनी बीके काकपिंड प्रवर्ताव्या ।

कोकासने (राजाए) कह्यु 'मारा पुत्रने माटे सात माळनो महेल बनाव अने वच्चेना भागमा मारा माटे (महेल) बनाव, जेथी हु बधा राजाओने अहीं लावी शकु। कोकासे एवी रचना करी दीधी।

कोकासे काकवर्णना पुत्रने लेख मोकल्यो के तमे अहीं आवो, एटलामा हु आ(राजा)ने मारी नाखु छु । तमारा पिताने अने मने छोडावो । ए रीते दिवस नक्की करायो ।

ए दिवसे राजा पुत्रनी साथे महेलमा पेठो । (कोकासे) खीली उपर प्रहार कर्यो एटले ए (महेल) संपुट बनी गयो (अर्थात् बीडाई गयो) राजा अने एनो पुत्र मरण पाम्या । काकवर्णना पुत्रे ए नगर लई लीधु । मा-बाप अने कोकासने मुक्त कर्या ।"

(विद्यासिद्धनु स्वरूप कहे छे—)

शु०—विद्या अने मन्त्रमा एटलो ज तफावत छे के, स्त्री-देवतार्थी अधिष्ठित होय ते 'विद्या' कहेवाय अने पुरुष-देवताथी अधिष्ठित होय ते 'मन्त्र' कहेवाय छे । अथवा विद्या (होम वगेरे) साधनाथी सिद्ध थाय छे, ज्यारे मन्त्र साधन विना ज सिद्ध थाय छे । ४५, (९३१)

(विद्यासिद्धने दृष्टांतपूर्वक जणावे छे—)

शु०—जे सर्व विद्याओना चक्रवर्ती छे अथवा जेमणे एक पण विद्याने सिद्ध करी छे ते 'विद्या-सिद्ध' गणाय छे । जेम आर्य खपुटाचार्य विद्यासिद्ध तरीके प्रसिद्ध हता । तेमनी कथा आ प्रकारे छे–

"आर्य खपुटाचार्य विद्यासिद्ध हता । तेमनो बाळ भाणेज (भुवन नामे) शिष्य हतो । तेणे तेमनी पासेथी विद्या साभळीने ग्रहण करी लीधी, विद्यासिद्धने नमस्कार करवाथीये विद्या सिद्ध थाय छे, एवा ते विद्याचक्रवर्ती (आर्य खपुटाचार्य) ते भाणेजने भरुचमा (कोई) साधु पासे मूकीने पोते गुडशस्त्रनगरमा गया । त्या कोई (बौद्ध) भिक्षुने (जैन) साधुओए वादमा हराव्यो हतो । हार सहन न करी शकवाथी ते (अनशन करी) मरी गयो, अने गुडशस्त्रनगरमा बृहत्कर नामे व्यंतर थयो । त्या तेणे (जैन) साधुओने उपद्रव करवा माड्या । ए माटे आर्य खपुटाचार्य त्या गया ।

नगरमा आवीने ते यक्षमंदिरमा आचार्य महाराज ते मूर्तिना कान उपर पग मूकीने सूई गया । मंदिरना पूजारीए आवीने जोयु अने त्याथी जईने ते माणसोने बोलावी आव्यो । आचार्य

---

१ जे द्वारा आहार मळी शके ।

जो निच्चसिद्धजत्तो लद्धवरो जो व तुंडियाइ व्व ।
सो किर जत्तासिद्धोऽभिप्पाओ बुद्धिपज्जाओ ॥ ५० ॥ ९३६ ॥
विउला विमला सुहुमा जस्स मई जो चउव्विहाए वा ।
बुद्धीए संपन्नो स बुद्धिसिद्धो इमा सा य ॥ ५१ ॥ ९३७ ॥
उप्पत्तिआ[1] वेणइआ[2] कम्मिया[3] पारिणामिआ[4] ।
बुद्धी चउव्विहा वुत्ता पंचमा नोवलब्भए ॥ ५२ ॥ ९३८ ॥
पुव्वमदिट्ठमस्सुअमवेइअ तक्खणविसुद्धगहिअत्था ।
अव्वाहयफलजोगिणि बुद्धी उप्पत्तिआ नाम ॥ ५३ ॥ ९३९ ॥

वि०—'आगमसिद्ध' पुरुष महा अतिशयवाळा होय छे । ते असंख्य भवोनी वात कही शके छे। जे पुरुष पुष्कळ पैसावाळो छे अगर पैसामां परायण रहे छे ते मम्मण श्रेष्ठीनी माफक 'अर्थसिद्ध' कहेवाय छे । (यात्रासिद्ध अने अभिप्रायसिद्ध विशे कहे छे–) ४९, (९३५)

श०—जे सदा (जळमार्ग अथवा स्थळमार्गनी) यात्राने (शंका राख्या विना) सिद्ध करे छे अगर तुंडिक(वणिक)नी माफक जेणे वरदान प्राप्त कर्युं छे ते 'यात्रासिद्ध' कहेवाय छे। अभिप्राय एटले बुद्धि । जेनी बुद्धि विस्तारवाळी (एटले एक पद जाणवा मात्रथी अनेक पदोनुं ज्ञान मेळवी ले) विमळ (एटले संशय, विपर्यास अने अनध्यवसायथी रहित) तेमज सूक्ष्म होय अगर (औत्पातिकी वगेरे) चार प्रकारनी बुद्धिथी जे संपन्न होय ते 'बुद्धिसिद्ध' अगर 'अभिप्रायसिद्ध' जाणवो । ते चार प्रकारनी बुद्धि आ प्रमाणे छे– । ५०–५१, (९३६–९३७)

श०—१ औत्पातिकी, २ वैनयिकी, ३ कर्मजा अने ४ पारिणामिकी–आ चार प्रकारनी बुद्धि कहेली छे । पांचमो प्रकार जणातो नथी । (५२)

वि०—(१) स्वभावथी ज जेनी उत्पत्ति थती होय अने जेमां बीजां शास्त्रो तेमज कर्मना अभ्यासनी अपेक्षा नथी ते 'औत्पातिकी बुद्धि' (हाजरजवाबी) कहेवाय छे ।

(२) गुरुनी सेवाशुश्रूषा ए ज जेनुं मुख्य कारण छे ते 'वैनयिकी बुद्धि' कहेवाय छे ।

(३) आचार्य एटले शिक्षक । तेमना विना ज जे कार्य थाय ते 'कर्म' कहेवाय, अने शिक्षकपूर्वक जे कार्य थाय ते 'शिल्प' कहेवाय । अथवा कोई समये जे कार्य कराय ते 'कर्म' कहेवाय अने नित्य जे कार्य करवामां आवे ते 'शिल्प' कहेवाय–आमां कर्म करवाथी उत्पन्न थती जे बुद्धि ते 'कर्मजा बुद्धि' कहेवाय छे ।

(४) लांवा समयना पूर्वापरना अवलोकनथी–अनुभवथी उत्पन्न थती जे बुद्धि तेने 'पारिणामिकी बुद्धि' कहे छे । ५२, (९३८)

(औत्पातिकी बुद्धिनुं लक्षण जणावे छे–)

श०—पूर्वे जोयेलुं न होय, सांभळेलुं न होय अने अनुभवेलुं न होय छतां ते ज क्षणे विशुद्ध अर्थने ग्रहण करनारी अने अबाधित फळना योगवाळी बुद्धिने 'औत्पातिकी बुद्धि' कहे छे । (५३)

सव्वेवि दव्वजोगा परमच्छेरयफलाऽहवेगोऽवि ।
जस्सेह हुज्ज सिद्धो स जोगसिद्धो जहा समिओ ॥ ४८ ॥ ९३४ ॥
आगमसिद्धो सव्वंगपारओ गोअमु व्व गुणरासी ।
पउरत्थो अत्थपरो व मम्मणो अत्थसिद्ध त्ति ॥ ४९ ॥ ९३५ ॥

"कोई एक नगरमा एक सौंदर्यवती साध्वीने कोई विषयलोलुप राजाए पकडी, त्यारे संघ एकठो थयो अने एक सिद्धमंत्र आचार्य राजाना महेलना प्रांगणमा जे स्तंभो हता तेने आकर्षित कर्या । ते स्तंभो अवाज करता आकाशमां ऊंचे जवा लाग्या, अने महेलना बीजा स्तंभो पण हाली ऊठ्या । आथी राजा भय पाम्यो अने साध्वीने छोडी मूकी, तेणे श्रीसंघनी माफी मागी ।"

आ प्रकारना होय ते 'सिद्धमंत्र' कहेवाय छे । ४७, (९३३)

(योगसिद्धने बतावे छे—)

शु०—भारे आश्चर्यकारक समग्र द्रव्योनी मेळवणी जे जाणता होय अथवा जेमणे एक पण योग सिद्ध कर्यो होय ते 'योगसिद्ध' कहेवाय छे । एवा योगसिद्ध तरीके आर्य समिताचार्य जाणीता हता । तेमनी कथा आ प्रकारे छे —

"आभीर देशमा कृष्णा अने बेन्ना नामनी नदीओनी वच्चे (एक टापु उपर) केटलाक तापसो रहेता हता । त्यांनो एक तापस पगे लेप करीने पाणीमा फरतो फरतो (नदीकिनारे) आवतो-जतो । आथी लोको तेने मान आपवा लाग्या । श्रावकोनी श्रद्धा पण चलायमान थवा लागी ।

श्रीवज्रस्वामीना मातुल आर्य समितसूरि विहार करता त्यां आव्या । श्रावको तेमनी पासे गया । तेमणे (पेला तपासनी हकीकत जाणीने) कह्यु के, आ अक्रिया छे । एम थाय ए आचार्यने गम्युं नहीं ।

तेमणे कह्यु के, आर्यो ! शा माटे राह जूओ छो ? आ (तापस) कोई योगचूर्ण (पगे) घसी लावे छे, तेथी ते आ रीते फरी शके छे । ते तापसने बोलाववामा आव्यो । कोई श्रावके कह्यु के, अमे पण तमने दान आपीए छीए, माटे हे भगवन् ! पहेला आप पग धोई नाखशो तो अमे आभारी थईशुं ।

ते तापसे अनिच्छाए पग अने पादुकाओ धोई नाखी । ते पछी ते पाणीमा गयो अने डूबवा लाग्यो । आथी तेनी भारे निंदा थवा लागी । आवा दंभना कारणे ए लोकजीभे चवाई गयो ।

आचार्य (पोताना स्थानथी) बहार नीकळ्या । तेमणे नदीमा योगचूर्ण नाखीने नदीने कह्यु 'हे पुत्री बेन्ना नदी ! किनारो आप । मारे पूर्व तरफना किनारे जवु छे ।' आथी बने किनारा भेगा थई गया । आचार्य ते बधा तापसोने (जैन) दीक्षा आपी । ते बधा ब्रह्मद्वीपमा रहेनारा 'ब्रह्मद्वीपिक' कहेवाया ।"

'योगसिद्ध' आ प्रकारना होय छे । ४८, (९३४)

(आगमसिद्ध अने अर्थसिद्ध विशे कहे छे–)

शु०—समग्र अंगोना पारगामी ते 'आगमसिद्ध' कहेवाय । एवा आगमसिद्ध तरीके गुणोना भंडार श्रीगौतमस्वामी प्रसिद्ध हता । एम ज जे महाधनवान् के धनमा ज निष्ठावाळो होय ते मम्मण श्रेष्ठीनी माफक 'अर्थसिद्ध' कहेवाय छे । (४९)

उवओगदिट्ठसारा कम्मपसंगपरिघोलणविसाला ।
साहुक्कारफलवई कम्मसमुत्था हवइ बुद्धी ॥ ६० ॥ ९४६ ॥
हेरन्निए[1] करिसए[2] कोलिअ[3] डोवे[4] अ मुत्ति[5] घय[6] पवए ।
तुन्नाग[7] वड्ढई[8] पूइए[9] अ घडे[10] चित्तकारे[11] अ ॥ ६१ ॥ ९४७ ॥
अणुमाणहेउदिट्ठंतसाहिया वयविवागपरिणामा ।
हिअनिस्सेअसफलवई बुद्धी परिणामिआ नाम ॥ ६२ ॥ ९४८ ॥
अभए[1] सिट्ठि[2] कुमारे[3] देवी[4] उदिओदए हवइ[5] राया ।
साहू अ नंदिसेणे[6] धणदत्ते[7] सावग[8] अमच्चे[9] ॥ ६३ ॥ ९४९ ॥
खवगे[10] अमच्चपुत्ते[11] चाणक्के[12] चेव थूलभद्दे[13] अ ।
नासिकसुंदरी नंदे[14] वइरे[15] परिणामिआ बुद्धी ॥ ६४ ॥ ९५० ॥
चलणाहय[16] आमंडे[17] मणी[18] अ सप्पे[19] अ खग्गि[20] थूभिं[21] दे[22] ।
परिणामिअबुद्धीए एवमाई उदाहरणा ॥ ६५ ॥ ९५१ ॥

क्रौंचनुं वामभ्रमण, १३ वरसादनुं पाणी, १४ वळदनी चोरी अने प्रहारथी घोडानुं मरण । ५८–५९, (९४४–९४५)

(कर्मजा बुद्धिनुं लक्षण जणावे छे—)

श०—एकाग्र चित्तथी उपयोगपूर्वक कार्यना परिणामने जोनारी तथा अनेक कार्योना अभ्यास अने चिंतनथी विशाल तेमज विद्वानोए करेली प्रशंसारूप फळने आपनारी बुद्धि 'कर्मजा बुद्धि' कहेवाय छे । ६०, (९४६)

(कर्मजा बुद्धिनां दृष्टांतो जणावे छे—)

श०—१ सोनी, २ खेडूत, ३ वणकर, ४ लुहार, ५ मणिकार, ६ घी वेचनार, ७ कूदनारो, ८ दरजी, ९ सुथार, १० कंदोई, ११ कुंभार अने १२ चित्रकार । ६१, (९४७)

(पारिणामिकी बुद्धिनां लक्षण जणावे छे–)

श०—अनुमान, हेतु अने दृष्टांतथी साध्यने सिद्ध करनारी, अवस्थाना परिपाकथी पुष्ट तेमज अभ्युदय अने मोक्षरूपी फळने आपनारी बुद्धि ते 'पारिणामिकी बुद्धि' कहेवाय छे । ६२, (९४८)

(पारिणामिकी बुद्धिनां दृष्टांतो जणावे छे–)

श०—१ अभयकुमार, २ शेठ, ३ कुमार, ४ देवी, ५ उदितोदय राजा, ६ साधु अने नंदिषेण कुमार, ७ धनदत्त, ८ श्रावक, ९ अमात्य, १० क्षपक साधु, ११ अमात्यपुत्र, १२ चाणक्य, १३ स्थूलिभद्र, १४ नासिकपुरमां सुंदरीपति नंद, १५ वज्रस्वामी, १६ मस्तक पर चरणप्रहार, १७ आमलक, १८ मणि, १९ सर्प, २० गेंडो (अरण्य पशु) अने २१ स्तूप वगेरे ए पारिणामिकी बुद्धिनां उदाहरणो छे । ६३–६५, (९४९–९५१) ।

भरहसिल[1] पणिअ[2] रुक्खे[3] खुड्डग[4] पड[5] सरड[6] काग[7] उच्चारे[8] ।
गय[9] घयण[10] गोल[11] खंभे[12] खुड्डग[13] मग्गि[14]त्थि[15] पइ[16] पुत्ते[17] ॥ ५४ ॥ ९४० ॥
भरहसिल[1] मिंढ[2] कुक्कुड[3] तिल[4] वालुअ[5] हत्थि[6] अगड[7] वणसडे[8] ।
पायस[9] अइआ[10] पत्ते[11] खाडहिला[12] पचपिअरो[13-16] अ ॥ ५५ ॥ ९४१ ॥
महुसित्थ[17] मुद्दि[18] अंके[19] अ नाणए[20] भिक्खु[21] चेडगनिहाणे[22] ।
सिक्खा[23] य अत्थसत्थे[24] इच्छा य मह[25] सयसहस्से[26] ॥ ५६ ॥ ९४२ ॥
भरनित्थरणसमत्था तिवग्गसुत्तत्थगहिअपेयाला ।
उभओ लोगफलवई विणयसमुत्था हवइ बुद्धी ॥ ५७ ॥ ९४३ ॥
निमित्ते[1] अत्थसत्थे[2] अलेहे[3] गणिए[4] अ कूवे[5] अस्से[6] अ ।
गद्दह[7] लक्खण[8] गंठी[9] अगए[10] गणिआ य रहिओ[11] अ ॥ ५८ ॥ ९४४ ॥
सीआ साडी दीह च तणं अवसव्वय च कुंचस्स[12] ।
निव्वोदए[13] अ गोणे घोडगपडण च रुक्खाओ[14] ॥ ५९ ॥ ९४५ ॥

वि०—पूर्वे एटले बुद्धि उत्पन्न थाय ते पहेला पोते जोयेलु न होय, बीजेथी सांभळ्यु न होय, अने मनथी विचारेलु न होय छता ते ज क्षणे बराबर अभिप्रेत अर्थने ग्रहण करे अने आ भवमा ऐकांतिक अने परभवमा अविरुद्ध एवा अबाधित फळने जे मेळवी आपे तेने 'औत्पातिकी बुद्धि' कहे छे, अर्थात् शास्त्राभ्यास के अनुभव वगेरे विना ज केवळ उत्पातथी ज जे उत्पन्न थाय ते 'औत्पातिकी बुद्धि' कहेवाय छे । ५३, (९३९)

(औत्पातिकी बुद्धिना दृष्टांतो जणावे छे—)

शु०—१ भरतशिला, २ पणित (जुगार), ३ वृक्ष, ४ मुद्रिका, ५ पट, ६ सरट (जतुविशेष), ७ कागडो, ८ उच्चार, (मलपरीक्षा), ९ हाथी, १० भाड (अकीर्ति), ११ गोलक, १२ स्तंभ, १३ क्षुद्रक (बाळक), १४ मार्ग, १५ स्त्री, १६ पति, १७ पुत्र । ५४, (९४०)

शु०—१ भरतशिला, २ घेटो, ३ कुकडो, ४ तल, ५ रेती, ६ हाथी, ७ कूवो, ८ वनखड, ९ खीर, १० अतिग, ११ पत्र, १२ खाडहिला (प्राणीविशेष), १३ थी १६ पच पिता, १७ मधुछत्र, १८ मुद्रिका, १९ अंक, २० नाणु, २१ भिक्षु, २२ चेटक अने निधान, २३ शिष्य, २४ अर्थशास्त्र, २५ इच्छा महत्, २६ शतसहस्र । ५५–५६, (९४१–९४२)

(वैनयिकी बुद्धि विशे जणावे छे—)

शु०—मुश्केल कार्यने पार पाडवामा समर्थ अने त्रण वर्ग (धर्म, अर्थ अने काम)ना उपायनु प्रतिपादन करनारा शास्त्रोना रहस्यने जाणनारी, बन्ने लोक(आ लोक अने परलोक)मा फळ आपनारी एवी बुद्धिने 'विनयथी उत्पन्न थनारी' अर्थात् 'वैनयिकी बुद्धि' कहे छे । ५७, (९४३)

(वैनयिकी बुद्धिना दृष्टांतो जणावे छे—)

शु०—१ निमित्त, २ अर्थशास्त्र, ३ लिपिज्ञान, ४ गणित, ५ कूवो, ६ अश्व, ७ गर्दभ, ८ लक्षण, ९ ग्रंथि, १० अगद (दवा), ११ गणिका अने रथिक, १२ शीता साडी, लाबु घास,

लाउअ एरंडफले अग्गी धूमे उसू धणुविमुक्के।
गइ पुव्वपओगेणं एवं सिद्धाण वि गईओ ॥ ७१ ॥ ९५७ ॥
कहिं पडिहया सिद्धा कहिं सिद्धा पइट्ठिया।
कहिं बोंदिं चइत्ता णं कत्थ गंतूण सिज्झई? ॥ ७२ ॥ ९५८ ॥
अलोए पडिहया सिद्धा लोअग्गे अ पइट्ठिआ।
इहं बोंदिं चइत्ता णं तत्थ गंतूण सिज्झई ॥ ७३ ॥ ९५९ ॥
ईसीपब्भाराए सीआए जोअणम्मि लोगंतो।
बारसहिं जोअणेहिं सिद्धी सव्वट्ठसिद्धाओ ॥ ७४ ॥ ९६० ॥

(सिद्धोनी गति उदाहरणथी वतावे छे—)

श०—जेम तुंबडु, एरंडानुं फळ, अग्नि, धुमाडो अने धनुष्यमांथी छूटेलुं तीर ए बधांनी पूर्वप्रयोगथी जेवी गति थाय छे तेवी ज सिद्धोनी पण गति थाय छे। (७१)

वि०—कर्मथी मुकायेलो जीव एक क्षणमां ऊंचे लोकना अग्रभाग सुधी जाय छे। ते विशे दृष्टांतो जणावतां जेम तुंबडाने आठ वार माटीना लेप करेला होय अने पाणीमां नांखवामां आवे तो ते पाणीनी नीचे रहे छे पण माटीनो लेप ओछो थतां थतां पाणीना तळियानी मर्यादाथी ऊंचे आवे छे तेम सिद्धोनी गति पण समजवी।

जेम एरंडानुं फळ बंधन छेदाई जतां ऊंचे गति करे छे तेम सिद्धोनी गति थाय छे। वळी, अग्नि अने धुमाडो स्वाभाविक परिणामना कारणे जेम ऊंचे जाय छे तेम सिद्धोनी गति थाय छे। धनुष्यमांथी जेवी रीते तीर छूटे छे ते रीते सिद्धोनी गति थाय छे। ७१, (९५७)

(सिद्धोनी गतिनो अवरोध अने स्थिति विशे प्रश्न करे छे—)

श०—सिद्ध आत्मा क्यां प्रतिहत थाय छे? सिद्धो क्यां प्रतिष्ठित छे? क्यां तेओ शरीर छोडीने क्यां जईने सिद्धि पामे छे? ७२, (९५८)

(प्रश्नकारना पक्षने अवलंबीने कहे छे—)

श०—सिद्धना जीवो अलोकमां प्रतिहत छे। लोकना अग्रभागे प्रतिष्ठित छे अने अहीं शरीर छोडीने त्यां जईने सिद्धि पामे छे। (७३)

वि०—अलोक एटले ज्यां धर्मास्तिकाय अने अधर्मास्तिकाय नथी पण केवळ आकाशास्तिकाय छे त्यां सिद्धो स्खलना पामे छे। लोकाकाशमां तेओ अप्रतिहत छे। लोकनो अग्रभाग एटले पांच अस्तिकायरूप लोकना मस्तक भागमां प्रतिष्ठित छे, त्यांथी फरी वार आववानुं नथी ए रीते प्रतिष्ठित छे।

वळी, अढी द्वीप समुद्रनी अंदर ज सर्वथा शरीर छोडीने त्यां—लोकना अग्रभागमां अस्पृशद्-गतिथी जईने सिद्ध थाय छे, एटले स्थिर थाय छे। ७३, (९५९)

(लोकनो अग्रभाग क्यां छे ते जणावे छे—)

श०—ईषद्प्राग्भारा जे सिद्धिभूमि छे अने जेनुं बीजुं नाम सीता छे तेनाथी एक योजन दूर लोकनो अंतभाग छे[1]। सर्वार्थसिद्ध विमानथी बार योजन दूर ते सिद्धिभूमि छे। ७४, (९६०)

---

१ बीजाओ एम माने छे के लोकना अंतभागरूपी सिद्धिभूमि बार योजन दूर छे। तत्त्व तो केवलीओ ज जाणे।

न किलम्मइ जो तवमा सो तवसिद्धो दढप्पहारि व्व ।
सो कम्मक्खयसिद्धो जो सव्वक्खीणकम्मसो ॥ ६६ ॥ ९५२ ॥
दीहकालरय ज तु कम्मं सेसिअमट्ठहा ।
सिअ धत ति सिद्धस्स सिद्धत्तमुवजायइ ॥ ६७ ॥ ९५३ ॥
नाऊण वेअणिज्ज अइबहुअ आउअ च थोवाग ।
गतूण समुग्घाय खवति कम्म निरवसेस ॥ ६८ ॥ ९५४ ॥
दड कवाडे मथतरे अ साहरणया सरीरत्थे ।
भासाजोगनिरोहे सेलेसी सिज्झणा चेव ॥ ६९ ॥ ९५५ ॥
जह उल्ला साडीआ आसु सुक्कइ विरल्लिआ सती ।
तह कम्मलहुअ समए वच्चति जिणा समुग्घाय ॥ ७० ॥ ९५६ ॥

(तपसिद्ध अने कर्मक्षयसिद्धना लक्षण जणावे छे—)

श०—जे मानवी (बाह्य अने अभ्यत्तर) तपथी क्लेश पामतो नथी ते दढप्रहारीनी जेम 'तपसिद्ध' कहेवाय छे, अने जेमणे कर्मना बधा अशोनो नाश कर्या छे ते 'कर्मक्षयसिद्ध' कहेवाय छे । ६६, (९५२)

(कर्मक्षयसिद्धनु लक्षण जणावे छे–)

श०—दीर्घ स्थितिवाळु आठ प्रकारनु बाधेलु जे कर्म तेने ध्यानरूपी अग्निथी भस्मीभूत कर्युं होवाथी सिद्धने सिद्धपणु प्राप्त थाय छे । ६७, (९५३)

श०—वेदनीय कर्म घणु वधारे छे अने आयुष्यकर्म थोडु छे एम जाणीने केवली भगवानो समुद्‌घात करीने समग्र कर्मनो क्षय करी नाखे छे । ६८, (९५४)

श०—शरीरमा रहेल होवा छता आत्मप्रदेशोने दड, कपाट, मथान अने अतरने पूर्ण करता भाषायोगनो निरोध करीने शैलेशीकरण पामे त्यारे सिद्ध थाय छे । (६९)

वि०—समुद्‌घात करती वखते पहेला समये दड, बीजा समये कमाड अने त्रीजा समये रवैयो करीने, चोथा समये अंतर (बाकी रहेली बधी खाली जगा)ने पूर्ण करीने समग्र लोकमा आत्माने व्याप्त करी दे छे, पछी ते ज क्रमे आत्मप्रदेशोने सहरीने आठमा समये शरीरस्थ थई जाय छे । त्यार पछी भाषायोगनो (मनोयोगनो अने काययोगनो पण) निरोध करीने, शैलेशीकरण करीने सिद्ध थाय छे–मोक्ष प्राप्त करे छे । ६९, (९५५)

(समुद्‌घातने दृष्टातथी बतावे छे—)

श०—जेम भीनी साडी पहोळी करी होय तो ते सुकाई जाय छे ते प्रमाणे प्रयत्नविशेषथी कर्मरूप पाणी पण सूकाई जाय छे माटे कर्मनी लघुताना समये जिनेश्वरो समुद्घात करे छे । ७०, (९५६)

तिन्नि सया तित्तीसा धणु त्ति भागो अ कोस छब्भाओ।
जं परमोगाहोऽयं तो ते कोसस्स छब्भाए॥ ८०॥ ९६६॥
उत्ताणउ व्व पासिल्लउ व्व अहवा निसन्नओ चेव।
जो जह करेइ कालं सो तह उववज्जए सिद्धो॥ ८१॥ ९६७॥
इहभवभिन्नागारो कम्मवसाओ भवंतरे होइ।
न य तं सिद्धस्स जओ तम्मी तो सो तयागारो॥ ८२॥ ९६८॥
जं संठाणं तु इहं भवं चयंतस्स चरमसमयम्मि।
आसी अ पएसघणं तं संठाणं तहिं तस्स॥॥ ८३॥ ९६९॥
दीहं वा हस्सं वा जं चरमभवे हविज्ज संठाणं।
तत्तो तिभागहीणा सिद्धाणोगाहणा भणिआ॥ ८४॥ ९७०॥

(उपर्युक्त अवगाहनानुं फरीने समर्थन करे छे—)

श०—त्रणसो ने तेत्रीश धनुष्यनो जे त्रीजो भाग अर्थात् कोशनो छठ्ठो भाग थाय एवा कोशना छठ्ठा भागे सिद्धोनी उत्कृष्ट अवगाहना होय छे। ८०, (९६६)

(सिद्धोना उपपात विशे कहे छे—)

श०—चत्तो, पडखे, अर्ध नमेलो, वाजुमां रहेलो, तीर्छो रहेलो अथवा वेठेलो जे आत्मा जे रीते काळ करे छे ते ते रीते ज सिद्धपणे उत्पन्न थाय छे। ८१, (९६७)

श०—(जीव) आ भवमांथी वीजा भवमां (स्वर्ग वगेरेमां) जतां भिन्न आकार प्राप्त थाय छे पण सिद्धने तो ते (कर्मो) नथी एटले तेमां पहेलां जेवो ज आकार होय छे। (मतलब के, अपवर्गमां आ सिद्ध जीवो पूर्वभवना आकारवाळा ज ऊपजे छे) ८२, (९६८)

(वळी कहे छे—)

श०—आ भवने त्यजती वखते छेल्ला समये (सिद्धना जीवोने) जे संस्थान होय ते ज घन प्रदेशवाळुं संस्थान ते सिद्धने होय छे। ८३, (९६९)

(वळी कहे छे—)

श०—लांबु अथवा टूंकुं एवुं जे संस्थान छेल्ला समये होय, तेनाथी त्रीजे भागे (१/३ भागे) न्यून एवी सिद्धोनी अवगाहना (जिनेश्वरोए) कहेली छे। (८४)

वि०—लांबु एटले पांचसो धनुष्य प्रमाण, टूंकुं एटले वे हाथ प्रमाण, मध्यम एटले विचित्र।

प्र०—छेल्ला भवमां जे संस्थान होय तेनाथी त्रीजा भागे न्यून एम शा माटे कहो छो?

उ०—छिद्रो जेटलो त्रीजो भाग पूराई जाय छे तेथी सिद्धोनी अवगाहना एटली होय छे। अवगाहना एटले अवस्था। ८४, (९७०)

निम्मलदगरयवण्णा तुसारगोखीरहारसरिवन्ना ।
उत्ताणयछत्तयसंठिआ य भणिया जिणवरेहिं ॥ ७५ ॥ ९६१ ॥
एगा जोअणकोडी बायालीस च सयसहस्साइं ।
तीसं चेव सहस्सा दो चेव सया अउणवन्ना ॥ ७६ ॥ ९६२ ॥
बहुमज्झदेसभागे अट्ठेव य जोअणाणि बाहल्लं ।
चरमंतेसु अ तणुई अंगुलऽसंखिज्जईभागं ॥ ७७ ॥ ९६३ ॥
गंतूण जोअणं जोअणं तु परिहाइ अंगुलपुहुत्तं ।
तीसेऽविअ पेरंता मच्छिअपत्ताउ तणुअयरा ॥ ७८ ॥ ९६४ ॥
ईसीपब्भाराए सीआए जोअणम्मि जो कोसो ।
कोसस्स य छब्भाए सिद्धाणोगाहणा भणिआ ॥ ७९ ॥ ९६५ ॥

(सिद्धिभूमिनुं स्वरूप वर्णवे छे—)

श०—ते (सिद्धभूमि) निर्मळ पाणीना बिंदुओना वर्ण जेवी छे, हिम जेवा वर्णनी छे, गायनुं दूध अगर हारना जेवा वर्णवाळी छे। (अने तेनुं संस्थान—) चत्ता छत्रनी माफक रहेली होय तेवी सिद्धिभूमि छे, एम जिनेश्वर भगवतोए कहेलुं छे। ७५, (९६१)

(सिद्धिभूमिनी परिधि जणावे छे—)

श०—एक करोड, बेतालीस लाख, त्रीश हजार, बसो ने ओगणपचास योजन ए सिद्धिभूमिनी परिधि छे। (७६)

वि०—आ परिधिनुं प्रमाण स्थूल दृष्टिए अहीं बताव्युं छे पण क्षेत्रनी परिधिनो बीजो थोडोक वधारो अने विस्तार 'पन्नवणासूत्र'थी जाणी लेवो। ७६, (९६२)

(सिद्धिभूमिनी जाडाई–पातळाई बतावे छे—)

श०—सिद्धशिलाना मध्य भागमां आठ योजननी जाडाई होय छे अने छेडे अंगुलना असंख्यातमा भाग जेटली ते पातळी होय छे। ७७, (९६३)

(सिद्धिभूमिनी पातळाईनो क्रम जणावे छे—)

श०—योजन योजन आगळ (वधीए तो) अंगुल पृथक्त्वभाग प्रमाण ओछी ओछी थती जाय छे (अने एम ओछी थतां थतां) तेना छेडाना भागो माखीनी पांख करतांये पातळा होय छे। ७८, (९६४)

(सिद्धोनी अवगाहना बतावे छे—)

श०—सीता (जेनुं बीजुं नाम छे) एवी ईषत्प्राग्भाराथी उपर एक योजनमां जे छेल्लो गाउ छे तेना उपरना छठ्ठा भागमां सिद्धोनी अवगाहना होय छे। ए प्रकारे लोकना अग्रभागमां सिद्धो प्रतिष्ठित छे।) ७९, (९६५)

सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हविज्जा ।
सोऽणंतवग्गभइओ सव्वागासे न माइज्जा ॥ ९६ ॥ ९८२ ॥
जह नाम कोइ मिच्छो नगरगुणे बहुविहे विआणंतो ।
न चएइ परिकहेउं उवमाइ तहिं असंतीए ॥ ९७ ॥ ९८३ ॥
इअ सिद्धाणं सुक्खं अणोवमं नत्थि तस्स ओवम्मं ।
किंचि विसेसेणित्तो सारिक्खमिणं सुणह वुच्छं ॥ ९८ ॥ ९८४ ॥
जह सव्वकामगुणिअं पुरिसो भोत्तूण भोअणं कोइ ।
तण्हा-छुआविमुक्को अच्छिज्ज जहा अमिअतित्तो ॥ ९९ ॥ ९८५ ॥
इअ सव्वकालतित्ता अउलं निव्वाणमुवगया सिद्धा ।
सासयमव्वाबाहं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥ १०० ॥ ९८६ ॥

वि०—देवताओना समूहनुं समग्र सुख ते भूतकाळ, भविष्यकाळ अने वर्तमानकाळनुं एकठुं करवामां आवे, तेने वधा समयथी गुणीए अने ते अनंतगणुं थाय तेने अनंत एवा वर्गोथी गुणवामां आवे तोपण मुक्तिना सुखनी तुलना करी शके नहीं । ९५, (९८१)

(ए ज वस्तुने जूदा प्रकारे बतावे छे—)

श०—सिद्धोना जीवोनो सुखनो राशि-समूह जो वधाये समयने एकत्रित करवामां आवे अने तेने अनंत वर्गोथी विभाजित करीए तो ते भाग समग्र आकाशमां पण माई शके नहीं । (९६)

वि०—आ गाथानो रहस्यार्थ ए छे के, सुख ए विशिष्ट आह्लादरूप छे । ज्यारथी आरंभीने शिष्ट मनुष्योमां सुख शब्दनी प्रवृत्ति थयेली छे त्यारथी ते आह्लादथी मांडीने शरूआत करीए अने एकेक गुणनी वृद्धिनी तरतमताथी आ आह्लादने त्यां सुधी विशेषित करीए के ते अनंत गुण-वृद्धिथी निरतिशय गुणनी पूर्णताने पामे । तेथी आ आह्लाद अत्यंत, उपमातीत, एकांत, उत्सुकता वगरनो, स्थिर एवो जे छेल्लो आह्लाद ते हमेशां सिद्धोने होय छे । ९६, (९८२)

(सिद्धोना सुखने दृष्टांतथी बतावे छे—)

श०—जेम कोई म्लेच्छ नगरना अनेक प्रकारना गुणो जाणवा छतां उपमा न मळ्ती होवाना कारणे (ते नगरना गुणोने) कहेवाने शक्तिमान थतो नथी । (तेम आ मोक्षसुख उपमाथी बतावी शकातुं नथी ।) ९७, (९८३)

श०—आ प्रकारे सिद्धोनुं सुख अनुपम छे, केमके तेनी कोईनी साथे उपमा आपी शकाय एम नथी; छतां बाळ मनुष्योने समजाववा माटे कंईक विशेषतापूर्वक महापुरुषोए जे सादृश्य बतावेलुं छे ते जणावीए छीए, ते तमे सांभळो ॥ (९८)

वि०—अर्थात् समग्र दोषोना क्षयथी शाश्वत अने अव्याबाध एवा सुखने प्राप्त थयेला सुखी बनीने ते सिद्धो रहेला छे। 'तेओ दुःखना अभाव मात्रथी युक्त छे' एम नथी ज । ९८, (९८४)

तिन्नि सया तित्तीसा धणु त्ति भागो अ होइ बोधव्वो ।
एसा खलु सिद्धाण उक्कोसोगाहणा भणिआ ॥ ८५ ॥ ९७१ ॥
चत्तारि य रयणीओ रयणितिभागूणिआ य बोधव्वा ।
एसा खलु सिद्धाण मज्झिमओगाहणा भणिआ ॥ ८६ ॥ ९७२ ॥
एगा य होइ रयणी अट्ठेव य अंगुलाइ साहीआ ।
एसा खलु सिद्धाणं जहन्नओगाहणा भणिआ ॥ ८७ ॥ ९७३ ॥

(हवे उत्कृष्ट वगेरे अवगाहनाना प्रकारो बतावे छे—)

श०—त्रणसो ने तेत्रीश धनुष्य अने धनुष्यनो त्रीजो भाग एटले पाचसो धनुष्य प्रमाणवाळा जीवोनी सिद्धिगतिमा उत्कृष्ट अवगाहना जाणवी । ८५, (९७१)

श०—सात हाथनी कायावाळानी चार हाथ अने सोळ आगळ ए सिद्धोनी मध्यम अवगाहना जाणवी । ८६, (९७२)

श०—एक हाथ अने आठ आगळ ए सिद्धोनी जघन्य अवगाहना जाणवी । (८७)

वि०—आ त्रणे गाथानो अर्थ स्पष्ट छे पण भाष्यकारे आक्षेप-परिहार करीने आ हकीकतने वधारे स्पष्ट करी छे ते आ प्रमाणे—

प्र०—नाभि कुलकरना शरीरनी ऊचाई पाचसो ने पचीस धनुष्य प्रमाण हती त्यारे मरुदेवा मातानी सिद्धावस्थानी अवगाहना आमा केवी रीते घटी शके ?

उ०—मरुदेवा माता नाभिकुलकरथी कईक न्यून अवगाहनावाळा हता, तेथी तेमनी पण पाचसो धनुष्यनी अवगाहना कहेवाय । अथवा हाथी उपर बेठेला होवाथी अगने सकुचित करीने मोक्ष पामेला छे, तेथी एमनी अवगाहनामा कई ज विरोध आवतो नथी ।

प्र०—सिद्धातमा जघन्यथी सात हाथ प्रमाण ऊचाईवाळाने मोक्ष थाय एम कहेलु छे अने अहीं बे हाथ प्रमाणवाळाने शा खातर जणाव्या छे ?

उ०—सात हाथ प्रमाण तो तीर्थंकरो माटे कहेलु छे, पण बाकीना सामान्य केवलीओ मोक्ष पामे छे तेवानु बे हाथ प्रमाण जणावेलु छे, जेम कूर्मापुत्र सिद्ध थया तो ते बे हाथ प्रमाणवाळा हता, तेथी आ प्रमाण जघन्यथी समजवु जोईए ।

अथवा सूत्रमा जघन्यथी सात हाथ प्रमाण अने उत्कृष्टथी पाचसो धनुष्य प्रमाणवाळा मोक्षे जनारनी अवगाहना होय छे एम जे कह्यु छे ते बहुलतायी छे एम समजवु । अन्यथा कोई वखते जघन्यपदे अगुलपृथक्त्व अने उत्कृष्टपदे धनुष्यपृथक्त्व पण न्यूनाधिक होय छे ।

सामान्य श्रुतमा अच्छेरा (आश्चर्यो) वगेरे बधु कहेलु होतु नथी । सिद्धमा जनारा जेम बे हाथ प्रमाणवाळा अने सवा पाचसो धनुष्यवाळा मानव होय तेम श्रुतमा कह्यु न होय तो पण मानवु जोईए । ८७, (९७३)

सिद्धाण नमुक्कारो एवं खलु वण्णिओ महत्थु त्ति ।
जो मरणम्मि उवग्गे अभिक्खणं कीरए बहुसो ॥ १०५ ॥ ९९१ ॥
सिद्धाण नमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं बिइअं होइ मंगलं ॥ १०६ ॥ ९९२ ॥
नामं ठवणादविए भावम्मि चउव्विहो उ आयरिओ ।
दव्वम्मि एगभविआई लोइए सिप्पसत्थाई ॥ १०७ ॥ ९९३ ॥
पंचविहं आयारं आयरमाणा तहा पभासंता ।
आयारं दंसंता आयरिया तेण वुच्चंति ॥ १०८ ॥ ९९४ ॥

शo—आ प्रकारे करेलो नमस्कार महान् अर्थवाळो छे अने मरण नजीकमां होय त्यारे निरंतर अने घणीवार ते गणवामां आवे छे । १०५, (९९१)

शo—सिद्धने करेलो नमस्कार बधांये पापोनो नाश करनार छे अने बधांये मंगलोमां आ बीजुं मंगल छे । १०६, (९९२)

(३) आचार्य भगवंतने नमस्कार ।

आचार्य शब्द आङ् उपसर्गपूर्वक चर् धातुने ण्य प्रत्यय लागतां बन्यो छे । ते ते विषयनी मर्यादाथी आचरणा करे ते 'आचार्य' कहेवाय छे । अथवा मुमुक्षु भक्तो वडे जेमनी सेवा थाय तेमने आचार्य कहे छे ।

शo—१ नाम आचार्य, २ स्थापना आचार्य, ३ द्रव्य आचार्य अने ४ भाव आचार्य—एम चार प्रकारना आचार्यो छे । एकभविक आदि अथवा लौकिक शिल्पशास्त्र वगेरे जाणनार होय ते द्रव्य आचार्य कहेवाय छे । (१०७)

विo—नाम अने स्थापना सुगम छे (अगाऊ अरिहंत अने सिद्धना वर्णनमां जणावी दीधेल छे अने द्रव्य आचार्यना आगमथी तेमज नोआगमथी वगेरे भेदो अरिहंत अने सिद्धना वर्णनमां बतावेला छे ते मुजब द्रव्य आचार्यना भेद पण समजी लेवा ।)

एकभाविक एटले जेमने आचार्यपद प्राप्त थाय छे एवा प्रकारनुं मनुष्यनुं आयुष्य बांधेलुं होय एवा आत्मा अथवा आदिशब्दथी द्रव्यभूत आचार्य ते द्रव्याचार्य । द्रव्य निमित्ते जे आचारवाळा होय ते भावाचार्य कहेवाय छे । ते लौकिक अने लोकोत्तर एवा बे भेदे छे । तेमां लौकिक ते शिल्पशास्त्र वगेरे । तेना ज्ञानथी तेनो अभेद उपचार करतां ते आचार्य कहेवाय । १०७, (९९३)

(हवे लोकोत्तर एवा भावाचार्यनुं प्रतिपादन करे छे—)

शo—पांच प्रकारना आचारने आचरनारा, तथा उपदेश आपनारा तेमज आचारने बतावनारा होवाथी ते आचार्य कहेवाय छे । (१०८)

विo—पंचविध आचार ते—१ ज्ञानाचार, २ दर्शनाचार, ३ चारित्राचार, ४ तप आचार अने ५ वीर्याचार—आ आचारोने पाळनारा, अनुष्ठानथी आचरण करनारा, व्याख्यानथी उपदेश देता, तेमज पडिलेहणा वगेरे आचारने बतावता होवाथी आचार्य कहेवाय छे । १०८, (९९४)

आयारो नाणाई तस्सायरणा पभासणाओ वा।
जे ते भावायरिया भावायारोवउत्ता य ॥ १०९ ॥ ९९५ ॥
आयरियनमुक्कारो जीव मोएइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमाणो होइ पुणो बोहिलाभाए ॥ ११० ॥ ९९६ ॥
आयरियनमुक्कारो धन्नाण भवक्खयं कुणताण।
हिअय अणुम्मुयतो विसुत्तियावारओ होइ ॥ १११ ॥ ९९७ ॥
आयरियनमुक्कारो एव खलु वण्णिओ महत्थु त्ति।
जो मरणम्मि उवग्गे अभिक्खणं कीरए बहुसो ॥ ११२ ॥ ९९८ ॥
आयरियनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो।
मगलाण च सव्वेसिं तइअ होइ मगल ॥ ११३ ॥ ९९९ ॥
नाम ठवणादविए भावम्मि चउव्विहो उवज्झाओ।
दव्वे लोइअ सिप्पाइ निण्हगा वा इमे भावे ॥ ११४ ॥ १००० ॥

श०—आचार ते ज्ञान वगेरे। तेनु आचरण करता होवाथी तेमज उपदेश देता होवाथी जे भाव आचारथी युक्त होय ते 'भावाचार्य' कहेवाय छे। १०९, (९९५)

(उपसहार करता कहे छे—)

श०—आचार्यने करेलो नमस्कार, जो ते भावथी (हृदयपूर्वक) करेलो होय तो ते हजारो भवथी छोडावे छे अने ते नमस्कार अते बोधिबीज–सम्यक्त्वने आपनारो बने छे। ११०, (९९६)

श०—भवनो क्षय करवा इच्छता जे धन्य मनुष्यो, पोताना हृदयमा आचार्यने नमस्कार करवानु छोडता नथी, तेमना दुर्ध्याननु निवारण तो ते जरूर करे ज छे। १११, (९९७)

श०—आ प्रकारे करेलो नमस्कार महान् अर्थवाळो छे अने मरण नजीकमा होय त्यारे निरतर अने घणीवार ते गणवामा आवे छे। ११२, (९९८)

श०—आचार्यने करेलो नमस्कार बधाये पापोनो नाश करनारो छे अने बधाये मगलोमा आ त्रीजु मगल छे। ११३, (९९९)

(४) उपाध्याय भगवतने नमस्कार।

उपाध्याय शब्द 'उप्' उपसर्गपूर्वक 'इङ्' धातुने 'घञ्' प्रत्यय लागता बनेलो छे। जेमनी पासे आवीने साधुओ सूत्रनो अभ्यास करे ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे। ते उपाध्याय नाम आदि प्रकारो वडे चार भेदे छे।

श०—१ नाम उपाध्याय, २ स्थापना उपाध्याय, ३ द्रव्य उपाध्याय अने ४ भाव उपाध्याय–एम उपाध्यायना चार प्रकारो छे। द्रव्य उपाध्यायमा लौकिक शिल्प आदिने भणावनारा तथा निह्नवो पण गणाय छे। उपाध्याय नीचे प्रमाणे छे। (११४)

वि०—आचार्यना वर्णनमा जेम कहेलु छे तेम आमा पण नाम आदि भेदो माटे समजवु परतु तेमा जे निह्नव कह्यु छे तेनो अर्थ ए छे के, एक पण पदार्थने अभिनिवेशथी विरुद्धरीते प्ररूपणा करता होय ते मिथ्यादृष्टिओ 'द्रव्य उपाध्याय' कहेवाय छे। ११४, (१०००)

बारसंगो जिणक्खाओ सज्झाओ कहिओ बुहेहिं।
तं उवइसंति जम्हा उवज्झाया तेण वुच्चंति ॥ ११५ ॥ १००१ ॥
उ त्ति उवओगकरणे ज्झ त्ति अ झाणस्स होइ निद्देसे।
एएण हुंति उज्झा एसो अन्नोवि पज्झाओ ॥ ११६ ॥ १००२ ॥
उ त्ति उवओगकरणे व त्ति अ पावपरिवज्जणे होइ।
झ त्ति अ झाणस्स कए उ त्ति अ ओसक्कणा कम्मे ॥ ११७ ॥ १००३ ॥
उवज्झायनमुक्कारो जीवं मोएइ भवसहस्साओ।
भावेण कीरमणो होइ पुणो बोहिलाभाए ॥ ११८ ॥ १००४ ॥
उवज्झायनमुक्कारो धन्नाण भवक्खयं कुणंताणं।
हिअयं अणुम्मुअंतो विसुत्तियावारओ होइ ॥ ११९ ॥ १००५ ॥

(भाव उपाध्यायनुं प्रतिपादन करे छे—)

श०—जिनेश्वरोए प्ररूपेल द्वादशांगीने गणधर आदि पुरुषो स्वाध्याय कहे छे। एवा स्वाध्यायनो शिष्योने (सूत्रथी) उपदेश आपे छे तेथी ते 'भाव उपाध्याय' कहेवाय छे। (११५)

वि०—जिनेश्वरोए द्वादशांगने आचारांग वगेरे भेदोथी रचेला छे। ते स्वाध्याय अहीं सूत्ररूपे ज ग्रहण करवो। ते सूत्ररूप द्वादशांग गणधरोए रचेलो छे। ए स्वाध्यायनो जेओ उपदेश करे छे ते कारणथी ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे। कारण के जेमनी पासे जईने अध्ययन–भणाय ते 'उपाध्याय' कहेवाय छे। ११५, (१००१)

(हवे आगमशैलीए अक्षरार्थने अवलंबीने उपाध्यायनो शब्दार्थ कहे छे—)

श०—'उ' एटले उपयोग करवो, अने 'ज्झा' एटले ध्यान करवुं। आथी उज्झा अर्थात् उपयोगपूर्वक ध्यान करनार एवो एनो बीजो पर्याय–नाम छे। ११६, (१००२)

श०—'उ' एटले उपयोग करवो, 'व' एटले पापनुं वर्जन, 'झ' एटले ध्यान करवुं अने 'उ' एटले कर्मो दूर करवां–अर्थात् उपयोगपूर्वक पापने छोडतां ध्यान आरूढ थईने कर्मोने दूर करे ते 'उपाध्याय' कहेवाय। (आ अक्षरार्थ छे, अक्षरार्थना अभावे पदार्थना अभावनो प्रसंग आवे। पद ए समुदाय रूप होवाथी अहीं अक्षरार्थ समजवो।) ११७, (१००३)

(उपसंहार करतां कहे छे—)

श०—उपाध्यायने करेलो नमस्कार, जो ते भावथी (हृदयपूर्वक) करेलो होय तो ते हजारो भवथी छोडावे छे अने ते नमस्कार अंते बोधिबीज–सम्यक्त्व आपनारो बने छे। ११८,(१००४)

श०—भवनो क्षय करवा इच्छता जे धन्य मनुष्यो, पोताना हृदयमां उपाध्यायने नमस्कार करवानुं छोडता नथी, तेमना दुर्ध्याननुं निवारण तो ते जरूर करे ज छे। ११९, (१००५)

उवज्झायनमुक्कारो एव खलु वण्णिओ महत्थु त्ति ।
जो मरणम्मि उवग्गे अभिक्खण कीरए बहुसो ॥ १२० ॥ १००६ ॥
उवज्झायनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो ।
मगलाण च सव्वेसिं चउत्थ होइ मगल ॥ १२१ ॥ १००७ ॥
नाम ठवणासाहू दव्वसाहू अ भावसाहू अ ।
दव्वम्मि लोइआई भावम्मि अ सजओ साहू ॥ १२२ ॥ १००८ ॥
घडपडरहमाईणि उ साहता हुति दव्वसाहु त्ति ।
अहवावि दव्वभूआ ते हुती दव्वसाहु त्ति ॥ १२३ ॥ १००९ ॥
निव्वाणसाहए जोए जम्हा साहति साहुणो ।
समा य सव्वभूएसु तम्हा ते भावसाहुणो ॥ १२४ ॥ १०१० ॥
किं पिच्छसि साहूण तव व निअम व सजमगुण वा ।
तो वंदसि साहूणं एअ मे पुच्छिओ साह ॥ १२५ ॥ १०११ ॥

शु०—आ प्रकारे करेलो नमस्कार महान् अर्थवाळो छे अने मरण नजीकमा होय त्यारे निरतर अने घणीवार ते गणवामा आवे छे । १२०, (१००६)

शु०—उपाध्यायने करेलो नमस्कार बधाये पापोनो नाश करनारो छे अने बधाये मगलोमा ए चोथु मगल छे । १२१, (१००७)

(५) साधु भगवतने नमस्कार ।

साधु शब्द 'साध्' धातुने 'उण्' प्रत्यय लागता बनेलो छे । जे इच्छित अर्थने साधे ते 'साधु' कहेवाय छे । ते नाम आदि भेदोथी चार प्रकारे छे–

शु०—१ नाम साधु, २ स्थापना साधु, ३ द्रव्य साधु, अने ४ भाव साधु–एम चार प्रकारे छे । द्रव्य साधु ते लौकिक वगेरे अने भाव साधु ते सयत–सयमी साधु । १२२, (१००८)

(द्रव्य साधुनु प्रतिपादन करे छे—)

शु०—घडो, वस्त्र अने रथ वगेरे जे बनावता होय ते 'द्रव्य साधु' कहेवाय, अथवा जे द्रव्यभूत (भावपर्यायथी शून्य) होय ते 'द्रव्य साधु' कहेवाय । १२३, (१००९)

(भाव साधुनु प्रतिपादन करे छे—)

शु०—साधुओ निर्वाणने साधनारा योगो(सम्यग्दर्शन वगेरे)ने साधे छे (अनुष्ठानो करे छे) तथा बधा प्राणीओ प्रत्ये समभावी होय छे तेथी ते 'भाव साधु' कहेवाय छे । (योगनु प्राधान्य बताववा माटे आ समभाव कह्यो छे । १२४, (१०१०)

(साधु विशे प्रश्न—)

शु०—'साधुओमा तमे कयो तप, नियम अने सयमनो गुण जूओ छो के जेथी तेमने तमे वदन करो छो ?' एम मे पूछ्यु त्यारे गुरु कहे छे—१२५, (१०११)

पुव्वाणुपुव्वि न कमो नेव य पच्छाणुपुव्वि एस भवे ।
सिद्धाईआ पढमा बीआए साहुणो आई ॥ १३४ ॥ १०२० ॥

छे, जे केवलीओ छे, केटलाक आचार्यो छे, जेओ सूत्र अने अर्थना जाणकारो छे; केटलाक उपाध्यायो छे, जेओ सूत्रने जाणे छे; केटलाक एमनाथी भिन्न साधुओ छे, ते बधा कंई अरिहंतो नथी। तेथी एक पदमां व्यभिचार आवतो होवाथी तेमने नमस्कार करवाथी बीजाओने नमस्कार कर्यानुं फळ मळी न शके ।

प्रयोग पण छे के, साधु मात्रने करेलो नमस्कार विशिष्ट एवा अरिहंत वगेरेना गुणोने कराता नमस्कारनुं फळ आपवामां समर्थ नथी । कारण के एनुं सामान्य एवुं नमस्कार नाम छे । मनुष्य मात्रने नमस्कार करीए तेना जेवुं छे । तेथी नमस्कार पांच प्रकारनो ज छे ।

तात्पर्य ए छे के, बे प्रकारनो नमस्कार करी शकातो नथी। ए प्रकारे करवाथी अव्यापकपणानो दोष आवशे । 'सिद्ध' कहेवाथी अरिहंतना समस्त गुणोनो बोध थतो नथी। ए रीते 'साधु' कहेवाथी आचार्य अने उपाध्यायना गुणो पण ग्रहण करी शकाता नथी । आ कारणे संक्षेपमां बे प्रकारना परमेष्ठीने नमस्कार करवो युक्त नथी ।

'साधु'मात्र कहेवाथी आचार्य अने उपाध्यायना गुणोनुं स्मरण थई शकतुं नथी । केमके सामान्य कथनथी विशेषनी उपलब्धि थई न शके । जेम मनुष्य सामान्यने नमस्कार करवाथी अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधुना गुणोनुं स्मरण थई शकतुं नथी, अने तद्रूप बनवानी प्रेरणा पण मळी शकती नथी, आथी पंच परमेष्ठीने नमस्कार करवो जरूरी छे। जे अनंत परमेष्ठीओनी नमस्कार करवानी वात कहेवामां आवी छे तेनुं समाधान 'सव्व' पदद्वारा थई शके छे । आ पद बधाये परमेष्ठीओने जोडवामां आवे छे, जेनाथी अनंत अरहंत, अनंत सिद्ध, अनंत आचार्य, अनंत उपाध्याय अने अनंत साधुओनुं ग्रहण थई शके छे । शक्ति सीमित होवाथी अलग अलग अनंत परमेष्ठीओनुं निरूपण करवामां आव्युं नथी । सामान्यनी अंदर ज विशेष भेदोनुं पण ग्रहण थई जाय छे । १३३, (१०१९)

९. क्रम द्वार ।

नमस्कार मंत्रमां अरिहंत, सिद्ध, आचार्य वगेरे क्रम राखवामां आव्यो छे तेनो विचार आ क्रम द्वारमां करवामां आव्यो छे ।

श०—आ क्रम पूर्वानुपूर्वीथी नथी, तेम पश्चानुपूर्वीथी पण नथी, केमके पहेलामां (पूर्वानुपूर्वी क्रमथी) सिद्ध आवे बीजामां (पश्चानुपूर्वीक्रमथी) साधु वगेरे आवे। (१३४)

वि०—क्रम बे प्रकारनो होय छे। १ पूर्वानुपूर्वी अने २ पश्चानुपूर्वी । अनानुपूर्वी ए क्रम नथी, कारण के ते आडो अवळो होय छे । नमस्कारमां अरिहंत आदिनो क्रम पूर्वानुपूर्वी नथी, केमके सिद्धो एकांते कृतकृत्य होवाथी अरिहंत करतां प्रधान छे । प्रधाननुं श्रेष्ठपणुं होवाथी पूर्वमां कहेवा जोईए ।

अरिहंतुवएसेण सिद्धा नज्जंति तेण अरिहाई ।
नवि कोई परिसाए पणमित्ता पणमई रण्णो ॥ १३५ ॥ १०२१ ॥
इत्थ य पओअणमिण कम्मक्खओ मंगलागमो चेव ।
इहलोअ पारलोइअ दुविहफल तत्थ दिट्ठंता ॥ १३६ ॥ १०२२ ॥

ए ज प्रमाणे आ पश्चानुपूर्वी क्रम पण नथी। जो एम होत तो साधुने प्रथम कह्या होत पण साधुने तो अप्रधानपणे बधानी अंते कह्या छे । साधुने प्रथम कहीने छेवटे सिद्धोनु नाम होत तो ते क्रम पश्चानुपूर्वी बनत । १३४, (१०२०)

(उपर्युक्त शकाना समाधानरूपे पूर्वानुपूर्वी क्रमनु प्रतिपादन करता कहे छे—)

शा०—अरिहतना उपदेशथी सिद्धोनु ज्ञान थाय छे, तेथी अरिहतने आदिमा कह्या छे । कोई पण मनुष्य प्रथम पर्षदाने नमस्कार करीने राजाने नमस्कार करतो नथी । (१३५)

वि०—अरिहतना उपदेशथी–आगमथी सिद्धोनु ज्ञान थाय छे, कारण के सिद्धो प्रत्यक्ष आदि विषयथी पर छे तेथी अरिहतपूर्वकनो क्रम पूर्वानुपूर्वी छे । आथी अरिहतो ज बधु नजीक छे । अल्प समयनु ज अंतर होवाथी कृतकृत्यपणु ए तो प्राय सरखु ज गणाय ।

प्र०—अरिहत वडे सिद्धो जणाय छे एम मानवामा आवे तो अरिहतो प्रधान थवाथी तेओ सिद्धोने पण नमस्कार्य छे एवो अर्थ थाय ।

उ०—जो एम मानवामा आवे तो अरिहतो पण आचार्यना उपदेशथी जणाय छे, तेथी आचार्यो प्रधान बनी जशे ।

वस्तुत अरिहत अने सिद्ध ए सरखा बळवाळा छे तेथी एमनो विचार करवो श्रेयस्कर छे । तेओ बनो परमनायकरूपे छे । आचार्यो तो तेमनी सभाना सदस्यो जेवा छे । कोई पण मनुष्य सभाने नमस्कार कर्या पछी राजाने नमस्कार करतो नथी । आथी ज आ क्रम बराबर छे। १३५, (१०२१)

१०–११. प्रयोजन द्वार अने फळ द्वार ।

जे कारणने लईने प्रयोग कराय ते नमस्कारमंत्रनु मोक्ष प्रयोजन छे । तेनो विचार आ प्रयोजन द्वारमा कराय छे अने क्रिया कर्या पछी जे स्वर्ग वगेरे मळे ते नमस्कारनु फळ छे। तेनो आ फळ द्वारमा विचार करायो छे ।

शा०—नमस्कार करवामा कर्मनो क्षय अने मगळनु आगमन ए प्रयोजन छे। तेमज लोक सबधी अने परलोकसबधी एम बे प्रकारनु फळ छे। तेना दृष्टान्तो नीचे प्रमाणे छे। (१३६)

वि०—नमस्कार करवाना समये जलदीथी ज्ञानावरणीय आदि कर्मानो क्षय थाय छे ए नमस्कारनु प्रयोजन छे । भावथी नमस्कार कर्या विना अनत कर्मपुद्गलोनो नाश थतो नथी। वळी, नमस्कार करवाना समये मगळनी प्राप्ति थाय छे । कालातरे जे मळे ते आलोक अने परलोक सबधी फळो कहेवाय छे । १३६, (१०२२)

इहलोइ अत्थकामा[1] [2]आरुग्गं [3]अभिरई [4]अ निप्फत्ती[5]।
सिद्धी अ[6] सग्ग[7] सकुलप्पच्चयाई[8] अ परलोए ॥ १३७ ॥ १०२३ ॥
इहलोगम्मि तिदंडी[1] सादिव्वं[2] माउलिंगवण[3]मेव।
परलोइ चंडपिंगल[4] हुंडिअजक्खो[5] अ दिट्ठंता ॥ १३८ ॥ १०२४ ॥

(फळ विशे जणावे छे—)

श०—आ लोकमां अर्थ, काम, आरोग्य अने अभिरतिनी प्राप्ति थाय छे। अने परलोकमां सिद्धि, स्वर्ग अने उत्तम कुळनी प्राप्ति छे। (१३७)

वि०—अर्थ अने कामनी प्राप्ति थाय छे एटले ए शुभ विपाकवाळा बने छे अने आ लोकमां अर्थ वगेरेथी अनुकूळ आनंद मळे छे तेने 'अभिरति' कहे छे। शुभ पुण्यनुं कारण होवाथी परलोकमां पण तेनी प्राप्ति थाय छे। वळी सिद्ध, स्वर्ग अने उच्चकुळपणुं ए परलोक संबंधी फळो मळे छे।

अहीं सिद्धि प्रथम दर्शावी छे, केमके मुख्य फळने उद्देशीने उपाय कहेवामां आव्यो छे। वळी, विरल मनुष्यो ज एक भवमां सिद्धिने प्राप्त करे छे। जे एक भवमां सिद्धि मेळवी शकता नथी एवा अविराधकोने स्वर्ग अने सुकुळनी प्राप्ति थाय छे। ३७, (१०२३)

(अंते उदाहरणो बतावे छे—)

श०—आ लोकमां त्रिदंडी, दिव्य अने मातुलिंग (बीजोरां) वननां दृष्टांतो छे अने परलोकनां दृष्टांतो चंडपिंगल अने हुंडिक यक्षनां छे। (१३८)

(१) त्रिदंडी।

नमस्कार मंत्र धन पण आपे छे तो ते कयी रीते ए विशे त्रिदंडीनुं उदाहरण कहे छे—

"एक श्रावकनो पुत्र हतो। ते कोई प्रकारनो धर्म करतो नहीं। तेनो बाप मरी गयो अने ते व्यवहारमां पाछो पडवाथी आमतेम भम्या करतो हतो।

कोई वेळा तेना घरनी पासे एक संन्यासी आव्यो। तेनी साथे तेने (श्रावकपुत्रने) मैत्री बंधाई। एक दिवसे संन्यासीए तेने कह्युंः 'जो तुं अखंडित अने मालिक विनानुं कोई मूडदुं लई आवे तो तने धनवान् बनावी दऊं।'

शोध करतां श्रावकपुत्र मूडदुं लई आव्यो अने संन्यासीने वात करी। ते स्मशानमां लई गयो। कारण के, तेनी विधि त्यां ज थई शके।

ते श्रावकपुत्रने तेना पिताए नमस्कारमंत्र शीखवाड्यो हतो, अने तेनुं फळ जणावतां कह्युं हतुं के, ज्यारे तने कोईनी बीक लागे त्यारे आ मंत्र गणजे, कारण के, आ विद्या छे।

संन्यासीए ते श्रावणपुत्रने मूडदा पासे बेसाड्यो अने ते मूडदाना हाथमां तरवार आपी। पछी संन्यासी विद्यानो जाप करवा लाग्यो। वेतालथी अधिष्ठित ते मूडदुं ऊभुं थवा लाग्युं। आथी ते श्रावकपुत्र भय पाम्यो अने हृदयमां नमस्कारमंत्रनो जाप करवा लाग्यो। नमस्कारना

प्रभावथी ते वेताल नीचे पड्यो। सन्यासीए फरीथी जाप करवा माड्यो अने वेताल फरी ऊभो थयो। त्यारे पण ते श्रावकपुत्र नमस्कारमत्रनो सारी रीते जाप करवा लाग्यो। आथी ते वेताल फरीथी नीचे पटकाई पड्यो। सन्यासीए ते श्रावकपुत्रने पूछ्यु के, 'तु कई मत्र–तत्र जाणे छे?' श्रावकपुत्रे ना कही। फरीथी ते सन्यासी विद्यानो जाप करवा लाग्यो अने त्रीजीवार ते वेताल ऊभो थयो अने नीचे गबडी पड्यो। सन्यासीए फरी तेने पूछ्यु। ते श्रावकपुत्र वारवार नमस्कार-मत्रनो जाप करवा लाग्यो।

आ कारणे ते वेताल–व्यतरदेव कोपे भरायो अने तेणे तरवार लईने ते त्रिदडीना बे कटका करी नाख्या। ते सन्यासी सुवर्णपुरुष बनी गयो। तेना अगे अगना जूदा जूदा भाग करीने ते श्रावकपुत्र प्रत्येक रात्रिए सोनु लई जवा लाग्यो, आथी ते श्रीमत बनी गयो। नमस्कारमत्रनु तेने फळ मळ्यु।

जो नमस्कार मत्र तेने आवडतो न होत तो वेताल तेने मारी नाखत अने ते सुवर्णपुरुष बनी जात।"

नमस्कारमत्र आ रीते धन आपे छे।

(२) श्राविका।

नमस्कारमत्र काम–इच्छाओने पण पार पाडे छे ते कयी रीते तेनु दृष्टात कहे छे—

"कोई एक श्राविकानो पति मिथ्यादृष्टि हतो। ते बीजी पत्नी लाववानी पेरवीमा हतो। तेने आ पत्नी होवाथी बीजी मळी शकती नहीं। त्यारे तेने मारी नाखवानो तेणे उपाय विचार्यो।

एक दिवसे ते एक काळो साप घडामा नाखी लाव्यो अने ते घडो घरमा छुपावीने मूक्यो। जम्या पछी पतिए पत्नीने कह्यु 'पेला घडामा फूल मूक्या छे ते लई आव।'

ते ओरडामा गई अने अधारु होवाथी नमस्कारमत्रनो जाप करवा लागी। जाप करता करता ते एवु पण विचारती हती के, 'जो मने कोई खाई जाय तो मरता मरताये हु नमस्कार-मत्रनु स्मरण छोडु नहीं।

तेणे घडामा हाथ नाख्यो। देवीए घडामाथी साप लई लीधो हतो अने तेने बदले फूलनी माळा तेमा मूकी हती, ते तेणे लीधी। ते तेना पतिने आपी।

पति तो आकुळव्याकुळ बनीने बीजो ज विचार करवा लाग्यो। तेणे पत्नीने पूछ्यु अने जईने जूए छे तो घडो सुगधथी महेकतो हतो। एमा कोई साप नहोतो। ते समजी गयो अने पत्नीना पगे पड्यो। तेणे बधी हकीकत जणावी अने तेनी क्षमा मागी। पछीथी तो ते ज घरनी मालिक बनी।"

नमस्कारमत्रथी आ रीते कामना फळे छे।

(३) बीजोरु।

नमस्कारमत्रथी आरोग्य अने अभिरति मळे छे ते कयी रीते ए विशे दृष्टात कहे छे—

"एक नगरमा नदीना काठे शौच करवा गयेला पुरुषे नदीमा तरी आवतु बीजोरु जोयु। ते लईने तेणे राजाने भेट कर्यु, राजाए रसोइयाने आप्यु। जमती वेळाये ते राजाने पीरसवामा

आव्युं। प्रमाणमां मोटुं अने वर्ण तेमज गंधमां विशिष्ट एवुं वीजोरु खाईने राजा ते आपनार माणस उपर प्रसन्न थयो। तेने ईनाम आपवामां आव्युं।

राजाए माणसोने आज्ञा करी के, 'नदीना किनारे किनारे जतां ज्यांथी आ वीजोरु वहेतुं आव्युं छे ते स्थळनी भाळ मेळवो।' पुरुषो भातु बांधीने गया। आगळ चालतां चालतां एक उद्यान आव्युं। त्यांना कोई पुरुषे चेतवणी आपी के, 'जे आ उद्याननुं फळ तोडे छे ते मरी जाय छे।' पुरुषोए आ हकीकत राजाने कही।

राजाए कह्युंः 'वीजोरु तो अवश्य लाववुं ज जोईए। वारा फरती एकेक माणसने मोकलो' एवो हुकम राजाए राजपुरुषोने कर्यो।

ए रीते एकेक माणसने मोकलवामां आवे छे ने वीजोरु आव्या करे छे। एटले के, एक माणस उद्यानमां प्रवेश करे अने वीजोरु तोडीने बहार फेंके पछी ते मरी जाय। आ रीते वीजा वीजा माणसोने मोकलवामां आवता, ते वीजोरु लावता अने मरी जता। ए प्रमाणे समय वीततां हवे श्रावकोनो वारो आव्यो।

एक श्रावक गयो। ते विचारवा लाग्यो के 'श्रमणचारित्रनी विराधना ना थाओ' एम नैषेधिकी–निसीहि करीने नमस्कारमंत्रनो जाप करतो उद्यानमां पेठो। उद्यानमां रहेला व्यंतरने आथी चिंता थई, ने विचार करतां तेने ज्ञान थयुं। श्रावकने ते वंदन करवा लाग्यो अने कह्युंः 'हुं रोज एकेक वीजोरु घेर पहोंचाडीश।'

आ वातनी राजाने खबर आपवामां आवी। श्रावकनुं सन्मान करवामां आव्युं। तेनी दिवसे दिवसे उन्नति थवा लागी।"

आ रीते नमस्कारमंत्रथी अभिरति अने भोग प्राप्त थाय छे। ते श्रावक बची गयो, एनाथी वीजुं आरोग्य शुं होई शके? अने राजा संतुष्ट थयो।

(४) चंडपिंगल।

नमस्कारमंत्रथी परलोकनुं फळ पण मळे छे ते कयी रीते ए विशे दृष्टांत कहे छे—

"वसंतपुरमां जितशत्रु नामे राजा हतो। त्यां एक गणिका श्राविका हती। ते गणिका चंडपिंगल नामना चोरनी साथे रहेती हती।

कोई वेळा ते चोर राजाना महेलमांथी मूल्यवान हार चोरी लाव्यो। वीकना मार्या ते हार छुपावी देवामां आव्यो।

एक समये उद्यानयात्राना प्रसंगे बधी गणिकाओ अलंकार सजीने उद्यानमां गई। बधी गणिकाओमां 'हुं वधारे सारी लागुं' एम विचारीने तेणे ते हार पहेर्यो हतो। जे राणीनो आ हार हतो तेनी दासीओ ए हारने ओळखती हती। आ हकीकत राजाने कहेवामां आवी।

ते गणिका कोनी साथे रहे छे तेनी बातमी राजाए मेळवी। चडपिंगळने पकडवामा आव्यो अने तेने शूळीए चडाववानु फरमान करवामा आव्यु।

गणिकाए विचार्युं के, मारा अपराधथी तेने फासी देवाय छे तेथी ते तेने नमस्कारमंत्र आपवा लागी अने कह्यु के, 'तु एवु नियाणु कर जेथी आ राजाने त्या पुत्ररूपे उत्पन्न थाय।'

नमस्कारमंत्रने गणता तेणे एवु नियाणु कर्युं। ते पटराणीना पेटे जन्म्यो। बाळक थयो। ते श्राविका गणिका तेने रमाडनारी धाई बनी।

कोई वखते रमाडता रमाडता ते गणिकाए कह्यु 'चडपिंगल, रडीश ना।' आ हकीकतथी तेने ज्ञान थयु।

राजा मरण पाम्यो अने ते बाळक राजा थयो। लांबो काळ वीतता ते राजा अने गणिका बनेए दीक्षा लीधी। ए रीते ऊचा कुळमा जन्म पामीने मोक्षनी प्राप्ति करी।"

आ रीते नमस्कारमंत्र परलोकनु फळ पण आपे छे।

(५) हुंडिकयक्ष।

परलोकना फळ विशे बीजु दृष्टात कहे छे—

"मथुरा नगरीमा जिनदत्त नामे श्रावक रहेतो हतो। त्या ज हुडिक नामे चोर पण वसतो हतो। ते रोज नगरमा चोरीओ करतो हतो। एक वेळा ते पकडाई गयो अने तेने फासीनी सजा करवामा आवी।

फासीए जता पहेला तेना कोण कोण मददगारो छे तेनी बातमी मेळववा राजाना अनुचरो तेनी पाछळ फरी रह्या हता। ते चोर नजीकमा ऊभेला कोई श्रावकने कहेवा लाग्यो 'तु दयाळु छे, हु तरस्यो छु मने पाणी आप। तरसथी मारो जीव जाय छे।'

श्रावके कह्यु 'आ नमस्कारमंत्र आपु छु, तेनो जाप कर त्या सुधीमा पाणी लावी आपु। जो आ गणवानु भूलीश तो पाणी लाव्यो हईश तोये आपीश नहीं।' आवी लालचथी ते नमस्कार-मंत्र गणवा लाग्यो। श्रावक पाणी लईने आव्यो। 'हवे तने पाउ छु' एम कहेता ते चोर नमस्कारनो जोरथी उच्चार करतो मरण पाम्यो।

ते मरीने यक्ष थयो। राजाना अनुचरोए ते श्रावकने पकडी लीधो। तु चोरने भोजन आपनारो छे माटे तने पकड्यो छे, एम कहीने आ श्रावकनी वात राजाने निवेदन करी। राजाए हुकम कर्यो के, 'तेने पण फासीए चडावो।'

ते श्रावकने जेवो मारवामा आवे छे के तरत यक्षे अवधिज्ञानना उपयोगथी जाणी लीधु। श्रावकने ते पोताना आत्मा बराबर लेखे छे, तेथी ते यक्षे कोई पर्वतनी शिला हाथमा उपाडीने राजपुरुषोने कह्यु 'आ उत्तम श्रावकने पण तमे ओळखता नथी? तेनी माफी मागो, नहितर तमारा चूरा थई जशे।'

राजाए पूर्वदिशामा ते यक्षनु मदिर बाध्यु।"

नमस्कारमंत्रथी आ रीते परलोकनु फळ पण मळे छे। (३८, (१०२८)

(निर्युक्ति-परिचय)

आ 'नमस्कार–निर्युक्ति' श्रीआगमोदयसमिति तरफथी सं. १९७२ मां प्रगट थयेल 'श्रीमदावश्यकसूत्र' ना पृष्ठः ३७७ थी ४५४ मां श्रीमद् हरिभद्रसूरिए रचेली शिष्यहिता टीका साथे प्रसिद्ध थई छे। तेमांनी मूळ गाथाओ ८८७ थी १०२४ एटले १३८ गाथाओ अहीं आपी छे अने तेनो भाववाही अनुवाद खास करीने श्रीहरिभद्रसूरिनी टीका अने श्रीविशेपावश्यक–भाष्यना आधारे करीने अहीं आपवामां आव्यो छे।

'आवश्यकसूत्र' वगेरे उपर निर्युक्तिओना रचयिता श्रीभद्रबाहुस्वामीनुं नाम सुप्रसिद्ध छे; परंतु जैन ग्रथोमांथी भद्रबाहुस्वामी नामना बे आचार्योनो परिचय मळे छे। एक श्रीभद्रबाहुस्वामी, जेओ चतुर्दश पूर्वधारी हता, अने वीरनिर्वाण संवत् १७० मां स्वर्गस्थ थया हता। ज्यारे बीजा भद्रबाहुस्वामी प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् वराहमिहिरना भाई हता अने नैमित्तिक तरीके ओळखाता हता ते छठ्ठी शताब्दीमां विद्यमान हता।

आ बंने भद्रबाहुस्वामीओ पैकी निर्युक्तिना रचयिता कोण ए विशे विद्वानोमां भारे मतभेद छे। एक वर्ग एम कहे छे के, छेदसूत्रो अने निर्युक्तिओनी रचना करनार प्रथम भद्रबाहुस्वामी चौद पूर्वधर हता; त्यारे बीजो वर्ग एम कहे छे के, छेद सूत्रकार अने निर्युक्तिकार भद्रबाहुस्वामी एक नथी।

बंने वर्गो छेदसूत्रकार भद्रबाहुस्वामी चतुर्दश पूर्वधर होवा विशे एकमत छे पण बीजो वर्ग बीजा भद्रबाहुस्वामी, जेओ नैमित्तिक हता, तेमने ज निर्युक्तिकार तरीके ओळखावे छे।

ए मतभेदमां ऊंडा न ऊतरीए तोये आ 'नमस्कार–निर्युक्ति'नी रचना करनार प्रतिभाशाळी अने श्रुतसाहित्यना रहस्यवेत्ता छे एमां शंका नथी।

तेमणे अगियार द्वारोथी नमस्कार सूत्रनी जे महत्ता बतावी छे ए ज एमनी प्रतिभानो परिचय करावे छे। नमस्कार विशे तेमणे भाग्ये ज कोई विषय उपर विचार करवानुं बाकी मूक्युं होय एवुं एमनुं सर्वांगीण वक्तव्य अने वेधक दृष्टि छे।

आ अनुवादमां मूळ गाथाओमां निर्दिष्ट केटलीक महत्त्वनी कथाओ आपी छे, ज्यारे बीजी कथाओने विस्तारभये छोडी दीधी छे। तेनो परिचय टीकामांथी मळे एम छे।



श्रीपुष्पदन्त–भूतबलिप्रणीतस्य श्रीवीरसेनाचार्यरचितधवलाटीकया समन्वितस्य

षट्खण्डागमस्य संदर्भः ।

[छक्खंडागमसदब्भो]

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

कधमिदं सुत्तं मंगल णिमित्त हेउ परिमाण-णाम-कत्ताराणं सकारणाणं परूवयं ? ण, तालपलंव-सुत्तं व देसामासियत्तादो ।

विवेचन ।

अरिहंतोने नमस्कार थाओ, सिद्धोने नमस्कार थाओ, आचार्योने नमस्कार थाओ, उपाध्यायोने नमस्कार थाओ अने लोकमां रहेला सर्व साधुओने नमस्कार थाओ ।

विशेषार्थ—आ ज मंगलसूत्र 'नमोकारमंत्र' ना नामे प्रसिद्ध छे । एना अंतिम भागमां जे 'लोए' एटले 'लोकमां' अने 'सव्व' अर्थात् 'सर्व' पदो आवेलां छे, तेनो संबंध **णमो अरिहंताणं** आदि प्रत्येक नमस्कारपदनी साथे करी लेवो जोईए। एनो खुलासो आचार्ये स्वयं आगळ उपर कर्यो छे।

शंका—आ सूत्र मंगल, निमित्त, हेतु, परिमाण, नाम अने कर्तानुं सकारण प्ररूपण करे छे ए क्यी रीते संभवित छे ? शंकाकारनो ए अभिप्राय छे के, आ सूत्रमां ज्यारे केवळ मंगळ अर्थात् इष्ट देवताने नमस्कार करवामां आव्यो छे त्यारे तेनाथी निमित्त आदि बीजा पांच अधिकारोनुं स्पष्टीकरण कई रीते संभवे ?

समाधान—आ मंगळसूत्र 'तालप्रलम्ब' सूत्रनी समान देशामर्षक होवाथी मंगल आदि छये अधिकारोनी सकारण प्ररूपणा करे छे, आथी उपर्युक्त शंका ठीक लागती नथी ।

विशेषार्थ—जे सूत्र अधिकृत विषयोना एकदेश कथनद्वारा समस्त विषयोनी सूचना करे तेने 'देशामर्षक सूत्र' कहे छे, आथी 'तालप्रलंब सूत्र'नी समान आ मंगलसूत्र पण देशामर्षक छे । 'कल्पसूत्रना' 'कल्प्याकल्प्य' नामक प्रथम उद्देशना प्रथम सूत्रमां 'तालप्रलंब' पद आवे छे, जेनो भाव ए छे के, तालवृक्षने प्रथम मानी लईने जेटली पण वनस्पतिनी जातिओ छे, तेनाथी अभिन्न (तोड्या विना अथवा कापेला) अने अपक्व अथवा काचा अर्थात् सचित्त मूल, पत्र, फळ, पुष्प वगेरे लेवा ए साधुने योग्य नथी। आ सूत्रमां तो केवल 'तालप्रलंब' पद ज आपेलुं छे, तेम छतां तेने उपलक्षण मानीने समस्त वृक्षजाति अने तेमना पत्र पुष्प वगेरेने ग्रहण करवामां आव्यां छे । ए ज प्रकारे आ नमस्कारात्मक सूत्र पण देशामर्षक होवाथी मंगलनी साथे अधिकृत निमित्त, हेतु, परिमाण, नाम अने कर्तानो पण बोध करावे छे ।

तत्थ धाउ-णिक्खेव-णय-एयत्थ-णिरुत्ति-अणियोग-द्दारेहिं मंगलं परूविज्जदि। तत्थ धाउ 'भू सत्तायां' इच्चेवमाइओ सयलत्थ-वत्थूणं सद्दाणं मूल-कारणभूदो। तत्थ 'मगि' इदि अणेण धाउणा णिप्पण्णो मंगलसद्दो। × × × × ×

शब्दात् पदप्रसिद्धिः, पदसिद्धेरर्थनिर्णयो भवति।
अर्थात् तत्त्वज्ञानं, तत्त्वज्ञानात् परं श्रेयः ॥ २ ॥ इति।

णिच्छये णिण्णए खिवदि त्ति णिक्खेवो। सो वि छव्विहो, णाम-ट्ठवणा-दव्व-खेत्त-काल-भावमंगलमिदि। × × × × ×

मङ्गलस्यैकार्थ उच्यते, मङ्गलं पुण्यं पूतं पवित्रं प्रशस्तं शिवं शुभं कल्याणं भद्रं सौख्यमित्येवमादीनि मङ्गलपर्यायवचनानि। एकार्थप्ररूपणं किमिति चेत्, यतो मङ्गलार्थोऽनेकशब्दाभिधेयस्ततोऽनेकेषु शास्त्रेषु नैकाभिधानैः मङ्गलार्थः प्रयुक्तश्चिरन्तनाचार्यैः। सोऽव्यामोहेन शिष्यैः सुखेनावगम्यत इत्येकार्थ उच्यते 'यद्येकशब्देन न जानाति ततोऽन्येनापि शब्देन ज्ञापयितव्यः' इति वचनाद् वा।

मङ्गलस्य निरुक्तिरुच्यते, मलं गालयति विनाशयति दहति हन्ति विशोधयति विध्वंसयतीति मङ्गलम्। तन्मलं द्विविधं, द्रव्य-भावमलभेदात्। द्रव्यमलं द्विविधम्, बाह्यमाभ्यन्तरं च। तत्र स्वेद-

---

ते उक्त मंगल आदि छ अधिकारोमांथी पहेलां धातु, निक्षेप, नय, एकार्थ, निरुक्ति अने अनुयोग द्वारा 'मंगल'नी प्ररूपणा करवामां आवे छे। तेमां 'भू' धातु सत्ता अर्थमां छे, तेने प्रथम मानी लईने समस्त अर्थवाचक शब्दोनुं जे मूळ कारण छे तेने 'धातु' कहे छे। तेमांथी 'मगि' धातुथी मंगल शब्द निष्पन्न थयेलो छे। अर्थात् 'मगि' धातुमां अलच् प्रत्यय जोडी देवाथी 'मंगल' शब्द बने छे। × × × × × × ×

शब्दथी पदनी सिद्धि थाय छे, पदनी सिद्धिथी तेना अर्थनो निर्णय थाय छे; अर्थनिर्णयथी तत्त्वज्ञान अर्थात् हेय-उपादेय विवेकनी प्राप्ति थाय छे, अने तत्त्वज्ञानथी परम कल्याण थाय छे। २।

जे कोई एक निश्चय अथवा निर्णयमां क्षेपण करे अर्थात् अनिर्णीत वस्तुनो तेना नामादिक द्वारा निर्णय करावे, तेने 'निक्षेप' कहे छे। ते नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावनाना भेदोथी छ प्रकारे छे, अने एना संबंधथी मंगल पण छ प्रकारनुं थाय छे। १ नाम मंगल, २ स्थापना मंगल, ३ द्रव्य मंगल, ४ क्षेत्र मंगल, ५ काल मंगल अने ६ भाव मंगल। × ×

हवे मंगळनां एकार्थवाची नामो कहे छे। मंगल, पुण्य, पूत, पवित्र, प्रशस्त, शिव, शुभ, कल्याण, भद्र अने सौख्य इत्यादि मंगलनां पर्यायवाचक नामो छे।

शंका—अहीं मंगलना एकार्थवाचक अनेक नामोनुं प्ररूपण शा माटे करवामां आव्युं छे?

समाधान—केमके, मंगलरूप अर्थ अनेक शब्दनो वाच्य छे, अर्थात् अनेक पर्यायवाची नामो द्वारा मंगलरूप अर्थनुं प्रतिपादन करवामां आवे छे, एटला माटे प्राचीन आचार्योए अनेक शास्त्रोमां अर्थात् भिन्न भिन्न शब्दो द्वारा मंगलरूप अर्थनो प्रयोग कर्यो छे। आथी शिष्योने मतिभ्रम विना मंगलना पर्यायवाची ते बधां नामोनुं सरळतापूर्वक ज्ञान थई जाय, एटला माटे अहीं मंगलनां एकार्थवाची नामो कह्यां छे।

हवे मंगलनी निरुक्ति (व्युत्पत्तिजन्य अर्थ) कहे छे। जे मळनुं गालन करे, मलनो विनाश

रजोमलादि बाह्यम् । घन-कठिन - जीव - प्रदेश - निबद्ध - प्रकृति - स्थित्यनुभाग - प्रदेश - विभक्त - ज्ञानावरणाद्यष्टविधकर्माभ्यन्तरद्रव्यमलम् । अज्ञानदर्शनादिपरिणामो भावमलम् ।

अथवा, अर्थाभिधान-प्रत्ययभेदात् त्रिविध मलम् । उक्तमर्थलम् । अभिधानमल तद्वाचक शब्द । तयोरुत्पन्नबुद्धि प्रत्ययमलम् । अथवा चतुर्विध मळ नाम - स्थापना द्रव्य - भावमलभेदात् । अनेकविध वा । तन्मल गालयति विनाशति विध्वसयतीति मङ्गलम् । अथवा मङ्ग सुख तल्लाति आदत्त इति वा मङ्गलम् । उक्त च—

मङ्गशब्दोऽयमुद्दिष्ट , पुण्यार्थस्याभिधायक ।
तल्लातीत्युच्यते सद्भिर्मङ्गल मङ्गलार्थिभि ॥ १६ ॥
पाप मलमिति प्रोक्तमुपचारसमाश्रयात् ।
तद्धि गालयतीत्युक्त, मङ्गल पण्डितैर्जनै ॥ १७ ॥

अथवा, मङ्गति गच्छति कर्ता कार्यसिद्धिमनेनास्मिन् वेति मङ्गलम् । मङ्गलशब्दस्यार्थविपयनिश्चयोत्पादनार्थं निरुक्तिरुक्ता । मङ्गलस्यानुयोग उच्यते—

करे, घात करे, नाश करे, शोधन करे, विध्वस करे तेने 'मगल' कहे छे । द्रव्यमल अने भावमलना भेदथी ते मल बे प्रकारनो छे । द्रव्यमल पण बे प्रकारनो छे । बाह्य द्रव्यमल अने आभ्यतर द्रव्यमल । आमाथी परसेवो, धूळ अने मेल वगेरे बाह्य द्रव्यमल छे । सान्द्र अने कठण स्वरूपे जीवना प्रदेशोनी साथे बधायेला प्रकृति, स्थिति, अनुभाग अने प्रदेश—आ भेदोमा विभक्त एवा ज्ञानावरण आदि आठ कर्मो आभ्यतर द्रव्यमल छे । अज्ञान अने अदर्शन वगेरे परिणामोने 'भावमल' कहे छे ।

अथवा अर्थ, अभिधान (शब्द) अने प्रत्यय(ज्ञान)ना भेदथी मळ त्रण प्रकारनो होय छे । अर्थमल विशे तो हमणा पहेला ज कहेवायु छे, अर्थात् जे पहेला बाह्य द्रव्यमल, आभ्यतर द्रव्यमल अने भावमल कहेवामा आव्या छे तेने ज अर्थमल समजवो जोईए । मलना वाचक शब्दोने अभिधान मल कहे छे, अथवा अर्थमल अने अभिधानमलमा उत्पन्न थयेली बुद्धिने प्रत्ययमल कहे छे ।

अथवा नाममल, स्थापनामल, द्रव्यमल अने भावमल ए भेदोथी मल चार प्रकारनो छे । अथवा आ ज प्रकारे विवक्षाभेदथी मल अनेक प्रकारनो छे । आ प्रकारे ऊपर कहेवामा आवेला (१) मलनु गालन करे, विनाश करे अथवा ध्वस करे तेने 'मगल' कहे छे ।

(२) अथवा मग शब्द सुखवाची छे, तेने जे लावे, प्राप्त करे तेने 'मगळ' कहे छे कह्यु पण छे के—

(३) आ मगशब्द पुण्यरूप अर्थनु प्रतिपादन करनारो मानवामा आव्यो छे । ए पुण्यने जे लावे छे तेने मगलना इच्छुक सत्पुरुषो 'मगल' कहे छे । १६ ।

(४) उपचारथी पापने पण मळ कह्यो छे, एटला माटे जे एनु गालन अर्थात् नाश करे छे तेने पण पडितपुरुषो 'मगल' कहे छे । १७ ।

(५) अथवा कर्ता अर्थात् कोई उद्दिष्ट कार्यने करनारो, जेनी द्वारा अथवा जे करता कार्यनी सिद्धिने प्राप्त थाय छे तेने पण 'मगल' कहे छे । आ ज रीते मगलशब्दनो अर्थविषयक निश्चय

किं कस्स केण कत्थ व केवचिरं कदिविधो य भावो त्ति ।
छहि अणिओग-द्दारेहि सव्वे भावाणुगंतव्वा ॥ १८ ॥ इदि वयणादो ।

किं मङ्गलम्? जीवो मङ्गलम् । न सर्वजीवानां मङ्गलप्राप्तिः द्रव्यार्थिकनयापेक्षया मङ्गलपर्यायपरिणतजीवस्य पर्यायार्थिकनयापेक्षया केवलज्ञानादिपर्यायाणां च मङ्गलत्वाभ्युपगमात् ।

कस्य मङ्गलम्? द्रव्यार्थिकनयार्पणया नित्यतामादधानस्य पर्यायार्थिकनयार्पणयोत्पादविगमात्मकस्य । देवदत्तात् कम्बलस्येव न जीवान्मङ्गलपर्यायस्य भेदः सुवर्णस्याङ्गुलीयकमित्यत्राभेदेऽपि षष्ठ्युपलम्भतोऽनेकान्तात् ।

केन मङ्गलम्? औदयिकादिभावैः ।

उत्पन्न करवा माटे मंगल शब्दनी निरुक्ति कहेवामां आवी छे ।

हवे मंगलनो अनुयोग-व्याख्या कहे छे; अर्थात् अनुयोगद्वारा मंगलनुं निरूपण करे छे ।

विशेषार्थ—(१) जिनेन्द्र कथित आगमनो पूर्वापर संदर्भ मेळवतां अनुकूळ व्याख्यान करवुं तेने 'अनुयोग' कहे छे । अथवा, (२) सूत्रनो तेना वाच्यरूप विषयनी साथे संबंध जोडवो तेने 'अनुयोग' कहे छे । अथवा, (३) एक ज भगवत्प्रोक्त सूत्रना अनन्त अर्थो थाय छे, एटला माटे सूत्रनी 'अणु' संज्ञा छे, ए सूक्ष्मरूप सूत्रना अर्थरूप विस्तारनी साथेनो संबंध प्रतिपादन करवो तेने 'अनुयोग' कहे छे ।

(१) पदार्थ शुं छे? (२) कोनो छे? (३) कोनी द्वारा थाय छे? (४) क्यां आगळ थाय छे, (५) केटला समय सुधी रहे छे? अने (६) केटला प्रकारे छे? आ प्रकारे आ छ अनुयोगद्वारोथी संपूर्ण पदार्थनुं ज्ञान करवुं जोईए । १८.

आ वचनथी अनुयोगद्वारा मंगलनुं निरूपण करवामां आवे छे ।

(पहेलो अनुयोग—)

मंगल शुं छे? जीव ज मंगल छे, परंतु जीवने मंगल कहेवाथी बधा जीवो मंगलरूप नहि थई जाय । केमके, द्रव्यार्थिक नयनी अपेक्षाए मंगल पर्यायथी परिणत जीवने अर्थात् मंगल करता जीवने, अने पर्यायार्थिक नयनी अपेक्षाए केवळज्ञान आदि पर्यायोने मंगल मान्या छे ।

(बीजो अनुयोग—)

मंगल कोने थाय छे? द्रव्यार्थिक नयनी अपेक्षाए नित्यताने धारण करनार अर्थात् सदाकाळ एकस्वरूप रहेनारा अने पर्यायार्थिक नयनी अपेक्षाए उत्पाद अने व्ययस्वरूप जीवने मंगल थाय छे । अहीं जे प्रकारे (कंबल देवदत्तनी होवा छतां) देवदत्तथी कंबलनो भेद छे, ए ज प्रकारे जीवनो मंगलरूप पर्यायथी भेद नथी । केमके, 'आ वींटी सुवर्णनी छे' अहीं अभेदमां वींटीरूप पर्याय सुवर्णथी अभिन्न होवा छतांये जे प्रकारे भेदद्योतक षष्ठी विभक्ति जोवाय छे ए ज प्रकारे **जीवस्य मङ्गलम्** अहीं पण अभेदमां षष्ठी विभक्ति समजवी जोईए । आ रीते संबंध कारकमां अनेकांत समजवो जोईए । अर्थात् क्यांय बे पदार्थोमां भेद होवा छतांये संबंधनी विवक्षाथी षष्ठी कारक होय छे अने क्यांय अभेद होवा छतांये षष्ठी कारकनो प्रयोग थाय छे ।

क मङ्गलम् ? जीवे । कुण्डाद् बदराणामिव न जीवान्मङ्गलपर्यायस्य भेद सारे स्तम्भ इत्यत्राभेदेऽपि सप्तम्युपलम्भतोऽनेकान्तात् ।

कियच्चिर मङ्गलम् ? नानाजीवापेक्षया सर्वोद्यम् । एकजीवापेक्षया अनाद्यपर्यवसित साद्यपर्यवसित सादिसपर्यवसितमिति त्रिविधम् । कथमनाद्यपर्यवसितता मङ्गलस्य ? द्रव्यार्थिकनयार्पणया । तथा च मिथ्यादृष्टयवस्थायामपि मङ्गलत्व जीवस्य प्राप्नोतीति चेन्नैष दोष इष्टत्वात् । न मिथ्याविरति प्रमादाना मङ्गलत्व तेषा जीवत्वाभावात् । जीवो हि मङ्गलम्, स च केवलज्ञानाद्यनन्तधर्मात्मक ।

(त्रीजो अनुयोग—)

क्या कारणथी मगल उत्पन्न थाय छे ? जीवना औदयिक, औपशमिक आदि भावोथी मगल उत्पन्न थाय छे ।

विशेषार्थ—जो के कर्मोना उपशम, क्षय अने क्षयोपशमथी सम्यग्दर्शन वगेरेनी उत्पत्ति थाय छे, एटला माटे तेनाथी मगलनी उत्पत्ति मानवी तो ठीक छे परतु औदयिक भावथी मगलनी उत्पत्ति बनी शकती नथी, एटला माटे अहीं 'औदयिक आदि भावोथी मगल उत्पन्न थाय छे' ए कहेवु कयी रीते सभवित छे ? एनु समाधान आ प्रकारे समजवु जोईए के, बधा औदयिक भावो मगलनी उत्पत्तिमा कारण नथी, तेम छता तीर्थंकर प्रकृतिना उदयथी उत्पन्न थनारो औदयिक भाव मगलनु कारण छे । एटला माटे एनी अपेक्षाए औदयिक भावने पण मगलनी उत्पत्तिना कारणोमा ग्रहण करवामा आवेल छे ।

(चोथो अनुयोग—)

मगल शेमा उत्पन्न थाय छे ? जीवमा मगल उत्पन्न थाय छे । जे प्रकारे कुडामा राखेला बोरोनो कुडाथी भेद छे तेम जीवथी मगलपर्यायनो भेद समजवो न जोईए । केमके, **सारे स्तम्भः** अर्थात् वृक्षना लाकडामा स्तभ छे । अहीं जे रीते अभेदमा पण सप्तमी विभक्तिनी उपलब्धि थाय छे, ए ज प्रकारे **जीवे मङ्गलम्** एमा पण अभेदमा सप्तमी विभक्ति समजवी जोईए । आ रीते ए सिद्ध थयु के, अधिकरण कारकना प्रयोगमा पण अनेकात छे, अर्थात् क्याय भेदमा अधिकरण कारक थाय छे अने क्याय अभेदमा पण अधिकरण कारक होय छे ।

(पाचमो अनुयोग—)

मगल क्या सुधी रहे छे ? विविध जीवोनी अपेक्षाए मगल सर्वदा रहे छे अने एक जीवनी अपेक्षाए अनादिअनत, सादिअनत, सादिसात आ प्रकारे मगलना त्रण भेदो थई जाय छे ।

शका—मगलमा एक जीवनी अपेक्षाए अनादि अनतपणु कयी रीते बने छे, अर्थात् एक जीवनु अनादि कालथी अनतकाल सुधी मगल थाय छे ए कयी रीते सभवित छे ?

समाधान—द्रव्यार्थिक नयनी प्रधानताथी मगलमा अनादि-अनतपणु बनी जाय छे । अर्थात् द्रव्यार्थिक नयनी मुख्यताथी जीव अनादिकालथी अनतकाल सुधी सर्वदा एक स्वभावे अवस्थित छे, अने मगलरूप पर्याय तेनाथी सर्वथा भिन्न नथी । आथी मगलमा पण अनादि अनतपणु बनी जाय छे ।

शका—आ रीते तो मिथ्यादृष्टि अवस्थामा पण जीवने मगलपणानी प्राप्ति थई जशे ?

नावृतावस्थायां मङ्गलीभूतकेवलज्ञानाद्यभावः आव्रियमाणकेवलाद्यभावे तदावरणानुपपत्तेः। जीवलक्षणयोर्ज्ञान-दर्शनयोरभावे लक्षणस्याप्यभावापत्तेश्च। न चैवं तथाऽनुपलम्भात्। न भस्मच्छन्नाग्निना व्यभिचारः ताप-प्रकाशयोस्तत्राप्युपलम्भात्। पर्यायत्वात् केवलादीनां न स्थितिरिति चेन्न, अत्रुट्यज्ज्ञानसंतानापेक्षया तत्स्थैर्यस्य विरोधाभावात्। न छद्मस्थज्ञान-दर्शनयोरल्पत्वादमङ्गलत्वमेकदेशस्य, माङ्गल्याभावे तद्विश्वावयवानामप्यमङ्गलत्वप्राप्तेः। रजोजुषां ज्ञान-दर्शने न मङ्गलीभूतकेवलज्ञान-दर्शनयोरवयवाविति चेन्न। ताभ्यां व्यतिरिक्तयोस्तयोरसत्त्वात्। मत्यादयोऽपि सन्तीति चेन्न, तदवस्थानां मत्यादिव्यपदेशात्। तयोः केवलज्ञान-दर्शनाङ्कुरयोर्मङ्गलत्वे मिथ्यादृष्टिरपि मङ्गलं, तत्रापि

समाधान—ए कंई दोष नथी। केमके, एवो प्रसंग तो अमने इष्ट ज छे, परंतु एम मानी लेवा छतां मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद वगेरेनुं मंगलपणुं सिद्ध थई शकतुं नथी। केमके, तेमां जीवत्व जोवातुं नथी। मंगल तो जीव ज छे, अने ते जीव केवलज्ञान आदि अनंत धर्मात्मक छे।

आवृत अवस्थामां अर्थात् केवलज्ञानावरण आदि कर्मबंधननी दशामां मंगलभूत केवलज्ञान आदिनो अभाव छे, अर्थात् ए अवस्थामां ए सर्वथा जोवाता नथी। जो कोई एवो प्रश्न करे, तो आव्रियमाण अर्थात् जे कर्मो द्वारा आवृत थाय छे एवा केवलज्ञान आदिना अभावमां केवलज्ञान आदिने आवरण करनारां कर्मोनो सद्भाव सिद्ध थई शकशे नहीं। बीजुं, जीवना लक्षणरूप ज्ञान अने दर्शननो अभाव मानतां लक्ष्यरूप जीवना अभावनी पण आपत्ति आवी जाय छे, परंतु एम नथी। केमके, प्रत्यक्ष आदि प्रमाणोथी जीवनी उपलब्धि न थाय एवुं जोवामां आवतुं नथी, परंतु प्रत्यक्ष आदि प्रमाणोथी पण तेनी उपलब्धि थाय ज छे।

अहीं भस्मथी ढंकायेला अग्निनी साथे व्यभिचार दोष पण आवतो नथी। केमके, ताप अने प्रकाशनी त्यां पण उपलब्धि थाय छे।

विशेषार्थ—आवृत अवस्थामां पण केवलज्ञान वगेरे जोवाय छे, ते जीवना गुणो छे। जो आ अवस्थामां तेमनो अभाव मानवामां आवे तो जीवनो पण अभाव मानवो पडशे। आ अनुमानने ध्यानमां राखीने शंकाकारनुं कहेवुं छे के, आ रीते भस्मथी ढंकायेला अग्निथी व्यभिचार थशे। केमके, भस्माच्छादित अग्निमां अग्निरूप द्रव्यनो सद्भाव जोवाय छे, परंतु तेना धर्मरूप ताप अने प्रकाशनो सद्भाव जोवातो नथी। आ रीते हेतु विपक्षमां चाल्यो जाय छे, आथी ते व्यभिचरित थाय छे। आ रीते शंकाकारना भस्मथी ढंकायेला अग्निनी साथे व्यभिचारनो दोष देवो ठीक नथी। केमके, राखथी ढंकायेला अग्निमा पण तेना गुणधर्म ताप अने प्रकाशनी उपलब्धि अनुमान आदि प्रमाणोथी बराबर थाय छे।

शंका—केवलज्ञान वगेरे पर्यायरूप छे, एटला माटे आवृत अवस्थामां तेनो सद्भाव बनी न शके।

समाधान—ए शंका पण ठीक नथी। केमके, कदापि नहि तूटनारी ज्ञानसंताननी अपेक्षाए केवळज्ञाननो सद्भाव मानी लेवामां कोई विरोध आवतो नथी।

छद्मस्थ अर्थात् अल्पज्ञानीओनां ज्ञान अने दर्शन अल्प होवा मात्रथी अमंगल बनी शकतां नथी। केमके, ज्ञान अने दर्शनना एक देशमां मंगलपणाना अभावनो स्वीकार करी लेतां ज्ञान अने दर्शनना संपूर्ण अवयवोने पण अमंगलरूप मानवा पडशे।

तौ स्त इति चेद् भवतु तद्रूपतया मङ्गलम्, न मिथ्यात्वादीनां मङ्गलम्। तत्र मिथ्यादृष्टयः सुगति-भाजः सम्यग्दर्शनमन्तरेण तज्ज्ञानस्य सम्यक्त्वाभावतस्तदभावात्। कथं पुनस्तज्ज्ञान-दर्शनयोर्मङ्गलत्वमिति चेन्न, सम्यग्दृष्टीनामवगताप्तस्वरूपाणां केवलज्ञान दर्शनावयवत्वेनाध्यवसितरजोजुड्ज्ञान-दर्शनानामावरणविविक्तानन्तज्ञान दर्शनशक्तिखचितात्मस्मर्तॄणां वा पापक्षयकारित्वतस्तयोस्तदुपपत्तेः। नोआगमभव्यद्रव्यमङ्गलापेक्षया वा मङ्गलमनाद्यपर्यवसानमिति। रत्नत्रयमुपादायाविनष्टेनैवाप्त-

---

शंका—आवरणथी युक्त जीवोना ज्ञान अने दर्शन मंगलभूत केवलज्ञान अने केवलदर्शनना अवयवो ज नथी थई शकता ?

समाधान—एम कहेवुं ठीक नथी। केमके, केवलज्ञान अने केवलदर्शनथी भिन्न ज्ञान अने दर्शननो सद्भाव जोवातो नथी।

शंका—केवलज्ञान अने केवलदर्शनथी अतिरिक्त मतिज्ञान आदि ज्ञानो अने चक्षुदर्शन वगेरे दर्शनो तो जोवाय छे। तेनो अभाव कयी रीते करी शकाय ?

समाधान—ए ज्ञान अने दर्शन संबंधी अवस्थाओनी मतिज्ञान आदि अने चक्षुदर्शन आदि भिन्न भिन्न संज्ञाओ छे, अर्थात् ज्ञानगुणनी अवस्थाविशेषनुं नाम मति आदि अने दर्शनगुणनी अवस्था-विशेषनुं नाम चक्षुदर्शन आदि छे। यथार्थमां आ बधी अवस्थाओमां रहेनारा ज्ञान अने दर्शन एक ज छे।

शंका—केवलज्ञान अने केवलदर्शनना अंकुररूप छद्मस्थोना ज्ञान अने दर्शनने मंगलरूप मानी लेतां मिथ्यादृष्टि जीव पण मंगल संज्ञाने प्राप्त थाय छे। केमके, मिथ्यादृष्टि जीवमां पण ते अंकुर विद्यमान छे।

समाधान—जो एम होय तो, भले मिथ्यादृष्टि जीवने ज्ञान अने दर्शनरूपे मंगलपणुं प्राप्त थाय, परंतु एटला मात्रथी मिथ्यात्व, अविरति आदिने मंगलपणुं प्राप्त थई न शके, अने तेथी मिथ्यादृष्टि जीव सुगतिने प्राप्त थई शकतो नथी। केमके, सम्यग्दर्शन विना मिथ्यादृष्टिओना ज्ञानमां समीचीनता आवी शकती नथी, अने समीचीनता विना तेने सुगति मळी शकती नथी।

शंका—त्यारे मिथ्यादृष्टिओना ज्ञान अने दर्शनने मंगलपणुं केवी रीते छे ?

समाधान—एवी शंका करवी न जोईए। केमके, आप्तना स्वरूपने जाणनारो, छद्मस्थोना ज्ञान अने दर्शनने केवलज्ञान अने केवलदर्शनना अवयवरूपे निश्चय करनारो अने आवरणरहित अनंतज्ञान अने अनंतदर्शनरूप शक्तिथी युक्त आत्मानुं स्मरण करनारा सम्यग्दृष्टिओना ज्ञान अने दर्शनमां जे प्रकारे पापनुं क्षयकारीपणुं जोवाय छे ए प्रकारे मिथ्यादृष्टिओना ज्ञान अने दर्शनमां पण पापनुं क्षयकारीपणुं जोवाय छे। एटला माटे मिथ्यादृष्टिओना ज्ञान अने दर्शनने पण मंगल मानवामां विरोध नथी, अथवा नोआगम भावि द्रव्य मंगलनी अपेक्षाए मंगल अनादि-अनंत छे।

विशेषार्थ—जे आत्मा वर्तमानमां मंगलपर्यायथी युक्त तो नथी, परंतु भविष्यमां मंगलपर्यायथी युक्त थशे, तेनी शक्तिनी अपेक्षाथी मंगलपणुं अनादि-अनंतरूप बनी जाय छे।

रत्नत्रयने धारण करीने कदापि नष्ट नहि थनारा रत्नत्रय द्वारा ज प्राप्त थयेला सिद्धना स्वरूपनी अपेक्षाए नैगमनयथी मंगल सादि अनंत छे।

सिद्धस्वरूपापेक्षया नैगमनयेन साद्यपर्यवसितं मङ्गलम्। सादिसपर्यवसितं सम्यग्दर्शनापेक्षया जघन्येनान्तर्मुहूर्तकालमुत्कर्षेण षट्षष्टिसागराः देशोनाः।

कतिविधं मङ्गलम्? मङ्गलसामान्यात् तदेकविधम्, मुख्यामुख्यभेदतो द्विविधम्, सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्रभेदात् त्रिविधं मङ्गलम्, धर्मसिद्धसाध्वर्हद्भेदाच्चतुर्विधम्, ज्ञान-दर्शन-त्रिगुप्तिभेदात् पञ्चविधम्। 'णमो जिणाणं' इत्यादिनाऽनेकविधं वा।

अथवा मंगलम्हि छ अहियाराए दंडा वत्तव्वा भवंति। तं जहा, मंगलं मंगलकत्ता मंगलकरणीयं मंगलोवायो मंगलविहाणं मंगलफलमिदि। एदेसिं छण्हं पि अत्थो उच्चदे। मंगलत्थो पुव्वुत्तो। मंगलकत्ता चोद्दसविज्जाट्ठाणपारओ आइरियो। मंगलकरणीयं भव्वजणो। मंगलोवायो तिरयणसाहणाणि। मंगलविहाणं एयविहादि पुव्वुत्तं। मंगलफलं देहिंतो कय-अब्भुदयणिस्सेयससुहाइत्तं। मंगलं सुत्तस्स आदीए मज्झे अवसाणे च वत्तव्वं। उत्तं च—

आदीवसाण-मज्झे, पण्णत्तं मंगलं जिणिंदेहिं।
तो कयमंगलविणयो वि णमोसुत्तं पवक्खामि॥ १९॥

विशेषार्थ—रत्नत्रयनी प्राप्तिथी सादिपणुं अने रत्नत्रयनी प्राप्ति पछी सिद्ध स्वरूपनी जे प्राप्ति थई छे तेनो कदी अंत आवनार नथी। आ रीते आ बंने धर्मोने ज विषय करनार (**न एकं गमः नैगमः**) नैगमनयनी अपेक्षाए मंगल सादि-अनंत छे।

(छट्ठो अनुयोग—)

सम्यग्दर्शननी अपेक्षाए मंगल सादि-सांत समजवुं जोईए, तेनो जघन्य काळ अंतर्मुहूर्तनो छे अने उत्कृष्ट काळ कंईक ऊणा छासठ सागरोपम प्रमाण छे।

मंगल केटला प्रकारनां छे? मंगलसामान्यनी अपेक्षाए मंगल एक प्रकारे छे। मुख्य अने गौण भेदथी बे प्रकारे छे। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान अने सम्यक्चारित्रना भेदथी त्रण प्रकारे छे। धर्म, सिद्ध, साधु अने अर्हन्तना भेदथी चार प्रकारे छे। ज्ञान, दर्शन अने त्रण गुप्तिना भेदथी पांच प्रकारे छे, अथवा 'जिनेन्द्रदेवने नमस्कार थाओ' इत्यादि रूपथी अनेक प्रकारे छे।

अथवा मंगलना विषयमां छ अधिकारो द्वारा दंडकोनुं कथन करवुं जोईए। ते आ प्रकारे छे:—१ मंगल, २ मंगलकर्ता, ३ मंगलकरणीय, ४ मंगल उपाय, ५ मंगलभेद अने ६ मंगलफळ। हवे आ छ अधिकारोना अर्थो कहे छे। मंगलनो अर्थ तो पहेलां कही देवामां आव्यो छे। चौद विद्यास्थानोना पारगामी आचार्य परमेष्ठी मंगलकर्ता छे। भव्यजन मंगल करवाने योग्य छे। रत्नत्रयनी साधक सामग्री मंगलनो उपाय छे। एक प्रकारनुं मंगल, बे प्रकारनुं मंगल इत्यादिरूपे मंगलना भेदो पहेलां कही आव्या छीए। उपर कहेला मंगल आदिथी प्राप्त थनारा अभ्युदय अने मोक्ष सुखने आधीन मंगलनुं फळ छे। अर्थात् जेटला प्रमाणमां आ जीव मंगलनुं साधन मेळवे छे, एटला ज प्रमाणमां तेनाथी जे यथायोग्य अभ्युदय अने निःश्रेयस् सुख मळे छे ते ज तेना मंगलनुं फळ छे। उक्त मंगल ग्रंथनी आदि, मध्य अने अंतमां कहेवां जोईए। कह्युं पण छे—

जिनेन्द्रदेवे आदि, मध्य अने अंतमां मंगल करवानुं विधान कर्युं छे। आथी मंगल विनयने करीने पण नमोकारसूत्रनुं वर्णन करुं छुं। १९।

तिसु ट्ठाणेसु मगल किमट्ठ वुच्चदे ? कयकोउयमगलपायच्छित्ता विणयोवगया सिस्सा अज्झेदारो सोदारो वत्तारो आरोग्गमविग्घेण विज्ज विज्जाफल पावेंतु त्ति । उत्त च—

आदिम्हि भद्दवयण सिस्सा लहुपारया हवतु त्ति ।
मज्झे अव्वोच्छित्ति य विज्जा विज्जाफल चरिमे ॥ २० ॥
विघ्ना प्रणश्यन्ति भय न जातु, न दुष्टदेवा परिलङ्घयन्ति ।
अर्थान्यथेष्टाश्च सदा लभन्ते, जिनोत्तमाना परिकीर्तनेन ॥ २१ ॥
आदौ मध्यावसाने च, मङ्गल भाषित बुधै ।
तज्जिनेन्द्रगुणस्तोत्र, तदविघ्नप्रसिद्धये ॥ २२ ॥

तच्च मगल दुविह णिबद्धमणिबद्धमिदि । तत्थ णिबद्ध णाम, जो सुत्तस्सादीए सुत्तकत्तारेण णिबद्धदेवदाणमोक्कारो त णिबद्धमगल । जो सुत्तस्सादीए सुत्तकत्तारेण कयदेवदाणमोक्कारो तमणिबद्धमगल । इद पुण जीवट्ठाण णिबद्धमगल । यत्तो 'इमेर्सि चोद्दसण्ह जीवसमासाण' इदि एदस्स

शका—ग्रथनी आदिमा, मध्यमा अने अतमा आम त्रण स्थानोमा मगल करवानो उपदेश शा माटे कर्यो छे ?

समाधान—मगल सबधी आवश्यक कृतिकर्म करनारा तथा मगल सबधी प्रायश्चित्त करनारा अर्थात् मगलने माटे आगळ प्रारभ करवामा आवनार कार्यमा दु स्वप्न वगेरेथी मनमा चचळता वगेरे न थाय एटला माटे प्रायश्चित्तस्वरूप मगळीक दधि, अक्षत, चदन वगेरेने सामे राखनारा अने विनयने प्राप्त एवा शिष्य, अध्येता अर्थात् भणनारो, श्रोता, अने वक्ता आरोग्य अने निर्विघ्नरूपे विद्या तथा विद्याना फळोने प्राप्त करे, एटला माटे त्रणे स्थळे मगल करवानो उपदेश आपेलो छे । कह्यु पण छे के—

शिष्ये सरळतापूर्वक प्रारभ करेला ग्रथना अध्ययन आदि कार्यमा ते पारगत थाय एटला माटे आदिमा भद्रवचन एटले मगलाचरण करवु जोईए। प्रारभ करेला कार्यमा विक्षेप न थाय एटला माटे मध्यमा मगलाचरण करवु जोईए, अने विद्या तथा विद्याना फळनी प्राप्ति थाय ए माटे अतमा मगलाचरण करवु जोईए। २० ।

जिनेन्द्रदेवना गुणोनु कीर्तन करवाथी विघ्नो नाश पामे छे, क्यारे पण भय आवतो नथी, दुष्ट देवताओ आक्रमण करी शकता नथी, अने निरतर यथेष्ट पदार्थोनी प्राप्ति थाय छे। २१ ।

विद्वान पुरुषोए प्रारभ करेला कोई पण कार्यनी आदि, मध्य अने अतमा मगल करवानु विधान करेलु छे। ते मगल निर्विघ्ने कार्यसिद्धिने माटे होय छे अने ते जिनेन्द्र भगवानना गुणोनु कीर्तन करवु ए ज (मगल) छे। २२ ।

ते मगल बे प्रकारे छे। निबद्ध मगल अने अनिबद्ध मगल। जे ग्रथनी आदिमा ग्रथकार द्वारा इष्ट देवताने नमस्कार निबद्ध करवामा आवे छे अर्थात् श्लोक वगेरे रूपे रचाय छे तेने 'निबद्ध मगल' कहे छे, अने जे ग्रथकार द्वारा देवताने नमस्कार करवामा आवे छे (परतु श्लोक वगेरे द्वारा सग्रह करवामा आवतु नथी) तेने 'अनिबद्ध मगल' कहे छे। तेमाथी आ 'जीवस्थान' नामनो

रहस्याभावाद् वा अरिहन्ता । रहस्यमन्तरायः तस्य शेषघातित्रितयविनाशाविनाभाविनो भ्रष्टबीजवन्निःशक्तीकृताघातिकर्मणो हननादरिहन्ता ।

अतिशयपूजार्हत्वाद् वाऽर्हन्तः । स्वर्गावतरणजन्माभिषेकपरिनिष्क्रमणकेवलज्ञानोत्पत्तिपरिनिर्वाणेषु देवकृतानां पूजानां देवासुरमानवप्राप्तपूजाभ्योऽधिकत्वादतिशयानामर्हत्वाद् योग्यत्वादर्हन्तः ।

आविर्भूतानन्तज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य-विरति-क्षायिकसम्यक्त्वदान-लाभ-भोगोपभोगाद्यनन्तगुणत्वादिहैवात्मसात्कृतसिद्धस्वरूपाः स्फटिकमणिमहीधरगर्भोद्भूतादित्यबिम्बवद् देदीप्यमानाः स्वशरीरपरिमाणा अपि ज्ञानेन व्याप्तविश्वरूपाः स्वस्थिताशेषप्रमेयत्वतः प्राप्तविश्वरूपाः निर्गताशेषामयत्वतो निरामयाः विगताशेषपापाञ्जनपुञ्जत्वेन निरञ्जनाः दोषकलातीतत्वतो निष्कलाः । तेभ्योर्हद्भ्यो नमः, इति यावत् ।

णिद्दद्धमोहतरुणो वित्थिण्णाणाणसायरुत्तिण्णा ।
णिहयणियविग्घवग्गा बहुबाहविणिग्गया अयला ॥ २३ ॥
दलियमयणप्पयावा तिकालविसएहि तीहि णयणेहि ।
दिट्ठसयलट्ठसारा सुदद्धतिउरा मुणिव्वइणो ॥ २४ ॥

अथवा 'रहस्य'ना अभावथी पण अरिहंत संज्ञा प्राप्त थाय छे । रहस्य एटले अंतराय कर्म । अंतरायकर्मनो नाश बाकीनां त्रण घाती कर्मोना नाशनो अविनाभावी छे, अने अंतरायकर्मनो नाश थतां अघाती कर्मो भ्रष्ट बीजनी माफक शक्तिहीन बनी जाय छे । एवा अंतराय कर्मना नाशथी अरिहंत संज्ञा प्राप्त थाय छे ।

अथवा सातिशय पूजाने योग्य होवाथी अर्हन् संज्ञा प्राप्त थाय छे । केमके; गर्भ, जन्म, दीक्षा, केवल अने निर्वाण—आ पांच कल्याणकोमां देवोए करेली पूजाओ देव, असुर अने मनुष्योने प्राप्त थयेली पूजाओथी अधिक अर्थात् महान् छे । आथी अतिशयोने योग्य होवाथी अर्हन् संज्ञा समजवी जोईए ।

अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंत सुख, अनंत वीर्य, अनंत विरति, क्षायिक सम्यकत्व, क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, क्षायिक भोग, अने क्षायिक उपभोग आदि प्रगट थतां अनंत गुणस्वरूप होवाथी जेमणे अहीं सिद्धस्वरूप प्राप्त करी लीधुं छे, स्फटिक मणिना पर्वतनी वच्चेथी नीकळता सूर्यबिंब समान जे देदीप्यमान थई रह्यां छे, पोताना शरीर प्रमाण होवा छतांये जेमणे पोताना ज्ञान द्वारा संपूर्ण विश्वने व्याप्त करी लीधुं छे, पोताना (ज्ञान)मां ज संपूर्ण प्रमेय रहेवाना कारणे (प्रतिभासित होवाथी) जे विश्वरूपताने प्राप्त करी गया छे, संपूर्ण आमय अर्थात् रोगो दूर थई जवाथी जे निरामय छे, संपूर्ण पापरूपी अंजननो समूह नष्ट थई जवाथी जे निरंजन छे, अने दोषोनी कलाओ अर्थात् संपूर्ण दोषोथी रहित होवाना कारणे जे निष्कल छे एवा ए अरिहंतोने नमस्कार थाओ ।

जेमणे मोहरूपी वृक्षने बाळी नाख्युं छे, जे विस्तीर्ण अज्ञानरूपी समुद्रमांथी तरी गया छे, जेमणे पोताना विघ्नोनो समूह नाश करी नाख्यो छे, जे अनेक प्रकारनी बाधाओथी रहित छे, जे अचल छे, जेमणे कामदेवना प्रतापने दलित करी नाख्यो छे, जेमणे त्रण काळने

तिरयणतिसूलधारिय मोहधासुरकबंधविंदहरा ।
सिद्धसयलप्परुवा अरहंता दुण्णयकयंता ॥ २५ ॥

'णमो सिद्धाणं' सिद्धा निष्ठिता कृतकृत्या सिद्धसाध्या नष्टाष्टकर्माणः । सिद्धानामर्हतां च को भेद इति चेन्न, नष्टाष्टकर्माणः सिद्धाः नष्टघातिकर्माणोऽर्हन्त इति तयोर्भेदः । नष्टेषु घातिकर्मस्वाविर्भूताशेपात्मगुणत्वान्न गुणकृतस्तयोर्भेद इति चेन्न, अघातिकर्मोदयसत्त्वोपलम्भात् । तानि शुक्लध्यानाग्निनाऽर्धदग्धत्वात् सन्त्यपि न स्वकार्यकर्तॄणीति चेन्न, पिण्डनिपाताभावान्यथानुपपत्तित आयु-

विषय करवारूप त्रण नेत्रोथी सकल पदार्थोनो सार जोई लीधो छे, जेमणे त्रिपुर अर्थात् मोह, राग अने द्वेषने सारी रीते भस्म करी नाख्या छे, जे मुनिव्रत अर्थात् दिगंबर अथवा मुनिओना पति अर्थात् ईश्वर छे, जेमणे सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान अने सम्यक्चारित्र-आ त्रण रत्नरूपी त्रिशूलने धारण करीने मोहरूपी अंधकासुरना कबंधवृंदने हरण कर्युं छे, जेमणे संपूर्ण आत्मस्वरूपने प्राप्त करी लीधुं छे, अने जेमणे दुर्नयनो अंत आण्यो छे एवा अरिहंत परमेष्ठी होय छे । २३,२४,२५ ।

विशेषार्थ—शैवमतमां महादेवने कामदेवनो नाश करनार, पोताना त्रण नेत्रोथी सकल पदार्थना सारने जाणनार, त्रिपुरनो ध्वंस करनार, मुनिव्रती एटले दिगंबर, त्रिशूलने धारण करनार अने अंधकासुरना कबंधवृंदने हरण करनार मानवामां आवे छे । महादेवना आ विशेषणोने ध्यानमां राखीने ऊपरनी बे गाथाओनी रचना थयेली छे, जेथी ए प्रगट थाय छे के अरिहंत परमेष्ठी ज साचा महादेव छे ।

'णमो सिद्धाणं' अर्थात् सिद्धोने नमस्कार थाओ । जे निष्ठित अर्थात् पूर्णतः पोताना स्वरूपमां स्थित छे, कृतकृत्य छे, जेमणे पोतानुं साध्य सिद्ध करी लीधुं छे अने जेमना ज्ञानावरण आदि आठ कर्मो नष्ट थई चूक्या छे तेने 'सिद्ध' कहे छे ।

शंका—सिद्ध अने अरिहंतोमां शो भेद छे ?

समाधान—आठ कर्मोने नष्ट करनारा सिद्ध कहेवाय छे अने चार घाती कर्मोनो नाश करनार अरिहंत कहेवाय छे । ए बेमां आ ज भेद छे ।

शंका—चार घाती कर्मो नष्ट थई जतां अरिहंतोना आत्माना समस्त गुणो प्रगट थई जाय छे । एटला माटे सिद्ध अने अरिहंत परमेष्ठीमां गुणकृत भेद नथी होतो ?

समाधान—एम नथी । केमके, अरिहंतना अघाती कर्मोनो उदय अने सत्त्व बन्ने देखाय छे । आथी आ बन्ने परमेष्ठीओमां गुणकृत भेद पण छे ।

शंका—ते अघाती कर्मो शुक्ल ध्यानरूप अग्निद्वारा अर्धदग्ध जेवा थई जवाथी उदय अने सत्त्वरूप विद्यमान रहेवा छतां पोतानुं कार्य करवामां समर्थ नथी ?

समाधान—एवुं पण नथी । केमके, शरीरना पतननो अभाव अन्यथा सिद्ध थतो नथी । एटला माटे अरिहंतोनुं आयुष्य वगेरे बाकीना कर्मोनो उदय अने सत्त्वनी सिद्धि थई जाय छे । अर्थात् जो आयुष्य वगेरे कर्मो पोताना कार्यमां असमर्थ मानवामां आवे तो शरीरनुं पतन थई जवुं जोईए, परंतु शरीरनुं पतन तो थतुं नथी । एटला माटे आयुष्य आदि बाकीना कर्मोनुं कार्य करवुं ए सिद्ध छे ।

ष्यादिशेषकर्मोदयास्तित्वसिद्धेः। तत्कार्यस्य चतुरशीतिलक्षयोन्यात्मकस्य जाति-जरा-मरणोपलक्षितस्य संसारस्यासत्वात् तेषामात्मगुणघातनसामर्थ्याभावाच्च न तयोर्गुणकृतभेद इति चेन्न, आयुष्य-वेदनी-योदययोर्जीवोर्ध्वगमनसुखप्रतिबन्धकयोः सत्त्वात्।

नोर्ध्वगमनमात्मगुणस्तदभावे चात्मनो विनाशप्रसङ्गात्। सुखमपि न गुणस्तत एव। न वेदनीयोदयो दुःखजनकः केवलिनि केवलित्वान्यथानुपपत्तेरिति चेदस्त्वेवमेव न्यायप्राप्तत्वात्। किन्तु सलेप-निर्लेपत्वाभ्यां देशभेदाच्च तयोर्भेद इति सिद्धम्। तेभ्यः सिद्धेभ्यो नम इति यावत्।

णिहयविविहट्ठकम्मा तिहुयणसिरसेहरा विहुवदुक्खा।
सुहसायरमज्झगया णिरंजणा णिच्च अट्ठगुणा॥ २६॥
अणवज्जा कयकज्जा सव्वावयवेहि दिट्ठसव्वट्ठा।
वज्जसिलत्थब्भग्गय पडिमं वाभेज्जसंठाणा॥ २७॥

शंका—कर्मोनुं कार्य तो चोराशी लाख योनिरूप जन्म, जरा अने मरणथी युक्त संसार छे। ते अघाती कर्मो रहेवा छतां अरिहंत परमेष्ठीमां ए जोवातां नथी, तथा अघाती कर्मो आत्माना अनुजीवी गुणोने घात करवामां असमर्थ पण छे। एटला माटे अरिहंत अने सिद्ध परमेष्ठीमां गुणकृत भेद मानवो ठीक नथी।

समाधान—एवुं नथी। केमके, जीवना ऊर्ध्वगमन स्वभावनुं प्रतिबंधक आयुकर्मनो उदय अने सुख गुणनुं प्रतिबंधक वेदनीय कर्मनो उदय अरिहंतोमां जोवाय छे। एटला माटे अरिहंत अने सिद्धमां गुणकृत भेद मानवो ज जोईए।

शंका—ऊर्ध्वगमन ए आत्मानो गुण नथी। केमके, तेने आत्मानो गुण मानी लेतां तेना अभावमां आत्मानो पण अभाव मानवो पडशे। आ कारणे सुख पण आत्मानो गुण नथी। बीजुं वेदनीय कर्मनो उदय केवलीमां दुःखने पण उत्पन्न करतो नथी। अन्यथा, अर्थात् वेदनीय कर्मने दुःखोत्पादक मानी लेतां केवली भगवाननुं केवलीपणुं ज बनी शकतुं नथी।

समाधान—जो एम होय तो हो, अर्थात् अरिहंत अने सिद्धोमां गुणकृत भेद सिद्ध थतो नथी तो भले, केमके ए न्यायसंगत छे। आम छतां सलेपत्व अने निर्लेपत्वनी अपेक्षाए अने देश-भेदनी अपेक्षाए ए बंने परमेष्ठीओमां भेद सिद्ध थाय छे।

विशेषार्थ—अरिहंत अने सिद्धोमां अनुजीवी गुणोनी अपेक्षाए तो कोई भेद नथी। आम छतां प्रतिजीवी गुणोनी अपेक्षाए मानी शकाय, परंतु प्रतिजीवी गुणो आत्माना भावस्वरूप धर्मो न होवाथी तत्कृत भेदनी कोई मुख्यता नथी। एटला माटे सलेपत्व अने निर्लेपत्वनी अपेक्षाए अथवा देशभेदनी अपेक्षाए ज आ बंनेमां भेद समजवो जोईए। ऊपर जे ऊर्ध्वगमन अने सुख आत्माना गुणो नथी ए प्रकारे कथन करेलुं छे त्यांये आ बंने गुणोनुं तात्पर्य प्रतिजीवी गुणोथी छे। ऊर्ध्व-गमनथी अवगाहनत्व अने सुखथी अव्यावाध गुणने ग्रहण करवा जोईए। केमके, ग्रंथांतरोमां आयु अने वेदनीयना अभावथी थनारा जे गुणोने अवगाहन अने अव्यावाध कह्या छे तेने ज अहीं ऊर्ध्वगमन अने सुखना नामथी प्रतिपादन करेला छे। एवा सिद्धोने नमस्कार थाओ।

जेमणे विविध भेदरूप आठ कर्मोनो नाश कर्यो छे, जे त्रण लोकना मस्तकना शेखर समान छे, दुःखोथी रहित छे, सुखरूपी सागरमां निमग्न छे, निरंजन छे, नित्य छे, आठ गुणोथी

माणुससठाणा वि हु सव्वावयवेहि णो गुणेहि समा ।
सव्विदियाण विसय जमेगदेसे विजाणति ॥ २८ ॥

'णमो आइरियाण' पञ्चविधमाचार चरन्ति चारयन्तीत्याचार्या चतुर्दशविद्यास्थानपारगा एकादशाङ्गधरा । आचाराङ्गधरो वा तात्कालिकस्वसमय परसमयपारगो वा मेरुरिव निश्चल क्षितिरिव सहिष्णु सागर इव बहिक्षिप्तमल सप्तभयविप्रमुक्त आचार्य ।

पवयणजलहिजलोयरण्हायामलबुद्धिसुद्धछावासो ।
मेरु व्व णिप्पकपो सूरो पचाणणो वज्जो ॥ २९ ॥
देस-कुल जाइसुद्धो, सोमगो सगभगउम्मुक्को ।
गयण व्व णिरुवलेवो, आइरियो एरिसो होई ॥ ३० ॥
सगह णिग्गहकुसलो, सुत्तत्थविसारओ पहियकित्ती ।
सारण वारण-साहण किरियुज्जुत्तो हु आइरियो ॥ ३१ ॥

एवविधेभ्य आचार्येभ्यो नम इति यावत् ॥

युक्त छे, अनवद्य अर्थात् निर्दोप छे, कृतकृत्य छे, जमणे सर्वांगे अथवा समस्त पर्यायो सहित सपूर्ण पदार्थोने जाणी लीधा छे, जे पुरुषाकार होवा छताये गुणोथी पुरुषोनी समान नथी। केमके, पुरुष सपूर्ण इद्रियोना विषयोने भिन्न भिन्न देशमा जाणे छे परतु जे प्रत्येक प्रदेशमा बधा विषयोने जाणे छे ते सिद्ध छे। २६,२७,२८।

'णमो आइरियाणं' आचार्य परमेष्ठीने नमस्कार थाओ । जे दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप अने वीर्य आ पाच आचारोनु स्वय आचरण करे छे अने बीजा साधुओ पासे आचरण करावे छे तेमने 'आचार्य' कहे छे। जे चौद विद्यास्थानोमा पारगत होय, अगियार अगने धारण करता होय, अथवा आचाराग मात्रना धारण करनारा होय, अथवा तत्कालीन स्वसमय अने परसमयमा पारगत होय, मेरु समान निश्चल होय, पृथ्वी समान सहनशील होय, जेमणे समुद्र समान मल अर्थात दोषोने बहार फेकी दीधा होय अने जे सात प्रकारना भयथी रहित होय तेमने 'आचार्य' कहे छे।

प्रवचनरूपी समुद्रना जलनी मध्यमा स्नान करवाथी अर्थात् परमागमना परिपूर्ण अभ्यास अने अनुभवथी जेमनी बुद्धि निर्मळ थई गई छे, जे निर्दोप रीतिए छ आवश्यकोनु पालन करे छे, जे मेरुपर्वतनी जेम निष्कप छे, जे शूरवीर छे, जे सिंहनी समान निर्भीक छे, जे वर्य अर्थात् श्रेष्ठ छे। देश, कुळ अने जातिथी शुद्ध छे, सौम्य मूर्ति छे, अतरग अने बहिरग परिग्रहथी रहित छे, आकाशनी समान निर्लेप छे एवा आचार्य परमेष्ठी होय छे। जे सघना सग्रह अर्थात् दीक्षा अने निग्रह अर्थात् शिक्षा अथवा प्रायश्चित्त देवामा कुशळ छे, जे सूत्र अर्थात् परमागमना अर्थमा विशारद छे, जेनी कीर्ति बधी जगाए फलायेली छे, जे सारण अर्थात् आचरण, वारण अर्थात निषेध अने साधन अर्थात् व्रतोनी रक्षा करनारी क्रियाओमा निरतर उद्युक्त छे तेमने आचार्य परमेष्ठी समजवा जोईए। २९, ३०, ३१।

एवा आचार्योने नमस्कार थाओ ।

'णमो उवज्झायाणं' चतुर्दशविद्यास्थानव्याख्यातारः उपाध्यायाः तात्कालिकप्रवचनव्याख्यातारो वा आचार्यस्योक्ताशेषलक्षणसमन्विताः संग्रहानुग्रहादिगुणहीनाः।

चोद्दसपुव्वमहोयहिमहिगम्म सिवत्थिओ सिवत्थीणं।
सीलंधराण वत्ता, होइ मुणीसो उवज्झायो ॥ ३२ ॥

एतेभ्य उपाध्यायेभ्यो नम इति यावत् ॥

'णमो लोए सव्वसाहूणं' अनन्तज्ञानादिशुद्धात्मस्वरूपं साधयन्तीति साधवः। पञ्चमहाव्रतधरास्त्रिगुप्तिगुप्ताः अष्टादशशीलसहस्रधराश्चतुरशीतिशतसहस्रगुणधराश्च साधवः।

सीह-गय-वसह-मिय-पसु-मारुद-सूरुवहि-मंदरिंदु-मणी।
खिदि-उरगंवर-सरिसा परमपयविमग्गया साहू ॥ ३३ ॥

सकलकर्मभूमीषूत्पन्नेभ्यस्त्रिकालगोचरेभ्यः साधुभ्यो नमः ॥

सर्वनमस्कारेष्वत्रतन'सर्व-लोक'शब्दावन्तदीपकत्वाद्ध्याहर्तव्यौ सकलक्षेत्रगतत्रिकालगोचरार्हदादिदेवताप्रणमनार्थम्।

'णमो उवज्झायाणं' उपाध्याय परमेष्ठीने नमस्कार थाओ। चौद विद्यास्थाननुं व्याख्यान करनार 'उपाध्याय' होय छे। अथवा तत्कालीन परमागमनुं व्याख्यान करनार उपाध्याय होय छे। तेओ संग्रह, अनुग्रह वगेरे गुणोने छोडीने पहेलां कहेवामां आवेला आचार्यना समस्त गुणोथी युक्त होय छे।

जे साधु चौदपूर्वरूपी समुद्रमां प्रवेश करीने अर्थात् परमागमनो अभ्यास करीने मोक्षमार्गमां स्थित छे तथा मोक्षना इच्छुक शीलंधरो अर्थात् मुनिओने उपदेश दे छे ए मुनीश्वरोने उपाध्याय परमेष्ठी कहे छे। ३२।

एवा उपाध्यायोने नमस्कार थाओ।

'णमो लोए सव्वसाहूणं' लोक अर्थात् अढीद्वीप, तेमां रहेला सर्व साधुओने नमस्कार थाओ। जे अनंत ज्ञानादिरूप शुद्ध आत्माना स्वरूपनी साधना करे छे तेने 'साधु' कहे छे। जे पांच महाव्रतोने धारण करे छे, त्रण गुप्तिओथी सुरक्षित छे, अढार हजार शीलना भेदोने धारण करे छे अने चोराशी लाख उत्तर गुणोनुं पालन करे छे ते साधु परमेष्ठी छे।

सिंह समान पराक्रमी, हाथी समान स्वाभिमानी अथवा उन्नत, बळद समान भद्रप्रकृति, मृग समान सरळ, पशु समान निरीह गोचरीवृत्ति करनारा, पवन समान निःसंग अथवा बधी जगोए रोकाया विना विचरनारा, सूर्यसमान तेजस्वी अथवा सकल तत्त्वोना प्रकाशक, उदधि अर्थात् सागर समान गंभीर, मंदराचल अर्थात् सुमेरु पर्वत समान परीषह अने उपसर्गो आववा छतां अकंप अने अडोल रहेनारा, चंद्रमा समान शांतिदायक, मणि समान प्रभापुंज युक्त, पृथ्वी समान बधा प्रकारनी बाधाओने सहन करनार, उरग अर्थात् सर्प समान बीजाए बनावेला अनियत आश्रय-वसतिका आदिमां निवास करनार, अंबर अर्थात् आकाश समान निरालंबी अथवा निर्लेप अने सदाकाळ परमपद अर्थात् मोक्षनुं अन्वेषण करनारा साधु होय छे। ३३।

एवा संपूर्ण कर्मभूमिओमां उत्पन्न थयेला त्रिकालवर्ती साधुओने नमस्कार थाओ।

पांच परमेष्ठीओने नमस्कार करवामां, आ नमोकारमंत्रमां जे 'सर्व' अने 'लोक' पदो छे

युक्त प्राप्तात्मस्वरूपाणामर्हता सिद्धाना च नमस्कार, नाचार्यादीनामप्राप्तात्मस्वरूपत्वतस्तेषा देवत्वाभावादिति न, देवो हि नाम त्रीणि रत्नानि स्वभेदतोऽनन्तभेदभिन्नानि, तद्विशिष्टो जीवोऽपि देव, अन्यथाशेषजीवानामपि देवत्वापत्ते। तत आचार्यादयोऽपि देवा रत्नत्रयास्तित्व प्रत्यविशेषात्। नाचार्यादिस्थितरत्नाना सिद्धस्थरत्नेभ्यो भेदो रत्नानामाचार्यादिस्थितानामभावापत्ते। न कारण-कार्यत्वाद् भेद सत्स्वेवाचार्यादिस्थरत्नावयवेष्वन्यस्य तिरोहितस्य रत्नाभोगस्य स्वावरणविगमत आविर्भावोपलम्भात्। न परोक्षापरोक्षकृतो भेदो वस्तुपरिच्छित्तिं प्रत्येकत्वात्। नैकस्य ज्ञानस्यावस्थाभेदतो

ते अतदीपक छे, आथी सपूर्ण क्षेत्रमा रहेनारा त्रिकालवर्ती अरिहत वगेरे देवताओने नमस्कार करवा माटे, ते प्रत्येक नमस्कारात्मक पदनी साथे जोडी देवा जोईए।

शका—जेमणे आत्मस्वरूपने प्राप्त करी लीधु छे एवा अरिहत अने सिद्ध परमेष्ठीने नमस्कार करवो योग्य छे, परतु आचार्य आदि त्रण परमेष्ठीओए आत्मस्वरूपने प्राप्त कर्युं नथी, एटला माटे तेमनामा देवपणु आवी शकतु नथी, आथी एमने नमस्कार करवो योग्य नथी।

समाधान—एम नथी। केमके, पोतपोताना भेदोथी अनत भेदरूप रत्नत्रय ज देव छे। आथी रत्नत्रयथी युक्त जीव पण देव छे, अन्यथा (जो रत्नत्रयनी अपेक्षाए देवपणु मानवामा न आवे तो) सपूर्ण जीवोने देवपणु प्राप्त थवानी आपत्ति आवशे, एटला माटे ए सिद्ध थयु के, आचार्य वगेरे पण रत्नत्रयना यथायोग्य धारक होवाथी देव छे। केमके, अरिहत आदिथी आचार्य आदिमा रत्नत्रयना सद्भावनी अपेक्षाए कोई अतर नथी। अर्थात् जेम अरिहत अने सिद्धोना रत्नत्रय जोवाय छे ए ज रीते आचार्य वगेरेमा पण रत्नत्रयनो सद्भाव जोवाय छे, आथी आशिक रत्नत्रयनी अपेक्षाए आमा पण देवपणु सिद्धि थाय छे।

आचार्य आदि परमेष्ठीओमा स्थित त्रण रत्नोनो, सिद्ध परमेष्ठीमा स्थित रत्नोनी साथे भेद पण नथी। जो बनेना रत्नत्रयमा सर्वथा भेद मानी लेवामा आवे तो आचार्य आदिमा स्थित रत्नोना अभावनो प्रसग आवशे, अर्थात् ज्यारे आचार्य वगेरेना रत्नत्रय सिद्ध परमात्माना रत्नत्रयथी भिन्न सिद्ध थशे तो आचार्य वगेरेना रत्न ज नहीं कहेवाय।

आचार्य आदि अने सिद्ध परमेष्ठीना सम्यग्दर्शन वगेरे रत्नोमा कारण-कार्य भेदथी पण भेद मानी शकाय एम नथी। केमके, आचार्य आदिमा स्थित रत्नोना अवयवो रहेवा छताये तिरोहित अर्थात् कर्मपटलोना कारणे पर्यायरूपे अप्रगट, बीजु—रत्नावयवोनो पोताना आवरण कर्मोनो अभाव थई जवाथी अविर्भाव थतो जोवाय छे, अर्थात् एम जेम जेम कर्मपटलोनो अभाव थई जाय छे तेम तेम अप्रगट रत्नोना बाकीना अवयवो पोतानी मेळे ज प्रगट थई जाय छे, आथी तेमा कार्य-कारणपणु पण बनी शकतु नथी। आ प्रकारे आचार्य आदिना अने सिद्धोना रत्नोमा परोक्ष अने प्रत्यक्षजन्य भेद पण मानी शकातो नथी। केमके, वस्तुना ज्ञानसामान्यनी अपेक्षाए बने एक छे। केवळ एक ज्ञानना अवस्थाभेदथी भेद मानी शकातो नथी। जो ज्ञानमा उपाधिकृत अवस्थाभेदथी भेद मानवामा आवे तो निर्मळ अने मलिन दशाने प्राप्त दर्पणमा पण भेद मानवो पडशे। आ प्रकारे आचार्य वगेरेना अने सिद्धोना रत्नोमा अवयव अने अवयविजन्य भेद नथी। केमके, अवयवो अवयवीथी सर्वथा भिन्न रहेता नथी।

भेदो निर्मलानिर्मलावस्थावस्थितदर्पणस्यापि भेदापत्तेः। नावयवावयविकृतो भेदः अवयवस्यावयविनोऽव्यतिरेकात्। संपूर्णरत्नानि देवो न तदेकदेश इति चेन्न, रत्नैकदेशस्य देवत्वाभावे समस्तस्यापि तदसत्त्वापत्तेः। न चाचार्यादिस्थितरत्नानि कृत्स्नकर्मक्षयकर्तॄणि रत्नैकदेशत्वादिति चेन्न, अग्निसमूहकार्यस्य पलालराशिदाहस्य तत्कणादप्युपलम्भात्। तस्मादाचार्यादयोऽपि देवा इति स्थितम्। विगताशेषलेपेषु सिद्धेषु सत्स्वर्हतां सलेपानामादौ किमिति नमस्कारः क्रियत इति चेन्नैष दोषः, गुणाधिकसिद्धेषु श्रद्धाधिक्यनिबन्धनत्वात्। असत्यर्हत्याप्तागमपदार्थावगमो न भवेदस्मदादीनाम्, संजातश्चैतत् प्रसादादित्युपकारापेक्षया वाऽऽदावर्हन्नमस्कारः क्रियते। न पक्षपातो दोषाय शुभपक्षवृत्तेः

शंका—संपूर्ण रत्नो अर्थात् पूर्णताने प्राप्त रत्नत्रयने ज देव मानी शकाय छे। रत्नोना एक देशने देव मानी न शकाय।

समाधान—एम कहेवुं पण उचित नथी। रत्नोना एक देशमां देवपणानो अभाव मानी लेतां रत्नोनी समग्रतामां पण देवपणुं बनी शकतुं नथी। अर्थात् जे कार्य जेना एक देशमां जोवातुं नथी ते तेनी समग्रतामां क्यांथी आवी शके?

शंका—आचार्य वगेरेमां स्थित रत्नत्रय समस्त कर्मोनो क्षय करवामां समर्थ थई शकतां नथी। केमके, तेमनां रत्न एकदेशीय छे।

समाधान—एम कहेवुं ठीक नथी। केमके, जे प्रकारे पलालराशिना दाहरूप अग्निसमूहनुं कार्य अग्निना एक कणथी पण जोई शकाय छे ए ज प्रकारे अहीं पण समजवुं जोईए। एटला माटे आचार्य आदि पण देव छे, ए वात निश्चित थई जाय छे।

शंका—सर्व प्रकारना कर्मलेपथी रहित सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान रहेतां अघाती कर्मोना लेपथी युक्त अरिहंतोने आदिमां नमस्कार शा माटे करवामां आवे छे?

समाधान—एमां कंई दोष नथी। केमके, सौथी अधिक गुणवाळा सिद्धोमां श्रद्धानी अधिकताना कारणे अरिहंत परमेष्ठी ज छे। अर्थात् अरिहंत परमेष्ठीना निमित्तथी ज अधिक गुणवाळा सिद्धोमां सौथी वधारे श्रद्धा उत्पन्न थाय छे, अथवा जो अरिहंत परमेष्ठी न होत तो आपणने आप्त, आगम अने पदार्थनुं परिज्ञान थई शकत नहीं, परंतु अरिहंत परमेष्ठीना प्रसादथी आपणने आ बोधनी प्राप्ति थई छे। एटला माटे उपकारनी अपेक्षाथी पण आदिमां अरिहंतोने नमस्कार करवामां आवे छे।

जो कोई कहे के, आ प्रकारे आदिमां अरिहंतोने नमस्कार करवो ए तो पक्षपात छे। त्यारे एनी सामे आचार्य उत्तर आपे छे के, एवो पक्षपात दोषनो उत्पादक नथी। परंतु शुभ पक्षमां रहेवाथी ते कल्याणनुं ज कारण छे। तथा द्वैतने गौण करीने अद्वैतनी प्रधानताथी करायेला नमस्कारमां द्वैतमूलक पक्षपात बनीये शकतो नथी।

विशेषार्थ—पक्षपात तो त्यां ज संभवे छे ज्यां बे वस्तुओमांथी एकनी तरफ अधिक आकर्षण होय छे, परंतु अहीं परमेष्ठीओने नमस्कार करवामां दृष्टि प्रधानतया गुणोनी तरफ रहे छे। वस्तुभेदनी प्रधानता नथी। एटला माटे अहीं कोई प्रकारे पक्षपातनो संभव नथी।

श्रेयोहेतुत्वात् । अद्वैतप्रधाने गुणीभूतद्वैते द्वैतनिवन्धनस्य पक्षपातस्यानुपपत्तेश्च । अप्राप्तश्रद्धाया आप्तागमपदार्थविपयश्रद्धाधिक्यनिवन्धनत्वख्यापनार्थं वाऽर्हतामादौ नमस्कार । उक्त च—

जस्सतिय धम्मवह णिगच्छे तस्सतिय वेणइय पउजे ।
सक्कारए त सिरपचएण कायेण वाया मणसा वि णिच्च ॥ ३४ ॥

मगलस्स कारण गय ॥

आप्तनी श्रद्धाथी आप्त, आगम अने पदार्थोना विपयमा दृढ श्रद्धा उत्पन्न थाय छे । आ वात प्रसिद्ध करवाने माटे पण आदिमा अरिहतोने नमस्कार करवामा आव्यो छे । कह्यु पण छे के—

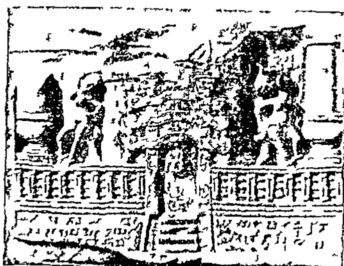
जेनी समीपे धर्मज्ञान प्राप्त करे तेनी समीपे विनययुक्त थईने प्रवृत्ति करवी जोईए । तथा तेमनो शिरपचक अर्थात् मस्तक, वे हाथ अने वे जाघ आ पचागोथी तथा काय, वचन अने मनथी निरतर सत्कार करवो जोईए ।

आ रीते मगलना कारणनु वर्णन समाप्त थयु ।

(षट्खडागमसूत्र परिचय)

आ 'षट्खडागम' सूत्र दिगबर जैन सप्रदायनो वहुमान्य ग्रथ छे । तेना मूळ सूत्रो दिगबराचार्य श्रीपुष्पदत अने भूतबलि आचार्योए प्राकृतमा रच्या छे अने तेना उपर दिगबराचार्य श्रीवीरसेनाचार्ये सस्कृतमा टीका लखी छे । आ ग्रथ १६ भागोमा विभाजित छे अने हिंदी अनुवाद साथे प्रकाशित थयो छे । (प्रकाशक श्रीमत शेठ लक्ष्मीचद शितावराय, जैन साहित्योद्धारक फड कार्यालय, अमरावती (वरार) । सपादक महाशये तेना कर्ताओ अने तेना विपयनिरूपण सबधे विस्तृत प्रस्तावना लखी छे एटले ए सबधे अहीं विस्तार करवो योग्य नथी ।

आ सूत्रमा नमस्कारमत्रना पाच पदो उपर अने मगल विपयक सारी माहिती आपवामा आवी छे । ए सदर्भ आपणा विषयने उपयोगी होवाथी अहीं लेवामा आव्यो छे । तेनो गुजराती भाषामा अनुवाद पण साथे आप्यो छे ।



डायरेक्टर जनरल ऑफ आर्क्योलोजी इन इडियाना सौजन्यथी ।

अ र हं त ण मो क्का रा व लि या ।

अर्हन्नमस्कारावलिका ।

(श्रीअर्हतोऽष्टोत्तरशतगुणवर्णनम् ।)



॥ ॐ० श्रीवीतरागः ॥

नमो चउदसमहास(सु)मिणसंसूइय अवयारकारगाणं अरिहंताणं ॥ १ ॥
नमो गब्भट्ठियतियनाणसंजुत्ताणं अरिहंताणं ॥ २ ॥
नमो गब्भट्ठियचउसट्ठिदेविंदसंथुआणं अरिहंताणं ॥ ३ ॥
नमो गब्भट्ठियमहाजोगब्भासीणं अरिहंताणं ॥ ४ ॥
नमो तेल्लोक्कदिवायरजम्मोदयसंपत्ताणं अरिहंताणं ॥ ५ ॥
नमो सव्वजीवसुहदायगजम्मकल्लाणगसंपत्ताणं अरिहंताणं ॥ ६ ॥
नमो छप्पन्नदिसाकुमारिकयसुइकम्माणं अरिहंताणं ॥ ७ ॥
नमो देविंदकरसंप(पु)डसंठिआणं अरिहंताणं ॥ ८ ॥
नमो मेरुमत्थयठिअसिंहासणसंनिविट्ठाणं अरिहंताणं ॥ ९ ॥
नमो सव्वसुरासुरकयकुस(सु)मंजलिए संपूइआणं अरिहंताणं ॥ १० ॥

अनुवाद ।

चौद महास्वप्नोथी सूचित अवतारने प्राप्त करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । १ ।

गर्भमां ज त्रण ज्ञानथी युक्त एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । २ ।

गर्भमां रहेतां ज चोसठ देवेन्द्रोथी स्तुति करायेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । ३ ।

गर्भमां ज महायोगना अभ्यासी एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । ४ ।

जन्मथी त्रण लोकमां सूर्य समान उदय पामनारा एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । ५ ।

समग्र जीवोने सुखदायक एवां जन्म कल्याणकने प्राप्त करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । ६ ।

छप्पन दिशाकुमारीओए जेमनुं शुद्धि(सूतिका)कर्म कर्युं छे एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । ७ ।

देवेन्द्रोना हस्तसंपुटमां रहेला एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । ८ ।

मेरुपर्वतना शिखरमां रहेला सिंहासन उपर बेठेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । ९ ।

समग्र देवताओ अने असुरोए करेली कुसुमांजलिथी सारी रीते पूजायेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ । १० ।

नमो अट्ठसहसचउसट्ठिपुण्णकलसखीरोदहिन्हविआण अरिहंताण ॥ ११ ॥
नमो वरपडहभेरिझल्लरिदेवदुदुहिनिनायपुच्चपूईआण अरिहंताण ॥ १२ ॥
नमो मघमघंतवरगोसीसचदणचच्चियाण अरिहंताणं ॥ १३ ॥
नमो जलथलयदिव्वकुसुममहामल्लालइअकठाण अरिहंताण ॥ १४ ॥
नमो पवरहारद्धहार कडय-कुंडल मुउडमंडिआण अरिहंताण ॥ १५ ॥
नमो वरवेणुवीणामुयगतालघुघरघुमघुमिअकयनट्टविहीए सपूइआण अरिहंताण ॥ १६ ॥
नमो जयजयसद्दसमुच्चरिअसुरसमूहेण मायाभवणममागयाण अरिहंताण ॥ १७ ॥
नमो सक्कमठवियअगुठामयआहारकारगाण अरिहंताण ॥ १८ ॥
नमो चम्मचक्खूणमदसिअकयाहार नीहाराण अरिहंताण ॥ १९ ॥
नमो सेअमलरोगेनझिअसुहसि(स)रीरसपत्ताण अरिहंताणं ॥ २० ॥

क्षीरोदधि एटले दूधना समुद्रमाथी भरेला एवा आठ हजार ने चोसठ कळशोथी जेनु स्नपन करवामा आव्यु हतु एवा अरिहंत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ११ ॥

श्रेष्ठ पटह्–ढोल, भेरी–वाद्यविशेष, झालर अने देवदुदुभिना अवाजथी पूर्वे पूजायेला एवा अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १२ ॥

मघमघायमान श्रेष्ठ गोशीर्ष चदनथी जेमनु विलेपन करायु छे एवा अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १३ ॥

पाणी अने पृथ्वी उपरना दिव्य पुष्पोनी मोटी माळाओ जेमना कठमा पहेरावेली छे एवा अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १४ ॥

श्रेष्ठ हार, अर्धहार, कडा, कुडल अने मुकुटथी मडित अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १५ ॥

श्रेष्ठ वेणु–मोरली, वीणा, मृदग, ताल अने घूघराओना घुमघुम ध्वनिथी युक्त एवी नृत्यविधिथी सारी रीते पूजायेला एवा अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १६ ॥

जय जय शब्दनो उच्चार करता देवताना समूह साथे माताना भवनमा आवेला अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १७ ॥

अगूठामा इन्द्रे स्थापन करेल अमृतनो आहार करता अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १८ ॥

चर्मचक्षुथी जोई न शकाय ए रीते आहार अने निहार करनारा अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १९ ॥

परसेवो, मेल अने रोगथी रहित एवा शुभ शरीरने पामेला अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २० ॥

---

१ अ॰स॰A। २ खीरोदधिन्ह॰A। ३ नीहारगाण P।

नमो गोक्खीरधाराधवलमंसरुहिरधारगाणं अरिहंताणं ॥ २१ ॥

नमो मंदारपार(रि)जायकुसुमसंजणिअसुरहिसासूसासाणं अरिहंताणं ॥ २२ ॥

नमो छत्त-चामर-पडाग-जूव-जवलंछिअकरचरणाणं अरिहंताणं ॥ २३ ॥

नमो अट्ठाहिअसहस्सेणं लंक्खणगणेणं[1] संसोहिआणं अरिहंताणं ॥ २४ ॥

नमो देविंदाइट्ठपंचदेवंगणाहिं[2] कयधाइकम्माणं अरिहंताणं ॥ २५ ॥

नमो अवरावरसुरकुमारसमं[3] संकीलगाणं अरिहंताणं ॥ २६ ॥

नमो वालत्तणम्मि अबालभावाणं अरिहंताणं ॥ २७ ॥

नमो सव्वकलाविन्नाणसमूहपारसंपत्ताणं अरिहंताणं ॥ २८ ॥

नमो तेलुक्कच्छरिअकारगरूवजुव्वणगुणसंपत्ताणं अरिहंताणं ॥ २९ ॥

नमो[4] गामायारपरीसहविप्पमुक्कबालबंभयारीणं अरिहंताणं ॥ ३० ॥

नमो गामायारपरीसहअहिआसगविवाह[5]कंकणमंडिआणं अरिहंताणं ॥ ३१ ॥

गायना दूधनी धारा जेवा श्वेत मास अने रुधिरने धारण करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २१ ॥

मदार अने पारिजातनां पुष्पोथी उत्पन्न थती सुरभि गंध जेवा श्वास अने उच्छ्वास छे जेमना एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २२ ॥

छत्र, चामर, पताका, यूप (स्तंभविशेष) अने जवना लक्षण चिह्नोवाला हाथ अने पग छे जेमना एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २३ ॥

एक हजार आठ लक्षणोना समूहथी सुशोभित एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २४ ॥

इंद्रोनी आज्ञाथी पांच देवांगनाओए कर्यु छे धातृपणुं–धाईनुं कार्य जेमनुं एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २५ ॥

जुदा जुदा देवकुमारोनी साथे क्रीडा करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २६ ॥

बाळपणमां पण जेमने बाळभाव नथी एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २७ ॥

समग्र कला, विज्ञानना समूहने पार पहोंचेला एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २८ ॥

त्रणे लोकने आश्चर्य करावे एवा रूप अने यौवनना गुणोने प्राप्त थयेला अरिहंत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २९ ॥

मैथुन परीपहथी सर्वथा रहित एवा बालब्रह्मचारी अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ (अथवा ग्रामाचार एटले ग्राम–पांच इंद्रियो–नी प्रवृत्तिना परीपह एटले स्वच्छंदताभरी प्रवृत्तिओथी रहित बालब्रह्मचारी एवा ...) ॥ ३० ॥

मैथुन परीपहथी बचावनारां विवाहकंकणोथी शोभता एवा अरिहत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ३१ ॥

---

१ लक्खणगुणेण° P। २ देवगणाहि° A। ३ °सम कील° A।

४ "गामधम्म" शब्द आचारांग, सूयगडाग वगेरे सूत्रोमा आवे छे, तेनो अर्थ "मैथुन" थाय छे।

५ कोई स्त्री वगेरे थावीने उपसर्ग न करे ते माटे पोते विवाहित छे ए बतावबा कंकणो राखेला होय छे। ते काळमा विवाहकंकणोनी प्रथा हती।

नमो पचविहेसु माणुसभोगेसु अमुच्छिआण अरिहंताण ॥ ३२ ॥
नमो परमनीए रज्जसरणेण सव्वपयासुहदायगाण अरिहंताण ॥ ३३ ॥
नमो विसुद्धसुहज्झवसायभावणागयत्ताण अरिहंताण ॥ ३४ ॥
नमो सयमेव परमवेरग्गमवप्पमयसंबुद्धाण अरिहंताण ॥ ३५ ॥
नमो भत्तिभरनमिरलोगंतिआमरवंदिआण अरिहंताण ॥ ३६ ॥
नमो वरवरिआघोसपुव्व सवच्छरिअदाणदायगाण अरिहंताण ॥ ३७ ॥
नमो सव्वामरनरेहिं कयदिक्खाभिसेआण अरिहंताण ॥ ३८ ॥
नमो सिबिया विमाणसंनिविट्ठाण अरिहंताण ॥ ३९ ॥
नमो असोअ पुन्नाग तिलय-चपयमडिअवणसंडसपत्ताण अरिहंताण ॥ ४० ॥
नमो वज्जहरमंठविअसीहासणोवरिसंठिआण अरिहंताण ॥ ४१ ॥
नमो वरकडय-कुडल-हारद्धहार मउड-मालाविप्पमुक्काण अरिहंताण ॥ ४२ ॥

मनुष्यना पांच प्रकारना भोगोमां मूर्च्छा नहि पामता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३२ ॥

उत्कृष्ट नीतिथी राज्य करवाना कारणे सर्व प्रजाने सुख आपता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३३ ॥

विशुद्ध अने शुभ अध्यवसायरूप (अथवा विशुद्ध अने शुभ अध्यवसायथी सहित एवी) भावनाने प्राप्त करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३४ ॥

पोतानी मेळे ज उत्कृष्ट वैराग्यथी प्राप्त थयुं छे स्वयंसंबुद्धपणुं जेमणे एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३५ ॥

भक्तिना भार वडे नम्र (अथवा भक्तिना संभारपूर्वक नमनशील) एवा लोकांतिक देवोथी वंदायेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३६ ॥

वरवरिका एटले इच्छित वस्तुनुं दान लेवा माटे करायेली घोषणा, ते घोषणापूर्वक सांवत्सरिक एटले वार्षिक दान आपता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३७ ॥

सर्व इन्द्रो वडे कर्यो छे दीक्षानो अभिषेक जेमने एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३८ ॥

शिबिका (पालखी) स्वरूप विमानमां बेठेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३९ ॥

अशोक, पुन्नाग, तिलक अने चंपानां वृक्षोथी शोभित एवा वनखंड-उद्यानमां (दीक्षा माटे) पधारेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४० ॥

वज्रधर-इन्द्रे स्थापन करेला सिंहासन उपर बेठेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४१ ॥

श्रेष्ठ एवा कटक, कुंडल, हार, अर्धहार, मुकुट अने माला (वगेरे अलंकारो) वडे रहित एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४२ ॥

---

१ [illegible]

नमो अंजणघणसरिसाण केसाण पंचमुट्ठिए लोअकारगाणं अरिहंताणं ॥ ४३ ॥
नमो लोगग्गमुवगयसव्वसिद्धाणं नमोक्कारकारगाणं अरिहंताणं ॥ ४४ ॥
नमो सव्वसावज्जपावजोगपच्चक्खाणकारगाणं अरिहंताणं ॥ ४५ ॥
नमो नाण-दंसण-चारित्तरयणमालामंडिआणं अरिहंताणं ॥ ४६ ॥
नमो विमलविउलमइ-मणपज्जवनाणसमुप्पन्नाणं अरिहंताणं ॥ ४७ ॥
नमो सम(मि)इ-गुत्तिगुणरयणअलंकिआणं अरिहंताणं ॥ ४८ ॥
नमो दसविहसमणधम्मस्स संधारगाणं अरिहंताणं ॥ ४९ ॥
नमो पुक्खरपत्त व्व निरुवलेवाणं अरिहंताणं ॥ ५० ॥
नमो जीवो व्व अप्पडिघाइविहारवरकारगाणं अरिहंताणं ॥ ५१ ॥
नमो आयासु व्व निरासयगुणसंसोहिआणं अरिहंताणं ॥ ५२ ॥
नमो अक्खलियपवण[1]गुण व्व अप्पडिबद्धाणं अरिहंताणं ॥ ५३ ॥
नमो संगोविअंगोवंगकुम्म व्व गुत्तिंदिआणं अरिहंताणं ॥ ५४ ॥

अति श्याम अंजन जेवा वाळोनो पांच मूठीओथी लोच करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४३ ॥

लोकना अग्रभागमां पहोचेला सर्व सिद्धोने नमस्कार करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४४ ॥

समग्र प्रकारना सावद्य पापयोगोनां पच्चक्खाण करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४५ ॥

ज्ञान, दर्शन अने चारित्र स्वरूप रत्ननी मालाथी अलंकृत अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४६ ॥

निर्मळ विपुलमति मनःपर्यवज्ञान जेमने उत्पन्न थयु छे एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥४७॥

(पांच) समिति अने (त्रण) गुप्ति रूप गुणरत्नथी अलंकृत अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४८ ॥

दश प्रकारना श्रमणधर्मने सुंदर रीते धारण करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४९ ॥

पुष्कर-पद्मना पत्रनी माफक नहीं लेपायेला एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५० ॥[2]

जीवनी जेम अप्रतिहत (अस्खलित) श्रेष्ठ एवा विहार करनारा अरिहत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५१ ॥

आकाशनी जेम निरालंबनता गुणथी शोभता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५२ ॥

अस्खलित एवा वायुना समूहनी जेम अप्रतिबद्ध एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५३ ॥

संगोपित छे अंग अने उपांग जेनां एवा काचवानी माफक गुप्त इन्द्रियोवाळा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५४ ॥

---

१. °गणु व्व A।

२. पुक्खरपत्तं व निरुवलेवे, जीवे इव अप्पडिहयगई, गगणमिव निरालंवणे, वाउव्व अपडिबद्धे, कुम्भो इव गुत्तिंदिए, विहग इव विप्पमुक्के, खग्गिविसाण व एगजाए, भारडपक्खीव अप्पमत्ते, वसहो इव जायथामे, कुंजरो इव सोंडीरे, सीहो इव दुद्धरिसे, सागरो इव गंभीरे, चंदो इव सोमलेसे, सूरो इव दित्ततेए, वसुंधरा इव सव्वफासविसहे सारयसलिलं व सुद्धहियए..... ।

—श्री कल्पसूत्र, व्याख्यान ६.

नमो विहगमो व्व विप्पमुक्कगुणसंपत्ताण अरिहंताण ॥ ५५ ॥

नमो खग्गिमिग व्व एगग्गभावमुवगयाण अरिहंताण ॥ ५६ ॥

† नमो भारंडपक्खि व्व अप्पमत्ताण अरिहंताण ॥ ५७ ॥ †

नमो लक्खणगुणेहिं वरवसहु[1] व्व जोहथामाण अरिहंताण ॥ ५८ ॥

नमो कुंजरो व्व सोंडीरगुणमंजुआण अरिहंताण ॥ ५९ ॥

नमो पंचाणणु व्व निब्भयाण अरिहंताण ॥ ६० ॥

नमो सायरवरो व्व गंभीरियगुणमंडिआण अरिहंताण ॥ ६१ ॥

नमो संपुण्णससि(सम)हरुं व्व सोमसहावाण अरिहंताण ॥ ६२ ॥

नमो गयणमंडणभाणु व्व दित्ततवतेआण अरिहंताण ॥ ६३ ॥

नमो पुहवी व्व सव्वसहगुणसंजुआण अरिहंताण ॥ ६४ ॥

नमो सारयंबु व्व सच्छमणभावाण अरिहंताण ॥ ६५ ॥

नमो गामागर-नगर-पट्टणमंडियविसयेसु विहरमाणाण अरिहंताण ॥ ६६ ॥

नमो बहुपुण्णोदयसंजुअभवियजणदारसंपत्ताण अरिहंताण ॥ ६७ ॥

पक्षीनी जेम विप्रमुक्तता (निःसंगता) गुणने पामेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५५ ॥

खड्गी—गेंडाना शींगडानी जेम एकत्वभावने (भावनाने) पामेला (अथवा एकाकीपणे विचरता) अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५६ ॥

भारंड पक्षीनी जेम अप्रमत्त एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५७ ॥

लक्षण अने गुणोथी युक्त एवा श्रेष्ठ वृषभनी जेम (स्वीकृत महाव्रतोना भारने वहन करवामां) समर्थ एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५८ ॥

हाथीनी जेम शूरतागुणथी युक्त अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५९ ॥

सिंहनी जेम निर्भय एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६० ॥

महासागरनी जेम गांभीर्यगुणथी अलंकृत अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६१ ॥

पूर्णचंद्रनी जेम सौम्य स्वभाववाळा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६२ ॥

आकाशना अलंकार समा सूर्यनी जेम तपना तेजथी देदीप्यमान[2] अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ॥ ६३॥

पृथ्वीनी जेम बधुंये सहन करवाना गुणथी युक्त एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६४ ॥

शरद ऋतुना पाणीनी जेम स्वच्छ (निर्मळ) मनोभाववाळा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६५ ॥

गामो, आकरो, नगरो अने पत्तनोथी विभूषित देशोमां विहार करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६६ ॥

बहु पुण्योदयवाळा भविक मनुष्योना द्वारने प्राप्त थता (तपस्याना पारणा माटे) एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६७ ॥

---

†† [illegible] A [illegible] । १ [illegible] A ।
[illegible] = वृषभ । २ [illegible] (...)।

नमो बायालीसदोसविरहियाहारगाहगाणं अरिहंताणं ॥ ६८ ॥

नमो छट्ठट्ठम-दसम-दुवालस-मासद्ध-मासखवणाइतवकारगाणं अरिहंताणं ॥ ६९ ॥

नमो वीरासणगाइअणेगासणसंठिआणं अरिहंताणं ॥ ७० ॥

नमो बावीसपरीसहअहिआसगाणं अरिहंताणं ॥ ७१ ॥

नमो बज्झभिंतरपरिग्गहविप्पमुक्काणं अरिहंताणं ॥ ७२ ॥

नमो महावणम्मि पडिमापडिवन्नाणं अरिहंताणं ॥ ७३ ॥

नमो विसुद्धसुहधम्मसुक्कज्झाणसंपत्ताणं अरिहंताणं ॥ ७४ ॥

नमो खवगसेढीए संपत्ताणं अरिहंताणं ॥ ७५ ॥

नमो मोहमहामल्लक्खयकारगाणं अरिहंताणं ॥ ७६ ॥

नमो लोआलोअपयासगकेवलनाणसंपत्ताणं अरिहंताणं ॥ ७७ ॥

नमो रुप्प-सुवन्न-रयणमयसालतयसंठिआणं अरिहंताणं ॥ ७८ ॥

नमो नवसुवन्नकमलेसु पायसंठावगाणं अरिहंताणं ॥ ७९ ॥

नमो चउमुहचउसीहासणसंठिआणं अरिहंताणं ॥ ८० ॥

नमो पंचदसण्हं छत्तरयणसंसोहिआणं अरिहंताणं ॥ ८१ ॥

बेतालीस दोषथी रहित आहारने ग्रहण करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६८ ॥

छठ-बे उपवास, अठ्ठम-त्रण उपवास, दसम-चार उपवास, दुवालस-पांच उपवास, अर्ध मास-पंदर उपवास अने मासक्षपण-महिनाना उपवास वगेरे तप करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६९ ॥

वीरासन वगेरे अनेक आसनमां स्थिर रहेता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७० ॥

बावीश परीषहोने सहन करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७१ ॥

बाह्य अने अभ्यंतर परिग्रहथी रहित एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७२ ॥

मोटा वनमां प्रतिमाओने धारण करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७३ ॥

विशुद्ध एवा शुभ धर्मध्यान अने शुक्लध्यानने प्राप्त करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७४ ॥

क्षपक श्रेणिने प्राप्त करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७५ ॥

मोहरूपी महामल्लनो क्षय करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७६ ॥

लोक अने अलोकने प्रकाश करनारा एवा केवळज्ञानने प्राप्त करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७७ ॥

रूपानो, सोनानो अने रत्ननो एम त्रण गढ(समवसरण)मां बेठेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७८ ॥

सुवर्णनां नव कमळोमा पगने स्थापन करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७९ ॥

चार[1] (दिशाओमा) मुखवाळां चार सिंहासन उपर बेठेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८० ॥

पंदर छत्ररत्नोथी[2] सारी रीते शोभता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८१ ॥

---

१ प्रत्येक दिशामा एक एक मुख।

२ दरेक दिशामा त्रण त्रण अने वच्चे ऊर्ध्व दिशामा त्रण।

नमो बारसगुणअसोअवरपायवपूईआण अरिहंताण ॥ ८२ ॥

नमो मणि-कणगविचित्तदंडमयचारुचामरवीईआण अरिहंताण ॥ ८३ ॥

नमो जाणुप्पमाणभरियपु(प्फ)पयराण अरिहंताण ॥ ८४ ॥

नमो दिणयरसमतेअधम्मचक्कसोहिअअग्गविभागाण अरिहंताण ॥ ८५ ॥

नमो निम्मलभामंडलमंडिअपिट्ठविभागाण अरिहंताण ॥ ८६ ॥

नमो देवदुंदुहिनिनायसद्दइयतिहुअणरायत्तणपत्ताण अरिहंताण ॥ ८७ ॥

नमो सुर-नर तिरिआण सजणियपडिबोहवाणीगुणसंपत्ताण अरिहंताण ॥ ८८ ॥

नमो भविअजणकमलपयासगाण अरिहंताण ॥ ८९ ॥

नमो चउद्दसपुव्वाण बीयभूयपयतियदाणदायगाण अरिहंताण ॥ ९० ॥

नमो चउद्दसपुव्वसुत्तकारगसीसाण गणहरपयसंठावगाण अरिहंताण ॥ ९१ ॥

नमो सव्वसुरासुरनमू(म)मिअचउव्विहसमणसंघसंठावगाण अरिहंताण ॥ ९२ ॥

नमो सव्वपाणभूअजीअसत्तकारुण्णभावपत्ताण अरिहंताण ॥ ९३ ॥

(अर्हत्‌ना शरीरथी) बारगणा ऊंचा एवा श्रेष्ठ अशोक वृक्ष वडे पूजा करायेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८२ ॥

मणि अने सुवर्णथी जडेला नानारंगवाळा (रंगबेरंगी) दंड (हाथा)वाळा सुंदर चामरोथी वींझाला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८३ ॥

जेमनी आजुबाजु जानुप्रमाण पुष्पसमूह एकत्र थयो छे एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८४ ॥

जेमनी आगळना भागमा सूर्य जेवा तेजवाळु धर्मचक्र शोभे छे एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८५ ॥

जेमनी पाछळनो भाग निर्मळ भामंडळथी शोभित छे एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८६ ॥

देवदुन्दुभिना अवाजथी जणावाता त्रिभुवनना राजपणाने प्राप्त थयेला एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८७ ॥

देवो, मनुष्यो अने तिर्यंचोने प्रतिबोध करनारी एवी वाणीना गुणोने प्राप्त थयेला छे एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८८ ॥

भव्य जीव रूप कमलोनो विकास करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८९ ॥

चौद पूर्वोना बीजभूत त्रण पदो (उपन्नेइ वा विगमेइ वा धुवेइ वा)नु दान करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९० ॥

चौद पूर्वोना सूत्रोने बनावनारा शिष्योने गणधरपदे स्थापन करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९१ ॥

समस्त सुर अने असुरो वडे वंदायेला एवा चतुर्विध श्रमण वगेरे संघनी संस्थापना करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९२ ॥

सर्व प्राणो, भूतो, जीवो अने सत्त्वो प्रत्ये कारुण्यभावने प्राप्त थयेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९३ ॥

नमो अमरवइ-चक्कहर-वासुदेव-बलभद्दवंदिआणं अरिहंताणं ॥ ९४ ॥

नमो अणुत्तरविमाणवासिअमरसंदेहअवहारकारगाणं अरिहंताणं ॥ ९५ ॥

नमो सुक्कलेसाए तेरसमगुणठाणसंठिआणं अरिहंताणं ॥ ९६ ॥

नमो जीवाजीवाइपयत्थपयासगाणं अरिहंताणं ॥ ९७ ॥

नमो परोवयारकरणेणं संपूरिअआउकम्माणं अरिहंताणं ॥ ९८ ॥

नमो लोगग्गगमणजुग्गखित्तमुवगयाणं अरिहंताणं ॥ ९९ ॥

नमो सिद्धसुहदायगंतिमतवकारगाणं अरिहंताणं ॥ १०० ॥

नमो चउद्दसमगुणठाणठियसेलेसीकरणमुवगयाणं अरिहंताणं ॥ १०१ ॥

नमो सव्वसुरासुरविरइयचरमसमवसरणसंठिआणं अरिहंताणं ॥ १०२ ॥

नमो अणाइकम्मसंजोगविप्पमुक्काणं अरिहंताणं ॥ १०३ ॥

नमो उरालियतेअकम्मणसि(स)रीरपडिमुक्काणं अरिहंताणं ॥ १०४ ॥

नमो रागद्दोसजलभरिअसंसारसागर[1]समुत्तिन्नाणं अरिहंताणं ॥ १०५ ॥

इन्द्र, चक्रवर्ती, वासुदेव अने बलभद्रथी वंदायेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९४ ॥

अनुत्तर विमानवासी देवोना संदेहने दूर करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९५ ॥

शुक्ल लेश्यामां तेरमा गुणस्थानके रहेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९६ ॥

जीव, अजीव वगेरे पदार्थोना प्रकाशक अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९७ ॥

परोपकार करवा वडे आयुष्यकर्मने पूर्ण करनारा एवा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९८ ॥

लोकना अग्रभागे जवा योग्य क्षेत्रने प्राप्त करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९९ ॥

सिद्धोना सुखने आपनारी अंतिम तपस्याने करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०० ॥

चौदमा गुणस्थानके स्थिर थता शैलेशीकरणने प्राप्त करता अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०१ ॥

समस्त सुर अने असुरोए रचेला छेल्ला समवसरणमा बेठेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०२ ॥

अनादि काळना कर्मसंयोगथी सर्वथा मुक्त थयेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०३ ॥

औदारिक, तेजस् अने कार्मण शरीरोथी सर्वथा मूकायेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०४ ॥

राग अने द्वेषरूपी जळथी भरेला संसारसागरने सारी रीते तरी गयेला अरिहंत भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १०५ ॥

---

१ सागरुत्ति°A।

नमो सरीरतिभागूणघणनिरुद्धयजीवपएसाण अरिहंताण ॥ १०६ ॥
नमो पुव्वज्झाणपओगाओसु धणनिमुक्क व्व गइपरिणयाणं अरिहंताण ॥ १०७ ॥
(नमो पुव्वज्झाणपओगाओ उड्ढ वणुनिमुक्क व्व गइपरिणयाण अरिहंताण ॥[A])
नमो सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्तिसिद्धिगइनामधेयं ठाणं स[प]त्ताण अरिहंताण ॥ १०८ ॥

॥ इति नमस्कारावलिका समाप्ता ॥

[A] प्रतिप्रान्ते—बाई सजीरापठनार्थम् ॥ साह राजालिखितम् ॥

जीव प्रदेशोने शरीरना त्रीजा भागथी न्यून घनस्वरूपे करनारा अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०६ ॥

[1]पूर्वप्रयोगथी धनुष्यमाथी मूकायेल बाणनी सदृश गतिने पामेला सर्व अरिहंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०७ ॥[3]

शिव–विघ्नोथी रहित, अचल–स्थिर, अरुज्–व्याधि अने वेदनाथी रहित, अनंत–अंत रहित, अक्षय–जेनो कदापि क्षय थतो नथी, अव्याबाध–पीडा रहित, अपुनरावृत्ति–ज्या गया पछी पाछु फरवानु होतु नथी तेवा सिद्धिगति नामवाळा स्थानने प्राप्त थयेला अरिहंत भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०८ ॥

परिचय

आ 'अर्हन्नमस्कारावलिका'नी चार पत्रनी हस्तलिखित प्रति पाटणना श्रीहेमचंद्राचार्य ज्ञानमंदिर डा न १२९, प्र न ३८२६ मांथी मळी छे तेमांथी आ पाठ लेवामा आव्यो छे अने आ कृतिनी बीजी प्रति डभोई, श्रीअमरविजयजी जैन ज्ञानभंडार प्रति न ४८१/३०२४ उपरथी पाठांतरो नोंधवामा आव्या छे। आना कर्ता विशे कोई माहिती मळी शकी नथी।

कोई महान पूर्वाचार्य श्री अरिहंत परमात्माना विशिष्ट प्रकारना ध्यान माटे आ ग्रथनी रचना करी होय एम लागे छे। आ रचना ज कही आपे छे के तेना रचयिता बहुश्रुत हता। आ ग्रथमा श्री अरिहंत परमात्मानी १०८ विशिष्ट अवस्थाओनु मूळआगमसदृश भाषामा सुदर रीते आलेखन करवामा आव्यु छे। प्रात कालीन ध्यान माटे आ वर्णन उपयुक्त लागे छे।

---

१ मूलादर्शगत पाठ अशुद्ध लागवाथी नीचे कोसमां सुधारेल पाठ अने दर्शाव्यो छे, आ सुधारो 'आवश्यक निर्युक्ति गा ९५७ ना आधारे कर्यो छे अने तेनो अनुवाद पण ते गाथानी हारिभद्री टीकाना आधारे कर्यो छे। अथवा आ रीते पण पाठ सुधारी शकाय —

नमो पुव्वपओगाओ बंधणविमुक्क (एरण्डफल) व्व गइपरिणयाण अरिहंताण।

पूर्वप्रयोगथी कोशबंधनथी विमुक्त बनेल एरण्डफळनी जेम कर्मबंधनना अभावथी ऊर्ध्वगतिने पामेला अरिहंत भगवानने नमस्कार थाओ (जुओ-योगशास्त्र प्रकाश ११ श्लो ६०)

२ पूर्वप्रयोग एटले पूर्वबद्ध कर्म छूटी गया पछी पण तेथी आवेलो वेग। जेम कुभारे लाकडाथी फेरवेलो चाक लाकडी अने हाथ उठावी लीधा पछी पण प्रथम मळेल वेगना प्रमाणमां फर्या करे छे तेम कर्ममुक्त जीव पण पूर्वकर्मथी आवेल वेगने लीधे पोताना स्वभाव प्रमाणे ऊर्ध्वगति करे छे।

कोश(फीग्गा)मां रहेलु एरंडनु बीज कोश तूटतां ज उपर बहार नीकळे छे तेम कर्मबंधन दूर थतां ज जीव ऊर्ध्वगामी बने छे।

—जुओ 'तत्त्वार्थसूत्र अध्याय १०, सू ६। प सुखलालजीकृत विवेचन अथवा सिद्धसेनी टीका।

३ जुओ 'आवश्यकनिर्युक्ति गा ९५७ हारिभद्रीया टीका।

[११]

सि द्ध ण मो क्का रा व लि या

सिद्धनमस्कारावलिका।

(श्रीसिद्धपरमात्मनोऽष्टोत्तरशतगुणवर्णनम्।)

नमो जिणवरिंदपयमणुहविऊण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ १ ॥

नमो सामन्नेणं केवलित्तपय(यं) परिपालिऊण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ २ ॥

नमो तित्थयरस्स तित्थे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ३ ॥

नमो तित्थं विणा जाईसरणाइणा सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ४ ॥

नमो सयंबुद्धभावेण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ५ ॥

नमो पत्तेयबुद्धभावेण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ६ ॥

नमो बुद्धबोहियभावेण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७ ॥

नमो पुरिसलिंगेण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ८ ॥

नमो इत्थिलिंगेण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ९ ॥

नमो नपुंसकलिंगेण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ १० ॥

नमो मुणिवरलिंगेण सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ११ ॥

अनुवाद

जिनेश्वरनी पदवीनो अनुभव करीने सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १ ॥

सामान्यकेवलीपणानी पदवीनुं परिपालन करीने सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २ ॥

तीर्थकरोना तीर्थमां सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३ ॥

तीर्थ विना ज जातिस्मरण आदि ज्ञान वडे (प्रतिबोध पामीने) सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४ ॥

स्वयंबुद्ध भाववडे (प्रतिबोध पामीने) सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५ ॥

प्रत्येकबुद्धभावथी (प्रतिबोध पामीने) सिद्धिने वरेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ६ ॥

बुद्धबोधितभावथी (प्रतिबोध पामीने) सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७ ॥

पुरुषलिंगथी सिद्धिने मेळवनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८ ॥

स्त्रीलिंगथी सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९ ॥

नपुसकलिंगथी सिद्धिने वरेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १० ॥

मुनिवरनां लिंग(वेश)थी सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ११ ॥

नमो अन्नतित्थियलिंगेण सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ १२ ॥
नमो गिहत्थलिंगेण सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ १३ ॥
नमो एगसमए एगजीवसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ १४ ॥
नमो एगसमए अणेगजीवसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ १५ ॥
नमो सप(पु)न्नसुयनाणीसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ १६ ॥
नमो परमानि(व)हिनाणी सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाणं ॥ १७ ॥
नमो मणपज्जवनाणी सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ १८ ॥
नमो आयरियपयट्ठियसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ १९ ॥
नमो उवज्झायपयट्ठियसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ २० ॥
नमो अतगडकेवलिसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ २१ ॥
नमो पडिमापडिवन्नसाहुसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ २२ ॥
नमो जघाचारणमुनिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ २३ ॥
नमो विज्ञाचारणमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ २४ ॥
नमो आमोसहिलद्धिसपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ २५ ॥

अन्यतीर्थिकना लिंगथी सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १२ ॥
गृहस्थना लिंगथी सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १३ ॥
एकसमये ऐकजीवसिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १४ ॥
एकसमये अनेकजीवसिद्धिने पामेला सव सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १५ ॥
सपूर्ण श्रुतज्ञानी (श्रुतकेवली) थइने सिद्धिने पामेला एवा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १६ ॥
परमावधिज्ञानवाळा थइने सिद्धि पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १७ ॥
मन पर्यवज्ञानी थइने सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १८ ॥
आचार्यपदमा रहीने सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ १९ ॥
उपाध्यायपदमा रहीने सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २० ॥
अतकृत्केवलीपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २१ ॥
प्रतिमाने धारण करेल साधुपणे सिद्धिने वरेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २२ ॥
जघाचारणमुनिपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २३ ॥
विद्याचारणमुनिपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २४ ॥
आमर्शौषधिलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २५ ॥

---

१ एकला सिद्ध थयेला।
२ अनेकनी साथे सिद्ध थयेला।

नमो खेलोसहिलद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ २६ ॥

नमो जल्लोसहिलद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ २७ ॥

नमो सव्वोसहिलद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ २८ ॥

नमो पयाण(णु)सारीमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ २९ ॥

नमो संभिन्नसोईमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ३० ॥

नमो कुट्ठबुद्धीमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ३१ ॥

नमो बीयबुद्धिमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ३२ ॥

नमो अक्खीणमहाणसीलद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ३३ ॥

नमो खीरासवलद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ३४ ॥

खेलौषधिलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा एवा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २६ ॥

जल्लौषधिलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनार एवा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २७ ॥

सर्वौषधिलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २८ ॥

पदानुसारीलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ २९ ॥

संभिन्नश्रोत्रिलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३० ॥

कोष्ठबुद्धिलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३१ ॥

बीजबुद्धिलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३२ ॥

अक्षीणमहानसीलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३३ ॥

क्षीरास्रवलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धि पामनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३४ ॥

नमो महुआसवलद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ३५ ॥
नमो आसीविसलद्धिसपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाण ॥ ३६ ॥
नमो दिट्ठीविसलद्धिसपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ३७ ॥
नमो आगासगामीमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ३८ ॥
नमो विउलमइलद्धिसपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ३९ ॥
नमो प(पु)लायलद्धिसपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ४० ॥
नमो चक्कवट्टिमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ४१ ॥
नमो बलदेवमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ४२ ॥
नमो गणहरलद्धिसपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ४३ ॥
नमो तेअलेसालद्धिसपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ४४ ॥

मध्वास्रवलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ३५ ॥

आशीविपलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ३६ ॥

दृष्टिविपलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ३७ ॥

आकाशगामिनीलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ३८ ॥

विपुलमतिलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ३९ ॥

पुलाकलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ४० ॥

चक्रवर्तिलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ४१ ॥

बलदेवलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ४२ ॥

गणधरलब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ४३ ॥

तेजोलेश्यालब्धिसपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ४४ ॥

नमो सीअलेसालद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ४५ ॥

नमो आहारगलद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ४६ ॥

नमो लहुसि(स)रीरकरणमहसिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ४७ ॥

नमो तिहुयणवसिकारगमहासिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ४८ ॥

नमो तिहुयणईसरियमहसिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ४९ ॥

नमो जल व्व प(पु)ढवीमज्झे थल व्व जलोवरिचंकमणमहसिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ५० ॥

नमो अणु व्व सुह(हु)मसि(स)रीरकरणसिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं॥५१॥

[नमो महसरीरकरणमहसिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ५२ ॥]

नमो इच्छाचारणमहासिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ५३ ॥

नमो भूमित्थजोइसियफासकरणमहासिद्धिसंपन्नमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ५४ ॥

शीतलेश्यालब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४५ ॥

आहारकलब्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४६ ॥

*शरीरने नानुं बनाववारूप–लघिमामहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४७ ॥

त्रण भुवनने वश करवारूप–वशीकारमहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४८ ॥

त्रण भुवनना ऐश्वर्यनो अनुभव करवारूप ईशित्वमहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ४९ ॥

जलनी जेम पृथ्वीमां अने पाणी पर पृथ्वीनी जेम चालवादिरूप प्राकाम्यमहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५० ॥

अणुनी जेम सूक्ष्म शरीर करवारूप अणिमामहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५१ ॥

मोटुं शरीर करवारूप महिमामहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५२ ॥

कोईपण पदार्थने इच्छा प्रमाणे वापरवारूप (यत्रकामावसायित्व) इच्छाचारणमहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कारो थाओ ॥ ५३ ॥

जमीन उपर ऊभा रहीने ज्योतिष्क मंडल (चंद्र, सूर्य वगेरे) ने स्पर्शी शके एवी प्राप्तिमहासिद्धिसंपन्न मुनिवरपणे सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ५४ ॥

---

* जुओ–अभिधानचिंतामणी टीका का २. श्लो १६

नमो मेरुपव्व[य]ट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ५५ ॥
नमो निसह-नीलपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ५६ ॥
नमो महहिमव-रुप्पिपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ५७ ॥
नमो हिमव सिहरीपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ५८ ॥
[नमो] वेअड्ढपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ५९ ॥
नमो पउमवरवेइयासठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६० ॥
नमो गयदतपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६१ ॥
नमो जमगपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६२ ॥
नमो दिग्गयपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६३ ॥
नमो इसुआरपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६४ ॥
नमो वक्खारगिरीसु सठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६५ ॥
नमो वट्टवेयड्ढपव्वयसठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६६ ॥
नमो रिसहकूडपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६७ ॥
नमो अट्ठावयपव्वय[ट्ठिय]मुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६८ ॥
नमो सम्मेयसिहरपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ६९ ॥

मेरुपर्वत पर रहीने मुनिवरपणामा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥५५॥

निषध अने नील पर्वत पर रहीने मुनिवरपणामा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥५६॥

महाहिमवन अने रूपी पर्वत पर रहीने मुनिवरपणामा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥५७॥

हिमवत अने शिखरी पर्वत पर रहीने मुनिवरपणामा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥५८॥

वैताढ्यपर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ५९ ॥
पद्मवरवेदिकामा रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ६० ॥
गजदत पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ६१ ॥
यमक पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ६२ ॥
दिग्गज पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ६३ ॥
इषुकार पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ६४ ॥
वक्षस्कार पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ६५ ॥
वृत्तवैताढ्य पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥६६॥
ऋषभकूट पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥६७॥
अष्टापद पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥६८॥
समेतशिखर पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥६९॥

नमो सेत्तुंजयपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७० ॥
नमो उज्जितसेलसिहरट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७१ ॥
नमो माणुसोत्तरपव्वयट्ठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७२ ॥
नमो पंचसु भरहेसु संठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७३ ॥
नमो पंचसु एरवएसु संठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७४ ॥
नमो पंचसु महाविदेहेसु संठियमुणिवरसिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७५ ॥
नमो समत्थधाईसंडे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७६ ॥
नमो समत्थपुक्खरवरदीवे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७७ ॥
नमो समत्थजंबूदीवे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७८ ॥
नमो लवणसमुद्दमज्झे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ७९ ॥
नमो कालोदसमुद्दमज्झे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ८० ॥
नमो सीआ-सीउआनईमज्झे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ८१ ॥
नमो नारीकां(कं)ता-हरिकंतानइ(ई)मज्झे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ८२ ॥
नमो नरकांता-हरिसलिलानईमज्झे सिद्धिमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ ८३ ॥

शत्रुंजय पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७० ॥

गिरनार पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७१ ॥

मानुषोत्तर पर्वत पर रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७२ ॥

पांच भरतक्षेत्रमां रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७३ ॥

पाच ऐरवत क्षेत्रमा रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७४ ॥

पांच महाविदेह क्षेत्रमां रहीने मुनिवरपणे सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७५ ॥

समस्त धातकीखंडमां सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७६ ॥

समस्त पुष्करवरद्वीपमां सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७७ ॥

समस्त जबूद्वीपमा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७८ ॥

लवण समुद्रमां सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ७९ ॥

कालोदधि समुद्रमा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८० ॥

सीता अने सीतोदा नदीओमा रहेनारा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८१ ॥

नारीकांता अने हरिकाता नदीओमां रहेनारा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८२ ॥

नरकांता अने हरिसलिला नदीओना वचगाळामां सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्वे सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ८३ ॥

नमो रूप्पकूलारोहियानइ(ई)मज्झे सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ८४ ॥
नमो सुवन्नकूलारोहियानईमज्झे सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ८५ ॥
नमो रत्ता-रत्तवईमज्झे सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ८६ ॥
नमो गगा सिंधूमज्झे सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ८७ ॥
नमो अईयकाले सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ८८ ॥
नमो सपइ सिद्धिमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ८९ ॥
नमो ख(खा)इय-पारिणामियभावजुअले सठिआण (सिद्धिमुवगयाण) सव्वसिद्धाण ॥ ९० ॥
नमो अणतनाणधराण (सिद्धिमुवगयाण) सव्वसिद्धाण ॥ ९१ ॥
नमो अणतदंसणधराणं (सिद्धिमुवगयाण) सव्वसिद्धाण ॥ ९२ ॥
नमो अणतपरमाणदसुहसपत्ताण सव्वसिद्धाण ॥ ९३ ॥
नमो अणतवीरियभावमुवगयाण सव्वसिद्धाण ॥ ९४ ॥
नमो साइअणतठिइसपत्ताण सव्वसिद्धाण ॥ ९५ ॥
नमो पचविहसठाणपरिमुक्काण सव्वसिद्धाण ॥ ९६ ॥
नमो पचविहवन्ननिवेसरहियाण सव्वसिद्धाण ॥ ९७ ॥

रुप्यकूला अने रोहिता नदीओना वचगाळामा सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ८४ ॥

सुवर्णकूला अने रोहिता नदीओना वचगाळामा सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ८५ ॥

रक्ता अने रक्तावती नदीओना वचगाळामा सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ८६ ॥

गगा अने सिंधू नदीओना वचगाळामा सिद्धिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ८७ ॥

भूतकाळमा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ८८ ॥

वर्तमानकाळमा सिद्धिने प्राप्त करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ८९ ॥

क्षायिक अने पारिणामिक ए बे भावोमा रहेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९० ॥

अनत ज्ञानने धारण करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९१ ॥

अनत दर्शनने धारण करनारा सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९२ ॥

अनत अने परमानदरूप सुखने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९३ ॥

अनतवीर्यभावने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९४ ॥

सादि अनत स्थितिने पामेला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९५ ॥

पाच प्रकारना सस्थानथी सर्वथा मुकाएला सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९६ ॥

पाच प्रकारना वर्णविशेषथी रहित सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ९७ ॥

नमो दुविहगंथविमुक्काणं सव्वसिद्धाणं ॥ ९८ ॥
नमो पंचविहरसविसेसरहिआणं सव्वसिद्धाणं ॥ ९९ ॥
नमो अट्ठविहफासविसेसविप्पमुक्काणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०० ॥
नमो जम्म-जरा-मरणविप्पमुक्काणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०१ ॥
नमो अविचलपयसंठिआणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०२ ॥
नमो अट्ठविहकम्मकलंकविप्पमुक्काणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०३ ॥
नमो सव्वसंजोग-विउ(ओ)गविप्पमुक्काणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०४ ॥
नमो पारगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०५ ॥
नमो परंपरगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०६ ॥
नमो लोगग्गमुवगयाणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०७ ॥
नमो अणंताणंतगुणमणिमंडिआणं सव्वसिद्धाणं ॥ १०८ ॥

इति सिद्धनमस्कारावलिका ॥

बे प्रकारना गंथथी विशेषे करीने मुकाएला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९८ ॥
पांच प्रकारना रसविशेषथी रहित सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ९९ ॥
आठ प्रकारना स्पर्शविशेषथी विशेषे मुकाएला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०० ॥
जन्म, जरा अने मरणथी सर्वथा मुकाएला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०१ ॥
अविचळ पदमां संस्थित सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०२ ॥
आठ प्रकारना कर्मरूप कलंकथी सर्वथा मुकाएला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०३ ॥
सर्व प्रकारना संयोग अने वियोगथी सर्वथा मुकाएला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०४ ॥
(संसार समुद्रने) पार पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०५ ॥
[1] परंपराने पामेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०६ ॥
लोकना अग्रभागने संप्राप्त थयेला सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०७ ॥
अनंतानंत गुण-मणिओथी विभूषित एवा सर्व सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ १०८ ॥

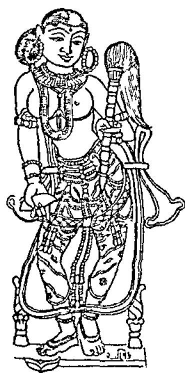
परिचय

अगाउ नं. १० नो परिचय आपवामां आव्यो छे ते 'अर्हन्नमस्कारावलिका'नी साथोसाथ आ 'सिद्धनमस्कारावलिका'नी चार पत्रनी प्रति हती तेमांथी ज आ पाठ लई, तेने अहीं संपादित करी अनुवाद साथे आप्यो छे।

---

1 गुणश्रेणीनी परंपराने।











अरिहाणाइथुत्तं

[पंचपरमिट्ठिनमुक्कारथुत्तं ।]

---

[1]अरिहाण नमो पूयं [2]अरहंताणं रहस्सरहियाणं ।
पयओ [3]परमेट्ठीणं [4]अरुहंताणं धुयरयाणं ॥ १ ॥
निद्दड्ढअट्ठकम्मिंधणाण वरनाण-दंसणधराणं ।
मुत्ताण नमो सिद्धाणं [5]परमपरमेट्ठिभूयाणं ॥ २ ॥
[6]आयारधराण नमो पंचविहायार[7]सुट्ठियाणं च ।
नाणीणायरियाणं आयारुवएसयाण सया ॥ ३ ॥
बारसविहं[8]गपुव्वं [9]दिंताणं सुयं नमो सुयहराणं ।
सययमुवज्झायाणं सज्झायज्झाणजुत्ताणं ॥ ४ ॥

अनुवाद

(१) * पूजाने योग्य (–अर्ह–अरिह) होवाथी 'अरिहंत', (२) जेमनाथी कोई वस्तु गुप्त न होवाथी 'अरहंत', (अथवा रहस्य एटले अंतरायकर्म, तेनाथी रहित होवाथी अरहंत); वळी, (३) जेमणे कर्मरूपी रज दूर करेली होवाथी संसारमां फरी वार उत्पन्न थवाना नथी तेथी 'अरुहंत' (प्रथम परमेष्ठीपदने पामेला) देवाधिदेव अरिहंत (अरहंत, अरुहंत) भगवंतोने प्रणिधानपूर्वक नमस्कार थाओ ॥ १ ॥

(१) आठ कर्मोरूपी इंधनने (शुक्ल ध्यानथी) सर्वथा बाळी नाखनार, (२) श्रेष्ठ केवळज्ञान अने केवळदर्शनने धारण करनार (कृतकृत्य थनार), (३) मोक्षपदने पामेला (अपुनरावृत्तिथी जेओ निर्वृतिपुरीमां पहोच्या छे—जे नित्य अने अविनाशी छे, ते), (४) परमपरमेष्ठी स्वरूप—एवा सिद्ध भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ २ ॥

(१) (गच्छना नायक तरीके), आचारने धारण करनारा (२) पंचविध आचारमां सुस्थित (आचारने स्वयं आचरनारा), (३) सदा आचारनो उपदेश करनारा—एवा (अर्थना वाचक होवाथी), (४) ज्ञानी आचार्य भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ३ ॥

(१) (पाठांतरने आधारे)—बार प्रकारनां अपूर्व श्रुतने आपनारा (अध्ययन करावनारा) (२) श्रुतधरने धारण करनारा तेमज (३) स्वाध्याय अने ध्यानथी सतत युक्त-एवा उपाध्याय भगवंतोने नमस्कार थाओ ॥ ४ ॥

---

१ अरिहंताणं न° P । २ अरिह° S । ३ परमिट्ठीणं JPS । ४ अरहं° SV । ५ परमं परमिट्ठि° P, परमपरमिट्ठि° JS । ६ आयर° S । ७ °सुद्धियाणं P । ८ °विहं अपुव्वं JPS । ९ दिट्ठाण J, दित्ताण S ।

* अहीं (१) (२) वगेरे अंको आपेला छे ते, ते ते परमेष्ठीओना विशेषणोनी गणतरी बतावे छे ।

सव्वेसिं साहूण नमो तिगुत्ताण सव्वलोए वि ।
तव नियम-नाण-दसणजुत्ताण बंभयारीण ॥५॥
एसो परमेट्ठीण पचण्ह वि भावओ नमोक्कारो ।
सव्वस्स कीरमाणो पावस्स पणासणो होइ ॥६॥
भुवणे वि मगलाण, मणुयासुर-अमर खयरमहियाण ।
सव्वेसिमिमो पढमो हवइ महामंगलं पढम ॥७॥
एसो परमो मतो परमरहस्स परपर तत्त ।
नाण परम नेय सुद्ध झाण परं झेयं ॥८॥ (३३)
एयस्स य मज्झत्थो, सम्मद्दिट्ठी विसुद्धचारित्तो ।
नाणी पवयणभत्तो गुरुजणसुस्सूसणापरमो ॥९॥ (३०)
जो पच नमोक्कार परमो पुरिसो पराइ भत्तीए ।
परियत्तेइ पइदिण पयओ सुद्धप्पओ अप्पा ॥१०॥ (३१)
अट्ठेव य अट्ठसय अट्ठसहस्स च उभयकाल पि ।
अट्ठेव य कोडीओ सो तइयभवे लहइ सिद्धिं ॥११॥ (३२)

---

(१) त्रण गुप्तिनु पालन करनारा, (२) तप, नियम, ज्ञान अने दर्शनथी युक्त, तेमज (३) ब्रह्मचारी (निर्वाण साधक आत्महितकारी क्रिया करनारा*)—एवा समग्र लोकमा रहेला सर्व साधु भगवतोने नमस्कार थाओ ॥५॥

पाचेय परमेष्टीओने भावपूर्वक करेलो आ नमस्कार समग्र पापोनो नाश करनारो बने छे ॥६॥

आ भुवनमा पण मनुष्य, असुर, देव अने खेचरो-थी पूजित जेटला मगलो छे ते बधामा आ नमस्कार प्रथम छे, तेथी ते प्रथम महामगल छे ॥७॥

आ (नमस्कार) परममत्र छे, परमरहस्य छे, परात्पर (परथी पण पर) तत्त्व छे, परमज्ञान छे, परमज्ञेय छे, शुद्ध ध्यान छे अने सर्वश्रेष्ठ ध्येय छे ॥८॥

जे उत्तम पुरुष मध्यस्थ, सम्यग्दृष्टि, विशुद्ध चारित्रवान्, ज्ञानी, प्रवचनभक्त अने गुरुजननी शुश्रूषामा तत्पर होय—ते पराभक्ति अने प्रणिधानपूर्वक शुद्ध पदोच्चारण सहित (शुद्ध प्रयोगात्मा) प्रतिदिन बन्ने सध्याए आ पचनमस्कारनो आठ वार, आठसो वार, आठ हजार वार [आठ लाख वार (पाठान्तर मुजब)] अगर आठ करोड वार जाप करे छे ते त्रीजा भवमा सिद्धि पामे छे ॥९-११॥

---

१ तह नि॰ V। २ परमिट्ठाण JPS। ३ पचण्ह वि J। ४ णमुक्कारो J, नमुक्कारो P। ५ भुवणे वि S। ६ होइ JV। ७ परपरागत S। ८ एय सया म॰ P, एव गय J। ९ नमुक्कारं JSP। १० च अट्ठसहस्साइ S।

* 'ब्रह्म' एटले कुशल अनुष्ठान अथवा आत्महितकारी क्रिया समजवानी छे। जुओ 'स्थानांगसूत्र' ९मा स्थाननी टीका।

एयं कवयमभेयं खाइयमत्थं[1] परा[2] भवणरक्खा ।
जोई[3] सुन्नं बिंदु नाओ तारा लवो[4] मत्ता[5] ॥ १२ ॥ (३४)
सोलसपरमक्खरबीयबिंदुगब्भो जगुत्तमो जोओ[6] ।
सुयबारसंगसायरमहत्थ-ऽपुव्वत्थ-परमत्थो ॥ १३ ॥ (३५)
नासेइ चोर-सावय-विसहर-जल-जलण-बंधणसयाइं[7] ।
चिंतिज्जंतो रक्खस-रण-रायभयाइं भावेण ॥ १४ ॥ (३६)
चत्तारि मंगलं मे हुंतुऽरहंता तहेव सिद्धा य ।
साहू अ सव्वकालं धम्मो[8] य तिलोयमंगल्लो ॥ १५ ॥ (८)

आ पंचनमस्कार ए परम अभेद्य कवच छे, परम खातिका (खाई, खाडी) छे, परम अस्त्र छे, परम भवनरक्षा छे, परम ज्योति छे, परम शून्य छे, परम बिन्दु छे, परम नाद छे, परम तारा छे, परम लव छे, परम मात्रा छे ॥ १२ ॥*

(आ नवकार) सोळ परमाक्षररूप बीजो (अ रि ह त सि द्ध आ य रि य उ व ज्झा य सा हू) अने सोळ परम बिंदुओ छे गर्भमां जेना एवो लोकोत्तम (मंत्राक्षरोनो) योग छे [अथवा—सोळ परमाक्षररूप बीजो अने बिन्दुओ जेनी मध्ये रहे छे—एवो जगतमा उत्तम योग छे] अने द्वादशांगरूप श्रुतसागरनो महार्थ, अपूर्वार्थ अने परमार्थ छे ॥ १३ ॥

(उपर्युक्त) भावपूर्वक स्मरण करायेलो आ मंत्र चोर, हिंसक प्राणीओ, विषधर–सर्प, जळ, अग्नि, बंधन, राक्षस, युद्ध अने राज्यना भयोने नसाडी मूके छे ॥ १४ ॥

अरिहंतो, सिद्धो, साधुओ अने त्रणे लोकमा मंगल एवो धर्म—ए चार मने सर्वकाळ मंगल थाओ। [अथवा—आ चार मने सर्वकाळ मंगल थाओ: अरिहंतो, सिद्धो, साधुओ अने त्रिलोकमंगल धर्म।] ॥ १५ ॥



१ खाइयसत्थं J। २ परा भुवण° PV, परा भुवणकित्ती S। ३ जोइ सु° P। ४ लवो वि मत्ता P। ५ मत्तो। ६ जो उ J। ७ बंधखक्याइं S। ८ धम्मो जिणदेसियमुदारो S।

* परमज्योति, परमशून्य वगेरे शब्दोनी समज माटे जुओ—हवे पछी छपायेल 'ध्यानविचार' (विषय नं १४)।

चत्तारि चेव ससुरासुरस्स लोगस्स उत्तमा हुति ।
अरहत सिद्ध साहू धंम्मो[1] जिणदेसियमुयारो ॥ १६ ॥ (९)
चत्तारि वि अरहते,[2] सिद्धे साहू तहेव धम्मं च ।
ससारघोररक्खसभएण[3] सरण पवज्जामि ॥ १७ ॥ (१०)
अह[4] 'अरहओ भगवओ महइ महावीरवद्धमाणस्स[5] ।
पणयसुरेसरसेहरवियलियकुसुमच्चियक्कमस्स[6] ॥ १८ ॥ (११)
जस्स वरधम्मचक्क दिणयरबिंब व भासुरच्छाय ।
तेएण पज्जलत गच्छइ[7] पुरओ जिणिंदस्स ॥ १९ ॥ (१२)
आयास पायाल सयल महिमडल पयासत ।
मिच्छत्तमोहतिमिर हरेइ तिण्हपि लोयाण ॥ २० ॥ (१३)

अरिहत, सिद्ध, साधु अने जिनेश्वरोए उपदेशेलो उदार धर्म—ए चार ज देवो अने असुरोथी युक्त एवा लोकमा उत्तम छे ॥ १६ ॥

ससाररूप भयकर राक्षसना भयथी हु अरिहतो, सिद्धो, साधुओ अने (जिन) धर्म—ए चारनु शरण स्वीकारु छु ॥ १७ ॥

[हवे चक्र-यत्र द्वारा परमेष्ठीनु ध्यान करवानी रीत बतावे छे। आ चक्रने 'पंच-नमस्कारचक्र', 'वर्धमानचक्र' अथवा 'पचपरमेष्ठीचक्र' पण कहे छे। तेमा सर्व प्रथम मत्रने ते ते पदोनी महत्ता दर्शावता पूर्वक जणावे छे। मूलनी गाथाओमा रेखाकित शब्दो मत्रना छे। आनु यत्र केम बनाववु तेनी रीत आ स्तोत्र पछी प्रगट करवामा आवेला 'वर्धमानचक्रोद्धारविधि' न १३ मा आपेली छे, तेनु यत्र-चित्र न १ तरीके प्रगट कर्यु छे।]

हवे सूर्यबिंबनी जेम देदीप्यमान प्रभावाळु तेजथी जाज्वल्यमान एवु धर्मवरचक्र जेमनी आगळ चाले छे अने नमन करता इन्द्रोना मुकुटथी खरेला पुष्पोथी जेमना चरण पूजाएल छे एवा महान महावीर अरिहत भगवतने नमस्कार हो ॥ १८–१९ ॥

आकाश, पाताल अने समग्र पृथ्वीमडलने प्रकाशित करतु ते चक्र त्रणेय लोकना मिथ्यात्व अने मोहस्वरूप अधकारने दूर करे छे ॥ २० ॥

---

१ धम्मो तिलोयमगलो S। २ अरहत सिद्ध साहू P, अरिहते S। ३ °रक्खस्स भ° S। ४ भगवओ नमो अरहओ म° S। ५ °माणसामिस्स S। ६ °सुरासुर° S। ७ वच्चइ S।

सयलम्मि वि[1] जीयलोए चिंतिय[2]मेत्तो करेइ सत्ताणं।
[3]रक्खं रक्खस-डाइणि-पिसाय-गह-जक्ख-भूयाणं ॥ २१ ॥ (१४)

लहइ विवाए वाए ववहारे भावओ सरंतो य।
जुए रणे य रायंगणे य विजयं विसुद्धप्पा ॥ २२ ॥ (१५)

पच्चुस-पओसेसुं सययं भव्वो जणो सुहज्झाणो।
[4]एवं झाएमाणो [5]मुक्खं पइ साहगो होइ ॥ २३ ॥ (१६)

वेयाल-रुद्द-दाणव-नरिंद-कोहंडि-रेवईणं च।
सव्वेसिं सत्ताणं पुरिसो अपराजिओ होई[6] ॥ २४ ॥ (१७)

विज्जु व्व पज्जलंति सव्वेसु वि अक्खरेसु मत्ताओ।
पंचनमुक्कारपए [7]इक्किक्के उवरिमा जाव[8] ॥ २५ ॥ (१८)

ससिधवलसलिलनिम्मल आयार[9]सहं च वण्णियं बिंदुं।
जोयणसयप्पमाणं जालासयसहस्सं[10]दिप्पंतं ॥ २६ ॥ (१९)

आ प्रकारे चिंतनमात्रथी नमस्कार राक्षस, डाकिनी, पिशाच, ग्रह, यक्ष अने भूत-प्रेतोथी बधाय जीवलोकमां प्राणीओनी रक्षा करे छे ॥ २१ ॥

आ (मंत्र) नुं भावथी स्मरण करतो विशुद्ध आत्मा विवादमां, वादमां, व्यवहारमां, जुगारमां, रण-युद्धमां अने राजाना आगणे (राजद्वारमां) पण विजयने प्राप्त करे छे ॥ २२ ॥

आ (नमस्कार मंत्र) नुं शुभ ध्यान करनारो भव्य मानवी सवारे अने सांजे निरंतर आवी रीते ध्यान करतां करतां मोक्ष प्रति साधक बने छे ॥ २३ ॥

आ पंचनमस्कारनुं ध्यान करनारो पुरुष वेताल, रुद्र (आ बंने रौद्र देवो छे), राक्षस, राजा तेमज कूष्मांडी अने रेवती (आ बंने रौद्र देवीओ छे), तेमज बधा प्राणीओथी अपराजित बने छे। (अर्थात् आ बधा ते ध्यानी आत्माने कंई नुकसान करी शकता नथी।) ॥ २४ ॥

पंचनमस्कार पदमां सर्व अक्षरोमां (अ रि हं त सि द्ध आ य रि य उ व ज्झा य सा हू ए सोळ अक्षरोमां) पण दरेक अक्षर उपर रहेली मात्राओ वीजळी जेवी जाज्वल्यमान (झळहळती) छे अने दरेक अक्षर उपर चन्द्रमा जेवुं उज्ज्वळ, जळ जेवुं निर्मळ हजारो आकारवाळुं,[11] वर्णयुक्त, सेंकडो योजन प्रमाण, लाखो ज्वाळाओथी दीपतुं बिंदु छे ॥ २५-२६ ॥

---

१ वि जियलोए SPJ। २ °यमित्तो य पंचनवकारो S। ३ रक्खइ र° S। ४ एयं झा° SPJ। ५ मोक्खपयसाहणो होइ S। ६ होइ SPJ ७ एक्केक्के S। ८ जा उ S। ९ °सहियं व° S। १० °हस्सदि SP। ११ 'नमस्कार लघुपंजिका' मां 'आयारसहस्स' एवो पाठ छे। आ गाथा त्यां पण आवे छे।

सोलससु अक्खरेसुं [1]इक्किक्कं अक्खर जगुज्जोय ।
भवसयसहस्समहणो जम्मि ठिओ पचनवकारो ॥ २७ ॥ (२०)
जो [2]थुणति हु इक्कमणो भविओ भावेण पचनवकार ।
सो[3] गच्छइ सिवलोय उज्जोयतो दसदिसाओ ॥ २८ ॥ (२१)
तव नियम-सजमरहो पचनमोक्कारसारहिनिउत्तो ।
नाणतुरगमजुत्तो नेइ[4] पुर परमनिव्वाण ॥ २९ ॥ (२२)
सुद्धप्पा सुद्धमणा पचसु समिईसु सजुय [5]तिगुत्ता ।
जे तम्मि रहे लँग्गा सिग्धं गच्छति सिवलोय ॥ ३० ॥ (२३)
थमेइ जल जलण चिंतियँमित्तो वि पचनवकारो ।
अरि-मारि चोर-राउल-घोरुवसग्ग पणासेइ ॥ ३१ ॥ (२४)
अट्ठेव य अट्ठसया अट्ठसहस्स च अट्ठकोडीओ ।
रक्खतु मे सरीर देवासुरपणमिया सिद्धा ॥ ३२ ॥ (२५)

सोळ अक्षरो(अँ रँ हँ तँ सिँ द्धँ आँ यँ रिँ यँ उँ वँ ज्झाँ यँ साँ हूँ)मानो एकेक अक्षर जगतने प्रकाश करनारो छे अने जे (अक्षरो)मा आ पचनमस्कार स्थित छे ते लाखो भव (जन्म–मरण) नो नाश करे छे ॥ २७ ॥

जे भविक–भव्य पुरुष एकचित्ते भावथी आ पचनमस्कारनी स्तुति करे छे, ते दशे दिशाओने प्रकाशित करतो करतो मोक्षमा निश्चयपूर्वक जाय छे ॥ २८ ॥

जेने तप, नियम अने सयमरूपी रथ छे, जेने पचनमस्काररूपी सारथि छे अने जे ज्ञानरूपी घोडाओथी जोडायेल छे ते परमनिर्वाणपुर–मोक्षपुरीमा जाय छे ॥ २९ ॥

शुद्ध मनवाळो, ईर्यादि पाचे समितिओथी युक्त तथा मनगुप्ति, वचनगुप्ति अने कायगुप्तिथी गुप्त (इन्द्रियोनो गोपवनार) जे शुद्ध आत्मा विजयवत एवा आ रथमा बेसे छे ते तरत मोक्षमा जाय छे ॥ ३० ॥

आ पचनमस्कार चिंतन मात्रथी जळ अने अग्निने थभावे छे तथा शत्रु, महामारी, चोर, तेमज राजकुळ द्वारा थता भयकर उपद्रवोनो नाश करे छे ॥ ३१ ॥

देवता अने असुरो आठ, आठ सो, आठ हजार के आठ करोड सिद्धो मारा शरीरनी रक्षा करो ॥ ३२ ॥

[विशेष–वि स प आशाधरे रचेला "प्रतिष्ठासारोद्धार" (प्रका० जैन ग्रथ उद्धारक कार्यालय, मुबई, १९७४) पृष्ठ ८६ मा नीचे मुजब गाथा अने तेनी टीका आपी छे:—
"ॐ अट्ठेव य अट्ठसया अट्ठसहस्सा य अट्ठकोडीओ ।
रक्खतु मे सरीर देवासुरपणमिया सिद्धा ॥ ७ ॥ स्वाहा ॥"

---

1 एक्के 8 । 2 थुणइ हु J, थुणइ एक्कं 8 । 3 सो पच(व)इ 8 । 4 नेइ पुरं प 8 । 5 तिगुत्ते 8PJ । 6 लग्गोवि J8 । 7 चिंतियमेत्तो V ।

ॐ[1] नमो अरिहंताणं तिलोयपुज्जो य संथुओ[2] भयवं ।
अमर-नर-रायमहिओ अणाइनिहणो सिवं दिसउ ॥ ३३ ॥ (२६)[3]

सव्वे पओसमच्छर आहियहियया पणासमुवयंति[4] ।
दुगुणीकयधणुसद्दं[5] सोउं पि महाधणुं सहसा ॥ ३४ ॥ (२७)

इय तिहुयणप्पमाणं सोलसपत्तं जलंतदित्तसरं ।
अट्ठार[6] अट्ठवलयं पंचनमोकारचक्कमिणं ॥ ३५ ॥ (२८)

—"अनेन स्वस्याङ्गप्रत्यङ्गपरामर्शः कार्यः । ततः "ॐ धनु धनु महाधनु स्वाहा" इमां धनुर्विद्यां वामकराङ्गुलीपर्वसु विन्यस्य प्रतिमाग्रे वामपादाङ्गुष्ठेन सरेफाग्रपुरस्सरं धनुरालिख्य वामपादेनाक्रम्य कायोत्सर्गेण स्थितः सन् "ॐ णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वासाहूणं; थंभेइ जल-जलणं चिंतियमित्तेण पंचणमोकारो । अरि-मारि-चोर-राउल घोरुवसग्गं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः विणासेइ स्वाहा ॥ इदं सप्तवारान् हृद्युच्चार्य अष्टोत्तरशतं धनुर्विद्यामावर्त्तयेत् ॥ इति सकलीकरणविधानम् ॥"

अर्थ—आ गाथाथी पोताना अंग अने तेना अवयवोनो विचार करवो । ए पछी "ॐ धनु धनु महाधनु स्वाहा" आ प्रकारनी धनुर्विद्याने डावा हाथनी आंगळीओना वेढाओमां स्थापन करीने प्रतिमानी आगळ डावा पगना अंगूठा वडे ह्रींकारपूर्वक धनुष्यनुं आलेखन करीने, तेने डावा पगथी ओळंगवुं । ते पछी काउसग्गमां स्थिर बनीने "ॐ णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइ(य)रियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं थंभेइ जलजलणं चिंतियमित्तेण पंचणमोकारो । अरिमारिचोरराउलघोरुवसग्गं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः विणासेइ स्वाहा" आ मंत्रनो सात वार हृदयमां उच्चार करवो अने एकसो ने आठ वार धनुर्विद्यानो जाप करवो ॥ आ प्रकारे सकलीकरण कराय छे ॥ ३२ ॥

अरिहंतने ॐकारपूर्वक नमस्कार थाओ । जे भगवान त्रण लोकना पूज्य छे, सारी रीते स्तुति करायेला छे, इंद्र अने राजाओ वडे पूजायेला छे अने जन्म—मरणथी रहित छे ते अमने मोक्ष आपो ॥३३॥

बेवडो करायेलो 'धणु' शब्द अने 'महाधणु' शब्द अर्थात् "ॐ धणु धणु महाधणु महाधणु [स्वाहा]"—ए प्रकारनी विद्या सांभळनार बधा ईर्ष्यालु द्वेषथी भरेला हैयावाळा शीघ्र नाश पामे छे ॥ ३४ ॥

(पंचपरमेष्ठीचक्रनो महिमा—)

सोळ पत्रवाळुं, ज्वलंत अने देदीप्यमान स्वरोवाळुं तथा आठ आरा अने आठ वलयोथी युक्त आ 'पंचनमस्कारचक्र' (वर्धमानचक्र अथवा पंचपरमेष्ठीचक्र) त्रिभुवनमां प्रमाणभूत छे ॥ ३५ ॥

१ नमह अ° S । २ सठिओं V । ३ एतद्गाथानन्तरं PJ आदर्शयोरियमधिकी गाथा दृश्यते—"निट्ठविय-अट्ठकम्मो सुद्धभूयनिरंजणो सिवो सिद्धो । अमरनररायमहिओ अणाइनिहणो सिवं दिसउ ॥ ४ °मुवजंति J । ५ दुगुणिकय° P । ६ अट्ठार अ° P । S प्रतौ समाप्यन्ते 'महानिशीथस्तोत्रं समाप्तमिति' पाठः ।

सयलुज्जोइयभुवणं विद्दावियसेससत्तुसंघाय ।
नासियमिच्छत्ततम वियलियमोह हततमोह ॥ ३६ ॥ (२९)

(यत्रध्याननु फळ—)

आ(यत्र)नु ध्यान बधा भुवनोने प्रकाशित करनारु, सर्व शत्रुओना समूहने नसाडनारु, मिथ्यात्वरूपी अंधकारनो नाश करनारु, मोहने दूर करनारु अने अज्ञानना समूहने हणनारु छे ॥ ३६ ॥

●

(प्रति-परिचय)

आ स्तोत्रनो केटलेक स्थळे 'पचपरमेट्ठिथुत्त' नामे उल्लेख करेलो मळे छे । श्रीहेमचद्राचार्ये पोताना 'सिद्धहेमचद्रशब्दानुशासन' उपर रचेला स्वोपज्ञ बृहन्न्यास (शब्दमहार्णवन्यास)मा 'अर्हं' सूत्र उपर जे व्याख्या करी छे तेमा आ स्तोत्रनी १३ मी गाथानु प्रमाण आपता आ स्तोत्रनु 'पचपरमेष्ठिस्तुति' एवु सस्कृतमय नाम उल्लेख्यु छे । वळी, श्रीजिनप्रभसूरिरचित 'विधि-मार्गप्रपा' मा आ स्तोत्रनु 'परमेट्ठिथवण' नाम आप्यु छे । ज्यारे केटलीक हस्तलिखित प्रतिओमा, खास करीने भत्तिभरस्तोत्र उपरनी 'नमस्कारव्याख्यानटीका'मा आ स्तोत्रनु नाम 'महानिशीथ-स्तोत्र' होवानु दर्शाव्यु छे । आ स्तोत्रना कर्ता विशे कोई माहिती मळी नथी ।

स्तोत्रनी रचनामा जैन परपरानी मत्र अने ध्यानविषयक प्राचीन ध्यानप्रणालीनी छाप अंकित थयेली जोवामा आवे छे, जेनी न १४ 'ध्यानविचार' मा दर्शावेली परिभाषाथी पुष्टि मळे छे । आ 'ध्यानविचार' कृतिरत्न हस्तलिखित भडारना अनेक ग्रथोना पेटाळमा पडेलो अचानक हाथ आव्यो, जेना आधारे आ स्तोत्रमा निर्देश करेला ध्यानविषयक पारिभाषिक शब्दोनु भावोद्घाटन सुकर बन्यु छे ।

वळी, अरिहत भगवाननी आगळ चालता धर्मचक्रनु यत्रस्वरूप प्रगट करीने नमस्कारमत्र सबधी ध्याननो विशिष्ट प्रकार प्रदर्शित कर्यो छे । आ यत्रनो भाव ए छे के, पोताना लक्ष्यनी सिद्धिने माटे आपणा ध्यानने अन्यत्र न जवा देता पोतानी नैसर्गिक शक्तिओने नियमपूर्वक जागृत करीने ए तरफ वाळवानो प्रयोग करवो ते छे । वस्तुत यत्र ध्यान आत्मा उपर लागेला राग-द्वेषरूप मळ दूर करवामा अने आत्मस्वभावनी रमणता केळववामा उपयोगी साधन थई पडे छे । आ यत्रनी आलेखनविधि माटे जूओ न १३, अने यत्रनी आकृति माटे जूओ चित्र न १ ।

आ सिवाय मार्गमा शत्रु अथवा चोरने दूर करवा माटे धनुर्विद्यानो जे प्रयोग कराय छे तेनो उल्लेख आ स्तोत्रमा करेलो छे ।

आ स्तोत्रमा खास करीने पाच विषयोनु निरूपण छे १ नमस्कारसूत्रनु रहस्य, २ चार शरणोनु रहस्य, ३ पचनमस्कारचक्र ४ ध्याननी प्रक्रिया, अने ५ धनुर्विद्या ।

आ विषयो उपर विचार करवामा आव्यो त्यारे एनी गाथाओना क्रममा एकसूत्रता लागती नहोती । तेथी आ रचना सकलित करवामा आवी होय एवु अनुमान थाय छे ।

जो के, आ स्तोत्रनी २०–२५ जेटली हस्तलिखित प्रतिओ मळी छे तेमा, तेमज पाचेक स्थळे प्रकाशित थयेल आ स्तोत्रनो पाठक्रम एक ज प्रकारनो उपलब्ध थाय छे । मात्र एक हस्तलिखित

प्रति, जैनी जैन साहित्य विकासमंडळना संग्रहमां फोटो स्टेटिक नकल लेवामां आवी छे, अने मूळ प्रति श्रीविजयमोहनसूरीश्वरजी शास्त्रसंग्रहमांथी मळी हती, तेमां आ रचनानो गाथाक्रम जूदी रीते नोंधायेलो जोवामां आव्यो त्यारे विषयक्रम अने रचानानी संकलनात्मकता संबंधी अनुमानने पुष्टि मळी।

अहीं आ स्तोत्रनो गाथाक्रम मळी आवेली आ एक ज प्रतिमांथी स्वीकृत कर्यो छे, बीजा प्रकारना गाथाक्रमनो ते ते मूळनी गाथाना अंक साथे निर्देश कर्यो छे। बंने क्रमनी तालिका नीचेना कोष्ठक मुजब छे—

स्वीकृत गाथाक्रम	बीजा प्रकारनो गाथाक्रम	स्वीकृत गाथाक्रम	बीजा प्रकारनो गाथाक्रम	स्वीकृत गाथाक्रम	बीजा प्रकारनो गाथाक्रम
१ थी ७	१ थी ७	१७	१०	२७	२०
८	३३	१८	११	२८	२१
९	३०	१९	१२	२९	२२
१०	३१	२०	१३	३०	२३
११	३२	२१	१४	३१	२४
१२	३४	२२	१५	३२	२५
१३	३५	२३	१६	३३	२६
१४	३६	२४	१७	३४	२७
१५	८	२५	१८	३५	२८
१६	९	२६	१९	३६	२९

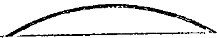
जे बीश–पचीस जेटली प्रतिओ जोवामां आवी तेमांथी चार प्रतिओमांथी पाठभेदो लेवामां आव्या छे। ते प्रतिओनो परिचय आ रीते छे:—

१. फोटोस्टेटिक कॉपी नं. ३ नी प्रति १२ पत्रनी छे। तेनां पाठातरो J संज्ञाथी लेवाम आव्यां छे।

२. फोटोस्टेटिक कॉपी नं. ४ 'नमस्कारव्याख्यानटीका'नी ५० पत्रनी आ प्रतिमां ४६ मा पत्रमां आ स्तोत्र आपवामां आव्युं छे। तेना पाठांतरो S संज्ञाथी लीधां छे। आ प्रतिना पाठ अने गाथाक्रमने आदर्श पाठ राख्यो छे।

३. प्राचीन जैन साहित्योद्धार ग्रंथावली–जैन स्तोत्र संग्रह भा. १ प्रकाशक: श्री साराभाई मणिलाल नवाब, अमदावाद वि. सं. १९८९–मांथी जे पाठांतरो लीधा ते P संज्ञाथी सूचव्या छे।

४. विधिमार्गप्रपा, कर्ता: श्रीजिनप्रभसूरि, प्रका० श्रीजिनदत्तसूरि–प्राचीन पुस्तकोद्धार फंड, सुरत, वि. सं. १९९७ मांथी मळेलां पाठांतरो V संज्ञाथी नोंध्यां छे।



[१३]

श्रीभद्रगुप्तस्वामिप्रणीत

पञ्चनमस्कारचक्रोद्धारविधिः।

[पञ्चपरमेष्ठिचक्र, वर्धमानचक्रं वा]

['अरिहाणादि' स्तोत्रगतस्य वर्धमानचक्रस्योद्धारविधिर्लिख्यते ।]

*

अष्टारमष्टवलय पञ्चनमस्कारचक्र भवति। चक्रतुम्बे [साधक[१]]नामगर्भ 'अर्हं' इत्येतदक्षर लिखेत्। 'ॐ नमो अरहताण, ॐ नमो सिद्धाण, ॐ नमो आयरियाण, ॐ नमो उवज्झायाण' एतत् पदचतुष्टयमराणा मध्ये लिखेत्।

'पाशा ऽङ्कुशा-ऽभय-वरदा' (ऑं क्रौं ह्रीं श्रीं) अनुक्ता अपि अरान्तरेषु लिख्यन्त इत्युपदेशः।

'ॐ नमो लोए सव्वसाहूण स्वाहा' इति प्रथमवलये लिखेत्॥ [१]

'ॐ नमो चत्तारि मगल–अरहंता मगल, सिद्धा मंगल, साहू मगल, केवलिपन्नत्तो धम्मो मगलं। चत्तारि लोगुत्तमा–अरहता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपन्नत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरण पवज्जामि–अरहते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरण पवज्जामि, साहू सरण पवज्जामि, केवलिपन्नत्त धम्म सरण पवज्जामि स्वाहा।' एतद् द्वितीयवलये लिखेत्॥ [२]

'ॐ नमो भगवओ वद्धमाणसमिस्स जस्स [वरधम्म]चक्क जलत गच्छइ आयासं पायालं लोयाण भूयाण जूए वा रणे वा रायगणे वा वारणे बधणे मोहणे थभणे सव्वसत्ताणं अपराजिओ भवामि स्वाहा।'

अनुवाद।

१ पचनमस्कारचक्र आठ आरा अने आठ वलय(वर्तुल)नु बने छे। आ चक्रना मध्य भागमा–गर्भमा 'अर्हं' एवा अक्षरो लखवा।

'ॐ नमो अरहताण, ॐ नमो सिद्धाण, ॐ नमो आयरियाण', अने 'ॐ नमो उवज्झायाण' ए चार पदो आराओनी मध्यमा लखवा।

'पाश' (ऑं), 'अकुश' (क्रौं), 'अभय' (ह्रीं), अने 'वरद' (श्रीं) जो के अहीं स्पष्टपणे कहेला नथी तो पण विदिशाओमा लखवा एवो सप्रदाय–आम्नाय छे।

'ॐ नमो लोए सव्वसाहूण स्वाहा' ए प्रमाणे प्रथम वलयमा लखवु।

'ॐ नमो-चत्तारि मगल° °स्वाहा।' आ प्रमाणे बीजा वलयमा लखवु।

'ॐ नमो भगवओ वद्धमाणसामिस्स° °स्वाहा।' आ मत्र सर्व कर्म (षट्कर्म)

---

१ 'श-वरदा-ऽमयदा' J। २ 'विदिगरान्तरेषु' J। ३ '°श कस्यापि।' J। ४ अस्मिन् विधौ V आदर्शे सर्वत्र 'वल्ये, वलय' इति पाठे 'वल्के, वलक' इति पाठो दर्शित। ५ 'जस्स एयं चक्कं' V। ६ 'चल्त' J। ७ 'पायाल सयलं महिमंडल पयासतं लोयाण' JV। ८ 'सव्वजीवसत्ताण' J। ९ 'भवउ' J।

सर्वकर्मकरोऽयं मन्त्रः[1] । स्तम्भन-मोहन-शान्तिक-पौष्टिक-वशीकरणादिष्[2]वन्येष्वप्युपसर्गेष्वयमेव पठितव्यः । तृतीयवलये लिखेत् । [३]

'ॐ नमो–थंभेइ जलं जलणं चिंति[3]यमित्तो वि पंचनवकारो ।
अरि-मारि-चोर-राउल-घोरुवसग्गं पणासेइ ॥ स्वाहा ॥'

स्तम्भनक्रिया योजनशतादपि । चतुर्थवलये लिखेत् ॥ [४]

'ॐ नमो–अट्ठेव य अट्ठसयं अट्ठसहस्सं च अट्ठकोडीओ ।
रक्खंतु मे सरीरं देवासुरपणमिया सिद्धा ॥ स्वाहा ॥"

एषा आत्मरक्षाविद्या पञ्चमवलये लिखेत् ॥ [५]

'ॐ नमो[4] अरहंताणं तिलोयपुज्जो य संथुओ भयवं ।
अमर-नररायमहिओ अणाइनिहणो सिवं दिसउ ॥ स्वाहा ॥'

एषा सिद्धविद्या षष्ठवलये लिखेत् ॥ [६]

'ॐ नमो सिद्धाणं–
तव-नियम-संजमरहो पंचनमुक्कारसारहिनिउत्तो ।
नाणतुरंगमजुत्तो नेइ पुरं परमनिव्वाणं ॥ स्वाहा ॥'

एषा मोक्षविद्या सप्तमवलये लिखेत् ॥ [७]

'ॐ धणु धणु महाधणु महाधणु स्वाहा ।'

करनारो छे । स्थंभन, मोहन, शांतिक, पौष्टिक, वशीकरण आदिमां तेम ज बीजा एवा उपसर्गोमां आ ज मंत्र भणवो । ते मंत्र त्रीजा वलयमां लखवो ।

ॐ नमो थंभेइ०......०स्वाहा ।' आ मंत्रथी सो योजन सुधी स्तंभन क्रिया थाय छे, तेने चोथा वलयमां लखवो ।

'ॐ नमो अट्ठेव०.......०स्वाहा ।' आ 'आत्मरक्षा' नामनी विद्या पांचमा वलयमां लखवी ।

'ॐ नमो अरहंताणं अट्ठ०......०स्वाहा ।' आ 'सिद्धविद्या' छट्ठा वलयमां लखवी ।

'ॐ नमो सिद्धाणं तव०......०स्वाहा ।' आ 'मोक्षविद्या' सातमा वलयमां लखवी ।

'ॐ धणु धणु महाधणु महाधणु स्वाहा ।' आ मंत्रने मार्गमां बाण सहित धनुष आलेखीने, तेने डाबा पगथी ओळंगीने, डाबी तरफ जवाथी आयुध-शस्त्रनुं स्तंभन थाय छे अने चोरनो भय लागतो नथी । आ 'आयुधस्तंभनविद्या' आठमा वलयमां लखवी ।×

---

१ अस्य सर्वकर्मकरमन्त्रस्याक्षरप्रमाणं ७४ निर्दिष्टमेतावता टिप्पणगतपाठो न सम्यगाभाति । २ °दि पुन्येषूप° v । ३ 'व्यमत्तो वि' v । ४ अट्ठविहकम्ममुक्को तिलोय° v ।

× 'नमस्कारलघुपंजिका' [ह० लि० प्रतिनी नकल जै० सा० वि० मं० ना संग्रहमां छे, ते]मां आ विद्यानुं विशेष स्पष्टीकरण नीचे मुजब मळे छे :—

आ विद्यानी क्रिया—कायोत्सर्गपूर्वक आ मंत्रनो १०८ के १००८ वार जाप करवो, अने मार्गमां बाण सहित धनुष् आलेखी, डाबा पग वडे चालवानुं शरू करी मौनपणे जवुं, आथी रस्तामा चोरनो भय लागतो नथी अने संग्राममा आयुध-शस्त्रने थंभावे छे ।

पथि सशरं धनुरालिख्य वामपादेनाक्रम्य वामपार्श्वेन गम्यते, आयुधस्तम्भो भवति, चौरभय न भवति । आयुधस्तम्भविद्याऽष्टमवलये लिखेत् ॥ [८]

अधुना वलयानामष्टसु दिक्षु बहिः षोडशदल पद्म लिखेत् । दलेषु षोडशस्वरा लिख्यन्ते— 'अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ।'

एतेषामुपरि षोडशदलेषु षोडशविद्यादेवीनामानि समन्त्रबीजानि स्थाप्यन्ते । तद् यथा —

१. 'ॐ यॉं रोहिण्यै अँ नमः ।'	२. 'ॐ रॉं प्रज्ञप्त्यै आँ नमः ।'
३. 'ॐ लॉं वज्रशृङ्खलायै इँ नमः ।'	४. 'ॐ वॉं वज्राङ्कुश्यै ईं नमः ।'
५. 'ॐ शॉं अप्रतिचक्रायै उँ नमः ।'	६. 'ॐ षॉं पुरुषदत्तायै ऊँ नमः ।'
७. 'ॐ सॉं काल्यै ऋँ नमः ।'	८. 'ॐ हॉं महाकाल्यै ॠँ नमः ।'
९. 'ॐ यूँ गौर्यै ऌँ नमः ।'	१०. 'ॐ रूँ गान्धार्यै ॡँ नमः ।'
११. 'ॐ लूँ सर्वास्त्रमहाज्वालायै एँ नमः ।'	१२. 'ॐ वूँ मानव्यै ऐँ नमः ।'
१३. 'ॐ शूँ वैरोट्यायै ओँ नमः ।'	१४. 'ॐ षूँ अच्छुप्तायै औँ नमः ।'
१५. 'ॐ सूँ मानस्यै अं नमः ।'	१६. 'ॐ हूँ महामानस्यै अः नमः ।'

उपरि दलमध्ये—'ह्रूँ ह्रॉं ह्रिँ ह्रीँ ह्रुँ ह्रूँ हृँ हॄँ हॢँ हॣँ हेँ हैँ हॉं हौँ हँ हः ।'

आठ वलयोनी आठ दिशानी बहार सोळ पांखडीवाळु कमल आलेखवु । ए पांखडीओमां सोळ स्वरो लखवा —'अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ।'*

एना उपर सोळ पांखडीमां सोळ विद्यादेवीओना नाम मंत्र अने बीज सहित स्थापवा । ते आ प्रमाणे —

प्रथम पांखडीमां १ 'ॐ यॉं रोहिण्यै अँ नमः ।' थी सोळमी पांखडीमां १६ 'ॐ हूँ महामानस्यै अः नमः' सुधी मंत्रो लखवा । तेना उपर 'ह्रूँ ह्रॉं ह्रिँ ह्रीँ ह्रुँ ह्रूँ हृँ हॄँ हॢँ हॣँ हेँ हैँ

---

१ मूलप्रतौ षोडशविद्यादेवीनां मन्त्रास्त्वशुद्धरूपेण लिखिता एतत्प्रकारेणोपलभ्यन्ते-

'ॐ नमो रोहिणी ह्रीँ फट् स्वाहा ॥ १ ॥	ॐ नमो पन्नत्ती ह्रीँ फट् स्वाहा ॥ २ ॥
ॐ नमो वज्रशृङ्खला ह्रँ फट् स्वाहा ॥ ३ ॥	ॐ नमो वज्राङ्कुशी क्रौँ ह्रीँ फट् स्वाहा ॥ ४ ॥
ॐ नमो अप्रतिचक्रे हूँ हूँ फट् स्वाहा ॥ ५ ॥	ॐ नमो पुरुषदत्ते हुं हु क्षूं फट् स्वाहा ॥ ६ ॥
ॐ नमो काली अम्म हु फट् स्वाहा ॥ ७ ॥	ॐ नमो महाकाली रू धू फट् स्वाहा ॥ ८ ॥
ॐ नमो गौरी रसोय फट् स्वाहा ॥ ९ ॥	ॐ नमो गान्धारी क्ष्ौँ फट् स्वाहा ॥ १० ॥
ॐ नमो सर्वास्त्रमहाज्वाले ह्रसू फट् स्वाहा ॥ ११ ॥	ॐ नमो मानवी स्यूँ फट् स्वाहा ॥ १२ ॥
ॐ नमो वैरोट्या चां फट् स्वाहा ॥ १३ ॥	ॐ नमो अच्छुप्ते ह्रूँ क्षू फट् स्वाहा ॥ १४ ॥
ॐ नमो मानसी क्षूँ ह्रीँ फट् स्वाहा ॥ १५ ॥	ॐ नमो महामानसी हुळ हु फट् स्वाहा ॥ १६ ॥'

* बीजी प्रतिमां आगळनो पाठ आ प्रमाणे मळे छे —

तेनी उपर प्रथिनी वचमां पाश, अंकुश, अभय अने वरद लखाय छे । उपर त्रिशूल लखी मध्यरेखाने छोडी 'क' थी 'ह' सुधीना अक्षरो लखवा अने मध्यरेखामां—'अरिहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय साहू' एम लखवु । स्वरोनी उपर सोळ पत्रवाळा कमळना दरेक पत्रमां सोळ विद्यादेवीनां नामो लखवां । (ए रीते) रोहिणीथी महामानसी सुधी लखी तेमनी उपर सोळ बीजाक्षरो लखवा । चक्रलेखननी आ विधि छे ।

तदुपरि षोडशवीजाक्षराणि—'अरिहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय साहू ।'

चतुर्षु पटकोणेषु—'४ । ८ । १० । २ ॥'

ईशाने—'ॐ इन्द्रभूतये स्वाहा ।

सोमे अवग्गु वग्गु सुमणे सोमणसे तह य महुमहुरे ।
किलि किलि अप्पडिचक्का हिलि हिलि देवीओ सव्वाओ ॥' इति गाथा ।

पूर्वदिशि—'ॐ अग्निभूतये स्वाहा ।'

आग्नेये—'ॐ वायुभूतये स्वाहा । ॐ अ सि आ उ सा हुलु हुलु चुलु चुलु इच्छियं कुरु कुरु स्वाहा ।' तत्रैव—'ॐ व्यक्ताय स्वाहा ।'

दक्षिणे—'ॐ सुधर्मस्वामिने स्वाहा ।'

[नैऋत्ये—'ॐ मण्डिकाय स्वाहा ।' तत्रैव—'ॐ मौर्यपुत्राय स्वाहा ।']

पश्चिमे—'ॐ अकम्पिताय स्वाहा ।' वायव्ये—'ॐ अचलभ्रात्रे स्वाहा ।'

उत्तरतः—'ॐ मेतार्याय स्वाहा ।' पुनरीशाने—ॐ प्रभासाय स्वाहा ।'

'ॐ नमो सव्वसिद्धाणं' पदं वहिश्चतसृषु दिक्षु, अष्टारशिरःकलशेषु ' 'जंभे मोहे जंभे मोहे' अक्षर ८ लेख्याः ।

'ॐ नमो अरहंताणं एहि एहि नंदे महानंदे पंथे वंधे दुपयं, पंथे वंधे चउप्पयं, घोरं आसीविसं वंधे, जाव गंठिं न मुंचामि ।' पश्चिमदिशि लेख्यः ।

ॐ नमो सव्वसिद्धाणं उपरि त्रिरेखमायावीजं '[ह्रीं]' अंते 'क्रौं' इति ।

ह्रौं ह्रैं ह्रँ ह्रूः ' ए मंत्राक्षरो लखवा । तेना उपर 'अ र हं त सि द्ध आ य रि य उ व ज्झा य सा हू' ए सोळ अक्षरो लखवा । पटना चार खूणामां अनुक्रमे ४, ८, १०, २ एम अंको लखवा ।

ईशानखूणामां 'ॐ इन्द्रभूतये स्वाहा' लखवुं, तेमज त्यां 'सोमे अवग्गु०' गाथा लखवी ।

पूर्वदिशामां 'ॐ अग्निभूतये स्वाहा' लखवुं, अग्निखूणामां 'ॐ वायुभूतये स्वाहा' लखवुं । तेमज 'ॐ असिआउसा हुलु हुलु.......'लखवुं, त्यां ज 'ॐ व्यक्ताय स्वाहा' लखवुं ।

दक्षिणदिशामां 'ॐ सुधर्मस्वामिने स्वाहा' लखवुं । नैऋत्यखूणामां 'ॐ मंडिकाय स्वाहा' तथा 'ॐ मौर्यपुत्राय स्वाहा' लखवुं ।

पश्चिमदिशामां 'ॐ अकम्पिताय स्वाहा' लखवुं । वायव्यखूणामां 'ॐ अचलभ्रात्रे स्वाहा' लखवुं । उत्तरदिशामां 'ॐ मेतार्याय स्वाहा' लखवुं । ईशानखूणामां फरी 'ॐ प्रभासाय स्वाहा' लखवुं ।

वहारनी चारे दिशामां 'ॐ नमो सव्वसिद्धाणं' पद लखवुं अने आठ आराना मथाळे कलशमां 'जंभे मोहे जंभे मोहे' ए आठ अक्षरो लखवा । 'ॐ नमो अरहंताणं एहि एहि०..........०मुञ्चामि' पश्चिमदिशामां लखवुं । (आ भागनुं ऊपर जणावेला गणधर-पद लेखनवाळा भाग साथे अनुसंधान समजवुं ।)

'ॐ नमो सव्वसिद्धाणं' पद उपर मायावीज 'ह्रीं'कार थी शरू थती त्रण रेखाओ फरती दोरवी अने तेना छेडे 'क्रौं' वीज लखवुं, तथा गर्भमां 'सम्यग्ज्ञानाय नमः, सम्यग्दर्शनाय नमः' अने

तथा गर्भे—'सम्यग्ज्ञानाय नम, सम्यग्दर्शनाय नम, सम्यक्चारित्राय नम ।' इत्यक्षरैर्वेष्टितमर्हद्बीज कार्यम् ॥

कार्यकारणे तूत्पन्ने, मण्डलमध्यसस्थितम् ।
पूजयेद् य सदा यन्त्र, स देवैरपि पूज्यते ॥

इति यन्त्रम् ॥ [पञ्च]नमस्कारचक्र लेखनविधि ॥

✿

[१] ध्यानविधि ।

विज्जु व्व पज्जलति सव्वेसु वि अक्खरेसु मत्ताओ ।
पचनमुक्कारपए इक्किक्के उवरिमा जाव ॥ १ ॥ [२५]*
ससिधवलसलिलनिम्मल आयारसह च वण्णिय बिंदु ।
जोयणसयप्पमाण जालासयसहस्सदिप्पत ॥ २ ॥ [२६]
सोलससु अक्खरेसु इक्किक्क अक्खर जगुज्जोय ।
भवसयसहस्समहणो जम्मि ठिओ पचनवकारो ॥ ३ ॥ [२७]
जो थुणति हु इक्कमणो भविओ भावेण पचनवकार ।
सो गच्छइ सिवलोय उज्जोयतो दसदिसाओ ॥ ४ ॥ [२८]
पचनमोक्कारपए [सव्वे] अक्खर(रा) सोलसा हुति ।
'अरिहत सिद्ध-आयरिय उवज्झाय-साहू' [एए] ॥ ५ ॥

इदानीं पञ्चबीजानि सकलीकरणकाले ध्यातव्यानि—'अ सि आ उ सा ।'

सम्यक्चारित्राय 'नम ' ए अक्षरोथी वेष्टित 'अर्ह' बीज लखवु ×

कार्य-कारण उत्पन्न थता जे मडलना मध्यभागमा रहेल यत्रनु पूजन करे छे ते देवो वडे पण पूजाय छे । आ प्रमाणे पच नमस्कार चक्रनो लेखनविधि पूरो थयो ।

१ ध्यानविधि ।

ध्यानविधिमा आपेली प्रथमनी चार गाथाओ मूळ 'अरिहाण°' स्तोत्रनी २५, २६, २७ अने २८ मी गाथाओ छे । तेथी तेनो अनुवाद मूळ स्तोत्रमाथी जोई लेवो, अहीं आप्यो नथी । पाचमी गाथानो अनुवाद नीचे प्रमाणे छे —

पचनमस्कारना पदोमा सोळ अक्षरो छे —'अरिहत सिद्ध आयरिय उवज्झाय साहू ।' तात्पर्य के पचपरमेष्ठीचक्रनु आराधन करता आ सोळ अक्षरनु ध्यान धरवानु छे ।

सकलीकरण समये आ पाच बीजो ध्यानमा लेवा —'अ सि आ उ सा ।'

✿ कोष्ठकगताङ्का 'अरिहाण°' स्तोत्रस्य गाथाङ्का विज्ञेया ।

× बीजी प्रतिना आगळनो पाठ आ प्रमाणे मळे छे —मायाबीज 'ह्रीँ' कार वडे वेष्टित करी, क्रौँ बीज वडे पूरा करी, चारेय दिशाओमां एकार अने खूणाओमां यकार लखी, कळशना आकारवाळु वरुणमडल-वर्तुलाकार बनाववो, ते पछी पृथ्वीमण्डल-चतुरस्राकार, यमना लाछनवाळु कपूर, कस्तूरी कुकुम गोरोचन वगेरे (८) सुगधित द्रव्यो वडे सोनानी जातिनी के दर्भनी लेखणीथी यत्र लखवु । पहेला वाग्भव- ऐँ बीज पछी मायाबीज- ह्रीँ बीज अने छेवट 'नम' एम आगळ मत्र पदमा (गाढ लागे ते रीते) लखवु ।

[२] आत्मरक्षा।

[इदानीमात्मरक्षां वक्ष्ये।]

ॐ नमो अरहताणं ह्राँ हृदयं रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।

ॐ नमो सिद्धाणं ह्रीँ शिरो रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।

ॐ नमो आयरियाणं हूँ शिखा रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।

ॐ नमो उवज्झायाणं ह्रौँ एहि एहि भगवति वज्रकवचे वज्रिणि! रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।

ॐ नमो लोए सव्वसाहूण ह्रः क्षिप्र साधय साधय वज्रहस्ते शूलिनि! दुष्टाद् रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।

[३] षट्कर्मकरणविधिः।

वशीकरणम्—

ॐकार चक्रतुम्बे स्थापयेत्। प्रणवमध्ये साध्यनाम दत्त्वाऽऽत्मनाम हकारान्तरितं स्थापयेत्। चक्रावर्त्तनाममुद्रा कृत्वा रक्तवर्ण[पद्म]मागत्य पादयो पतन्तमिव ध्यात्वा, इद मन्त्रबीजं जपेत्. त्रिसन्ध्यमष्टोत्तरशतं गन्ध-धूप-दीपादीन् दत्त्वा, 'ॐ अर्हं असुकं देवदत्तं वशमानय वं स्वाहा॥'

[इति] वशीकरणक्रिया॥

---

२. आत्मरक्षा।

'ॐ नमो अरहताण ह्राँ हृदय रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।' आ पदो बोलतां हृदय पर हाथ मुकवो। 'ॐ नमो सिद्धाण ह्रीँ शिरो रक्ष हुँ फट् स्वाहा।' आ पदो बोलतां ललाटना अग्रभाग पर हाथ मूकवो। 'ॐ नमो आयरियाण हूँ शिखां रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।' आ पदो बोलतां शिखा (माथानी चोटली) पर हाथ मूकवो।

'ॐ नमो उवज्झायाणं ह्रौँ एहि एहि भगवति वज्रकवचे वज्रिणि! रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।' आ पदो बोलता शरीर पर हाथ फेरववो।

'ॐ नमो लोए सव्वसाहूण ह्रः क्षिप्र साधय साधय वज्रहस्ते शूलिनि! दुष्टाद् रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा।' आ पदो बोलतां हाथ फेरववो।

३. षट्कर्मकरणविधि

१. वशीकरणक्रिया—

ॐकारने चक्रना मध्यभागमां स्थापवो, अने तेनी वचमा साध्यनु नाम आपी पोतानुं नाम हकारनी वचमां लखवु। पछी 'चक्रावर्त' नामनी मुद्रा करी रक्तवर्णवाळु पद्म आवीने पगे पडतुं होय तेम ध्यान करी गंध, धूप अने दीप वगेरेथी पूजन करी सवारे, बपोरे अने सांजे एम त्रण वखत 'ॐ अर्हं असुकं* देवदत्त वशमानय वं स्वाहा' आ मन्त्रबीजनो १०८ वार जाप करवो।

* 'असुक' शब्द बोलवा माटे नथी पण त्या जे व्यक्तिने वश करवी होय के जे व्यक्तिना निमित्ते शांति आदि कर्मो करवा होय तेनुं 'असुक देवदत्तं' ने बदले नाम सूचववा वपरायेलो छे।

शान्तिकक्रिया—

'ॐ अर्हँ अमुक देवदत्त वशमानय वँ स्वाहा।' श्वेतवर्ण पद्म सपुटीकृतमिव ध्यात्वा, सुरभी-मुद्रा कृत्वा, गन्धादीन् दत्त्वा, त्रिसन्ध्य [मन्त्र] १०८ शताष्टकमावर्त्तयेत॥

[इति] शान्तिकक्रिया॥

पौष्टिकक्रिया—

'ॐ अर्हँ अमुक देवदत्त सँ स्वाहा।' साध्य रक्तवर्ण वज्रमयशरीरमिव ध्यात्वा, पद्ममुद्रा कृत्वा गन्धादि दत्त्वा, त्रिसन्ध्य मन्त्र शताष्टक(१०८)मावर्त्तयेत्॥

[इति] पौष्टिकक्रिया॥

स्तम्भनक्रिया—

'ॐ अर्हँ अमुक देवदत्त लँ स्वाहा।' मयूरग्रीवावर्ण वज्रलान्छन पृथियामवष्टभ्यमानमिव साध्य ध्यात्वा, वज्रमुद्रा कृत्वा, गन्धादि दत्त्वा त्रिसन्ध्य मन्त्र शताष्टकमावर्तयेत्॥

[इति] स्तम्भनक्रिया॥

[पञ्चम षष्ठ च कर्म उच्चाटन मारण च ते निरर्थकत्वान्नात्र निर्दिष्टे।]

---

१ शांतिकक्रिया—

[ॐकारने चक्रना मध्यभागमा स्थापवो अने तेना वचमा साध्यनु नाम आपी पोतानु नाम हकारना वचमा लखवु।] 'ॐ अर्ह अमुक देवदत्त 　　　　'स्वाहा' आ मत्र बीज वडे श्वेत वर्णनु कमल सपुटित करेलु होय तेम ध्यान करी, सुरभिमुद्रा करी गध वगेरेथी पूजन करवु अने मत्रनो त्रण सध्याए १०८ वार जाप करवो।

२ पौष्टिकक्रिया—

[ॐकारने चक्रना मध्यभागमा स्थापवो अने तेना वचमा साध्यनु नाम आपी पोतानु नाम हकारना वचमा लखवु।] 'ॐ अर्ह अमुक देवदत्त स स्वाहा' आ मत्र बीजवडे सध्या जेवा लाल रगवाळो अने वज्रमय शरीरवाळो साध्य छे तेम ध्यान करी पद्ममुद्रा करी गध वगेरेथी पूजन करवु अने मत्रनो त्रणे सध्याए १०८ वार जाप करवो।

४ स्तभनक्रिया—

[ॐकारने चक्रना मध्यभागमा स्थापवो अने तेना वचमा साध्यनु नाम आपी पोतानु नाम हकारना वचमा लखवु।] 'ॐ अर्हँ अमुक देवदत्त ल स्वाहा' आ मत्रबीज वडे मोरनी डोक जेवा वर्णवाळु वज्रना लाछनथी युक्त, अने भूमिमा स्तब्ध करतु होय ए रीते साध्यनु ध्यान करी, वज्रमुद्रा करी, गध वगेरेथी पूजा करी मत्रनो त्रणे सध्याए १०८ वार जाप करवो।

(पाचमो स्तभननो अने छट्ठो मारणनो विधि निरर्थक होवाथी जणावेलो नथी।)

[४] पल्लव-काल-वर्ण-मण्डल-दिग्विचारः ।

उच्चाटे फट् १, द्वेषे हुँ २, मारणे घे ३, वषट् वश्ये ४, शान्तिक-पौष्टिकयोः स्वाहा, स्वधा ५ ॥

[पल्लवाः]

पूर्वाह्णे वशीकरणं, मध्यरात्रे तु शान्तिकम् ।
पौष्टिकं पश्चिमाह्णे च, मध्याह्ने स्तम्भनक्रिया ॥
उच्चाटनमपराह्णे सन्ध्यायां मारणं मतम् ।
. ...कर्मकालं विजानीयात् ॥ [कर्मकालम्]
ध्यायेत् सिन्दूरवर्णाभं, वश्याकर्षणकर्म्मणि ।
मारणे कृष्णवर्णं तु, शान्तौ पुष्टौ सितं मतम् ॥
मयूरग्रीवासंकाशं, स्तम्भने चिन्तयेत् सदा ॥ [वर्णम्]

वशीकरणेऽग्निमण्डलमध्यस्थम्, शान्तिक-पौष्टिकयोर्वारुणमण्डलमध्यस्थम्, स्तम्भमोहमारणमाहेन्द्र-मण्डलमध्यस्थम्, कुर्याच्चक्रं च साध्यं च ॥

[इति] मण्डलविधिः ॥

शान्तिकं पश्चिमायां मुखं नैर्ऋत्ये च पौष्टिकम् ।
कुर्यादुच्चाटनं वायव्येऽन्तके मारण तथा ॥
वश्यं चोत्तराभिमुखे, विद्वेषेऽनि(पे ह्यन)ले तथा ॥
पूर्वायां स्तम्भन कुर्यादाकृष्टि हरसंज्ञि(ज्ञ)के ॥

इति दिग्विधिः ॥

---

४. पल्लव, काळ, वर्ण, मंडल अने दिशाओ संबंधी विचार ।

पल्लव—उच्चाटन-प्रयोगमां 'फट्', द्वेषप्रयोग (विद्वेषण)मा 'हु', मारण-प्रयोगमा 'घे', वशीकरण प्रयोगमां 'वषट्', शाति अने पुष्टिना प्रयोगमां 'स्वाहा' अने 'स्वधा', आ रीते पल्लवो जाणवा।

कर्मकाल—दिवसना प्रथम अर्धाभागमा वशीकरण, मध्यरात्रिए शांतिक, दिवसना बीजा अर्धाभागमा पौष्टिक, मध्याह्ने स्तंभन, दिवसना त्रीजा प्रहरमा उच्चाटन अने साजे मारण-प्रयोग; आ रीते कर्मो करवानो समय जाणवो।

वर्ण-रंग—वशीकरण अने आकर्षणमा सिन्दूरना जेवो लाल रग, मारणमा काळो रग, शाति अने पुष्टिमा श्वेत रग अने स्तभनमां मोरनी डोक जेवो नील रंग चिंतववो।

मंडल—वशीकरणमां अग्नि-मडलनी वच्चे, शाति अने पुष्टिमा वारुण-मंडलनी वच्चे, स्तंभन, मोहन अने मारणना प्रयोगमां माहेन्द्र-मंडलनी वच्चे चक्र अने साध्य नाम राखवुं।

दिशा—शांतिककर्ममा पश्चिमदिशा, पौष्टिककर्ममा नैर्ऋत्यकोण, उच्चाटनकर्ममां वायव्यकोण, मारणकर्ममा दक्षिणदिशा, वशीकरणकर्ममा उत्तरदिशा, विद्वेषणकर्ममा अग्निकोण, स्तंभनकर्ममां पूर्वदिशा अने आकर्षणकर्ममां ईशानकोण जाणवो।

[५] जापविधिः ।

अङ्गुष्ठजाप मोक्षार्थी (र्थं), अभिचारे तु तर्जनी ।
मध्यमा धनकामा तु, शान्ति कुर्यादनामिका ॥
आकर्षणे कनिष्ठा तु, धरेत्मन्त्र विचक्षण (?) ।
विशेषत कुर्याच्च ॥

[६] ध्यानविधि. ।

प्रथममात्मान पर्यङ्कासनेन सहस्रदलपद्मोपरि स्थित पञ्चेन्द्रियनिरुद्ध पञ्चमहाव्रतयुक्त पञ्चसमिति-समित त्रि[करण]गुप्तम, अष्टादशशीलाङ्गसहस्रभूषित ध्यात्वा, जया विजया-अजिता-अपराजिता-जम्भा-मोहा-स्तम्भा-स्तम्भिन्य , एताभि देवताभि सुवर्णमयकलशैः क्षीराब्धिजलभृतै शिरसि सितपुण्डरीकप्रच्छादितै स्नापयन्तीभिरात्मान ध्यात्वा—'ॐ नमो अरहताण अशुचि शुचिर्भवामि स्वाहा ।' [V] आदर्शयोरेतत् पाठान्तरमप्युपलभ्यते—'ॐ नमो विमलाय विमलचित्ताय प्रा (प्वा) ह्रा क्ष्वीं अशुचि शुचिर्भवामि स्वाहा ।'] इति स्नात्वा, पश्चात् सकलीकरण क्रियते ।

ततश्चोत्तप्तसुवर्णवर्णं समवसरणस्थमष्टमहाप्रातिहार्यसमन्वित चतुस्त्रिंशदतिशयोपेतमर्हद्भट्टारक द्वात्रिंशतसुरेन्द्रै पूज्यमान श्रीवर्द्धमानस्वामिनमभिसञ्चिन्त्य गणधराह्वान कृत्वा वर्द्धमानमन्त्रमष्टोत्तरसहस्र जपेत् ॥

इति श्रीवर्द्धमानचक्रोद्धारविधि ॥

*

---

५ जापविधि ।

मोक्षनी इच्छा राखनारे अंगुठाथी, अभिचारनी इच्छावाळाए तर्जनीथी, धननी कामनावाळाए मध्यमाथी, शान्तिनी इच्छावाळाए अनामिकाथी अने आकर्षणनी अभिलाषावाळाए कनिष्ठा आंगळीथी माळा फेरववी ।

दरेक कर्म करता पहेला (त्रियासण, एकासण, नीवि, आयंबिल के उपवास आदि) कोइ पण विशेष तप करवु ।

६ ध्यानविधि ।

पछी पोताने पर्यकासनमा, हजार पांखडीवाळा कमळ उपर बेठेलो, पांच इन्द्रियोने वश करनार, पंच महाव्रतथी युक्त, पांच-समिति अने त्रण गुप्तिओनु पालन करवामा तत्पर, अढार हजार शीलांगथी विभूषित चितववो, जया-विजया वगेरे आठ देवीओ क्षीर समुद्रना जळथी भरेला अने उपरना भागमा श्वेत कमळोथी आच्छादित एवा सुवर्णमय कळशो वडे पोताने अभिषेक करती होय तेम पोते ध्यान करवु ।

'ॐ नमो अरहताण अशुचि शुचिर्भवामि स्वाहा ।' आ मत्र वडे स्नान करी पछी सकलीकरण (एक जातनी मांत्रिक क्रिया) करवु छे। ते पछी तपावेला सोनाना जेवा वर्णवाळा, समवसरणमा स्थित, आठ महाप्रातिहार्य अने चोत्रीस अतिशयोथी युक्त तथा बत्रीस सुरेन्द्रो जेमनी पूजा करी रह्या छे, एवा अर्हन् भट्टारक श्रीवर्धमानस्वामीनु चिंतन करी, गणधर भगवंतोनु आह्वान करी वर्धमानमंत्रनो १००८ वार जाप करवो ।

इति वर्धमानचक्रोद्धारविधि ।

०

---

१ (अथवा [illegible])

२ (बीजी प्रतिमां [illegible] आ मंत्र आ प्रकारे छे — ॐ नमो विमलाय विमलचित्ताय [illegible] अशुचि शुचिर्भवामि स्वाहा ।)

[७] मानसीपूजा

'ॐ राँ' भूमिशोधनम्। 'यॉ रॉ लॉ वॉ मॉ' उदकम्, अष्टोत्तरशतवारान्।
'सरसुंसः हरहुंहः' चन्दनम्। 'ॐ [स्तुं] तन्दुलाः १०८।
'ऑ लाँ ईं वॉ कुं (जं ?) कॉ खॉ गाँ घाँ स्वाहा' पुष्पाणि।
'चॉ छॉ जॉ झॉ' नैवेद्यम। 'क्षिप ॐ स्वाहा' धूपः।
'ॐ ह्रीँ' दीपः। 'ॐ ह्रीँ रक्ते रक्ते महारक्ते ह्सौँ ह्स्कलीँ ह्म्ल्व्र्युं शासनदेवी (वि)! एहि एहि अवतर अवतर स्वाहा आह्वानमन्त्र.।
'ॐ श्वेते श्वेते महाश्वेते महाश्वेते जये विजये अजिते अपराजिते स्वाहा' विसर्जनमन्त्रः। जापः १० सहस्रः, होमः १ सहस्रः, मूलमन्त्रः ('ॐ अर्हं नमः'), जापः लक्ष ९, शुभवारे शुभहोराया शुभलग्ने शुभयोगे शुभस्थाने ध्येय मोक्षकाङ्क्षिभिः॥

इति महासैद्धान्तिकभद्रगुप्तस्वामिना निजशिष्यश्रीवयरस्वामि-
वचनेन बृहद्वृत्तेरुद्धृता श्रीपरमपञ्चपरमेष्ठिमहामन्त्र-
यन्त्रचक्रवृत्तिरिय समाप्ता॥

---

७ मानसीपूजा

'ॐ रॉ'—आ मत्रथी भूमिशोधन करवु।
'यॉ रॉ लॉ वॉ मॉ'—आ मत्रथी १०८ वार जलस्नान करावबु।
'सरसुस. हरहुंह.'—आ मत्रथी चंदननी भावना करवी।
'ॐ स्तुं'—आ मंत्रथी १०८ वार अक्षत चढाववानी भावना करवी।
'ऑ लॉ॰'—वगेरे मत्रथी पुष्पोनी भावना करवी।
'चॉ छॉ॰'—वगेरे मत्रथी नैवेद्यनी भावना करवी।
'क्षिप ॐ स्वाहा'—आ मंत्रथी धूपनी भावना करवी।
'ॐ ह्रीँ'—आ मंत्रथी दीपकनी भावना करवी।
'ॐ ह्री रक्ते॰'—वगेरे मत्रथी आह्वाननी भावना करवी।
'ॐ श्वेते श्वेते महाश्वेते॰'—वगेरे मत्रथी विसर्जननी भावना करवी।

जाप १०००० दसहजार; होम १००० एक हजार; मूळ मत्र 'ॐ अर्हं नमः' नो जाप ९००००० नवलाख, शुभवार, शुभ होरा, शुभ लग्न, शुभ योग, शुभ स्थान (आदि बराबर विचारीने) मोक्षनी अभिलाषावाळाए ध्यान करवुं जोईए।

महासैद्धान्तिक श्रीभद्रगुप्तस्वामीए पोताना शिष्य श्रीवज्रस्वामीना कहेवाथी (पोते रचेली) बृहद्वृत्तिमाथी (साररूप) उद्धृत करेली 'पचपरमेष्ठिमहामत्रयन्त्र-चक्रवृत्ति' समाप्त थई।

परिशिष्ट

(ध्यान माटे बीजी विधि 'नमस्कार लघुपंजिका' मां आ प्रकारे विस्तारथी आपेली छे —)

एकान्तमां पर्यंकासने बेसी साधक पूर्व दिशामां के उत्तर दिशामां पोतानुं मुख राखी नासिकाना अग्रभाग उपर दृष्टि राखे। पहेला पूरक, पछी कुंभक अने छेल्ले रेचक करे। पछी मस्तकभागमां पापरजने एकत्र करी घुमाडानी शिखारूपे पापरज दूर थई रही छे एम चिंतवे। पछी पोते कर्मरूपी इंधणना ढगला उपर बेठेलो होय तेम मानी, तेनी नीचे दीपनी शिखाना आकारवाळु जाज्वल्यमान 'र' (अग्निबीज) चिंतवे। पछी पोताना हृदयमां पोताने स्वदेहाकारे स्थापीने 'र'कारनी नीचे 'य'कारनुं वायुरूप चिंतन करी, ते वायु(बीज)थी प्रेरित अग्निबीज वडे पोतानुं शरीर बळतुं होय तेम विचारी, केवळ आत्मा ज पूर्व देहाकारे बाकी रह्यो होय अने बीजुं बधुं बळीने भस्मसात् थयुं होय तेम विचारी, ते आत्मानी उपर 'वँ' बीज आकाशमां अधोमुख थई मेघरूपे अमृतने वरसावतुं होय एम चिंतवे। पछी वर्षाजळथी थयेल सरोवरमां पोताने शमित चिंतवे। पछी ते सरोवरमां एक पत्रवाळा, विकासने पामेला कमळनी कर्णिकामां अमृतनी वर्षाथी शुद्ध थयेल पोताना आत्माने उत्कृष्ट वर्णवाळो पर्यंकासने स्थित चिंतवे। पछी फरीथी शुद्ध थवा माटे हृदयमां सोळ पांखडीवाळा कमळनुं चिंतन करी, तेना पर अक्षतोथी नंद्यावर्त बनावी (चिंतवी) तेना पर सर्व लक्षणथी युक्त अने आठ महाप्रातिहार्य तथा चोत्रीश अतिशयोथी युक्त एवा श्री वर्धमानस्वामीनुं चिंतन करे। पछी पद्मनी केसराओमां मरुदेवी आदि चोवीश तीर्थंकरोनी माताओने स्थापन करे अने पत्रोमां रोहिणी आदि सोळ विद्यादेवीओने स्थापन करे। पछी 'अरिहंत' अंगूठाना, 'सिद्ध' तर्जनीना, 'आयरिय' मध्यमाना, 'उवज्झाय' अनामिकाना अने 'साहु' कनिष्ठिकाना पर्व उपर एम क्रमे न्यास करे। पछी अ–सि–आ–उ–सा क्रमथी अंगूठा आदि उपर स्थापी पछी अंगुष्ठादि पांच आंगळीओने अनुक्रमे—

ॐ नमो अरहंताणं हाँ स्वाहा ॥
ॐ नमो सिद्धाणं हीँ स्वाहा ॥
ॐ नमो आयरियाणं हूँ स्वाहा ॥
ॐ नमो उवज्झायाणं हैँ स्वाहा ॥
ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं हौँ स्वाहा ॥

—ए मंत्रो वडे त्रणवार अभिमंत्रित करे। पछी ते मंत्रित आंगळीओ वडे ललाट आदि पांच प्रदेशोने जमणी बाजुथी क्रमशः ललाट, शिखा, जमणा काननुं मूळ, गरदनी पाछळनो भाग, डाबा काननुं मूळ, एम अभिमंत्रित करी, फरी ते ज विद्यांगुलिकाथी—एटले आंगळीओ जे विद्याथी अभिमंत्रित करी होय ते आंगळीओथी हृदय, शिर, शिखा, कवच अने अस्त्र वगेरेने त्रण वार बन्ने हाथो वडे कवच आपवो—अभिमंत्रित करवा। पोताने विद्यारूप चिंतवी साधक सघळा कर्मोने मारी शके छे, एम सवारे, बपोरे अने सांजे मंत्रक्रिया करवी जोईए। आवी भावनावाळा साधकने भूत, यक्ष, मेली पशुपक्षीओ, ग्रहो अने शाकिनी वगेरे पीडा करतां नथी अने तेनी आज्ञानुं उल्लंघन करतां नथी। तेनुं बधुं पाप नाश पामे छे। आ रीते सकलीकरण करीने 'पंचनमस्कारचक्र' चारेय बाजुथी देदीप्यमान, अनेक कोटि सूर्यना तेजवाळुं पोताना मस्तक उपर रहेलुं छे, एम चिंतवी मार्ग ज्यां जाय त्यां सर्व उपद्रव, चोर

शून्यं—चिन्ताया उपरमः। द्रव्यशून्यं क्षिप्तचित्तादिना द्वादशधा—

"खित्ते[1] दित्तुम्मत्ते[2][3] राग[4]-सिणेहाइभय[5][6]महऽव्वत्ते[7]।
निद्दाइ[8][12]-पंचगेणं बारसहा दव्वसुन्नं ति ॥ २ ॥"

भावतो व्यापारयोग्यस्यापि चेतसः सर्वथा व्यापारोपरमः ॥ ३ ॥

परमशून्यं—त्रिभुवनविषयव्यापि चेतो विधाय एकवस्तुविषयतया संकोच्य ततस्तस्मादप्यपनीयते ॥ ४ ॥

---

३. शून्य :—जेमां चिंतननो उपरम (अभाव) होय तेने 'शून्य' कहेवामां आवे छे। तेना बे भेद छे—द्रव्यशून्य तथा भावशून्य। तेमा द्रव्यशून्यना 'क्षिप्तचित्त' वगेरे नीचे मुजब १२ भेदो छे: *(१) क्षिप्त[1], (२) दीप्त[2], (३) उन्मत्त[3], (४) राग, (५) स्नेह, (६) अतिभय, (७) अव्यक्त[4], (८) निद्रा, (९) निद्रानिद्रा, (१०) प्रचला, (११) प्रचलाप्रचला, (१२) स्त्यानर्द्धि। चित्त, व्यापारने योग्य होवा छता तेना व्यापारनो जे सर्वथा उपरम करवामां आवे ते 'भावशून्य' कहेवाय छे।

४. परमशून्य :—चित्तने प्रथम त्रण भुवन रूपी विषयमां व्यापक करीने पछी तेमांथी एक वस्तुमां संकोची लईने पछी ते एक वस्तुमांथी पण चित्तने खसेडी लेवामा आवे ते 'परमशून्य' कहेवाय छे।

---

* क्षिप्तचित्त आदि अवस्थाओमा चित्त शून्य थई जतुं होवाने लीधे ए बार अवस्थाओने अहीं 'द्रव्यशून्य' तरीके जणावेली छे।

श्री ओघनिर्युक्तिनी (आगमोदयसमिति प्रकाशित) द्रोणाचार्यरचित टीकामा (पृ १६२ मा) क्षिप्तचित्त, दीप्तचित्त, मत्त तथा अव्यक्त मनुष्योनु स्वरूप केवा प्रकारनुं होय छे ते जणावेलुं छे। जो के त्या ए वात बीजा ज प्रसगने अनुलक्षीने छे, छता त्या 'क्षिप्तचित्त' आदिनी करेली व्याख्या अहीं क्षिप्त आदिनो अर्थ समजवामां उपयोगी होवाथी नीचे आपी छे।

१. 'क्षिप्त चित्त यस्य द्रविणाद्यपहारे सति चित्तविभ्रमो जातः।'—धन आदि चोराई जवाथी जेना चित्तमा विभ्रम उत्पन्न थयो होय ते 'क्षिप्तचित्त' कहेवाय छे।

२ 'दीप्त चित्त यस्यासकृच्छत्रुपराजयाद्युत्कर्षेण अतिविस्मयाभिभूतस्य चित्तह्रासो जात ।'—शत्रु उपर वारवार विजय मेळववा आदि कारणे प्राप्त थयेला उत्कर्षथी अतिविस्मय थवाने लीधे जेना चित्तनो ह्रास थयो होय ते 'दीप्तचित्त' कहेवाय छे।

३ 'मत्त सुरया पीतया'—दारु पीवाथी जे मत्त थयो होय ते 'मत्त' कहेवाय छे।

४ जेनामा समजण आवी नथी तेने 'अव्यक्त' समजवो।

भगवान भद्रबाहुस्वामिरचित 'बृहत्कल्पसूत्र'मा पृ १६३६ मा पण "खित्तचित्तं निग्गंथिं निग्गंथे गिण्हमाणे वा अवलंबमाणे वा नाइक्कमइ ॥ १० ॥"—आ सूत्रमा 'क्षिप्तचित्तनो' उल्लेख छे। पृ १६४७ मा "दित्तचित्तं निग्गंथिं निग्गंथे गिण्हमाणे वा अवलबमाणे वा नाइक्कमइ ॥ ११ ॥"—आ सूत्रमा 'दीप्तचित्त'नो उल्लेख छे। तथा पृ १६५३ मा "उम्मायपत्ति निग्गंथि निग्गथे गिण्हमाणे वा २ नाति(इ)क्कमइ ॥ १३ ॥"—आ सूत्रमा 'उन्मत्त'नो उल्लेख छे। श्री संघदासगणिरचित 'बृहत्कल्पभाष्य'मा तेमज श्रीक्षेमकीर्तिसूरिरचित तेनी टीकामा राग, भय, स्नेह, आदि कारणोथी चित्त केवी रीते क्षिप्त थई जाय छे तेमज अतिलाभ थवाथी 'चित्त' केवी रीते दीप्त थई जाय छे ए विषेनु विस्तृत वर्णन छे। तेथी क्षिप्तचित्त आदि केटलीक अवस्थाओनु स्वरूप जाणवा जुओ "बृहत् कल्पसूत्र" (श्री जैन आत्मानद सभा, भावनगरथी प्रकाशित) पृ १६३६ थी पृ १६५३।

कला—द्रव्यतो मल्लादिभिर्नाडीचम्पनेन या चटाप्यते, भावतस्तु अयत्नाभ्यासेन स्वयमेव देश काल-करणाद्यनपेक्ष्य या समारोहति, अन्येन त्ववतार्यते, यथा पुष्पभूतेराचार्यस्य पुष्य(ष्य?)मित्रेण कला-जागरण कृतम् ॥ ५ ॥

परमकला—या सुनिष्पन्नत्वादभ्यासस्य स्वयमेव जागर्ति, यथा चतुर्दशपूर्विणा महाप्राणध्याने ॥६॥

ज्योति—चन्द्र-सूर्य-मणि-प्रदीप विद्युदादि द्रव्यत, भावतोऽभ्यासादतुर्लीनमनसो भूत भवद्-भविष्यद्बहिर्वस्तुसूचा विषयप्रकाश ॥ ७ ॥

परमज्योति—येन सदाऽप्ययत्नेनापि समाहितावस्थाया पूर्वस्माच्चिरकालभावी प्रकाशो जन्यते॥८॥

विन्दु—द्रव्यतो जलादे, भावतो येन परिणामविशेषेण जीवात् कर्म गलति ॥ ९ ॥

परमविन्दु—सम्यक्त्व देशविरति सर्वविरति - अनन्तानुबन्धिविसंयोजन - सप्तकक्षय - उपशामकावस्था-उपशान्तमोहावस्था-मोहक्षपकावस्था क्षीणमोहावस्थाभाविगुणश्रेणय, उपरितने तु द्वे गुणश्रेणी केवलिन एव भवत, इह तु छद्मस्थस्यैव निरूप्यते । गुणश्रेणिर्नाम बहूपरितनकालवेद्यस्य दलिकस्याध स्वल्पकालेनैव वेदनम् । उक्त च—

"उवरिमठिईदलिय हेट्ठिमठाणम्मि कुणइ गुणसेढी ॥ १० ॥"

---

५ **कला**—कलाना बे प्रकार छे—द्रव्यकला अने भावकला। मल्ल वगेरे लोको नाडी दबावीने (उतरी गयेल अगने)चडावे छे ते द्रव्यकला जाणवी। परतु अयत्न अभ्यासने लीधे देश, काल, तथा करण आदिनी अपेक्षा विना पोतानी मेळे ज चडे परतु बीजा वडे उताराय ते भावथी कला जाणवी। जेमके आचार्य पुष्पभूतिनी कलाने (समाधिने) मुनि पुष्पमित्रे जागृत करी हती—उतारी हती। (आ कथा माटे जुओ परिशिष्ट—१)

६ **परमकला**:—अभ्यास सुनिष्पन्न थयो होवाथी जे (समाधि) पोताना मेळे ज जागृत थाय (उतरी जाय)—जेम चौद पूर्वधरोने महाप्राण ध्यानमा थाय छे—ते 'परमकला' कहेवाय छे ।

७ **ज्योति**—ज्योति बे प्रकारे छे—द्रव्य ज्योति तथा भावज्योति। चद्र, सूर्य, मणि, प्रदीप तथा वीजळी वगेरे 'द्रव्यथी ज्योति' छे। अभ्यासथी जेनु मन लीन थयु छे तेवा मनुष्यने—भूतकाळ, वर्तमानकाळ तथा भविष्यकाळनी बाह्य वस्तुओने सूचवनारो जे विषयप्रकाश उत्पन्न थाय छे ते 'भावथी ज्योति' छे ।

८ **परमज्योति**—उपर कहेल 'ज्योति' करता चिरकाळ सुधी टकनारो प्रकाश हमेशा प्रयत्न विना समाधि अवस्थामा जे ध्यानथी उत्पन्न थाय ते 'परम ज्योति' कहेवाय छे ।

९ **विन्दु**—जल वगेरेनु बिन्दु ते 'द्रव्यथी बिन्दु' छे। अने जे परिणामविशेषथी आत्मा उपरथी कर्म खरी जाय—खरी पडे तेवो परिणामविशेष (अध्यवसाय) 'भावथी बिन्दु' कहेवाय छे ।

१० **परमविन्दु**—सम्यक्त्व, देशविरति, सर्वविरति, अनन्तानुबन्धी (क्रोध, मान, माया, लोभ)-नी विसंयोजना, सप्तकनो क्षय, उपशामक अवस्था, उपशान्तमोहावस्था, मोहक्षपकावस्था तथा क्षीणमोहावस्था प्राप्त थती वखते जे गुणश्रेणिओ प्राप्त थाय छे ते 'परमबिन्दु' समजवी। बाकीनी बे गुणश्रेणिओ केवळज्ञानीने ज होय छे। अने अहीं तो छद्मस्थना ध्याननु ज निरूपण चाली रह्यु छे। एटले ए बे गुणश्रेणिओ परमबिन्दुमा गणी नथी। कर्मना जे दलिकानु घणा लाबा समये वेदन थवानु होय तेने नीचेना स्थितिस्थानमा दलो अल्पसमयमा ज जे वेदन करवामा आवे तेने गुणश्रेणि कहेवामा आवे छे। कह्यु छे के—

"उपरनी स्थितिना कर्मदलिकने नीचेना स्थानमा नाखवामा आवे ते 'गुणश्रेणि' कहेवाय छे।"

---

१ [illegible] गुणश्रेणिओ ११ [illegible]। तथा० [illegible] ९७ [illegible], आ० [illegible] [illegible]। (जुओ [illegible] १०५ १०६) [illegible] गुणश्रेणिओ [illegible] परमबिन्दु [illegible] छे।

नादः—द्रव्यतो बुभुक्षातुराणामङ्गुलीस्थगितकर्णानां सुसूत्कारः; भावतः स्वशरीरोत्थ एव तूर्यनिर्घोष इव स्वय श्रूयते ॥ ११ ॥

परमनादः—पृथग्वाद्यमानवादित्रशब्दा इव विभिन्ना व्यक्ताः श्रूयन्ते ॥ १२ ॥

तारा—द्रव्यतो विवाहादौ वधू-वरयोस्तारामेलकः; भावतः कायोत्सर्गव्यवस्थितस्य निश्चला दृष्टिः ॥ १३ ॥

परमतारा—द्वादश्यां प्रतिमायामिवानिमेषा शुष्कपुद्गलन्यस्ता दृष्टिः ॥ १४ ॥

लयः—वज्रलेपादिद्रव्येण संश्लेषो द्रव्यतः; भावतोऽर्हदादिचतुःशरणरूपश्चेतसो निवेशः ॥ १५ ॥

---

११. नाद:—भूखथी पीडाता मनुष्यो कानमां आंगळी नाखीने जे सुसकारो करे छे ते 'द्रव्यथी नाद' छे। अने पोताना शरीरमा ज उत्पन्न थयेलो जे निर्घोष (नाद) वाजित्रना अवाजनी जेम स्वय संभळाय छे ते 'भावथी नाद' समजवो।

१२. परमनाद:—जुदां जुदा वागतां वाजित्रोना शब्दोनी जेम विभिन्न अने व्यक्त शब्दो संभळाय ते 'परमनाद' कहेवाय छे।

१३. तारा:—विवाह आदि प्रसंगमां वधू अने वरनुं जे परस्पर तारामैत्रक-तारामेलक (आंखनी कीकीओनुं मिलन) थाय छे ते 'द्रव्यथी तारा' छे। कायोत्सर्गमां रहेल मनुष्यनी जे निश्चल दृष्टि ते 'भावथी तारा' छे।

१४. परमतारा:—बारमी प्रतिमा[1]नी जेम शुष्क पुद्गल उपर जे अनिमेष दृष्टि स्थापवामा आवे ते 'परमतारा' छे।

१५. लयः—वज्रलेप[2] आदि द्रव्यथी वस्तुओनो जे परस्पर गाढ संयोग ते 'द्रव्यथी लय' छे अने अरिहंत, सिद्ध, साधु तथा केवलीप्ररूपित धर्म—आ चारनु शरण अंगीकार करवारूप जे चित्तनो निवेश ते 'भावथी लय' छे।

---

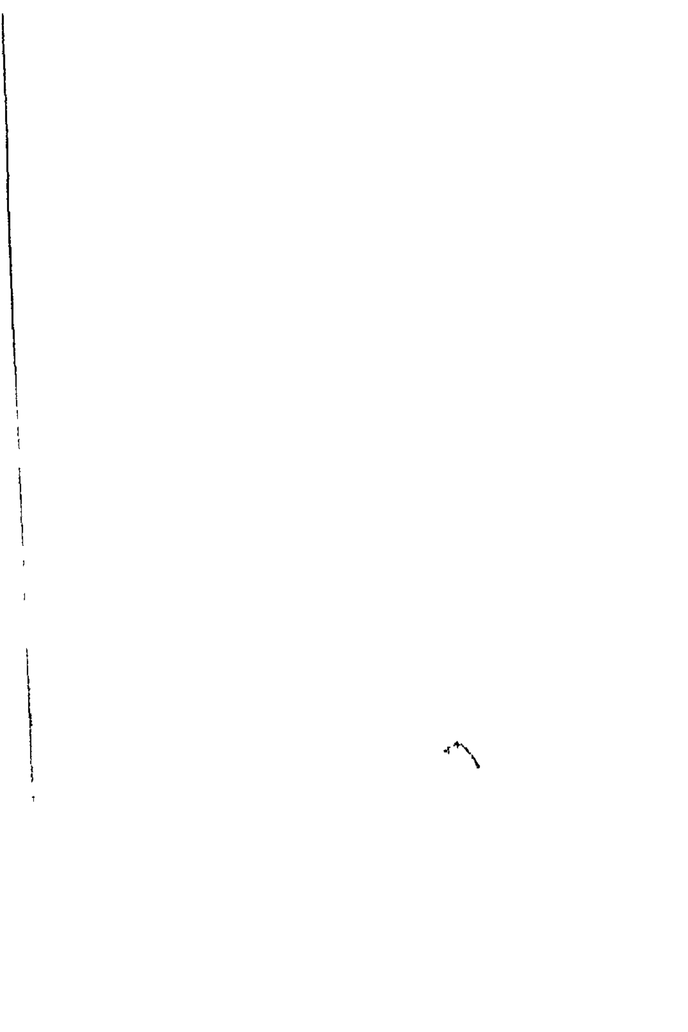
१. विशिष्ट प्रकारना उग्र प्रतिज्ञापालनने—व्रतपालनने—'प्रतिमा' कहेवामा आवे छे। साधुओनी आवी प्रतिमाओ १२ छे। जेमके एकमासिकी, द्विमासिकी, त्रिमासिकी, चातुर्मासिकी, पंचमासिकी, षण्मासिकी, सप्तमासिकी, सप्तरात्रिकी, सप्तरात्रिकी, सप्तरात्रिकी, अहोरात्रिकी, एकरात्रिकी। आ बधी प्रतिमाओनुं स्वरूप आवश्यक वृत्ति आदि ग्रंथोमा विस्तारथी वर्णवेलु छे। तेमा १२ मी प्रतिमामा अट्ठम करीने गाम बहार जईने अनिमेष नयने एक दृष्टि स्थापीने काउस्सग्ग ध्यानमा उभा रहेवानुं होय छे।

२ मंदिर मकान आदि अधिक मजबूत करवाने माटे प्राचीन जमानामा भीत आदिनी उपर जे लेप करवामा आवतो हतो, ते बृहत्संहितामा वज्रलेपना नामथी नीचे प्रमाणे प्रसिद्ध छे :

आमं तिन्दुकमामं कपित्थकं पुष्पमपि च शाल्मल्याः।
बीजानि शल्लकीना धन्वनवल्को वचा चेति ॥ १ ॥
एतैः सलिलद्रोण क्राथयितव्योऽष्ट भागशेषश्च।
अवतार्योऽस्य च कल्को द्रव्यैरेतैः समनुयोज्य ॥ २ ॥
श्रीवासक-रस गुग्गुलु-भल्लातक-कुन्दुरुक-सर्जरसैः।
अतसी-बिल्वैश्च युत कल्कोऽयं वज्रलेपाख्य ॥ ३ ॥
प्रासादहर्म्यवलभी-लिङ्गप्रतिमासु कुड्यकूपेषु
सन्तप्तो दातव्यो वर्षसहस्रायुतस्थायी ॥ ४ ॥

अर्थः—काचा टीवरु, काचा कोठा, शिमळाना फूल, सारफळ (सालेडो, धूपेडो) ना बीज, धामण, वृक्षनी छाल अने घोडा वज—ए औषधो बराबर सरखा वजन प्रमाणे लइ, पछी तेने एक द्रोण अर्थात् २५६ तल=१०२४ तोला पाणीमा नाखीने उकाळो करवो। ज्यारे पाणीनो आठमो भाग रहे त्यारे नीचे उतारी, तेमा सुरुवृक्षोनो गुदर (बेरजो) हीराबोळ गुगळ, भीलामा, देवदारनो गुंद (कुदरु), राळ, अळशी, अने बीलीफळ ए औषधोनुं चूर्ण नाखवुं जेथी वज्रलेप तैयार थाय छे। ॥ १-२-३ ॥

उपर कहेल वज्रलेप देवमदिर, मकान, झरोखा, शिवलिंग, प्रतिमा (मूर्ति), भीत अने कुवा वगेरे ठेकाणे घणो गरम गरम लगावे तो ते मकान आदिनी स्थिति करोड वर्षनी थाय ॥ ४ ॥ **वास्तुसारे परिशिष्ट A पृ १४७**



परमलय —आत्मन्येवात्मानं लीनं पश्यतीत्येवंरूपं ॥ १६ ॥

लव —द्रव्यतो दात्रादिभिः शस्यादेर्लवनम्, भावतः कर्मणां शुभध्यानानुष्ठानैर्लवनम् ॥ १७ ॥

परमलव —उपशमश्रेणि-क्षपकश्रेणी ॥ १८ ॥

मात्रा—द्रव्यतः उपकरणादिपरिच्छेदः, भावतः समवसरणान्तर्गतं सिंहासनोपविष्टं देशनां कुर्वाणं तीर्थङ्करमिवात्मानं पश्यति ॥ १९ ॥

परममात्रा—चतुर्विंशत्या वलयैः परिवेष्टितमात्मानं ध्यायति, तद् यथा—

शुभाक्षरवलय—'आज्ञाविचयादिधर्मध्यानभेदाक्षर २३—'पृथक्त्ववितर्कसविचार' इत्यक्षरा १०—एवं ३३ न्यस्यन्ते यत्र ॥ (१)

अनक्षरवलय—"ऊससिय नीससिय" इत्यादिगाथाक्षराण्यनक्षरश्रुतवाचकानि न्यस्यते यत्र ॥ (२)

परमाक्षरवलय—'ॐ अर्हं अँ रिँ हँ तँ मिँ द्वँ ऑ यँ रिँ यँ उँ वँ ज्झाँ यँ सॉ हूँ नमः' इति न्यस्यन्ते यत्र ॥ (३)

अक्षरवलय—'अ आ' इत्यादीनि, ईषत्स्पृष्टतर'य ल व'युतानि द्विपञ्चाशन्मातृकाक्षराणि 'ह'पर्यन्तानि न्यस्यन्ते यत्र ॥ (४)

---

१६ परमलय —आत्मामा ज आत्माने लीन थयेलो जोवो ते 'परमलय' छे।

१७ लव —दातरडा आदिथी घास आदिनुं जे कापवुं ते 'द्रव्यथी लव' छे। शुभध्यान अने अनुष्ठानो वडे कर्मोने जे छेदवा ते 'भावथी लव' छे।

१८ परमलव —उपशमश्रेणि तथा क्षपकश्रेणि 'परमलव' छे।

१९ मात्रा —उपकरण आदिनो जे परिच्छेद (मर्यादा) ते 'द्रव्यथी मात्रा' छे। समवसरणनी अंदर सिंहासन उपर बिराजीने देशना आपता तीर्थंकर भगवाननी जेम पोताना आत्माने जोवो ते 'भावथी मात्रा' छे।

२० परममात्रा —चोवीश वलयोथी वींटायेल पोताना आत्मानुं जे ध्यान करवुं ते 'परममात्रा' छे। ते वलयोनुं स्वरूप नीचे मुजब छे (जुओ—यंत्र चित्र नं. २)

(१) प्रथम 'शुभाक्षरवलय' छे जेमां धर्मध्यानना ४ भेदोना 'आ ज्ञा वि च य, अ पा य वि च य, वि पा क वि च य, सं स्था न वि च य' एम २३ अक्षरो तथा शुक्लध्यानना प्रथम भेदना 'पृ थ क्त्व वि त र्क स वि चा र' एम १० अक्षरो मळीने कुल ३३ अक्षरोनो न्यास करवो।

(२) बीजुं 'अनक्षरवलय' छे। आगम ग्रंथोमां अनक्षरश्रुतज्ञान विषे 'ऊससिय नीससियं' आदि जे गाथा मळे छे तेना अक्षरो आ वलयमां स्थापवामां आवे छे। संपूर्ण गाथा नीचे मुजब छे

* ऊससियं नीससियं निच्छूढं खासिअं च छीअं च।
निस्सिंघिअमणुसारं अणक्खरं छेलिआइअं ॥

(३) त्रीजा 'परमाक्षरवलय'मां 'ॐ अर्ह अँ रिँ हँ तँ मिँ द्वँ ऑ य रिँ यँ उँ वँ ज्झा यँ सौँ हूँ नमः' आ अक्षरोनो न्यास करवामां आवे छे।

(४) चोथुं 'अक्षरवलय' छे। तेमां अ थी ह सुधीना ४९ तेमज ईषत्स्पृष्टतर 'य, ल, व'—आ त्रण अक्षरो एम कुल ५२ मातृका-अक्षरोनो न्यास करवामां आवे छे।

---

* आगमोदयसमिति प्रकाशित नंदीसूत्र पृ. १८७। बृहत्कल्पसूत्र निर्युक्तिमां पृ. २७ मां आ ७८ नी गाथा छे। आवश्यक निर्युक्तिमां पण आ गाथा छे।

निरक्षरवलयं—ध्यान-परमध्यानयोः शुभाक्षरवलये प्रविष्टत्वात् शेषध्यानभेदाः २२ न्यस्यन्ते यत्र ॥ (५)

सकलीकरणवलयं—पृथिव्यप्-तेजो-वाय्वाकाशमण्डलपञ्चकात्मकम् ॥ (६)

परस्परावलोकनव्यग्रवामजानुन्यस्ततीर्थकरमातृ २४ वलयम् ॥ (७)

तीर्थङ्करपितृ २४ वलयम् ॥ (८)

अतीता-ऽनागत-वर्तमानभावतीर्थङ्करनामाक्षरवलयम् ॥ (९)

---

(५) ध्यानना 'ध्यान', 'परमध्यान' वगेरे २४ भेदो छे ते पैकीना प्रथम बे भेद—'ध्यान' अने 'परमध्यान' प्रथम शुभाक्षरवलयमां आवी जाय छे। तेथी बाकी रहेला २२ भेदोनो पाचमा 'निरक्षर वलय'मां न्यास करवामां आवे छे।

(६) छट्ठुं 'सकलीकरणवलय' पृथ्वीमडल, अप्‌मंडल, तेजोमयमंडल, वायुमंडल तथा आकाश-मंडल—'आ पांच मंडल स्वरूप छे।

(७) जेओ परस्पर अवलोकन करवामा व्यग्र छे तेमज जेमणे डाबा ढींचण उपर पोताना बाळको-तीर्थकरोने बेसाडेला छे तेवी २४ तीर्थकरोनी मांताओनी सातमा वलयमा स्थापना करवामां आवे छे।

(८) आठमुं वलय २४ तीर्थकरोना पिताओनु छे।[२]

(९) नवमा वलयमां भूत[३], भविष्य[४] अने वर्तमान[५]काळनी चोवीशीओना भाव तीर्थकरोना नामोना अक्षरोनी स्थापना करवामां आवे छे।

---

१. २४ तीर्थंकरोनी माताओनां नामो अनुक्रमे नीचे मुजब छे :—

(१) मरुदेवा (२) विजया (३) सेनादेवी (४) सिद्धार्था (५) मंगला (६) सुसीमा (७) पृथ्वी (८) लक्ष्मणा (९) रामा (१०) नंदा (११) विष्णु (१२) जया (१३) श्यामा (१४) सुयशा (१५) सुव्रता (१६) अचिरा (१७) श्री (१८) देवी (१९) प्रभावती (२०) पद्मावती (२१) वप्रादेवी (२२) शिवादेवी (२३) वामादेवी (२४) त्रिशलादेवी।

२. चोवीश तीर्थंकरोना पिताओनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) नाभिराजा (२) जितशत्रु (३) जितारि (४) सवर (५) मेघ (६) धर (७) प्रतिष्ठ (८) महासेन (९) सुग्रीव (१०) दृढरथ (११) विष्णुराज (१२) वसुपूज्य (१३) कृतवर्मा (१४) सिहसेन (१५) भानु (१६) विश्वसेन (१७) सूर (१८) सुदर्शन (१९) कुभ (२०) सुमित्र (२१) विजय (२२) समुद्रविजय (२३) अश्वसेन (२४) सिद्धार्थ।

३. भूतकालीन चोवीश तीर्थंकरोनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) केवलज्ञानी (२) निर्वाणी (३) सागर (४) महायश (५) विमल (६) सर्वानुभूति (७) श्रीधर (८) दत्त (९) दामोदर (१०) सुतेज (११) स्वामी (१२) मुनिसुव्रत (१३) सुमति (१४) शिवगति, (१५) अस्ताग (१६) निमीश्वर (१७) अनिल (१८) यशोधर (१९) कृतार्थ (२०) जिनेश्वर (२१) शुद्धमति (२२) शिवकर (२३) स्यन्दन (२४) संप्रति।

४. भविष्यकालना चोवीश तीर्थंकरोनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) पद्मनाभ (२) शूरदेव (३) सुपार्श्व (४) स्वयंप्रभ (५) सर्वानुभूति (६) देवश्रुत (७) उदय (८) पेढाल (९) पोट्टिल (१०) शतकीर्ति (११) सुव्रत (१२) अमम (१३) निष्कपाय (१४) निष्पुलाक (१५) निर्मम (१६) चित्रगुप्त (१७) समाधि (१८) संवर (१९) यशोधर (२०) विजय (२१) मल्ल (२२) देव (२३) अनन्तवीर्य (२४) भद्रकृत्।

५. वर्तमानकालना चोवीश तीर्थंकरोनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) ऋषभ (२) अजित (३) सभव (४) अभिनन्दन (५) सुमति (६) पद्मप्रभ (७) सुपार्श्व (८) चन्द्रप्रभ (९) सुविधि (१०) शीतल (११) श्रेयास (१२) वासुपूज्य (१३) विमल (१४) अनंत (१५) धर्म (१६) शान्ति (१७) कुन्थु (१८) अर (१९) मल्लि (२०) मुनिसुव्रत (२१) नमि (२२) नेमि (२३) पार्श्व (२४) महावीर।

गेहिण्यादिषोडशविद्यादेवतावलयम् ॥ (१०)

अष्टाविंशतिनक्षत्रनामाक्षरवलयम् ॥ (११)

अष्टाशीतिग्रहवलयम् ॥ (१२)

---

(१०) दसमु वलय रोहिणी आदि १६ विद्यादेवीओनु छे।

(११) अगियारमा वलयमा २८ नक्षत्रोना नामाक्षरोना स्थापना करवामा आवे छे।

(१२) बारमा वलयमा ८८ ग्रहोनी स्थापना करवामा आवे छे।

---

१ सोळ विद्यादेवीओना नामो नीचे मुजब छे —

आ ज प्रथमा प्रकरण आगळ १६ विद्यादेवीओना नामो जणावेला छे ते अनुसारे अहीं विद्यादेवीओनां नामो आप्यां छे। याचा प्रयोमा जो के केटलांक नामामा फेरफार पण जोवामां आवे छे।

(१) रोहिणी (२) प्रज्ञप्ति (३) वज्रशृंखला (४) वज्रांकुशी (५) अप्रतिचक्रा (६) पुरुषदत्ता (७) काली (८) महाकाली (९) गौरी (१०) गान्धारी (११) ज्वालामालिनी (१२) मानवी (१३) वरोट्या (१४) अच्छुप्ता (१५) मानसी (१६) महामानसी।

२ २८ नक्षत्रोना नामो नीचे मुजब छे —

(१) अश्विनी (२) भरणी (३) कृत्तिका (४) रोहिणी (५) मृगशीर्ष (६) आर्द्रा (७) पुनर्वसु (८) पुष्य (९) आश्लेषा (१०) मघा (११) पूर्वाफाल्गुनी (१२) उत्तराफाल्गुनी (१३) हस्त (१४) चित्रा (१५) स्वाति (१६) विशाखा (१७) अनुराधा (१८) ज्येष्ठा (१९) मूल (२०) पूर्वाषाढा (२१) उत्तराषाढा (२२) अभिजित् (२३) श्रवण (२४) धनिष्ठा (२५) शतभिषा (२६) पूर्वाभाद्रपद (२७) उत्तराभाद्रपद (२८) रेवती।

३ ८८ ग्रहोना नामो नीचे मुजब छे —

(१) अंगारक (२) विकालक (३) लोहिताक्ष (४) शनैश्चर (५) आधुनिक (६) प्राधुनिक (७) कण (८) कणक (९) कणकणक (१०) कणवितानक (११) कणसंतानक (१२) सोम (१३) सहित (१४) आश्वासन (१५) कार्योपग (१६) कर्बुरक (१७) अजकरक (१८) दुंदुभक (१९) शंख (२०) शंखनाभ (२१) शंखवर्णाभ (२२) कंस (२३) कंसनाभ (२४) कंसवर्णाभ (२५) नील (२६) नीलावभास (२७) रूप्य (२८) रूप्यावभास (२९) भस्म (३०) भस्मराशि (३१) तिल (३२) तिलपुष्पवर्ण (३३) दक (३४) दकवर्ण (३५) काय (३६) वन्ध्य (३७) इन्द्राग्नि (३८) धूमकेतु (३९) हरि (४०) पिंगल (४१) बुध (४२) शुक्र (४३) बृहस्पति (४४) राहु (४५) अग्नि (४६) माणवक (४७) कामस्पर्श (४८) धुर (४९) प्रमुख (५०) विकट (५१) विसंधिकल्प (५२) प्रकल्प (५३) जटाल (५४) अरुण (५५) अग्नि (५६) काल (५७) महाकाल (५८) स्वस्तिक (५९) सौवस्तिक (६०) वर्धमानक (६१) प्रलम्ब (६२) नित्यालोक (६३) नित्योद्योत (६४) स्वयंप्रभ (६५) अवभास (६६) श्रेयस्कर (६७) क्षेमंकर (६८) आभंकर (६९) प्रभंकर (७०) अरजा (७१) विरजा (७२) अशोक (७३) वीतशोक (७४) विमल (७५) विवस्त्र (७६) विशाल (७७) शाल (७८) सुव्रत (७९) अनिवृत्ति (८०) एकजटी (८१) द्विजटी (८२) कर (८३) करिक (८४) राज (८५) अर्गल (८६) पुष्प (८७) भाव (८८) केतु।

—सूर्यप्रज्ञप्तिवृत्ति—पृ २०५ प्राभृत २०

दिक्कुमारी ५६ वलयम् ॥ (१३)
इन्द्र ६४ वलयम् ॥ (१४)
यक्षिणी २४ वलयम् ॥ (१५)
यक्ष २४ वलयम् ॥ (१६)

---

(१३) तेरमा वलयमां ५६ दिक्कुमारिकाओनी स्थापना करवामां आवे छे।
(१४) चौदमा वलयमा ६४ इन्द्रोनी स्थापना करवामा आवे छे।
(१५) पदरमा वलयमा २४ यक्षिणीओनी स्थापना करवामा आवे छे।
(१६) सोळमा वलयमा २४ यक्षोनी स्थापना करवामा आवे छे।

---

१. ५६ दिक्कुमारीओनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) भोगकरा (२) भोगवती (३) सुभोगा (४) भोगमालिनी (५) सुवत्सा (६) वत्समित्रा (७) पुप्पमाला (८) अनिन्दिता (९) मेघकरा (१०) मेघवती (११) सुमेघा (१२) मेघमालिनी (१३) तोयधारा (१४) विचित्रा (१५) वारिषेणा (१६) वलाहका (१७) नदा (१८) उत्तरानंदा (१९) आनंदा (२०) नन्दिवर्धना (२१) विजया (२२) वैजयन्ती (२३) जयन्ती (२४) अपराजिता (२५) समाहारा (२६) सुप्रदत्ता (२७) सुप्रवुद्धा (२८) यशोधरा (२९) लक्ष्मीवती (३०) शेपवती (३१) चित्रगुप्ता (३२) वसुंधरा (३३) इलादेवी (३४) सुरादेवी (३५) पृथिवी (३६) पद्मवती (३७) एकनासा (३८) नवमिका (३९) भद्रा (४०) शीता (४१) अलंवुसा (४२) मितकेशी (४३) पुंडरीका (४४) वारुणी (४५) हासा (४६) सर्वप्रभा (४७) श्री (४८) ह्री (४९) चित्रा (५०) चित्रकनका (५१) शतेरा (५२) वसुदामिनी (५३) रूपा (५४) रूपासिका (५५) सुरूपा (५६) रूपकावती।

—कल्पसूत्र टीका, पञ्चमं व्याख्यानम्

२. ६४ इन्द्रोनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) सौधर्मेन्द्र (२) ईशानेंद्र (३) सनत्कुमारेंद्र (४) माहेंद्र (५) ब्रह्मेंद्र (६) लान्तकेंद्र (७) महाशुक्रेंद्र (८) सहस्रारेंद्र (९) प्राणतेंद्र (१०) अच्युतेंद्र (११) चमरेंद्र (१२) वलीन्द्र (१३) धरणेंद्र (१४) भूतानदेंद्र (१५) हरिकांतेंद्र (१६) हरिपहेंद्र (१७) वेणुदेवेन्द्र (१८) वेणुदारीन्द्र (१९) अग्निशिखेंद्र (२०) अग्निमाणवेंद्र (२१) वेलवेंद्र (२२) प्रभञ्जनेंद्र (२३) घोषेंद्र (२४) महाघोपेंद्र (२५) जलकांतेंद्र (२६) जलप्रभेंद्र (२७) पूर्णेंद्र (२८) अवशिष्टेंद्र (२९) अमितगतीन्द्र (३०) अमितवाहनेंद्र (३१) किन्नरेंद्र (३२) किंपुरुषेंद्र (३३) सत्पुरुषेंद्र (३४) महापुरुषेंद्र (३५) अतिकायेंद्र (३६) महाकायेंद्र (३७) गीतरतीन्द्र (३८) गीतयशेंद्र (३९) पूर्णभद्रेंद्र (४०) माणिभद्रेंद्र (४१) भीमेंद्र (४२) महाभीमेंद्र (४३) सुरूपेंद्र (४४) प्रतिरूपेंद्र (४५) कालेंद्र (४६) महाकालेंद्र (४७) संनिहितेंद्र (४८) सामानेंद्र (४९) धाता इंद्र (५०) विधाता इंद्र (५१) ऋषीन्द्र (५२) ऋषिपालेंद्र (५३) ईश्वरेंद्र (५४) महेश्वरेंद्र (५५) सुवत्स इंद्र (५६) विशालेंद्र (५७) हास्येंद्र (५८) हास्यरतीन्द्र (५९) श्वेतेंद्र (६०) महाश्वेतेंद्र (६१) पतंगेंद्र (६२) पतगपतीन्द्र (६३) चंद्र (६४) सूर्य।

—त्रिषष्टिशलाका पु० च० पर्व

३. २४ यक्षिणीओनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) अप्रतिचक्रा (२) अजितवला (३) दुरितारि (४) कालिका (५) महाकाली (६) अच्युता (७) शान्ता (८) भृकुटि (९) सुतारा (१०) अशोका (११) मानवी (१२) चण्डा (१३) विदिता (१४) अकुशा (१५) कन्दर्पा (१६) निर्वाणी (१७) वलादेवी (१८) धारिणी (१९) वैरोट्या (२०) नरदत्ता (२१) गाधारी (२२) कूष्माडी (अंविका) (२३) पद्मावती (२४) सिद्धायिका।

४. २४ यक्षोनां नामो नीचे मुजब छे :—

(१) गोमुख (२) महायक्ष (३) त्रिमुख (४) यक्षेश (५) तुंवरु (६) कुसुम (७) मातंग (८) विजय (९) अजित (१०) ब्रह्म (११) ईश्वर (१२) कुमार (१३) षण्मुख (१४) पाताल (१५) किन्नर (१६) गरुड (१७) गन्धर्व (१८) यक्षेन्द्र (१९) कुबेर (२०) वरुण (२१) भृकुटि (२२) गोमेध (२३) पार्श्व (२४) मातंग।

असंख्यातशाश्वतेतरस्थापनार्हच्चैत्यवलयम् ॥ (१७)

ऋषभादिपरिवारभूतगणधरप्रभृतिसाधुसंख्यावलयम् ॥ (१८)

महत्तरामुख्यसाध्वीसंख्यावलयम् ॥ (१९)

श्रावकसंख्यावलयम् ॥ (२०)

[श्राविकासंख्यावलयम् ॥ (२१)]

भवनयोग ९६ वलयम् ॥ (२२)

करणयोग ९६ वलयम् ॥ (२३)

करण ९६ वलयम् ॥ (२४)

---

(१७) सत्तरमु वलय असंख्यात शाश्वत अने अशाश्वत स्थापना अरिहंतोनां अर्थात् जिनप्रतिमाओना चैत्योनु छे।

(१८) अढारमु वलय श्री ऋषभदेवादि तीर्थंकरोना परिवारभूत गणधर वगेरे साधुओनी संख्यानु छे। (जुओ परिशिष्ट न २)

(१९) ओगणीसमु वलय महत्तरा वगेरे साध्वीओनी संख्यानु छे। (जुओ परिशिष्ट न २)

(२०) वीसमा वलयमा श्रावकोनी संख्या स्थापवामा आवे छे। (जुओ परिशिष्ट न ३)

(२१) एकवीसमा वलयमा श्राविकाओनी संख्या स्थापवामा आवे छे। (जुओ परिशिष्ट न ३)

(२२) बावीसमा वलयमा ९६ भवनयोगनी स्थापना करवामा आवे छे। (जुओ परिशिष्ट न ४)

(२३) त्रेवीसमा वलयमा ९६ करणयोगनी स्थापना करवामा आवे छे। (जुओ परिशिष्ट न ४)

(२४) चोवीसमा वलयमा ९६ करणनी स्थापना करवामा आवे छे। (जुओ परिशिष्ट न ५)

---

१ मूळमां आ प्रमाणे छे —'महत्तरामुख्यमुख्यसाध्वीसंख्यावलयम्।

२ असंख्यात शाश्वत प्रतिमाओना चैत्योना संख्या आ प्रमाणे छे —स्वर्गमा (वैमानिक देवोना विमानोमां) शाश्वत जिनप्रतिमाना चैत्योना संख्या ८४,९७,०२३ छे। भुवनपतिमां शाश्वत जिनचैत्योनी संख्या ७ ७२ ०० ००० छे। तिर्यग्लोकमा शाश्वत जिन प्रतिमाओना चैत्योनी संख्या ३२५९ छे। व्यंतर तथा ज्योतिषी देवोना निवास अने विमानोमा शाश्वत जिन चैत्यो असंख्याता छे।

अशाश्वत जिनप्रतिमाओना चैत्योनी संख्या अनियत छे।

मनुष्योए भरावेला प्रतिमाओ अशाश्वती प्रतिमाओ कहेवाय छे। तेथी अशाश्वत जिन प्रतिमाओना चैत्योना संख्या अनियत छे। अशाश्वत अर्हत् प्रतिमाओनां चैत्योना प्रसिद्ध यात्राधामो पैकी केटलाक नीचे मुजब छे श्री शत्रुंजय गिरनार, अष्टापद, सम्मेतशिखर, आबु, शंखेश्वर केसरियाजी, तारंगा, अंतरीक्ष पार्श्वनाथ तीर्थ जीरावला पार्श्वनाथ तीर्थ, स्तंभन पार्श्वनाथ तीर्थ वगेरे।

३ जो के मूळ हस्तलिखित प्रतमां 'आं श्रावकसंख्यावलयम् एवो अशुद्ध पाठ छे। तो पण पूर्वापरना संबंध जोता अहीं श्रावक संख्यानु अने श्राविका संख्यानु वलय अभिप्रेत जणाय छे। तेथी आ पाठना आधारे श्रावक संख्यावलयम् तथा 'श्राविका संख्यावलयम्' एम बे वलय अहीं जणाव्या छे। अहीं बे वलय लेवामा आवे तो ज वलयोनी २४ संख्या पूर्ण थई शके। आ कारणथी पण अहीं बे वलयो जणाव्यां छे। मूळ हस्तलिखित प्रतमा 'आं श्रावकसंख्यावलयम्' पाठ छे। संभव छे के 'आनन्दादि श्रावकसंख्यावलयम् एवो पाठ पण अहीं होय।

पदं—द्रव्यतो लौकिक राजादि ५, लोकोत्तरमाचार्यादि ५, भावतः पञ्चाना परमेष्ठिपदाना ध्यानम् ॥ २१ ॥

परमपदं—पञ्चाना परमेष्ठिपदानामात्मनि न्यास. आत्मनस्तदध्यारोपेण परमेष्ठिरूपतया चिन्तन-मित्यर्थः ॥ २२ ॥

सिद्धिः—लौकिकाणिमादिरष्टधा, लोकोत्तरा राग-द्वेपमाध्यस्थ्यरूपपरमानन्दलक्षणा; भावतो मुक्तिपदप्राप्तजीवाना—'**से न दीहे न हस्से**°' इत्यादि (३१)—'**अहवा कम्मे णव दरिसणम्मि**°' इत्यादि (३१)–मीलने (६२) द्वाषष्टिगुणचिन्तनम् ॥ २३ ॥

परमसिद्धिः—मुक्तगुणानामात्मन्यध्यारोपणम् ॥ २४ ॥

इति संक्षेपार्थः ॥

---

* **२१. पद**:—द्रव्यथी 'पद' लौकिक राजा आदि पाच पदवीओ (राजा, मत्री, कोषाध्यक्ष सेनापति, पुरोहित) छे। लोकोत्तर पद आचार्यादि (आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, गणावच्छेदक अने स्थविर) पांच पदवीओ छे। पाच परमेष्ठीपदोनुं ध्यान करवुं ते भावथी 'पद' छे।

२२. परमपद:—पाच परमेष्ठीपदोनो आत्मामा न्यास अर्थात् आत्मामा तेनु आरोपण करीने आत्माने पचपरमेष्ठीरूपे चिंतववो ए 'परमपद' छे।

२३. सिद्धि:—लौकिक 'सिद्धि' लघिमा, वशिता, ईशित्व, प्राकाम्य, महिमा, अणिमा, यत्र-कामावसायित्व अने प्राप्ति एम आठ प्रकारनी छे। राग अने द्वेपमां माध्यस्थ्य भावरूप परमानंद ते लोकोत्तर सिद्धि छे। अने मुक्ति पामेला आत्माओना ६२ गुणोनु ध्यान ए भावथी सिद्धि छे।

२४. परमसिद्धि:— सिद्धोना गुणोनो पोताना आत्मामां अध्यारोप करवो ते 'परमसिद्धि' छे।

(संक्षिप्त भावार्थ समाप्त)

---

* वीसमा परममात्रा ध्यानमा आवता चोवीस वलयोनुं निरूपण पूर्ण थई गयुं होवाथी हवे एकवीसमाथी माडीने वाकी रहेला ध्यानोनुं स्वरूप अहींथी जणाववामा आवे छे।

१ शास्त्रोमा 'सिद्ध' भगवंतना ३१ गुणो प्रसिद्ध छे। परतु ते ३१ नी गणत्री वे रीते थती होवाथी वन्ने गणत्रीना थईने अहीं ६२ गुणो कह्या छे। ते नीचे मुजव छे

"...से न दीहे न हस्से न वट्टे न तसे न चउरसे न परिमंडले न किण्हे न नीले न लोहिए न हालिद्दे न सुक्किल्ले न सुरभिगंधे न दुरभिगंधे न तित्ते न कडुए न कसाए न अविले न महुरे न कक्खडे न मउए न गरुए न लहुए न उण्हे न निद्धे न लुक्खे न काऊ न रुहे न संगे न इत्थी न पुरिसे न अन्नहा..." —आचारागसूत्र सू. १७१-२।

अर्थ: सिद्धो (१) दीर्घ नथी के ह्रस्व नथी, (२) गोळ नथी, (३) त्रिकोण नथी, (४) चतुष्कोण नथी, (५) परिमंडलाकारे नथी, (६) श्याम नथी, (७) नील नथी, (८) लाल नथी, (९) पीळा नथी, (१०) श्वेत नथी, (११) सुगन्धी नथी, (१२) दुर्गन्धी नथी, (१३) तिक्त नथी, (१४) कटु नथी, (१५) तुरा नथी, (१६) खाटा नथी, (१७) मधुर नथी, (१८) कठिन नथी, (१९) मृदु नथी, (२०) भारे नथी, (२१) हलका नथी, (२२) शीत नथी, (२३) उष्ण नथी, (२४) स्निग्ध नथी, (२५) रूक्ष नथी, (२६) शरीरधारी नथी, (२७) जन्म लेता नथी, (२८) (अमूर्त होवाने लीधे) संगवाळा नथी, (२९) स्त्री नथी, (३०) पुरुष नथी, (३१) नपुंसक नथी। आ रीते सिद्धोना निषेधात्मक ३१ गुण उपर जणाव्या। हवे बीजी रीते ३१ गुण नीचे मुजव छे—

"अहवा कम्मे णव दरिसणम्मि चत्तारि आउए पंच।
आइम अंते सेसे दो दो खीणभिलावेण इगतीसं ॥"

व्याख्या—'अथवा' इति व्याख्यान्तरप्रदर्शनार्थ, 'कर्मणि' कर्मविषया क्षीणाभिलापेनैकत्रिंशद्गुणा भवन्ति, तत्र नव दर्शनावरणीये, नवभेदा इति—क्षीणचक्षुर्दर्शनावरण ४, क्षीणनिद्र ५, चत्वार आयुष्के—क्षीणनरकायुष्क ४, 'पंच आइमे' त्ति आद्ये ज्ञानावरणीयाख्ये कर्मणि पञ्चक्षीणाभिनिवोधिकज्ञानावरण ५, 'अंते' त्ति अन्त्ये—अन्तराये कर्मणि

पञ्चम क्षीणदानान्तराय ५ शेषकर्मणि-वेदनीय मोहनाय-नाम गोत्रलक्षणे द्वौ द्वौ भेदौ भवन, क्षीणसातावेदनाय क्षीणासातावेदनाय क्षीणदर्शनमोहनाय क्षीणचारित्रमोहनाय क्षीणाशुभनाम क्षीणशुभनाम क्षीणनीचगोत्र क्षीणोच्चगोत्र इति गाथार्थ ॥

—आवश्यकसूत्र हारि० टीका पृ ६६३

अर्थ (मूळ तथा व्याख्या) सिद्ध भगवतोना कर्मविपयमां ते ते कर्मो क्षीण करेला होवाथी नीचे मुजब ३१ गुणो छे —

क्षीणदर्शनावरणीयना ९ प्रकार (१) क्षीणचक्षुदर्शनावरणीय, (२) क्षीणअचक्षुदर्शनावरणीय, (३) क्षीणावधिदर्शनावरणीय, (४) क्षीणकेवलदर्शनावरणीय ( ) क्षीणनिद्र (६) क्षीणनिद्रानिद्र (७) क्षीणप्रचल (८) क्षीणप्रचलाप्रचल, (९) क्षीणस्त्यानर्द्धि ।

क्षीणायुष्कना ४ प्रकार (१) क्षीणनरकायुष्क, (२) क्षीणतिर्यंचायुष्क (३) क्षीणमनुष्यायुष्क (४) क्षीणदेवतायुष्क ।

क्षीणज्ञानावरणना ५ प्रकार (१) क्षीणाभिनिबोधिकज्ञानावरण (२) क्षीणश्रुतज्ञानावरण (३) क्षीणावधिज्ञानावरण (४) क्षीणमन पर्यवज्ञानावरण (५) क्षीणकेवळज्ञानावरण ।

क्षीणांतरायना ५ प्रकार (१) क्षीणदानान्तराय (२) क्षीणलाभान्तराय ( ) क्षीणभोगान्तराय (४) क्षीणउपभोगान्तराय (५) क्षीणवीर्यान्तराय ।

क्षीणवेदनीयना बे प्रकार (१) क्षीणसातावेदनीय (२) क्षीणासातावेदनीय ।

क्षीणमोहनीयना बे प्रकार (१) क्षीणदर्शनमोहनाय (२) क्षीणचारित्रमोहनीय ।-

क्षीणनामना बे प्रकार (१) क्षीणाशुभनाम (२) क्षीणशुभनाम ।

क्षीणगोत्रना बे प्रकार (१) क्षीणनीचगोत्र, (२) क्षीणोच्चगोत्र ।

आ रीते सिद्धोना ३१ गुणो छे । उपर्युक्त बन्ने प्रकारना गुणो मेळवता ६२ गुणो थाय छे ।



तत्र चिन्ताभावना-ऽनुप्रेक्षाव्यतिरिक्तं चलं चित्तम्। सा च सप्तधा—

प्रथमा तत्त्वचिन्ता-परमतत्त्वचिन्तारूपा। तत्राद्या जीवा-ऽजीवादीनां ९। द्वितीया ध्यानादीनामेव २४ भेदानाम्॥ १॥

द्वितीया मिथ्यात्व-सास्वादन-मिश्रदृष्टिगृहस्थरूपा। अत्रैतेषां स्वरूपं विपर्यस्तादिरूपं चिन्त्यम्॥२॥

तृतीया चतुर्विधानाम्—क्रिया(१८०)-अक्रिया(८४)-अज्ञान(६७)-विनय (३२)-वादिनां-(३६३) पाखण्डिनां स्वरूपचिन्ता॥ ३॥

पार्श्वस्थादिस्वयूथ्यस्वरूपचिन्ता॥ ४॥

नारक-तिर्यङ्-नरामराणामविरतसम्यग्दृष्टीनां स्वरूपचिन्ता॥ ५॥

मनुष्याणां देशविरतसम्यग्दृष्टीनां स्वरूपचिन्ता॥ ६॥

चिन्तानुं स्वरूप

* भावना अने अनुप्रेक्षाथी भिन्न जे चलचित्त ते 'चिन्ता' कहेवाय छे। ते चिन्ता[1] सात प्रकारे छे :

(१) तेमां प्रथम प्रकारना वळी बे पेटा प्रकारो छे : 'तत्त्वचिन्ता' अने 'परमतत्त्वचिन्ता'। जीवाजीव आदि तत्त्वोनुं चिन्तन करवुं ते 'तत्त्वचिन्ता'। ध्यान आदि २४ भेदानुं चिन्तन करवुं ते 'परमतत्त्वचिन्ता'।

(२) मिथ्यात्व, सास्वादन, तथा मिश्रदृष्टि गुणठाणामा रहेला गृहस्थोना विपर्यस्तादि[2] स्वरूपनु चिन्तन करवुं ते चिन्तानो बीजो प्रकार छे।

(३) १८० क्रियावादी[3], ८४ अक्रियावादी, ६७ अज्ञानवादी तथा ३२ विनयवादी एम ३६३ पाखंडीओना स्वरूपनुं चितन करवुं ते चिन्तानो त्रीजो प्रकार छे।

(४) पार्श्वस्थ[4] आदि पोताना जूथना साधुओना स्वरूपनुं चिंतन करवुं ते चिन्तानो चोथो प्रकार छे।

(५) नारकी, तिर्यच, मनुष्य अने देवताओमां जे अविरति सम्यग्दृष्टिओ होय तेओना स्वरूपनुं चिंतन करवुं ते चिन्तानो पाचमो प्रकार छे।

(६) मनुष्योमां जे देशविरत सम्यग्दृष्टिओ होय तेओना स्वरूपनुं चिंतन करवु ते चिन्तानो छट्ठो प्रकार छे।

---

* चोवीस प्रकारना ध्यानमार्गनुं निरूपण तो समाप्त थयुं। परतु ते निरूपण करती वखते जे केटलीक हकीकतो कहेली तेनु स्पष्टीकरण ग्रथकार हवे पछी करे छे।

१. प्रथम ध्यानना लक्षणमा 'चिन्ता अने भावनाथी उत्पन्न थयेलो जे अध्यवसाय ते ध्यान' एम जणाव्यु छे। तेमा चिन्ता एटले शुं? एनु स्पष्टीकरण ग्रथकारे अहीं कर्यु छे।

२ मिथ्यात्व गुणठाणामा तत्त्वनो विपर्यास होय छे। सास्वादन गुणठाणामा सम्यक्त्वनो कंईक स्वाद होय छे। मिश्रदृष्टिमां तत्त्व तथा अतत्त्व बन्ने प्रत्ये उदासीनता होय छे। आना विशेष स्वरूप माटे जुओ—कर्मग्रंथादि।

३ क्रियावादी वगेरेनुं वर्णन स्थानागादि सूत्रोमा छे।

४ बे प्रकारना पासत्था (पार्श्वस्थ), बे प्रकारना अवसन्ना, त्रण प्रकारना कुशीलो, बे प्रकारना ससक्तो अने अनेक प्रकारना 'यथाछदो' छे। जुओ—श्री देवेन्द्रसूरिकृत गुरुवंदनभाष्य गाथा—'पासत्थो उस्सन्नो°'॥

प्रमत्तादि अयोगिपर्यन्ताना नवाना सर्वविरताना सिद्धाना चानन्तर १५-परम्परगतभेदाना स्वरूप-चिन्तनम् ॥ ७ ॥

भावनाध्यानमाह—

"आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ।
योगारूढस्य तस्यैव शम कारणमुच्यते ॥ (—भगवद्गीता, अ० ६, श्लो० ३)

आरुरुक्षोरभ्यास ज्ञान-दर्शन चरित्र-वैराग्यभेदाच्चतुर्धा ।

---

(७) (छट्ठा) प्रमत्त गुणस्थानकथी (चौदमा) अयोगी केवली सुधीना नवगुणस्थानकोमा रहेला अविरति साधुओना तेमज १५ प्रकारना अनतर सिद्ध[1] अने अनेक प्रकारना परपर सिद्धोना स्वरूपनु चिंतन करवु ते चिन्तानो सातमो प्रकार छे।

भावनानु स्वरूप

हवे प्रथकार भावनानु स्वरूप कहे छे।

योग उपर आरूढ थवानी जे मुनिनी इच्छा होय तेने 'निष्काम-कर्म' साधन छे अने ज्यारे योगारूढ थाय छे त्यारे 'शम' ए मोक्षनु साधन छे[2]। योग उपर आरोहण करवानी इच्छा राखनार मनुष्यना अभ्यास, ज्ञान, दर्शन, चारित्र तथा वैराग्य भावनाना भेदथी चार प्रकारे छे

---

१ १५ प्रकारना अनतर सिद्धोना तथा अनेक प्रकारना परपर सिद्धोना भेदोनु स्वरूप श्री पन्नवणा सूत्रमां नीचे मुजब जणावेलु छे

से किं त असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा ? असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा दुविहा पण्णत्ता तंजहा—अणतरसिद्ध असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा य परम्परसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा य (सू० ६) से किं त अणतरसिद्धअसंसार समावण्णजीवपण्णवणा ? अणतरसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा पण्णरसविहा पण्णत्ता तंजहा—तित्थसिद्धा अतित्थसिद्धा तित्थगरसिद्धा अतित्थगरसिद्धा सयंबुद्धसिद्धा पत्तेयबुद्धसिद्धा बुद्धबोहियसिद्धा इत्थीलिङ्गसिद्धा पुरिसलिङ्गसिद्धा नपुंसकलिङ्गसिद्धा सलिङ्गसिद्धा अन्नलिङ्गसिद्धा गिहिलिङ्गसिद्धा एगसिद्धा अणेगसिद्धा (सू० ७)

से किं त परम्परसिद्धअसंसारसमावण्णजीवपण्णवणा ? २ अणेगविहा पण्णत्ता, तंजहा—अपढमसमयसिद्धा दुसमयसिद्धा तिसमयसिद्धा चउसमयसिद्धा जाव संखिज्जसमयसिद्धा असंखिज्जसमयसिद्धा अणतसमयसिद्धा, सेत्त परम्परसिद्धासंसारसमावण्ण जीवपण्णवणा, सेत्त असंसारसमावण्णजीवपण्णवणा (सू० ८)

भावार्थ आत्मा जे समये मोक्षमा जाय ते समये अनन्तर सिद्ध कहेवाय छे। त्यारपछीना समयोमा ए ज आत्मा परम्पर सिद्ध कहेवाय छे।

मुक्तात्माओना बे भेद छे अनन्तर सिद्धो अने परम्पर सिद्धो।

अनन्तर सिद्धोना १५ भेद छे। जेमके

(१) तीर्थसिद्ध, (२) अतीर्थसिद्ध, (३) तीर्थंकरसिद्ध (४) अतीर्थंकरसिद्ध (५) स्वयंबुद्धसिद्ध (६) प्रत्येकबुद्धसिद्ध (७) बुद्धबोधितसिद्ध, (८) स्त्रीलिंगसिद्ध (९) पुरुषलिंगसिद्ध (१०) नपुंसकलिंगसिद्ध (११) स्वलिंगसिद्ध (१२) अन्यलिंगसिद्ध, (१३) गृहिलिंगसिद्ध, (१४) एकसिद्ध (१) अनेकसिद्ध।

परम्पर सिद्धो अनेक प्रकारना छे। जेमके

अप्रथमसमयसिद्ध द्विसमयसिद्ध त्रिसमयसिद्ध, चतु समयसिद्ध इत्यादि यावत् संख्यातसमयसिद्ध असंख्यात समयसिद्ध, अनंतसमयसिद्ध।

२ तुलना आरुरुक्षुर्मुनिर्योग श्रयेद् बाह्यक्रियामपि।
योगारूढ शमादेव शुद्धयत्यन्तर्गतक्रिय ॥ —ज्ञानसार-शमाष्टक श्लो० ३

तत्र **ज्ञानभावना** सूत्रार्थ-तदुभयभेदात् त्रिधा—'**णाणे निच्चब्भासो**°' इत्यादि ॥ १ ॥

दर्शनभावना आज्ञारुचि(१)-तत्त्व(९)-परमतत्त्व(२४)-रुचिभेदात् त्रिधा—'**संकाइदोसरहिओ**°' इत्यादि ॥ २ ॥

चारित्रभावना सर्वविरत-देशविरत-अविरतभेदात् त्रिधा—'**णवकम्माणायणं**°' इत्यादि। अविरतेऽप्यनन्तानुबन्धिक्षयोपशमादिजन्य उपशमादिचारित्रांशोऽस्तीति ॥ ३ ॥

वैराग्यभावनाऽनादिभवभ्रमणचिन्तन-विषयवैमुख्य-शरीराशुचिताचिन्तनभेदात् त्रिधा—'**सुविइयजगस्सभावो**°' इत्यादि ॥ ४ ॥

---

(१) ज्ञानभावना : सूत्र, अर्थ, अने उभय एम त्रण प्रकारे छे। ज्ञानभावनानुं स्वरूप 'ध्यानशतक'[1] मा नीचे प्रमाणे जणावेल छे :

णाणे णिच्चब्भासो कुणइ मणोधारणं विसुद्धिं च।
नाणगुणमुणियसारो तो झाइ सुनिच्चलमईयो ॥ ३१ ॥

अर्थ : श्रुतज्ञाननो सदा अभ्यास मनना अशुद्ध व्यापारनो निरोध करीने मनने स्थिर करे छे। अने सूत्र अने अर्थना ज्ञाननी विशुद्धि करे छे। ज्ञान वडे जीव अने अजीवमा रहेला गुणो अने पर्यायोनो जेणे परमार्थ जाणेलो छे एवो पुरुष अत्यंत निश्चल बुद्धिवाळो थईने ध्यान करे छे।

(२) दर्शनभावना : आज्ञारुचि, नवतत्त्वनी रुचि, तथा २४ परमतत्त्वोनी रुचि (अर्थात् ध्यानना २४ भेदोनी रुचि)—आ रीते त्रण प्रकारे छे। दर्शनभावनानुं स्वरूप 'ध्यानशतक' मां नीचे मुजब छे :

संकाइदोसरहिओ पसम-थेज्जाइगुणगणोवेओ।
होइ असंमूढमणो दंसणसुद्धीए झाणम्मि ॥ ३२ ॥

अर्थ : शंका आदि दोषथी रहित, तेमज प्रशम अने स्थैर्य वगेरे गुणोथी सहित एवो मनुष्य दर्शनशुद्धिना लीधे ध्यान करती वखते जरा पण मोह पामतो नथी—जरा पण भ्रांतिचित्त थतो नथी।

(३) चारित्रभावना : सर्वविरत, देशविरत अने अविरत एम त्रण प्रकारे छे। चारित्रभावनानुं स्वरूप 'ध्यानशतक' मां नीचे मुजब छे :

णवकम्माणायाणं पोराणविणिज्जरं सुभायाणं।
चारित्तभावणाए झाणमयत्तेण य समेइ ॥ ३३ ॥

अर्थ : ज्ञानावरणीयादि नवा कर्मोने जीव चारित्रभावनाथी ग्रहण करतो नथी। जूना कर्मोने खपावे छे। तेमज ध्यानने पण अनायासे प्राप्त करे छे।

प्रश्न : अविरतने पण चारित्रभावनामा शी रीते अहीं गणेल छे?

उत्तर : अविरतमां पण अनतानुबंधीना क्षयोपशम वगेरेथी उत्पन्न थयेल उपशमादि रूप चारित्रनो अंश होय छे। तेथी तेनो पण अहीं चारित्रभावनामा समावेश करवामा आव्यो छे।

(४) वैराग्यभावना : अनादि भवभ्रमणनुं चिन्तन, विषयो प्रत्ये विमुखता, तथा शरीरनी अशुचितानुं चिन्तन ए रीते त्रण प्रकारे छे। वैराग्यभावनानुं स्वरूप 'ध्यानशतक' मा नीचे मुजब छे

सुविदियजगस्सभावो निस्संगो निब्भओ निरासो य।
वेरग्गभावियमणो झाणम्मि सुनिच्चलो होइ ॥ ३४ ॥

अर्थ : जेणे जगतनो स्वभाव सारी रीते जाणेलो छे, जे निःसंग, निर्भय तेमज आशंसाथी रहित छे तेवो वैराग्यभावित मनवाळो मनुष्य ध्यानमां अत्यत निश्चळ बने छे।

---

१. आगमोदयसमिति प्रकाशित 'आवश्यक हारिभद्रीयवृत्ति'मा पृ. ५८२ थी पृ. ६११ सुधीमां 'ध्यानशतक' छपायेलुं छे। श्री विनय-भक्ति-सुन्दर ग्रंथमाला (वेणप)मां 'ध्यानशतक' अलग पण छपायेलुं छे अने तेमा 'ध्यानशतक' ना कर्ता तरीके श्री जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणने जणाव्या छे।

अनुप्रेक्षा ध्यानादवतीर्णस्य, सा च द्वादशधाऽनित्यादिभेदात् 'पढम अणिच्चभाव°' इत्यादि ॥ रोहिणी[1]-प्रज्ञप्ति[2]-वज्रशृङ्खला[3]-वज्राङ्कुशी[4]-अप्रतिचक्रा[5] पुरुषदत्ता[6] काली[7]-महाकाली[8]-गौरी[9]-गान्धारी[10]-ज्वालामालिनी[11]-मानवी[12]-वैरोट्या[13]-ऽच्छुप्ता[14] मानसी[15]-महामानसीति विद्यादेवता ॥

अनुप्रेक्षानुं स्वरूप

ध्यान[1] दशामांथी उतर्या पछी अनुप्रेक्षा होय छे। ते अनित्यभावनादि भेदथी १२ प्रकारे छे। तेनुं (बार भावनानुं) स्वरूप 'मरणसमाधिपयन्ना'मां नीचे प्रमाणे छे

> पढम अणिच्चभाव असरणय एगयच अन्नत्त।
> संसारमसुभयाविय विविह लोग सहाव च ॥ ७३ ॥
> कम्मस्स आसव संवर च निज्जरणमुत्तमेयगुणे।
> जिणसासणमि बोहिं च दुलह चिंतए मइअ ॥ ७४ ॥

अर्थ (१) अनित्य भावना, (२) अशरण भावना, (३) एकत्व भावना, (४) अन्यत्व भावना, (५) संसार भावना, (६) अशुचि भावना, (अशुभ भावना) (७) विविध लोक स्वभाव भावना, (८) कर्म-आश्रव भावना, (९) कर्म-संवर भावना, (१०) कर्म निर्जरा भावना, (११) उत्तम गुणोनी भावना, (१२) श्री जिनशासन मळवी बोधि (सम्यक्त्व) मळवी ते दुर्लभ छे—ते भावना। ए प्रमाणे बार भावनाओ छे।

'नवतत्त्व' वगेरेमां बार भावना तेना नाम नीचे मुजब आप्या छे

(१) अनित्य भावना, (२) अशरण भावना, (३) संसार भावना, (४) एकत्व भावना, (५) अन्यत्व भावना (६) अशुचित्व भावना, (७) आश्रव भावना, (८) संवर भावना, (९) निर्जरा भावना, (१०) लोकस्वभाव भावना, (११) बोधिदुर्लभभावना, (१२) धर्मना साधक (साची आपनार) अरिहंत वगेरे दुर्लभ छे (धर्मस्वाख्यात भावना) ए भावना।

१६ विद्यादेवीओ

(१) रोहिणी, (२) प्रज्ञप्ति, (३) वज्रशृंखला, (४) वज्रांकुशी, (५) अप्रतिचक्रा, (६) पुरुषदत्ता, (७) काली, (८) महाकाली, (९) गौरी, (१०) गांधारी, (११) ज्वालामालिनी, (१२) मानवी, (१३) वैरोट्या, (१४) अच्छुप्ता, (१५) मानसी, (१६) महामानसी—ए सोळ विद्यादेवीओ छे।

---

१ तुलना— [illegible] [illegible] ॥ ६५ ॥

—संपादक

भवनयोगादिस्वरूपं चेदम्—

"जोगो[1] विरियं[2] थामो[3] उच्छाह[4] परक्कमो तहा चेट्ठा[6]।
सत्ती[7] सामत्थं[8] चिय, चउगुण वारट्ठ छन्नउई॥"[1]

जीवप्रदेशाना कर्मक्षयं प्रति व्यापारण नियोगिनामिव जीवेन राज्ञेव योगः॥ १॥

जीवप्रदेशैः कर्मणः प्रेरणं ध्यानाग्नौ चेटिकयेव कचवरस्य॥ २॥

जीवप्रदेशेभ्यः क्षपणार्थ कर्मप्रदेशानामाकर्षण दन्तालिकयेव कचवरस्य॥ ३॥

जीवप्रदेशेभ्यः कर्मणामूर्ध्वं नयन नलिकयेव जलस्य॥ ४॥

भवनयोगादिनुं स्वरूप

भवनयोगादिना ८ भेद नीचे मुजब छे :

(१) योग, (२) वीर्य, (३) स्थाम, (४) उत्साह, (५) पराक्रम, (६) चेष्टा, (७) शक्ति, (८) सामर्थ्य। ते दरेकना प्रणिधानादि चार भेदो छे। अने ते दरेकना जघन्य, मध्यम अने उत्कृष्ट एम त्रण प्रकारो छे। एटले कुल ८×४×३=९६ भेद थाय छे[2]।

भवनयोगादिनुं स्वरूप आ प्रमाणे छे :

(१) योग : राजा जेम पोताना अधिकारीओने कार्यशील बनावे तेम जीव आत्मप्रदेशोने कर्मना क्षय माटे कार्यशील बनावे ते योग कहेवाय छे।

(२) वीर्य : जेम दासी द्वारा कचरो बहार नखावी देवामां आवे छे तेम जीव आत्मप्रदेशो द्वारा कर्मोने ध्यानाग्निमां नाखवा माटे प्रेरणा करे ते 'वीर्य' कहेवाय छे।

(३) स्थाम : जेम दंताळीथी कचराने खेंचीने लाववामा आवे छे तेम जीव आत्मप्रदेशोमाथी कर्म-प्रदेशोने खपाववा माटे खेंची लावे ते 'स्थाम' कहेवाय छे।

(४) उत्साह जेम नळी वडे पाणीने ऊंचु चढाववामां आवे छे तेम आत्मप्रदेशमांथी कर्मने ऊचा लई जवा ते उत्साह कहेवाय।

---

१ मूळमा 'वारट्ठ छन्नउई' पाठ छे। ए नीचेनी गणत्रीथी सगत थई शके एम लागे छे :
जघन्यादि त्रण भेदो अने ते दरेकना प्रणिधान वगेरे चार भेदो—आ रीते १२ भेद थया। अने योग वगेरे दरेकना ते १२ भेदो होवाथी १२×८=९६ भेदो थाय छे।

२ श्री शिवशर्माचार्य रचित 'कम्मपयडी' गाथा-३ नी श्रीमलयगिरिसूरिरचित टीकामाथी उद्धृत करेली गाथा अने श्री चन्द्रमहत्तर रचित 'पंचसंग्रह' द्वितीय खडना मूळनी चोथी गाथा तेना चोथा पादना फेरफार साथे आ रीते छे—

"जोगो विरियं थामो उच्छाह परक्कमो तहा चेट्ठा।
सत्ति सामत्थं चिय जोगस्स हवंति पज्जाया॥ ४॥

योग वगेरे जे अहीं प्रकारो बताव्या छे ते 'पंचसग्रह'कारे योगना पर्यायवाची नामो तरीके जणाव्या छे।

अधोनयन कर्मण सस्थितकुतुपात् तैलस्येव, घण्टिकाया वाऽमृतकलाया ॥ ५ ॥

स्वस्थानस्य कर्मण शोषण तप्तायसभाजनस्थजलस्येव ॥ ६ ॥

जीव-कर्मणोर्वियोग प्रत्याभिमुख्यजनन, तिलानामिव तैलवियोजन यथा घाणकेन निपीडनम् ॥ ७ ॥

साक्षाज्जीव-कर्मणोर्वियोगकरण खल तैलयोरिव ॥ ८ ॥

एतेषामष्टानामपि प्रत्येक त्रैविध्य योग-महायोग-परमयोगादिभेदात्—जघन्यो योग, मध्यमो महायोग, उत्कृष्ट परमयोग । एव वीर्य-परमवीर्यादयोऽपि वाच्या—एव भेदा २४, तेऽपि प्रत्येक चतुर्धा–प्रणिधान-समाधान-समाधि-काष्ठासमाधिभेदात् ।

तत्र **प्रणिधान**मशुभेभ्यो निवर्तनम् १ । **समाधान** शुभेषु प्रवर्तनम् २ । रागद्वेषमाध्यस्थ्यालम्बन **समाधि** ३ । ध्यानेन मनस एकाग्रतयोच्छ्वासादिनिरोध **काष्ठा** ४ । प्रसन्नचन्द्र-भरतेश्वर-दमदन्त-पुष्पभूतयो यथाक्रममत्र दृष्टान्ता ॥

---

(५) पराक्रम कुडलामाथी जेम तेलने नीचे रेडवामा आवे अथवा अमृतनळीमाथी जेम अमृत घण्टिकामा (पडजीभमा) झरे तेम (ऊचे गयेला) कर्मोने नीचे लई जवा ते पराक्रम कहेवाय छे।

(६) चेष्टा तपेला लोखडना भाजनमा रहेलु जल जेम सुकाई जाय छे तेम पोताना स्थानमा रहेला कर्मोने सूकवी नाखवा ते 'चेष्टा' कहेवाय छे।

(७) शक्ति तलमाथी तेलने छूटु पाडवा माटे जेम तलने घाणीमा पीलवामा आवे छे तेम जीव अने कर्मोनो वियोग करवा माटे अभिमुख थवु ते शक्ति कहेवाय छे।

(८) सामर्थ्य जेम खोळ अने तेल जुदा पाडवामा आवे छे तेम जीव अने कर्मानो जे साक्षात् वियोग करवो ते 'सामर्थ्य' कहेवाय छे।

आ आठे भेदोना दरेकना 'योग', 'महायोग' अने 'परमयोग' वगेरे त्रण प्रकारो छे जघन्य होय ते 'योग' कहेवाय छे, मध्यम होय ते 'महायोग' कहेवाय छे अने उत्कृष्ट होय ते 'परमयोग' कहेवाय छे। आ प्रमाणे वीर्य, महावीर्य, परमवीर्य वगेरे प्रकारो समजवा। आ रीते ८×३=२४ भेदो थाय छे। ते दरेकना पण 'प्रणिधान', 'समाधान', 'समाधि' अने 'काष्ठा' एम चार प्रकारो छे।

'प्रणिधान' एटले अशुभ कार्योमाथी निवृत्ति लेवी। 'समाधान' एटले शुभ कार्योमा प्रवृत्ति करवी। 'समाधि' एटले राग अने द्वेष (ना प्रसग)मा माध्यस्थ्य भाव राखवो। 'काष्ठा' एटले ध्यान वडे मननी एकाग्रताथी उच्छ्वास आदिनो निरोध करवो।

उपर वर्णवेल 'प्रणिधान' 'समाधान' 'समाधि' तथा 'काष्ठा' ना सबधमा अनुक्रमे प्रसन्नचंद्र राजर्षि, भरत चक्रवर्ती, दमदतमुनि तथा पुष्पभूति आचार्यना दृष्टान्तो छे। (जुओ परिशिष्ट ६)

---

१ परमात्मरमाथा ते ज अमृतकला कहेवाय छे।
अन्ये परा शिवा प्राहुर्ध्याधो व्यापिनी किल।
परमात्मरमाथा सा सवामृतकलोच्यते ॥

—उपमितिभवप्रपञ्चाकथा प्रस्ताव–८ श्लोक–७४६

२ योगना योग, महायोग अने परमयोग। वीर्यना वीर्य महावीर्य अने परमवीर्य। स्थामना स्थाम महास्थाम अने परमस्थाम। —आ रीते दरेकना त्रण त्रण भेदो समजवा।

एवं चतुर्विंशतिश्चतुर्गुणिता जाताः ९६ ॥
एते मरुदेव्या इव स्वभावेन जायमाना **भवनयोगाः** ॥
एत एवोपेत्याभोगपूर्वकं क्रियमाणत्वात् **करणयोगाः** ॥
करणानि तु ९६ इत्थं ज्ञेयानि—

चित्तं चेयण[3] सन्ना[4] विन्नाणं[5] धारणा[6] सई[7] बुद्धी[8]।
ईहा[9] मई[10] वियक्का[11] उवओगे[12] मणाइ छन्नउइ ॥

मणाइ इति मनःप्रभृतीनि, मन एतेषामादौ कर्तव्यम्।

तत्राद्यं मनोविषयं करणमष्टधा—उन्मनीकरणं[1], महोन्मनीकरणं[2], परमोन्मनीकरणं[3], सर्वोन्मनीकरणं[4], उन्मनीभवनं[5], महोन्मनीभवनं[6], परमोन्मनीभवनं[7], सर्वोन्मनीभवनम्[8] ॥

आ प्रकारे चोवीशने चारे गुणतां २४×४=९६ प्रकारो थाय छे।

आ ज ९६ प्रकारो मरुदेवा मातानी जेम स्वाभाविक रीते—सहज स्वभावे थाय तो ते 'भवनयोग' कहेवाय छे। अने ए ज ९६ प्रकारो जाणी जोईने थाय तो ते 'करणयोग' कहेवाय छे।

९६ करणोनुं स्वरूप

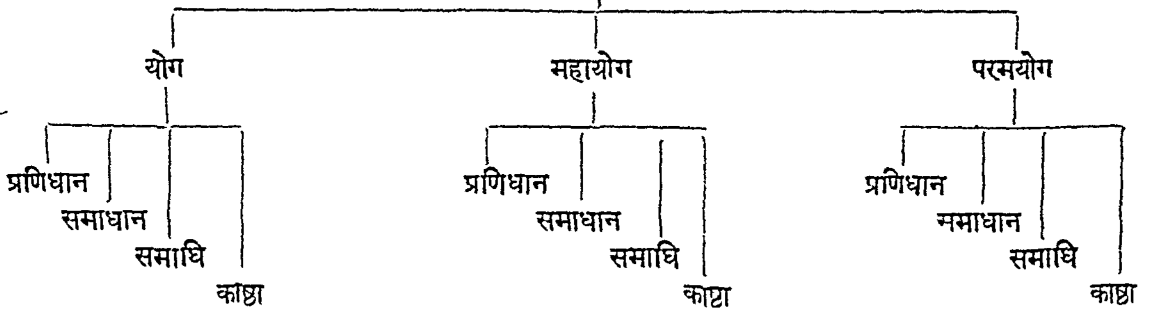
(१) मन (२) चित्त (३) चेतना (४) संज्ञा (५) विज्ञान (६) धारणा (७) स्मृति (८) बुद्धि (९) ईहा (१०) मति (११) वितर्क (१२) उपयोग—आ बार वस्तु संबंधी ९६ करण थाय छे। 'मणाइ' एटले मन। आ बधां करणोमां मनने प्रथम गणवुं।

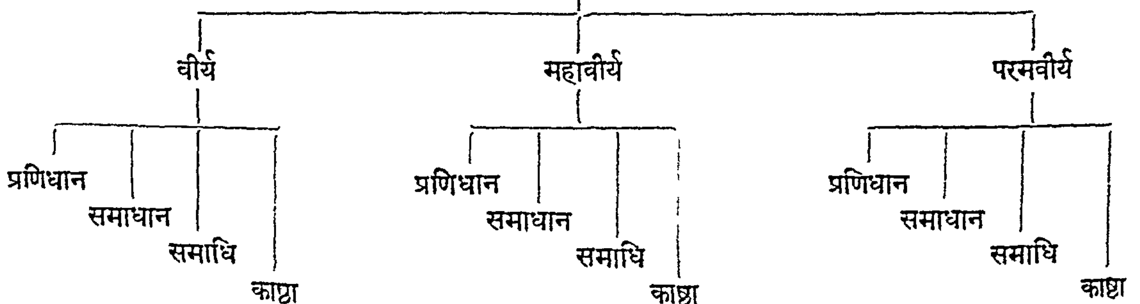
(१) 'मन' विषयक करणना ८ प्रकारो छे।

(१) उन्मनीकरण (२) महोन्मनीकरण (३) परमोन्मनीकरण (४) सर्वोन्मनीकरण (५) उन्मनीभवन (६) महोन्मनीभवन (७) परमोन्मनीभवन (८) सर्वोन्मनीभवन।

---

१. उदाहरण तरीके :





आ ज रीते स्थाम आदि भेदो समजवा। ८×३×४=९६।

मनसोऽशन चिन्तनम्, तदभावोऽनशनम्। उत् प्राबल्येन गतमिव चिन्ताऽभावान्नष्टमिव मनो यस्यां सा उन्मना, उन्मना क्रियतेऽनेन उन्मनीकरण मनोमृत्युरित्यर्थ, एतज्जघन्यम्[1]। द्वितीयमेतदेव मध्यम[2], तृतीयमुत्कृष्ट[3], चतुर्थं जघन्यादिभेदत्रयसलीनतामकर्म्[4]। भवनचतुष्टयमप्येवम्।

नवर उपेत्य यत् क्रियते आभोगपूर्वक तीर्थङ्करादिवत् [तत्] **करणम्**।

यत् त्वनाभोगेनैव स्वयमुल्लसति मरुदेव्यादिवत् तद् **भवनम्** ॥ १ ॥

द्वितीय चित्तविषय करणमष्टधा—निश्चित्तीकरणमित्यादि ४, निश्चित्तीभवनमित्यादि ४।

चित्त—त्रिकालविषय चिन्तनम्, तदभाव उच्छ्वासाद्यभावहेतु ॥ २ ॥

तृतीय चेतनाविषय निश्चेतनीकरणमित्यादि ८ सर्वशरीरगतचेतनाद्यभावरूप रागाद्यभावहेतु ॥३॥

एव नि सज्ञीकरणमित्यादि ८ आहारादिगृद्ध्यभावरूपम। अनेन प्रमत्तादीनामाहार गृह्णतामपि गृद्ध्यभाव ॥ ४ ॥

चिन्तन ए मननो खोराक छे। ते चिंतननो अभाव ते मननु अनशन छे। जेमा प्रबळताथी मन चाल्यु गयु होय अर्थात् चिंताना अभावथी जाणे मन नाश पाम्यु होय एवी अवस्थाने उन्मना अवस्था कहे छे। एवी अवस्था जे ध्यान वडे कराय तेने 'उन्मनीकरण' कहेवाय छे। बीजा शब्दोमा कहीए तो जेना मननु मृत्यु ते जघन्य उन्मनीकरण छे। आ ज उन्मनीकरण जो मध्यमकोटिनु होय तो बीजा प्रकारमा अने उत्कृष्ट कोटिनु होय तो त्रीजा प्रकारमा अने जघन्य आदि त्रणेना मिश्रणवाळु होय तो चोथा प्रकारमा समजवु। भवनना चार प्रकार पण ते ज रीते समजवा।

जेम तीर्थंकर भगवतो उपयोगपूर्वक करे छे तेम उपयोगपूर्वक कराय ते 'करण' कहेवाय छे। अने मरुदेवीमातानी जेम उपयोग (प्रयत्न) कर्या विना पोतानी मेळे ज जे थाय ते 'भवन' कहेवाय छे ॥ १ ॥

(२) चित्तविषयक करणना ८ प्रकारो छे।

(१) निश्चित्तीकरण, (२) महानिश्चित्तीकरण, (३) परमनिश्चित्तीकरण, (४) सर्वनिश्चित्तीकरण (५) निश्चित्तीभवन (६) महानिश्चित्तीभवन (७) परमनिश्चित्तीभवन (८) सर्वनिश्चित्तीभवन। चित्त एटले त्रण काळ सबधी चिंतन। तेना अभावथी उच्छ्वास वगेरेनो अभाव थाय छे ॥ २ ॥

(३) 'चेतना'ना निश्चेतनीकरण वगेरे ८ प्रकारो छे।

'निश्चेतनीकरण' समग्र शरीरनी अदर चेतनाना अभावरूप छे अने ते राग वगेरेना अभावनु कारण छे ॥ ३ ॥

(४) नि सज्ञीकरण वगेरे ८ प्रकारो छे।

'नि सज्ञीकरण' एटले आहार आदिनी लोलुपतानो अभाव। आथी प्रमत्त आदि योगीओ आहार ग्रहण करे छे छता पण तेमा तेमने लोलुपतानो अभाव होय छे ॥ ४ ॥

निर्विज्ञानीकरणमित्यादि ८ विज्ञानाभावरूपं, यथा सुषुप्तावस्थायां न किमप्यनुभूतमपि वस्तु वेद्यते, एवमत्र जाग्रतोऽपि वस्तुविज्ञानाभावः ॥ ५ ॥

निर्धारणीकरणमित्यादि ८ धारणाऽविच्युतिरूपा, तदभावः ॥ ६ ॥

उक्तं च—

"चित्तं[1] तिकालविसयं चेयण[2]पच्चक्ख सन्न[3]मणुसरणं।
विन्नाणणेगसेयं[4] कालमसंखेयरं धरणा[5] ॥ [—दशवैकालिकभाष्य, गाथा–१९ पृ. १२५ अ]

विस्मृतीकरणमित्यादि ८॥ स्मृतिर्धारणाया द्वितीयो भेदः। यतः—अविच्युति-स्मृति-वासना-भेदात् त्रिधा धारणा वर्ण्यते ॥ ७ ॥

निर्बुद्धीकरणमित्यादि ८ ॥ बुद्धिः औत्पातिक्यादिश्चतुर्धाऽवायरूपा, अवायस्तु निश्चय उच्यते ॥ ८ ॥

निरीहीकरणमित्यादि ८ ॥ ईहा विचारणा, किमयं स्थाणुः पुरुषो वेति ॥ ९ ॥

---

(५) 'निर्विज्ञानीकरण' वगेरे ८ प्रकारो छे।

'निर्विज्ञानीकरण' विज्ञानना अभावरूप छे। अर्थात् जाग्रत अवस्थामां अनुभवेली कोई पण वस्तुनु निद्रावस्थामां वेदन होतुं नथी। तेम आ करण वखते जाग्रत अवस्थामां पण वस्तुना विज्ञाननो अभाव होय छे ॥ ५ ॥

(६) 'धारणा' ना निर्धारणीकरण वगेरे ८ भेद छे।

'धारणा' एटले (वस्तुना ज्ञाननी) अविच्युति। तेनो अभाव ते निर्धारणीकरण। कह्युं छे के: 'चित्त' भूत, भविष्य अने वर्तमानकाळ एम त्रणे काळना अर्थोने सामान्यथी जाणे छे। 'चेतना' प्रत्यक्ष वर्तमानकालीन अर्थोने जाणे छे। 'संज्ञा' ते अनुस्मरणने कहे छे के जे पदार्थ पहेलां जोयो होय। 'विज्ञान' अनेक प्रकारनुं छे। अनेक धर्मवाळा पदार्थमां ते ते विशिष्ट धर्मरूपे जे अनेक प्रकारनुं ज्ञान थाय ते 'विज्ञान' कहेवाय छे। 'धारणा' असंख्यात अथवा संख्यात काळ संबधी होय छे ॥ ६ ॥

(७) विस्मृतीकरण वगेरे आठ प्रकारो छे।

'स्मृति' शब्दथी अहीं धारणानो बीजो भेद समजवो; कारण के धारणाना त्रण भेदो छे। अविच्युति, स्मृति अने वासना। अहीं बीजो भेद विवक्षित छे ॥ ७ ॥

(८) निर्बुद्धीकरण वगेरे आठ प्रकारो छे।

बुद्धि शब्दथी अवायस्वरूप औत्पातिकी, वैनयिकी, कार्मणिकी अने पारिणामिकी एम चार प्रकारनी बुद्धि लेवी। निश्चयने अवाय कहेवामां आवे छे। तेनो अभाव ते निर्बुद्धीकरण ॥ ८ ॥

(९) निरीहीकरण वगरे ८ प्रकारो छे।

'ईहा' एटले विचारणा, अर्थात् आ ठूंठुं छे के पुरुष छे एवी जे विचारणा जागे ते ईहा। तेनो अभाव ते निरीहीकरण ॥ ९ ॥

---

१ धारणाना त्रण भेद छे: अविच्युति, वासना अने स्मृति। तेमां अविच्युति अने स्मृति अन्तर्मुहूर्त काल प्रमाण होय छे, ज्यारे वासना केटलाक जीवोने असख्यात वर्षो सुधी अने केटलाकने सख्यात वर्षो सुधी होय छे।

निर्मंतीकरणमित्यादि ८ ॥ मतिरवग्रहो दशधा ॥ १० ॥

निर्वितर्कीकरणमित्यादि ८ ॥ ईहोत्तरकालभावी, अवायात् पूर्वं ऊहो वितर्कः । "**अरण्यमेतत् सविताऽस्तमागत °**" इत्यादि ॥ ११ ॥

उपयोगो वासनारूपस्तदभावो निरुपयोगीकरणम् ॥ १२ ॥

महा-परमादिविशेषणानि तथैव जघन्यसयोगजभेदानि भावनीयानि । करण-भवनभेदोऽपि तथैव ९६ ॥

---

(१०) निर्मंतीकरण वगेरे ८ प्रकारो छे।

'मति' शब्दथी दश प्रकारनो अवग्रह समजवो। (पाच इद्रिय, छट्ठु मन—एटलानो अर्थावग्रह, तथा मन अने चक्षु सिवायनी बाकीनी चार इद्रियोथी थतो व्यञ्जनावग्रह—एम दश प्रकार थाय छे) ॥१०॥

(११) निर्वितर्कीकरण वगेरे ८ प्रकारो छे।

'वितर्क'—जे ईहा पछी अने अवाय (अपाय) पूर्वे तर्क थाय ते वितर्क। जेम—

अरण्यमेतत् सविताऽस्तमागतो,
न चाधुना सभवतीह मानव ।
प्रायस्तदेतेन खगादिभाजा,
भाव्य रतिप्रियतमारिनाम्ना ॥ पत्र–७८ ॥

—विशेषावश्यकभाष्य, श्रीकोट्याचार्य टीका

—आ अरण्य छे, सूर्य अस्त पाम्यो छे, अत्यारे अहीं कोई मानव न होइ शके, आ कारणोथी घणे भागे आ पदार्थ पक्षीओवाळो अने रतिना प्रियतम कामदेवना शत्रु शिव महादेवना नामवाळो पदार्थ (स्थाणु) होवो जोईए॥ ११ ॥

(१२) निरुपयोगीकरण वगेरे आठ प्रकारो छे।

वासनारूप जे 'उपयोग' तेनो अभाव ते निरुपयोगीकरण॥ १२ ॥

आना महा, परम आदि विशेषणोथी तेमज तेना जघन्य आदि सयोगथी थता भेदो समजी लेवा।

पहेला कह्या प्रमाणे 'उपयोग'ना 'करण' अने 'भवन' ना भेदो पण समजी लेवा।

---

१ कोइ माणस जगलमां गयो होय अने त्या ज सांज पडी गइ होय ते वखते दूरथी थाडनु ठुठु देखातु होय त्यारे प्रथम तो स्वाभाविक रीते एना मनमा शका थशे। "आ ठुठु हशे के पुरुष हशे?" पछी ते तर्क-वितर्क करवा लागे छे "एक तो आ जगल छे अने वळी अत्यारे सूर्यास्त थइ गयो छे। माटे आ स्थाने अने आ समये मनुष्य सभवी शके नहि। एटले आ पक्षीओवाळु थडनु ठुठु होवु जोइए।

आ ज वातने आ श्लोकमा आलकारिक शब्दोमा रजू करी छे। सस्कृतमां ठूठाने 'स्थाणु' कहेवामा आवे छे अने महादेवनु बीजु नाम पण 'स्थाणु' छे। महादेवे रतिना पति कामदेवने बाळीने भस्मीभूत कर्यो होवाथी महादेव काम देवना शत्रु छे। एटले रतिना पतिना शत्रुना समान नाम (स्थाणु) वाळा तरीके झाडना ठूठानो अहीं उल्लेख कर्यो छे।

एवं करणानि ९६ ॥

करणैर्गुणिता ध्यान(२४)भेदाः २३०४ ।

एते करणयोगैः षण्णवतिसंख्यैर्गुणिताः २२११८४ ।

भवनयोगैरप्येवं भेदाः, उभयं ४४२३६८ ॥

उक्तं च—

" चत्तारि सयसहस्सा वायालीसं भवे सहस्साइं ।
तिन्नि सया अडसट्ठा नेया छउमत्थझाणाणं ॥ "

' योगो विरियं० 'त्यादि

यो योग उक्तस्तस्यालम्बनानि २९० ।

आ रीते करणना १२×८=९६ प्रकार छे। तेनी (करणना ९६ भेदो) साथे ध्यानना २४ भेदोने गुणतां ९६×२४=२३०४ थाय छे। तेने ९६ करणयोग वडे गुणतां २२११८४ भेदो थाय छे। ए ज रीते २३०४ ने ९६ भवनयोग वडे गुणतां २२११८४ भेदो थाय छे। आम बन्ने मळीने ४४२३६८ प्रकारो थाय छे। कह्युं छे के—चार लाख, बेतालीस हजार, त्रणसो ने अडसठ—ए छद्मस्थना ध्यानना प्रकारो जाणवा।

योगनां आलंबनो

योगो विरिय० इत्यादि गाथा द्वारा जे योग कहेवामा आव्यो तेना आलंबनो २९० छे। तेमा मनोयोग आ प्रमाणे समजवो :

जणवय-सम्मय-ठवणा नामे रूवे पडुच्च सच्चे अ।[1]
ववहार-भाव-जोगे दसमे ओवम्मसच्चे अ ॥ २७३ ॥
कोहे माणे माया लोभे पेज्जे तहेव दोसे अ।
हासभए अक्खाइय उवघाए निस्सिआ दसमा ॥ २७४ ॥
उप्पन्नविगयमीसग जीवमजीवे अ जीवअज्जीवे ।
तहऽणंतमीसगा खलु परित्त अद्धा अ अद्धद्धा ॥ २७५ ॥[2]
आमंतणि आणवणी जायणि तह पुच्छणी अ पन्नवणी ।
पच्चक्खाणी भासा भासा इच्छाणुलोमा अ ॥ २७६ ॥
अणभिग्गहिआ भासा भासा अ अभिग्गहम्मि बोद्धव्वा ।
संसयकरणी भासा वायड अव्वायडा चेव ॥ २७७ ॥

—श्री दशवैकालिक निर्युक्ति। पृ. ४१६-१९.

---

१. आ गाथाओना अर्थ माटे जुओ परिशिष्ट नं ७

२. २७५ मी गाथा सिवायनी आ बधी गाथाओ श्री पन्नवणासूत्रना ११ मा भाषापदमा १६५ मा सूत्रमां पण छे।

तत्र मनोयोग, 'जणवयसम्मय' ' इत्यादि भाषा ४२, 'कालतिय' ' इत्यादि १६, उभय ५८। तत आसां मनश्चिन्तनानुसारे मनोयोगत्वम् ५८, भाषणानुसारे भाषायोगत्वम् ५८ ॥

औदारिककाययोगो द्वात्रिंशद्भेदो जीवभेदात्—

आ गाथाओ अनुसार भाषाना ४२ प्रकारो छे। वळी 'कालतिय' इत्यादि गाथानुसार १६ प्रकारो थाय छे। आ बन्ने मळीने ५८ प्रकारो थाय छे। आ बधा प्रकारोनो मनथी चिंतन करती वखते ५८ प्रकारनो मनोयोग बने छे अने बोलती वखते ५८ प्रकारनो भाषायोग बने छे।

औदारिक काययोग जीवोना भेदो अनुसार ३२ प्रकारे छे, जेमके—

---

१ श्री बृहत् कल्पसूत्रनी श्रीमलयगिरिसूरिरचित टीकामां आ गाथा जोवामा आवे छे त्या तेनो नीचे प्रमाणे उल्लेख छे

तानि च षोडश वचनान्यमूनि—

लिंगतिय वयणतियं, कालतियं तह परुक्ख पच्चक्खं।
उवणय ऽवणयचउक्कं, अज्झत्थियय तु सोलसमं ॥

अस्या [अ]क्षरगमनिका—'लिङ्गत्रयम्' इयं स्त्री अयं पुमान्, इदं कुलम्। वचनत्रिकम्' एकवचन द्विवचन बहुवचनमिति। कालत्रिकम् अकरोत् करोति करिष्यति च। परोक्षवचनं यथा स इति। प्रत्यक्षवचनम् एष इति। उपनय—स्तुति अपनय—निन्दा तयाश्चतुष्कमुपनया—ऽपनयचतुष्कम्, यथा—रूपवती स्त्रीत्युपनयवचनम्, कुरूपा स्त्रीत्यपनयवचनम्, रूपवती स्त्री किन्तु दुःशीलेत्युपनया—ऽपनयवचनम्, कुरूपा स्त्री किन्तु सुशीलेत्यपनयोपनयवचनम्। तथा अन्यच्चेतसि निधाय विप्रतारकबुद्ध्या अन्यद् निभणिषुरपि सहसा यच्चेतसि तदेव यद् वक्ति तत् षोडशमध्यात्मवचनम् ॥ १६४ ॥ पीठिका पृ ५०

अर्थ त्रण लिंग—पुल्लिंग स्त्रीलिङ्ग, नपुंसकलिङ्ग। जेमके पुमान्, स्त्री अने कुलम्।
त्रण वचन—एकवचन, द्विवचन, बहुवचन। जेमके पुरुष पुरुषौ, पुरुषा।
त्रण काळ—वर्तमानकाळ, भूतकाळ भविष्यकाळ। जेमके करे छे, कर्युं करशे।
परोक्षवचन—जेमके 'ते'।
प्रत्यक्षवचन—जेमके 'आ'।

उपनयवचन (प्रशंसावचन) जेमके 'आ स्त्री रूपवती छे'।
अपनयवचन (निंदावचन) जेमके आ स्त्री कुरूपा छे।
उपनय-अपनयवचन जेमके 'आ स्त्री रूपवती छे परंतु दुःशीला छे'।
अपनय-उपनयवचन जेमके 'आ स्त्री कदरूपी छे परंतु सुशीला छे'।

अध्यात्मवचन—मनमां जुदु धारीने बीजाने ठगवानी बुद्धिथी बीजु कहेवानी इच्छा होय छतां सहसा जे चित्तमां धारेलु होय ए ज बोलाइ जाय।

आ सोळ भेदोनो उल्लेख श्री पन्नवणा सूत्रना भाषापदमा १७३ मा सूत्रमा पण छे।

२ भाषा बोल्या पहेलां तेवी जातनो विचार तो आवे ज अने पछी उच्चार कराय एटले ए ज ५८ प्रकारो पहेलां विचार करे त्यारे मनोयोगना ५८ प्रकारो कहेवाय छे अने बोले त्यारे 'वचनयोग' (भाषा) ना ५८ प्रकारो कहेवाय छे।

"पुढवि-दग-अगणि-मारुय-वणस्सइऽणंता पणिंदिया चउहा।
वणपत्तेया विगला दुविहा सव्वे वि वत्तीसं ॥"

तत्र पृथिव्य[1]प्[2]-तेजो[3]-वाय्व[4]नन्तकायिका[5]: सूक्ष्म-बादरपर्याप्ताऽपर्याप्तभेदाच्चतुर्धा। संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्ताऽपर्याप्तभेदात् पञ्चेन्द्रियाश्चतुर्धा। प्रत्येकवनस्पति-विकलेन्द्रियाः पर्याप्ताऽपर्याप्तभेदाः।

वैक्रियं पञ्चविंशतिधा। सप्तानां नारकभेदानां पर्याप्तापर्याप्तभेदेन चतुर्दश। वायुकायिकानां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च एकैकम्। देवानां चतुर्विधानां पर्याप्तापर्याप्तभेदेनाष्टौ—एवं २५।

आहारकं चैकविधमेव। एवं कायत्रयस्यापि भेदाः ५८। एतदन्तर्गतत्वात् तैजसस्यापि ५८। एवं कार्मणस्यापि ५८। —एवमालम्बनानि २९०॥

अत्र मनःप्रभृतीनि योगप्रासादारोहणालम्बनानि यथा वा रङ्गदानाय वस्त्रे पाशः क्रियते।

वीर्ययोगालम्बनानि—ज्ञानाचार ८, दर्शनाचार ८, चारित्राचार ८, तप आचार १२, वीर्याचार ३६—एवम् ७२।

पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, साधारण वनस्पति अने पंचेन्द्रिय ए वधा चार चार प्रकारे छे। प्रत्येक वनस्पति अने विकलेद्रिय (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय तथा चउरिन्द्रिय) बब्बे प्रकारे छे। बधा मळीने ३२ भेदो थाय छे। [६×४=२४; (१+३)२=८; २४+८=३२ भेदो थाय छे] अर्थात् पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय, वायुकाय अने अनंतकाय—ए पांचे सूक्ष्म तेमज बादर अने पर्याप्त तेमज अपर्याप्त एम चार भेदोथी वीश प्रकारे छे। पंचेद्रियना संज्ञी, असंज्ञी, पर्याप्त अने अपर्याप्त एम चार भेदो छे। प्रत्येक वनस्पतिकाय तेमज विकलेद्रिय—अर्थात् बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चउरिंद्रिय ते चारेना पर्याप्त अने अपर्याप्त एम बे भेदो होवाथी आठ प्रकारे छे। (२०+४+८=३२)

वैक्रिययोग २५ प्रकारे छे। नारकी (जीवो) ना सात भेदो छे। ते दरेकना पर्याप्त अने अपर्याप्त बे भेद होवाथी बधा मळीने चौद भेदो थाय छे। वायुकायनो एक भेद छे। पंचेद्रिय तिर्यंच अने मनुष्यनो एकेक भेद छे। चार प्रकारना (भवनपति, व्यंतर, ज्योतिष्क अने वैमानिक) देवोना दरेकना पर्याप्त अने अपर्याप्त बे भेद होवाथी एकदरे आठ प्रकार थाय छे। एम बधा मळीने २५ प्रकारो थाय छे। (१४+१+२+८=२५)

आहारक एक प्रकारनो छे। ए रीते त्रणे काय (औदारिक, वैक्रिय, आहारक)ना मळीने ५८ भेदो थाय छे। तेजसकाय तेमां अंतर्गत होवाथी तेना पण भेदो छे। ए ज प्रकारे कार्मण शरीरना पण ५८ भेदो छे। कुल मळीने ५८+५८+५८+५८+५८=२९० आलंबनो छे।

जेम वस्त्रमां रंग करवा माटे प्रथम पाश आपवामा आवे छे तेम अही योगरूप महेल उपर चढवा माटे मन वगेरे आलंबनो छे।

वीर्ययोगनां आलंबनो—ज्ञानाचार ८, दर्शनाचार ८, चारित्राचार ८, तपाचार १२, वीर्याचार ३६—कुल ७२ प्रकारना छे।

स्थामालम्बनानि ८—

"बंधणसंकमणुव्वट्टणा य अपवट्टणा उदीरणया।
उवसामणा निहत्ती निकायणा च त्ति करणाइ॥" [— कम्मपयडी, गाथा २]

उत्साहस्य ऊर्ध्वलोकवस्तुचिन्ता। पराक्रमस्य अधोलोकचिन्ता। चेष्टाया तिर्यग्लोकचिन्तनम्। शक्ते तत्त्व परमतत्त्वचिन्ता। सामर्थ्यस्य सिद्धायतनसिद्धस्वरूपचिन्तालम्बनम्॥

इति ध्यानविचारः॥

स्थामयोगना आठ आलंबनो नीचे मुजब छे—

(१) बंधनकरण, (२) संक्रमकरण, (३) उद्वर्तनाकरण, (४) अपवर्तनाकरण, (५) उदीरणाकरण, (६) उपशमनाकरण, (७) निधत्तिकरण अने (८) निकाचनाकरण।

ऊर्ध्वलोकमानी वस्तुओनी चिंता ते उत्साहनु आलंबन छे। अधोलोकमानी वस्तुओनी चिंता ते पराक्रमनु आलंबन छे। तिर्यग्लोकमानी वस्तुओनी चिंता ते चेष्टानु आलंबन छे। तत्त्व अने परमतत्त्वनी चिंता ते शक्तिनु आलंबन छे। सिद्धोनु स्थान अने सिद्धोना स्वरूपनी चिंता ते सामर्थ्यनु आलंबन छे।

परिशिष्ट १

आचार्य पुष्पभूति अने मुनि पुष्यमित्रनी कथा

पृ २२७ मा 'भावथी कला' नी जे व्याख्या छे तेनु अहा आपेल कथा समर्थन करे छे। अत्यत अभ्यासना कारणे देश, काळ तेमज करणनी अपेक्षाए स्वयमेव ज चढे अने बीजा वडे उताराय ते समाधिने भावकला कहेवामा आवे छे। आचार्य पुष्पभूतिनी आवी समाधि तेमना शिष्य पुष्यमित्र मुनिए उतारी हती। तेमनी कथा 'श्री आवश्यक निर्युक्ति'नी श्री हारिभद्रीया टीकामा पृ ७२२ मा 'ध्यानसंवरयोग'ना प्रसगमा छे। तेनो सार नीचे मुजब छे

'शिवावर्धन' नामना नगरमा 'मुडिकाम्बक' नामे राजा हतो। त्या श्री पुष्पभूति नामना आचार्य महाराज पधार्या। तेमना उपदेशादिथी उपशात बनेलो ते राजा श्रावक थयो।

ते आचार्यमहाराजना पुष्यमित्र नामना एक बहुश्रुतज्ञानी शिष्य के जे आचारमा शिथिल हता ते अन्यत्र रहेता हता।

एक वखत आचार्य महाराजने 'महाप्राण' ध्यान जेवु 'सूक्ष्म ध्यान' करवानो विचार थयो। आ ध्यानमा ज्यारे प्रवेश करवामा आवे त्यारे एवी रीते 'योग निरोध' करवामा आवे छे के काइ वेदन ज थाय नहि। ते आचार्य महाराज पासे जे साधुओ रहेला ते अगीतार्थ हता। तेथी तेमणे पुष्यमित्र मुनिने बोलाव्या। ते आव्या अने आचार्य महाराजे बधी हकीकत कही। तेणे पण स्वीकार कर्यो। एटले आचार्य महाराज एक निर्व्याघात ओरडामा ध्यान करवा लाग्या। त्या पुष्यमित्र बीजा साधुओने अदर जवा देता न होता। अने कहे के "अहीं रह्या रह्या ज वदन करो। आचार्य महाराज व्याकुल छे अर्थात् खास काममा छे।"

एक दिवस ते साधुओ अरसपरस विचारवा लाग्या के 'कोण जाणे शुं हशे? आपणे तपास करीए।'

तेओमांथी एक साधु ओरडाना बारणे ऊभा रही अंदर जोवा लाग्या। घणीवार सुधी निरीक्षण कर्युं, परंतु आचार्य महाराज तो हालता नथी, बोलता नथी, फरकता नथी अने उच्छ्वास-नि:श्वास पण लेता मूकता नथी; कारणके ते अवस्थामा श्वासोच्छ्वास बहु सूक्ष्म होय छे।

तेमणे आ हकीकत बीजा साधुओने कही। ते गुस्से भराया अने पुष्यमित्रने कहेवा लाग्या 'हे आर्य! आचार्यश्री काळधर्म पाम्या छे छता तमे अमने जणावता नथी'।

पुष्यमित्र मुनिए जवाब आप्यो के 'आचार्य महाराज काळधर्म पाम्या नथी पण ध्यानमा छे, माटे खलेल न करो।' त्यारे बीजा साधुओ कहेवा लाग्या के 'आ वेषधारी साधु वेतालने साधवानी इच्छावाळो जणाय छे; कारणके आचार्य महाराज पूर्ण लक्षणवाळा छे। एटले एवी इच्छाथी ज ते आपणने साची हकीकत जणावतो नथी। आज रात्रिए जुओ शु परिणाम आवे छे।'

ते बधा साधु पुष्यमित्र मुनि साथे झघडो करवा लाग्या। पुष्यमित्र मुनिए तेमने वार्या त्यारे तेओए बधा समाचार राजाने आपीने तेमने त्यां लाव्या।

साधुओ राजाने कहेवा लाग्या के 'आचार्यश्री काळधर्म पाम्या छे छता आ वेषधारी साधु तेमने बहार काढवा देतो नथी।' राजाए पण आचार्य महाराजने जोया। तेने पण खात्री थई के आचार्य महाराज काळधर्म पाम्या छे। तेथी राजाने पुष्यमित्र मुनिना वचन उपर विश्वास बेठो नहीं।

शिबिका तैयार कराववामां आवी। एटले पुष्यमित्र मुनिने चोक्कस लाग्यु के आचार्यश्रीनो अकाळ विनाश थशे।

आचार्य महाराजे अगाउ पुष्यमित्र मुनिने कही राखेलु हतु के मारी ध्यानस्थ अवस्थामा आगनो के बीजो कोई उपद्रव आवी पडे तो मारा अंगूठानो स्पर्श करजे।

पुष्यमित्र मुनिए आचार्य महाराजना अंगूठानो स्पर्श कर्यो एटले ध्यानमांथी जागृत थयेला आचार्य महाराज कहेवा लाग्या के 'हे आर्य! मने केम खलेल करी?'

पुष्यमित्र मुनि बोल्या, 'जुओ, आ शिष्योए आपना माटे शुं कर्युं छे?' पछी आचार्य महाराजे ते बधा साधुओने खूब ठपको आप्यो।

आवा ध्यानमां प्रवेश करवाथी योगो संगृहीत थाय छे।



परिशिष्ट २

आद्यगणधरप्रभृतिसाधुसंख्या (वलय १८)			आद्यमहत्तराप्रभृतिसाध्वीसंख्या (वलय १९)		
१ ऋषभ	ऋषभसेनादि	८४०००	ब्राह्मी	आदि	३०००००
२ अजित	सिंहसेनादि	१०००००	फाल्गुनी	„	३३००००
३ संभव	चारूरू आदि	२०००००	श्यामा	„	३३६०००
४ अभिनंदन	वज्रनाभादि	३०००००	अजिता	„	६३००००
५ सुमति	चमरगणी आदि	३२००००	काश्यपी	„	५३००००
६ पद्मप्रभ	सुद्योतादि	३३००००	रति	„	४२००००
७ सुपार्श्व	विदर्भादि	३०००००	सोमा	„	४३००००
८ चन्द्रप्रभ	दत्तादि	२५००००	सुमना	„	३८००००
९ सुविधि	वराहकादि	२०००००	वारुणी	„	१२००००*
१० शीतल	नंदादि	१०००००	सुयशा	„	१००००६*
११ श्रेयांस	कौस्तुभादि	८४०००	धारिणी	„	१०३०००*
१२ वासुपूज्य	सुभूमादि	७२०००	धरणी	„	१०००००
१३ विमल	मंदरादि	६८०००	धरा	„	१००८००
१४ अनंत	यश आदि	६६०००	पद्मा	„	६२०००
१५ धर्म	अरिष्टादि	६४०००	शिवा	„	६२४००
१६ शांति	चक्रायुधादि	६२०००	श्रुति	„	६१६००
१७ कुन्थु	शम्बादि	६००००	दामिनी	„	६०६००
१८ अर	कुंभादि	५००००	रक्षिका	„	६००००
१९ मल्लि	भिषजादि	४००००	बन्धुमती	„	५५०००
२० मुनिसुव्रत	मल्लि आदि	३००००	पुष्पवती	„	५००००
२१ नमि	शुभादि	२००००	अनिला	„	४१०००
२२ नेमि	वरदत्तादि	१८०००	यक्षदत्ता	„	४००००
२३ पार्श्व	आर्यदत्तादि	१६०००	पुष्पचूला	„	३८०००
२४ वर्द्धमान	इन्द्रभूति आदि	१४०००	चन्दनबाला	„	३६०००

* मतान्तरेण क्रमश ३,८०,००० । ३,८०,००० । १,२०,००० ।

परिशिष्ट ३

	श्रावकसंख्या (वलय २०)		श्राविकासंख्या (वलय २१)	
१ ऋषभ	श्रेयांसादि	३०५०००	सुभद्रादि	५५४०००
२ अजित	×	२९८०००	×	५४५०००
३ संभव	×	२९३०००	×	६३६०००
४ अभिनंदन	×	२८८०००	×	५२७०००
५ सुमति	×	२८१०००	×	५१६०००
६ पद्मप्रभ	×	२७६०००	×	५०५०००
७ सुपार्श्व	×	२५७०००	×	४९३०००
८ चन्द्रप्रभ	×	२५००००	×	४९१०००
९ सुविधि	×	२२९०००	×	४७१०००
१० शीतल	×	२८९०००	×	४५८०००
११ श्रेयांस	×	२७९०००	×	४४८०००
१२ वासुपूज्य	×	२१५०००	×	४३६०००
१३ विमल	×	२०८०००	×	४२४०००
१४ अनंत	×	२०६०००	×	४१४०००
१५ धर्म	×	२०४०००	×	४१३०००
१६ शाति	×	२९००००	×	३९३०००
१७ कुन्थु	×	१७९०००	×	३८१०००
१८ अर	×	१८४०००	×	३७२०००
१९ मल्लि	×	१८३०००	×	३७००००
२० मुनिसुव्रत	×	१७२०००	×	३५००००
२१ नमि	×	१७००००	×	३४८०००
२२ नेमि	नन्दादि	१६९०००	महासुव्रतादि	३३६०००
२३ पार्श्व	सुद्योतादि	१६४०००	सुनन्दादि	३३९०००
२४ वर्द्धमान	आनंदादि	१५९०००	सुलसादि	३१८०००

× अप्रसिद्ध

परिशिष्ट ४

९६ भवनयोग तथा ९६ करणयोग

२२ तथा २३ मा वलयमां जे ९६ भवनयोग तथा ९६ करणयोगनो निर्देश करेलो छे ते नीचे मुजब छे—*

(वलय २२ तथा २३)

१ प्रणिधानयोग
२ प्रणिधानमहायोग
३ प्रणिधानपरमयोग
४ समाधानयोग
५ समाधानमहायोग
६ समाधानपरमयोग
७ समाधियोग
८ समाधिमहायोग
९ समाधिपरमयोग
१० काष्ठायोग
११ काष्ठामहायोग
१२ काष्ठापरमयोग
१३ प्रणिधानवीर्य
१४ प्रणिधानमहावीर्य
१५ प्रणिधानपरमवीर्य
१६ समाधानवीर्य
१७ समाधानमहावीर्य
१८ समाधानपरमवीर्य
१९ समाधिवीर्य
२० समाधिमहावीर्य
२१ समाधिपरमवीर्य
२२ काष्ठावीर्य
२३ काष्ठामहावीर्य
२४ काष्ठापरमवीर्य
२५ प्रणिधानस्थाम
२६ प्रणिधानमहास्थाम
२७ प्रणिधानपरमस्थाम
२८ समाधानस्थाम
२९ समाधानमहास्थाम
३० समाधानपरमस्थाम
३१ समाधिस्थाम
३२ समाधिमहास्थाम
३३ समाधिपरमस्थाम
३४ काष्ठास्थाम
३५ काष्ठामहास्थाम
३६ काष्ठापरमस्थाम
३७ प्रणिधानोत्साह
३८ प्रणिधानमहोत्साह
३९ प्रणिधानपरमोत्साह
४० समाधानोत्साह
४१ समाधानमहोत्साह
४२ समाधानपरमोत्साह
४३ समाध्युत्साह
४४ समाधिमहोत्साह
४५ समाधिपरमोत्साह
४६ काष्ठोत्साह
४७ काष्ठामहोत्साह
४८ काष्ठापरमोत्साह
४९ प्रणिधानपराक्रम
५० प्रणिधानमहापराक्रम
५१ प्रणिधानपरमपराक्रम
५२ समाधानपराक्रम
५३ समाधानमहापराक्रम
५४ समाधानपरमपराक्रम
५५ समाधिपराक्रम
५६ समाधिमहापराक्रम
५७ समाधिपरमपराक्रम
५८ काष्ठापराक्रम
५९ काष्ठामहापराक्रम
६० काष्ठापरमपराक्रम
६१ प्रणिधानचेष्टा
६२ प्रणिधानमहाचेष्टा
६३ प्रणिधानपरमचेष्टा
६४ समाधानचेष्टा
६५ समाधानमहाचेष्टा
६६ समाधानपरमचेष्टा
६७ समाधिचेष्टा
६८ समाधिमहाचेष्टा
६९ समाधिपरमचेष्टा
७० काष्ठाचेष्टा
७१ काष्ठामहाचेष्टा
७२ काष्ठापरमचेष्टा
७३ प्रणिधानशक्ति
७४ प्रणिधानमहाशक्ति
७५ प्रणिधानपरमशक्ति
७६ समाधानशक्ति
७७ समाधानमहाशक्ति
७८ समाधानपरमशक्ति
७९ समाधिशक्ति
८० समाधिमहाशक्ति
८१ समाधिपरमशक्ति
८२ काष्ठाशक्ति
८३ काष्ठामहाशक्ति
८४ काष्ठापरमशक्ति
८५ प्रणिधानसामर्थ्य
८६ प्रणिधानमहासामर्थ्य
८७ प्रणिधानपरमसामर्थ्य
८८ समाधानसामर्थ्य
८९ समाधानमहासामर्थ्य
९० समाधानपरमसामर्थ्य
९१ समाधिसामर्थ्य
९२ समाधिमहासामर्थ्य
९३ समाधिपरमसामर्थ्य
९४ काष्ठासामर्थ्य
९५ काष्ठामहासामर्थ्य
९६ काष्ठापरमसामर्थ्य

आ ज रीते 'करणयोग'ना ९६ भेदो समजी लेवा ॥

---

* आ योगो मरुदेवा मातानी जेम सहज स्वभावे थाय तो भवनयोगमां गणाय छे। अने आ ज योगो जो उपयोग पूर्वक करवामां आवे तो करणयोगमां गणाय छे।

परिशिष्ट ५

९६ करण (वलय २४)

१ उन्मनीकरण
२ महोन्मनीकरण
३ परमोन्मनीकरण
४ सर्वोन्मनीकरण
५ उन्मनीभवन
६ महोन्मनीभवन
७ परमोन्मनीभवन
८ सर्वोन्मनीभवन

९ निश्चित्तीकरण
१० महानिश्चित्तीकरण
११ परमनिश्चित्तीकरण
१२ सर्वनिश्चित्तीकरण
१३ निश्चित्तीभवन
१४ महानिश्चित्तीभवन
१५ परमनिश्चित्तीभवन
१६ सर्वनिश्चित्तीभवन

१७ निश्चेतनीकरण
१८ महानिश्चेतनीकरण
१९ परमनिश्चेतनीकरण
२० सर्वनिश्चेतनीकरण
२१ निश्चेतनीभवन
२२ महानिश्चेतनीभवन
२३ परमनिश्चेतनीभवन
२४ सर्वनिश्चेतनीभवन

२५ निःसंज्ञीकरण
२६ महानिःसंज्ञीकरण
२७ परमनिःसंज्ञीकरण
२८ सर्वनिःसंज्ञीकरण
२९ निःसंज्ञीभवन
३० महानिःसंज्ञीभवन
३१ परमनिःसंज्ञीभवन
३२ सर्वनिःसंज्ञीभवन

३३ निर्विज्ञानीकरण
३४ महानिर्विज्ञानीकरण
३५ परमनिर्विज्ञानीकरण
३६ सर्वनिर्विज्ञानीकरण
३७ निर्विज्ञानीभवन
३८ महानिर्विज्ञानीभवन
३९ परमनिर्विज्ञानीभवन
४० सर्वनिर्विज्ञानीभवन

४१ निर्धारणीकरण
४२ महानिर्धारणीकरण
४३ परमनिर्धारणीकरण
४४ सर्वनिर्धारणीकरण
४५ निर्धारणीभवन
४६ महानिर्धारणीभवन
४७ परमनिर्धारणीभवन
४८ सर्वनिर्धारणीभवन

४९ विस्मृतीकरण
५० महाविस्मृतीकरण
५१ परमविस्मृतीकरण
५२ सर्वविस्मृतीकरण
५३ विस्मृतीभवन
५४ महाविस्मृतीभवन
५५ परमविस्मृतीभवन
५६ सर्वविस्मृतीभवन

५७ निर्बुद्धीकरण
५८ महानिर्बुद्धीकरण
५९ परमनिर्बुद्धीकरण
६० सर्वनिर्बुद्धीकरण
६१ निर्बुद्धीभवन
६२ महानिर्बुद्धीभवन
६३ परमनिर्बुद्धीभवन
६४ सर्वनिर्बुद्धीभवन

६५ निरीहीकरण
६६ महानिरीहीकरण
६७ परमनिरीहीकरण
६८ सर्वनिरीहीकरण
६९ निरीहीभवन
७० महानिरीहीभवन
७१ परमनिरीहीभवन
७२ सर्वनिरीहीभवन

७३ निर्मतीकरण
७४ महानिर्मतीकरण
७५ परमनिर्मतीकरण
७६ सर्वनिर्मतीकरण
७७ निर्मतीभवन
७८ महानिर्मतीभवन
७९ परमनिर्मतीभवन
८० सर्वनिर्मतीभवन

८१ निर्वितर्कीकरण
८२ महानिर्वितर्कीकरण
८३ परमनिर्वितर्कीकरण
८४ सर्वनिर्वितर्कीकरण
८५ निर्वितर्कीभवन
८६ महानिर्वितर्कीभवन
८७ परमनिर्वितर्कीभवन
८८ सर्वनिर्वितर्कीभवन

८९ निरुपयोगीकरण
९० महानिरुपयोगीकरण
९१ परमनिरुपयोगीकरण
९२ सर्वनिरुपयोगीकरण
९३ निरुपयोगीभवन
९४ महानिरुपयोगीभवन
९५ परमनिरुपयोगीभवन.
९६ सर्वनिरुपयोगीभवन

परिशिष्ट ६

पृ २४१ मा भवनयोगनु निरूपण करती वखते 'प्रणिधान', 'समाधान', 'समाधि', तथा 'काष्ठा' ना सबंधमा अनुक्रमे 'प्रसन्नचद्र राजर्षि', 'भरतचक्रवर्ती,' 'दमदतमुनि' तथा पुष्पभूति आचार्यना दृष्टानो छे एम जणाव्यु छे। ते पैकी पुष्पभूति आचार्यनु दृष्टान्त १ ला परिशिष्ट मा आवी गयु छे। बाकीना त्रण दृष्टानो नीचे मुजब छे

प्रसन्नचद्र राजर्षि

प्रसन्नचद्र राजर्षिना पितानु नाम सोमचद्र हतु अने मातानु नाम धारिणी हतु। पोताना बाळकुवरने गादी आपी तेमणे दीक्षा लीधी हती। एक वखत राजगृहीना उद्यानमा कायोत्सर्ग करता हता। ते वखते तेमणे साभळ्यु के चपानगरीनो दधिवाहन राजा तेनी नगरीने घेरो नाखीने पड्यो छे अने पोतानो पुत्र जे हजु बाळक छे, तेने मारीने राज्य लई लेशे। आथी राज्य तथा कुमार प्रत्ये मोह उत्पन्न थता अने तेमना रक्षानो विचार करता करता मानसिक युद्ध खेलता थोडीवारमा तेमणे सातमी नरकने योग्य कर्मो एकठा कर्या हता। परतु पाछी आ मोहनी विचारश्रेणी तेमणे रोकी अने शुभ विचारश्रेणी उपर आरूढ थता केवळज्ञान प्राप्त कर्यु।

आ प्रमाणे प्रणिधान उपर प्रसन्नचद्र राजर्षिनु दृष्टात छे।

भरत चक्रवर्ती

भरत महाराजा ए भगवान ऋषभदेवना सौथी मोटा पुत्र अने प्रथम चक्रवर्ती हता। एक वखत आरीसाभवनमा पोताना अलकृत शरीरने जोता हता। तेवामा एक आगळीमाथी एक वींटी नीकळी गइ। एटले ते शोभारहित लागी। आ जोइने तेमणे बीजा अलकारो पण उतार्या। त्या तो आखु शरीर शोभा रहित लागवा माड्यु। आथी 'अनित्य ससारे भवति सकलयनगनम्। ससारमा जे वस्तुओ आखोथी देखाय छे, ते बधी नाशवत छे।' एवी अनित्य भावना भाववा लाग्या अने केवळज्ञान उत्पन्न थयु।

आ प्रमाणे निमित्त मळता शुभ ध्यानमा प्रवृत्ति करी।

दमदत मुनि

हस्तिशीर्ष नामना नगरमा श्री दमदत नामना राजा राज्य करता हता। आ बाजु हस्तिनापुर नगरमा पाच पाडवो राज्य करता हता। दमदत राजा अने पाडवोने आपसमा वेर हतु।

एक वखत दमदत राजा जरासधनी पासे (सेवा करवा माटे) राजगृही नगरे गयो हतो। ते तकनो लाभ लई पाडवोए दमदत राजाना देशने लूट्यो अने बाळ्यो। काळक्रमे दमदत राजा पाछो आव्यो। तेणे पोताना देशना खराब स्थिति जोई बदलो वाळवा हस्तिनापुरने घेरो घाल्यो। पाडवोने तेणे कहेवराव्यु के "हवे बहार नीकळो, शियाळियानी जेम शु भराई बेठा छो?" पाडवो बहार नीकळ्या नहि तेथी ते पोताने देश चाल्यो गयो।

कामभोगथी निर्वेद पामीने केटलाक वर्षो बाद तेणे दीक्षा लीधी। हवे दमदत मुनि एकाकी विहार करता हस्तिनापुर पधार्या अने नगरनी बहार प्रतिमा ध्याने रह्या। यात्राने माटे नीकळता युधिष्ठिरादि पाडवोए ज्यारे तेमने खबर पडी के आ दमदत मुनि छे त्यारे वदन कर्यु। त्यारबाद दुर्योधन आव्यो अने

तेणे आ दमदंत मुनि छे एम सांभळ्युं त्यारे रोषे भराईने तेमना प्रति बीजोरुं फेक्युं। स्वामीनी आ वर्तणूकनी देखादेखीथी सैनिकोए तेमना प्रति पथ्थरो फेक्या अने क्षणवारमां तेओ तेमां दटाई गया। केटलाक समय बाद पांडवो पाछा फर्या त्यारे तेमने दुर्योधननी गेरवर्तणूक साभळी तिरस्कार कर्यो। मुनि भगवंत उपरना पथ्थरो दूर कर्या अने तेमना शरीरने तेल चोळ्युं। तेमनी क्षमा याची। दमदंत मुनि दुर्योधन द्वारा करायेला उपद्रव अने युधिष्टिरादि द्वारा करायेली भक्ति—बन्ने तरफ समभाव धारी रह्या हता।

परिशिष्ट ७

भाषाना ४ प्रकार छे : सत्य, मृषा, सत्यामृषा अने असत्यामृषा। सत्य भाषाना १०, मृषा भाषाना १०, सत्यामृषाना १० तथा असत्यामृषाना (व्यवहारभाषाना) १२—एम कुल ४२ प्रकारो श्री दशवैकालिक निर्युक्ति वगेरेमां जणाव्या छे। ते संबंधी पृ. २४६ मां 'जणवय°' वगेरे पाच गाथाओ आपेली छे। ते* अर्थ सहित नीचे मुजब छे :

सत्य भाषाना १० प्रकारो :

जणवय-सम्मय-ठवणा नामे रूवे पडुच्च सच्चे अ।
ववहार-भाव-जोगे दससे ओवम्मसच्चे अ ॥ २७३ ॥

१. **जनपदसत्य** : कोकण वगेरे देशोमां पाणीने माटे 'पय', 'पिच्च', 'उदक', 'नीरम्' वगेरे जुदाजुदा शब्दो वपराय छे। आ शब्दोथी ते ते जनपदोमा–देशोमां इष्ट अर्थनी प्रतिपत्ति थती होवाथी लोकव्यवहार चाले छे। तेथी ते शब्दो 'जनपदसत्य' अर्थात् ते ते देशने आश्रयीने 'सत्य' कहेवाय छे।

२. **सम्मतसत्य** : कुमुद, कुवलय, उत्पल, तामरस ए बधां एकसरखी रीते कादवमां उत्पन्न थाय छे। तो पण गोवाळो सुद्धां (अर्थात् आबालगोपाल) कमलने ज पंकज कहे छे। आ रीते लोकोमां 'कमल' अर्थमां ज 'पंकज' शब्द सम्मत छे तेथी ते 'सम्मतसत्य' कहेवाय छे।

३. **स्थापनासत्य** : तेवा प्रकारनी अंकरचना तथा सिक्का वगेरे जोईने जे भाषा उच्चारवामा आवे ते 'स्थापनासत्य' छे। जेमके एकडानी आगळ बे शून्य उमेरीए तो सो अने त्रण शून्य उमेरीए तो हजार कहेवाय छे। तेमज नाणां उपर ते ते छाप प्रमाणे रुपियो, पांच रुपिया वगेरे कहेवाय छे।

४. **नामसत्य** : कोई मनुष्य कुल विस्तारतो न होवा छता 'कुलवर्धन' नामे ओळखाय, धनने वधारतो न होय छतां 'धनवर्धन' कहेवाय, यक्ष न होवा छतां 'यक्ष' कहेवाय। आवा बधा अर्थ-रहित नामोना प्रयोगो ते 'नामसत्य' कहेवाय छे।

५. **रूपसत्य** : वेश प्रमाणे गुण न होवा छता तेवा प्रकारनु रूप धारण करवुं ते 'रूपसत्य' छे। ते संबंधी वचन पण रूपसत्य कहेवाय छे, जेम के कोई कपटी साधुना वेशमां होय त्यारे तेने साधु कहेवामा आवे ते 'रूपसत्य' छे।

* आवश्यकसूत्रनी हरिभद्रसूरिरचितवृत्ति तथा पन्नवणा (प्रज्ञापना) सूत्रनी मलयगिरिसूरिरचित वृत्तिने आधारे अही अर्थ लख्यो छे।

६ **प्रतीत्यसत्य** बीजी वस्तुने आश्रयीने एक वस्तुमा जुदी जुदी रीते व्यवहार करवो ते 'प्रतीत्यसत्य' छे। जेम टचली (छेल्ली) आगळीनी अपेक्षाए अनामिका आगळी मोटी गणाय छे पण मध्यमा (वचली) आगळी करता ते (अनामिका) नानी पण गणाय छे। एम एक ज वस्तुमा जुदी जुदी अपेक्षाए जुदो जुदो व्यवहार ते 'प्रतीत्यसत्य' छे।

७ **व्यवहारसत्य** केटलाक शब्दप्रयोगो शब्दार्थनी दृष्टिए बराबर न लागे छता अमुक विवक्षाथी बोलाता होवाथी ते प्रयोगो सत्य छे। जेमके 'पर्वत बळे छे', 'घडो झरे छे,' 'कन्याने पेट नथी', 'घेटीने वाळ नथी'—आ बधा प्रयोगोमा वस्तुत तेम होतु नथी छता 'पवन उपरनु घास बळे छे', 'घडानु पाणी झरे छे', 'कन्या गर्भधारणने माटे योग्य उदरवाळी नथी', 'घेटीने कापी शकाय एटला वाळ नथी' एवा आशयथी लोकव्यवहारमा ते ते प्रयोगो थाय छे तेथी ते 'व्यवहारसत्य' छे।

८ **भावसत्य** एक वस्तुमा अनेक भावो (वर्ण वगेरे) रहेला होय छता तेमाना एकाद उत्कृष्ट रूपे रहेला भावने प्राधान्य आपीने वचन प्रयोग करवो—जेमके बगलामा पाचे वर्ण छे छता 'बगलो श्वेत छे' एम कहेवु—ते 'भावसत्य' छे।

९ **योगसत्य** योग अर्थात् सबधथी कोइ व्यक्ति के वस्तुने ते नामथी ओळखवी ते 'योगसत्य' छे। जेम 'छत्र' राखनारो माणस छत्र न होय त्यारे पण छत्रना सबधथी 'छत्री' कहेवाय छे अने 'दड' राखनारो माणस दडना अभावमा पण दडना सबधथी 'दडी' कहेवाय छे ते 'योगसत्य' छे।

१० **औपम्यसत्य** जेम तळाव समुद्र जेवु न होवा छता 'तळाव समुद्र जेवु छे' एम तळावने समुद्रनी उपमा आपवामा आवे छे ते 'औपम्यसत्य' छे।

मृषाभाषा (असत्य)ना १० प्रकारो

कोहे माणे माया लोभे पेज्जे तहेव दोसे अ।
हासभए अक्खाइय उवघाए निस्सिआ दसमा ॥ २७५॥

१ **क्रोध निसृत असत्य** क्रोधना आवेशमा जे वाणी नीकळे ते 'क्रोध निसृत असत्य' छे। जेमके क्रोधथी धमधमेलो पिता पुत्रने कहे के 'तु मारो पुत्र नथी' वगेरे क्रोध निसृत असत्य छे। अथवा क्रोधना आवेशमा साचु-खोटु जे कइ बोलवामा आवे ते बधु क्रोध निसृत असत्य छे, कारणके ते बधु बोलती वखते क्रोधी मनुष्यनो आशय दुष्ट होय छे।

२ **मान निसृत असत्य** पोतानी महत्ता बताववा माटे जेम कोइ मनुष्य अल्प धनवाळो होवा छता कहे के 'हु महाधनवाळो छु' ते 'मान निसृत असत्य' छे।

३ **माया निसृत असत्य** बीजाने ठगवाना आशयथी जे साचु खोटु बोलाय ते बधु 'माया निसृत असत्य' छे।

४ **लोभ निसृत असत्य** लोभथी जे मिथ्या बोलवामा आवे ते 'लोभ निसृत असत्य' छे। जेम वेपारी खोटा माप होवा छता तेने साचा कहे छे तेम।

५ **प्रेम निसृत असत्य** अति रागने लईने 'हु तमारो दास छु' वगेरे जे बोलवामा आवे ते 'प्रेम-निसृत असत्य' छे।

६ **द्वेष निसृत असत्य** द्वेषथी इर्ष्याळु मनुष्यो गुणवानने पण 'आ निर्गुण छे' वगेरे कहे ते 'द्वेष-निसृत असत्य' छे।

७. हास्य-निसृत असत्य : जेम मश्करा माणसो कोईनी कई चीज लईने संताडी राखे अने तेमने पूछवामां आवे तो कहे के 'ए चीज मे जोई नथी' आवी भाषा 'हास्य-निसृत असत्य' कहेवाय छे।

८. भय-निसृत असत्य : चोरो वगेरेना भयथी 'मारी पासे कई नथी' वगेरे जे असत्य बोलवामां आवे ते 'भय-निसृत असत्य' छे।

९. आख्यायिका-निसृत असत्य : कथाओमा जे असंभवित वातो कहेवामा आवे ते 'आख्यायिका-निसृत असत्य' कहेवाय छे।

१०. उपघात-निसृत असत्य : चोर न होय छता 'तु चोर छे', आवु जे आळ चढाववामां आवे ते 'उपघात-निसृत असत्य' कहेवाय छे।

सत्या-मृषा भाषाना १० प्रकारो :

उप्पन्नविगयमीसग जीवमजीवे अ जीवअज्जीवे।
तहऽणंतमीसगा खलु परित्त अद्धा अ अद्धद्धा ॥ २७५॥

१. उत्पन्नमिश्रित सत्या-मृषा : उत्पन्न जीवोने आश्रयीने जे मिश्र भाषा बोलवामां आवे ते 'उत्पन्नमिश्रित सत्या-मृषा' भाषा कहेवाय छे। जेमके कोई नगरमा ओछा के वधारे बाळको जन्म्यां होय छतां आजे दस बाळको जन्म्या छे एम जे कहेवामा आवे ते 'उत्पन्नमिश्रित सत्या-मृषा' भाषा छे; कारणके तेमां थोडु साचु छे अने थोडु खोटु छे। तेथी ए मिश्र भाषा छे।

२. विगतमिश्रित सत्या-मृषा : ते ज प्रमाणे मरणने आश्रयीने जे मिश्र भाषा बोलवामां आवे ते 'विगतमिश्रित सत्या-मृषा' भाषा छे। जेमके कोई नगरना थोडा के वधारे माणसो मरी गया होय छतां आजे दस माणसो मरी गया एम कहेवाय आवे ते 'विगतमिश्रित सत्या-मृषा' भाषा छे।

३. उत्पन्न-विगतमिश्रित सत्या-मृषा : ते ज प्रमाणे उत्पत्ति अने मरणने आश्रयीने जे मिश्र भाषा बोलवामा आवे छे ते उत्पन्न-विगतमिश्रित सत्या-मृषा कहेवाय छे। जेम कोई नगरमा ओछा के वधारे माणसो जन्म्या होय के मरी गया होय छता कहेवामां आवे के आजे दस बाळको जन्म्या छे अने दस वृद्धो मरी गया छे आवी भाषा 'उत्पन्न-विगतमिश्रित सत्या-मृषा' भाषा कहेवाय छे।

४. जीवमिश्रित सत्या-मृषा : जेम कोई ढगलामा घणा जतुओ जीवता होय अने थोडा मरेला पण होय छतां 'आ जीवना जतुओनो ढगलो छे' एम कहेवु ते 'जीव-मिश्रित सत्या-मृषा' भाषा छे।

५. अजीवमिश्रित सत्या-मृषा : कोई ढगलामा घणा जंतुओ मरेलां होय अने थोडा जीवतां होय छता 'अजीवनो ढगलो छे' एम कहेवु ते 'अजीवमिश्रित सत्या-मृषा' भाषा छे।

६. जीवाजीवमिश्रित सत्या-मृषा : उपरनी जेम जीवता अने मरेला जतुओना ढगलामा (वस्तुत. न्यूनाधिक होवा छता) निश्चयपूर्वक कहेवु के 'आटला मरेला छे ने आटला जीवता छे' आवी भाषा ते 'जीवाजीवमिश्रित सत्या-मृषा' छे।

७. अनंतमिश्रित सत्या-मृषा : 'मूळ' वगेरे अनतकायने तेना ज प्रत्येक वनस्पति-कायरूप पादडानी साथे अगर बीजी कोई प्रत्येक वनस्पतिनी साथे जोईने 'आ बधुं अनंतकाय छे' एम कोई कहे ते 'अनंतमिश्रित सत्या-मृषा' छे।

---

१. जेमा थोडुं साचुं अने थोडुं खोटुं होय तेवी मिश्र भाषाने 'सत्या-मृषा' कहेवामां आवे छे। कारणके तेमा कंईक साचु होवाथी ते 'सत्य' पण छे अने कंईक खोटुं होवाथी 'मृषा' पण छे। आ प्रमाणे सत्य तथा असत्यनुं मिश्रण होवाथी ते 'सत्या-मृषा' कहेवाय छे।

८ **प्रत्येकमिश्रित सत्या-मृषा** उपर मुजब प्रत्येक वनस्पतिना ढगलामां अनतकाय रहेला होय छता आ बधु 'प्रत्येक वनस्पतिकाय छे' एम कहेवु ते 'प्रत्येकमिश्रित सत्या-मृषा' छे।

९ **अद्धामिश्रित सत्या मृषा** अद्धा एटले काळ। अहीं प्रसगानुसारे अद्धा शब्दथी रात्रि दिवस लेवाना छे। जेम कोई माणस दिवस बाकी होय छता बीजा माणसने उतावळ कराववा कहे के 'रात्रि पडी गई' अथवा रात्रि बाकी होय छता जगाडवा कहे के 'दिवस उगी गयो' ते 'अद्धा-मिश्रित सत्या मृषा' कहेवाय छे।

१० **अद्धाद्धामिश्रित सत्या मृषा** दिवस के रात्रिनो एक भाग ते अद्धाद्धा। प्रथम प्रहर चालु होय छता कोई माणस बीजा माणसने कार्यमा उतावळ करवा माटे कहे के 'मध्याह्न थई गयो' वगेरे वचनो अद्धाद्धामिश्रित सत्या-मृषा भाषा छे।

[1]असत्यामृषाना १२ प्रकारो

> आमंतणि आणवणी जायणि तह पुच्छणी य पन्नवणी।
> पच्चक्खाणी भासा भासा इच्छाणुलोमा य ॥ २७६ ॥
> अणभिग्गहिआ भासा भासा य अभिग्गहम्मि बोधव्वा।
> ससयकरणी भासा वायड अव्वायडा चेव ॥ २७७ ॥

१ **आमत्रणी** कोईने बोलाववा माटे जे सबोधन वचनोनो प्रयोग करवामा आवे जेमके 'हे देवदत्त!' 'हे प्रभु!' वगेरे ते आमत्रणी भाषा छे। आवा आमत्रण वचनो प्रथम कहेली त्रण प्रकारनी (सत्या, मृषा अने सत्या-मृषा) भाषाना लक्षणोमा समावेश पामता नथी। केवळ व्यवहारना हेतु छे तेथी आवा प्रयोगो 'असत्यामृषा' कहेवाय छे।

२ **आज्ञापनी** जेमके 'आम करो', 'लो', 'लई जाव', वगेरे आवा वचनो 'आज्ञापनी' भाषा छे।

३ **याचनी** जेमके 'भिक्षा आपो' वगेरे वचनो 'याचना' भाषा छे।

४ **पृच्छनी** जेमके कोई वाक्यमा अजाण्यो माणस बीजाने पूछे के 'आ शु छे? आम केम?' वगेरे वचनो 'पृच्छनी' भाषा छे।

५ **प्रज्ञापनी** हिंसानो त्याग करवाथी प्राणीओ दीर्घायुषी तथा नारोगी थाय छे। आवी जे उपदेशात्मक भाषा ते 'प्रज्ञापना' भाषा छे।

६ **प्रत्याख्यानी** कोई माणस आपणी पासे मागवा आवे त्यारे तेने कहेवु के 'मारी आपवानी इच्छा नथी' ते 'प्रत्याख्याना' भाषा छे।

७ **इच्छानुलोमा** कोई माणस कोईने कहे के 'आपणे साधु पासे जईए' त्यारे बीजो माणस कहे के 'बहु सारी वात छे'—आवी जे अनुलोमात्मक भाषा तेने 'इच्छानुलोमा' भाषा कहे छे।

१ उपर बतावेल त्रण प्रकारना भाषाना लक्षणथी रहित होवाथी जे सत्य पण नथी तेम मृषा पण सत्या-मृषा पण फक्त व्यवहारनो ज उपयोग छे एवी भाषाने असत्यामृषा कहेवामां आवे छे।

८. **अनभिगृहीता** : घणां कार्यो करवानां होय त्यारे कोई माणस कोईने पूछे के 'हमणां हुं शुं करुं?' त्यारे बीजो माणस जवाब आपे के 'तने ठीक लागे ते कर' आवी अचोक्कस भाषा ने अनभिगृहीता भाषा कहेवाय छे।

९. **अभिगृहीता** : 'हमणा आ करजे' अने 'हमणा आ न करीश' आ प्रमाणे जे चोक्कस कहेवामां आवे ते अभिगृहीता भाषा छे।

१०. **संशयकरणी** : जेना अनेक अर्थो नीकळता होवाथी बीजाने संशय उत्पन्न थाय एवी जे भाषा ते संशयकरणी भाषा कहेवाय छे। जेमके 'सेंधव लावो' एम कहेवामां आवे त्यारे बीजाने संशय उत्पन्न थाय छे के 'शुं लाववुं?'—मीठुं लाववुं, वस्त्र लाववुं, पुरुष लाववो, के घोडाने लाववो? कारणके 'सेंधव' शब्दना लवण, वस्त्र, पुरुष अने घोडो एम अर्थ थाय छे। तेथी आवी भाषा संशयकरणी कहेवाय छे।

११. **व्याकृता** : 'आ देवदत्तनो भाई छे' वगेरे स्पष्ट अर्थवाळी भाषा ते व्याकृता भाषा छे।

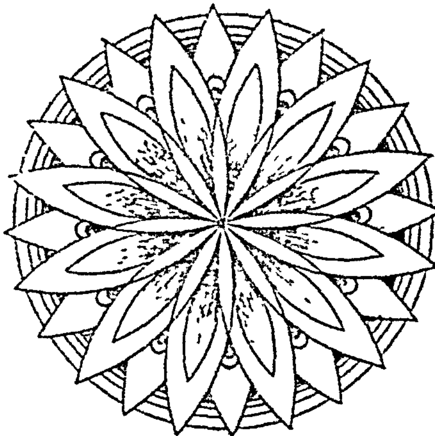
१२. **अव्याकृता** : अत्यंत गंभीर अर्थवाळी भाषा ते अव्याकृता भाषा कहेवाय छे। तेमज अस्पष्ट अर्थवाळी नाना बाळको वगेरेनी भाषा पण अव्याकृता भाषा कहेवाय छे।

आ रीते भाषाना कुल ४२ प्रकारो छे।

परिचय

श्री नमस्कार महामंत्रनी आराधनामां 'ध्यान' एक मुख्य अंग छे। तेथी ध्यानविषयक ग्रंथोनी तपास करतां पाटणना श्री हेमचंद्राचार्य ज्ञानमंदिरना भंडारमां डा. नं. ५०, प्र. नं. ९९३ मा श्री 'ध्यानविचार' नामनो आ लघु ग्रंथ मळी आव्यो छे।

आ ग्रंथना आधाररूपे कोई महान् मौलिक ग्रंथ हशे एवुं अनुमान थाय छे। ते शोधवा माटे प्रयासो चालु छे। श्री नमस्कार महामंत्रनी आराधनामां ध्यानयोग जेवा अतीव महत्त्वना अंग उपर आवा व्यवस्थित ग्रंथथी मुमुक्षु पुरुषोने पुष्ट आलंबन थाय एवा पुण्य हेतुथी आ ग्रंथमां यथोचित शुद्धि करी विशेष व्यवस्थित रीते संपादित करी गुजराती अनुवाद साथे अहीं प्रकाशित कर्यो छे। आ कृतिना कर्ता विशे हस्तलिखित प्रतिमां कोई उल्लेख मळतो नथी।



सिरिमाणतुगसूरिविरइय

नवकारसारथवणं ॥

भत्तिब्भरअमरपणय पणमियं परमिट्ठिपचय सिरसा ।
नवकारसारथवणं भणामि भव्वाण भयहरण ॥ १ ॥
ससि-सुविहि अरिहता सिद्धा पउमाभ-वासुपुज्जजिणा ।
धम्मायरिया सोलस पासो मल्ली उवज्झाया ॥ २ ॥
सुव्वय-नेमी साहू दुट्ठारिट्ठस्स नेमिणो धणिय ।
मुक्खं खेयरपयवि अरिहता दिंतु पणयाण ॥ ३ ॥

अवचूरि (छाया)—भक्तिभरामरप्रणत प्रणम्य परमेष्ठिपञ्चक शीर्षेण ।
नमस्कारसारस्तवन भणामि भव्याना भयहरणम् ॥ १ ॥
चन्द्रप्रभ-सुविधी अर्हन्तौ, पद्मप्रभ-वासुपूज्यौ सिद्धौ ।
षोडशान्ये धर्माचार्या मल्लि-पार्श्वौ चोपाध्यायौ ॥ २ ॥
सुव्रत-नेमी साधू दुष्टारिष्टघाते नेमयश्चक्रधाराकल्पा ।
अन्वर्थं* मोक्षे खेचरपदवी ददतु प्रणता(ताना) जनानामर्हन्त इति ॥ ३ ॥

व्याख्या—भक्तेर्भरो येषा ते अमरा देवास्तै प्रणतम्, परमेष्ठिपञ्चकमर्हदादिक शिरसा मस्तकेन प्रणम्य मया नमस्कारस्य सार प्रधान यत् स्तवन तदह भणामि, भव्यानामैहिकामुष्मिकसप्तविध भयापहरणमित्यावगाथार्थ ॥ १ ॥

चन्द्रप्रभ-सुविधी तीर्थङ्करौ अर्हति ध्येये ध्यातव्यौ । पद्मप्रभ-वासुपूज्यजिनौ सिद्धध्याने । ऋषभाजित-सभवाभिनन्दन-सुमति-सुपार्श्व शीतल-श्रेयास-विमलानन्त-धर्म-शान्ति-कुन्थु अर-नमि-महावीर इति षोडशाना आचार्यध्याने ध्यातव्या । श्रीमल्लि-पार्श्वौ उपाध्यायध्याने ध्येयौ ॥ २ ॥

मुनिसुव्रत-नेमी तीर्थङ्करौ साधुध्याने दुष्टारिष्टस्य छेदने, नेमयश्चक्रधारासमाना साधव शीघ्रम र्हदादिध्यानेन यत फल स्यात तदाह । मोक्ष खेचरपदवीं प्रणताना ददन्तु अर्हन्त ॥ ३ ॥

अवचूरिका—१ परमेष्ठिपञ्चक प्राप्य । २ स्तोत्र भणामि संसारभयहरणम् । ३ चन्द्रप्रभ, सुविधिजिन । ४ पद्मप्रभ । ५ चक्रधारा (धारा) । ६ खेचरपदवी(वीं) जनाना प्रणतानाम् ।

---

1 °त्थिमि आर० JB । 2 J प्रतौ गाथाया 'अरिहता' स्थाने 'भगवता' इति पाठ । 3 मल्लि S । 4 पव ' D ।

* अन्वर्थ' स्थाने मूलगाथायां न कश्चित् पाठो विद्यते ॥

तेलुक्कवसीयरणं[1] मोहं सिद्धा कुणंतु भुवणस्स ।
जल-जलणाई[१] सोलस [२]पयत्थं[2] थंभंतु आयरिया ॥ ४ ॥
[१]इहलोइय[3]लाभकरा [4]उवज्झाया [२]हुंतु[५] भयहरणा ।
पावुच्चाडण-ताडणनिउणा[५] साहू सया सरह[६] ॥ ५ ॥
[6]महिमंडलमरहंता गयणं[७] सिद्धा य सूरिणो जलणो ।
वरसंवर[८]मुवज्झाया पवणो मुणिणो हरंतु दुहं ॥ ६ ॥
[7]ससिधवला[९] अरहंता रत्ता[१०] सिद्धा य सूरिणो [8]कणया[११] ।
मरगयभा[१२] उवज्झाया सामा[१३] साहू सुहं दिंतु ॥ ७ ॥

छा०—त्रैलोक्यवशीकरण कुर्वन्तु सिद्धाश्च मोहनं भुवनस्येति ।
आचार्याश्च जलादिरोग[१]-जल[२]-जलण(ज्वलन)[३]-विषधर[४]-चौर[५]-अरि[६]-मृगेन्द्र[७]-सर्प[८]-भय[९]-सङ्ग्राम[१०]-शाकणी(किनी)[११]-डाकिनी[१२]-राकिनी[१३]-लाकिनी[१४]-काकिनी[१५]-हाकिनी[१६]-षोडशपदार्थान् स्तम्भन्त्वाचार्याः ॥ ४ ॥
इह लोके लाभकराः भवन्तु उपाध्यायाः सर्वभयहरणाः ।
पापोच्चाटन-ताडनयोर्निपुणाः दक्षाः साधवः सदा स्मरत ॥ ५ ॥
महीमण्डलमर्हन्तः सिद्धा गम(ग)नमिति आचार्या. ज्वलनम ।
वर-संवरमुपाध्यायाः मुनयः पवन दुःख हरन्तु ॥ ६ ॥
चन्द्रोज्ज्वला अर्हन्तः सिद्धाश्च रक्ताः सूरयः कनकवत् ।
मरकतप्रभा उपाध्यायाः नीला इत्यर्थः साधवः श्यामाः सुख ददतु ॥ ७ ॥

व्या०—त्रैलोक्यवशीकरणं मोह च सिद्धा जगतः कुर्वन्तु । आचार्या स्तम्भन्तु, कान् ? जल-ज्वलन-रोग-विस (ष)हर-चौरारि-मृगेन्द्र-गजेन्द्र-सर्प-भय-संग्राम-शाकिनी-डाकिनी-राकिनी - लाकिनी - काकिनी - हाकिनीति षोडश पदार्थान् ॥ ४ ॥

ऐहिकलाभकरा उपाध्यायाः सर्वभयहरणा भवन्तु, पापोच्चाटन-मारण-ताम्ला(ताडना)दिकर्मणि कर्मठाः साधवः, स्मरत भो भव्याः ! यूयमिति संबन्धः ॥ ५ ॥

पृथ्वीतत्त्वेऽर्हन्तो ध्येयाः । आकाशतत्त्वे सिद्धाः । तेजस्तत्त्वे आचार्याः । प्रधाने च जलतत्त्वे उपाध्यायाः । पवनतत्त्वे मुनयः ध्ये (ध्या) यमाना भवी (वि) नां दुःखं हरन्तु ॥ ६ ॥

अर्हन्तः चन्द्रवदुज्ज्वला ध्येया. । सिद्धा रक्तवर्णाः । आचार्याः कनकवर्णा उपाध्याया मरकत-मणिसदृशा नीलवर्णाः । साधवः श्यामाः कृष्णवर्णाः भविकानां सुखं ददतु ॥ ७ ॥

अ०—१ जलणादिः = रोग-जल-जलण (ज्वलन)-विस(ष)हर-चोरारि-मृगेन्द्र-सर्प-भय-संग्राम-डाकिनी-शाकिनी-राकिनी-लाकिनी-काकिनी-हाकिनी । २ पदस्था आचार्याः [इत्यर्थोऽपि घटते] । ३ इहलोके । ४ भवन्तु । ५ निपुणाः । ६ स्मरत । ७ गगनम् । ८ तोयत्वम् । ९ चन्द्रवदुज्ज्वलाः । १० रक्ताः । ११ कनकवत् । १२ मरकतमणिसदृक्षाः । १३ श्यामाः ।

1 तिअलोअवसीकरण JB, D, N, A । 2 पयत्थं S । 3 इहलोए A । 4 JB आदर्शे सर्वत्र 'उवज्झाया'. स्थाने 'उज्झाया', S प्रतौ सर्वत्र 'उवज्झाया' पाठ । 5 हुति A । 6 SV आदर्शयो नवमीगाथा षष्ठाङ्केन निरूपिता, प्रत्यन्तरे पुन षष्ठाङ्केन दर्शिता गाथा सप्तमी, सप्तम्याः स्थाने च षष्ठी गाथा विद्यते इति गाथाव्यतिक्रम । 7 सुसूरिणो JB । 8 कणयं JA, D S ।

सीसत्था अरहता सिद्धा वयणम्मि सूरिणो कण्ठे[1]।
हिययम्मि उवज्झाया चरणठिया साहुणो वदे ॥ ८ ॥

अरिहता असरीरा आयरिय उवज्झाय तहा मुणिणो।
पचक्खरनिप्पन्नो[1] ॐकारो पचपरमिट्ठी ॥ ९ ॥

वट्टकला[2] अरिहता 'तिउणा[3] सिद्धा य 'लोढकला सूरी।
उवझाया सुद्धकला दीहकला साहुणो सुहया[4] ॥ १० ॥

[अक्खर आइ अयार हयारमतक्खर च माइए।
मज्झे वन्नसमुच्चयरयणत्तयभूमिय अरह ॥]*
'पुसित्थि[5]-नपुसय-राय[6]पुरिम बहुस[1]द्द्वण्णणिज्जाण।
जिण सिद्ध सूरि-वायग साहूण कमे नमसामि ॥ ११ ॥

छा०—शिरःस्था अर्हन्त सिद्धा वदनस्था सूरय कण्ठे।
हृदये उपाध्याया चरणस्थिता साधवस्तान् वन्दे ॥ ८ ॥
[नवमीगाथाया अवचूर्णि विद्यते।]
वर्तुला अर्हन्त सिद्धास्त्र्यस्रगा लोटकरा-लोटाकारा (सूरय)।
बालचन्द्राकारा उपाध्याया, दीर्घकला प्रलम्बा साधव सुखदा स्युरिति गम्यते ॥१०॥
पुरुष-स्त्री-नपुसक-राजपुरुष-बहुभि [शब्दै] वर्णनीया।
जिना सिद्धा सूरय वाचका साधवश्च क्रमान्नमस्युर्न ॥ ११ ॥

व्या०—अर्हन्त शीर्षस्था मस्तकस्था। वदने सिद्धा। कण्ठस्था आचार्या। हृदये उपाध्याया। चरणस्था पदस्था साधवो ध्येयास्तानह भक्त्या वन्दे ॥ ८ ॥

[नवमीगाथाया व्याख्या न विद्यते]

अर्हन्त वर्तुलाकारा, त्रिकु(को)णा सिद्धा, सूरयो लोष्टकाकारा, उपाध्याया द्वितीयाचन्द्रकलाकारा, दीर्घकला प्रलम्बाकारा साधवो ध्यायमाना सुखदा भवन्तु ॥ १० ॥

अर्हत-सिद्ध-सूरि-उपाध्याय-साधुना नमो नमस्करोमि। कीदृशानाम्? पुरुषाशक १ नार्यंशक २-नपुसकाशक ३-राजपुरुषाशक ४-सर्वशब्दजनाशकानाम् ५ ॥ ११ ॥

अ०—१ शिरसि स्थिता। २ वक्त्रे। ३ कण्ठे। ४ हृदय। ५ चरणस्थिता। ६ वर्तुल। ७ त्रि(त्र्य)स्त्रा। ८ लष्टाकारा। ९ बालचन्द्राकारा। १० दीर्घकला प्रलम्बा। ११ पुरुष-स्त्री। १२ राजपुरुष।

---

1 निप्पन्नो S D। 2 तत्ता D। 3 लोढकर D लोढरय A। 4 सरण D वद JB, N। 5 पुमित्थिनपुसयरायपुरिसवण्णणिज्जाण A पुमित्थिनपुसयरा पुरिसबहुवण्णणिज्जाण D °यरा पुरिसबहुसद्दवण्णणिज्जाण N, बहुसद्द्दवण्ण णिज्जाण Ja। 6 °राइ° JB, °राउ° N।

* एतदन्तर्गता गाथा नमस्कारस्वाध्यायस्यान्यायाया विशदरूपेणैव दशाङ्कनोर्धृता। 'पुमित्थि° गाथाऽप्येवमत्रैव पुनर्लिखिता।

पढम-दुसरारिहंता चउस्सरा सिद्ध सूरि-उवज्झाया ।
दुग-दुगसरा [1]कमेणं नंदंतु मुणीसरा [2]दुसरा ॥ १२ ॥
[2]वण्णनिवहो[3] कगाई[4] जेसिं बीओ हकारपज्जंतो[5] ।
नियनियसरसंजोगा[6] सरेमि [7]चूडामणिं [8]तेहिं ॥ १३ ॥
ते पुण अएकचटतपयस[9] त्ति नववग्ग[10] वन्न पणयाला ।
परमिट्ठिमंडलकमा पढमंतिम[11]तुरियतियबीआ ॥ १४ ॥
[3]सेयारुण-पीय-पियंगुवन्न[12]-कसिणाइ[13] विडविपत्ताइं ।
अंबिल[14]-महु-तिक्ख[15]-कसाय-[16]कडुय परमिट्ठिणो वंदे ॥ १५ ॥

छा०—प्रथम-द्विस्वरा अर्हन्तः, चतुःस्वराः सिद्धाः, सूरयः उपाध्यायाश्च द्विस्वराः ।
मुनयोऽपि द्विस्वराः, एवं चैते अआ इई उऊ एऐ ओऔ अंअः ॥ १२ ॥
वर्णनिवहो वर्णसमूह[ः] कादिर्येषां बीजं हकारपर्यन्तः ।
निजनिजस्वरसंयोगात् [तेषामर्थे चूडामणिशास्त्र] स्मरामि ॥ १३ ॥
ते वर्णाश्च अ ए क च ट त प य से(शे)[ति] नववर्गः ४५ अक्षराणि स्युस्ते ।
परमेष्ठिमण्डलाः क्रमादनुक्रमात् प्रथमोऽन्तिमः, तुर्यस्तृतीयो द्वितीयश्च ॥ १४ ॥
श्वेत-रक्त-पीत-प्रियङ्गुवर्ण-कृष्णविटपिपत्राणि तत्प्रभाणि ।
आम्ल-मधुर-तिक्त-कषाय-कटुका अनुक्रमेण परमेष्ठिनो वन्दे ॥ १५ ॥

व्या०—प्रथमद्विस्वरा 'अ आ' रूपा अर्हन्त. । 'इ ई ए ऐ (उ ऊ)' चतुःस्वररूपाः सिद्धाः । सूरयः 'उ ऊ (ए ऐ)' रूपा, 'ओ औ' रूपा उपाध्यायाः । एवं द्विकद्विकस्वराः सिद्धादयः (आचार्यादयः), मुनीश्वरा द्विस्वरा 'अं अः' रूपा जयन्तु ॥ १२ ॥

येषामर्हदादीनां हकारपर्यन्त. ककारादिर्वर्णनिवहो बीजं तत्त्व, निजनिजाकारादिस्वरसंयोगात् तेषा चूडामणिमहं स्मरामि ॥ १३ ॥

[चतुर्दशगाथायाः व्याख्यानं कृतं नास्ति टीकाकारेण]

अर्हदादीनां क्रमेण वर्णध्यानम् । श्वेता अर्हन्तः, रक्ताः सिद्धा., पीतवर्णा आचार्या., प्रियङ्गुर्वृक्षविशेषः, स च नीलवर्णस्तद्ध्याने उपाध्यायाश्चिन्त्या नीलत्वात् तेषाम् । विटपी वृक्षस्तस्य पत्राणि कृष्णवर्णानि स्युः साधूनां कृष्णत्वात्, तद्ध्यानं अम्ल १ – मधुर २ – तिक्त ३ – कषाय ४ – कटु ५ – रसैः क्रमेणार्हदादीन् वन्दे ॥ १५ ॥

[अत्र षोडशगाथायाः व्याख्या न वर्तते]

अ०—१ अ आ इ ई उ ऊ [ए ऐ] ओ औ अं अः । २ वर्णसमूहः कादिर्येषां हकारपर्यन्तो निजस्वर-सयुक्तस्तेषाम्, स्मरामि । ३ श्वेत-रक्त-पीत-नील-कृष्णवृक्षपत्राणि ।

---

1 कमेण S । 2 तिसरा N, JC । 3 °निवहे S 4 ककाइ D, ककाई S, ककाई सुसंठिओ जो JB, ककाई सठिज्जे S । 5 °पज्जते S । 6 संयोगो A । 7 चूडामणी JA । 8 तेसिं S । 9 °पजस° D, °यश JA । 10 °वग्गा D S । 11 °तुरिया D । 12 °वण्णं D । 13 °णाइविडवि° D, °णाइं विडंग° JB । 14 गुलिय° JB । 15 °तित्त° JB, D, S । 16 कडुया JB, °कडुअ S ।

मंसि [1]सुक्के [2]अरिहंते रवि-मंगल[3] सिद्ध गुरु-बुहा सूरी।
संरह [4]उवज्झाय केऊ कमेण साहू सणी राहू ॥ १६ ॥

नंदा[5] तिहि अरिहंता भद्दा सिद्धा य सूरिणो य[6] जया।
तिहि रित्ता [7]उवज्झाया पुण्णा साहू सुह दिंतु ॥ १७ ॥

[8]सोसि मंगल[9] अरिहंता बुहो य सिद्धा य सुरगुरू सूरी।
सुक्को[10] उवज्झाय पुणो[11] साहू [12]मंदो सुह भाणू[13] ॥ १८ ॥

कत्तिय चित्तो[14] [15]अरिहा वइसाहो मग्गमास सिद्धा य।
पोसो जिट्ठो भद्दव आसोआ सूरिणो सुहया ॥ १९ ॥

माहासाढुज्झाया[16] फग्गुणमासो य सावणो साहू।
[17]मह[18] मंगलमरिहंता(इ) अचिंतचिंतामणी[19] दिंतु[20] ॥ २० ॥

छा०—शशि शुक्रा अर्हन्तो, रवि मङ्गलौ सिद्धा, गुरु-बुधौ सूरय।
स्मरतोपाध्यायान् केतुमिति शनि राहु—साधव क्रमात् ॥ १६ ॥
अर्हन्तो नन्दातिथि, सिद्धाश्च भद्रातिथि, सूरय आचार्या विजयातिथि।
उपाध्याया रिक्तातिथि, साधव [पूर्णातिथि] ददतु ते सुखम् ॥ १७ ॥
शशि मङ्गला अर्हन्त, सिद्धा बुध, सूरय सुरगुरव।
शुक्र उपाध्याया, मन्दो भानू राहुरि-(°नु शनिश्चर इ°)ति साधव सुख ददतु ॥ १८ ॥
कार्तिक चैत्री अर्हन्त., वैशाख-मार्गशीर्षौ सिद्धाश्च।
पोष-ज्येष्ठ भाद्रपदाश्विनमासा सूरय सुखदा स्युरिति मनन्व ॥ १९ ॥
माघाषाढौ उपाध्याया, फाल्गुनक-श्रावणौ साधव।
मम मङ्गल ददत्वर्हन्तोऽचिन्त्यचिन्तामणय ॥ २० ॥

व्या०—अर्हता ध्यान १।६।११ नन्दातिथौ कार्यम्। सिद्धाना २।७।१२ भद्रायाम्। सूरीणा ३।८।१३ जयायाम्। उपाध्यायाना ४।९।१४ रिक्तायाम्। साधूना ५।१०।१५ पूर्णाया तिथौ ध्यान विधेय सुखार्थम् ॥ १७ ॥

सोम-मङ्गलवारयोरर्हन्त। बुधवारे सिद्धा। बृहस्पतिवारे सूरय, शुक्रवारे उपाध्याया। आदित्य शनिश्चरयोर्वारयो साधव ध्यायमाना सुख ददतु ॥ १८ ॥

अर्हदादीनामानुपूर्व्या मासस्य ध्यान क्रियते, तदाह—कार्तिकमासे चैत्रमासे च अर्हन्त। वैशाखमासे मार्गशीर्षमासे च सिद्धा। पोषमास-ज्येष्ठमास भाद्र[पद]मासाश्विनमासेषु आचार्या ध्यायमाना सुखदा भवन्ति ध्यातॄणामिति ॥ १९ ॥

माघाषाढमासद्वये उपाध्याया। फाल्गुन-श्रावणमासद्वये साधव चिन्तितार्थचिन्तामणयो मम मङ्गल विरचयन्तु ॥ २० ॥

अ०—१ सोम शुक्रौ। २ बृहस्पति बुधौ। ३ स्मरत। ४ उपाध्याय केतु, शनि, राहु। ५ सोम मङ्गल बुध-बृहस्पति। ६ कार्तिक-चैत्र(त्रौ), वैशाख मार्गशीर्ष(र्षौ), पोष ज्येष्ठ भाद्रपद आश्विन(ना), माघ आषाढ(ढौ), फाल्गुन श्रावण(णौ)। ७ मम।

---

1 सुक्को N। 2 अरहंता N A। 3 °मंगल D। JA N, A इत्यादर्शेषु षोडशगाथानन्तरं 'पुव्वपुरिस' इत्यादि २५ २६, २७, २८ गाथाचतुष्क १७, १८ १९, २० इत्यङ्केर्निदिष्टम्। 4 सिद्धाय D। 5 विजया D A। 6 उवज्झाया J B। 7 °स्सरि° D S N A। 8 सुक्क उज्झाय S D। 9 उवज्झाय भो JB °भो° S। 10 मंदा D। 11 भाणु S। 12 अरहा N A। 13 °सुवज्झाया D। 14 मम JB D। 15 °मणि D। 16 दिसउ N।

[1]पुंसयरा[1] अरहंता धणिट्ठापंचगा य सिद्धा य ।
दिगुरिक्खा[2] आयरिया नमामि सिरसा य भत्तीए ॥ २१ ॥
अद्दाई[3] जे रिक्खा उवज्झाया तेसि दिंतु [3]फलनिवहं ।
चित्ता[4] साई साहू सासयसुक्खं महं दिंतु ॥ २२ ॥
जमु कन्ना[5]-विस अरिहा मेसो [6]मयरो[3] य अंतिणो सिद्धा ।
पंचाणण अलि सूरी धणु[7]-मिहुणोऽज्झावया वंदे ॥ २३ ॥
कक्कड-तुला य साहू दोदह[8] रासी य पंचपरमिट्ठी ।
भावेणं[9] थुणमाणो पावइ[10] सुक्खं च मुक्खं च ॥ २४ ॥
पुव्वाणुपुव्विहिट्ठा समयाभेएण [11]कुरु जहाजिट्ठं ।
उवरिमतुल्लं पुरओ [12]निसिज्ज पुव्वक्कमो [13]सेसो ॥ २५ ॥
जम्मि[14] य निक्खित्ते खलु सो चेव हविज्ज अंकविन्नासो ।
सो होइ समयभेओ वज्जेयव्वो पयत्तेणं ॥ २६ ॥
इच्छियपय[15] अंकाणं नासब्भासो[16] य भंगपरिमाणं ।
अंतंकभागलद्धं [17]ठवियंका पुण पुणुद्धरियं[18] ॥ २७ ॥
[19]मूलगपंतिदुगेणं [20]अंको जो ठविय दुन्नि जे अंका ।
तेसि [21]दुभंगे काउं निसिज्ज कम-उक्कमेणं तु ॥ २८ ॥

छा०—पुरुपनक्षत्राणि अर्हन्तः, धनिष्ठापञ्चकं च सिद्धाश्च ।
आचार्या द्विगुनक्षत्रा एतान् वन्दे शिरसा च पुनर्भक्त्या ॥ २१ ॥
आर्द्राद्याश्च ये नक्षत्रास्ते उपाध्याया गुणनिवहं ददतु ।
चित्रा-स्वाती साधवः शाश्वतसुखं मह्यं ददतु ॥ २२ ॥
पम जम अन्ते अर्हन्तः, मेप-मकरौ च सिद्धौ ।
सिंह-वृश्चिकौ सूरयः, धनुर्मीनावुपाध्यायाः ॥ २३ ॥
[२४ गाथातः २८ गाथापर्यन्तमवचूरिर्न विद्यते ।]

व्या०—[इतः २१ गाथातः ३५ गाथापर्यन्त व्याख्यानं नोपलभ्यते ।]

अ०—१ पुरुषनक्षत्राणि, धनिष्ठापञ्चकम्, दशनक्षत्राणि। २ आर्द्रादि यानि नक्षत्राणि तेपाम्, चित्रा-स्वातिसमाः। ३ कन्या-वृप(षौ), मेष-मकर(रौ), सिंह-वृश्चिक(कौ), धनुर्मिथुन(नौ), कर्क-तुला(ले), पञ्चपरमेष्ठि[नः] स्तूयमानाना मोक्षम् ।

---

1 मूल सग अरिहता तहा धणिट्ठाइपचयं सिद्धा J, Ja, S, P। धणिट्ठगा पंचगो य सिद्धा य N, पुंस सग JB। 2 दियरिक्खा S। 3 गुणनि° D। 4 चित्ताईसाइ D। 5 यम जम अते अ° JB, जम जम अते अरिहा। DN, पम जम अते अरिहा A, जमु कि(क)न्ना विसरमहता S। 6 मयरा D। 7 धणमिहुणज्झायया वदे N, धणमिहुणुज्झायया वदे A D। धूण य मिहुणो उज्झाया JB, S। 8 दो दो JA, दो दस JC, N, दो दुह रासीउ A, रासीओ JB। 9 भावेण थुव्वमाणा JB, भावेण पु(सु) द्धमणो सासयसुक्ख महं दितु N। 10 पावइ मुक्ख सुक्खं च A। 11 कुण DS। 12 नसिज्ज D निसेज्ज S। 13 सेसे D S। 'पुव्वाणुपुव्वि°' इत्यादिगाथाचतुष्कं २५, २६, २७, २८ पोडशगाथानन्तर १७, १८, १९, २० इत्याङ्कैर्निर्दिष्टा । 14 जह जम्मिय पक्खित्ते JB, जेहिम्मि य नक्खत्ते JD, जम्मि निक्खित्तो तह पुणरवि सो चेव अक DS। 15 पयरगईए JC N, पयरगइए D। 16 नामब्भामो य अंकपरि° N, JC। 17 ठवियज्जा D, ठवियग्गा JC, N, ठवियग A, ठवियगा JB। 18 पुण धरियं DS। 29 मूलिग JC, मूलिगपति दुए पुण अको नो ठविय S। 20 अको न ठविज्जइस्सि जे D, नो ठवियम्मि जे A। 11 दुभेगे काउं नसिज्ज D।

त नत्थि ज न इत्थ निमित्त-गह गणिय-मंत-तंताई।
ज पत्थिय[1] पयच्छइ कहेइ ज [2]पुच्छिय सयल ॥ २९ ॥
तिहुयणसामिणिविज्जा[3] महमंतो मूलमंततत्तत्तिय[3]।
इत्थ [4]ठिय पि न नज्जइ[4] गुरूवएस विणा सम्म ॥ ३० ॥
[5]सुमरियमित्त[5] पि इम [6]तत्त नासेइ सयलदुरियाइ।
पारंपरेण नाय त नत्थि सुह न ज कुणइ ॥ ३१ ॥
पंचनवकारतत्त[7] लेसेण ससिअ [8]अणुहवेण[8]।
सिरिमाणतुंग-माहिंदमुज्जल सिवसुह[9] दिंतु ॥ ३२ ॥
सभरह पढह झायह णिच्च घोसेह [10]णमह अरिहाई।
[11]भद्दपय जइ इच्छह तस्सेव य अत्तणो णाण[12] ॥ ३३ ॥
[13]न हि [14]उवसग्गा[6] पीडा कूरग्गहदसण [15]भओ सका।
जइ वि न हवति एए तो[16] वि तिसझ भणिज्जासु ॥ ३४ ॥
एसो परमरहस्सो परमो मतो इमो [17]तिहुअणम्मि।
ता किमिह बहुविहेहिं[7] [18]पढिएहिं [19]पुत्थयसएहिं ॥ ३५ ॥

[N प्रतौ-] इति श्रीपञ्चपरमेष्ठिस्तोत्रम् ॥ रत्नहर्षपठनकृते लिखितम।

छा०—तन्नास्ति निमित्त ग्रहगणित मन्त्र-तन्त्रादि।
यत् प्रार्थित तत् प्रयच्छति कथ[य]ति यत् पृष्ट सकलम् ॥ २९ ॥
त्रिभुवनस्वामिनीविद्या अत्र स्थिताऽपि न ज्ञायते गुरूपदेश विना सम्यग् ॥ ३० ॥
स्मृतमात्रमपि नाशयति सकलदुरितानि, तन्नास्ति सुख यन्न करोति ॥ ३१ ॥
अनुभवेन कथित, मोक्षसुख दिशतु ॥ ३२ ॥
[अत्र ३३ गाथाङ्कोपर्यवचूरिर्नास्ति।]
महानुपसर्ग पीडा-क्रूरग्रहदर्शन भय शङ्का ॥ ३४ ॥
तत् किमिह विविधेन पठितपुस्तकभरेण ॥ ३५ ॥
इति अवचूरि समाप्ता ॥

अ०—१ तन्नास्ति निमित्त ग्रह गणित मन्त्र-तन्त्रादि यत् प्रार्थित तत् प्रयच्छति। कथयति यत् पृष्ट सकलम्। २ त्रिभुवनस्वामिनी विद्या अत्र स्थिताऽपि न ज्ञायते गुरूपदेश विना सम्यग्। ३ स्मृतमात्रमपि नाशयति सकलदुरितानि। तन्नास्ति सुख यन्न करोति। ४ अनुभवेन कथितम्। ५ मोक्षसौख्य ददातु। ६ महानुपसर्गा, पीडा क्रूरग्रहदर्शन, भय(य), शङ्का। ७ तत् किमिह विविधैः [‘पुत्थभारहिं’ इति पाठे] पठितपुस्तकभारेण ॥

1 °य न यच्छइ D। 2 पुच्छिय JB। 3 °तताइ D, तंततिय JB, A N। 4 ठिय न (वि) D। 5 निज्जइ JB A। 6 समरिय N A। 7 मत JA, धुत N। 8 सुत D A। 9 अणुभावेण D, अणुभवेण A, 10 थुवइ D, थुवइ A, नमइ JA नयइ N। 11 सिद्धपयं S। 12 नाय N, नाम A। 13 महउ° D, नहुउ° N A, नवुउ° S। 14 उवसग्गा NA उवसग्गे SD। 15 भय D। 16 तह वि सगुज्झ S, तो विसज्झ A। 17 तिभुवणम्मि JA S। 18 पढिएहिं पुत्थभारहिं JA। 19 पुत्थयभरेण D।

पञ्चपदाम्नायः ॥

[पञ्चपरमेष्ठिसाधन-विधि-फलम्]

[१] ॐ नमो अरिहंताणं श्रीचन्द्रप्रभ-सुविधिनाथौ श्वेतवर्णौ सितध्यानेन ब्रह्मस्थाने मस्तकस्थितौ ध्यातव्यौ। पृथ्वीमण्डलतत्त्वे वर्तुलाकारौ पुरुषांशकौ, अ-आ स्वरौ, क-च-ट-त-प-य-श इति सप्तभिर्व्यञ्जनैर्ध्यातव्यौ। नन्दातिथिभिः प्रतिपत्-षष्ठ्येकादशीभिस्तिथिभिः सहितौ, सोम-मङ्गलवारसंयुक्तौ, [वृष ?]कन्या-कुम्भराशिसहितौ, कार्तिक-चैत्रमासयुक्तौ, कृत्तिका-रोहिणी-उत्तराफाल्गुनी-हस्त-धनिष्ठा-शतभिषक्-पूर्वाभाद्रपदसप्तन(भिर्न)क्षत्रैर्ध्यातव्यौ, गौल्याम्लास्वादसहितौ। 'ॐ ह्रीँ (ह्रां) अर्हते नमः' अनेन मन्त्रेण मुक्तत्वं खेचरत्वं च लभ्यते ॥ इति प्रथमपदाम्नायः ॥ १ ॥

[२] ॐ नमो सिद्धाणं पद्मप्रभ-वासुपूज्यौ रक्तवर्णौ रक्तध्यानेन पूर्वस्यां दिशि मुखस्थितौ ध्यातव्यौ। आकाशमण्डलतत्त्वे त्रिकोणौ, स्त्र्यंशकौ, इ-ई-ए-ऐ स्वरैः; ख-छ-ठ-थ-फ-र-ष सप्तभिर्व्यञ्जनैः सहितौ [ध्यातव्यौ], भद्रातिथि[भिः] द्वितीया-सप्तमी-द्वादशी[भिः] तिथि[भिः] सहितौ बुधवारसहितौ, वैशाख-मार्गशीर्षमासयुतौ, मेष-मीन-मकरराशियुतौ, अश्विनी-भरण्युत्तराषाढो(ढा-)[श्रवणो]त्तराभाद्रपद-रेवती षड्भिर्नक्षत्रैः [ध्यातव्यौ], मधुरास्वादयुतौ। 'ॐ ह्रीं सिद्धाय नमः' अनेन ध्यानेन त्रैलोक्यवशीकरणं त्रिभुवनमोहकत्वं च भवति ॥ इति द्वितीयपदाम्नायः ॥ २ ॥

[३] ॐ नमो आयरियाणं ऋषभाजित-संभवाभिनन्दन-सुमति-सुपार्श्व-शीतल-श्रेयास-विमलानन्त-धर्म-शान्ति-कुन्थ्वर-नमि-महावीराः षोडशजिनाः कनकवर्णाः पीतध्यानेन दक्षिणस्यां दिशि कण्ठस्थिताः, तेजोमण्डलतत्त्वे लोढाकाराः, नपुंसकांशकाः, उ-ऊ स्वराः, ग-ज-ड-द-ब-ल-स सप्तभिर्व्यञ्जनैर्ध्यातव्याः। जयातिथि[भिः] तृतीयाष्टमी-त्रयोदशी[भिः] तिथिभिः सहिताः, पौष-ज्येष्ठ-भाद्रपदाश्विनमासयुताः, बृहस्पतिवारसहिताः, सिंह-वृश्चिकराशियुताः, मघा-पूर्वाफाल्गुन्यनुराधा-ज्येष्ठाचतुर्भिर्नक्षत्रैर्ध्यातव्याः। तिक्तास्वादसहिताः। 'ॐ हूँ आचार्येभ्यो नमः' इति वाऽनेन ध्यानेन जल-ज्वलनादिषोडशपदार्थान् स्तभ्नाति ॥ इति तृतीयपदाम्नायः ॥ ३ ॥

[४] ॐ नमो उवज्झायाणं पार्श्वनाथ-मल्लिनाथौ मरकतवर्णौ नीलध्यानेन ध्यातव्यौ। पश्चिमायां दिशि हृदयस्थितौ जलतत्त्वे, द्वितीयाचन्द्रकलाकारौ, राजपुरुषांशकौ, ओ-औ स्वरौ, घ-झ-ढ-ध-भ-व-ह सप्तभिर्व्यञ्जनैः सहितौ, रिक्तातिथि[भिः] चतुर्थी-नवमी-चतुर्दशी[भिस्तिथिभिः] युतौ, धन-मिथुनराशि-युतौ, भृगुवारसहितौ, माघाषाढमाससंयुक्तौ, मूलपूर्वाषाढा-मृगशीर्षार्द्रा-पुनर्वसुपञ्चभिर्नक्षत्रैः, कषायास्वादौ ध्यातव्यौ 'ॐ ह्रौँ उपाध्यायेभ्यो नमः' अनेन मन्त्रेण 'इहलोइयलाभकरा उवज्झाया हुंतु सव्वभयहरणा'॥ इति चतुर्थपदाम्नायः ॥ ४ ॥

[५] ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं मुनिसुव्रत-नेमिनाथौ कृष्णवर्णौ कृष्णध्यानेनोत्तरस्यां दिशि चरणेषु ध्यातव्यौ। वायुतत्त्वे, दीर्घकलाकारौ, बहुप्रसिद्धलोकवन्द्यमानौ, अं-अः स्वरौ, ङ-ञ-ण-न-म-ल-क्ष सप्तभिर्व्यञ्जनैर्ध्यातव्यौ। पूर्णातिथि[भिः] पञ्चमी-दशमी-पूर्णिमातिथिभिः, शनि-रविवाराभ्यां च सहितौ, फाल्गुन-श्रावणमासयुतौ, कर्क-तुलाराशिसहितौ, पुष्या-ऽऽश्लेषा-चित्रा-स्वाति-विशाखापञ्चभिर्नक्षत्रैर्ध्यातव्यौ। कटुकास्वादौ। 'ॐ ह्रः सर्वसाधुभ्यो नमः' अनेन ध्यानेन 'पावुच्चाडन-ताडण-मारणनिउणा साहू सया सरह ॥' इति पञ्चमपदाम्नायः ॥ ५ ॥

इति पञ्चपरमेष्ठिमन्त्रविधिः संपूर्णोऽस्तु ॥

[A प्रतौ—ब्र(बृ)हत्खरतरगच्छे उपाध्यायश्रीशान्तिरतनगणीजी महाराजके पठनार्थं धनसुखदासस्य भार्या सूरजकुवरबीबीने वहराया मी आसोज सुदी १० सुक्र सं० १९५२ का० जैपुरनगरे॥]

पञ्चपरमेष्ठिसाधन विधि फलकोष्टक ।

आम्नाय	अरिहंत	सिद्ध	आचार्य	उपाध्याय	साधु
१ परमेष्ठिपञ्चके चतुर्विंशति जिनस्वरूपम्	चंद्रप्रभ, सुविधि	पद्मप्रभ, वासुपूज्य	ऋषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन, सुमति, सुपार्श्व, शीतल, श्रेयांस विमल, अनंत, धर्म, शांति, कुंथु, अर, नमि, वीर	पार्श्व, मल्लि	मुनिसुव्रत, नेमि
२ वर्णनिर्देश	श्वेत	रक्त	कनक (पीत)	मरकत (नील)	कृष्ण
३ दिशानिर्देश	ब्रह्मस्थान	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
४ अंगन्यास	मस्तक	मुख	कंठ	हृदय	चरण
५ तत्त्वनिर्देश	पृथ्वीमंडल	आकाश तत्त्व	तेजोमंडल	जलमंडल	वायुमंडल
६ आकार, साध्य-ह्रीँ	वर्तुल •	त्रिकोण ∧	लोढकल आठ खूणवाळो प्राह्न ह कार	बिन्दुकलारूप ⌣	दीर्घकलारूपे ।
७ अक्षर	पुरुष	स्त्री	नपुंसक	राजपुरुष	बहु शब्द वर्णनीय सर्वश्राद्धजन अथवा बहुप्रसिद्धलोक वर्तमान
८ स्वर	अ आ	ई इ ए ऐ (इ ई उ ऊ)	उ ऊ (ऋ ॠ ऌ ॡ)	ओ औ	अं अः
९ वर्ग	क च ट त प य श	ख छ ठ थ फ र ष	ग ज ड द ब ल स	घ झ ढ ध भ व ह	ङ ञ ण न म ळ क्ष
१० ग्रह	चंद्र, शुक्र	सूर्य, मंगल	गुरु, बुध	केतु	शनि, राहु
११ तिथि	नंदा (१,६,११)	भद्रा (२,७,१२)	जया (३,८,१३)	रिक्ता (४,९,१४)	पूर्णा (५,१०,१५)
१२ मास	कार्तिक, चैत्र	वैशाख, मागशर	पोष, जेठ, मागशर्वो आसो	माघ, आषाढ	फागण, श्रावण
१३ राशि	वृष कन्या, कुंभ	मेष, मीन, मकर	सिंह, वृश्चिक	धन, मिथुन	कर्क, तुला
१४ वार	सोम, मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि, रवि
१५ नक्षत्र	कृत्तिका, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, धनिष्ठा, शतभिषक्, पूर्वाभाद्रपद	अश्विनी, भरणी, उत्तराषाढा, श्रवण, उत्तराभाद्रपद, रेवती	मघा, पूर्वाफाल्गुनी ज्येष्ठा, अनुराधा	मूल, पूर्वाषाढा, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु	पुष्य, आश्लेषा, चित्रा, स्वाति, विशाखा
१६ रस	अम्ल	मधुर	तिक्त	कषाय	कटु
१७ मन्त्र	ॐ ह्राँ अर्हद्भ्यो नमः ।	ॐ ह्रीँ सिद्धेभ्यो नमः ।	ॐ ह्रूँ आचार्येभ्यो नमः ।	ॐ ह्रौँ उपाध्यायेभ्यो नमः ।	ॐ ह्रः सर्वसाधुभ्यो नमः ।
१८ फल	मुक्तत्व, खेचरत्व (विमोचन, शांति)	त्रैलोक्य वशीकरण, त्रिभुवनमोहकत्व, वशीकरण, मोहन	स्तंभन ग्लानि	इहलौकिकलाभ, सन्मयहरण (तुष्टि, पुष्टि)	(पाप) उच्चाटन, मारणादि

परिचय

'नमस्कारसारस्तवन' नामक स्तोत्रनी लगभग वीशेक हस्तलिखित प्रतिओ जोवा मळी छे, तेमांथी ९ प्रतिओने सामे राखीने आ स्तोत्रनु संपादन कर्यु छे। ए प्रतिओनो परिचय आ रीते छे:—

१. A संज्ञक प्रति ते जैन साहित्य विकास मंडळना संग्रहनी फोटोस्टेटिक कोपी (ते श्री मुक्तिकमल जैन मोहनज्ञानमदिर, वडोदराना संग्रहनी प्रति)

२. S संज्ञक प्रति ते जै. सा. वि. म. ना संग्रहनी बीजी फोटोस्टेटिक कोपी।

३. D संज्ञक प्रति ते देवचंद लालभाई पुस्तकोद्धार फड, सूरतथी न. ७९ मा प्रसिद्ध थयेल 'भक्तामर-कल्याणमंदिर-नमिऊणस्तोत्रत्रयम्' मा प्रगट थयेलुं आ स्तवन।

४. J संज्ञक प्रति ते श्रीजिनविजयमुनिजीए छपावेलां फोर्म्स।

५. Ja सज्ञक प्रति ते श्रीजिनविजयजीए बीजी पोथी उपरथी लीधेला पाठांतरो।

६. Jb संज्ञक प्रति ते श्रीजिनविजयजीए त्रीजी पोथी उपरथी लीधेलां पाठांतरो।

७. Jc संज्ञक प्रनि ते श्रीजिनविजयजीए चोथी पोथी उपरथी लीधेलां पाठांतरो।

८. N संज्ञक प्रति ते श्री अगरचदजी नाहटा, बिकानेरना संग्रहनी प्रति।

९. P संज्ञक प्रति ते श्रीवर्धमान जैन आगममंदिर, पालीताणाना संग्रहनी नं. १९९नी प्रति।

आ स्तोत्र अद्यावधि उपर्युक्त न. ३ D संज्ञाथी सूचित पुस्तकमा प्रगट थयु छे। अत्यंत प्रसिद्ध एवा 'भक्तामर स्तोत्र' ना कर्ता अनेकविद्यानिपुण जे श्री मानतुगसूरि ते ज आ स्तोत्रना कर्ता छे। आ मानतुंगसूरिनु चरित्र 'प्रभावकचरित'मां आपेलुं छे।

आ स्तोत्र उपर 'नमस्कारव्याख्यानटीका' नामे व्याख्या मळी आवी छे। तेनो परिचय आ पछी सळंगरूपे आपवामां आवती ए कृतिनी अंते आप्यो छे एटले ए संबंधे अहीं पुनरुक्ति करवी उचित नथी; पण आ स्तोत्रनी महत्तानो ख्याल करावनार ए टीकाग्रंथ छे, छतां एनुं रहस्य समजवु मुश्केल छे, एटलुं ज कहेवु पर्याप्त गणाशे।

आ मूळ स्तोत्र उपर (१) नानी व्याख्या, शेठ झवेरचंद पन्नाजी, बुहारीना संग्रहमांथी मळी छे ते, (२) श्रीअगरचदजी नाहटा, बिकानेरना संग्रहमांथी मळेली प्रतिमां अवचूरि (छाया) हती ते, अने (३) श्रीजिनविजयजी मुनिजीए छपावेल स्तोत्रमांना विशिष्ट शब्दो उपरनां टिप्पणोरूप अवचूरिका हती ते; आ स्तोत्रनी साथोसाथ आपीने मात्र मूळ अहीं प्रसिद्ध करेल छे। आ स्तोत्रनो गुजराती अनुवाद तैयार करवामा आव्यो हतो, परनु तेना अर्थघटन विशे मतभेद होवाथी तेमज अमुक श्लोकोनुं यथार्थ गुजराती भाषातर कठिन होवाथी सुज्ञ गुरुदेवोनी सूचनानुसार आखा स्तोत्रनो अनुवाद रद करेल छे। आ विषयने उपयोगी "पञ्चपदाम्नायः" तथा "पञ्चपरमेष्ठिसाधन–विधि–फलकोष्टक" साथे ज पृष्ठ २६८ तथा २६९ पर आपेल छे।

श्रीमानतुङ्गसूरिरचित 'नवकारसारथवण'स्य

नमस्कारव्याख्यानटीका ॥

अरिहता असरीरा आयरिय उवज्झाय तह मुणो मुणिणो ।
पचक्खरनिप्पन्नो ॐकारो सया भणिओ ॥ ९ ॥

अ अ आ उ म् = 'ॐ' साधनायाम् । तथा—

चट्टकला अरहता तिउणा सिद्धा य लोढकलसूरी ।
उवज्झाय विसुद्धकला दीहकला साहुणो सुहया ॥ १० ॥

साधिते 'ह्रीँ'कार । तथा—

अक्खर आइ अयार हयारमतक्खर च माईए ।
मज्झे वण्णसमुच्चयरयणत्तयभूसिय अरह ॥ ११ ॥

'अर्हँ' इत्यर्थ । त्रीणि बीजानि परमेष्ठिवाचकानि । तथा—

"ॐ नमो अरिहताण ह्म्ल्र्यूँ नम । ॐ नमो सिद्धाण भ्म्ल्र्यूँ नम । ॐ नमो आयरियाण म्म्ल्र्यूँ नम । ॐ नमो उवज्झायाण [ह्म्ल्र्यूँ] नम । ॐ नमो लोए सव्वसाहूण क्ष्म्ल्र्यूँ नम ।"

पार्श्वनाथप्रतिमाया पूजा कृत्वा नामग्राहमूर्धीकृत्याष्टोत्तरपञ्चशतानि जपेत्, बन्धमोक्षो भवति आत्मन परस्य च । तथा पूना-नाम कृत्वाऽग्रे सुप्यते स्वप्नान्तर लभ्यते ग्लान-बन्धन गमनादिविषये ।

"हरिमर्कटि हरिमर्कटि मृत्युपद परिलिखन्ति परिलिखन्ति, भूमितल परिवाहति परिवाहति, मन्त्रपद परिमुञ्चति परिमुञ्चति, बन्धभय द्म्ल्र्यूँ भ्म्ल्र्यूँ म्म्ल्र्यूँ ह्म्ल्र्यूँ क्ष्म्ल्र्यूँ अमुकस्य बन्धमोक्ष कुरु कुरु ॥"

चित्रकूटखटिकया शुद्धभूमितले लिखित्वा पञ्चपरमेष्ठिबीज कुर्यात् १०८ बन्धमोक्षो भवति ।

"ॐ अरहत सिद्ध आयरिय-उवज्झाय सव्वसाहू सव्वसाहय तित्थयराण, ॐ नमो भगवई सुयदेवयाए, ॐ नमो भगवई सतिदेवयाण, ॐ नम सव्वपवयणदेवयाण दसण्ह दिसापालाण, ॐ ह्रीँ अर्हँ अरहत(ताण) नम हृदये, ॐ नमो सिद्धाण स्वाहा ॥

एसा पढियसिद्धा विज्जा तह सत्तवारजत्तीया ।
धरसाण-चायपमुहे पज्जे मतो जय देइ ॥ १ ॥

वयकरी विद्या ॥

"ॐ नमो अरिहताण ह्राँ नमः हृदये, ॐ नमो सिद्धाण ह्रीँ नम शिरसि, ॐ नमो आयरियाण ह्रूँ नम शिखाया, ॐ नमो उवज्झायाण ह्रा नमः कवचाय, ॐ नमो लोए सव्वसाहूण ह्र नेत्राय वषट्, ॐ ह्रीँ अर्हँ अ सि आ उ सा नम अस्त्राय फट् अङ्गानि ॥"

क्षस्थानके विलिखितं हरितालकाद्यैरैन्द्रं शिलातलपदे क्षितिमण्डलस्थम्।
सूत्रेण तत् परिवृतं विधृतं धरायां, कुर्यात् प्रसूतिमुखदिव्यगतेर्निरोधम् ॥ १७ ॥

—लरञ्जिका। (११)

ळीहालधूमगरलीसुरिलूणरक्तैर्ळस्थानकेऽनु विलिखेच्च ढकारवीजम्।
प्रेतालयस्य वसने निहितं स्मशाने, विद्वेषितां मिथुनयोरविमध्यसंस्थम् ॥ १८ ॥

—ढरञ्जिका। (१२)

स्थाने सुलक्ष्मी निजवीजसिन्दोः, सकुङ्कुमाद्यैर्लिखितं सुभूर्जे।
त्रिलोहवेष्ट्यं विधृतं स्ववाहौ, करोति रक्षां ग्रह-मारि-रुग्भ्यः ॥ १९ ॥

—श्रीरञ्जिका। (१३)

प्रत्यनीक-महादुष्टविध्वंसनाय सम्यग्दृष्टिसुखोत्पादनाय वा कर्माण्येतानि कार्याणि, वृहत्प्रयोजने समायाते सति—"इहलोइयलाभकरा उवज्झाया हुंतु सव्वभयहरणा।" इति वचनात् ॥

"उवसग्गहरं" स्तोत्रम्—

[अत्र पञ्चगाथात्मकं 'उवसग्गहरं' स्तोत्रं प्रस्तावक्रमेण लिखितं नेह लिख्यते, सुप्रसिद्धत्वात्।]

अस्य यन्त्रं यथा—"ॐ ह्रीँ श्रीपार्श्वनाथ-धरणेन्द्र-पद्मावती ह्रीँ नमः ॥"

पणमिय सिरिपासनाह धरणिंदह पउमावईसहियं।
मायावीजं नमइ य अट्ठारस अक्खरं मंतं ॥ २० ॥

अष्टादशाक्षरमन्त्रः मध्येवलकं वृत्ताकारम्—"ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं 'नमिऊण पास विसहरवसह जिण फुलिंग' ह्रीँ नमः।"

द्वितीयवलके—"अनुवाभुंगि १, तक्षकु कंकोट्टु २, पद्म महापद्मु ३, शङ्खपुलिकु ४, जय-विजय ५, अजिताऽपराजिता ६, जम्भे थम्भे ७, नाराई वीराई ॥"

अष्टदलम्—"अरिहंत १, सिद्ध २, आचार्य ३, उपाध्याय ४, साधु ५, ज्ञानु ६, दर्शनु ७, चारित्रु ८ ॥"

तृतीयवलकम्—

रोहिणी सुरहिनिसन्ना मोरनिसन्ना तह य पन्नत्ती।
कमलम्मि वज्जसंखल वज्जंकुस करिवरारूढा ॥ २१ ॥
अप्पडिचक्का गरुडम्मि संठिया पुरुसदत्त महिसीया।
कमलनिसन्ना काली वाहेइ नरं महाकाली ॥ २२ ॥
गोरी सीहारूढा कमलारूढा य तह य गंधारी।
सव्वत्थ महाजाला विरलाए माणवी कमला ॥ २३ ॥
वेरोट्टा य अयगरे तुरगेंदवुत्ता य माणसी हंसे।
केसरि उवरि निसन्ना देउ महामाणसी सुक्खं ॥ २४ ॥

षोडशदलेषु [देव्यः] लेख्याः।

मरुदेवी विजया सेणा सिद्धत्था मंगला सुसीमा य।
पुहवीलक्खण रामा नंदा विण्हु जया सामा ॥ २५ ॥
सुजसा सुव्वय अइरा सिरिदेवी पभावई पउमा-।
वई य वप्पा सिवा वम्मा तह य तिसला य (लादेवी) ॥ २६ ॥

चतुर्विंशतिदलेषु । ह्रींकारत्रिवेष्टित चक्र, अष्टौ दिग्नामानि, नवग्रहा आदित्यादि, वायव्ये गुरु-पादुकेभ्यो नम । वरुणे नागा , चतुर्दिग्भागे 'क्षि' उपरि चतुर्विंशतिजिना —

पचजिण कणयवन्ना सत्तो हेमप्पहो य दो धवला ।
दो चामीयरवन्ना रत्ता छब्वेत्र कणयपहा ॥ २७ ॥
मरगयनीलो अलिसामलो य कचणनिहो य अलिसामो ।
तह य तमालदलाभो सुवन्नवन्नो जिणो वीरो ॥ २८ ॥

इति चतुर्विंशतिजिनाश्चतुर्दिक्षु ॥

अष्टापदप्रमाणेत्यादौ चेत्यमन्त अत्र पूजयेत् । पूर्वादि-ऋषभादिजिना पर दक्षिणादक्षिणादि—

चत्तारि अट्ठ दस दो य वदिया जिणवरा चउवीस ।
परमट्ठनिट्ठियट्ठा सिद्धा सिद्धिं मम दिसतु ॥ २९ ॥

तथा—"ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं ऋषभनाथाय नम. १ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं अजितनाथाय नमः २ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं सभवनाथाय नम ३ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं अभिनन्दननाथाय नमः ४ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं सुमतिनाथाय नमः ५ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं पद्मप्रभनाथाय नमः ६ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं सुपार्श्वनाथाय नम' ७ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं चन्द्रप्रभनाथाय नमः ८ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं शीतलनाथाय नमः १० । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं श्रेयामनाथाय नमः ११ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं वासुपूज्याय नमः १२ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं विमलनाथाय नमः १३ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं अनन्तनाथाय नमः १४ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं धर्मनाथाय नम १५ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं शान्तिनाथाय नम' १६ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं कुन्थुनाथाय नमः १७। ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं अरनाथाय नमः १८। ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं मल्लिनाथाय नम १९ ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं मुनिसुव्रतस्वामिने नमः २० । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं नमिनाथाय नमः २१। ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं नेमिनाथाय नम २२ । ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं पार्श्वनाथाय नमः २३ ॥ ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं वर्धमानस्वामिने नम २४" इत्यादि यथास्थान वदित्वा नमसित्वा पूजयित्वा च पट्कर्माणि कारयेत् ॥"

'इहलोडयलाभकरा उवज्झाया' इत्यादिना श्रीपार्श्वनाथ धरणेन्द्र-पद्मावतीसहित जपेत् ।

ॐ ह्रीँ श्रींकारमर्हं दलितकलिमल दिव्यभूतिप्रणार्थं,
क्लीँ ब्लूँ ह्सौँ मन्त्रबीज भुवनसुखकर शक्रराज्येन्द्रपूज्यम् ।
आँ क्रौँ ह्रीँ दिव्यरूप नम इति सहित वामहस्ते जपित्वा,
श्रीमन्त पार्श्वनाथ भुजगपतिनुत देविपद्मावतीशम् ॥ ३० ॥
जिनपरमेष्ठि-लक्ष्मी अर्हंकामेश्वर तथा ब्लुवम् ।
जीवाक्षर विष्णुपद प्रतीहारमन्त्रराज च ॥ ३१ ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं क्लीँ ब्लूँ ह्सौँ आँ क्रौँ ह्रीँ नम पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावतीसहिताय ॐ श्रीँ अर्हं क्लीँ ब्लूँ ह्सौँ आँ क्रौँ ह्रीँ नम' ॥" सपुटमन्त्र सर्वकर्मकर । विषहरणे श्वेतध्यानेनानेन जलमभिमन्त्र्य पाययेत्, निर्विषीकरणम् ॥

आजानु कनकगोर आनाभे शङ्ख-कुन्द-हरधवलम् ।

वर्षिणि अमृतस्रव(वे) अमृतश्रव(स्रवे) स्रावय स्रावय सं क्लीँ क्लीँ ब्लूँ ब्लूँ द्राँ द्रीँ द्रावय द्रावय ह्लीँ क्ष्वीँ स्वाहा ।' गोस्तनमुद्रा, शिरसि कलशः ।

'ॐ विमलाय विमलचित्ताय ज्वँ ज्वँ वँ वँ भाँ क्ष्वीँ क्ष्वीँ स्वाहा ।' अञ्जलिमुद्रा । मरुदेव्यादि २४ [मातरः] मम संनिहिता भवन्तु, आगच्छन्तु आगच्छन्तु संवौषट् । एतासां वामाङ्के जिनः, तासां वामहस्ते फलं, दक्षिणे मातृहृदि, तासामञ्जलिपुष्पाणि, उपरि फलानि, पुत्रमुखं पश्यन्त्यश्चिन्तनीयाः।* तथा रोहिण्यादि १६ मम संनिहिता भवन्तु आगच्छन्तु संवौषट् । तासामुपरि दक्षिणे चक्रम्, वामेऽङ्कुशम्, अधस्तनयोः फलं केसो (?) । 'अरिहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-साधु' पञ्चपदानि अङ्गुष्ठादिषु पञ्चस्वङ्गुलीषु वार ३—एवमात्मरक्षा पूर्वोक्ता कर्तव्या । तथा मरुदेव्याद्याह्वानं पूजां च स्वकीयमन्त्रेण कर्तव्या । मध्ये पार्श्वनाथप्रतिमा, पद्मावतीमस्तके फणा ३, तासामुपरि ह्रीँ ३, मन्त्रभणन वार ७ ॥

इति सिद्धचक्रध्यातव्यविधिः ॥

श्रीसिद्धचक्रमहिमापद्धतिस्तवनम् ॥ †

अन्नं[1] च सिद्धचक्कं कहियं विज्जाणुवायपरमत्थं ।
नाएणं[2] जेण सहसा सिज्झंति महंतसिद्धीओ ॥ १ ॥ [१]
अ क च ट त प य स वग्गा एयाणं होइ मंतसंभूई ।
माहिंद-वारुणानल-मारुजुत्तेहिं[3] वण्णेहिं ॥ २ ॥
[4]वज्जट्ठारहभिन्नं चउरस्सं पुढविवीयसंजुत्तं ।
[5]कोणं निहत्ते जाणह सत्तम-तईएण[6] माहिंदं ॥ ३ ॥
[7]चंदद्धकलसरूवं वियसियकमलेण धवलवण्णेण ।
सत्तम-चउत्थकोणं[8] काउं मज्झम्मि वरुणस्स ॥ ४ ॥
जालासहस्सपउरं सत्थियरेहाहिं[9] बिंदुमज्झम्मि ।
लिहियं तिकोण[10] उड्ढं अग्गेयं मंडलं नाम ॥ ५ ॥
किन्हं वट्टुलरूवं सत्तम-पढमेण वंकरेहाहिं ।
घणबिंदुपवणजुत्तं दुलक्खं तं जिणुद्दिट्ठं ॥ ६ ॥

---

* [जूओ चित्र नं० ३]

† आ स्तवनना पाठभेद लेवामा नीचेनी छ प्रतिओनो उपयोग कर्यो छे ।

१. J जैन साहित्य विकास मंडलनी फोटोस्टेटिक नकल, जे श्रीविजयमोहनसूरिशास्त्रसग्रह, पालीताणानी मूल प्रति छे, तेनी सञ्ज्ञा ।

२. V वडोदरा, श्रीआत्मारामजी जैन ज्ञानमंदिर-प्रति नं. १५०९ नी संज्ञा ।

३ A डभोई, श्री अमरविजयजी जैनज्ञानभंडार-प्रति नं. ५०६।३६९४ नी संज्ञा ।

४. N सिद्धचक्रबृहत्पूजनविधि, प्रकाशक श्रीनेमि-अमृत-खांति-निरंजनग्रंथमाला, अमदावाद, पृ. ५३, ५४ मा छे, तेनी संज्ञा । तेमा आ स्तोत्रनी पदर गाथाओ ज मात्र छे, जेनो [ ] आवा कौंसमां अंक अहीं वताव्यो छे ।

५. Y 1 पू. मुनिराज श्रीयशोविजयजी महाराज पासेनी १३ पानानी प्रतिनी सञ्ज्ञा ।

६. Y 2 पू. मुनिराज श्रीयशोविजयजी महाराज पासेनी ४६ पानानी प्रतिनी संज्ञा ॥

1 एयं च N । 2 नाणेण A । 3 वायवजुत्तेहि वत्तेहि J V A । 4 वग्गक्खरेहि भिन्नं बीयंदचउरंसपुढविस° J-V A । 5 काणे निहित्ते J V A । 6 °तईयाण J V A । 7 चंदद्धकलसरेहिं Y1, Y2 । 8 कोणे पायारम° J V A । 9 °ह्रीं अग्गिम° J V A । 10 तिकोणे दुअ J V A ।

चत्तारि मडलाईं सत्तमवग्गेण हुति जुत्ताइ ।
पुढवी-सलिल-हुयासण-पवण च नहगण तत्त ॥ ७ ॥

तत्ताइ मडलाइ माला[1] विज्जा उ मत चक्काइ ।
सिज्झति हु विज्जाओ बहुएहिं जाव-होमेहिं ॥ ८ ॥

ज पुण जिणिंदतत्त दुल्लह[2]लाह जयम्मि जीवस्स ।
पुण्णरहिओ न पावइ बहुएहिं कालक्खेवे[3]हिं ॥ ९ ॥

अट्ठदलकमलम[4]ज्झे सुन्न नामेण सजुय देहि ।
उ[5]वरितलरेहरु[6]द्ध सबिंदु-कलसजुय तत्थ ॥ १० ॥ [२]

झाएह विमलधवल सा[7]सनिलीण निरक्खर जा[8]ण ।
तव-सजमसजु[9]त्त सुक्क देहस्स कम्मस्स ॥ ११ ॥ [३]

अक्खय[10]सुक्ख लब्भइ किं बहुणा[11] नेह अन्नसिद्धीए ।
[12]इयरेण अन्नसि[13]द्धी अइदुलहा सव्वलोयम्मि ॥ १२ ॥ [४]

[14]परमेट्ठिप[15]चनव अक्खरेहिं वेढेह सरसमा[16]उत्त ।
[17]पुरह पुव्वाइ दले अट्ठहि वग्गेहि पत्ताई ॥ १३ ॥ *[५]

सत्तक्खर च मत परमिट्ठिपयाण होइ ज पढम ।
[18]तस्सतरेसु दिज्जओ उड्ढ कमलस्स रेहाण ॥ १४ ॥ †[७]

वेढेह ति[19]उणपउम मायावीएण धवलवण्णेण ।
[20]सेयवरभुज्जदले लिहिज्ज सु[21]हकरण-जोएण ॥ १५ ॥ [९]

[22]गोरोयण-चदण-कुकुमेण क[23]प्पूर-सुरहिदव्वेण ।
लिहिय चा[24]मीकरलेहणीए सुइभूमि-सुद्धदेसम्मि ॥ १६ ॥

बहुसुरहिकुसुम अक्खय-नाणाविहधूव-बलि निवि[25]ज्जेहिं ।
पू[26]ज्जहि कलसनिहित्त विसुद्धभू[27]मीइ पयड धा ॥ १७ ॥ [१०]

को करइ सत्तदियहा गुरुपूया[28] एस सिद्धचक्कस्स ।
गह भूय-जक्ख-रक्खस दुट्ठजरा जति उवसाम ॥ १८ ॥ [११]

---

1 माला विहु मत-तंत-चक्काइ J V A । 2 दुल्लभ J V A । 3 °लब्भे N । 4 देह । 5 उवरितलिरेह N । 6 रुद्ध बिंदु-कलासंजुय तत्त A N । 7 ल नासालीण J V । सीसलीण N । 8 जाव A । 9 जुत्तो सु° N, °जुत्तो मुक्क J V A । 10 यसोक्ख J V । 11 णा इत्थ अन्नसिद्धिओ N, °णा अन्नसिद्धत्थ जि° J V A । 12 अयरेण J Y 1 । 13 द्धी न हु दुल्हा मगुलो N । 14 परमिट्ठिपचनमणक्ख° N । 15 °मचनामक्ख° J V । 16 माजुत्त N । 17 पूरह पुव्वाइदले अट्ठदलेहिं च वग्गेहिं N । * N आदर्शे त्रयोदशगाथानन्तरमिय गाथाऽधिका—"पत्ताण मज्झभाए अते चिय जइयहोणु दायव्वो । सव्वसुव्वतेया अणाहया सव्वदुक्खनासपरा ॥ ६ ॥ J V A आदर्शेषु तस्या पाठभेद एतत्प्रकारेण लभ्यते—'कमलस्स मज्झभाए, अने वि य तह य होइ दायव्व । सव्वसुवेयरूवा अणाहया सव्वदुक्खनासकरा । 18 पत्ततरेसु दिज्जह उड्ढ कमलस्स रेहाहिं N । † N आदर्शे चतुर्दशगाथानन्तरं गाथेयमधिका—"त पणवपीय अरिहं नमो जिणाण ति एवमाइहिं । गणहरपएहिं पायाहिणेण परिवेढिय भरह ॥ ८ ॥" 19 तिउणं पउम Y1, Y2 । 20 सेयवर उज्जत्ते Y1 Y2 । 21 सुहदव्वजोएण । 22 गोरोयण-कुकुमेण J V A । 23 कप्पूर° Y1 Y2 । 24 चामीयरलेहणीए J V A । 25 निवएहिं N निवहेहिं J V A । 26 पूज्जइ कमलनिहित्तं N । 27 भूमीए भागीए N भूमी य प° J V । 28 जा पूयइ सत्तदिणे गुरुपूयाए स सिद्धचक्कस्स N, जो करइ सत्तवारा गु J V A ।

जो पुण पक्खं[1] मासं पुज्जइ वासं पि परमभत्तीए।
खंय[2]-कुट्ठ-गंडमाला नासंति भयंदरा रोया[3] ॥ १९ ॥ [१२]
अन्ने वि एवमाई असज्जउवसग्ग-दुट्ठ[4]रायाणं।
नासंति खणेणेए[5] तक्कर-रिउ-दुट्ठ[6]सत्ताई ॥ २० ॥
आयरिसिऊण होइ वसे दुट्ठपुरिसरायाणो।
जो[7] रत्तकुसुमजावं दह[8]दिवसे कुणइ भत्तीए ॥ २१ ॥
अग्गेयमंडलगयं जो चक्कं[9] लिहइ वाउमज्झम्मि।
तिल-तुस-राई-लवणं होमंतो तिन्निसंज्झाओ ॥ २२ ॥
तालय-मणसिल-गंधयगुलिया विसकणय दोन्नि रयणीओ।
अंगार-वत्थ-खप्पर पेयवणे[10] लिहियं[11] भुज्जपत्ते वा ॥ २३ ॥
वायस-गिद्ध-कवोडयपिच्छेहिं लिहइ तं चक्कं।
उच्चाडण-विद्देसण-मारण-गुरुमोहं[12]-थंभं च ॥ २४ ॥
माहिंदमंडलगयं[13] लिहियं असुहेण भारमक्कंतं।
सक्कस्स कुणइ थंभं का गणणा मणुयलोयस्स ॥ २५ ॥
वारुणमंडलमज्झे वसियरणं[14] होइ सुहेहि लिहिऊणं।
निच्चं[15] जो आहास(राह?)ई तस्स[16] वसे तिहुयणं सयलं ॥ २६ ॥
लिहिऊणं सेयवडे सुहेहि दव्वेहिं[17] सिद्धवरचक्कं।
जव-होमेहिं रहिओ जो झायइ पंचवासाइं ॥ २७ ॥
[18]सज्झायज्झाण[19]निरओ अक्खंडियबंभचेर[20]जोएण।
[21]पलमेक्कदिव्वखंडं कणयस्स दिणे दिणे लहइ ॥ २८ ॥ [१३]
तं पि वए कायव्वं जिणपूया[22] दाण-भोयकज्जम्मि।
न धरिज्जइ तद्दियहे धरिएण विनासए सिद्धी ॥ २९ ॥
जं जं चिंतइ[23] कज्जं तं तं संपडइ सिद्धचक्केण।
सुइधीरधम्मवंते पुरिसे नत्थित्थ[24] संदेहो ॥ ३० ॥ [१४]
को वन्निउं समत्थो सयलविहाणं[25]सिमस्स चक्कस्स।
मुत्तूण जिणवरिंदं को जाणइ सयलसब्भावं ॥ ३१ ॥ [१५] *

इति श्रीसिद्धचक्रमहिमापद्धतिस्तवनम् ॥

---

1 पक्खे मासे J V A। 2 नासंति दुट्ठरोगा तह होइ मणिच्छिया सिद्धि N। 3 रोगं Y1, Y2। 4 दुट्ठगह-रोया J V A। 5 खणेण जए J V A। 6 °सप्पा वि J V V। 7 जे Y1, Y2। 8 दससहस्सेहि कु° J V A। 9 चक्कमज्झम्मि लिहइ A, चक्कं लिहइ वाममज्झम्मि Y1 Y2। 10 पेयवडे Y1 Y2। 11 लिहइ J V A। 12 °मोहयं तं च Y1 Y2। 13 °गयं अउधसुहेणं च नारमक्कंतं Y1 Y2। 14 वसियरसमुहेहि Y1 Y2। 15 निच्चं हीइ सई तस्स Y1 Y2। 16 तस्स नमे ति° Y1 Y2। 17 °हि वरचक्कं J V A। 18 जो अक्खंडं झायइ पंच य वासाइं तस्स निच्चं पि। पलमित्तकणयदाणं करेइ विमलेसरो देवो ॥ १३ ॥ N। 19 °णरहिओ Y1 Y2। 20 °चेरछुत्तेण J V A। 21 पलमित्तदिव्व° J V A। 22 °पूया नाण-दाणकज्जम्मि J V A। 23 चिंतह क° J V। 24 °त्थ संसारे J V। 25 °णं स सिद्धचक्कस्स N; °ण इमस्स J V।

* एकत्रिंशद्गाथानन्तरं Y1 Y2 प्रत्योः षट्त्रिंशद्गाथात्मकं स्तवनमुट्टङ्कितम्—ताश्चेमा गाथाः—

"मा देह जस्स कस्स वि अभव्वजीवस्स अन्नलिंगीणं।
सिद्धदुल्लहलाहं एसो मंतक्कमो मग्गो ॥ ३२ ॥

जो अवइ बभदत्ता गुरुपडिमो धायणम्मि नो दोसो।
परसमयलिंगकट्टिय होय(इ) तय तस्स निब्भत ॥ ३३ ॥
परमेट्ठिदेवयाइ इंदियगहतारयाइ भूयगणे।
सिक्खं काऊण इमस्स न्जिइ विज्ञा सुसम्मत्ते ॥ ३४ ॥
धम्मजए समचित्ते समत्तविभूमिए सहामत्त।
सव्वाइ गुणसमिद्धे दाय ज सव्वसिद्धीए ॥ ३५ ॥
गाहा पणनीसाए सिद्धिकर सयलकज्जमणइट्ठ।
जिणसासणस्स सार उप्पद्य सिद्धचक्क ॥ ३६ ॥"

इति श्रीसिद्धचक्रमहिमापद्धतिस्तवनम् ॥

श्रीमल्लिषेणसूरिरचित 'विद्यानुशासने' जैन साहित्य विकास-मण्डलस्थहस्तलिखितपत्रे(१५२ १५३) लिखित 'लघुसिद्धचक्र'स्तोत्रेणास्य समता दृश्यते। अतस्तस्य समान्तरश्लोका वृद्धाकाराक्षरैरुपर्युक्तस्तोत्रगाथाङ्कपूर्वका प्रदर्श्यन्ते ॥

लघुसिद्धचक्रस्तोत्रम् ॥

अथात सम्प्रवक्ष्यामि, येभ्योऽनेकफलोद्भव।
तेषा सामान्ययन्त्राणा, यथाशास्त्रमिम विधिम् ॥ १ ॥
व्योमोर्ध्वाधो रयुक्त शिरसि विलसित नादबिन्द्वर्धचन्द्रै (१०),
स्वाहान्तोङ्कारपूर्वैर्गुरुभिरभियुत पञ्चभि स्व(भिस्तु)स्वरैश्च।
वाह्येऽष्टस्वक्षपत्रे क च ट त प य शोष्मादिवर्गान्जादीन् (१२),
स्वाहा तान तराले प्रथमगुरुपद (१४) मायया त्रि परीतम् ॥ २ ॥
मध्येऽपि कर्णिकाया पत्राग्रेष्वनाहत समाख्यातम् (१५)।
वर्गस्यान्तस्यान्त मूल स्वेनोत्तमाङ्गेन ॥ ३ ॥
चामीकरलेखिन्या हिममलयज-रोचनादिभिर्विलिखेत् (१६)।
श्वेतवरभूर्जपत्रे (१५) फलके वा ताम्रपत्रे वा ॥ ४ ॥
गन्धाक्षतप्रसूनैश्चरुकैर्दीपैश्च धूपफलनिवहै (१७)।
अभ्यर्च्य जपेन्नित्य पुष्पैरष्टोत्तर शतम् ॥ ५ ॥
विनयादिनमोऽन्तपद भुवनाधिपमूलबीजपञ्चगुरून्।
उच्चार्य ततोऽनाहतविद्यायै मूलविद्येयम् ॥ ६ ॥
मन्त्रोद्धार —"ॐ ह्रीं हूँ असिआउसा अनाहतविद्यायै नम ॥"
पूजयतो नित्यमिद भक्त्या, श्रीसिद्धचक्रमुत्तम यन्त्रम्।
दुष्टग्रहशाकिन्यो यान्त्युपशान्ति क्षणात् तस्य (१८) ॥ ७ ॥
कुष्ठगलगण्डमाला नश्यन्ति भगन्दरादयो रोगा (१९)।
अन्येऽप्यरातिवर्गा क्रूरा अपि शान्तिमुपयान्ति (२०) ॥ ८ ॥
प्रेतवनवस्त्र-खर्परमध्यगत तालकादिभिर्लिखितम्।
स्तम्भयतीप्सितकार्य चक्र (२४) भूमण्डलान्त स्थम् ॥ ९ ॥
जलमण्डलमध्यगत यन्त्र य पूजयेत् सितै कुसुमै।
हिमचन्दनसलिखित शान्ति पुष्टिं वश करोत्येवम् ॥ १० ॥
तिल तुष-सर्षप-लवणैर्होम कृत्वा (२२) त्रिकोणकुण्डतले।
सप्तदिनाना मध्ये रामाऽऽकृष्टिं करोत्येवम् ॥ ११ ॥
पवनपुरस्थ यन्त्र वायसपिच्छेन कनकाररलाद्यै।
भूर्जे विलिख्य निहित भूमौ विद्वेषणोच्चाटम् (२४) ॥ १२ ॥

शान्तिकर्मणि वारुणमण्डलं श्रीखण्डेनाभिलिखितं स्वाहारञ्जिका ॥ १ ॥

पुष्टिकर्मणि मण्डलं वरुणमाहेन्द्रादि......स्वधारञ्जिका ॥ २ ॥

वश्ये आग्नेयमण्डलं वषड्रञ्जिकां लिखेत् कुङ्कुमादिभिः ॥ ३ ॥

आकृष्टिकर्मणि आग्नेयमण्डलं अरुणद्रव्यैः संवौपट् ॥ ४ ॥

विद्वेषे वायव्य-वारुणेन्द्रमण्डलानि श्मशानाङ्गाररञ्जिका विष-लवण-लिम्बपत्रैः कपोतलेखिन्या लिखेत् श्मशानमृत्तिकायाः पुत्तलकद्वयं कृत्वा श्मशानकर्पटे लिखेत् पराङ्मुखान् स्थापयेद् महिषाश्वरुधिरेण ॥

उच्चाटने काकलेखिन्या वायव्यमण्डलं काकासृजा निम्बपत्रेण ॥

विषराजिका लवणधूम्रे सओएभि (?) आग्नेय-माहेन्द्रमण्डले मारणे गृध्रलेखिन्या लिखेत् ॥

अथ द्रवीकरणे—

गन्धयदाही सुओ पक्क वीयं च पाडियं गब्भे ।
चंदणेण विलित्तं फुडफुडियं कंचणं होइ ॥ ५ ॥

अस्य व्याख्या—अथ द्रव्यकरणेऽञ्जनमाह—

श्वेतागस्थिक्षुद्रा गुञ्जामूलानि वेलकयुतानि ।
कलया घृष्टानि भवेदधो भगजातस्य चाञ्जनकम् ॥ ६ ॥

प्रथमं काचकर्पूरेण चक्षुःशोधनम्, मधुना पाशः, ततोऽञ्जनं, उत्तरासूतानि सर्वमूलानि ।

सरलसकोमलवरुणकमूले मूलार्के यद् द्वये सन्ध्ये ।
पाठामूत्रे मथेत् त्रिसप्तकदिनैरजादुग्धैः ॥ ७ ॥
एकं दिवा द्वयं रात्रौ, चक्षुःशोधनपूर्वकम् ।
कर्णान्तं तिलकं कृत्वा, पट्टकं मन्त्रसंयुतम् ॥ ८ ॥

मूलजातितिलकम् ॥

वणमुग कुहाडी विक्किणि चक्कंका तह य भूमि आवलया ।
मुहि घित्तिऊण पिक्खइ सोहिय चक्खू महीदविणं ॥ ९ ॥

गुटिका ॥

अथ मूलानि चर्वयित्वा तालुके धृत्वा (?) ।
बीजपूरकलिम्बुक्योः सेवन्त्री श्वेतगुञ्जयोः ॥ १० ॥

आग्नेयपवनमण्डलमध्यगतं प्रार्चयन्निदं चक्रम् ।
आरक्तकुसुमजापैर्वशयति वनितां पुमांसं वा (२१) ॥ १३ ॥
वर्षाणि पञ्चनित्यं यो ध्यायति शुद्धचेतसा यन्त्रम् ।
रहितो जप-होमाद्यैर्दुर्धरतुर्यव्रतोपेतः (२८) ॥ १४ ॥
निष्पन्नसिद्धचक्रः पलमेकं प्रत्यहं सुवर्णस्य ।
लभतेऽसौ कर्तव्यः स च व्ययो दान-पूजासु ॥ १५ ॥
यदि दधाति लोभतोऽर्धं दिवसे तस्मिन् व्ययं च न करोति (२८-२९) ।
सिद्धिस्तस्य विनश्यति निश्चयतो नात्र संदेहः ॥ १६ ॥

इति लघुसिद्धचक्रम् ।

पारसपिप्पलैरण्डाऽगस्त्यीना मूलिकास्तथा।
वेलकाचमात्याश्च सुरभी तुलसीकयो ।
'श्रीफलस्य तु मूलानि कलया घर्पयेत् सुधी ॥ ११ ॥
कर्पूरमधुना शुद्धनयनयोरञ्जन कुरु।
तिर्यग् धिष्ण्ये तु जातस्य निधिदर्शने (?) ॥ १२ ॥
पुष्य शतभिषाऽऽर्द्रा च धनिष्ठा श्रवणोत्तरा।
रोहिण्युर्ध्वमुखानि स्युर्गगनादिप्रयोजने ॥ १३ ॥
भरणी कृत्तिकाऽऽश्लेषा मूल पूर्वात्रय मघा।
विशिखाऽधोमुखानि स्यु स्वातो च निधिदर्शने ॥ १४ ॥
मृगशिर रेवति चित्रा स्वाति ज्येष्ठा पुनर्वसु।
अनुराधाऽश्विनी हस्त भानि तिर्यग्मुखानि च ॥ १५ ॥

एतैर्यात्रादिक पुराऽञ्जन च–

रोचना कपिलाया गोर्कर्पूर न धुधोभवम्।
वदरिनृपके नानारस सर्वाञ्जन कुरु ॥ १६ ॥

कृष्णपक्षेऽधोमुखनक्षत्रे—

जवुयलोयणचुन्न जिणहि नयणेहिं पिन्छइ निसासु।
भूय भूयसमूह देह दव्व अभीमस्स ॥ १७ ॥
नृप कनकयोर्मूल पुष्यार्के वदरीजलम्।
मधुगोरोचनायुक्त सघन चाञ्जन कुरु ॥ १८ ॥
ताम्रपत्रे वदरीजलेन घृत घृष्ट
चक्षु शोधने निशातिनखमञ्जीराश्रि भाग्यम्।
नेत्रकपटे नरपीडी भवेत्
तेल चकार लेपाञ्जन कुरु (?) ॥ १९ ॥
निस्तुषा कुलथीजानि चूर्णयित्वा प्रयत्नत ।
सप्तधा तिलतैलेन मर्द्दयेदुष्णवारिणा ॥ २० ॥
पतति पीडना पद्य तनूना नयनस्थमद्दय कृत् (?) ॥

अथ निधिदर्शने करलेपस्तथाऽञ्जन सरलवरुणपूर्वदिशि। अधोगच्छन् मूल तथा तस्य छली १। निजच्छाया अल्मा तथा मूल च। तथा सिरखू अगछली २। पीपलछली ३। राजिका ४। रविदिने गृहीता रविदिने अम्लेन मर्दितास्ते कर्पूर यावल्लेपो दत्त्वा शुचिपात्रस्य करणा मन्त्र जपेत्—

"ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्र द्रव्यस्थाने गच्छ गच्छ स्वाहा।"

लेवे चाञ वसे प्रासे सिद्धिने पुरुषोत्तमे।
नवपुष्टिं तथाऽभ्यासेनावरोगोऽनुशीलतु ॥ २१ ॥
चलन्ति द्रव्योपरि तिष्ठन्ति तथाञ्जनम्।
ल्वसे तथा मध्ये मूलिके पूर्व-उत्तरे ॥ २२ ॥
घर्पित्वा द्वे जले सूक्ष्मे कर्पूर शुद्धचक्षुषो ।
सुपात्रपादजातस्य चाञ्जन निधिदर्शने।
सप्तसप्तानि पत्राणि पट्टक वन्धयेत् सुधी ॥ २३ ।

श्वेतागस्थिपट्टके उपवेश्य तस्य पादुकां दण्डकं च प्रथमं ताम्बूलं चर्वाप्य श्वेतपट्टकं अधोगतं वन्धयेत्। अश्वस्थ अधोविभागपत्राणि नो वा पत्तनेत्यपत्राणि वन्धयित्वा चटति तत उद्द्योतपूर्वकं निधिं पश्यति। कपिलाया गोरोचना १। वदरिनृपहेमानाम् २॥ रसम् २। कर्पूरं पातालमधु सर्वाञ्जनं कुरु। पूर्वोक्तं तथैव–"ॐ ह्रीँ स्वाहा।" औपध्युत्पाटनमन्त्रः॥

"ॐ हिलि हिलि मिलि मिलि कुलु कुलु ह्रीँ पार्श्वयक्षाय क्ष्म्ल्व्र्यूं क्षाँ क्षीँ क्षूँ क्षौँ क्षः शिखावन्धस्यास्त्रं रक्ष रक्ष सहाया रक्ष रक्ष स्वाहा॥" शिखावन्धः॥

"ॐ काली ह्रीँ महाकाली किलि किलि विच्चे रक्ष रक्ष इदमञ्जनं सुपार्श्वो ज्ञापयति स्वाहा॥" कज्जलाञ्जनरक्षामन्त्रः॥

सर्षपरक्तपुष्पैर्दिग्वन्धो दीयते क्षाँ क्षीँ क्षूँ क्षौँ क्षः। तथा श्रीपार्श्वनाथमूलमन्त्रस्य जापः, भूतानि नाशयन्ति॥

इति चूडामणिप्रस्तावेऽञ्जनं कथितम्॥ †

×

पढम-दुसरा अरिहंता चउस्सरा सिद्ध-सूरि-उवज्झाया।
दुग-दुगसरा कमेणं नंदंतु मुणीसरा दुसरा॥ १२॥
वन्ननिवहो कक्काई जेसिं वीओ हकारपज्जंतो।
नियनियसरसंजोगा सरेमि चूडामणिं तेसिं॥ १३॥

इति चूडामणितेयं ज्ञानं यथा–जीव-धातु-मूलानि॥

आइल्ला तिण्णि सरा सत्तम णवमो य वारसे जीवं।
पंचमं छट्ठेगारस धाउं सेसेसु तिसु मूलं॥ १॥ *
जीवक्खरेक्कवीसा तेरह धाउक्खरा मुणेयव्वा।
एयारस मूलगया पणयाला होंति सव्वे वि॥ २॥ *

य एवाधिकः स योनिः।

अ आ इ ए ओ अः, क ख ग घ, च छ ज झ, ट ठ ड ढ, य श ह – २१ जीवाक्षराः।

उ ऊ अं, त थ द ध, प फ ब भ, व स — १३ धात्वक्षराः।

इ ऐ औ, ङ ञ ण न म, र ल ष — ११ मूलाक्षराः।

---

† इतस्तावन्मूलादर्शे 'द्वादशयन्त्रिका' इत्येतत्प्रकरणं लिखितमस्ति, तस्याशुद्धिवाहुल्याद् नोद्धृतमत्र॥

* १ **व्याख्या**–आद्याः स्वरास्त्रय 'अ आ इ'। सप्तम 'ए'कारः। नवम 'ओ'कारः। 'अः' द्वादशम.। एते षट् स्वराः जीवस्वरा विज्ञेयाः। 'उ'कारः पञ्चम। 'ऊ'कार. षष्ठ। 'अं' एकादशम.। त्रय एते धातुस्वराः। चतुर्थ'ई'कारः। दशम 'औ'कारः। 'ऐ'कारोऽष्टम'। एते त्रयो मूलस्वराः॥११॥ **प्रश्नव्याकरणाख्यं जयपाहुडनिमित्तशास्त्रम्, पृ० ३**

क च ट चउक्के जीयं, अट्ठम-पढमंतिमे यकारे य। त प [य] चउक्के धाउ, वसे य मूलं तु सेसेसु॥१२॥ **ज० पा०**

* २. **व्याख्या**–पूर्वनिर्दिष्टाः स्वराः षट् 'अ आ इ ए ओ अः, क ख ग घ, च छ ज झ, ट ठ ड ढ, य श हा' एते जीवाक्षरा एकविंशति. २१। पूर्वोक्ता धातुस्वरास्त्रय. 'उ ऊ अं' दश चान्ये 'त थ द ध प फ ब भ व सा' एते धात्वक्षरास्त्रयोदश १३। 'ई ऐ औ, ङ ञ ण न मा, र ल षा' एते मूलाक्षरा एकादश ११। जीव-धातु-मूलसमेताः पञ्चचत्वारिंशदक्षराणि भवन्ति॥ १३॥ **ज० पा० पृ० ३**

केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि' पृ० २४॥

दो उत्तरेसु जीवं अहरे धाउं अहरुत्तरे मूल।
उत्तर अहरे धाउ एय जोणी विणिद्दिट्ठा ॥ [३]
दो उत्तरेसु ठाणे अहरे पुण वाहिर गय वत्थ (त्थु ?)।
अह उ(हर)त्तरठाणे चलिय उत्तर अहरे परस(स्स)[ह]त्थे ॥ [४]
दो उत्तरेसु लाह, मज्झिमलाभ अह उ(हरु)त्तरे पण्हे।
उत्तर अहरे हाणिं अहरे सव्व च नासेइ ॥ [५]
दो उत्तरेसु पढम वीय अहरे अह उ(हर)त्तरे तइय।
उत्तर अहरे तुरिय देह(?) नपुंसे य पचमय ॥ [६]
पढमेण लहइ तइय तइएण य पचम तओ पढम।
वीएण तुरिय भणिय ससि रविगणणा इमा होइ ॥ [७]
विसमेसु होइ चदो सूरो धामेइ समेसु जाणेह।
एक्कतरिया ठाणे पावइ नास न सदेहो ॥ [८]
विउणा तिउणा चउग्गुणा आलिंगिया य करे।
उलद्धा चोरह नावडा अट्ठहिं भाउ हरेउ (?) ॥ [९]

आलिङ्गिता द्विगुणा, अभिधूमितास्त्रिगुणा, दग्धाश्चतुर्गुणा, अष्टभिर्भागो हार्य, वर्गो लभ्यते, चतुर्भि पञ्चभिर्वा भागोऽक्षरम्।

आलिङ्गिते च रन्ध्राण्यभिधूमिते मुनीन्दव ।
पञ्चविंशति दग्धेपु, पञ्चविंशत् तथोत्तरे ॥ [१०]
अधरे सप्तम ग्राह्य, दग्ध वद्धादरे पुन ।
उत्तरे उत्तर ग्राह्य, वद्धस्याप्यधरोत्तरे ॥ [११]

आलिङ्गिते क्रमेण नाम। अभिधूमिते उत्क्रमेण। दग्धे क्रमोत्क्रमेण ॥

आलिङ्गिते द्व्यक्षर, अभिधूमिते त्र्यक्षर, दग्धे चतुर्थ, पञ्चमाक्षर वा नाम ॥

अ २, आ ४, इ ६, ई ८, उ १०, ऊ १२, ए १४, ऐ १६, ओ १८, औ २०, अ २२, अ २४॥

क १, ख २, ग ३, एव क्रमेण ३३ ॥

अवर्गे ८, कवर्गे ७, चवर्गे ६, टवर्गे ५, तवर्गे ४, पवर्गे ३, यवर्गे २, शवर्गे १ गुणकारा ॥

अ इ ए ओ आलिङ्गिता । आ ई ऐ ओ अभिधूमिता । उ ऊ अ अ दग्धा ॥

आलिङ्गिते एकम्, अभिधूमिते द्वयम्, दग्धे त्रय पातनीयम्। यच्चिन्तित कार्यं सप्रश्न कारापनीयम्। उत्तराधराणि पृथक् पृथक् कृत्वा तेपा स्वकगुणाकारेण गुणनीय । उत्तरे एक देयम्, अधरे एक पातनीयम्। तन्मध्ये यस्या तिथौ पृच्छति तत आरभ्य आगन्तुकास्तिथयोऽमावास्या यावत् प्रक्षेपणीया । अतीतास्तिथय ततो मध्यादाकर्पणीया । ध्रुवको भवति ।

चिन्ताया जीव-धातु-मूलम्। लुकाया तथा नष्टचिन्ताया धातु-मूल-जीवानि। पुन स्वर्गम् १, मृत्युम् २, पातालम् ३ ॥

मुष्टौ मूल जीव धातु । एव ध्रुवकमध्याद् भागे हृते यच्छेप, यल्लब्ध च एतावुभावेकीकृत्य मूल-ध्रुवगणौ मेलनीयो। ध्रुवकरक्षार्थं द्वितीयस्थाने स्थाप्य, लब्ध क्षिपेन्मूले यावत् सर्वं समाप्यते॥

जीवाश्चतुर्विधा –द्विपद १–चतुष्पद २–अपद ३–पादसकुलाश्चेति ४ । दशभिर्भागो हार्यो दिशा लभ्यते। यदा प्रश्ना न निर्वहन्ति तदा एक क्षेप्य पातनीय च, वर्गेऽक्षराणि भेदनीयानि, एप एव क्रम । यदि नामाक्षरप्रमाण क्रियते तदा पञ्चभिरथ चतुर्भिर्भाग, यच्छेप ते नामाक्षरा ॥

स्वरे रूपं प्रदातव्यं, हीनसूरिह लादिभिः।
दलितं तु कारयेद् वर्गैः, सामान्या प्रकृतिर्भवेत्॥
त्रिभिर्भागः प्रदातव्यो, यच्छेषं तच्च चिन्तितम्। [२२]

शेषं पूर्ववत्॥ लब्ध उद्धरितं मूलाराशौ क्षिपेत्।

यंत्र नं. २ अकडमचक्रम्।

अकडम २३५८	आखढय ५८२३	इगणर ४१७६	ईघतल ७६४१
उङथव २३५८	ऊचदश ५८२३	एछधष ४१७६	ऐजनस ७६४१
ओझपह २३५८	औञफळ ५८२३	अंटबक्ष ४१७६	अःठभज्ञ ७६४१

प्रथम-तृतीययोः शुक्लपक्षः द्वितीय-चतुर्थयोः कृष्णपक्षः। श्वेतपक्षस्य— अ इ उ ए १, क २, च ३, ट ४, त ५, प ६, य ७, श ८, ग ९, ज १०, ड ११, द १२, ब १३, ल १४, स १५। अथ कृष्णपक्षस्य— आ ई ऊ ऐ औ १, ख २, छ ३, ठ ४. थ ५, फ ६, र ७, प ८, घ ९, झ १०, ढ ११, ध १२, भ १३, व १४, ह १५॥

उ ५, ऊ ६, ङ ७, ञ ८, ण ९, न १०, म ११, अं १२, अः १३।

पञ्चमवर्गे उत्तराक्षरे शुक्लपक्षतिथयः, अधरेषु कृष्णपक्षतिथयः।

अ ए क फाल्गुनम्, च ट चैत्रम्, त प कार्तिकम्, य श मार्गशिरः, आ ई ख छ ठ पौषम्, थ फ र प माघम्, इ ओ ग ज ड वैशाखम्, द ब ल स ज्येष्ठम्, ऐ औ ग झ ढ आषाढम्, ध भ व ह श्रावणम्, उ ऊ ङ ञ ण न मा भाद्रपदम्, अं अः नमः आश्विनम्।

अथ नष्टजातकप्रश्नाक्षरैः प्रश्नाः सप्तगुणीकृत्य उभयनाम-संमिश्रनाममात्रा यथा— अ १, आ २, इ ३, ई ४, उ १, ऊ २, ऋ २, ॠ ३, ऌ २, ॡ ३, ए २, ऐ ३, ओ १, औ ३, अं २, अः ३, क १, ख २, ग १, घ २, ङ १, च २, छ २, ज २, झ, ञ २, ट १, ठ १, ड २, ढ २, ण २, त १, थ ३, द २, ध १, न १, प २, फ ३, ब १, भ २, म १, य २, र १, ल २, व १, श १, ष २, स २, ह २, ळ ४॥

इति नामाक्षराङ्कानि। अष्टोत्तरशतभागो हार्यः, शेष[:] जातकसंवत्सरो लभ्यते। तथा प्रश्नाः द्विगुणीकृत्य चतुष्कहीनाः त्र्यक्षरसम्मिश्रा द्वादशभिर्भागः, शेषं नाममात्रसम्मिश्रं एकहीनं शेषः चैत्रादिमासः १। तत्र सममात्रा शुक्लपक्षः, विषममात्रा कृष्णपक्षः २। प्रश्नाः त्रिगुणीकृत्य षट्हीनाः सप्तभिर्भागः, शेषाः वाराः ३। प्रश्नाः रुद्रगुणीकृत्य नवहीना नामसंमिश्राः त्रिंशद्भिर्भागः, शेषा तिथिः ४। प्रश्नाः दशगुणा...ना सप्तविंशतिभिर्भागः, नक्षत्रम्। प्रश्नाः त्रिगुणाः तिथियुताः सप्तविंशतिभिर्भागः, शेषो योगः ६। प्रश्नाः चतुर्गुणा दशहीना संवत्सरसंमिश्रा. द्वादशभिर्भागः, शेषराशिः ७। प्रश्नाः अष्टगुणा उभयहीना लग्नसंयुता नवभिर्भागः, शेषमंशकम् ८। प्रश्नाः षोडशगुणा दशहीना अंशकमिश्रिताः द्वादशभिर्भागः, शेषं लग्नम् ९। प्रश्नाः पञ्चगुणाः त्रिभिर्हीना अंशकसंमिश्रा द्वादशभिर्भागः, शेषश्चन्द्रः १०। प्रश्नाः त्रिगुणीकृत्य षट्संमिश्राः,...शेषौ रवि-बुधौ ११। प्रश्ना. सप्तगुणाः युगयुताः द्वादशभिर्भागः शेषौ शुक्र-भौमौ १२। पूर्ववत् प्रश्नाः रुद्रगुणाः द्वादशभिर्भागः, शेषो राशि. १३। प्रश्नाः षोडशगुणा राशियुताश्चतुर्भिर्हीना योगसंयुता द्वादशभिर्भागः, शेषो गुरुः १४॥

इति जन्मपत्रिकानयनम्॥

तथा प्रश्ना रुद्रगुणा नामयुता च षष्टिभिर्भाग मृत्यु-संवत्सर १। प्रश्ना एकोनविंशतिगुणा नामयुता सवत्सरनाम्नो हीना द्वादशभिर्भाग, शेषा श्रावणादिमासा २। प्रश्ना दशगुणा द्वयहीना त्रिंशद्भिर्भाग, [शेषा] पौर्णिमादितिथि। प्रश्नाश्चतुर्गुणा करयुता शेष काल ॥

यन्त्र न ३ मातृकाचक्रम्।

६	३	२	४	७	६	४	३	१	१०	९
अ	आ	इ	इ	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अ
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह

चउदह अट्ठा(सत्ता?) तीसा वि बारस पनरस छ चउरो य एगारस सत्तरस अट्ठ य नवम जय जुज्झे ॥ [२६]

यन्त्र न ४ आयचक्रम्।

१४	२७	२	१२	१५	६	४	११	१७	८	९
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ए	ऐ	ओ	औ	अ
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह

प्रश्ननामङ्क च अष्टभिर्भागो हार्य। एवमधिक तस्य जय वदेत्। तथा ऋतु-हरनयन-कराम्बुधि-मुनि-रस-वेदाग्नि चन्द्राहि-दुर्गा विज्ञसाधा (?) लिखेत् ॥

अकारादय सर्ववर्णाश्च—

यन्त्र न ५

ध्व १ सि ३	खर ६	ग ७ वृ ५	ध्वा ८ श्वा ५	धूम २	उत्तर १
अ १	आ २	इ ३	ई ४	उ ५	अधर २
ए २	ऐ ३	ओ ४	औ ५	ऊ ६	उत्तरोत्तर ३
क ३	ख ४	ग ५	घ ६	ङ ७	अधराधर ४
च ४	छ ५	ज ६	झ ७	ञ ८	
ट ५	ठ ६	ड ७	ढ ८	ण ९	
त ६	थ ७	द ८	ध ९	न १०	दग्ध ५
प ७	फ ८	ब ९	भ १०	म ११	ओलि ५
य ८	र ९	ल १०	व ११	अ १२	
श ९	ष १०	स ११	ह १२	ः १३	

हतातुरनाम्नोऽरिवसुभि सशोधितासु मानासु।
जीवत्यधिके रोगी म्रियते हीने समे व्याधि ॥ [२७]

पर प्रश्न मध्येकृत्वाऽन्वेषणीयम् ॥ *

पूर्वमुखो विशेषज्ञ, उपविष्ट शुचिस्तथा।
बालो वा अथवा कन्याप्रश्नोऽपि पृच्छ्यते तत ॥ [२८]
मध्ये च स्थापयेत् कुम्भ, सहिरण्य सवस्त्रकम्।
पल्लवै सयुत पूज्य, अक्षतैस्तु प्रतिष्ठितम् ॥ [२९]

न ह घ ङ य ह ल मज्झे इदाई पायड चक्क।
नट्ठं दावेइ धण इय कहिय वग्गसारेण ॥ [३०]
एते द्रव्याक्षरा ज्ञेया, नवभागेन लक्षयेत्।
शेषे नास्ति विजानीयाद्, ज्ञातव्य यत्नतो बुधे ॥ [३१]
भूमिस्थ चान्तरस्थ च, जलस्थ चावलम्बितम्।
स्थानस्थ पञ्चम प्रोक्त, द्रव्य ज्ञेय विशेषत ॥ [३२]

यन्त्र न ६ इदाईचक्रम्।

रे च	अ च	भ च	कृ चं	म च	पू	उ
उ	पू च	श च	रो	अ च	पु च	ह
अ च	श्र च	ध च	मृ	आ	पु च	चि
उ च	पू चं	मू	ज्य	अ	पि	स्वा

* अत्र 'चउदह' गाथा पुनर्लिखिताऽऽदश मात्रोद्ध्रियते ॥

आलिङ्गिते भवेन्मूर्धा, पुरुषाः स्वाभिधूसिते ।
उत्तरे अङ्गुलाः प्रोक्ताः, मध्यमं मध्यमाक्षरैः ॥ [३३]

× × ×

एते पञ्चपरमेष्ठिनः पूर्वानुपूर्वी-अनानुपूर्वी-पश्चानुपूर्वीगुण्यमाना विधियुता ऐहिक-परत्र फलं विशेषतो ददति । तदुच्यते—

पुव्वाणुपुव्विहिट्ठा समयाभेएण कुण जहाजिट्ठं ।
उवरिमतुल्लं पुरओ निसिज्ज पुव्वक्कमो सेसो ॥ १५ ॥ [२५]
जम्मि य नक्खत्ते पुणरवि सो चेव अंकविण्णासो ।
सो होइ समयभेओ वज्जेयव्वो पयत्तेण ॥ १६ ॥ [२६]

इति पञ्चविंशत्यधिकं शतं भेदानां भवन्ति । एकैकपदे चतुर्विंशतिका स्यात्, एवं ५, सं० १२० । लक्षजापे कृते सति, अतीतानागत-वर्तमानान् जानाति । यानि कर्माणि करोति तानि भवन्ति । साधनरहितः(तेन ?) सामान्येन त्रिकालं चतुर्विंशतिजिनास्तु पूर्वानुपूर्वी-अनानुपूर्वी-पश्चानुपूर्वी(व्या ?) ध्यातव्याः । जपमानस्य सर्वं चूडामणिना निमित्तेन वा सिद्धिर्याति । तथा—

अनानुपूर्वीक्रमकोष्ठकम् ।

१२३४५	१३२५४	१२४५३	१३४५२	२३४५१
२१३४५	२१३५४	२१४५३	३१४५२	३२४५१
१३२४५	१३२५४	१४२५३	१४२५२	२४३५१
३१२४५	३१२५४	४१३५३	४१२५२	४२३५१
२३१४५	२३१५४	२४१५३	३४१५२	३४२५१
३२१४५	३२१५४	४२१५३	४३१५२	४३२५१
१२४३५	१२५३४	१२५४३	१३५४२	२३५४१
२१४३५	२१५३४	२१५४३	३१५४२	३२५४१
१४२३५	१५२३४	१५२४३	१५३४२	२५३४१
४१२३५	५१२३४	५१२४३	५१३४२	५२३४१
२४१३५	२५१३४	२५१४३	३५१४२	३५२४१
४२१३५	५२१३४	५२१४३	५३१४२	५३२४१
१३४२५	१३५२४	१४५२३	१४५३२	२४५३१
३१४२५	३१५२४	४१५२३	४१५३२	४२५३१
१४३२५	१५३२४	१५४२३	१५४३२	२५४३१
४१३२५	५१३२४	५१४२३	५१४३२	५२४३१
३४१२५	३५१२४	४५१२३	४५१३२	४५२३१
४३१२५	५३१२४	५४१२३	५४१३२	५४२३१
२३४१५	२३५१४	२४५१३	३४५१२	३४५२१
३२४१५	३२५१४	४२५१३	४३५१२	४३५२१
२४३१५	२५३१४	२५४१३	३५४१२	३५४२१
४२३१५	५२३१४	५२४१३	५३४१२	५३४२१
३४२१५	३५२१४	४५२१३	४५३१२	४५३२१
४३२१५	५३२१४	५४२१३	५४३१२	५४३२१

मणसा वा चरित्ते वा कायं घायं च तप्परिणामो ।
भंगीसु अ गुणंतो वट्टइ तिविहम्मि झाणम्मि ॥ १ ॥

निमित्तमाह—

नदा तिहि अरहता भद्दा सिद्धा य सूरिणो य जया ।
तिहि रित्ता उवज्झाया पुण्णा साहू सुह दितु ॥ ७ ॥ [१७]

इति तिथय ॥

ससि-मगलमरहता बुहो य सिद्धा य सुरगुरू सूरी ।
सुक्को उवज्झाय पुणो साहू मदो सुह भाणू ॥ ८ ॥ [१८]

इति ग्रहा ॥

कत्तिय-चित्तो अरिहा वइसाहो मग्गमास सिद्धा य ।
पोसो जिट्ठो भद्दव आसोओ सूरिणो सुहया ॥ १९ ॥
माहासाढुज्झाया फग्गुणमासो य सावणो साहू ।
मह मंगलमरिहता अचिंतचिंतामणी दिंतु ॥ २० ॥

इति मासा ॥

जपमानस्य सर्वे शुभा । तथा चिन्तामणिरचिन्तितपदार्थान् साधयति, अत एव निमित्त प्रतिपादितम् ॥

पुअसगमूल अरिहता तहा धनिट्ठाइ पचगा सिद्धा ।
दिगुरिक्खा आयरिया नमामि सिरसा य भत्तीए ॥ २१ ॥
अद्दाइ जे रिक्खा उवज्झाया तेसि दिंतु फलनिवह ।
चित्ता साई साहू सासयसुक्ख मह दिंतु ॥ २२ ॥

इति नक्षत्राणि ॥

पञ्चपरमेष्ठिन शाश्वत मम सौख्य दत्तु । इहलोके यावज्जीवताया (?) नक्षत्रे निमित्तम् ॥

जसु रुवा विस अरिहा मेसो मयरो य अतिणो सिद्धा ।
पचाणण अलि सूरी धणू य मिहुणो उवज्झाया ॥ २३ ॥
कक्कड-तुला य साहू दोदह रासी य पचपरमिट्ठी ।
भावेणं थुणमाणो पावइ सुक्ख च मुक्ख च ॥ २४ ॥

इति राशिभि परमेष्ठिन शाश्वत निरन्तर दिने दिने द्वादशलग्नानि, यत अन्त सौख्य ददति यावन्मोक्षम् ॥

अथ निमित्त यथा जायते, तद् ब्रूम —निमित्त त्रिधा—पञ्चस्वरोदयम् १, ध्वजादिनाऽष्टाङ्गम् २, ग्रहगणित च ३ । पञ्चस्वरोदय तावत्—

अकारादि स्वरा पञ्च, नन्दादिस्तिथयस्तथा ।
उदयन्ति क्रमादेव, पक्षे पक्षे त्रिधा त्रिधा ॥ १ ॥
अहोरात्रस्य मध्ये तु, रविनाडीप्रमाणत ।
एकस्योदय प्रोक्त, स्वराणा पञ्चधा तथा ॥ २ ॥
पङ्क्त्यां स्थापयेद् रेखा, पञ्चविंशाच्च कोष्ठका ।
अकारादि-हकारान्ता, हीनाङ्गास्त्रीणि वर्जीता ॥ ३ ॥
वर्षो मासस्तिथिर्नाडी, नक्षत्रमथ स्वर ।
राशिष्वेकादिके स्थाने, फल पुसा तथा दिशेत् ॥ ४ ॥

बालस्वरे चिरात् सिद्धिः, कुमारे सिद्धिरधिका।
वृद्धे मृत्यौ न सिद्धिः स्यात्, सद्यः सिद्धिकरो युवा ॥ ५ ॥
एकस्वरो भवेद् दाता, द्वितीयो मध्यमः स्मृतः।
तृतीयः पोषको ज्ञेयान्मृत्युस्तुर्ये च पञ्चमे ॥ ६ ॥
ऋक्षं वर्णस्तिथिर्मासः ग्रह-नक्षत्र-राशयः।
यो यस्य पञ्चमे स्थाने, स तस्य मृत्युदायकः ॥ ७ ॥
कटौ पोटे तथा स्वान्ते, कण्ठे शीर्षे यथाक्रमम्।
एवं चक्रेऽथ पीडा स्यात्, पञ्चधा विचितेन च ॥ ८ ॥
एकैकस्य स्वरस्यैव, पञ्चधा परिलक्षणम्।
मात्रा-वर्ण-ग्रहो जीवो, राशिरिति क्रमेण तु ॥ ९ ॥
नामादौ या कला शुद्धा, सा मात्रा स्वरसंज्ञिका।
वर्ण-वर्णस्वराज्ज्ञेयः, संयोगेन तु योऽधिकः ॥ १० ॥
योऽधिको यस्य राशेस्तु, विज्ञेयोऽसौ ग्रहेश्वरः।
कृत्वा नामप्रमाणेन, मात्रावर्णादिकं कुलम् ॥ ११ ॥
उदयाद् घटिकासंख्या, कृत्वा पलमयीं ततः।
ऋक्षं वह्निहृते शेषः, स्वरस्तत्कालसंभवः ॥ १२ ॥
वाणैर्विभज्य यच्छेषं, जीवस्वरमुदाहृतम्।
स्थानैरेकादि-पञ्चान्तमात्मस्थानात् प्रकाशितम् ॥ १३ ॥

१ २ ३ ४ ५। २ ३ ४ ५ १। ३ ४ ५ १ २। ४ ५ १ २ ३। ५ १ २ ३ ४।

एवं पञ्चवर्गाणि ॥

यथा पञ्चस्वरोदये चक्रे सर्वं शुभाशुभं फलं प्रतिपादितं परमचिन्त(न्त्य)चिन्तामणीन् दिंतु (ददातु) इति यः सर्वदा पञ्चपरमेष्ठिनो मन-वचन-काययोगेन स्मरति तस्य शुभानि अचिन्तचिन्तामणिरिव लभते। द्वादशमासेषु तथा नक्षत्रेषु सर्वेषु क्रमेण मोक्षपदं ददतु। तथा वारेषु लग्नेषु च तस्य न कदाचिदपि इह परत्र च दुःखमुत्पद्यते ॥ तथा शरीरस्वरोदयं यथा—

यंत्र नं० ८

१	२	३	४	५	
अ	इ	उ	ए	ओ	चंद्र
आ	ई	ऊ	ऐ	औ	मगल
क	ख	ओ	घ	व	वृप
छ	ज	ग	ढ	ध	कुंभ
ङ	ट	त	फ	द	मीन
थ	न	य	भ	च	कार्तिक
भ	म	प	र	ल	चैत्र
ठ	श	ष	स	ह	त
चंद्र	चंद्र	अभि-वर्धित	चद्र	अभि-वर्धित	पू. ५

यंत्र नं० ९

वुध	गुरु	शुक्र	शनि-रवि	२
मेप मकर कन्या	सिंह वृश्चिक	वनु मिथुन	कर्क तुला	३
वैशाख मार्गशीर्ष	पौप ज्येष्ठ भाद्र	माघ आषाढ	फाल्गुन श्रावणभ	४
भ	आश्विन	रि	पू	५
४५		पू फा. उ. फा. हस्त चित्रा अनुराधा	विशाखा स्याति	५

सार्द्धं घटीद्वय नाडीरेकैकाऽर्कोदयाद् वहेत् ।
अरघट्टघटिकाभ्रान्तिन्यायो नाड्य पुन पुन ॥ १ ॥
शतानि तत्र जायन्ते, निश्वासोच्छ्वासयोर्नव ।
खं स-र्षट्र कु कैरे (२१६००) सख्याऽहोरात्रसकले पुन ॥ २ ॥
षट्त्रिंशद् गुरुवर्णाना, या वेला भणितैर्भवेत् ।
सा वेला मरुतो नाड्या, नाड्या सचरतो लगेत् ॥ ३ ॥
प्रत्येक पञ्चतत्त्वानि, नाड्योश्च वहमानयो ।
वहत्यहर्निशान्तानि, ज्ञातव्यानि यतात्मभि ॥ ४ ॥
ऊर्ध्वं वह्निरधश्चापस्तिर्यक्चैव प्रभञ्जन ।
क्षोणी मध्यपुटे लीनो, नभ सर्वत्र सस्थित ॥ ५ ॥
वायोर्वह्निर्भुवो वारे, व्योम्नस्तत्त्व वहेत् क्रमात् ।
वहत्योरुभयोर्नाड्यो, ज्ञातव्योऽय क्रम सदा ॥ ६ ॥
पृथ्व्या पलानि पञ्चाशत्, चत्वारिंशत् तथाऽम्भस ।
अग्नेस्त्रिंशत् पुनर्वायोर्विंशतिर्नभसो दश ॥ ७ ॥

कथम् ?—

तत्त्वात्तत्त्वे यदायाति, नाड्यो नाडिं यदा व्रजेत् ।
द्वौ द्वौ पलानि तदाकाशे, एव दशपलानि हि ॥ ८ ॥
प्रवाहकालसस्येय, पृथिव्यादिक्रमेण तु ।
गन्धो रसश्च रूप च, स्पर्श शब्द क्रमादमी ॥ ९ ॥
ताभ्या भू-जलाभ्या स्याचान्ते कर्मफलोन्नति ।
दीक्षास्थिरादिके कृत्ये, तेजो-वायुवरे शुभम् ॥ १० ॥
भूम्या स्थैर्यं स्वचित्तस्य, शैत्ये कामोद्भवो जले ।
तेजस्के कोप-सतापो, वायो चञ्चलताऽऽत्मन ॥ ११ ॥
पञ्चमे शून्यतैव स्यादथवा धर्मवासना ।
पीत श्वेताऽरुणौ नील-श्यामो भ्रूविन्दुभिस्तथा ॥ १२ ॥
वह्निर्वहति कार्याणि, आप स्वाश्रयते फलम् ।
शून्य च वायुना निन्द्यात्, पृथिव्या सर्वसपदा ॥ १३ ॥
जीवितव्ये जये लाभे, शस्योत्पत्तो च वर्षणे ।
पुत्रार्थे युद्धप्रश्ने च, गमनागमने तथा ॥ १४ ॥
पृथ्व्यप्तत्त्वे शुभे स्याता, वह्नि-वातौ च तौ शुभौ ।
अर्द्धसिद्धिं स्थिरो यातु, शीघ्रमम्भसि निर्दिशेत् ॥ १५ ॥
मज्जने सुरते वादे, व्यायामे क्षुद्रकर्मणि ।
भोजने व्यवहारे च, नाडी स्याद् दक्षिणा शुभा ॥ १६ ॥
विद्यारम्भे च यात्राया, दाने शुभप्रयोजने ।
नगरादो प्रवेशे च, वामा नाडी शुभावहा ॥ १७ ॥
समसतगते सूर्य, चन्द्र जन्मर्क्षमागते ।
सकालपौष्णे विज्ञेया, कुर्यात् तत्र विचारणा ॥ १८ ॥
आदौ कृत्वा दिनार्द्धं सकलदिनमथाहर्निश तत्क्रमेण,
तस्मादह्नद्वय च त्रिदिनमथ चतुर्वासराणि क्रमेण ।
प्राणो नाड्या स्थितो यो वहति दिनपतेरृक्षमे सत्यहीन,
काले पौष्णे समासा भुवनरविदिशा मङ्गल षट्चतस्र ॥ १९ ॥

पञ्चभ्यः पञ्चविंशद्दिवसगतिरुहाऽऽरोहिते पञ्चवृद्ध्या,
तत् स्यादेकोत्तरेण त्रिगुणितदशकं ह्युत्तरं यावदेति।
काले पौष्णे समास्ते त्रिनयनशशिनः षट्त्रियामेन्दवो ये,
मासास्ते हानिशेषास्तिथि-दिशिषु गुणा द्वीन्दवो जीवितस्य ॥ २० ॥

दिनवर्ष ३, दिन १०, वरदिन २०, मास ६, दिन २५, मास ३, दिन २६, मास २, दिन २७, मास १, दिन २८, दिन २९, दिन १०, दिन ३०, दिन ५, दिन ३१, दिन ३२, दिन २, दिन ३, दिन १५ एवमिति ॥

उदये चन्द्रमार्गेण, सूर्येणास्तमनं यदि।
उदिते गुणसंयुक्तं, विपरीते विघ्नं भवेत् ॥ २१ ॥
उदयः सूर्यमार्गेण, चन्द्रेणास्तमनं यदि।
उदिते गुणसंयुक्तं, विपरीते विघ्नं भवेत् ॥ २२ ॥
मेषे धनुषि सिंहे च, तुलायां मिथुने घटे।
उदयो दक्षिणे ज्ञेयः, शेषेषु च निशाकरः ॥ २३ ॥
प्रतिपदाद्या विजानीयाद्, योगी [तद्‌ग ?]तमानसः।
यद् द्योतते प्रत्यूषकाले, विपरीतं विघ्नं भवेत् ॥ २४ ॥
शुक्लपक्षे भवेद् वामा, कृष्णपक्षे तु दक्षिणा।
त्रीणि त्रीणि दिनान्याह, उदये चन्द्र-सूर्ययोः ॥ २५ ॥
प्रथमे चैव उद्वेगं, द्वितीये धनहानिदम्।
तृतीये गमनं कुर्यादिष्टनाशं चतुर्थके ॥ २६ ॥
पञ्चमे राजविष्कम्भः, षष्ठे राज्यं विनश्यति।
सप्तमे तु महाघोरमष्टमे मृत्यु निश्चितम् ॥ २७ ॥
उदयाद् घटिकासंख्या, लग्नं चैकत्र कारयेत्।
नवभिस्तु हरेद् भागं, पञ्चकं परिवर्जयेत् ॥ २८ ॥
मन्त्रणे[४] क्लेशे[८] चौरे[१] च, राजन्ये[१२]ऽग्नौ[१५] तथा परे।
युगाष्ट-दश-मार्तण्ड-तिथिषु स्यादुपद्रवः ॥ २९ ॥

तथा नवभिर्भागे हृते तथा पञ्चभिर्बालादिस्वरप्रमाणेन वक्तव्यं लाभादिपृच्छायाम् ॥

कर[२]-रस[५]-शशि[१]-युग[४]-शिखि[३]-कर[२]-कर[२]-शक्रादिव रुद्रपर्यन्ताः।
यामभतिथिषु ध्रुवाङ्कास्तानामूलोद्धृताः शेषाः ॥ १ ॥
हर्षति तच्छेषं वारस्तुल्यो स दिनपादिः।
प्रच्छोटय खेटः सन् सौम्योऽभीष्टफलप्रदो न खलः ॥ २ ॥
तस्माद् यस्मिन् कार्ये, साध्यं तत्रैव गम्यते यो वा।
आगच्छति देशो वा, परचक्रं प्रयत्नेन ॥ ३ ॥
दिग्-ध्रुवसंख्ये चान्ये, दत्त्वाऽथ स्थापितान् मुनिभिर्दत्ते न(?)।
शेषाः पूर्ववदुदिताऽऽकलय्य रिपु-मित्रता तत्र ॥ ४ ॥
आद्ये च यदि च सौम्यः पापोऽप्यन्ते ग्रहादयस्तत्र।
वक्तव्यं तत् कार्यं सिद्धमपि विनाशमुपयाति ॥ ५ ॥

यंत्र नं. १०

२	२	५
२	श्री	१
३	४	१

पञ्चस्वरस्थापना-पृच्छायाम्।

यद्याद्ये पापः स्यात् सौम्यः कार्यग्रहस्तदा नित्यम्।
कर्ता विघ्नाश्लिष्टः कार्यं निर्विघ्नरूपत्वम् ॥ ६ ॥

द्वौ पापौ विघ्नकरौ द्वौ सौम्यौ कर्तृ कार्ययो सफलम्।
एव दिग्द्वयमेद विचिन्त्य स्थितपृच्छक स्थानात् ॥ ७ ॥
तथा—
वर्तमान तिथि-वार भयोगो, वासरया घटीदलमिश्रा ।
ते भवन्ति तिथि-वार-भयोगा, सत्यमुक्तममल मतिमद्भि ॥ ८ ॥
नन्दहता गता नाड्यो, विंशतिभिर्विभाजयेत्।
ग्रहभुक्तयुत लब्ध, तात्कालिका ग्रहा स्मृता ॥ ९ ॥
तत्कालचेष्टा समविग्रह च, नक्षत्र-याम-ग्रहपृच्छकाशा ।
योगास्तिथीन्दुवरदा नियोज्य, सप्ताहृत जीवमुदाहरन्ति ॥ १० ॥
चिन्ताकालो लाभो रवि भौम गुरु-बुध-शुक्र शनि चन्द्रै ।
ज्ञेयाश्च राहुणा सह, पूर्वादिदिशाधिपै क्रमश ॥ ११ ॥

*

पृच्छा दिन वार वामसख्या अतीतग्रहागमनम्।
भूचक्रे भूत कथयति स्थायी यत्र निषण्ण ॥ १ ॥
पृच्छति तत्र पृष्ठिस्थानाद् उदयैकग्रहागमनम्।
स वर्तमानो जाई (?) ॥ २ ॥

सूर्यस्थानात् प्राहरिक, सख्या गणयेद् भविष्य कथयति ॥

स्थायिनि बलिने अतीतचिन्ता जाई बलिने वर्तमानचिन्ता, प्राहरिके बलिने भविष्यचिन्ता ॥

वसु-भूतं-ऋतुश्चैव, वेदं-मुनि-चन्द्रमा ।
शिखि-पक्षप्रमाणेन, सूर्यादि नीरूपयेत् ॥ ३ ॥
रविकरै-शशि-दिशै-सशरै-चतुर्रग्गुरौ युगैभृगो ।
मन्दे रुद्रैराहोरिन्द्रियै-कुजाग्नि-ग्रहास्तथा चाङ्का ॥ ४ ॥
एव त्रिग्रहयुक्ता अङ्का, नवभिर्युता हता बाणे ।
शिखिभागहता शेषे, स्याज्जीव-धातु-मूलानि ॥ ५ ॥
वर्गागमे नगैर्भाग, अक्षरै पञ्चभिस्तथा।
स्वरैर्द्वादशभि कुर्यात्, ततो नाम प्रसिद्ध्यति ॥ ६ ॥

× × × × × ×

स्थायी ग्रहस्य सख्याभागे नामानि सवेत ॥ ७ ॥
वसुभूतादिभिश्चाङ्कै, क्षेप्य त्रिग्रहयद्धके।
शून्य-वह्नि-द्वय २३० भोऽङ्क, पादच्छाया नियोजयेत् ॥ ८ ॥
द्वयभूमिहृत शेष, नष्टलग्न च जन्मभम्।
नक्षत्र-राशि-वर्षर्तु-मास-पक्षादयस्तथा ॥ ९ ॥

नष्टजन्मपत्रिका ॥

उत्तराद्युदयादीना, वायव्या त ततो न्यसेत्।
विदिक्प्रभृतियामार्द्धे, भ्रमते ध्रुवचेलया ॥ १ ॥
अधमा स्पृष्टिपातेन, वामपातेन मध्यमा।
उत्तमा याम्यपातेन, मुखे चैवोत्तमोत्तमा ॥ २ ॥
शुभाश्चाशुभे स्थाने मन इप्सितानि कारयेत्।
अशुभा शुभे स्थाने, मृत्युहानिकरास्तथा ॥ ३ ॥
पृष्टिपाते समे सव्येऽशुभे शुभाश्च शोभना ।
मुखे च विषमे मध्ये, शुभा शुभ वदन्ति हि ॥ ४ ॥

जीवज्ञौ प्रभातसमये, मध्याह्ने कुज-भास्करौ ।
अपराह्ने शशि-शुक्रौ, सन्ध्यायां शनि-राहुकौ ॥ ५ ॥
हीनचन्द्रे रविर्भौमः, सौरिस्तमश्शिपातकाः ।
वुध-जीव सिताश्चन्द्रः, संपूर्णश्च शुभग्रहाः ॥ ६ ॥
गुरु-शशाङ्क-मार्तण्डः, भूमिपुत्रः परस्परम् ।
मित्रत्वं वुध-शुक्रस्य, कथ्यते सौरिणा सह ॥ ७ ॥
मन्दं भौमं वुधं जीवं, शुक्रं सोमं च भास्करम् ।
नैसर्गिकं वलं तेषां, क्रमे च कवयो विदुः ॥ ८ ॥
जीवं तु जीव-शुक्राभ्यां, मूलं चन्द्रे वुधे तथा ।
धातुः शनौ रवौ भौमे, लग्नकेन्द्रग्रहैर्वदेत् ॥ ९ ॥
भास्कराङ्गारकौ रक्तौ, श्वेतौ शुक्र-निशाकरौ ।
सोमपुत्रं गुरुं चैव, तावुभौ पीतवर्णकौ ॥ १० ॥
कृष्णं शनिश्चरं राहुं, नीलं विन्यात् तु वर्णकैः ।
वर्तुलमर्द्धचन्द्रं च, त्रिकोणं धनुराकृति ॥ ११ ॥
पद्माभं चतुरस्रं तु, दीर्घं दीर्घं च निश्चितम् ।
ग्रहरूपं विजानीयादादित्यादिक्रमेण तु ॥ १२ ॥
जलं सोमेन वक्तव्यं, वुधे विन्याद् वनस्पतीन् ।
हविःस्थानं तु भौमेन, शुक्रे जीवे च कीर्तनम् ॥ १३ ॥
म्लेच्छभूम्यां शनौ..., रवौ जानीहि गोकुलम् ।
निवेशं च विजानीयाद्, वाहद्वारविशेषतः ॥ १४ ॥
प्राङ्मुखो रविशुक्रेण, चन्द्रे सौरे च पश्चिमम् ।
दक्षिणे वुध-सोमाभ्यां, राहौ जीवे तथोत्तरे ॥ १५ ॥
सजीवं जीवशुक्रेण, निर्जीवं क्रूरभास्करैः ।
चन्द्रस्तु चन्द्रपुत्रस्तु, तावुभौ मिश्रभावुकौ ॥ १६ ॥
लाभालाभं सुखं दुःखं, जीवितं मरणं तथा ।
जयं पराजयं चैव, वक्तव्यं ग्रहभावतः ॥ १७ ॥
सूर्यच्छन्नं घनैर्वापि, दिनमानं न वुध्यते ।
तदा प्रश्नाक्षरैर्लग्नं, ग्रहान् राशौ विलोकयेत् ॥ १८ ॥
पूर्णिमाभ्यां हि यद् ऋक्षं, तस्मात् पञ्चदशे रविः ।
रवेर्द्वादशमे केतुः, तस्मात् सप्तदशे वुधः ॥ १९ ॥
वुधाद् द्वितीये शुक्रे स्यात् शुक्रादष्टमके तमः ।
तस्मात् पृष्ठे भवेद् भौमो, ग्रहाणामेवमादिशेत् ॥ २० ॥
ज्ञेयौ शनि-गुरौ स्पष्टौ, यथास्थानस्थितावुभौ ।
एवं कुण्डलिकायां तु, स्थापयित्वाऽवलोकयेत् ॥ २१ ॥
विलग्नराशिगो खेटः, तत्कालच्छायया हतः ।
सप्तहतोऽवशिष्टश्च, स्वगुणैर्गुणयेत् ततः ॥ २२ ॥
वाणे[५]-प्रकृति[२१]-मन्वर्क[१४,१२]-द्विरदानले[८,३]-शूलिनः[११] !
पुनः सप्तं हरेद् भागं, शेषं चोद्धरितं ग्रहम् ॥ २३ ॥ शुभमशुभं च ।

नगैर्भाग प्रदातव्य, काल तत्र विनिर्दिशेत् ।
दिनान्यर्कारयो पक्षा बुध-शुक्रे हिमत्विषु ॥ २४ ॥
गुरो मासा शनौ वर्ष, ऋतवो राहुजन्मनि ।
पश्यति लग्नपो यत्र, तत्र सर्वं निरन्तरम् ॥ २५ ॥
अस्त गता ग्रहजिता रिपुरूग्णदेहा ,
नीचस्थितादिरश्मयो रिपुगृह प्रयाता ।
रूक्षाणव किमपि फलन्ति लग्ने,
दातु क्षमा न भवन्ति च खेचरेन्द्रा (?) ॥ २६ ॥
दीप्त स्वस्थो मुदित , शान्त शुक्र प्रपीडितो दिन ।
विकल खलश्च कथिता, नवप्रकारा ग्रहा प्राज्ञै ॥ २७ ॥
स्वोच्चे तु भवेद् दीप्त स्वस्थ स्वगृहे सुहृद्गृहे मुदित ।
सोम्येदृष्ट शान्त उदितस्त्वशक्त किरणजाली ॥ २८ ॥
विकलो रवि लुप्तकर प्रभाभिभूत प्रपीडितोऽस्त ।
स खल खलसयुक्तो नीचो दीन समाख्यात ॥ २९ ॥
पुरुषा रवि-गुरु-भौमा बुध-सौरी नपुसको ज्ञेयौ ।
भृगु-चन्द्रमसौ नार्यौ सहजा भावा ग्रहपते ॥ ३० ॥
भौमार्कौ व्योमदृष्टी च, तिर्यग् दृग् भृगु-चन्द्रयो ।
बुध-गुर्वो समा दृष्टि , शनि-राह्वोरधोमुखा ॥ ३१ ॥
भोम-शुक्र-बुधे न्द्वर्कशुक्रारारामरार्चिता ।
शनि सौरिर्गुरुश्चेति, प्रदिष्टा क्षेत्रनायका ॥ ३२ ॥
मेष-वृष मिथुन कन्या-कर्क-झष तुलेपूचका क्रमश ।
रव्यादयस्तु नीचा उच्चस्थानाद्धि सप्तमगा ॥ ३३ ॥
भू-पञ्च-रस-समाऽष्ट-नवस्थानेषु शत्रच ।
अन्येषु मित्रच (का) प्रोक्ता, उदासीनाश्च मित्रका ॥ ३४ ॥
तत्कालपृच्छाकाले शत्रु-मित्र-उदासीना ॥

तथा—

रूप-लक्षणवर्णानि, क्लेशायुष्य च दोषता ।
तापश्च व्रणजातीना, तनुस्थाने निरीक्षयेत् ॥ १ ॥
मणि-मौक्तिक-रत्नानि, सप्तधातूनि हेम च ।
क्रयाणकानि सर्वाणि, धनस्थाने निरीक्षयेत् ॥ २ ॥
दासो दासी पुनर्मन्त्री, भ्रातृ-भृत्यान् विग्राहकान् ।
तथोपचयकर्माणि, तृतीये च निरीक्षयेत् ॥ ३ ॥
सुहृद सुख-दु ख च, वृद्धि पोत गमागमम् ।
मातृ-मेघ-क्रयाणानि, कुलस्य(ल) वीक्ष्यते तुर्यके ॥ ४ ॥
सुत सुता तथा गर्भ, मन्त्रसाधनसिद्धिकान् ।
विद्या बुद्धि श्रीलता च, पञ्चमे च निरीक्षयेत् ॥ ५ ॥
चतुष्पद च युद्ध च, चार व्याधि रिपुभयम् ।
दीप्तानि सर्वकार्याणि, षष्ठे चैव निरीक्षयेत् ॥ ६ ॥
पतिं पत्नीं तथा मार्गं, व्यवहार-क्रय-विक्रयम् ।
विविधानि च कार्याणि, सप्तमे च निरीक्षयेत् ॥ ७ ॥

नद्युत्तारं च पन्थानं, सङ्ग्रामं शत्रुसङ्करम्।
नष्टे दुर्गे ऋणं व्याधिछिद्रं छिद्रे निरीक्षयेत्॥ ८॥
वापी-कूप-तडागानि, प्रपां मठं सुरालयम्।
देवयात्रां च दीक्षां च, धर्मः धर्मिणि वीक्षयेत्॥ ९॥
पिता मुद्रा-मनःस्थानं, मार्गज्ञानं शुभाशुभम्।
पुण्यस्थानं च राज्यं च, वृष्ट्यभिषेकमेषजान्॥ १०॥
गजोष्ट्रांश्च कन्याश्व, वलीवर्दादिवाहनान्।
द्रव्यं पुण्यं तथा लाभं, लाभे चैव निरीक्षयेत्॥ ११॥
मृत्युर्मुक्तिं तथा ज्ञानं, विषं संघोरकारकम्।
विलं पुनर्विषोत्पत्तिं, व्ययस्थाने निरीक्षयेत्॥ १२॥

राशि-लग्न इत्यादि॥

गता नाड्यो हता ऋक्षैर्लब्धशेषं च षष्टिभिः।
ऋक्षमंशुर्विजानीयाच्चन्द्रे सूर्ये च सर्वदा॥ १॥
मेषांशे अग्निसांनिध्ये, वृषे गोस्थानमाश्रितम्।
मिथुने शय्यातले द्रव्यं, कर्के भाण्डगृहे पुनः॥ २॥
सिंहे च द्वारदेशे च, षष्ठे स्तम्भाश्रये तथा।
तुले तौल्यप्रदेशे च, वृश्चिके इन्धनालये॥ ३॥
धने देवालये द्रव्यं, मकरादौ जलाश्रये।
अंशके च वदेत् तत्र, स्थानं द्रव्यस्य निश्चितम्॥ ४॥
अश्विन्यादित्रिऋक्षेषु, आर्द्रादिपञ्चके तथा।
पूर्वाषाढाचतुष्के तु, तथा भद्रा च रेवती॥ ५॥
राशिऋक्षाणि प्रोक्तानि, शेषाः सूर्ये चतुर्दश।
अष्टाविंशतिखण्डेषु, कुद्वारे नागचक्रजे॥ ६॥
स्वयं चन्द्रः स्वयं सूर्यः, स्वऋक्षेण यदा तदा।
न द्रव्यं नैव शल्यं च, शून्यक्षेत्रं विनिर्दिशेत्॥ ७॥
युग्मेन चन्द्र-सूर्यस्य, द्रव्यं शल्यं च कथ्यते।
वक्तव्यं द्रव्यमानं तु, चन्द्र-सूर्यस्य योगतः॥ ८॥
अंशकमोहे भावाद्, भावनिमोहे लग्नतश्चिन्त्यम्।
लग्नांशभावमोहे, चन्द्राद् वा चिन्तनीयं स्यात्॥ १॥
जातकोक्तं फलं यस्माज्जन्तूनां जन्मकालजम्।
सर्वभावाश्रयं तस्माद्, वक्ष्ये भावविनिर्णयम्॥ २॥
ऋक्षसन्धिगताः खेटाः, राशिसन्धिगतास्तथा।
एष राशेः फलं दद्युश्चक्रे च विपरीतकम्॥ ३॥
सर्वे विकृतजं दद्युः, स्वांशे यद् दृष्टकं फलम्।
अतिचारे च चक्रे च, दद्यात् पूर्वफलं गुरुः॥ ४॥
भावा नवांशकाः [ग्राह्याः?], ग्रहास्त्रिंशां[श]क(काः) द्वयोः।
भाव-ग्रहयोर्योगः, पाद अंशोऽत्र कला ३० भोगयति (?)॥ ५॥
भावयोगदलं सन्धिः, तत्रस्थो निष्फलो ग्रहः।
हीनसन्धेः फलं भुक्तं, भोग्यं च संधिके ग्रहे॥ ६॥

अशगता द्वादशराशयो भावा । राशिद्वय सम्मील्य अर्द्धाकृते सन्धि । सर्वग्रहाणामुत्तम-मध्य-माऽधमफलानि, यथा—आदित्यादि । उपचयतोऽपि त्रि-षडेकादशमा उपचयभुवनानि आत्माऽऽत्मीय उत्तरोत्तरवृद्ध्या फलानि । यथायुक्तयादेश, नृपतित्व प्रधानत्व, तेजोगनाथमण्डल, पूर्णबल, व्यापार, पुर, ग्राम, द्रव्य, मान सुखानि च ।

मध्यमफल तेजोगशस्तथा तापो नैश्वर्यं बन्धुविग्रहम् ।

अधमफल विश्लेषो धनघातो रोग शोक भय मृर्ति विनष्टफलम् ॥

रविफल राजकुलात्मद्रव्य स्थान मानसुख प्रियः ।

उत्तम निजगोत्रप्रधानत्व वाणिज्यात् स्वसुख ग्रहात् ॥

मध्यमफलम् ॥

मित्र स्वजनयोर्द्वेषो रमाद्रोग धनक्षय ॥

अधमफलम् ॥

क्लेशो भिक्षाटन मोहो, धर्मभ्रंश कुशीलता ॥

विनष्टफलम् ॥ चन्द्रफलम्—

लग्नाधिपाज्ञगश्चन्द्रो, निन्द्यो युद्धे शुभे मन ।

यर्ली स्वस्थानगो वाऽपि, क्षीणो दुष्टफल शशी ॥

दुष्टोऽपि शुभता याति, चन्द्र पूर्णबलान्वित ॥

चन्द्र ॥

शुभवर्त्म दण्डनायत्व, सग्रामाद् विजयश्रिय ।

पूर्णबल ॥

सम्पत्पद राजतेजोवृद्धिश्च विग्रहात् ॥

मध्यमबल ॥

विवाद विग्रह युद्ध, शकटवाद् महद्भयम् ।

निर्बल ॥

स्वस्थानो विनाश, भङ्गो मृत्युर्महाहवे ।

नष्टबल ॥

लग्नत्रि षष्ठलाभस्थो नि चोऽन्य(न्य)स्तु शुभ ॥

बुध ॥

बुद्धिविधानतो राज्य, सेवायाम्तु सुखधनम् ।

पूर्णबल ॥

मित्र (मित्र) पठन द्रव्य, धर्म-शर्मसमुन्नति ।

मध्यम ॥

द्रव्यनाशो कल शोकमप्यपमानता ।

निर्बल ॥

षष्ठाष्टगो धर्मो स्मारव्ययगो गुरुः ॥

गुरु ॥

शुक्रात् १, ४, ११, २, ८, ९, २, ५। शनेः १, ४, ११, २, ८, ९, १०, ७। भौमात् १, ४, ११, २, ८, ९, १०, ७। त्रिधा युतेषु आर्शां-सरयोः सह शनि-सोमाभ्याम्, गुरोः १२, ११, ६, ८॥ बुधाष्टकवर्गः॥

जीवो भौमाद् द्व्याष्टकेन्द्रगोऽर्कात् सधर्मसहजेषु।
स्वात् सत्रिकेषु शुक्रान्नव-दश-द्वि-धी-रिपुषु॥

भौमाद् गुरुः २, ११, ८, १, ४, ७, १०। अर्कात् २, ११, ८, १, ४, ७, १०, ९, ३। गुरोः २, ११, ८, १, ४, ७, १०, ११, २, ५, ६।

शशिनः स्मरत्रिकोणार्थलाभस्त्रिरिपुधीव्ययेषु यमात्।
नवदिक्सुखायधीस्वायशत्रुषु ज्ञात् सकामगो लग्नात्॥

चन्द्रात् ७, ५, ९, २, ११। शनेः ३, ६, ५, १२। बुधात् ९, १०, ४, ११, ५, २, १, ६। लग्नात् ९, १०, ४, ११, ५, १, ६, ७॥ बृहस्पतेरष्टकवर्गः॥

शुक्रो लग्नादासुतनवाष्टलाभेषु सव्ययश्चन्द्रात्।
स्थात् सदिगसितात् त्रिसुखात्मजाष्टदिग्धर्मलाभेषु॥

शुक्रो लग्नात् २, ३, ४, ५, ९, ८, ११। चन्द्रात् १, २, ३, ४, ५, ८, ९, ११, १२। शुक्रात् शुक्रः १, २, ३, ४, ५, ८, ९, १०, ११। शनेः ३, ४, ५, ८, १०, ९, ११।

वस्वन्त्यायेष्वर्कान्नवदिग्लाभाष्टधीस्थितो जीवात्।
ज्ञात् त्रिसुतनवायारिष्वायसुतापोक्लिमेषु कुजात्॥

अर्कात् ८, १२, ११। जीवात् ९, १०, ११, ८, ५। बुधात् ३, ५, ९, ११, १। कुजात् ३, ५, ६, ९, १२॥ शुक्रस्याष्टकवर्गः॥

स्वात् सौरिस्त्रिसुतायारिगः कुजादन्त्यकर्मसहितेषु।
द्व्यायाष्टकेन्द्रगोऽर्कात् शुक्रात् षष्ठान्त्यलाभेषु॥

शनिः शनेः ३, ५, ११, ६। कुजात् ३, ५, ११, १२, १०। रवेः २, ११, ८, १, ४, ७, १०। शुक्रात् ६, १२, ११।

त्रिपडायगः शशाङ्कादुदयात् ससुखाद्यकर्मगोऽथ गुरोः।
सुते षट्व्ययायगोज्ञाद् व्ययरिपुदिग्नवाष्टस्थः॥

चन्द्रात् ३, ६, ११। लग्नात् ३, ६, ४, १, १०। गुरोः ६, १२, ५, ११। बुधात् १२, ११, ६, १०, ९, ८॥ शनेरष्टकवर्गः॥

स्थानेष्वेतेषु हिताः शेषेष्वहिताः भवन्ति नेष्टानाम्।
अशुभ-शुभफलं ग्रहाः प्रयच्छन्ति चारगताः॥
चतू रेखे मध्यफलं हीने हीनं ततोऽधिके श्रेष्ठम्।
विफलं गोचरगणितं त्वष्टकवर्गे विनिर्दिष्टम्॥
शर-द्वि-नेत्राः[२२५] सबाणवाहवः[२५६] शराभ्र-रामाः[३०५] कुकृताग्नयस्ततः[३४१]।
द्वि-वेद-लोकाः[३४२] शशि-राम-पावकाः[३३१] क्रमोत्क्रमस्थाश्चपलोदयाः स्मृताः॥

गूर्जरात्रायाम्—

यल्लग्न शुद्धयते यस्मात्, तच्छोध्यमुदयास्तयो ।
शेष त्रिंशद् धृत लब्ध, धन ऋण दिने दिने ॥

उदयास्तशुद्धि —

अयनादिगता दिवसा सार्द्धद्विगुणिता द्वयक्षरकसहिता ।
द्वि मुनीन्द्रिय रूपयुतौ षष्टिहता दिन निशामानम् ॥
गूर्जरात्राया च षड्गुण, कर्कादेकमेकनृप धनम् ।
छायापादेश्च मध्याह्ने, षड्युतैर्द्विगुणैर्हृतम् ॥ १ ॥
कर्क-मृगाद्या भागा ये भुक्ता भास्करेण त्रिगुणा ।
खानिलपञ्चकैर्युता षष्टिहृते रजनीदिनमानम् ॥ २ ॥
सपादलक्षे यूने द्विशत हीन मध्यपादेश्च षड्गुणम् ।
छायापादैश्च मध्याह्ने षड्युतैर्द्विगुणैर्हरेत् ॥ ३ ॥
नवसारिकाया कोङ्कणे वा दिनषड्गुणे भागम् ।
मध्याह्ने शङ्कुछायया पौषे रव्यङ्गुल मध्यम् ॥ ४ ॥

ततो द्रव्य ऋण धनम् ॥

अवन्तिदेशश्रुतयोजनानि, सगुण्य वाणे रसभाजितानि ।
षड्डुत्तरे द्वे तु शता नियोज्या ॥

अग्नि-वेदमक्के विषुवद् द्व्यङ्गुलानि १, नव ९, तिथयो १५, अष्टादश १८ विभक्ता ।
पञ्चरसा ६५, वसु ८, हृता दश १० विहृता विषुवच्छायागुणिता स्वदेशजा वरदलविनाड्या ॥

लङ्कोदयाद् द्विनाड्येव शुभानि[२७८] छिद्रनवयामा[२२९] त्रिरदा[३२३] ।
व्यस्ताव्यस्तयुता ते कार्याश्च स्वोऽन्यविनाड्य आवन्त्याम् ॥

आ ५, व्य २० पत्तने । आ ४, व्य ४८ भृगुकच्छे । आ ४, व्य ५४ कावी-जम्बूसरे ।

त्रि पञ्चै-राम वेदैश्च, धृतिसख्या तथैव च ।
चरखण्डानि चैतानि, क्रमेण पत्तने बुधै ॥ १ ॥
मूले द्व्यङ्गुलविपुल, सूच्यग्रो द्वादशाङ्गुलोच्छ्राय ।
शङ्कुस्तलाग्रविद्धोऽग्रवेधलम्बादरियुद्धार्य ॥ २ ॥
स्वक्षेत्रोपगत स्थायी, परक्षेत्रे च यायिन ।
नीचस्था हायना प्रोक्ता, त्रिविधा ग्रहपद्धति ॥ ३ ॥

तथा—

चतुर्विंशतय पूर्वकेतव उदयन्ति हि ।
शरद्यशुभदुर्भिक्षरोगान् द्वि-षट् निर्यगो ॥ १ ॥
चतुर्विंशतयोऽग्नौ तु, हेमन्ते चाग्निरोगदा ।
नवकाशसिरे याम्या, दुर्भिक्ष-व्याधि-मृत्युदा ॥ २ ॥
अष्टादश वसन्ते च, मध्यमफलदायका ।
ग्रीष्मे वसन्ते यो वायु, प्रचण्डवातनिग्रहा ॥ ३ ॥
वर्षाया दशवारुण्या, महावृष्टिकरास्तथा ।
संक्षेपेण च केतूनामेव पञ्चोत्तर स्मृतम् ॥ ४ ॥

तथा—

रोमकं दर्दुरं दृष्ट्वा, श्वेतपक्षं च वायसम्।
रात्रौ चेन्द्रधनुषं [वा ?], देशभङ्गं विनिर्दिशेत्॥ ५॥

तथा—

वराह वारिनिविट्ठा पायारे संठिया अट्ठ।
तह मज्झेव य अट्ठा पुर नाम णक्खत्तयं आइ॥ १॥
जइ बाहिरम्मि सूरो अह सूरसुओ बीयओ होइ।
होहुंति अरिमज्झा बाहिरा णीएसु हता॥ २॥
कूरे मज्झि पइट्ठे सणि-राहू-सूर-भूम आकंते।
को तं रक्खइ नयरं तियसनाहो वि भज्जंतं॥ ३॥
अश्विन्यादितृतीयं तु, वारौ शनि-गुरू तथा।
जया-रिक्तातिथौ घातः, क्रियते स्वचिरे गणे॥ ४॥

मेघस्य वृष्ट्यवृष्टिलक्षणम्—

मूलादिरविपङ्क्त्या तथाऽऽर्द्रादिनवकैर्भवेत्।
वर्षा च शीत-उष्णं तु परं गर्भे विपर्यये॥ १॥
संक्रान्तिदिनगनक्षत्रानादौ कृत्वा च चन्द्रजान्।
स्वकीयचेष्टया गर्भः पाश्चात्यया वसन्तः॥ २॥
जलं वर्षति वाऽऽदित्यो, हिमं वर्षति चन्द्रमाः।
चन्द्रादित्यौ बुधैर्ज्ञेयौ, शास्त्रदृष्टेन कर्मणा॥ ३॥

ये २६, ञे १०, खे २, टे ११, जे ८, गे ३, ता १६' ऽग्निः। के १, छे ७ ढे १४, दु ५, णे १५, ड १३, वामे २५, झे ९, ने २०, ले २८, ध १९, चे ६, रे २७, वा थे १७, मे २४, पे २१, वे २३, घ ४, वा १८, मा॥ ४॥

अग्नि-वायव्य-वारुण-माहेन्द्रमण्डलानि, एषु—

भूकम्पो रजोवृष्टिः, दिग्दाहोऽकालवर्षणम्।
इति चाकस्मिकं सर्वमुत्पातान् परिकीर्तयेत्॥ ५॥
उत्पातोऽपि माहेन्द्र-वारुणे मण्डले च यः।
वायव्येऽग्नौ च भङ्गः स्याद्, गर्भस्य कालचिन्तकैः॥ ६॥
चैत्रस्यादौ दिवसदशकं कल्पयित्वा क्रमेण,
स्वात्यन्यार्द्राप्रभृतिदशकं वृष्टिहेतोर्विलोक्यम्।
यावत्संख्यं भवति नियतं दुर्दिनं वातवृष्टि-
स्तावत्संख्यं विबुधगणितं वार्षिकं दग्धऋक्षम्॥ ७॥
मालमादौ मस्यान्ते, चैत्रे कृष्णे निरीक्षयेत्।
आर्द्रादीनि ऋक्षाणि, विशिखान्तानि कल्पयेत्॥ ८॥

आर्द्रादिवृष्टिदिनम्—

अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषकाः शलभाः शुकाः।
स्वचक्रं परचक्रं च, सप्तैता इतयः स्मृताः॥ ९॥

ज्येष्ठे मूलमतिक्रम्य, पूर्वाषाढादिभि श्रृणु ।
सप्तविंशति ऋक्षाणि, प्रथम चर्पण वद्दु ॥ १० ॥

तेनाढते गाढमता दढाणो १५, द १८, ढ १४, मा २५, म २५, ते १६, ता १६, घ ४, ता २०, द ४, गा ३, दे ४, त १६, क १, का २, र २७, का १ द्या द्रोणप्रमाणै कथिता नृकवीन्द्रे ॥ ११ ॥

लब्धा द्रोणाश्चतुर्गुण्या , मरूत्या स्थापयेद् बुध ।
पञ्चभिस्तु हरेद् भाग, तस्मिन् शाब्दा विशोपका ॥ १२ ॥
गर्भकाले यदा विद्युद् , दृश्यते न च घोपते ।
द्रोणसख्या तदा वृष्टिर्मध्योभयेस्तथा पुन ॥ १३ ॥
साभ्र मार्गे हिम पोषे, माघे इमा समारुतो ।
निर्वात फाल्गुनो ज्ञेयश्चैत्रो(त्रश्च) वहुरूपक ॥ १४ ॥
सुभिक्षो दिशि दुर्भिक्षो, मध्यम शोभन क्रमात् ।
नि रूपस्तथेति क सोम्य , आपाढपूर्णिमानिल ॥ १५ ॥
तथाऽऽपाढे च रोहिण्या, न सव्यभ्र सुदृष्टिदम् ।
सुभिक्ष जलपातेन, परमीतिभय भवेत् ॥ १६ ॥
पञ्चमी सह रोहिण्या, सप्तमी आर्द्रसयुता ।
पुष्येण नवमी समा ॥ १७ ॥

एपु—

उल्कापात दिशा दाह, निर्घात पांशुवृष्टय ।
इन्द्रायुध ग्रहयुद्ध पटेते गर्भपातका ॥ १८ ॥
अतिवातमवात वा, वातिभ तु निरभ्रता ।
अत्युष्ण च निरुष्ण च, पड्विध वृष्टिलक्षणम् ॥ १९ ॥
शुक्ले कृष्ण दिवारात्रि, दिशि तथा च सम्मुखम् ।
माघे स्वातो चतुर्मास, चतुर्यामैर्यथाक्रमम् ॥ २० ॥
नारीणा च तथा गर्भप्रमाण दशमासिकम् ।
पञ्चोनैर्द्विशतैर्घस्रैस्तैर्वर्पते नात्र सशयम् ॥ २१ ॥
जानीते न यदा गर्भ, दृष्टा चेष्टा तथा तदा ।
कृत्तिकादीनि घिष्ण्यानि, सप्तसप्तक्रमेण तु ॥ २२ ॥
अमृतजलनीरसौम्यदहनपवनचन्द्रजास्तया नाड्य ।
इन्दुबुधा शुक्रजीवा कुजरविमन्दाधिपा क्रमश ॥ २३ ॥
रवि-गुरु-भौमा पुरुपाश्चन्द्रभृगुबुधा स्त्रियो ज्ञेया ।
शनि-राहुनपुसको वर्षाकाले निरीक्षणम् ॥ २४ ॥
स्त्री पुसा सगमे वृष्टिर्द्वे स्त्रियो द्वौ नरो नहि ।
न नपुसकसयोग कुज-गुर्वेन्दुभिर्जलम् ॥ २५ ॥
जिट्ठस्स किण्हपक्खे, सवण धनिट्ठाइ दोहि नक्खत्ते ।
जइ होइ तासु विट्ठी, ता सुभिक्ख वियाणाहि ॥ २६ ॥
अह मेहच्छिन्नायणे, ता होई य मज्झिम काल ।
जइ हुति निम्मलदिसा, ता जाणह रवरच काल ॥ २७ ॥

चित्रा-स्वाति-विशाखानां, यस्मिन् मासे न वर्षति ।
तं मासं निर्जला मेघाः, यदि वर्षति वर्षति ॥ २८ ॥
श्रावणस्य चतुर्थ्यां तु, ऋक्षे उत्तरफाल्गुने ।
यदि वर्षत्यहोरात्रमागतं काल उत्तमः ॥ २९ ॥

अथार्घकाण्डम् ॥

विश्वसंभाव्यसत्त्वानां, मुक्तिमार्गोपदेशकम् ।
प्रणम्य शिरसा देवं, वक्ष्याम्यर्घोपकाण्डकम् ॥ १ ॥
सौम्यं शतभिषा चित्रा, कृत्तिका विश्वदेवता ।
ज्येष्ठा च धनिष्ठा तु, पञ्चत्रिंशाधिकं शतम् ॥ २ ॥
अश्विनी-भरणी-स्वाति-श्रवणैर्नवतिस्तथा ।
विशाखा-रेवती-पौष्णं, पञ्चपञ्चाशदुत्तरम् ॥ ३ ॥
अनुराधा तथाऽऽर्द्रा च, शतं विंशोत्तरं भवेत् ।
पुष्य-हस्ते च नक्षत्रे, पञ्चसप्ततिरीष्यते ॥ ४ ॥
आश्लेषा तु शतैकनवतिः पञ्चोत्तरा मता ।
उभयोरपि फाल्गुन्योस्तथा भाद्रपदद्वये ॥ ५ ॥
सप्तम्यां द्विशते स्यातां, मूले षष्टिरुदाहृता ।
द्विशतं पञ्चपञ्चाशदुत्तराषाढ ईष्यते ॥ ६ ॥
पूर्वाषाढा च विज्ञेया, पञ्चाशद्विंशतोत्तरा ।
एवं नक्षत्रसन्ध्रोङ्का, ज्ञातव्या अर्थचिन्तकैः ॥ ७ ॥
सिंहे कुम्भे धने खाङ्काः, कर्कटे शशिभास्करौ ।
शेषा अष्टौ शरविन्दुराशिसंख्यार्थहेतवे ॥ ८ ॥
पञ्चविंशच्छतं भानोः, षष्टिः कुज-बुधेन्दुभिः ।
जीवस्य पञ्चपञ्चाशद्, भृगोः स्यात् पञ्चसप्ततिः ॥ ९ ॥
पञ्चषष्टिस्तथा मन्दे, नवतिः सिंहिकासुते ।
एवं ध्रोऽङ्का ग्रहाणां च, विज्ञेया अर्थार्थिभिः सदा ॥ १० ॥

ग्रहणदिने दिन-वाररिक्तं एकत्र निक्षिप्य राहूनवत्या मिश्रणीयम्, एवं संक्रान्त्यादिषु ॥

उदयास्तमने वक्रे, ग्रहणे चैव समागमे ।
राशिसंक्रमणे युद्धे, जातेश्च कालवर्षणे ॥ ११ ॥
भूमिकम्पोल्कादिग्दाहस्तथा चन्द्रार्कसंभवौ ।
स्वपुरे च तथा केतोर्दृष्टेऽर्थश्च विचिन्तयेत् ॥ १२ ॥
तस्मिन् दिने ग्रहणं राशिं रिक्तं चैकत्र कारयेत् ।
ग्रहणे तेन गुण्यं तु, दिनवारेण वा तथा ॥ १३ ॥
द्विधा कृत्वा ततो राशिं, चित्राद्यर्थैश्च राश्यधः ।
भेजतुर्ग्रहयुतं लब्धमूर्ध्वराशिं भजेत् ततः ॥ १४ ॥
वक्रेऽथोपगते खेटे, लब्धं [च] त्रिगुणं भवेत् ।
स्वराशौ स्वक्षेत्रे यच्च, मित्रभे द्विगुणं कुरु ॥ १५ ॥
शत्रौ च नीचे पापाख्ये, त्याज्यमर्द्धं सदा बुधैः ।
समग्रहे समं कार्यमर्घकाण्डस्य कोविदैः ॥ १६ ॥
रवि-कुज-शनिश्चराः पापा एतैर्युतो बुधोऽपि च ।
शेषाः सौम्यास्तु विज्ञेया ग्रहाः दैवज्ञभाषिताः ॥ १७ ॥

आदित्येन युतश्चार्थ , आत्मस्थाने भविष्यति ।
चन्द्रेण तु परस्थाने, शुक्रयुक्त स्वके पुन ॥ १८ ॥
शेषैस्तु यो युतश्चैव, स स्वकस्थानसज्ञक ।
ततोऽर्घश्च स्फुटो वाच्यो, यावदन्यो भवेत् तदा ॥ १९ ॥

*

नताशके यत्र भवेच्छशाङ्क , सद्गतिरन्या त्रिमुहूर्तमध्ये ।
धृत्वा द्वय तद् दिनवारगुण्य, विशुद्धबुद्ध्या प्रवदन्ति तज्ञा ॥ १ ॥
सयोज्य द्व्याक्षरराशिमत्र, भाग विसहृत्य यथोक्तराशे ।
एकेन वृद्धिर्युगलेन तुल्य , शून्येन हानि प्रवदन्ति चार्घे ॥ २ ॥
स्यादुत्तमे उत्तमवृद्धिहानि , सान्मध्यमे मध्यमवृद्धिहानि ।
स्याद्वाधमे चाऽधमहानिरेतत्, फल च तत् त्रिष्वपि दिष्टमत्र ॥ ३ ॥
सँतेकविंशदै-दशै-नवै शरै षोडशै-युगौ सुमास्तथाऽङ्का ।
रव्यादीना क्रमशस्तु, भवन्त्यत्र गुणकरा ॥ ४ ॥
हस्ते चित्रा तथा स्वातौ, ज्येष्ठाया यमवारुणे ।
चत्वारिंशन्मुहूर्ता सपञ्चयुक्ता प्रकीर्तिता ॥ ५ ॥
त्रीण्युत्तरेऽपि रोहिण्या, विशाखाया पुनर्वसौ ।
पञ्चदशमुहूर्ता स्यु , शेषेस्त्रिंशत् प्रकीर्तिता ॥ ६ ॥
तेरह इगवीसा बारह अट्ठारसा य पन्नरसा ।
तेवीसइ गुणवीसा पणवीसाट्ठारसा य तेत्तीसा ॥ १ ॥
दस चउदसा य कमसो सराण सखा मुणेयव्वा ।
पणवीसतीसनवय अट्ठारस एगवीस य कवग्गे ॥ २ ॥
सत्तावीसा सोलस चउतीसा पनरसा य चउदसया ।
एमा कमेण सखा चवग्गसखा मुणेयव्वा ॥ ३ ॥
अट्ठारह पणतीसा तेरह बारसा य सत्तरसा ।
एसा अणुक्कमेण सखा टवग्गम्मि णायव्वा ॥ ४ ॥
सत्तावीसा तेरस पणतीसा अट्ठवीस अट्ठारा ।
कमसो सखा भणिया तवग्गम्मि विबुहेहिं ॥ ५ ॥
छव्वीस सत्तावीसा अट्ठावीस चउदह य सत्तरस ।
कहिया पवग्गसखा एमा कमसो छइल्लेहिं ॥ ६ ॥
सत्तावीसेगारह नवग तीसा यवारवग्गम्मि ।
पणवीसा दहतीसा बारह सखा सयारम्मि ॥ ७ ॥

यव ५७, गोधूम ६४, चिणा ६५, तिउट ७२, तुवरि ७४, मुग ५१, धूसर ९२, वाल ६७, चउला ८२, उडिद ८०, मउठ ६७, जूनला ११०, सालि ७७, कोद्रवा १०८, कागु ८०, तिल ५३, सरसव १००, तेल ७०, घृत ५०, गाडु ८९, गुल ४८, कपास १२७, सण ६२, धाई ६६, हिंगु ६३, जीरं ७८, वेसण १०३, राई ५१, सोनउ ९१, रूपउ ०५, त्रानउ १०१, कथीर २८२, पीतल १०५, लोहु ५४, कासु ८८, पटु ६१ ॥

मासवयस्स अक्खर इगे काऊण सरा य एगट्ठा ।
पण्हस्सा वि य एव भाय पण्हरस य सरेण ॥ १ ॥

सम अंके होइ समं मत्ता हीणे महग्घयं सुण्णे।
अक्खरहीणे उ भवे सुभिक्खं कित्तियं इत्थ ॥ २ ॥
रोहिणी अद्दा हत्थो पुणव्वसु सिलेसफग्गुणी जुगलं।
मूलं अणुराहा वि य अहोमुहा नव य नक्खत्ता ॥ ३ ॥
निहियं न जाइ नासं तह किमि नासो थिराइ कथोइ।
होइ विसेसेण फुडं भरियं एयम्मि कुट्ठारं ॥ ४ ॥

तथा—

संक्रमणदिने चन्द्र-रविना(रा)गेः सप्तमं भवेत्।
यावन्मासे फलं दद्युर्यत् क्रयाणानि वोधनात् ॥ १ ॥
युगं[४] त्रयं[३]-मुनि[७]-त्रिपुं[३] त्रि[३]-वसुं[८]-पड्[६]ष्[८]पञ्चसुं[५]।
त्रिपु लाभं चैत्रादिपु क्रमात् ॥ २ ॥

फलानि धान्यानि च १, स्नेहौषधधान्यानि २, हिङ्गुगुडसैन्धवहरीतकी-गन्ध-यव-गोधूमानि ३, कुङ्कुम-कुसुम-पूग-चन्दन-कुष्टवचा-हरिद्रा-पीतद्रव्यकर्पासधान्यानि ४, मौक्तिक-सुवर्ण-रजतसूत्रादितिल-तैलानि ५, अश्व-खरौष्ट्र-वेसरि-गुड-यव-गोधूमधान्यानि ६, कम्बल-वेसण-रु-धान्यानि राग-कङ्गुतिल ७, तैल-लवण-तुवरी-वल्ल-कर्पासानि ८, सालिमुगमकुष्टानि ९, कोद्रव-पूग-तिल-जूनला-मसूरिणा १०, कर्पास-स्नेह-गुड-खांड-स(श)र्कराणि ११, माष-तुवरी-कुलत्थ-गोधूम-राजिका-वेसणाऽजमोद-सुंचलानि १२।

अमावास्याधिकं चन्द्रमर्घवृद्धिकरं भवेत्।
हीने चन्द्रे समर्थं तु समे समं समादिशेत् ॥

*

पञ्चताराग्रहा यत्र, वामता कुरुते शशी।
गुरुः शस्यविनाशाय, चार्घहानिः शनिश्चरः ॥ १ ॥
भौमो राजा वधार्थाय, जनमारी च भार्गवे।
वुधो रसविनाशाय, गर्भाश्च परपीडितः ॥ २ ॥
वृहस्पतिस्तथा शुक्रो, निहिताङ्गः शनिश्चरः।
सोमस्य कुरुते सङ्गं, विन्द्यात् तत्र महाभयम् ॥ ३ ॥
लेखने मन्त्रिणः पीडा, संग्रामो रश्मिसे दिने।
अपसव्ये विरोधः स्यात्, स्त्रेदने भिद्यते प्रजाः ॥ ४ ॥
येनां*येषु देशेषु, यो यदा पीड्यते ग्रहः।
तान् देशान् दुःस्थितान् विन्द्याद्, दुर्भिक्षेण भयेन वा ॥ ५ ॥
सूरः कलिङ्गमाषश्च, जवने च शशी तथा।
भौमे त्ववन्त्यां वुधो जातो मगधायां गुरुः पुनः ॥ ६ ॥
सिन्धुतटे महाराष्ट्रे, शुक्रः सौराष्ट्रमण्डले।
शनिश्च वर्वरे राहुः, तथा केतुः पुलिन्दके ॥ ७ ॥
ये जल्पन्ति नरा नित्यं, ग्रहचारेण सुस्फुटम्।
तेषां तद्वचनं कीर्तिर्न जायते महीतले ॥ ८ ॥
गुरु-शुक्र-वुधा भव्याश्चन्द्रराशिग्रहेण तु।
तथैकत्र दुन्दुभिस्तत्र मण्डले देशे ॥ ९ ॥
शुक्रारगुरुमन्दास्तु, सर्वधान्यप्रपीडजाः।
अनावृष्टिभयं तत्र, चातुर्वर्णः क्षयः समाः ॥ १० ॥

फलयह्नो स्यादष्टभिर्मासैद्वाभ्यां वायव्यके पुन ।
मासेन वारुणे सप्तरात्रान् माहेन्द्रके पुन ॥ ११ ॥
मन्दा मन्दाकिनी ध्वाङ्क्षी, घोरा तथा महोदरी ।
राक्षसी मिश्रिका चैव, सक्रान्ति सप्तधा स्मृता ॥ १२ ॥
गुरु बुध रवि-कुज शशि शनि-शुक्रेषु राशय शस्ता ।
वर्णा क्रमेण सोडिक-तस्करा कार-चतुष्पदका ॥ १३ ॥
ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्या, शूद्रा पिशाच नर्त्तका ।
गोनाथाश्वधियामादौ, पीड्यन्ते क्रमशो जना ॥ १४ ॥
सपादद्वयनक्षत्रान्, सार्द्धवर्षेण भुञ्जति ।
यदृक्ष च परे राहुर्द्विजिह्वा सा प्रकीर्तिता ॥ १ ॥
पूर्वं पञ्चदश ज्ञेय, मध्ये ज्ञेय त्रयोदश ।
एष भ्रमति खेचरे, ऋक्षचारैश्च सस्थिता ॥ २ ॥
त्रयोदशानि ऋक्षाणि, तस्योदर तु जायते ।
एकैक गुद जिह्वाया, सप्ताभिमुखसस्थित ॥ ३ ॥
षड्भि पुच्छ विजानीयाद्, राहुचक्र समालिखेत् ।
यद् यस्य लभते देहे, ग्रहा सर्वत्र दापयेत् ॥ ४ ॥
जिह्वा-गुह्ये स्थितो भानुर्भगस्थाने तु चन्द्रमा ।
विग्रह तु भवेद् घोर, न तु युद्ध भविष्यति ॥ ५ ॥
अथवा जायते युद्ध, भग्नाम तु महाहवम् ।
ऊभौ सैन्यौ तु राजानौ, द्वावप्येतौ विनश्यत ॥ ६ ॥
सुखस्थाने यदा चन्द्रो, भङ्गस्थाने दिवाकर ।
यात्राया न निवर्त्तन्ते, आहवे मरण भवेत् ॥ ७ ॥
उदरे सूर्य-सोमौ तु, सन्धिर्भवति विग्रहे ।
जिह्वागुह्ये द्वये दृष्टे, विग्रह रौरव भवेत् ॥ ८ ॥
दुर्भिक्ष व्याधिपीडा च, यायिनो जायते तथा ।
उदरे तु यदा सूर्यो, मुखे चरति चन्द्रमा ॥ ९ ॥
आगन्तुके जयो नास्ति, यदि चन्द्रे समो भवेत् ।
सूर्य स्याद् गुद जिह्वाया, भङ्ग शशाङ्कसस्थित ॥ १० ॥
ऊभौ सैन्यक्षयं तत्र, किञ्चिदागन्तुके जय ।
उदरे चन्द्रम सूर्यो, मुखे आगन्तुके जय ॥ ११ ॥
चन्द्र स्याद् गुद-जिह्वाया, मुखे रवि सम युद्धम् ।
जय स्थानस्थिते किञ्चिद्, वाच्य जय-पराजये ॥ १२ ॥
पुच्छे चन्द्रो रवि पोटे, आगन्तुके जयो भवेत् ।
उदरेऽर्क शशी जिह्वा, गुदे मृत्युश्च यायिन ॥ १३ ॥
पोटे चन्द्र रवी स्याता, सन्धिस्तत्र भवेत् तथा ।
मुखे द्वौ च क्षय तत्र, सङ्ग्रामेण महीभृताम् ॥ १४ ॥
पुच्छस्थिते तथा द्वौ तु, धन-राष्ट्रक्षयो भवेत् ।
द्वितये गुद जिह्वाया, तदा भङ्ग समादिशेत् ॥ १५ ॥
जिह्वा गुदे यदा चन्द्र, पुच्छे मुखे च भास्कर ।
स्थायिन स्याच्छुभ तत्र, भङ्गो भवति यायिन ॥ १६ ॥

मुखेऽर्के उदरे चन्द्रः, परसैन्यं निपातयेत्।
दक्षिणेन रविं कृत्वा, चैवं सम्मुखे जयः (?) ॥ १७ ॥
पृष्ठघातश्च वामे वोदरेऽर्के तत्र संस्थिते।
परन्तु गुद-जिह्वायां, दक्षिणे पृष्ठतो न हि ॥ १८ ॥
मुखं पुच्छं गते चन्द्रे, पृष्ठे दक्षिणतो जयः।
सम्मुखे च भवेद् भङ्गः, एवं ज्ञेयः जयाजये ॥ १९ ॥
पुच्छस्थाने यदादित्यश्चन्द्रस्तत्र समागतः।
तत्र यात्रा न कर्तव्या, यदीच्छेदात्मजीवितम् ॥ २० ॥
ग्रहयुग्मं यदा काले, सप्तर्क्षे तु संस्थितम्।
स्थायिनो यायिनश्चैतत्, सैन्यक्षयमुभयस्य तु ॥ २१ ॥
उदये चन्द्रमा भव्यो, रविस्तत्र न शोभनः।
युद्धसमागमे यात्रा, न कर्तव्या बुधैः सदा ॥ २२ ॥
मुखपुच्छादिऋक्षैस्तु, यावच्चरति चन्द्रमाः।
तत्र यात्रा न कर्तव्या, युद्धे चैव तु युद्ध्यते ॥ २३ ॥
राहुदेहासना यान्ति, चन्द्रदक्षिणतो ग्रहाः।
न हि उत्तरशेषाश्च, मध्ये तु मुख-पुच्छयोः ॥ २४ ॥
यावदुत्तरचारस्थान्, ग्रहान् चरति चन्द्रमाः।
शुभकर्ता च सर्वत्र, जयवामाङ्गसंश्रितः ॥ २५ ॥

यात्रायां सप्तशलाकाचक्रम्—

ऊर्ध्वरेखा तथा सप्त तिर्यग् रेखाः पुनर्भवेत्।
हकारं वायुकोणे तु, दकारमग्निसंज्ञके ॥ २६ ॥
अकारादिस्वराः सर्वे, हीनाङ्गास्त्रीणि वर्जिताः।
कृत्तिकादीनि धिष्ण्यानि, नन्दादितिथिसप्तकम् ॥ २७ ॥
राहूदयं यथास्थाने, सम्मुखो हारिदायकः।
एकरेखा भवेच्छत्रुर्यस्योदयो जयी स च ॥ २८ ॥
दीर्घस्वराः सिते पक्षे, म्रियन्ते नात्र संशयः।
ह्रस्वस्य मरणं कृष्णे, सन्धिः स्यादेकसंस्थितः ॥ २९ ॥

इति राहुः ॥

इन्द्रवायु-यमे रुद्रे, वारुणेऽग्नीन्दुराक्षसे।
प्राच्यन्तकजले सौम्ये, चैत्रमासाद्ययं क्रमः ॥ १ ॥
दिनोऽर्द्धं यामयामार्द्धं, तदार्द्धं द्वे दयादहो।
एवं मुक्तिप्रमाणेनापृष्ठिदक्षिणतो जयी ॥ २ ॥
रुद्रः पूर्वस्यामुत्तरस्यां, वाऽग्नेये नैर्ऋते तथा।
दक्षिणस्यां च वायव्ये, पश्चिमेशानयोस्ततः ॥ ३ ॥
चतुर्घटीकयोगिन्या, वामे पृष्ठौ जयत्यहो !।
अरिलक्ष्मीं समादाय, स नृपः सुखमेधते ॥ ४ ॥
घुजाद्दृणी सितपक्षे, गैच्छझूढि सितेतरे (?)।
व्यञ्जनैस्तिथयो ज्ञेयाः, स्वरैश्च प्रहरा दिशि ॥ ५ ॥

इति भद्रा ॥

चक्रे द्वादशपत्राख्ये, मेषाद्या वाममार्गण ।
यत्रस्था तत्र तत् सर्वे, भुक्ति सार्द्धघटीद्वयम् ॥ ६ ॥
महामारी च विज्ञेया, अग्लाना चलोत्कटा ।
समरे जयदा प्रोक्ता, पृष्ठि दक्षिणसंस्थिता ॥ ७ ॥
पूर्वतो वामगामासाश्चैत्राद्या दिशि तुर्यगे ।
प्रहारा सव्यमार्गेण, मासस्थानादि गण्यते ॥ ८ ॥
चातुरङ्गे यदा कोटे, जयदा पृष्ठिदक्षिणे ।
चलचतुरशीतीना, क्षयदा क्षेत्रपालजा ॥ ९ ॥
त्रिशूल त्रिशूल च(चैव), त्रिशूल कोणतुर्यगम् ।
त्रिक च द्वादशानाह, रविचक्र समालिखेत् ॥ १० ॥
आदौ तु रविं संस्थाप्य, ज्ञेय जन्मभज शशी ।
नवत्रिक मृत्युद तुर्यं, क्लेशद द्वादश शुभम् ॥ ११ ॥

ग्लानदिन प्रथममवलोक्य जल्पनीय रविचक्रम्, तथा—

त्रिशूलेन भवेन्मृत्यु , द्वादशभिर्जय तथा ।
ज्ञायन्ते सप्तभिर्भङ्ग, रविचक्रे न सोत्तमे ॥ १२ ॥

रविचक्र समाप्तम् ॥

सियवीयाससिरिक्खा, ति छ ति छगम्मि जस्स रिक्खम्मि ।
धणहाणि-वुड्ढिट्ठाणाचुइला नक्खयभयपसाया ॥ १३ ॥
अश्विन्यादिद्वितीय तु वारे शनौ गुरावपि ।
जयारिक्तातिथौ घाता , क्रियते स्थविरे गणे ॥ १ ॥

घाते नरचक्रम्—

शिरोमुख न वाम च, हस्त पाद च हृद्गलम् ।
दक्षिण हस्तपाद च, लिखेत्तर यथाक्रमम् ॥ १४ ॥
त्रिण्येकं च युग्मेषु द्वय युग-युगानि च ।
शिरसि योऽर्द्धनक्ष स्याद्, ग्रहा क्रूरा यथास्थिता ॥ १५ ॥
रवे पञ्चदशे चारिघात भवतु निश्चितम् ।
भौमे रक्त शनौ मृत्युरर्थहानिश्च राहवे ॥ १६ ॥
भुक्तैरशेरधो याति, भुक्तिस्तिर्यग्विस्तरम् (?) ।
आदित्ये शुध्यते घात, चन्द्र च यत्र तत्र (?) ॥ १७ ॥

घातचक्र कोटचक्रम्—

धनिष्ठा भरणी पुष्य, मघाऽऽश्लेपाचित्राफाल्गुनी ।
रोहिणी पुनर्वसूत्तरापाढामध्ये ज्येष्ठा च रेवती ॥ १८ ॥
पूर्वापाढा च भद्रा चोत्तरा मूलमृगास्तथा ।
उत्तराफाल्गुनीहस्तमार्द्रागर्भे नियोजयेत् ॥ २० ॥
क्रूरा बाह्यो शुभा गर्भ आगतैर्न च भिद्यते ।
मिश्रैर्मिश्र भवेत् कार्यमधिके जयमादिशेत् ॥ २१ ॥

ग्रहः सौम्यस्तथा क्रूरो, वक्रमार्गोऽथ नीचगः ।
स्थानकं वेध्यमित्येवं, बलं ज्ञात्वा फलं वदेत् ॥ २७ ॥
वक्रग्रहे फलं द्विगुणं, त्रिगुणं स्वोच्चसंस्थिते ।
स्वभावगं फलं शीघ्रे, नीचस्थोऽर्धफलो ग्रहः ॥ २८ ॥
यत्र पूर्वदिगाशायां, ऋक्षराश्यादिगो रविः ।
सादिग्रस्तमिता ज्ञेयाः, शेषास्तिस्रो दिवागताः ॥ २९ ॥
ईशानस्थाः स्वराः प्राच्यां, ज्ञेया आग्नेयगाः स्वराः ।
यमे नैर्ऋत्यस्थास्तु, वारुण्यां सौम्यगास्तथा ॥ ३० ॥
नक्षत्रस्थे रुजो वर्णे, हानिः शोकः स्वरेऽस्तगे ।
राशौ विघ्नं तथा भीतिः, पश्चास्ते मरणं ध्रुवम् ॥ ३१ ॥
नक्षत्रेऽप्युदिते पुष्टिर्वर्णलाभः स्वरे सुखम् ।
राशौ जयस्तिथौ तेजः, पदादिपञ्चकोदये ॥ ३२ ॥
शुभग्रहैस्तिथिर्विद्धेऽर्थलाभं समादिशेत् ।
राशिवेधे सुखं चैव, नाम्ना तु निर्भयं भवेत् ॥ ३३ ॥
स्वरवेधे तथाऽऽरोग्यं, पञ्चवेधेऽर्थलाभदः ।
ग्रहाणां चैव सौम्यानां, सौम्यैर्दृष्टे सुखावहा ॥ ३४ ॥
पञ्चापि तिथिसंयुक्ता, राशिधिष्ण्याक्षरस्वराः ।
अस्तं गताश्च ते सर्वे, यत्र भानुस्त्रिमासकाः ॥ ३५ ॥
यात्रा युद्धं-विवाहं च, द्वारं प्रासादहर्म्ययोः ।
न कर्तव्यं शुभं किञ्चित्, तदाशाभिमुखैर्नरैः ॥ ३६ ॥
तदाशायां स्थितं यस्य, नाम्नः प्रथमाक्षरः ।
तत्काले सर्वकार्येषु, ज्ञेयो दैवहतो नरः ॥ ३७ ॥
कवौ कोटे तथा द्वन्द्वे, चातुरङ्गे महाहवे ।
वर्जयेत् सर्वभावांश्च, यदीच्छेद् विजयं रणे ॥ ३८ ॥
प्रश्नकाले यदा विद्धं, लग्नं क्रूरैश्च खेचरैः ।
ज्ञेशुभं शोभनं सौम्यैर्मिश्रैः मिश्रफलं भवेत् ॥ ३९ ॥
ग्रहनिर्वेधलग्नेन, फलं लग्नस्वभावतः ।
ज्ञातव्यं देशकेन्द्रेण, यदुक्तं च चरादिकम् ॥ ४० ॥
क्रूरोभयग्रहैर्विद्धं, यस्य नाम्नः स्वराक्षरम् ।
तिथिं राशिं च नक्षत्रं, तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ४१ ॥
तौल्यं भाण्डं रसो धान्यं, गजाश्वादिचतुष्पदम् ।
सर्वं महर्घ्यं तावद्, यावत् क्रूरैश्च वेधितम् (?) ॥ ४२ ॥
क्रूरवेधसमायोगे, यस्योपग्रहसंभवः ।
तस्य मृत्युर्न संदेहो, रागाद् वाऽऽचरणेऽथवा ॥ ४३ ॥
सूर्यादिपञ्चकं ऋक्षं, विज्ञेयं विद्युतो मुखम् ।
शूलं तथाऽष्टमं प्रोक्तं, सांनिपातं चतुर्दश ॥ ४४ ॥
केतुरष्टादशे प्रोक्त उल्का स्यादेकविंशतौ ।
द्वयं विंशतिमेकं यस्त्रिविंशे वज्रमुच्यते ॥ ४५ ॥

निर्घातस्तु चतुर्विंशे उक्ता अष्टावुपग्रहा ।
स्वस्थाना विघ्नदा चैव, सर्वकार्येषु सर्वदा ॥ ४६ ॥
जन्मभ कर्म चाधीन, विनाश सानुदायकम् ।
सांघातिक तथा जात्यमभिषेकदेशजेर्नम् (?) ॥ ४७ ॥
जन्मभ जन्मनक्षत्र, दशम कर्मसंभवम् ।
एकोनविंशमाधान, त्रयोविंश विनाशकम् ॥ ४८ ॥
अष्टादश च नक्षत्र, सानुदायकमेव च ।
साघातिक च विज्ञेय, ऋक्ष षोडशसख्यया ॥ ४९ ॥
पञ्चविंशत्तम जात, षड्विंशतमभेषकम् ।
सप्तविंशतिदेश तु, नवधिष्ण्यानि भूपते ॥ ५० ॥
जन्मऋक्षे भवेन्मृत्यु, कर्मणि क्लेशमेव च ।
आधाने तु प्रवासश्च, विनाशे बन्धुविग्रह ॥ ५१ ॥
सानुदाये त्वरिष्ट च, हानि सघातके तथा ।
जातिभे कुलनाश हि, बन्धन चाभिषेकके ॥ ५२ ॥
देशऋक्षे देशभङ्ग, क्रूरैरेव शुभैर्शुभम् ।
मिश्रैर्मिश्रफल चैव, समायोगे उपग्रहे ॥ ५३ ॥
मानस पञ्चविंश तु, शोकदारादिनाशनम् ।
भृत्य चतुष्पदाना च, क्रूरैरेव शुभैर्शुभम् ॥ ५४ ॥
स्वक्षेत्रोपगत स्थायी, परक्षेत्रे च यायिन ।
नीचस्था हायना प्रोक्ता, त्रिविधा ग्रहपद्धति ॥ ५५ ॥
उदिते नामवर्ग तु, स्यात् तु मित्रमरिक्षयम् ।
असमर्थस्य ससिद्धि, लाभमात्यन्तिक भवेत् ॥ ५६ ॥
दीपो यथा गृहस्यान्त, उद्द्योतयति सन्नभ ।
तथैव सर्वतोभद्र, सत्य सत्य न सशय ॥ ५७ ॥
रामे ऋतौ तथाऽऽये तु, कर्मणि च शुभा मता ।
भौमार्क-शनयो मध्या, नव-पञ्चम-सप्तसु ॥ १ ॥
जन्मनि सप्तमे षष्ठे, दशमैकादशे त्रिके ।
वर्द्धमानतनुश्चन्द्रो, धन-धी धर्मग शुभ ॥ २ ॥
जन्मात् पञ्चममुद्वेगस्तृतीयो द्वादशोऽर्थह ।
षष्ठानवमसस्थश्च, मृत्युर्भवति सत्वरम् ॥ १ ॥
भद्रात् तथाऽष्टमो बाध्य, दशमात् तुर्यगोऽर्थह ।
सप्तमात् तु द्वितीयस्थे तेजोहानिर्भवेन्नृणाम् ॥ २ ॥
द्वितीयात् सप्तमस्तुर्याद्, दशमो यदि चन्द्रमा ।
वसोरेकादशश्चैव, नवकात् षट्स्थितस्तथा ॥ ३ ॥
द्वादशाच्च तृतीयस्थ, पञ्चमाज्जन्मगो यदि ।
ग्रहाच्चन्द्रो भवेन्नैव, तदारोग्यफलप्रद ॥ ४ ॥
भान्यश्विन्यादिपञ्चचराणि त्रीणि क्षिप्राणि मृदूनि पञ्च च ।
त्रीणि ध्रुवकानि पञ्च चोग्राण्येव तुयाणि दारुणानीह ॥ ५ ॥

यंत्र नं० ११

१५
३१२
६९
११८
११८
१०४७२

द्विकौ साधारणौ ज्ञेयौ, गन्तव्यं क्षिप्रकैश्चरैः।
स्थिरैः पुनः प्रवेष्टव्यं, योद्धव्यमुग्रदारुणैः॥ ६॥
साधारणाग्रतीक्ष्णे, स्वातौ न लभ्यते विमुक्तम्।
स्वं दत्तं प्रयुक्तमथवा, निःक्षिप्तं सर्वथात्यन्तौ॥ ७॥
अनलभयं भौमे, न तु रक्तस्रावो दिवाकरे प्रोक्तः।
वातभ्रमोऽश्रुपातो, निर्दिष्टः सूर्यपुत्रेण॥ ८॥
शुक्रेण मनस्तापः, प्रमदाकलहोऽपमानता चापि।
जीवेन बन्धुवधो, विपत्तिपत्तिः सदाकालम्॥ ९॥
चन्द्रमसा वेधे ननु, प्रत्युत्सवदानमानसंपत्तिः।
रिपुणा कलहो घोरो, निर्दिष्टश्चन्द्रपुत्रेण॥ १०॥

सामान्यकार्येषु वेधः, तथा—

रविवेधे च वैधव्यं, कुजवेधे कुलक्षयम्।
बुधवेधे भवेद् वन्ध्या, प्रव्रज्या गुरुवेधतः॥ ११॥
अपुत्रा शुक्रवेधेन, सौरे दासी सदुःखिता।
राहुवेधे भवेद् वेश्या, केतौ स्वच्छन्दचारिणी॥ १२॥
त्रिदशैकादशस्थाने, भास्करो वाञ्छितार्थदः।
विद्धो नव-चतुः-पञ्च-द्वादशाभिग्रहैर्ननु॥ १३॥
दशैकादश-षट्-सप्त-त्र्याद्यगः शोभनः शशी।
अविद्धश्चतुरष्टान्त्यद्वितीय-नव-पञ्चमैः॥ १४॥
षष्ठैकादशमौ शस्तौ, तृतीयौ भौम-भानुजौ।
चेन्न विद्धो ग्रहैः पञ्च, नव-द्वादशसंस्थितैः॥ १५॥
एकादशाष्टम[सं]स्थो, द्वि-चतुः-पष्ठमो बुधः।
विद्धो न द्वादशाद्येषु, नवमैस्तु ग्रहैः शुभैः॥ १६॥
शुभो द्वि-नव-षष्ठैकादश-पञ्चस्थितो गुरुः।
द्वादश-त्र्यष्ट-द्वितीयैस्तु, चतुर्थैर्न हतो यदि॥ १७॥
नवमैकादशदिक्त्र्यब्धिसंस्थितो भार्गवः शुभः।
न विद्धोऽष्टद्वितीयैस्तु, पञ्चभिर्द्वादशभिस्तथा॥ १८॥
पञ्चाद्यैकादशान्त्यैश्च, सप्तमेन हतो यदि।
मन्दार्कयोर्बुधेन्द्वश्च, न वेधः स्यात् परस्परम्॥ १९॥
वामवेधविधानेन, ग्रहा अशोभना अपि।
शुभं यच्छन्ति चेदन्ये, शुभाः स्थानेषु संस्थिताः॥ २०॥
मासं शुक्र-बुधादित्याः, सपादे द्वे दिने शशी।
भौमस्त्रिपक्षकं जीवोऽब्दं स्यात् पञ्चायनः शनिः॥ २१॥
यद्यपि स्याद् बली चन्द्रः, ताराः कृष्णेऽप्युपद्रवम्।
करोत्येवं तृतीया च, पञ्चमी सप्तमी सदा॥ २२॥
जन्म संपद् विपत् क्षेमा पापाः सौम्या भयानकाः।
मित्रातिमित्रा जन्मर्क्ष-तारा त्रिवर्तिना नव॥ २३॥
शुक्लपक्षे बली चन्द्रः, कृष्णे तारा बलीयसी।
द्वि-पञ्च-नवमाः श्रेष्ठाः, शुक्ले च शशिवत् शुभाः॥ २४॥

चन्द्र च पुष्पसकाश, लग्न फलसम विदु ।
पुष्ये नष्टे फल नास्ति, तस्माच्चन्द्रबल बलम् ॥ २५ ॥
कुज शुक्र ज्ञेन्द्वर्क ज्ञ-शुक्र जीव सौरि शनि गुरव ।
मेषा नवांशकामज मकर तुला-कुलीराद्या (?) ॥ २६ ॥
स्वगृहाद् द्वादशभागा द्रेष्कोणा प्रथम पञ्च-नवकानाम् ।
होरा विषमेऽर्केन्दो समराशौ चन्द्रतीक्ष्णांशो ॥ २७ ॥
कुजयमजीवज्ञसिता शरेन्द्रियवसुमुनीन्द्रियेशानाम् ।
विषमेषु समेषूत्क्रमेण त्रिंशांशका कल्प्या ॥ २८ ॥
समराशिषूत्क्रमेण त्रिंशांशा षड्वर्गशुद्धि ।
पुष्णन्ति शुभा भावा , मूर्त्या विघ्नन्ति सस्थिता ॥
पापा सोम्या षष्ठेऽरिघ्ना सर्वे नेष्टा व्ययाष्टमगा ॥ २९ ॥
लग्ने स्थितो दिनकर कुरुतेऽङ्गपीडा,
पृथ्वीसुतो वितनुते रुधिरप्रकोपम् ।
छायासुत प्रकुरुते बहुदु खभाज,
जीवेन्दुभार्गवबुधा सुखकान्तिदा स्यु ॥ १ ॥
दु खाग्रहा धनविनाशकरा प्रदिष्टा ,
चित्तस्थिता रविशनिश्चरभूमिपुत्रा ।
चन्द्रो बुध सुरगुरुर्भृगुनन्दनश्च,
नानाविध धनचय वितनुते धनस्य ॥ २ ॥
भानु करोति निरुज रजनीकरोति, कीर्त्याऽऽश्रय क्षितिसुत प्रचुरप्रभावम् ।
सिद्धि बुध सुधिषण सुविनीतवेष , स्त्रीणा प्रिय गुरुकरीन् रविजस्तृतीय ॥३॥
आदित्य भौम शनय सुखवर्जिताङ्ग, कुर्वन्ति जन्मनि नर सुचिर चतुर्था ।
सोमो बुध सुरगुरुर्भृगुदेहजात , सौख्य धिय नृपरतिं यशस प्रवृद्धिम् ॥ ४ ॥
भौमो रवि प्रचुरकोपगत बुधोऽपि, नि सतत शनिधरातनुजौ कुपुत्रम् ।
सौरीन्दुभार्गवगुरु सुतधामसस्थ , कुर्वन्ति पुत्रनिवह सुखिन सुरूपम् ॥ ५ ॥
मार्तण्डभूमितनुजो हतशत्रुपक्ष, पङ्गुर्नर रिपुगृहे नृपपूजनीयम् ।
का येन्दुजो मतिविहीनमनल्परोग, जीव करोति निधन विकल शशाङ्क ॥ ६ ॥
तिग्मांशु भौम रविजा किल सप्तसस्था , जाया कुकर्मनिरता तनुसततिं च ।
जीवेन्दु-शुक्र विबुधा बहुपुत्रयुक्त, धर्मान्वित जनमनोहररूपशीलम् ॥ ७ ॥
सर्वे ग्रहा दिनकरप्रमुखा नितान्त, मृत्युस्थिता विदधाति किल(?)दु खवृद्धिम् ।
शस्त्राभिघातपरपीडितगात्रयष्टि बुद्ध्या विहीनमतिरोगगणैरुपेतम् ॥ ८ ॥
धर्मस्थिता रवि शनिश्चरभूमिपुत्रा , कुर्वन्ति धर्मनिधन जनयन्त्यपुण्यम् ।
चन्द्रो बुधो भृगुसुतश्च सुरेन्द्रमन्त्री, धर्मप्रधानधिषण कुरुते मनुष्यम् ॥ ९ ॥
आदित्य भोम शनय किल कर्मसस्था , कुर्युर्नर बहुकुकर्मकर दरिद्रम् ।
चन्द्र सुकीर्तिमुशना बहुवित्तयुक्त, रूपान्वित बुध-गुरु शुभकर्मभाजाम् ॥१०॥
लाभान्वितो दिनपतिर्नृपलाभरूप, तारापतिर्बहुधन क्षतिज शतारि ।
सौम्यो विवेकरसतिं सुभग च जीव , शुक्र करोति सुधन रविज सुकान्तिम् ॥११॥
सूर्य करोति पुरुष व्ययगो विशील , काण शशी क्षितिसुतो बहुपापभाजम् ।
चन्द्रात्मजो गतधन धिषण कृशाङ्ग, शुक्रो बहुव्ययकर रविजश्च तीव्रम् ॥ १२ ॥

तं नत्थि जं न इत्थं निमित्त-गह-गणिय-मंत-तंताइं।
जं पत्थियं पयच्छइ कहेइ जं पुच्छियं सयलं ॥ २५ ॥

व्याख्या—तन्नास्ति यदिह स्तवने न भणितम्। किं तत्? निमित्तं, ग्रहगणितं, तन्त्र-मन्त्रादिकम्। औषधप्रभावो यथा—औषधादिभिः भयनिवारणं, यथा—

तरुच्छायायां वल्मीके, देवगृहे श्मशानके।
रथ्यायां भुवने कूपे, औषध्य कार्यकक्षमाः ॥ १ ॥
शरीरे धारयेद् यस्तु, विष्णुकान्तां महौषधिम्।
मार्गचौरभयं नृणां, स्वप्नेऽपि न जायते ॥ २ ॥
भृङ्गराजोद्भवं मूलं, पुष्यऋक्षे समुद्धृतम्।
वाकुमूले कृतं चैवं, चौरभयनिवारणम् ॥ ३ ॥
हलिनीशिखा कटिस्था स्थगयति कुपितोद्धतं महाव्याघ्रम्।
सिंह-सिंही श्वेता स्तम्भयति तथेश्वरी सर्पम् ॥ ४ ॥
शितशिरपुङ्खा जटिका शुभभग्रहीता शिखाग्रविनिविष्टा।
सर्पभयं विनिवारयति संशुद्धा साधुभिक्षुरिव ॥ ५ ॥
पुष्येणोत्पाटितं मूलं, चक्राङ्ग्याः समुद्भवम् (?)।
हस्ते बद्धं च तं दृष्ट्वा, दूरं गच्छन्ति पन्नगाः ॥ ६ ॥
खर्जूरीमुखमध्यस्था, कटिबद्धा च केतकी।
भुजमध्यस्थितस्तालः, सर्वायुधनिवारकः ॥ ७ ॥
कन्थार्युत्तरमूलं व्यपगतहुङ्कारमौनमाचरतः।
वक्त्रगतं शस्त्रभयं योगिन इव न च भवति सिद्धस्य ॥ ८ ॥
शाल्मली सहदेवी च, श्वेतगिरिणदीसमी।
रासिमीमूलमेतासां, लेपो घातनिवारकः ॥ ९ ॥
नातिगिरि-णदीपुष्पा, बाधो शङ्खभृता तथा।
एतासां गुटिका देहे, पश्यतां याति नाशने ॥ १० ॥
रुद्रजटा तथा मोहा, पुष्ये शिरसि संस्थिता।
मोहनं कुरुते नृणां, स्त्रीणां कार्यं च सिद्ध्यति ॥ ११ ॥
श्वेते पुनर्नवा मूलं, पीतं तन्दूलकेन हि।
न क्रमते च षण्मासं, सर्प-वृश्चिकयोर्विषम् ॥ १२ ॥

पुष्यार्के गृहीतं तथा—

नृपसहशिखजारी हस्तगोऽश्रुकन्या,
जटनररविभीता मोहपानाजवज्रा।
कुरु चतुर! चतुष्कं देहजैः पञ्चयुक्तं,
वरयुवतिनराणां स्नेहकारि प्रयुक्तम् ॥ १ ॥
१६ ३ ५ २ ७ १४ ११
षोडश-वह्न्यनङ्ग-द्वि-सप्तभुवनं रुद्रजाः।
८ १० ४ ९ ६ १२ १
वसु-देशेषु चत्वारो, ग्रह-षड्-रवि-चन्द्रमाः ॥ २ ॥
१५
तिथयोऽङ्के नृपाद्येषु, पञ्चधा लेपनं स्मृतम्।
चतुस्त्रिंशद्भिरङ्कैस्तु, पुष्यार्के सर्वफलप्रदाः ॥ ३ ॥

मुनयो दक्षिणे पार्श्वे, ग्रहाश्चैवोत्तरे स्मृता ।
भुवनान्यह्नियुग्मे च, भद्राद्या मूर्ध्नि संस्थिता ॥ ४ ॥
मध्ये रवि शशी ज्ञेयो, सर्वकार्येषु योजयेत् ।
नृपसहशिखाजारीलेपो मूर्ध्नि प्रियङ्कर ॥ ५ ॥
जारीकृष्णाञ्जलीगोरम्भाश्रुभिर्दक्षिणे तथा ।
अश्रुकन्या जटाविष्णुलेपने पादयोर्जय ॥ ६ ॥
नरश्वेतार्कभीतार्के नृपतिभिर्वामलेपनात् ।
मोहपानाजवज्राभिर्मध्यलेप प्रियङ्कर ॥ ७ ॥
एव पञ्चाङ्गलिप्तेन, त्रिदशैरपि पूज्यते ।
नृपसहशिखाजारी, धूपितात्मा वशीकर ॥ ८ ॥
कृष्णमोहागडूची हस्तानामुद्वर्त्तन वशी ।
रविवज्राजगोरम्भा नागश्च सर्वकामद ॥ ९ ॥
नरजटकुमार्यश्रुस्नान सर्वप्रियङ्करम् ।
नृपलज्जालुका मोहा, तिलक मोहन तथा ॥ १० ॥
अजागोऽश्रुकुमारीभि , लिङ्गलेप सुखङ्कर ।
नृपलज्जाकरा जारी, चूर्ण वह्नेश्च रक्षणम् ॥ ११ ॥
भीताश्वेतार्कगोरम्भा, हस्ते चूर्णेन लेपनम् ।
देहस्य जलमध्यस्य , स्वेच्छया तिष्ठति ध्रुवम् ॥ १२ ॥
नरश्वेतार्कगोरम्भा, रुदन्ती गुटिकामुखे ।
॥ १३ ॥
नृपसहजटाविष्णुलिङ्गलेपाद् भवेत् सुखम् ।
कन्याजटा करा भीता हस्तलेपा इमे जये ॥ १४ ॥
शिखाभूचम्पकार्कसहा गुटिका मुखे तथा ।
कृत्वा रात्रौ भवेन्नून निर्भय सर्वजन्तुषु ॥ १५ ॥
करासहा जटागोभिर्योनिर्लेपात् सुतो भवेत् ।
लज्जारविशिखाकन्या, चूर्ण दत्त च वश्यदम् ॥ १६ ॥
शिखागडूच्यजाकन्या, चूर्ण शत्रुदले क्षिपेत् ।
भङ्गो भवति तत्सैन्ये, एतद्योगप्रभावत ॥ १७ ॥
विष्णुनृपगडूची मेषा, गुटिकाया मुखे शुभाम् ।
तुलादिव्येन चारूढो, ध्रुव शुद्ध्यति दोषवान् ॥ १८ ॥
नृपतिनरभीतार्कलिङ्गलेपो हि द्रावको भवेत् ।
जटावज्रा सहा मोहा करलेपाच्च शीतलम् ॥ १९ ॥
फाल शिखा पानासहा मोहाचूर्ण बाणे(?) स्वके गुणे ।
निक्षिप्त च परे सैन्ये स्तम्भो भवति निश्चितम् ॥ २० ॥
पानाजाहस्तगोपादलेपाच्च स्थलजले ।
लज्जामोहार्कवज्राङ्गलेपाद् युद्धे जयो भवेत् ॥ २१ ॥
जटाशिखार्कहस्ता स्पर्शादाचरणक वशम् ।
नृपवज्राजजारीभि स्तम्भन वर्षवारणम् ॥ २२ ॥
वज्रामोहाश्रुजारीणा चूर्ण भक्षापयेत् सुधी ।
महावश्यं करोत्येव दत्त त्रैलोक्यमोहनम ॥ २३ ॥

क्षीरे कान्दकातली। अर्कतूलदमरके पूर्यगलकबन्धनात् शाकिन्यादिदोषनाशनम्। तथा सिण-बीजानि उत्काल्य यस्य यस्या वा नाम गृहीत्वा यदि सुरम्मा जायते कार्मणं कृतं केनचिद् ज्ञायते तथा तज्जलेनाङ्गप्रक्षालनाद् भव्यः।

मूलं यूथ्यथ जात्याश्चैकान्तरज्वरनाशने।
करस्थं तु तृतीयस्य शङ्खपुष्पीभवं ता (तथा?)॥ १॥

पुष्यार्के रविदिनेऽथ पूर्वाशायां शस(सस्य)ग्रहणे उत्पादि(टि)तानि मूलानि कर्मसमर्था भवन्ति। मन्त्रः—

वज्रहस्तो महाकायः, वज्रहस्तो महाबलः।
हतोऽस्ति भूमिदण्डेन, भूम्यां गच्छ महाकरः॥

"ॐ भस्मकरीं भस्मकरीं ॐ ह्रीँ ह्रीँ क्लीँ ब्लूँ सः।"

काकिन्या मूललेपैश्च, पानेन श्वानजं विषम्।
कटुका कुष्ठमञ्जिष्ठा, वचासैन्धवपिप्पली॥
शूण्ठीदर्शीद्वयानां तु, पिण्डकां सर्पसाटने॥

प्रथमं घृतेन नाभ्यङ्गः॥

शुद्धरस ग. १, गन्धक ग. २, धान्याभ्रक ग. १, चित्रकचूर्ण-गदीयाणकद्वयरसेन दिन १ मर्दयेत्। तथा लिम्बुकरसेन तथा लघुरिंगणीफलरसेन त्रिकटुकसूक्ष्मचूर्णस्य गलितजलेन एभिर्दिनैकैकं मर्दयेत्। ततो पीता श्वेता वा कपर्दिकामध्ये चूर्ण क्षेपणीयम्, गाढं निभृत्य धान्याभ्रकं अर्कक्षीरेण मर्द-यित्वा उत्परे देयम्, साकम्भरीयलूण ग. १, सैन्धव वा. ४, नवसार वा. ४, साजी वा. २, साजी एव ग. ३, सरावेऽध उर्ध्वं कपर्दिकायां दत्त्वा लिम्बूकबीजपूरकस्य वा रसं देयम्, तापे वा धारणीयम्, दिन २ निरन्तरं श्वेदनीयम्। ततो द्वितीयं सरावं दत्त्वा पुटितगर्त्तायां आजानुप्रमाणायां कारसिमध्ये पुटेत् दिन ३ पक्वचूर्णं भवति॥

मरीच ग. १, पिंपली ग. ३, चित्रकरसेन मर्दयित्वा पूर्वौषधमध्ये क्षिपेत्। अस्य वा १ वेला द्वित्रयेण घटिकैकायां दहेत्। क्षुधा भवति, तृतीयदिने पुनर्दहेत्। सर्वरोगेषु मधुराहारो देयः। दिन ८ मैथुनं वर्जनीयम्। कामं चलं स्थलं उद्यमं च जायते। तैलं वृन्ताकादि वर्जनीयम्। पादाभ्यङ्गोऽपि न कार्यः॥

तथा शुद्धरस ग. ५, धान्याभ्रक ग. ५, काञ्जिकेन राजसमीपत्राणि कुट्टयित्वा रसं ग्राह्यम्, विश्राम्य आञ्छि उत्तार्य तेन दिनैकं मर्दनीयौ, तथा सूरणजलकन्दरसेण मर्दयेत् दिन १, सिग्रूमूलजलं तथा रसेन दिन १, रिंगणी २, तथा मूलजलरसेन दिन १, पाटनीपानजलेन तथा शुद्धरसेन दि. १, चित्रमूलरसेन शुद्धरसे दिन १, वत्सनाग ग. ५, जलेन कुट्टयित्वा शुद्धरसेन दि. ५, तथा त्रिकटुकशुद्ध-रसेन दि. ३। गोमूत्रदाथरायोगेन शुद्धगन्धक ग. ५, सर्वं धत्तूरकरसेन अव्लजम्बीररसेन वा पुनः २, सरावमध्ये लोहभाण्डे वा तापे धारयेत्, परं हीरा वा. ५। भस्ममध्ये कृत्वा दिन ७, ततः कपर्दिकायां क्षेपयित्वा पूर्ववद् मुखेऽभ्रकं, ततो लिम्बुकरसमध्ये तापे धारयेत् दिन ७, ततः कायाः आकृष्य कल्मषं

यत्नेनोचारणीयम्, यत् समसरानसपुट हण्डिकाया वेलुका पूर्य निरुन्ध्य मन्दमग्निं प्रज्वालयेत् । प्रहर ८ भस्म भवति, मरीच, तवक्षीर ग ५, एकत्र वाल १, द्वि त्रिवेलाया ददेत् । घटिकैकया विश्रामे पूर्वाया च नवनीतेन देयम् । वर्षे २१ यावत् चटति दिन २७ मैथुन वर्जनीयम् । ताप च ऊर्ध्वे प्रबले सति न वर्जनीय । लोकेश्वरपोटलिकाभिधाना तथा तैल वृन्ताक च देय उत्तरति ॥ तथा वज्रमारणम्—

माक्षीकधौतसत्त्वानि पचेज्जम्बीरलुम्बुके ।
रक्तेस्ते वज्रक सप्तशति स्यादञ्जन परम् ॥ १ ॥

यन्त्र न० १२

नृप १६ मृगराज	सह ३ सहदवी	शिखा १३ मयूरशिखा	जारिपुत्र जा	२ २
सीता ९ लज्जालुरा	उन्मत्तक ६ मोहतीवर	पुना १२ इद्रवारुणी गडूचीव	हस्त ७ कृता	जली
भावे ४ श्वेतार्क	पत्रिका पाषाण ते		रोचनागो १४	नागा रभा दवी पच
विष्णुकांता नर ५ नेलु कावा	वजा १५ तुष्ट	इन्दुजा १ मेष शृगी	ब्रह्मारक च	श्रु ११
	जराह १० द्राजटा	कन्या ८ कुमारी	अ	रुदती

वज्रा भूनागविष्टालिप्तमुखाया कृता स्थिरा ।
तदुपरि धूत नाग पक्षेक मृदवस्तया ॥ २ ॥

बहवो भवन्त्येकत्र ढक्कनेन—

तालकलितवज्राश्च, स्नुहीमध्ये पुटान्मृता ।
गुडमध्ये पुटेदेव, मारण रेखपूरकम् ॥ ३ ॥
वज्रकन्दे पुटेत् सप्तवटवट पिप्पले (लेश्व ?) ।
श्रीणि च धारणीभ्यो क्षारवीडे धमेन्मृत ॥ ४ ॥

शुद्धरस ग ५, प्रथम शुल्वपत्राणि तापे अपक्वदुग्धमध्येऽर्द्धार्द्धन धारयेत् २१ आकर्ष्य गन्धक भा १, सैधव भा २, लिम्बुकरसेन प्रलेप्य पुट देयम् । अस्य भस्म ग ५, अम्लेन रस मर्दयेत्, यावन्नष्ट पिष्ट भवति । क्षार ५, लवण ५, गलत्थाः जल तेन शुद्धरसेन मर्द्य दिन ३ सूर्यतापे मर्दन लोहपात्रे लोहमर्दकेन अपामार्ग-कोहलीपत्र-काष्ठानि दि ३ धत्तूरक अर्कस्नुही कुरु लासरिका कुमारी पिंपलीत्वचा करीरत्वचा डङ्गोरीत्वचा एव काष्ठानि दहेत् । गोमूत्रेण उल्हापेत । ततो जलेनोल्कास्य तत स्वच्छजलेन मर्दयेत् दिन ७ सूर्यतापे । चित्रकमूलत्वचा जलेन शुद्धे दिन ७ तथा पूर्ववत् । त्रिकटुकजलेन दि ७ सूर्यतापे । तत सरावसपुटे हण्डिकायन्त्रे लवणपूर्णाया निरुन्ध्य चूल्हाधो धारयेत् दिन २१ निष्पन्नरस । वडवानल वालुकेला द्वि-त्रयेण देय । द्विदिन टालयित्वा पुनर्पुनर्देयम् । तक्र दुग्ध अम्ल मधुर च वर्जनीयम्, जलोदराणि नाशयति । दिन २१ दान्तिस्तथा मिश्रित कृत्वाऽन्येपूदरे केनल्गुल्मादि तथाऽस्मजातक्षयरोग-पाण्डुरोगाणा शर्करया सह उत्तरे दुग्धवाटउ १ पिबेत् सन्निपातस्य मरिचेन सह ॥

रस ग. १, गन्धक ग. २ खल्वे मर्द्य काजलीकृत्वा त्रिफला ग. ३, त्रिकटुक ग. ३, वज ग. १, चित्रक ग. १, विडंग ग. १, मुस्ता ग. १, पुनर्नवा ग. १, भांगि १५, गुल ग. ३०, वत्सनाग ग. १, आधिकेसररसनामचनकप्रमाणगुटिकां सर्वव्याधिषु दीयते। एतैरौषधैः प्रमाण हिङ्गुल १ अर्कपत्ररसेन गुटिका गुडडालितचनकप्रमाणगुटिका चोलकुमारनामा सर्वव्याधिसर्वप्रसूतानां दीयते। एतैरौषधैः प्रमाणं हिङ्गुं टालयित्वा वज्रक्षीरेण गुटिकां जोवारिकणप्रमाणां सर्वप्रसूतानां पालवणं चोखा तन्दूलोदकं द्रेचः (देयम्) **वज्रभेदरसः** ॥

रस ग. १, नाग ग. २, तैलं सारयित्वा मरीच ग. १, वत्सनाग ग. १, खल्वे मर्दयित्वा चूर्ण कृत्वा मेघनादः। शुल्व ग. ८ दिन १ आंविलीपत्ररस आरनाल शोधनीय रस वा. ८ आंविलीपत्तु आरनाल दिन २ उत्काल्य हाण्डीमध्ये गन्धक ८ अध ऊर्ध्वं सरावं निरुन्धयित्वा पुटेत्। गजपुटं अभ्रक ग. ८ नीलीरसेन मर्द्य तथा निर्गुण्डीरसेन च। अथ त्रिफलागोमूत्रेण च एवं पुट ४ अमृतं ग. १, रस ग. ३, गन्धक ग. ५ काजलीं कृत्वा एकीकृत्य मर्दनीयः **पञ्चामृतरसः** ॥

रस ग. १, अमृत वाल १, गन्धक ग. ४ घृतकदलीपत्रउपरे पत्रं लघुपटं पापडीयारसः, ताप्यं च अतिसारे देयम् ॥

रस ग. १, अमृत वा. १, गन्धक वा. २, काजलीं कृत्वा कुम्पकमध्ये निर्गुण्डीरसेन प्रहर २४ निरुन्ध्य वालुकायन्त्रे प्रहर ३ **भस्मार्करसः** ॥

अथ रस ग. १ शुद्धगन्धक ग. २, नागवेलिपत्ररसेन वार ७, तथा कुमारीरसेन वार ७, मेघनाद ७, पुनर्नवा ७, निर्गुण्डी ७, गोमूत्र ७, तथा वहुफली ग. १, पिप्पलीमूल ग. १, लिंवरस ग. १, नाइ ग. १ सर्व एकीकृत्य मर्दनीयं **भस्मसूतकम्** ॥

क्षुधाकरः। हरीयालपल ६, मेघनादरसः भावना १०८। ततः कण्टासेलक १, अधोपुष्पी २, शङ्खपुष्पी ३, अपामार्ग ४, पुनर्नवा ५, भृङ्गराज ६, हरिद्रा ७, चित्रक ८, लिम्ब ९, धतूरा १०, श्वेतवटुक ११—एकादश औषधानां प्रत्येकं भावना ७, गन्धक प. २, रस २, जम्बीररसेन मर्दनीयः। पूर्वऔषधाना मध्ये तथा सैन्धवचास १ आरनालेन छण्टनीयः। तैलविन्दु १—एवं एकीकृत्य भाध वच्छनाग भा. १ एकत्र मर्दनीयम् **वृद्धभस्मसूतकः** ॥

सर्वकुष्ठक्षुधाश्लेष्मणा देयम्। दक्खू नमोदारासिंहकम्पेलकखदिरकाथचतुर्णां प्रलेपेन भिल्लातकपाल्वणम्। भिल्लातक ६०० तिलमाणं १, वावची ना. १ गुल म० ॥ गन्धकपल ४—एवं भागत्रयं कारयेत्। भागद्वयेन गुटिका ९० वन्धनीया। तृतीया पिण्डिकाश्च तिलतैल सो. १, अभ्यङ्गदिन ४५ मध्यमकुष्ठसैन्धवं गलितमण्डलिकवाधिर्यं नाशयति ॥

तन्दुलैकद्विदद्रुमयोः क्षिप्रचटिका कृता।
पक्का च वीजतोयेन सटिके नाशिकादिके ॥

दिनङ्गदेया। भोजने ओदनं माघुना चक्रमर्दकचूर्णं सामदाक्या सप्त भावितं वधिरमण्डले देयम्, गद्याणैकं दिनं प्रति ॥ १ ॥

त्रिफला सचरीचूर्ण सम्लाशे गन्धक कृतम्।
कृष्णमण्डलके देय विनाशाय पुन पुन ॥ ३ ॥

अतोऽष्टादशप्रसूतहरण पित्तप्रसूतलक्षणम्—

प्रथम अजीर्णे रसं शरीरे तेजस्ताप करोति। चटकाश्च रक्तमण्डलानि भवन्ति। हस्तपादल्लाटे दाघ स्यात्। केतकीसुमानि गोरमृत्तिकया लेपयेत्। खदिराङ्गारैस्तापयेत्, रात्रौ वारे धृत्वा प्रभाते उदूखले खण्डयेत्। रस ग्राह्य तद् रस उत्काल्य तृतीयाश ग्राह्यम्। एतस्य पली २ शर्करा वा ४ उपजीवयेत् दिन ३। ततो रामपुरीपथ्या चूर्णक १, पानीयक १ उत्काल्य तृतीयाश क्राथ पिबेत्। दिन ३, पश्चात् बदरीअतरत्वचा चूर्ण क १, जल क १ तृतीयाश पिबेत्। तत खदिरत्वक्चूर्णक १, उदक क १ तृतीयाश पिबेत् दि ३ एव शोधनम्॥ ५ दिन ३ तापे दाघ शोष च चटका उपशमन्ति॥ पश्चात् औषध खदिर अतरत्वक् भा १, पलाशत्वक् भा २, बीयावृक्षत्वक् वा २ एकत्र चूर्ण कृत्वा उत्कालयेत्। पानीयघट १६ पष्ठमाश गृहीत्वा क्राथ, तत पाडयावृक्षचूर्ण भा १, जीर्णपिचुमन्दत्वक् भा २, व्याधिघातकवृक्षत्वक् चूर्ण भा १—एव भा ३, त्रिफला भा ४, उभय भा ३, उभय भा ७ एकत्र क्राथेन गुटिका आमलकप्रमाणा दिन प्रति बाह्ये तदुद्वर्त्तनम्। जातीफल भा १, टाकण भा ४, हरिद्रा भा १६, उपलेट भा १६, हीमज हरीतकी भा २५६, प्रपुन्नाट भा १०२४, सूक्ष्मचूर्ण जनक जिनोद्वर्त्तनम्। **पित्तप्रसूतउपशमनप्रयोगः ॥**

श्रीराजवातप्रसूतचिकित्सा यथा—

प्रचलक्षुधा स्त्रीसेवाहेव्यासप्रबला शरीरे प्रस्वेदा गौरवर्णमण्डलानि बधिराणि भवन्ति। तापोऽधिको भवति तस्योपधम्। शुद्धो सोमराजीचूर्ण भा १, प्रपुन्नाट चूर्ण भा १, कृष्णतिल भा १, पाडलवृक्षत्वक् भा १, पिचुमन्दत्वक् भा १, त्रिफला भा ३—एव भा ९ चूर्ण कृत्वा बिडालपदमात्र प्रात अपराह्णे वेलाद्वय देयात्। वार ७ उद्वर्त्तन यथापूर्व कथित वातप्रसूत प्रणश्यति॥

अत श्लेष्मप्रसूतचिकित्सा—

आदो देहे कण्डुमनन्तर विचचिकासदृश सदृशानि खसराणि भवन्ति पुतिर्निर्गच्छति। कण्डुका भवति, श्यामा भवति, क्षुधा प्रबला चित्तभ्रम, तस्योपधम्—सहचर भा १, गुलीजीभ भा १, उपलोट भा १, त्रिफला भा ३, आनिरी रोमी वृक्षत्वक् भा १ त्रिकटुक ३, मिंढी आमलि भा १, व्याधिघातकवृक्षत्वक् भा १, चित्रक भा १, वज भा १, विडग भा १—एव औषध १६ एकत्र मधुघृतेन गुटिका बदिरप्रमाणा, वेलाद्वयेन गुटिका २ देया, बाह्ये उद्वर्त्तनम् अश्वत्थवृक्षत्वक्चूर्ण गोमूत्रेण उद्वर्त्तनमेव दिन प्रति श्लेष्मकुष्ठनाशने प्रयोग ॥

उदरकुष्ठचिकित्सा यथा—

उदम्बरउदराणि भवन्ति। शरीरे ताप करोति, प्रस्वेदो भवति, घर्घरशब्द करोति, अतिक्षुधा गलति हस्त-पादादिक, श्यामा करोति, अत ओपधपूर्व पित्तक्रिया कार्या, उद्वर्त्तन श्रीराजपूर्वोक्त तैल कथ्यते, सर्षपतैल क ४, पकइन्द्रवारुणीफलानि लक्षचूर्णतैलेन पचेत्, तेन गात्रमभ्यञ्जयेत्। बाह्ये

उद्वर्त्तनं उदम्बरनाशः। विचर्चिकाकुष्ठक्रिया। पाद ऊर्ध्वे दातुं प्रमाणमात्रे भवति, जोवारिकणसदृशा स्फोटकाचेपं निर्गच्छति, तत्र स्थाने तेजः करोति। महाकण्डु भवति, औषधं त्रिफलाचूर्ण भा. ३, पिचुमन्दचूर्ण भा. ३, विडङ्ग भा. १, चित्रक भा. १, वज भा. १—चूर्ण कृत्वा भक्षयेत्। बाह्ये तैलं नालिकेर कोपरा भा. १, सिंचलि भा. १, दांति भा. १, सोमराजी वीज भा. १, चणा भा. १, उन्मत्तक वीज भा. १, तुम्बिनीवीज भा. १, सिणवीज भा. १—एते (तानि) अष्टौषधानि सर्षपरि···· तैलेनाभोग्य पातालयन्त्रे तैलं अन्धपात्रे। औषधानि अतिविष भा. १, सूंचल भा. १—एवं भागं सूक्ष्मचूर्ण कृत्वा अधःपात्रे क्षेपयेत्। तैलं पात्यते, अनेनाभ्यङ्गयेत्। **विचर्चिकानाशः** ॥

अतश्चतुर्विधदद्रुः कथ्यते—

रसदद्रुः, चर्मदद्रुः, गजदद्रुः, कर्कुटदद्रुः तृणपत्ररस भा. १, वलपत्ररस भा. १, वमनीपत्ररस भा. १, सामुद्रक भा. १, रक्तगुञ्जाचूर्ण भा. १—एकत्र कृत्वा ताम्रपात्रे कञ्जिकेन सह सूर्यतापे धारयेत् यावन्नीलवर्ण भवति, दिन ३ पश्चाद् दद्रुं छाणकेन घर्षयित्वा लेपयेत्। पश्चात् श्रीरागउद्वर्त्तनं कार्यम्, **चतुर्विधदद्रुं नाशयति** ॥ महाक्षारं कथ्यते—

अर्कपत्रस्तप १, सामुद्रिक १, कनकफलपाली २, थोहरकाष्ठ हाथ २, भिल्लातकः ५०, सोमराजीफल पाली २—गोमूत्रेण सर्वाणि औषधानि मर्दयेत्। पश्चाद् दृढकुम्भनिरुन्धनं कृत्वा सूर्यतापे शोषयित्वा पुटेत्। पुनः पुनः उपरि भस्म शुभ्रम्। अत औषधानि भा. ३, त्रिकटुक भा. ३, वज भा. ३, विडङ्ग भा. ३, चित्रक भा. १, पुनर्नवा भा. १, कुष्ठ भा. १, जीराद्वय भा. २, अजमोद भा. १, ल्हसण भा. १, हिङ्गु भा. १, सिन्धव-सौवर्चल भा. १—एतेषां सूक्ष्मं चूर्ण कृत्वा पूर्वक्षारसमं मेलयित्वा सर्वोदरव्याधिषु देयम्, पित्ते न हि।

प्रमेहे मूशलीचूर्णं, गडूची-सत्त्वसंयुतम्।
दुग्धाज्यमधुनो देयं, प्रमेहं नाशयेद् ध्रुवम्॥

शुद्धसोम भा. १, आंवला भा. १, लिम्ब अन्तरत्वक् भा. १—त्रयाणां भूकी नवतर झिणि हिणी पित्तविषये॥

रस ग. १, वच्छनाग वा. २, गन्धक ग. २, एकत्र मर्दयेत् कज्जलिका स्यात्। ततः खल्वे भल्लातकफलेन प्रहर १ मर्दयेत्। चित्रकरसेन घटिका ४ मर्दनं कृत्वा काचकुम्भके प्रक्षिप्य कपडां मार्टी दत्त्वा वालुकायन्त्रेऽधोमुखकुम्भकं कृत्वा दीपशिखावह्नौ प्रहर ३ पाकः कार्यः। निष्पन्नरसो भवति।

सोमराजीफलानि गोमूत्रमध्ये धारयेत्। प्रहर ८ तुसान्युत्तार्य स्तुक्षाग्रं धारयेत्, ततो गोमूत्रं उत्कालयेत्, घृतसदृशस्तम्भितेन सिद्धरस भा. १, साधितसोम भा. ३, स्तम्भितमूत्रेण गुटिका २१ तथा दुग्ध सेर १ मध्ये सोमा विडालपदमात्रं, तस्याः पत्राणां चूर्ण तन्मात्रं प्रक्षिप्य आध्रकर्ण देयम्। दधि भवति, मन्थयेत्, छासि रोगिणो देया, घृतं च। तेन घृतेन गुटिका २१ आदौ समुहूर्ते गोमूत्रगुटिका आमलकप्रमाणा दिनं प्रति देया। चतुर्थे दिने श्वेतस्थाने स्फोटका जायन्ते। प्रथमसप्तके गोमूत्रगुटिका। द्वितीयसप्तके मधुगुटिका। तृतीयसप्तके घृतगुटिका। सप्तकैकोर्ध्वं शुद्धसोमा, तथा छायायां शुष्कप्रमाणां

शुद्धगोमूत्रेण गुटिका, वास्ते लेप । तिलका भवन्ति । तृतीये वर्णे पतति । एव दिन २१ तथा पुन पुन दिन ६ पश्चात् वा स्यात् । पष्टितन्दुलोदक भोजने । दुग्ध घृत छासिं च शुद्धा । आमला भा १, बहेडा भा २, हरीतकी भा ३, विडग भा ४, चित्रक भा ५, भिल्लातक भा ६, सोमराजी भा ७, लोहचूर्ण भा ८, भृङ्गराज भा ९ कालुनरी भा १०, चूर्ण ग ३, तन्मध्ये रस ग १, गन्धक ग २, मूर्छार्थं पूर्वौपध ग ३, मध्ये कृत्वा अम्लतक्रेण पिबेत् । मुखे गुलमेला २, गल्वामध्ये धारयेत् । बाह्ये कटुतैलेनाभ्यङ्गयेत् । तापे धार्यते, सप्तकेन जायन्ते । सोमराजी गोमूत्र दिन ३, तत प्रक्षाल्य चूर्ण, ततो मूलकायभावना १, खदिरभावना १, कालुनरीकाथभावना १, भङ्गराज भा १, अस्य भा १, त्रिफला मारितभावारितरलोह भा १, उभय ग ३, स्फोटकान्तर अम्ल तक्र पिबेत् । अम्ल क्षाराम्ल वर्जयेत् ।

तथा स्फोटकार्थे द्वितीयो योगो यथा—चित्रक भा ४, विडग भा ४, तालग भा ४, कृतनालक भा ४, गुल भा ४, भल्लातक भा १४, रस भा ६, गन्धक भा ८—एतच्चूर्ण ग ३ माता तक्रेण पिबेत् । दिन ७ वाले कटुतिलेनाल्प(भ्यङ्गम्) । शेष पूर्ववत् ॥

तथा तृतीयो योग—गन्धक ग १, चित्रकसद्यचूर्णत्वचा ग १, शुद्धसोमा ग १—त्रयाणा चूर्ण घोलेन सह क १ पिबेत् । बाह्ये प्रलेपो यथा—पूर्वत्रयाणा चूर्ण दुग्धमध्ये कृत्वा आधुकण देय दधि भवति, तस्य घृत तेन प्रलेप । सप्तकेन श्वेतचित्रस्थाने स्फोटका जायन्ते । ततो गोमूत्रेण शुद्धा सोमा गुटिका ताम्रभाजने स्नेहेन सह नीलवर्णेन घृष्ट्वा, ततो बाह्ये प्रलेपो देय । तावद् यावद् वर्णे पतति । स्तोकचित्रे बाह्योत्पाटनविधि—नालिकेर कोपरा भा १, सीसव त्वचा भा १, भल्लातक भा १, दन्तीत्वचा भा २—एकत्र कृत्वा सर्षपतिलेनाभ्यङ्गय पातालयन्त्रे तैलम्, श्वेतपापनि छाणखण्डेनोत्पाट्य तैलेनाभ्यङ्गयेत् पाचयति । ततस्तिलतैलेन यावत् शेजति, अनया रीत्या तृतीयवेलाया श्वेतपापण नाशयति तथा उत्पाट ज्वालामुख्या ।

अथ सद्य त्रिकमूलेन तथा तेजत्तयरी-सज्जिकाहरितालकृष्णधत्तूरकक्षारु शिशिरटक्षारु श्वेत ऊप भा ६—सर्वेपा आरासणानुना । खण्डिका भा ६, उभय भा १२ सूक्ष्म कृत्वा कसीसपानीयेन वर्चयित्वा श्वेतव्रण छाणखण्डेन घर्षयित्वा लेपो देय, उत्पतन्ति । तत कुङ्कुम प्रधान लिम्बुकरसेन आमाम्लेन च प्रलेपो देय, यावद् वहति । तथा गन्धा रोहउदो हलिद्दाइ हरियाल तह मणसिलाइ-सहिओ तिलतिले पाइमीसियउ नवपत्रि रविचिन रणि तत्तउ दिन ७ दद्रु विगि चीपा च खसुज्झित्त न गणेइ सर्ति हिलेविहिलेवियउ कोढु विपल येइ नेइ ॥

मध्ये त्रिफला भा ९, लोहपत्री भा १, खदिरकाथ भावना ७, गोमूत्रकाथ भावना ७, भृङ्गराज भावना ७, रस भा १, गन्धक भा १, कज्जलिकामध्ये कृत्वा दिन प्रति वाल १२, कुयति गन्धक ग १, शुद्धसोमा ग १, कृष्णोदम्बरिका ग १—त्रयाणा चूर्ण दुग्ध भ १ मध्ये कृत्वा आधयेत् दधि भवति । घोल कृत्वा पिबेत्, विस्फोटका जायन्ते । श्वेतचित्रकटुतैलेनाभ्यङ्गय तापे सणक सराते निराते यथा स्थातव्यम् । तृतीये सप्तके मध्यत्रयाणा चूर्ण जलेन पातव्यम् । पटि चोला खाडु दुग्ध घृतभोजी । तथा मग कृष्णचोला क्षिप्रचटिका घृत भोजने बाह्ये श्रथा बावची कृष्णोदम्बरिकयोर्लेप वर्णे पतति । तथा, रोप्कवण-सटकाहनालिके मध्ये भृङ्गराजरसु इन्द्रवारुणीपत्ररस जासूणपुष्परस—एतैर्भरणीयम् । मृत्तिकया निरुन्ध्य भूमिमध्ये कृत्वा मृत्तिकया पूर्नमुत्पाट्य पुट देय स्तोकस्तोकेन तेन मध्ये भागेन प्रलेपन वर्णे पतति ॥

हेम ग. १, तार ग. ३, रस १६, पीठी शुद्ध शुल्व ग. १२ पत्राणि लेप्यं पुटेत् तुलनु पुटम् ॥

अथ पञ्चामृतरसः—

कृतलोहस्य भागाष्टौ, गन्धकामृतपूषणम्।
अमृताभ्रस्य चाष्टौ, चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ १ ॥
.... ।
.... काचकुम्पे दिनद्वयम् ॥ २ ॥
पचितं वालुकायन्त्रे, वह्निचूर्णं रसायनम्।
गुञ्जामात्रं ततो वृद्ध्या, देयं कुशेत्कये शुभम् ॥ ३ ॥
गौडे कसी च वालाके लताकसीचकाञ्जुपः।
सौराष्ट्रायां अगिनु, अर्बुदविषये कौङ्कणे अलिन्तु (?) ॥ ४ ॥
राजचर्म्पं तथा चाम्लपत्राणि सदृशानि च।
तेषां रसेन संभाव्य, लोहचारितरं भवेत् ॥ ५ ॥
षष्टितन्दूलसंमिश्रं, मीमाख्यो(ख्य)रसमारितम्।
लोहपत्रैस्तथा हंसगन्धकैर्मुनिसंयुतः ॥ ६ ॥
स्त्रीपुष्पैः सप्तवारांश्च, सरपुङ्खारसैः पुनः।
सजलनालिकेरे सूक्ष्मं दिनान्येकविंशतिः ॥ ७ ॥
आमलकरसं मध्ये, तापेऽवधारयेत् ततः।
गलायतुं कवालयेत्, मधुना वालतुर्यकाम् ॥ ८ ॥
विविधं गगमृमभक्ष्यं, कीटं च काचपत्रं करोति।
विकृतिं कीटं तु ग्लानुदं तथा काचम् (?) ॥ ९ ॥
कृष्णाभ्रं हृतहारसेन सप्तभावितम्।
सटङ्कणं धमेत् खोटं काटं वर्गधकेन तु ॥ १० ॥
पुनर्धर्मं भवेद् भस्म, मृतं च रसायनम्।
कृष्णाभ्रताम्हि भस्मं च, गन्धकरसकज्जली ॥ ११ ॥
शुल्वचूर्णं समं सर्वं, मर्दितं त्रिफलाजलैः।
वालुकायन्त्रके पक्वं, यामाष्टौ सर्वरोगहम् ॥ १२ ॥
पञ्चामृतं रसं देयं, शुद्धं चटितमातृकम्।
रसस्य त्रिगुणं गन्धकज्जलीं भावयेत् ततः ॥ १३ ॥
मीणारञ्जमहूसारकम्बीरछुण्ढिबीजकैः।
पानाकाय फलव्योषदेवफलैस्तु सप्तधा ॥ १४ ॥
सैकोत्तरे पलाकत्रिभागमेकत्र कारयेत्।
भैरवः सन्निपातेषु, रसः कपालवातजैः ॥ १५ ॥

दोषस्य निग्रहे नाशो राताष (?) देयो ज्ञात्वाऽनुमानतः।
काचतुरनन्तरं वा. ४, ततो जलं करणीयम्, पथ्ये साकर करंबउ देयः ॥

इति रसायनं समाप्तम् ॥

तिहुयणसामिणिविज्जा महमंतो मूलमंत-तत्ततियं।
इत्थ ठियं पि न नज्जइ गुरूवएसं विणा सम्मं ॥ २६ ॥ [३०]

यथा देववन्दनाया पर्यन्ते अष्टा(ष्टमा)धिकारे गाथायुगलेन जिन वीरमेकगाथया, तथा द्वितीयगाथया श्रीवर्द्धमान भावजिन, यतोऽस्य शासन वर्तते, अन्तो वन्दितम् । तथाऽस्मिन् स्तवनेऽपि त्रिभुवनस्वामिन श्रीवर्द्धमानस्य विद्या । तथा महामन्त्रोऽपि श्रीवीरस्वामिन तथा मूलमन्त्रोऽपि च । तथा चाह श्रीवर्द्धमानस्य धर्मचक्रम् । सर्वेषा तीर्थङ्कराणा धर्मचक्र भवति यावदन्त तीर्थं वर्तते तावत् काल तस्य धर्मचक्रम् । साप्रत श्रीवर्धमानतीर्थं च वतते ततो धर्मचक्र, श्रीवर्धमानस्वामिनी विद्या, समूलमन्त्र च । तथा चाह–**महानिशीथस्तवने** कथित यथा—

"अरिहाण नमो पूय०" [इत्यादि षट्त्रिंशद्गाथात्मक स्तोत्रमेतत्सग्रहेऽन्यत्रोपन्यस्तत्वान्नात्र लिख्यते । पश्चात् पञ्चपरमेष्ठिचक्रापरनामचक्रोद्धारविधि , ध्यानविधि , आत्मरक्षाविधि , षट्कर्मविधिरित्यादिविषया आलेखितास्तेऽपि अस्मिन् सग्रहे सत्त्वान्नात्र पुनरुल्लिख्यन्ते ॥]

सतिनाह सासणसुय-खित्तदेवया समस्तदेवा वचाण—"ॐ **नमो अरहओ भगवओ सिज्झउ मे भगवई जयवीरे सेणवीरे वद्धमाणवीरे जये विजये जयते अपराजिए स्वाहा ॥"**

जिणमुद्द १ कलस २ परमिट्ठी ३ अग ४ मजलि ५ तहासणा ६ चक्का ७ ।
सुरही ८ ह्री ९ पवयया १० गुरु वा ११ सोहव ११ तहजली १२ चेव ॥
तओ गुरुभि सिज्ज अणुजा अणुजाणइ वद्धमाणविज्ज से ।
देइ पयट्टा य भते अणुजाणइ पचारण अट्टारणाइ विहि त्ति ॥

" ॐ नमो भगवओ महईमहावीरवद्धमाणसामिस्स सिज्झउ मे महई महाविज्जा वीरे जयते अपराजिए ॐ ह्रीँ स्वाहा ॥"–एष वर्धमानमन्त्र ॥

"ॐ क्ष्ण (क्ष)"–अधिवासनायन्त्र ।

तथा–"**ॐ ह्रीँ हूँ नमः वीराय स्वाहा**"–प्रतिष्ठामन्त्र ॥

एतेऽनुजाप्यन्ते उपाध्यायस्य दाहिणकन्ने पचाए लग्गवेलाए इम विज्ज वार ३ कहेइ ॥

"ॐ नमो अरहंताण, ॐ नमो सिद्धाण, ॐ नमो आयरियाण, ॐ नमो उवज्झायाण, ॐ नमो लोए सव्वसाहूण, ॐ नमो ओहिजिणाण, ॐ नमो परमोहिजिणाणं, ॐ नमो सव्वोहिजिणाण, ॐ नमो अणतोहिजिणाण, ॐ नमो भगवओ अरहओ महावीरस्स सिज्झउ मे भगवई महई महाविज्जा वीरे महावीरे सेणवीरे जये विजये जयते अपराजिए अणिहए ॐ ह्रीँ स्वाहा ॥"

उवयारो वा चउत्थेण साहिज्जइ ।

"ॐ नमो खीरासवलद्धीण, ॐ नमो महुआसवलद्धीण, ॐ नमो सभिन्नसोयाण, ॐ नमो पयाणुसारीण, ॐ नमो कुट्ठगबुद्धीण, जमिय विज्ज पउजामि सा मे विज्जा पसिज्झउ ॥"

"ॐ अवतर सोमे सोमे कुरु कुरु, ॐ वग्गु निवग्गु सुमणे सोमणसे महु महुरे ॐ फट् स्वाहा ॥"–अधिवासनामन्त्र ।

तथा सुश्रावकस्य त्रिभुवनस्वामिनीविद्या, महामन्त्र , मूलमन्त्र , इति तत्त्वत्रिकम् । तथा देव-गुरु-धर्मविषये देवता महावीर । मणि-कनक-रत्नप्राकारत्रयमध्यस्थ अशोकवृक्षतले रत्नमयसिंहासने चतुर्विध

छत्रत्रयविभूषितं पूर्वाभिमुखं देवं ध्यात्वा, ततः आग्नेयादि श्रीगौतमस्वामिप्रभृतिद्वादशपरिच्छदयुतं देवं १, गुरुगौतमादिगणधराह्वानं कृत्वा २, धर्मचक्रमग्रे ३, स्थितं ध्यायेत्। इति आचार्योपाध्यायैर्ध्यातव्यम्।

"अरिहाण नमो पूयं०" इत्यादिकथितमन्यैः साधुभिर्न ध्यातव्यम्, दुर्गन्धमलिनगात्रत्वात्, आशातनाभयाच्च। तथा मन्त्रः चतुःसप्तति अक्षरप्रमाणं, यथा—

"ॐ नमो भगवओ वद्धमाणसामिस्स जस्सेयं चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जुए वा रणे वा रायंगणे वा वाहणे वंधणे मोहणे थंभणे ॐ सव्वसत्ताणं अपराजिओ भवामि स्वाहा ॥"

अथ महावीरस्तवनम् ॥

सुरविहियसमोसरणं महिमंडलमंडनं महावीरं।
संभरह भरहखित्तम्मि संपयं पयडतित्थयरं ॥ १ ॥
आसाढसियछट्ठीए पाणयपुप्फोत्तराउ अवयरियं।
कुंडग्गामे सिद्धत्थपणइणीतिसलाओ उयरम्मि ॥ २ ॥
चित्तसियतेरसीए सुरगिरिसिंहासणम्मि इंदेहिं।
ण्हवियं कुंकुमचंदणसव्वोसहिसुरहिदव्वेहिं ॥ ३ ॥
कंचणवन्नं वरसीहलंछणं सुसत्तहत्थउच्चत्तं।
मग्गसिरकसिणदसमीइ वरिसदाणेण निक्खत्तं ॥ ४ ॥
माहवसियदसमीए केवललच्छीए गाढमुवगूढं।
कत्तिय अमावसाए सिद्धिम पावाइ छट्ठेणं ॥ ५ ॥
मणि-कणय-रयणनिम्मियपायारब्भिंतरे असोयतले।
चउदेहं छत्ततयं कयरेहं चलियचमरोहं ॥ ६ ॥
अग्गेयाइ विदिसाए ठियसिरिगोयमाइपरिसाए।
वारसयं सहिलासं सुयधम्मं रम्मओसरणं ॥ ७ ॥
उदयंतकोडिदिणयर जलंतगुरु धम्मचक्ककिरणेहिं।
आयासं पायालं उज्जोयंतं महियलं च ॥ ८ ॥
'पणव-नमो भगवओ' पभिई चउसहियसयरवन्नेहिं।
साहंतेहिं सिरिवद्धमाणसामिस्स सहिरेहिं ॥ ९ ॥
रण-रायंगण-जुए-जंभण-थंभण-मोहणकरेहिं।
अपराजिओ भवामि सव्वेसिं जीवसत्ताणं ॥ १० ॥
वंभेण सालयावाईयासुभूसयण एगभत्तेणं।
मुणिपडिमापरिमाणं कुसुमसहस्सेहि अच्चेयं ॥ ११ ॥
निज्जियचिंतामणि-कामधेणु-कप्पद्दुमं इमं चरियं।
सुमिणोवएस सोहग्गमाइमग्गहपवग्गंपि ॥ १२ ॥
इय वीरजिणं सहस्सजक्खमायंग-सिद्धदेवी य।
सुमणोवएस सो वज्झं अज्झप्पं झायह तिसंज्झं ॥ १३ ॥

इति महावीरस्तवनं समाप्तम् ॥

यदा यदा शुभध्यानादिकं प्रारभ्यते तदा तदाऽष्टाहिकापूर्वकम्, यतः—पञ्चदशकर्मभूमिषूत्सर्पिण्य-वसर्पिण्योरष्टाहिकापूर्वकाणि सर्वाणि कर्माणि क्रियन्ते, संवत्सर-चातुर्मासेषु अष्टाहिकाऽतः शाश्वती ॥ इति द्रव्यनमस्कारप्रभावः कथितः ॥

तथा भावनमस्कारमाह—'तत्तिय'—तत्त्वत्रिक देव-गुरु-धर्मविषय, तथा चाह—

भावनमुक्कारविवज्जिआइ जीवेहिं अक्यकरणाइ।
गहियाणि य मुक्काणि य अणंतसो दव्वलिंगाइ॥

[—श्रीजिनचन्द्रसूरिकृत-'पंचनमुक्कारफलथुत्त' गाथा ६७]

भावनमस्कार सम्यक्त्व तच्च—

जीवाइनवपयत्थे जो जाणइ तस्स होइ सम्मत्त।
भावेण सद्दहतो अयाणमाणे वि सम्मत्त॥
त्रैलोक्यद्रव्यषट्क नवपदसहित जीवषट्कायलेश्या,
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रत समिति-गति-ज्ञान चारित्रभेदा।
इत्येतन्मोक्षमूल त्रिभुवनमहित प्रोक्तमर्हद्भिरीशै,
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान् य स वै शुद्धदृष्टि॥

व्याख्या—त्रैलोक्यमिति—अतीत-वर्तमान-भविष्यभेदेन त्रिधा काल, परमवसर्पिणीभेदेन द्विधा काल, विंशतिकोटिकोटीना सागराणा समाप्यते षडरा, अवसर्पिण्या विपरीतास्त एव, तत्—

उत्सर्पिण्या तथा कालो द्वादशभिररै पुन।
वर्तमान भविष्य चातीत चक्र प्रवर्तते॥

अत्राप्यनन्तरमुक्तमस्ति तथा तत्त्वत्रिक बीज 'अर्हं' इति, तथा—

दधति वसतिमध्ये वर्णा अकार-हकारयो
रिति युगमथ शब्दब्रह्मपद मुनयो जगु।
यदमृतकला बिभ्रद्बिन्दुज्ज्वला रविभार्चिषा,
ध्वनयति परब्रह्मध्यान तदस्तु पद मुदे॥
अकारोऽय साक्षादमृतमयमूर्ति सुगयति,
स्फुटरेफो रत्नत्रयमधिष्ठित सकलयति।
समोह हङ्कारो दुरितनिवह हन्ति सहसा,
सरेदेव जीवाक्षरमिति विभिन्नाक्षरपदम्॥

"ॐ ह्रीं श्रीं अ र्हं अ सि आ उ सा नमः।"

सिद्धचक्रस्य मूलमन्त्रोऽयम्। तथाऽनेन मूलमन्त्र महामन्त्र तत्त्वत्रिक प्रतिपादित, परं यन्त्रमध्ये-ऽर्हंमध्ये साध्यनाम, ततो वलकानि—प्रथमवल्के मूलमन्त्र, द्वितीयवल्के पञ्चपरमेष्ठिन, तृतीयवल्के ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तपो-वीर्या, चतुर्थवल्के षोडशस्वरा, ततोऽष्टदलानि, तेष्वष्टौ वर्गा, ततो ह्रींकारेण त्रिवेष्टित क्रौंनिरुद्ध, ततोऽप्मण्डल कलशाकार कलशस्य मुखे वकारा ९, अधो नवमहा साध्या। तत पृथिवीमण्डल दिक्षु क्षिं चत्वारि, कोणेषु ल ४, अग्रे दक्षिणभागे क्षेत्राधिपति, वामभागे गुरुपादुका॥

इति मण्डलविधि॥

जाप ध्यायो फल पूर्वोक्तमत्र भिन्नमपि गुरूपदेश विना न ज्ञायते॥

सुमरियमित्त पि इम तत्त नासेइ सयलदुरियाइ।
पारपरेण नाय त नत्थि गुरू न ज कुणइ॥ २७॥ [३१]

व्याख्या—सरणमात्रमिदं तत्त्वं नाशयति सकलदुरितानि परं तत्त्वं पारम्पर्येण गुरुपरम्परया तथा प्रथमानुयोग-गणितानुयोग-द्रव्यानुयोग-चरणकरणानुयोगेभ्यस्तथा लौकिकशास्त्रसारमध्याच्च ज्ञानं, तन्नास्ति सुखं यदन्त इह मर्त्यलोकेऽपि न कुरुते, तत्त्वे प्रयुक्ते सति लब्धय उत्पद्यन्ते। तथा—

आमोसहि विप्पोसहि खेलोसहि जल्लमोसहि चेव।
संभिन्नसोय उजुमइ सव्वोसहि चेव वोधव्वो ॥ १ ॥
चारण-आसीविसा केवली य मणनाणिणो य पुव्वधरा।
अरिहंत-चक्कवट्टी वलदेवा वासुदेवा य ॥ २ ॥
खीर-महु सप्पिरासव-कुट्ठवुद्धी पयाणुसारी य।
तह वीयवुद्धि-तेयस-आहारग-सीयलेसा य ॥ ३ ॥
वेउव्वियलद्धी अक्खीणमहाणसी पुलाका य।
परिणामतवसेणं एमाइ हवंति भणिय लद्धीओ ॥ ४ ॥
भवसिद्धि य पुरिसाणं एयाओ हवंति भणिय लद्धीओ।
भवसिद्धि य महिलाणं जित्तिय जायंति तं वुच्छं ॥ ५ ॥
अरिहंत १ चक्कि २ केसव ३ वल ४ संभिन्ने य ५ चारण ६ पुव्वा ७।
गणहर ८ पुलाग ९ आहारगं १० च नहु भविमं(य)महिलाणं ॥ ६ ॥
अभवियपुरिसाणं पुण दल पुव्विल्लाउ केवलित्तं च।
उज्जुमई विउलमई तेरस एयाउ न हु हुंति ॥ ७ ॥
असत्ति-जिय महिलाणं पुण एयाओ हुंति भूयलद्धिसु।
महुखीरासवलद्धिओ नेया सेसाओ अविरुद्धा ॥ ८ ॥

एतासा लब्धीनां सुखं करोतीत्यर्थः।

पंचनवकारतत्तं लेसेणं संसिअं अणुहवेणं।
सिरिमाणतुंग-माहिंदमुज्जलं सिवसुहं दिंतु ॥ २८ ॥

व्याख्या—पञ्चनमस्कारतत्त्वं श्रीमानतुङ्गसूरिभिस्तथा सुश्रावकमहेन्द्रसहितैः ब्राह्मणपाटके अनुभवः कृतः, ततः प्रकाशितम्, ततो यतीना सावद्यानुभवं कर्तु न युज्यते, ततः श्रावकयतीनां संयोगेनानुभव उत्पद्यते, यत उक्तम्—

ज्ञानं क्रियादिविरहितं शिवदं न दृष्टं,
नापि क्रियां श्रुतमृते शिवशर्महेतुः।
एतद् विचिन्त्य सुधिया द्वितीयेऽपि यत्नः,
कार्यः प्रमादमदिरापरिवर्जितेन ॥

तथा संयोगेन पारत्रिकफलं स्यात्, ततस्तं गीतार्थसखाऽयं, दर्शितं मोक्षार्थे श्रीमानतुङ्गं उच्चैःस्थं लोकाग्रस्थितं महेन्द्रं महाप्रधानं शिवसौख्यं दिशेत् ॥

संभरह पढह झायह णिच्चं घोसेह णमह अरिहाइ।
सग्गपयं जइ इच्छह तस्सेव य अत्तणो णाणं ॥ २९ ॥

व्याख्या—यदि यूय स्वर्गपद स्वर्गापवर्गमात्मनो ज्ञान च इच्छत, तदा एतत् स्तवन सभरत, पठत, ध्यात, नित्य घोषयत अरहा(अर्हदा)दीन् पञ्चपरमेष्ठीन् नमत । कोऽर्थ ? एतस्मिन् स्तवने ध्याते सति आत्मनो ज्ञानमुत्पद्यते, भणित च—

मोहत्यागे यदात्मान, यस्यात्मनि वेत्ति यत् ।
तदात्मानमात्मना ज्ञान, तच्च स्यात् शुद्धदर्शनम् ॥
आत्मविज्ञानिना दु ख, तिर्यग्-नारकसभवम् ।
जन्तूना हीयते शीघ्र, शुद्धदर्शनलाभत ॥

ननु उवसग्गो पीडा कूरग्गहदंसणं भयासका ।
जइ वि न हु हुति एए तह वि सगुज्झ भणिज्जासु ॥ ३० ॥

व्याख्या—ननु इति वितर्के । तिर्यग्-मनुष्य देवकृत उपसर्ग , तथा व्याधि दारिद्य मानसीकृता पीडा च, क्रूरग्रहदर्शन, भया अनेकविधास्तेषा आ ईषत् स्तोका, यद्यपि एते न भवन्ति, ततोऽपि सगुह्य श्वेतध्यान कर्तव्यमिति, एतावता आर्त-रौद्रनिषेध ॥

एसो परमो मतो परमरहस्सो इम तिहुयणम्मि ।
ता किमिह बहुविहेहिं पढिएहि पुत्थयभरेहि ॥ ३१ ॥

व्याख्या—एष परममन्त्र , परम गुह्य त्रिभुवने निश्चयेन, कि बहुविधैर्नानाशास्त्रै पुस्तकभारै । उक्त च—

मुत्तूण बारसग त एव समरण कीरए जम्हा ।
अरिहतनमोक्कारो तम्हा सो बारसग त्ति ॥

इति स्तवन सारसमूहमेकत्रिंशद्भिर्गाथाभि समुद्धृत श्रीमानतुङ्गसूरिभिः प्रवचनरहस्य संक्षेपात् ॥ तथा एतासा व्याख्यान, तथा टीका कृतेति ॥

समाप्तेय नमस्कारव्याख्यानटीका ॥

परिचय

'नमस्कारव्याख्यानटीका' नामे रचायेला ग्रथनी ह० लि० प्रति श्रीमुक्तिकमल जैन ज्ञानमदिर, वडोदराथी अमने मुनिराज श्रीयशोविजयजी महाराज मारफत प्राप्त थई हती । आ टीका श्रीमान-तुगसूरिए रचेला 'नवकारसारथवण'मा प्रसिद्ध थयेल स्तोत्रने अनुलक्षीने रचवामा आवी छे एवु जाणवामा आव्यु त्यारे हर्ष थयो । प्रथम क्षणे लाग्यु के श्रीमानतुगसूरिए पोताना स्तोत्रमा जे अनेक विषयोनो सग्रह करीने २९ मी गाथामा जे प्रतिज्ञा करी छे तेनु रहस्य आ टीकाग्रथथी स्पष्ट थई जशे पण ए टीकाना अतरगमा उतरवानो अमे जेम जेम प्रयास करवा लाग्या तेम तेम ते टीका अत्यत गूढ लागवा माडी । अनेक विषयोना सग्रहथी भरेली आ टीका स्वयं विशिष्ट ग्रथ जेवी जणाई ।

आ टीकाग्रथनी प्रति ५० पानानी छे ने ग्रथ बे विभागमा वहेंचायेलो छे । प्रथम विभागमा 'नवकारसारथवण' स्तोत्र मूलरूपे आपेलु छे । तेना पछी आ स्तोत्रने लगतो 'साधनविधिफल' नामे आम्नाय छे, जे 'पचपदाम्नाय' शीर्षकथी प्रगट कर्या छे अने तेना उपरथी एक कोष्टक पण तैयार

करीने आप्युं छे। आ सिवाय श्रीजिनप्रभसूरि वगेरे आचार्योए रचेलां स्तोत्रो, तिजयपहुत्त स्तोत्र अने तत्संबंधी मंत्रो, ज्वालामालिनी मंत्र वगेरे छे। वळी, नमस्कारने लगता केटलाक मंत्रो पण आ विभागमां संग्रहायेला छे, जे अन्यत्र प्रगट करेल छे।

बीजा विभागमां 'नवकारसारथवण' नी जूदा क्रमे गाथाओ आपीने ते ते गाथाओनो शब्दार्थ न आपतां तेना आम्नायोनो संग्रह आप्यो छे, जे जूदा जूदा विषयो उपर प्रकाश पाडे छे।

ए विषयोमां खास करीने विविध चक्रो, यंत्रिकाओ, चूडामणिशास्त्र, आयशास्त्र, पंचस्वरोदय, शरीर-स्वरोदय, नाडीशास्त्र, ज्योतिष, अर्घकांड, वैद्यकशास्त्र, जैनतत्त्वज्ञान, मंत्रो वगेरे अनेक विषयोनो संग्रह कर्यो छे।

आ विषयो ऊपर प्रकाश पाडवाने अमे केटलाक विद्वानोनो संपर्क साध्यो परंतु ए प्रयास संपूर्ण सफळ थयो नहि। अमे स्वयं आ ग्रंथने ऊकेलवा—रहस्य पामवा प्रयत्न कर्यो पण स्तोत्रकारे जे रहस्य गूंथी दीधुं छे ते स्पष्ट थई शक्यु नहीं, आथी ए ग्रंथ जे स्वरूपे अमने मळ्यो छे ते स्वरूपे मूलरूपे प्रगट करवानो छेवटे निर्णय लीधो।

आ टीकाग्रंथमा घणी अशुद्धिओ हती। बीजी एक प्रति मळी आवेली खरी, पण तेमांये तेवी ज अशुद्धिओ जोवामा आवी। आथी भाषानी दृष्टिए सुधारीने ए ग्रंथ जेवो ने तेवो अमे अहीं प्रगट करीए छीए। संभव छे के एमा अनेक अशुद्धिओ रही जवा पामी होय।

आ टीकाग्रंथमां आवता 'सिद्धचक्रस्तोत्र' नी स्वतंत्र छ-एक प्रतिओ अमने मळी आवी ते उपरथी पाठभेदो लईने ए स्तोत्रने अमे अहीं प्रगट कर्युं छे। वळी, श्रीमल्लिषेणसूरिरचित 'विद्यानुशासन'मां जे 'सिद्धचक्रस्तोत्र' संस्कृतमां आपेलुं छे तेनी आ स्तोत्र साथे तुलना करतां तेनो आधार आ प्राकृत स्तोत्र होय एम लागे छे, तेथी ए स्तोत्र पण अमे टिप्पणीमां आपी दीधुं छे अने मूल स्तोत्रनो शब्द के भाव लईने 'विद्यानुशासन'गत सिद्धचक्रस्तोत्रनी रचनामा जे साम्य लाग्युं तेने अमे मोटा टाईपो अने प्राकृत गाथाओना अंकनो निर्देश करवापूर्वक प्रगट कर्युं छे। आ टीकाग्रंथना कर्ता विशे माहिती मळी नथी।



[१७]

कुवलयमालासंदब्भो

अरहा जाणइ सव्व अरहा सव्व पि पासइ समक्ख ।
अरहा भासइ सच्च अरहा वधू तिहुयणस्स ॥ [२१७-33][1]
अरहा भासइ धम्म अरहा धम्मस्स जाणए भेय ।
अरहा जियाण सरण अरहा बध पि मोएइ ॥ [२१८-1]
अरहा तिलोय-पुज्जो अरहा तित्थकरो सुधम्मस्स ।
अरहा सय पबुद्धो अरिहा पुरिसोत्तमो लोए ॥ [२१८-2]
अरहा लोग पदीवो अरहा चक्खू जयस(स्स) सव्वस्स ।
अरहा तिण्णो लोए अरहा मोक्ख परूवेइ ॥ [२१८-3]

[एव च वच्चतेसु दियहेसु महारह-साधू वि णाऊण थोर-सेस आउय दिण्ण-गुरुय-णालोयणो पडिकत-सव्व-पावट्ठाणो सलेहणा-सलिहियगो सव्वहा कय-सव्व-कायव्वो उवविट्ठो सथारए । तत्थ य णमोक्कार-परमो अच्छिउ पयत्तो । अवि य ।]

एस करेमि पणाम अरहताण विसुद्ध-कम्माण ।
सव्वातिसय-समग्गा अरहता मगल मज्झ ॥ [२७७-10]
उसमाईए सव्वे चउवीस जिणवरे णमसामि ।
होहिति जे वि सपइ ताण पि कओ णमोकारो ॥ [२७७-11]

अनुवाद

श्री अरिहत भगवत—अरिहत बधु जाणे छे, अरिहत बधु ज प्रत्यक्ष जुए छे, अरिहत सत्य भाखे छे अने अरिहत त्रण भुवनना बधु छे ॥ [२१७-33]

अरिहत धर्म कहे छे, अरिहत धर्मना भेदने जाणे छे, अरिहत जीवोने शरणरूप छे अने अरिहत बधनने छोडावे (मूकावे) छे ॥ [२१८-1]

अरिहत त्रण लोकने पूज्य छे, अरिहत शुद्ध धर्मना तीर्थने करनारा छे, अरिहत स्वय सबुद्ध छे अने अरिहत लोकमा पुरुषोत्तम छे ॥ [२१८ 2]

अरिहत लोकप्रदीप छे, अरिहत सर्व जगतना चक्षु छे, अरिहत लोकमा तरेला छे अने अरिहत मोक्षने प्ररूपे छे ॥ [२१८-3]

- [ए प्रमाणे दिवसो जता महारथ साधुए पण आयुष्य थोडु बाकी रह्यु छे एम जाणीने, गुरुमहाराज पासे आलोचना करी के, सर्व पापस्थानकनु प्रतिक्रमण कर्युं अने सलेखनाथी शरीरने सलेखित कर्युं । एवी रीते समाप्त कर्यां छे सर्व कर्तव्यो जेणे एवा ते सथारामा बेठा । त्या तेओ नमस्कारमा परायण थवा माटे उद्युक्त बन्या । (अने तेओ नीचे मुजब स्तवन करवा लाग्या –)]

आ हु विशुद्ध कर्म(प्रवृत्ति, अनुष्ठान)वाळा श्रीअरिहत भगवतोने प्रणाम करु छु । सर्व अतिशयोथी परिपूर्ण श्रीअरिहत देवो मने मगळरूप हो ॥ [२७७-10]

श्रीऋषभदेव वगेरे सर्वे चोवीशे जिनेश्वरोने हु नमस्कार करु छु । जेओ सप्रतिकाळमा वर्ते छे तेओने पण नमस्कार करु छु ॥ [२७७-11]

1 कासमा देवनागरीलिपिमां लखेल अक मूळ ग्रंथनु पृष्ठ सूचवे छे अने रोमनलिपिमां लखेल अंक तेनी पक्ति सूचवे छे । दा त पृष्ठ २१७, प 33

अविरहिय-णाण-दंसण-चारित्त-पयत्त-सिद्धि-वर-मग्गो ।
सासय-सिव-सुह-मूलो जिण-मग्गो पायडो जयइ ॥ [९५-24]
संसार-गहिर-सायर-दुत्तारुत्तार-तरण-कज्जेणं ।
तित्थ-करणेक्क-सीला सव्वे वि जयंति तित्थयरा ॥ [९५-25]
जह आउराण वेज्जो दुक्ख-विमोक्खं करेइ किरियाए ।
तह जाण जियाय(ण) जिणो दुक्खं अवणेइ किरियाए ॥ [१७९-19]
जह चोराइ-भयाणं रक्खइ राया इमं जणं भीयं ।
तह जिणराया रक्खइ सव्व-जणं कम्म-चोराण ॥ [१७९-20]
जह रुंभइ वच्चंतो जणओ अयडेसु तरलयं बालं ।
जिण-जणओ वि तह च्चिय भव्वं रुंभे अकज्जेसु ॥ [१७९-21]
जह बंधुयणो पुरिसं रक्खइ सत्तूहि परिहविज्जंतं ।
तह रक्खइ भगवं पि हु कम्म-महासत्तु-सेण्णस्स ॥ [१७९-22]
जह जणणी किर बालं थणयच्छीरेण पोइ परियड्ढिं ।
तह भगवं वयण-रसायणेण सव्वं पि पोसेइ ॥ [१७९-23]
बालस्स जहा धाई णिउणं अंजेइ अच्छिवत्ताइं ।
इय णाण-सलागाए भगवं भव्वाण अंजेइ ॥ [१७९-24]

जेमां ज्ञान, दर्शन अने चारित्रमां सतत पुरुषार्थ ए श्रेष्ठ सिद्धि(मोक्ष)मार्ग छे, अने जे शाश्वत कल्याण अने सुखनुं मूळ छे एवो आ जिनमार्ग साक्षात् जयवंतो छे ॥ [९५-24]

गंभीर अने मुश्केलीथी तरी शकाय एवा संसारसागरनो पार पामवा माटे तरवाना प्रयोजनथी तीर्थ करवाना अद्वितीय स्वभाववाळा सर्व तीर्थंकरो जयवंता वर्ते छे ॥ [९५-25]

जेवी रीते वैद्य रोगीओने (चिकित्सादि) क्रिया वडे करीने दुःखथी छोडावे छे तेवी रीते श्रीजिनेश्वर भगवंत जीवोना दुःखने धर्मक्रिया वडे दूर करे छे, एम तमे समजो ॥ [१७९-19]

जेवी रीते भयभीत प्रजाने राजा चोरादिना भयथी रक्षे छे तेवी रीते श्रीजिनेश्वर भगवंतरूपी राजा सर्व जननुं कर्मचोरोथी रक्षण करे छे ॥ [१७९-20]

जे प्रमाणे अंधारा कूवामां पडता चपळ बाळकने पिता रोकी राखे छे, ते प्रमाणे श्रीजिनेश्वर परमात्मारूपी पिता अकार्यमां पडता भव्य आत्माने रोकी राखे छे ॥ [१७९-21]

जे प्रमाणे शत्रुथी पराभव पामता पुरुषनुं बंधुजन रक्षण करे छे ते प्रमाणे कर्मरूपी महाशत्रुनी सेनाथी पराभव पामता जीवनुं श्रीजिनेश्वर भगवंत पण निश्चित रक्षण करे छे ॥ [१७९-22]

जे प्रमाणे माता बाळकने धावणथी पुष्ट करे छे ते प्रमाणे श्री जिनेश्वर भगवंत पण वचन-रसायण वडे सर्वनुं पोषण करे छे ॥ [१७९-23]

जे प्रमाणे धावमाता बाळकनी आंखनी पांपणोने सारी रीते आंजे छे ते प्रमाणे श्री तीर्थंकर भगवंत पण भव्योना आंतरचक्षुने ज्ञान शलाकाथी (सळीथी) आंजे छे ॥ [१७९-24]

मण्णसु पिय व भायं व मायर सामिय गुरुयण वा ।
णिय-जीवियं व मण्णह अहवा जीवाओ अहिययर ॥ [१७९-26]
हिययस्स मज्झ दइओ जारिसओ जिणवरो तिहुवणम्मि ।
को अण्णो तारिसओ हूँ णायं जिणवरो चेय ॥ [१७९-27]
'जय सव्व-जीव-बधव ससार-जलोह-जाण-सारिच्छ ।
जय जम्म-जरा-रहिय मरण-विमुक्का जयाहि तुम ॥ [२४२-24]
जय पुरिस-सीह जय जय तेलोक्केक्कल्ल-पत्थिय-पयाव ।
जय मोह-महामूरण रण णिज्जिय-कम्म-सत्तु-सय ॥ [२४२-25]
जय सिद्धिपुरी-गामिय-जय-जिय-सत्थाह (सत्थार) जयहि सव्वण्णू ।
जय सव्वदसि जिणवर सरण मह होसु सव्वत्थ ॥' [२४२-26]
जय सव्वण्णु महायस जय णाण-दिवायरेक्क जय णाह ।
जय मोक्ख मग्ग- णायग जय भव-तीरेक्क-बोहित्थ ॥ [२४३-23]
जय ससार-महोदहि दुक्ख-सयावत्त भगुर-तरगेहि ।
मोक्ख-सुह तीर-गामिय णमोत्थु णिज्जामय-सरिच्छ ॥ [९१-4]
जय सुरासुर-किणर णर णारी-सघ-सथुया भगव ।
जय पढम-धम्म-देसि(स)य सिय झाणुप्पण्ण-णाणवरा ॥ [११६-14]

ते श्रीजिनेश्वर भगवतने तमे पिता, माता, भाई, स्वामी, गुरुजन के पोतानु जीवन मानो अथवा पोताना जीवथी पण अधिक मानो ॥ [१७९-26]

मारा हृदयने वल्लभ जेवा श्रीजिनेश्वर भगवत छे तेवु त्रणे लोकमा बीजु कोण छे ? हा ! खरेखर मे जाण्यु के तेवा केवल श्रीजिनेश्वर भगवत ज छे ॥ [१७९-27]

सर्व जीवना बधु, ससारसमुद्रमा नौका समान एवा आप जयवता वर्तो । जन्म–जराथी रहित अने मरणथी विमुक्त एवा आप जयवता वर्तो ॥ [२४२-24]

पुरुषसिंह, त्रण लोकमा प्रसरेला अद्वितीय प्रतापने धरनार, मोहनो अत्यत नाश करनार अने रणमा सेंकडो कर्मशत्रुओने जीतनार आप जयवता वर्तो ॥ [२४२-25]

सिद्धिपुरीमा जनारा जगतना जीवोना सार्थवाह जय पामो । हे सर्वज्ञ ! विजय पामो, हे सर्वदर्शी ! जयवता रहो । हे श्रीजिनेश्वर ! मने सर्वत्र शरणरूप हो ॥ [२४२ 26]

सर्वज्ञ, महायश जय पामो । हे अद्वितीय ज्ञानदिवाकर, जगतना नाथ विजय पामो । मोक्ष मार्गना नायक अने भवतीरने प्राप्त करावता निरुपम वहाणरूप आप जयवता वर्तो ॥ [२४३-23]

ससारसमुद्रना दु खरूप सेंकडो आवर्तोना चचळ तरगोमाथी मोक्षरूप सुखमय काठे जनारा अने पहोंचाडनारा आप जयवता वर्तो । तेथी निर्यामक समान (हे भगवत !) आप जयवता वर्तो ॥ [९१-4]

सुर, असुर, किन्नर, नर अने नारीना समुदाय वडे स्तुति कराएला हे भगवन् ! आप जयवता वर्तो । धर्मना आद्य उपदेशक आप जय पामो । शुक्लध्यानथी केवलज्ञान प्राप्त करनारा (हे भगवन् !) आप जयवता वर्तो ॥ [११६-14]

जय पढम-पुरिस पुरिसिंद-विंद-णागिंद-वंदियच्चलणा ।
जय मंदरगिरि-गरुयायर-गुरु-तव-चरण-दिण्ण-विण्णाणा ॥ [११६-15]
णाह तुमं चिय सरणं तं णाहो बंधवो वि तं चेव ।
दंसण-णाण-समग्गो सिव-मग्गो देसिओ जेण ॥ [११६-16]
जे पिययम-गुरु-विरह--जलण-पज्जलिय-ताव-तवियंगा ।
कत्तो ताणं ताणं मोत्तुं आणं जिणिंदाणं ॥ [६४-2]
जे दूसह-गुरु-दारिद्द-विदुया दलिय-सेस-धण-विहवा ।
कत्तो ताणं ताणं मोत्तुं आणं जिणिंदाणं ॥ [६४-3]
दोगच्च-पंक-संका-कलंक-मल-कलुस-दूमियप्पाणं ।
कत्तो ताणं ताणं मोत्तुं आणं जिणिंदाणं ॥ [६४-4]
सव्व-जण-णिंदियाणं बंधु-जणोहसण-दुक्ख-तवियाणं ।
कत्तो ताणं ताणं मोत्तुं आणं जिणिंदाणं ॥ [६४-5]
जे जम्म-जरा-मरणोह-दुक्ख-सय-भीसणे जए जीवा ।
कत्तो ताणं ताणं मोत्तुं आणं जिणिंदाणं ॥ [६४-6]
जे डहणंकण-ताडण-वाहण-गुरु-दुक्ख-सायरोगाढा ।
कत्तो ताणं ताणं मोत्तुं आणं जिणिंदाणं ॥ [६४-7]

प्रथम पुरुष, चक्रवर्तिओना समूह तेमज नागेन्द्र वडे चरणमां नमस्कार कराएला (हे भगवन्) आप जयवंता वर्तो । मेरुपर्वत करतां पण (अधिक) गुरुतावाळा अने महा तप, चरण अने विज्ञानने आपनारा (हे भगवन्!) आप जयवंता वर्तो ॥ [११६-15]

हे नाथ! तमे ज शरण छो, तमे ज नाथ छो अने बांधव पण तमे ज छो; के जेमणे दर्शन अने ज्ञानथी पूर्ण एवो मोक्षमार्ग उपदेश्यो छे ॥ [११६-16]

जेमनां अंगो प्रियतमना मोटा विरहरूपी अग्निना प्रज्वलित तापथी तप्त छे तेमने श्रीजिनेश्वरनी आज्ञा (आगळ) छोडीने बीजे क्यांथी शरण होई शके ? [६४-2]

जेओ दुःसह महादारिद्र्यथी दुःखी छे, सर्व धनवैभव जेमनो नाश पाम्यो छे एवा आत्माओ माटे श्रीजिनेश्वरनी आज्ञा सिवाय अन्यत्र क्यांथी रक्षण होय ? [६४-3]

[1]दौर्गत्यरूप कादव, [2]शंकारूप कलंक अने [3]कर्ममलथी उत्पन्न थयेल [4]कालुष्यथी दुःखित थयेल जीवोने श्रीजिनवचन सिवाय रक्षण क्यांथी होय ? [६४-4]

सर्व लोकथी निंदाता, सगासंबंधीओना उपहासनी पीडाथी उत्तप्त जीवोने श्रीजिनवाणी सिवाय रक्षण क्यांथी होय ? [६४-5]

जे जीवो जन्म, जरा अने मृत्युना समूहरूप सेंकडो दुःखथी भयंकर एवा संसारमां रह्या छे तेमने श्रीजिनवचन सिवाय रक्षण क्यांथी होय ? [६४-6]

जे दहन (बाळवुं), अंकन (चिह्नो करवां), ताडन (मारवुं), वाहन (वहन कराववुं)—ए मोटा दुःखना समुद्रमां डूब्या छे तेओने श्रीजिनाज्ञा सिवाय बीजे क्यांथी रक्षण होय ? [६४-7]

---

१ दौर्गत्य=दुर्दशा अथवा दरिद्रता २ शंका=सम्यक्त्वनुं प्रथम दूषण. ३ कर्ममल=मोहनीय कर्म. ४ कालुष्य=चित्तनी मलिनता

ससारम्मि असारे दुह-मय-सनाह-वाहिया जे य ।
मोत्तु ताण तार्ण कत्तो वयण जिर्णिदाण ॥ [६४-8]

तओ एव सव्व-जय-जीव सधायस्स सव्व दुक्ख दुक्खियस्स तेलोकेकछ-पायवाण पिव जिणार्ण आण पमोतूण ण अण्ण सरण तेलोक्के वि अत्थि त्ति ।

जर-मरण-रोग-रय-मल किलेस बहुलम्मि णवर ससारे ।
णत्थि सरण जयम्मि वि एक्क मोत्तूण जिणवयण ॥ [१४४-25]

इमम्मि णरयामर-तिरिय-मणुय-भव-भीम पायालकलसे महाकोव-धगधगेंत-कराल-जालाउल-वाडवाणले जर मरण-रोग सताव करि-मयर-जलयर वियरमाण-दुरुत्तारे बहु-विह-कम्म-परिणाम खार-णीसार णीर-पडहत्थे हत्थ—परियत्तमाण-सपत्ति-विवत्ति-मच्छ पुच्छ-च्छडाभि—ज्झमाण-तुंग-कुल-तरग-भगिल्ले राय-रोस-वेला-जल-पसरमाण पवाहुम्मूलिज्जत वेला-वण-पुण्ण पायवे ससार-सायरम्मि सिद्ध-पुरि पावय जाणवत्त पिव भगवताण वयण पाविय' ति । [१४५ 26 to'30]

जय दुज्जय-मोह-महा गइद-णिद्दारणम्मि पचमुहा ।
जय विसम-कम्म-काणण-दहणेक पयाव-जलण-समा ॥ [२६८-13]
जय कोवाणल-पसमिय-विवेय—जल-जलहरिंद-सारिच्छा ।
जय माणुद्धर-पव्वय-मुसुमूरण-पचला कुलिसा ॥ [२६८-14]

अने असार संसारमा जेओ सैंकडो दु खोनी पीडायी पीडाएला छे तेओने श्रीजिनवचन विना बीजे क्यायी रक्षण होय ? [६४-8]

माटे आ प्रमाणे सर्व दु खोथी दु खित एवा समस्त जगतना जीवसमूहने माटे त्रणे लोकमा अद्वितीय वृक्ष (आश्रयस्थान) समान श्रीजिनेश्वर देवोनी आज्ञाने छोडीने अन्य काई पण शरण त्रणे लोकमा नथी ।

ज्यारे ससार जरा, मरण, रोग, रज, मळ अने क्लेशथी भरपूर छे त्यारे खरेखर जगतमा एक श्रीजिनवचनने छोडीने अन्य कोई शरण नथी ॥ [१४४-25]

आ नारक, देव, मानव अने तिर्यंचभवरूप भयकर पाताळकळशवाळा, महाक्रोधरूप धगधगता अने भयकर ज्वाळाथी आकुल वडवानलवाळा, जरा मरण, रोग अने सतापरूप, जळहस्ति, मगर, जळचरोना फरवाने कारणे मुश्केलीथी जेनो पार पमाय एवा अनेक प्रकारना कर्मपरिणामरूप खारथी नि सार जळना पटहस्तवाळा (? विस्तारवाळा), आवतीजती सपत्ति अने विपत्तिरूप मत्स्योना पुच्छनी छटाथी भेदाता मोटी कुलतरगो (मोजा)ना भगवाळा अने राग—द्वेषरूप भरती—जळना प्रसरता प्रवाहथी उखेडी नखाता काठाना वनना पुण्यरूप वृक्षो जेवा छे एवा ससार-सागरमा मुक्तिनगरीने प्राप्त करावनार वहाण जेवु भगवतनु वचन प्राप्त कर्युं । [१४५-26to30]

दुर्जय मोहरूपी महा गजेन्द्रनु विदारण करवामा सिंह समान, विषम कर्मवनने बाळी नाखवामा अजोड प्रचड तापवाळा अग्नि समान आप जयवता वर्तो ॥ [२६८-13]

क्रोधरूपी अग्निने शात करवामा विवेकजळथी भरेला श्रेष्ठ (पुष्करावर्त) मेघसमान, मानरूपी उचा पर्वतना चूरेचूरा करवामा समर्थ वज्रसमान आप जयवता वर्तो ॥ [२६८-14]

जय माया-रुसिय-महाभुयंगि तं णाग-मणि-सारिच्छा।
जय लोह-महारक्खस-णिण्णासण-सिद्ध-मंत-समा ॥ [२६८-15]

जय अरई-रइ-णासण ज(भ)य-णिज्जिय हास-वज्जिय जयाहि।
जयहि जुगुच्छा-मुक्का असोय जय जयसु तं देव ॥ [२६८-16]

जयहि ण-पुरिस ण-महिला णोभय जय वेय-वज्जिय जयाहि।
सम्मत्त-मिच्छ-रहिया पंच-विहण्णाण-भय-मुक्का ॥ [२६८-17]

अज्जेव अहं जाओ अज्ज य पेच्छामि अज्ज णिसुणेमि।
मगहा-रज्जम्मि ठिओ दट्ठुं तुह वीर मुहयंदं ॥ [२६८-18]

तं णाहो तं सरणं तं माया बंधवो तुमं ताओ।
सासय-सुहस्स मुणिवर जेण तए देसिओ मग्गो ॥ [२६८-19]

मायारूप रोषित महानागणनी प्रत्ये नागमणितुल्य, लोभरूप महाराक्षसनो सर्वथा नाश करवामां सिद्धमंत्र समान आप जयवंता वर्तो ॥ [२६८-15]

अरति अने रतिनो नाश करनारा, भयथी न जीतायेला (भयरहित, जितभय); हास्यथी रहित, जुगुप्साथी मुक्त अने शोकथी रहित हे देव ! आप जयवंता वर्तो ॥ [२६८-16]

पुरुषवेदथी रहित, स्त्रीवेदथी रहित, नपुंसकवेदथी रहित, (अर्थात्) वेदथी सर्वथा रहित आप जयवंता वर्तो। (क्षायोपशमिक के उपशम) सम्यक्त्व अने मिथ्यात्वथी रहित पांच प्रकारना अज्ञान (? ज्ञानावरण) अने भयथी मुक्त एवा आप जयवंता वर्तो ॥ [२६८-17]

हे वीर ! मगध राज्यमां रहेलो हुं आपना मुखचंद्रने जोईने आजे ज जन्म पाम्यो (आज पूर्वे गर्भावासमां हतो) ! आजे ज हुं जोतो थयो (पूर्वे हुं आंधळो हतो) अने आजे ज हुं सांभळतो थयो (पूर्वे हुं बहेरो हतो) ॥ [२६८-18]

तमे ज नाथ छो, तमे ज शरण छो, तमे ज माता छो, तमे ज बंधव छो, तमे ज पिता छो, कारणके हे मुनिवर ! तमे ज शाश्वत सुखनो मार्ग बताव्यो। (हे मुनिवर ! जे आप वडे शाश्वत सुखनो मार्ग बतावायो ते आप ज मारा नाथ छो, आप ज शरण छो, आप ज माता छो, आप ज बंधु छो अने आप ज पिता छो.) ॥ [२६८-19]



सिद्धाण णमोक्कारो करेमु भावेण कम्म सुद्धाण ।
भन-सय सहस्स-बद्ध धत कम्मिधण जेहि ॥ [२७७-26]
सिज्झति जे वि सपइ सिद्धा सिज्झिसु कम्म-खइयाए ।
ताण सव्वाण णमो तिविहेण करण-जोएण ॥ [२७७-27]
जे केइ तित्थ सिद्धा अतित्थ सिद्धा व एक्क-सिद्धा वा ।
अहवा अणेग-सिद्धा ते सव्वे भावओ वदे ॥ [२७७-28]
जे वि सलिंगे सिद्धा गिहि-लिंगे कह वि जे कुलिंगे वा ।
तित्थयर-सिद्ध-सिद्धा सामण्णा जे वि ते वंदे ॥ [२७७-29]
इत्थी-लिंगे सिद्धा पुरिसेण णपुसएण जे सिद्धा ।
पत्तेय-बुद्ध-सिद्धा बुद्ध-सयबुद्ध-सिद्धा य ॥ [२७७-30]
जे वि णिसण्णा सिद्धा अहव णिवण्णा ठिया व उस्सग्गे ।
उत्ताणय-पासेल्ला सव्वे वदामि तिविहेण ॥ [२७७-31]
णिसि-दियस-पदोसे वा सिद्धा मज्झण्ह-गोस-काले वा ।
कालऽविवक्खा सिद्धा सव्वे वदमि भावेण ॥ [२७७ 32]
जोव्वण-सिद्धा वाला थेरा तह मज्झिमा य जे सिद्धा ।
दीवण्ण-दीव-सिद्धा सव्वे तिविहेण वदामि ॥ [२७८-1]

श्री सिद्ध भगवत—

लाखो भवोमा बांधेलु कर्मरूपी इंधण जेओए धम्यु छे, ते कर्ममळथी रहित थयेला सिद्धोने अमे भावथी नमस्कार करीए छीए ॥ [२७७-26]

जेओ कर्मक्षयथी वर्तमानकाळमा सिद्ध थाय छे, भूतकाळमा सिद्ध थया छे अने भविष्यमा सिद्ध थशे ते सर्वने त्रणे प्रकारना करणयोगथी (मन, वचन अने कायाथी) हु नमस्कार करु छु ॥ [२७७-27]

जे कोई तीर्थसिद्ध थया, अतीर्थसिद्ध थया, एकसिद्ध थया अथवा अनेकसिद्ध थया ते सर्वने हु भावपूर्वक वदन करु छु ॥ [२७७ 28]

जे कोई स्वलिंगे सिद्ध थया, गृहस्थलिंगे सिद्ध थया, वळी जेओ कोई रीते अन्यलिंगे सिद्ध थया, जेओ तीर्थंकरसिद्ध थया अने जे कोई सामान्य केवलिपणे सिद्ध थया तेओने हु वदन करु छु ॥ [२७७-29]

जेओ स्त्रीलिंगे सिद्ध थया, पुरुषलिंगे सिद्ध थया, नपुसकलिंगे सिद्ध थया, प्रत्येकबुद्ध सिद्ध थया, बुद्धबोधित सिद्ध थया अथवा स्वयबुद्ध सिद्ध थया, वळी जेओ बेठेला सिद्ध थया, विशिष्ट प्रकारना काउस्सग्गमा ऊभा सिद्ध थया, चत्ता, सूतेला अथवा पडखे सूतेला सिद्ध थया ते सर्वने हु त्रिविधे वदन करु छु ॥ [२७७ 30-31]

रात्रिना समये, दिवसना समये, सध्या समये, मध्याह्न समये अथवा प्रात काळ समये जेओ सिद्ध थया अथवा काळनी अपेक्षा वगर जेओ सिद्ध थया ते सर्वने हु भावपूर्वक वदु छु ॥ [२७७-32]

जेओ यौवनमा सिद्ध थया, बाळपणे सिद्ध थया, स्थविर (वृद्ध) पणे सिद्ध थया, मध्यमवये सिद्ध थया, जेओ द्वीप के समुद्रमा सिद्ध थया ते सर्वने हु त्रिविधे वदन करु छु ॥ [२७८-1]

१ चित्त = कायोत्सर्गना एक प्रकार

दिव्वावहार-सिद्धा समुद्द-सिद्धा गिरीसु जे सिद्धा ।
जे केइ भाव-सिद्धा सव्वे तिविहेण वंदामि ॥ [२७८-2]
जे जत्थ केइ सिद्धा काले खेत्ते य दव्व-भावे वा ।
ते सव्वे वंदे हं सिद्धे तिविहेण करणेण ॥ [२७८-3]
सिद्धाण णमोक्कारो जइ लब्भइ आगए मरण-काले ।
ता होइ सुगइ-मग्गो अण्णो सिद्धिं पि पावेइ ॥ [२७८-4]
सिद्धाण णमोक्कारो जइ कीरइ भावओ असंगेहिं ।
रुंभइ कुगई-मग्गं सग्गं सिद्धिं च पावेइ ॥ [२७८-5]
सिद्धाण णमोक्कारं तम्हा सव्वायरेणं काहामि ।
छेत्तूण मोह-जालं सिद्धि-पुरिं जेण पावेमि ॥ [२७८-6]
पज्जलिय-झाण-हुयवह-कम्मिंधण-दाह-वियलिय-भवोहा ।
अपुणागम-ठाण-गया सिद्धा वि जयंति भगवंता [९५-26]

देवता वडे अपहरण कराईने जेओ सिद्ध थया, जेओ समुद्रमां सिद्ध थया, जेओ पर्वतो उपर सिद्ध थया अने जे कोई भावसिद्धो थया ते सर्वेने हुं त्रिविध करणे वंदन करुं छुं. ॥ [२७८-2]

जेओ ज्यां कोईपण काळे क्षेत्रे द्रव्ये के भावे सिद्ध थया ते सर्व सिद्धोने हुं त्रिकरण वडे वंदन करुं छुं. ॥ [२७८-3]

मरणकाळ प्राप्त थये छते जो सिद्धोनो नमस्कार प्राप्त थाय तो य सद्गतिनो नवो मार्ग प्राप्त थाय के मोक्ष पण प्राप्त थाय. ॥ [२७८-4]

जो असंगभावे सिद्धोने भावथी नमस्कार कराय तो कुगतिनो मार्ग रुंधाई जाय अने स्वर्ग अथवा मोक्ष प्राप्त थाय. ॥ [२७८-5]

माटे सर्वादरपूर्वक हुं सिद्धोने नमस्कार करूं छुं; (करीश) जेथी मोहजाळने छेदीने हुं मुक्तिपुरीने पामुं. ॥ [२७८-6]

जेओए प्रज्वलित ध्यान—हुताशन वडे कर्मरूप इंधणने बाळी नाखवाथी भवोना समूहनो नाश कर्यो छे, ज्यांथी फरी आववानुं नथी एवा स्थानने जेओ पाम्या छे ते सिद्ध भगवंतो पण जयवंता वर्ते छे. ॥ [९५-26]



पणमामि गणहराण जिण-वयण जेहिँ सुत्त-वधेण ।
बधेऊण तह कय पत्त अम्हारिसा जाव ॥ [२७८-7]
चोद्दस पुव्वीण णमो आयरियाण तहूण-पुव्वीण ।
वायग-वसहाण णमो णमो य एगारसगीण ॥ [२७८-8]
आयार-धराण णमो धरिज्जइ जेहिँ पवयण सयल ।
णाण-धराण ताण आयरियाण पणिवयामि ॥ [२७८-9]
णाणायार-धराण दसण-चरणे विसुद्ध-भावाण ।
तव विरिय-धराण णमो आयरियाण सुधीराण ॥ [२७८-10]
जिण-वयण दिप्पत दीवंति पुणो पुणो ससत्तीए ।
पवयण पभासयाण आयरियाण पणिवयामि ॥ [२७८-11]
गूढ पवयण-सार अगोवगे समुद्द सरिसम्मि ।
अम्हारिसेहिँ कत्तो त णज्जइ थोय-बुद्धीहि ॥ [२७८-12]
त पुण आयरिएहि पारपरएण दीविय एत्थ ।
जइ होंति ण आयरिया को त जाणेज्ज सारमिण ॥ [२७८-13]
सूयण मेत्त सुत्तं सूइज्जइ केवल तहिं अत्थो ।
ज पुण से वक्खाण त आयरिया पयासेंति ॥ [२७८-14]

श्री आचार्य भगवंत—

जेओए जिनेश्वर भगवानना वचनने सूत्रबधनथी बाधीने एवु कर्यु के जे अमारा जेवा जीवो सुधी पहोंच्यु ते गणधरोने (आचार्योने) हु नमस्कार करु छु ॥ [२७८-7]

चौदपूर्वी तथा न्यूनपूर्वी आचार्योने नमस्कार करु छु । वाचकवृषभ आचार्योने नमस्कार करु छु । अगियार अगना धारक आचार्योने नमस्कार करु छु ॥ [२७८-8]

आचारना धारक आचार्योने नमस्कार करु छु । जेओ वडे सकल प्रवचन धारण कराय छे ते ज्ञानना धारक आचार्योने हु नमन करु छु ॥ [२७८-9]

ज्ञानाचारने धारण करता, दर्शन अने चारित्रमा विशुद्ध भाववाळा, तप अने वीर्यने धारण करनारा तथा सारी रीते धीर एवा आचार्योने नमस्कार करु छु ॥ [२७८-10]

देदीप्यमान जिनवचनने पोतानी शक्तिथी जेओ वारवार प्रकाशित करे छे ते प्रवचनने दीपावनारा आचार्योने हु नमन करु छु ॥ [२७८-11]

समुद्र समान अग अने उपागमा सिद्धातना गूढ सारने अमारा जेवा अल्पबुद्धिवाळा क्याथी जाणी शके ? (अर्थात्—प्रवचननो सार समुद्र समान अग अने उपागमा गूढ रहेलो छे, तेने अमारा जेवा अल्पबुद्धिवाळा क्याथी जाणी शके ?) तेने आचार्योए परपराए अहीं सुधी (अमारा सुधी) प्रकाशित कर्यो छे । जो आचार्यो न होत तो आ सारने कोण जाणत ? ॥ [२७८-12 13]

सूचनमात्र करवाथी सूत्र कहेवाय छे, तेमा केवळ अर्थनु सूचन होय छे, पण तेनु विवरण जे छे ते तो आचार्यो प्रकाशित करे छे ॥ [२७८-14]

वुद्धी-सिणेह-जुत्ता आगम-जलणेण सुट्ठु दिप्पंता।
कह पेच्छउ एस जणो सूरि-पईवा जहिं णत्थि ॥ [२७८-15]
चारित्त-सील-किरणो अण्णाण-तमोह-णासणो विमलो।
चंद-समो आयरिओ भविए कुमुए व्व वोहेइ ॥ [२७८-16]
दंसण-विमल-पयावो दस-दिस पसरंत-णाण-किरणिल्लो।
जत्थ ण रवि व्व सूरी मिच्छत्त-तमंधओ देसो ॥ [२७८-17]
उज्जोयओ व्व सूरो फलओ कप्पद्दुमो व्व आयरिओ।
चिंतामणि व्व सुहओ जंगम-तित्थं च पणओ हं ॥ [२७८-18]
जे जत्थ केइ खेत्ते काले भावे व सव्वहा अत्थि।
तीताणागय-भूया ते आयरिए पणिवयामि ॥ [२७८-19]
आयरिय-णमोक्कारो जइ लब्भइ मरण-काल वेलाए।
भावेण कीरमाणो सो होहिइ वोहि-लाभाए ॥ [२७८-20]
आयरिय णमोक्कारो जह कीरइ तिविह-जोग-जुत्तेहिं।
ता जम्म-जरा-मरणे छिंदइ वहुए ण संदेहो ॥ [२७८-21]
आयरिय-णमोक्कारो कीरंतो सल्लगत्तणं होइ।
होइ णरामर-सुहओ अक्खय-फल-दाण-दुल्ललिओ ॥ [२७८-22]

ज्यां बुद्धिरूपी स्नेह(तेल)थी युक्त अने आगमरूपी अग्निथी (ज्योतिथी) सारी रीते दीपता आचार्यरूपी दीवा नथी त्यां आ लोक (जगतजनो) केवी रीते देखी शके ? ॥ [२७८-15]

चारित्र अने शीलरूपी किरणवाळो, अज्ञान-अंधकारना समूहने नाश करनारो, निर्मळ आचार्यरूपी चंद्र[1] कुमुदनी जेम भव्योने विकसित करे छे (वोध पमाडे छे.) ॥ [२७८-16]

ज्यां दर्शनरूपी निर्मळ प्रतापवाळो अने दशे दिशामां प्रसरता ज्ञानरूपी किरणवाळो सूर्य समान आचार्य नथी ते देश मिथ्यात्वरूपी अंधकारथी सभर (आंधळो) छे. ॥ [२७८-17]

आचार्य सूर्य समान उद्योतक (उद्योत करनार), कल्पद्रुमनी जेम (वांछित) फळ देनार छे, चिंतामणिनी जेम सुख देनार छे, ते जंगमतीर्थस्वरूप आचार्यने हुं नमस्कार करुं छुं. ॥ [२७८-18]

जे कोई (आचार्यो) जे क्षेत्रमां, जे काळमां अने जे भावमां सर्व प्रकारे रहेला होय ते अतीत अनागत अने वर्तमान आचार्योने हुं नमस्कार करुं छुं. ॥ [२७८-19]

जो मरणकाळ समये आचार्यने नमस्कार प्राप्त थाय तो भावपूर्वक करातो ते वोधि (सम्यक्त्व)ना लाभने माटे थाय छे. ॥ [२७८-20]

त्रिविध योगयुक्त थईने जो आचार्यने नमस्कार करवामां आवे तो घणां जन्म, जरा, मरणने छेदे छे; एमां संदेह नथी. ॥ [२७८-21]

आचार्यने करातो नमस्कार शल्यने कापनार थाय छे, मनुष्य अने देवना सुखने आपनार थाय छे अने अक्षय फळ दानमां दुर्ललित (आग्रही[2]) थाय छे.[3] ॥ [२७८-22]

---

१ जो के मूलमा उपमालंकार छे, छता अनुवादमा सरलतानी खातर रूपकालंकारनो प्रयोग करवामा आव्यो छे.
२ अवश्यमेव आपनार. ३ अथवा अक्षयफळने आपवामा निपुण होय छे,

तम्हा करेमि सव्वायरेण सूरीण हो(हु) णमोक्कार ।
कम्म-कलक-विमुक्को अइरा मोक्ख पि पावेस्स ॥ [२७८–23]
णाणा लद्धि-समिद्धे सुय णाण-महोयहिस्स पारगए ।
आसण्ण भव्व-सत्ते सव्वे गणहारिणो वदे ॥ [९५–27]
णाण-तव-विरिय दसण चारित्तायार-पच वावारे ।
पज्जलियागम-दीवे आयरिए चेव पणमामि ॥ [९५–28]

× × ×

उवज्झायाण च णमो सगोवग सुय धरेताण ।
सिस्स-गण-हियट्ठाए झरमाणाण तय चेय ॥ [२७८–24]
सुत्तस्स होइ अत्थो सुत्त पाढेंति ते उवज्झाया ।
अज्झावयाण तम्हा पणमह परमेण भावेण ॥ [२७८–25]
सज्झाय-सलिल णिवह झरति जे गिरियड व्व तद्दियह ।
अज्झावयाण ताण भत्तीएँ अह पणिवयामि ॥ [२७८–26]
जे कम्म- खयट्ठाए सुत्त पाढेंति सुद्ध-लेसिल्ला ।
ण गणेति णियय-दुक्ख पणओ अज्झावए ते ह ॥ [२७८–27]

माटे सर्व आदरपूर्वक हु आचार्योने नमस्कार करु छु, (के जेथी) अल्प समयमा कर्मकलकथी विमुक्त थईने हु मोक्षने पण पामु ॥ [२७८-23]

जुदा जुदा प्रकारनी लब्धिओथी समृद्ध, श्रुतज्ञानरूप सागरना पारने पामेला, निकटमा मुक्तिगामी एवा सर्व गणधरोने हु वदु छु ॥ [९५-27]

अने ज्ञानाचार, तपाचार, वीर्याचार, दर्शनाचार अने चारित्राचाररूप पचविध आचारना व्यापारवाळा अने जेमनो आगमदीप प्रज्वलित छे एवा आचार्योने हु प्रणाम करु छु [९५-28]

× × ×

श्री उपाध्याय भगवत—

अग, उपाग सहित सूत्रने धारण करता अने शिष्यसमुदायना हितने माटे तेनु स्मरण (पठन–पाठन) करता श्री उपाध्याय भगवतोने हु नमस्कार करु छु ॥ [२७८-24]

सूत्रने अर्थ होय छे । ते उपाध्यायो सूत्रने भणावे छे । तेथी अध्यापन करावनारा उपाध्यायोने परमभावपूर्वक नमस्कार करो ॥ [२७८ 25]

स्वाध्यायरूपी जळसमूहने गिरितटनी जेम जेओ प्रतिदिन झरावे छे (अर्थात् जेम पहाडमाथी सतत झरण वह्या करे छे तेम जेमनामाथी सतत स्वाध्यायझरण वह्या करे छे), ते अध्यापन करावनारा उपाध्यायोने हु भक्तिपूर्वक नमन करु छु ॥ [२७८-26]

शुद्धलेश्यावाळा जेओ कर्मक्षयने माटे सूत्रने भणावे छे, अने (भणाववामा) पोताना कष्ट (श्रमने) गणकारता नथी, ते उपाध्यायने हु नमन करु छु ॥ [२७८-27]

अज्झावयाण तेसिं भद्दं जे णाण-दंसण-समिद्धा।
बहु-भविय-बोह-जणयं झरंति सुत्तं सया-कालं ॥ [२७८–28]
अज्झावयस्स पणमह जस्स पसाएण सव्व-सुत्ताणि।
णज्जंति पढिज्जंति य पढमं चिय सव्व-साधूहिं ॥ [२७८–29]
उवज्झाय-णमोक्कारो कीरंतो मरण-देस-कालम्मि।
कुगइं रुंभइ सहसा सोग्गइ-मग्गम्मि उवणेइ ॥ [२७८–30]
उवज्झाय-णमोक्कारो कीरंतो कुणइ बोहि-लाभं तु।
तम्हा पणमह सव्वायरेण अज्झावयं मुणिणो ॥ [२७८–31]
उवज्झाय-णमोक्कारो सुहाण सव्वाण होइ तं मूलं।
दुक्खखयं च काउं जीयं ठावेइ मोक्खम्मि ॥ [२७८–32]
सुय-सुत्त-गुणण-धारण-अज्झयणज्झायणेक्क-तल्लिच्छे।
उवयार-करण-सीले वंदामि अहं उवज्झाए ॥ [९५–29]

ज्ञान अने दर्शननी समृद्धिवाळा जेओ घणा भव्य आत्माओना बोधने उत्पन्न करनार सूत्रने सदाकाळ स्रवे छे (अध्ययन–अध्यापन करावे छे) ते उपाध्यायोनुं कल्याण हो. ॥ [२७८-28]

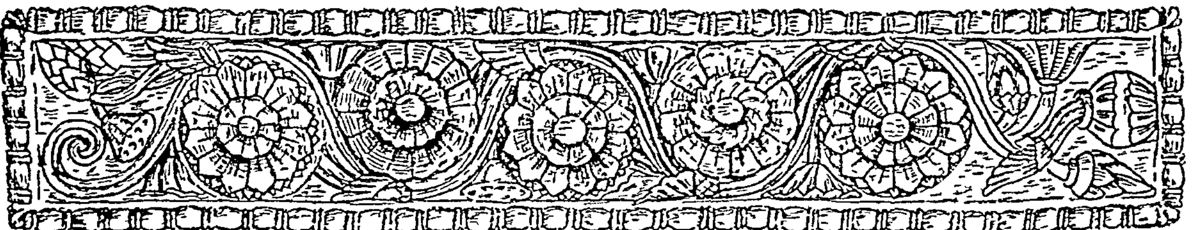
जेमना प्रसादथी सर्व साधुओ सर्व सूत्रोने प्रथम जाणे छे अने भणे छे ते उपाध्यायने नमस्कार करो. ॥ [२७८-29]

मरण समये उपाध्यायोने करातो नमस्कार कुगतिने एकदम रोके छे अने सद्गतिना मार्गमां लई जाय छे. ॥ [२७८-30]

उपाध्यायोने करातो नमस्कार बोधिलाभने (सम्यक्त्वनी प्राप्तिने) करे छे, माटे मुनिओने भणावनार उपाध्यायोने तमे सर्व आदरपूर्वक नमन करो. ॥ [२७८-31]

उपाध्यायने नमस्कार सर्व सुखनुं मूळ छे, अने ते दुःखनो नाश करीने जीवने मोक्षमां स्थापन करे छे. ॥ [२७८-32]

श्रुतज्ञानने गुणवुं, धारण करवुं, भणवुं, भणाववुं — एमां ज तल्लीन, उपकार करवाना शीलवाळा उपाध्यायोने हुं वंदुं छुं. (अथवा श्रुतज्ञानने गुणवानी, धारण करवानी, भणवानी अने भणाववानी ज मात्र लेश्यावाळा अने उपकार करवामां परायण एवा उपाध्यायोने हुं वंदन करुं छुं.) ॥ [९५-29]



साहूण णमोक्कार करेमि तिविहेण करण-जोएण ।
जेण भव-लक्ख-बद्ध खणेण पाव विणासेमि ॥ [२७९–1][1]
पणमह ति-गुत्ति-गुत्ते विलुत्त-मिच्छत्त-पत्त-सम्मत्ते ।
कम्म-करवत्त-पत्ते उत्तम-सत्ते पणिवयामि ॥ [२७९–2]
पचसु समिईसु जए ति सल्ल-पडिपेल्लणम्मि गुरु-मल्ले ।
चउ-विकहा- पम्मुक्के मय-मोह-विवज्जए धीरे ॥ [२७९–3]
पणमामि सुद्ध लेसे कसाय-परिवज्जिए जियाण हिए ।
छज्जीव-काय-रक्खण-परे य पा(प)रपर पत्ते ॥ [२७९–4]
चउ-सण्णा-विप्पजढे दढव्वए वय-गुणेहिँ सजुत्ते ।
उत्तम सत्ते पणओ अपमत्ते सव्व-काल पि ॥ [२७९–5]
परिसह-चल-पडिमल्ले उवसग्ग-सहे पहम्मि मोक्खस्स ।
विकहा-पमाय-रहिए सहिए वदामि समणे हं ॥ [२७९–6]
समणे सुयगे सुमणे समणे य पाव-पंकस्सऽसेवए ।
सवए सुहए समए य सचए साहु अह वदे ॥ [२७९–7]

श्री साधु भगवत—

त्रिविध करणयोग वडे साधुओने हु नमस्कार करु छु, जेथी लाखो भवोमा बाधेलु पाप क्षणमात्रमा नाश करु ॥ [२७९–1]

मिथ्यात्वनो नाश करी सम्यक्त्वने पामेला अने त्रण गुप्तिथी गुप्त (एवा मुनिओने) नमस्कार करो, कर्म(रूप काष्ठ)ने कापवा माटे करवत(रूप सयम)ने पामेला मुनिओने हु प्रणाम करु छु ॥ [२७९–2]

पाच समितिमा यतनावाळा, त्रण शल्यने पीलवामा महामल्ल समान, चार प्रकारनी विकथाथी सर्वथा मुक्त (रहित), मद अने मोहथी रहित, धीर, शुद्धलेश्यावाळा, कषायथी वर्जित, जीवोने हितकर, छ जीवनिकायनी रक्षामा तत्पर अने परम पारने पामेला (अथवा परपरा–गुणश्रेणीने पामेला मुनिओने) हु वदन करु छु ॥ [२७९–3–4]

चार सज्ञाथी दूर रहेला, दढव्रतवाळा, व्रतना गुणोथी युक्त अने उत्तमसत्त्ववाळा एवा अप्रमत्त (मुनिओने) हु सदाकाळ प्रणाम करु छु ॥ [२७९–5]

मोक्षमार्गमा परीषहरूप सैन्यना प्रतिमल्ल, उपसर्गने सहन करनारा, विकथा अने प्रमादथी रहित अने हितयुक्त एवा श्रमणोने हु वदु छु ॥ [२७९–6]

वळी तपस्वी, श्रुतने अनुसरनारा, प्रशस्त मनवाळा, क्षमाश्रमण, पापपकने नहीं सेवनारा, महाव्रतवाळा, सुख आपनारा (सुभग), शमवाळा अने सत्यने अनुसरनारा एवा साधु भगवतोने हु वदन करु छु ॥ [२७९–7] (?)

१ श्रीमहारथ मुनिनी कुवलयमालाग्रथमा आवती अतिम आराधनामांथी आ गाथाओ लीधेली छे

साहूण णमोक्कारो जइ लब्भइ मरण-देस-कालम्मि।
चिंतामणिं पि लद्धं किं मग्गसि काय-मणियाइं ॥ [२७९–8]
साहूण णमोक्कारो कीरंतो अवहरेज्ज जं पावं।
पावाण कत्थ हियए णिवसइ एसो अउण्णाण ॥ [२७९–9]
साहूण णमोक्कारो कीरंतो भाव-मेत्त-संसुद्धो।
सयल-सुहाणं मूलं मोक्खस्स य कारणं होइ ॥ [२७९–10]
तम्हा करेमि सव्वायरेण साहूण तं णमोक्कारं।
तरिऊण भव-समुद्दं मोक्खय-दीवं च पावेमि ॥ [२७९–11]
धम्म-महोवहि-सरिसे कम्म-महासेल-कढिण-कुलिसत्थे।
खंति-गुण-सार-गरुए उवसग्ग-सहे तरु-समाणे ॥ [३४–9]
पंच-महव्वय-फल-भार-रेहिरे गुत्ति-कुसुम-चेंचइए।
सीलंग-पत्त-कलिए कप्पतरू-रयण-सारिच्छे ॥ [३४–10]
जीवाजीव-विहाणं कज्जाकज्ज-फल-विरयणा-सारं।
साधूण समायारं आयारं के वि झायंति ॥ [३४–11]

जो (तने) मरण वखते साधुओने नमस्कार (करवानुं) प्राप्त थाय (साधुवंदन मळे) तो तो खरेखर चिंतामणि पण मळी गयुं! तो पछी काचमणिओने (तुं) शुं शोधे छे? ॥ [२७९–8]

जे कारणे साधुने करायेलो नमस्कार पापने हरे छे (माटे) पुण्य वगरना पापीओना हृदयमां आ (साधुनमस्कार) क्यांथी वसे? [२७९–9]

साधुओने भावमात्रथी करातो विशुद्ध नमस्कार सकल सुखनुं मूळ अने मोक्षनुं कारण छे ॥ [२७९–10]

माटे सर्व आदरपूर्वक ते (भाव) नमस्कारने हुं करुं छुं, (जेथी) भवसमुद्रने तरीने मोक्षरूप द्वीपने प्राप्त करुं! ॥ [२७–९11]

धर्मना महासमुद्र समान, कर्मरूपी महापर्वतने (भेदवा) माटे कठिन वज्रस्वरूप, क्षमा-गुणना सार वडे गौरववंत, उपसर्गोने सहन करवामां वृक्ष समान, तथा पांचमहाव्रतरूपी फलना भार (समूह)थी शोभता, गुप्तिरूप पुष्पोथी सुंदर अने (अढार हजार) शीलांगरूप पत्रोथी युक्त एवा श्रेष्ठ कल्पवृक्ष समान केटलाएक साधु भगवंतोजीव-अजीवनुं जेमां विधान छे एवा, कार्य-अकार्यना फळनी विशिष्ट रचनाना सारवाळा अने साधुओनी समाचारीने कहेता (एवा) श्री आचारांग सूत्रनुं ध्यान धरे छे (स्वाध्याय करे छे) ॥ [३४–9–10–11]

---

१ 'कुवलयमालामां' पुरंदरदत्त नामनो राजा धर्मनंदन नामना आचार्यना दर्शनार्थे एक उद्यानमां जाय छे त्या ते आचार्यना साधुओने तेणे जोया. त्यारनुं आ वर्णन छे.

स समय-पर-समयाण सूइज्जइ जेण समय-सब्भाव ।
सूतयड सूयगडं अण्णे रिसिणो अणुगुणेति ॥ [३४–12]

अण्णेत्थ सुट्ठिया सजमम्मि णिसुणेति के वि ठाणग ।
अण्णे पढति धण्णा समवाय सव्व विज्ञाण ॥ [३४–13]

ससार-भाव मुणिणो मुणिणो अण्णे वियाह-पण्णत्ती ।
अमय-रस-मीसिय पिव वयणे चिय णवर धारेंति ॥ [३४–14]

णाया-धम्म-कहाओ कहेंति अण्णे उवासग-दसाओ ।
अतगड-दसा अवरे अणुत्तर-दसा अणुगुणेति ॥ [३४–15]

जाणय पुच्छ पुच्छइ गणहारी साहए तिलोय-गुरू ।
फुड पण्हा वागरण पढति पण्हाइ-वागरण ॥ [३४–16]

वित्थरिय-सयल तिहुयण-पसत्थ-सत्थत्थ-अत्थ-सत्थाह(र) ।
समय-सय दिट्ठिवाय के वि कयत्था अहिज्जति ॥ [३४–17]

जीवाण पण्णवण पण्णवणं पण्णवेंति पण्णवया ।
सूरिय-पण्णत्तिं चिय गुणेति तह चद-पण्णत्तिं ॥ [३४–18]

जेनायी स्वसमय (स्वदर्शन) अने परसमय (परदर्शन)ना सिद्धातोना रहस्यने सूचवायु छे एवा श्रीसूत्रकृताग सूत्रनु अन्य मुनिवरो अनुगुणन करे छे ॥ [३४–12]

सयममा सुस्थित एवा बीजा केटलाक (धन्य) मुनिओ (ठाणाग) स्थानाग सूत्रने साभळे छे, बीजा केटलाक धन्य मुनिओ सर्व विद्याओना समवायरूप श्रीसमवायाग सूत्रने भणे छे॥ [३४–13]

ससारभावने जाणनारा अन्य मुनिवरो जाणे अमृतरसथी मिश्रित होय तेम (विवाहपण्णत्ति) व्याख्याप्रज्ञप्ति–भगवती सूत्रने मुखमा (कण्ठमा) धारण करे छे (स्वाध्याय करे छे)॥ [३४–14]

केटलाक ज्ञाताधर्मकथा अगनी कथाओ कहे छे, अन्य मुनिवरो उपासकदशागनु अनुगुणन करे छे, बीजा अतगडदशागनु अनुगुणन करे छे अने केटलाक अनुत्तरोपपातिकदशागनु अनुगुणन करे छे ॥ [३४–15]

जाणकार सुज्ञ एवा श्रीगणधर भगवते प्रश्नो पूछ्या अने त्रिलोकगुरु श्रीतीर्थंकर परमात्माए उत्तरो आप्या, ते प्रश्नोत्तरस्वरूप प्रश्नव्याकरणसूत्रने केटलाक मुनिवरो भणे छे ॥ [३४–16]

केटलाक विद्वान मुनिवरो त्रणे भुवनना सकल प्रशस्त शास्त्रार्थोरूप अर्थने (मालने समहनार) माटे सार्थवाहरूप अने सेंकडो सिद्धातोथी युक्त एवा 'दृष्टिवाद'ने भणे छे ॥ [३४–17]

जीवोनु जेमा प्ररूपण छे एवा प्रज्ञापना सूत्रने प्रज्ञापक मुनिवरो प्ररूपे छे। केटलाक सूर्यप्रज्ञप्तिने अने (केटलाक) चन्द्रप्रज्ञप्तिने गुणे छे ॥ [३४–18]

अण्णाइ य गणहर-भासियाइँ सामण्ण-केवलि-कयाइं।
पत्तेय-सयंबुद्धेहिँ विरइयाइँ गुणेंति महरिसिणो ॥ [३४–19]

कत्थइ पंचावयवं दसह च्चिय साहणं परूवेंति।
पच्चक्खणुमाण-पमाण-चउक्कयं च अण्णे वियारेंति ॥ [३४–20]

भव-जलहि-जाणवत्तं पेम्म-महाराय-णियल-णिद्दलणं।
कम्मट्ठ-गंठि-वज्जं अण्णे धम्मं परिकहेंति ॥ [३४–21]

मोहंधयार-रविणो पर-वाय(इ)-कुरंग-दरिय-केसरिणो।
णय-सय-खर-णहरिल्ले अण्णे अह वाइणो तत्थ ॥ [३४–22]

लोयालोग-पयासं दूरंतर-सण्ह-वत्थु-पज्जोयं।
केवलि-सुत्त-णिबद्धं णिमित्तमण्णे वियारंति ॥ [३४–23]

णाणा-जीउप्पत्ती-सुवण्ण-मणि-रयण-धाउ-संजोयं।
जाणंति जणिय-जोणी (?) जोणीणं पाहुडं अण्णे ॥ [३४-24]

अट्ठि-सय-पंजरा इव तव-सोसिय-चम्म-मेत्त पडिबद्धा।
आबद्ध-किडिगिडि-खा पेच्छइ य तवस्सिणो अण्णे ॥ [३४-25]

वळी, केटलाक महर्षिओ गणधरभाषित, सामान्यकेवलीकृत, प्रत्येकबुद्धरचित स्वयंसंबुद्ध-रचित सूत्रोने गुणे छे ॥ [३४–19]

कोइ स्थळे पञ्चावयव साधनने अने कोइ स्थळे दश प्रकारना साधनने (तर्कने) (केटलाक मुनिओ) प्ररूपे छे, प्रत्यक्ष-अनुमान प्रमुख चार प्रमाणने केटलाक मुनिवरो विचारे छे ॥ [३४–20]

भवसमुद्र तरवाने नौका समान, रागरूप महाराजाना बन्धनने तोडनार अने कर्मग्रंथिने भेदवा माटे वज्र समान एवा धर्मने अन्य मुनिवरो कहे छे-उपदेशे छे ॥ [३४–21]

त्यां मोहांधकारने दूर करवामां सूर्य समान अने परवादीरूप मृगलांओनुं विदारण करनार सेंकडो नयरूपी तीक्ष्ण नखवाळा केसरी सिंह समान केटलाक वादीओ छे ॥ [३४–22]

केवलिप्रज्ञप्त सूत्रोमां कहेल, लोकालोकने प्रकाश करनार, दूर अने अन्तरित एवी सूक्ष्म वस्तुओने पण प्रकाशित करनार निमित्तशास्त्रने (केटलाक) मुनिओ विचारे छे ॥ [३४–23]

विविध जीवोनी उत्पत्तिनुं स्वरूप, सुवर्ण, मणि, रत्न अने धातुना संयोगनुं स्वरूप अने जन्मनी योनिओनुं स्वरूप जेमां छे एवा योनिप्राभृत आगमने केटलाक मुनिओ जाणे छे ॥ [३४-24]

तपवडे शोषाई गयेल मांसना कारणे केवळ चामडुं ज जेमना देहपर रह्युं छे एवा, कड कड एवो अवाज जेमना हाडकांओमांथी थया करे छे एवा केटलाक तपस्वी मुनिवरोने जाणे सेंकडो हाडकांना पिंजर न होय एवा ते जुए छे ॥ [३४-25]

ललिय नयणत्थ-सार सव्वालकार-णिव्वडिय-सोह ।
अमय प्पवाह-महुर अण्णे कव्व विडतति ॥ [३४ 26]
बहु तत-मत-विज्ञा वियाणया सिद्ध-जोय-जोइसिया ।
अच्छति अणुगुणेता अवरे सिद्धत-साराइ ॥ [३४-27]
मण-वयण काय-गुत्ता णिरुद्ध-णीसास णिच्चलच्छीया ।
जिण-वयण झायता अण्णे पडिमा-गया मुणिणो ॥ [३४-28]

अवि य कहिंचि पडिमा-गया, कहिचि णियम ठिया, कहिचि वीरासण ठिया, कहिचि उक्कुडुयासण-ट्ठिया, कहिचि गोदोहसठिया, कहिचि पउमासण-ट्ठिय त्ति । अवि य ॥

इय पेच्छइ सो राया सज्झाय-रए तवस्सिणो धीरे ।
णित्थिण्ण भव-समुद्दे रुंदेण जिणिंद-पोएण ॥ [३४-31]
[1]केइ पढति सउण्णा अवरे पाढेति धम्म सत्थाइ ।
अवरे गुणेति अवरे पुच्छति य ससए केइ ॥ [८७-20]
वक्खाणति कयत्था अवरे वि सुणेति के वि गीयत्था ।
अवरे रएति कव्व अवरे झाणम्मि वट्टति ॥ [८७ 21]

सुदर वचनो अने अर्थोना सारवाळा, सर्व अलकारोथी जेनी शोभा थयेली छे एवा अने अमृतना प्रवाह सम मधुर एवा काव्यने केटलाक मुनिओ गूथे छे ॥ [३४-26]

केटलाक अनेक मत्रो, तत्रो अने विद्याओना जाणकार, केटलाक योगमा निष्णात, केटलाक ज्योतिषमा सिद्ध अने सिद्धातना सारने अनुगुणता मुनिओ त्या विद्यमान छे ॥ [३४-27]

मन, वचन अने कायानी गुप्तियी गुप्त, श्वासने रोकीने अने स्थिर दृष्टिवाळा थईने (कुभक प्राणायाम सहित नासाग्रदृष्टिवडे) जिनवचननु ध्यान करता केटलाक प्रतिमाधारी मुनिओ त्या छे ॥ [३४-28]

वळी, क्याक प्रतिमागत, तो क्याक नियममा रहेला, तो कोई स्थळे वीरासने रहेला, तो कोई स्थळे उत्कुटुकासने रहेला, वळी कोई स्थाने गोदोहनिकासने रहेला अने कोई स्थाने पद्मासने रहेला मुनिवरो (त्या) छे ॥

आवी रीते ते राजाए स्वाध्यायमा मग्न, तपस्वी, धीर अने श्री जिनेश्वर भगवाननी (सयमरूप) विशाळ नौका वडे भवसमुद्रना (पारने) किनाराने पामेला एवा साधु भगवतो जोया ॥ [३४-31]

केटलाक मुनिवरो शकुनशास्त्र भणे छे, बीजा धर्मशास्त्रोने भणावे छे, बीजा वळी धर्मशास्त्रोनो स्वाध्याय करे छे अने अन्य केटलाक सशयने पूछे छे ॥ [८७ 20]

बीजा केटलाक कृतार्थ (विद्वान) मुनिओ व्याख्यान करे छे, केटलाक गीतार्थो पण साभळे छे, बीजा काव्यने रचे छे अने अन्य केटलाक ध्यानमा रहे छे ॥ [८७-21]

---

१ वळी बीजा एक प्रसगे राजाए धर्मनदन नामना आचार्यना मुनिओ जोया, त्यारनु आ वर्णन छे

सुस्सूसंति य गुरुणो वेयावच्चं करेंति अण्णे वि।
अण्णे सामायारिं सिक्खंति य सुत्थिया बहुसो ॥ [८७-22]
दंसण-रयणं अण्णे पालेंति य के वि कह वि चारित्तं।
जिणवर-गणहर-रइयं अण्णे णाणं पसंसंति ॥ [८७-23] अवि य ॥
सुत्तत्थ-संसयाइ य अवरे पुच्छंति के वि तत्थेय।
सद्दत्थोभयजुत्ते करेंति अब्भासं वायम्मि ॥ [८७-24]
धम्माधम्म-पयत्थे के वि णिरूवेंति हेउ-वादेहिं।
जीवाण बंध-मोक्खपयं च भावेंति अण्णे वि ॥ [८७-25]
तेलोक्क-वंदणिज्जे-सुक्कज्झाणम्मि के वि वट्टंति।
अण्णे दोग्गइ-णासं धम्मज्झाणं समल्लीणा ॥ [८७-26]
मय-माण-कोह-लोहे अवरे णिंदंति दिट्ठ-माहप्पा।
दुह-सय-पउरावत्तं अवरे णिंदंति भव-जलहिं ॥ [८७-27]
इय देस-भत्त-महिला-राय-कहाणत्थं वज्जिउं दूरं।
सज्झाय-झाण-णिरए अह पेच्छइ साहुणो राया ॥ [८७-28]

अन्य केटलाक गुरुमहाराजनी शुश्रूषा करे छे, केटलाक वेयावच्च करे छे, अन्य सुस्थित मुनिओ वारंवार समाचारीने (आचारने) शीखे छे ॥ [८७-22]

अन्य मुनिओ दर्शनरत्नने साचवे छे, तो केटलाक कोईपण भोगे चारित्रने आराधे छे, वळी बीजा मुनिवरो श्री जिनवरोए (सूत्रथी कहेल) अने गणधरोए (अर्थथी) रचेल ज्ञानने प्रशंसे छे ॥ [८७-23] वळी—

केटलाक त्यां सूत्रार्थना संशयने पूछे छे अने केटलाक सूत्र, अर्थ अने तदुभयथी युक्त एवा वादमां अभ्यास करे छे ॥ [८७-24]

केटलाक हेतुवादवडे धर्माधर्म पदार्थोने प्ररूपे छे, अन्य वळी जीवोना बंध अने मोक्ष-पदने विचारे छे ॥ [८७-25]

त्रण लोकने वन्दनीय एवा शुक्लध्यानमां केटलाक स्थिर थया छे, तो केटलाक दुर्गतिना विनाशक धर्मध्यानमा सारी रीते लीन थया छे ॥ [८७-26]

मद, मान, क्रोध, लोभना माहात्म्य-प्रभाव-विपाकने जाणता केटलाक क्रोधादिने निंदे छे, तो केटलाक सेंकडो दुःखोना घणा आवर्तोथी भरेला भवसमुद्रने निंदे छे ॥ [८७-27]

ए प्रमाणे देशकथा, भक्तकथा, स्त्रीकथा अने राजकथाना अनर्थोने दूरथी तजीने स्वाध्याय अने ध्यानमां रक्त एवा साधुओने राजा जुए छे ॥ [८७-28]

'ज कणय कणय चिय ण होइ कालेण त पुणो लोह ।
इय णाण-विसुद्ध-मणा जे साहू ते पुणो साहू ॥ [९०-32]
पच महव्वय जुत्ते ति गुत्ति-गुत्ते विलुत्त-मिच्छते ।
वदामि अप्पमत्ते ते साहू सजम पत्ते ॥ [९५-30]
चारित्त णाण-दसण-तव-विणय-महाबलेण जिणिऊण ।
गहिय जेहिँ सिव-पुर णमो णमो ताण साधूण ॥ [२१५ 9]
²कइया खण विबुद्धो विरत्त समयम्मि काय-मण-गुत्तो ।
चरण-करणाणुयोग धम्मज्झयणे अणुगुणेस्स ॥ [२१३-14]
कइया उवसंत मणो कम्म-महासेल कढिण-कुलिसत्थ ।
वज्ञ पिव अणवज्ञ काह गोसे पडिकमण ॥ [२१३-15]
कइया कय-कायव्वो सुमणो सुत्तत्थ पोरिसिं काउ ।
वेरग्ग मग्ग-लग्गो धम्मज्झाणम्मि वट्टिस्स ॥ [२१३-16]
कइया णु असभतो छट्ठट्ठम-तव-विसेस-झूसतो ।
जुय मेत्त-णिमिय-दिट्ठी गोयर-चरिय पवज्जिस्स ॥ [२१३-17]

जे सोनु ते खरेखर सोनु ज छे, काळ जता पण ते कदीए लोढु थतु नथी, ए प्रमाणे जे साधु ज्ञानथी विशुद्ध मनवाळा छे ते साधुओ ज खरा साधु छे ॥ [९०-32]

पचमहाव्रतथी युक्त, त्रण गुप्तिथी गुप्त, मिथ्यात्वथी विमुक्त अने सयमने प्राप्त थयेला एवा ते अप्रमत्त मुनिवरोने हु वदु छु ॥ [९५-30]

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप अने विनयरूप महासै यवडे जेओए (मोह पर) विजय मेळवीने शिवपुर (मोक्षनगर) प्राप्त कर्युं छे ते साधुओने हु वारवार नमस्कार करु छु ॥ [२१५-9]

क्यारे पाछली रातना समये क्षणवार जागृत थईने अने काय तथा मननी गुप्तिवाळो बनीने चरणकरणानुयोगने अने धर्मना अध्ययनोने हु अनुगुणीश ? ॥ [२१३ 14]

क्यारे उपशान्त मनवाळो थईने कर्मरूपी महाशैलने तोडी नाखवा माटे कठिन वज्र समान अने वज्ज छता अणवज्ज³ (अर्थात् क्षपकश्रेणी आदि निश्चयनी अपेक्षाए) वर्ज्य होवा छता (व्यवहारमा आदरणीय होवाथी) अनवद्य—पवित्र एवु प्रतिक्रमण हु प्रभातकाळमा करीश ? [२१३-15]

क्यारे कृतकृत्य, पवित्र मनवाळो अने वैराग्यमार्गमा तत्पर एवो हु सूत्र अने अर्थ पौरुषी करीने धर्मध्यानमा रहीश ? ॥ [२१३-16]

क्यारे असभ्रान्त, छठ्ठ अठ्ठम आदि तप वडे कृश थयेलो अने घोंसरी प्रमाण दृष्टिवाळो एवो हु गौचरी चर्या माटे जईश ? [२१३ 17]

---

१ कुवलयमाला'मां आवता आ परचुरण श्लोको छे

२ आइ एक रात्रिना चरम प्रहरमां जागेल कुवलयचद्र राजा (कथानायिका कुवलयमालानो पति) आ रीते भावना भावे छ आ भावना साधुपदने उचित होवाथी अहीं लीधी छे

३ अहीं 'वज्ज'नो शाब्दिक श्लेष छे.

कइया वि हसिज्जंतो णिंदिज्जंतो य मूढ-बालेहिं।
सम-मित्त-सत्तु-चित्तो भमेज्ज भिक्खं विसोहेंतो ॥ [२१३-18]

कइया खण-वीसंतो धम्मज्झयणे समुट्ठिओ गुणिउं।
रागद्दोस-विमुक्को भुंजे सुत्तोवएसेण ॥ [२१३-19]

कइया कय-सुत्तत्थो संसारेगत्त-भावणं काउं।
सुण्णहर-मसाणेसुं धम्मज्झाणम्मि ठाइस्सं ॥ [२१३-20]

कइया णु कमेण पुणो फासु-पएसम्मि कंदरे गिरिणो।
आराहिय-चउ-खंधो देहच्चायं करीहामि ॥ [२१३-21]

एय सत्त-सार-रहिओ चिंतेइ च्चिय मणोरहे णवरं।
एस जिओ मह पावो पावारंभेसु उज्जमइ ॥ [२१३-22]

धण्णा हु बाल-मुणिणो बालत्तणयम्मि गहिय-सामण्णा।
[1]अणरसिय-णिव्विसेसा जेहिं ण दिट्ठो पिय-विओओ ॥ [२१३-23]

धण्णा हु बाल-मुणिणो अकय-विवाहा अणाय-मयण-रसा।
अदिट्ठ-दइय-सोक्खा पव्वज्जं जे समल्लीणा ॥ [२१३-24]

क्यारे मूढ अने बाल (अज्ञ) लोकोथी हसातो के निंदातो छतां पण शत्रु अने मित्रमां समान चित्तवाळो थईने भिक्षानी विशुद्धि माटे हुं भ्रमण करीश ? ॥ [२१३-18]

क्यारे क्षण विश्राम लईने धर्मना अध्ययनोने गुणवामां समुत्थित (तत्पर थयेलो) एवो हुं सूत्रमां बतावेल विधि प्रमाणे रागद्वेषरहितपणे भोजन करीश ? ॥ [२१३-19]

क्यारे सूत्रार्थमां निपुण बनेलो एवो हुं संसारभावना, एकत्वभावना वगेरे भावनाओ भावीने भावित थईने शून्य घरो के श्मशानोने विषे धर्मध्यानमां स्थिर रहीश ? ॥ [२१३-20]

वळी क्यारे पर्वतनी गुफामां पासुक-शुद्ध (निर्जीव) प्रदेशमां चतुस्कंधनी (?) आराधना (करीने) पूर्वक देहनो त्याग हुं करीश ? ॥ [२१३-21]

सत्त्व अने बळथी विकल बनेलो (वयोवृद्ध एवो) आ मारो पापी जीव आवी रीते केवळ शुभ मनोरथो ज चितवे छे पण उद्यम तो पापारंभोमां ज करे छे ॥ [२१३-22]

बाल्यवयमां जेमणे साधुपणुं ग्रहण कर्युं छे (अणरसिय-णिव्विसेसा ?)..........., अने जेओए प्रियवियोगने जोयो ज नथी एवा बालमुनिओने धन्य छे [२१३-23]

जेओए विवाह कर्यो नथी, कामरसने जाण्यो नथी, स्त्रीसुखने देख्युं नथी अने संयममां सारी रीते लीन छे ते बालमुनिओने धन्य छे ॥ [२१३-24]

---

१ पाठांतर—अणरिसिय.

धण्णा हु वाल मुणिणो अणणिय पेम्मा अणाय-विसय-सुहा।
अवहत्थिय-जिय-लोया पव्वज्ज जे समल्लीणा ॥ [२१३-52]
धण्णा हु वाल-मुणिणो उज्जुय-सीला अणाय-घर-सोक्खा।
विणयम्मि वट्टमाणा जिण-वयण जे समल्लीणा ॥ [२१३-26]
धण्णा हु वाल-मुणिणो कुडुव-भारेण जे य णोत्थइया।
जिण-सासणम्मि लग्गा दुक्ख-सयावत्त-ससारे ॥ [२१३-27]
धण्णा हु वाल-मुणिणो जाण अगम्मि णिव्वुडो कामो।
ण वि णाओ पेम्म रसो सज्झाए वावड-मणेहिं ॥ [२१३-28]
धण्णा हु वाल-मुणिणो जाय चिय जे जिणे समल्लीणा।
ण य(या)णति कुमइ-मग्गे पडिकूले मोक्ख मग्गस्स ॥ [२१३-29]
इय ते मुणिणो धण्णा पावारमेसु जेण वट्टति।
मूडेति कम्म-गहण तव-कड्ढिय-तिक्ख-करवाला ॥ [२१३-30]

प्रेमने गण्या वगर, विषयसुखने जाण्या वगर, जीवलोक (ससार) नो त्याग करीने जेओ प्रव्रज्यामा सारी रीते लीन थया छे ते वालमुनिओने धन्य छे ॥ [२१३-25]

जेओ सरल (शील) वर्तनवाळा छे, घरवासना सुखथी जेओ अज्ञात छे, विनयमा जेओ प्रवर्तमान छे अने जेओ श्री जिनेश्वर भगवानना वचनमा सारी रीते लीन छे एवा वालमुनिओने धन्य छे ॥ [२१३-26]

सेंकडो दु खना आवर्तोथी भरेला ससारमा (पण) जेओ कुटुवना भारथी आच्छादित नथी थया, दवाया नथी अने श्री जिनेश्वर भगवानना शासनमा प्रीतिवाळा थया छे एवा वालमुनिओने धन्य छे ॥ [२१३-27]

स्वाध्यायमा मन लागी गयेल होवाथी जेमना शरीरथी काम निवृत्त थयो छे (जेमना शरीरमा काम प्रवेशी शक्यो ज नथी) अने (तेथी) जेओए प्रेम(काम)नो रस जाण्यो ज नथी एवा वालमुनिओने धन्य छे ॥ [२१३-28]

जेओ जन्मता ज (दीक्षा लेता ज) श्रीजिनेश्वर भगवान(ना शासन)मा सारी रीते लीन थया छे अने जेओ मोक्षमार्गने प्रतिकूल कुमतिमार्गोने जाणता (ज) नथी ते वालमुनिओने धन्य छे [२१३-29]

ए प्रमाणे ते मुनिओने धन्य छे के जेओ पापारंभमा वर्तता नथी अने तप रूपी तीक्ष्ण तरवार खेंचीन (काढीने) कर्मरूपी वनने मूढी नाखे छे [२१३-30]

अम्हे उण णीसत्ता सत्ता विसएसु जोव्वणुम्मत्ता।
परिवियलिय-सत्तीया तव-भारं कह वहीहामो ॥ [२१३-31]

पेम्म-मउम्मत्त-मणा पणट्ठ-लज्जा जुवाण-कालम्मि।
संपइ वियलिय-सारा जिण-वयणं कह करीहामो ॥ [२१३-32]

सारीर-बलुम्मत्ता तइया अप्फोडणेक्क-दुल्ललिया।
ण तवे लग्गा एण्हिं तव-भारं कह वहीहामो ॥ [२१३-33]

अगणिय-कज्जाकज्जा रागदोसेहिँ मोहिया तइया।
जिणवयणम्मि ण लग्गा एण्हिं पुण किं करीहामो ॥ [२१४-1]

जइया धिईए वलिया कलिया सत्तीए दप्पिया हियए।
तइया तवे ण लग्गा भण एण्हिं किं करीहामो ॥ [२१४-2]

जइया णिट्ठुर-देहा सत्ता तव-संजमम्मि उज्जमिउं।
ण य तइया उज्जमियं एण्हिं पुण किं करीहामो ॥ [२१४-3]

जइया मेहा-जुत्ता सत्ता सयलं पि आगमं गहिउं।
ण य तइया पव्वइया एण्हिं जड्डा य वड्डा य ॥ [२१४-4]

अमे तो निःसत्त्व, विषयमां आसक्त, यौवनथी उन्मत्त, शक्ति वगरना, तपना भारने केम वहन करी शकीशुं ? [२१३-31]

यौवनकाळमां अमे प्रेम अने मदथी उन्मत्त मनवाळा अने लज्जा वगरना हता। हवे (अत्यारे) अमारुं सत्त्व चाल्युं गयुं छे तो जिनवचनने कई रीते अनुसरीशुं ? [२१३-32]

त्यारे (यौवनवयमां) शरीरना बळथी उन्मत्त थयेला अने मारपीट-भांगफोडमां ज मजा माननारा अमे तपमां जोडाया नहीं तो हवे (ए) तपना भारने केम वहीशुं ? [२१३-33]

कार्याकार्यनो विचार कर्या वगर रागद्वेषथी मोहित थयेला ते समये जिनवचनमां लीन न थया, तो पछी अत्यारे शुं करीशुं ? [२१४-1]

ज्यारे धैर्यथी बळिया हता, शक्तिथी संपन्न हता अने हृदयथी दर्पवाळा हता ते समये (पण) तपमां लगनी न लागी, तो कहो अत्यारे शुं करीशुं ? [२१४-2]

जे वखते काया सशक्त (सहनशील) हती अने तप-संयममां उद्यम करवा अमे शक्तिमान हता ते वखते उद्यम न कर्यो तो अत्यारे शुं करीशुं ? [२१४-3]

ज्यारे अमे बुद्धियुक्त हता अने सकल आगमने ग्रहण करवाने माटे समर्थ हता ते वखते पण प्रव्रज्या ग्रहण न करी ! हवे तो अमे (बुद्धिथी) जड अने वृद्ध थया छीए, हवे शुं करीशुं ? [२१४-4]

इय वियलिय-णव-जोव्वण सत्तिल्ला सजमम्मि असमत्था ।
पच्छायाव-परद्धा पुरिसा झिज्झति चिंतेंता ॥ [२१४-5]
जइ तइया विरमतो सम्मत्त-महादुमस्स पारोहे ।
अज्ज दियहम्मि होंतो सत्थे परमत्थ-भगिल्लो ॥ [२१४-6]
जइ तइया विरमतो सुय-णाण-महोयहिस्स तीरम्मि ।
उच्चेंतो अज्ज-दिण भव्वाइँ ? य सेस-रयणाइ ॥ [२१४-7]
जइ तइया विरमंतो आरूढो जिण-चरित्त-पोयम्मि ।
ससार-महाजलहि हेलाए चेय तीरतो ॥ [२१४-8]
जइ तइया विरमंतो तव-भडायार-पूरियप्पाणो ।
अज्ज दिण राया ह मुणीण होंतो ण सदेहो ॥ [२१४ 9]
जइ तइया विरमतो वय-रयण-गुणेहिं वड्ढिय-पयावो ।
रयणाहिवो त्ति पुज्जो होंतो सव्वाण वि मुणीण ॥ [२१४-10]
जइ तइया विरमतो रज्ज-महा-पाव-सचय-विहीणो ।
झत्ति खवेंतो पावं तव-संजमिओ अणतं पि ॥ [२१४-11]

आ रीते नवयौवन अने शक्तिथी रहित थयेला, सयममा असमर्थ, (केवल) पश्चात्तापने पराधीन आत्माओ चिंता करता (विचारमा ने विचारमा) क्षीण थाय छे ॥ [२१४-5]

ज्यारे सम्यक्त्व महावृक्षनो अकुरो ऊग्यो हतो त्यारे जो (अविरतिथी) अटक्यो होत (अने सर्वविरति लीधी होत) तो आजे (आज सुधी) शास्त्रना परमार्थना भेदोनो जाणकार होत ॥ [२१४-6]

ज्यारे श्रुतज्ञानरूपी महासमुद्रने काठे हतो त्यारे जो (अविरतिथी) अटक्यो होत (अने सर्वविरति लीधी होत) तो आजे (आज सुधी) श्रेष्ठ एवा बीजा रत्नोने एकठा करतो होत ॥ [२१४-7]

जो त्यारे (अविरतिथी) अटक्यो होत अने श्रीजिनेश्वर भगवानना चारित्ररूपी वहाणमा आरूढ थयो होत तो ससाररूपी महासमुद्रने सहेलाईथी तरी गयो होत ॥ [२१४-8]

जो ते समये (अविरतिथी) अटक्यो होत अने तप (आदि गुणो)ना खजानाथी आत्माने भरपूर बनाव्यो होत तो आजे (आज सुधी) हु मुनिओनो राजा होत, एमा सदेह नथी ॥ [२१४ 9]

जो ते समये (अविरतिथी) अटक्यो होत तो हु सुदर व्रत अने गुणोथी वधेला प्रतापवाळो होत अने रत्नाधिक (रत्नाधिप) तरीके सर्व मुनिओने पूज्य होत ॥ [२१४-10]

जो ते वखते राज्यना महा पापना सचयथी रहित बनी (अविरतिथी) विरम्यो होत (सर्वविरति लीधी होत) तो तप अने सयमवाळो में अनता पापने शीघ्र खपाव्या होत ॥ [२१४-11]

अहवा भावेण विणा दव्वेणं पाविओ मए आसि।
जाव ण गहिओ चिंतामणि त्ति ता किं फलं देइ ॥ [२७९-23]
ता संपइ पत्तो मे आराहेव्वउ मए पयत्तेणं।
जइ जम्मण-मरणाणं दुक्खाणं अंतमिच्छामि ॥ [२७९-24]

अथवा में ते नमस्कार भाव वगर द्रव्यथी (ज) प्राप्त कर्यो हशे; ज्यां सुधी (आ नवकार-रूप चिंतामणिने) 'आ चिन्तामणि छे,' एम समजीने ग्रहण न कर्यो होय त्यांसुधी ते शुं फळ आपे ? [२७९-23]

तेथी, जो हुं जन्ममरणना दुःखोनो अंत इच्छतो होउं तो प्राप्त थयेल आ नमस्कार मारे प्रयत्नपूर्वक आराधवो जोईए॥ [२७९-24]

परिचय

'कुवलयमाला' ए प्राकृत चंपू काव्य छे। तेना रचयिता प्रकांड विद्वान 'दाक्षिण्य' चिह्नांकित आचार्य श्री उद्योतनसूरिजी छे। तेओए आ ग्रंथ वि. सं. ८३५ नी चैत्र कृष्ण चतुर्दशीए समाप्त कर्यो हतो। तेमने ह्री अने श्री देवीओ प्रसन्न हती। ग्रंथकारे ग्रंथना प्रारंभमां आचार्यशिरोमणि श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजने भावपूर्वक अभिवादन कर्युं छे।

आ ग्रंथ 'सिंघी जैन ग्रंथमाला' तरफथी ताजेतरमां ज प्रकाशित थयो छे।

आ कथानुं संक्षिप्त (चार हजार श्लोक प्रमाण) गद्यपद्यमय संस्कृत रूपान्तर श्री रत्नप्रभ-सूरिए कर्युं छे।

प्राकृत कथानुं प्रमाण तेर हजार श्लोक जेटलुं छे। ग्रंथनी रचनाशैली, यथास्थाने समुचित वाक्योनो विन्यास, प्रचुररसव्यक्ति, अनेक अलंकारो, प्रासंगिक कथाओ द्वारा सुंदर उपदेश अने तत्त्वज्ञाननुं दान, प्रसन्न पद्यो वगेरे वधुं ज चमत्कारी छे। ग्रंथ श्रवणप्रिय अने हृदयहारी छे। प्राकृतभाषाना अभ्यासीओ माटे आ ग्रंथ अवलोकनीय छे।

कथानो मुख्य उद्देश संसारनी विषमताने बताववानो छे। चरमभवपूर्वना पांचमा भवमां वर्तता रुद्रसोम, शांतिभट्ट, गंगादित्य, धनदेव अने व्याघ्रदत्त ए पांच प्रधान पात्रोथी आ कथा शरु थाय छे। तेओमांथी एकेक क्रमशः क्रोध, मान, माया, लोभ अने मोहथी ग्रसित छे। सांसारिक यातनाओने अनुभवता तेओ अंते संयम ग्रहण करे छे। पछीना देव वगेरेना भवोमां तेओ बधा साथे ज जाय छे अने परस्पर मळीने अन्योन्यने धर्म पमाडवाना प्रयत्नो करे छे। अंते चरमभवमां श्रमण भगवान श्री वर्धमानस्वामीना समयमां संयम लई सुंदर आराधना करी मोक्षे जाय छे। तेमांनो एक कुवलचंद्र राजकुमार छे। कुवलयमाला तेनी मुख्य राणी छे। ए बेनी कथाथी ग्रंथनो घणो भाग विभूषित छे।

प्रस्तुत ग्रंथमांथी पांच परमेष्ठिओना भाववाही काव्यने लईने अमे सानुवाद अहीं प्रगट करीए छीए।

परमेष्ठ्यादिपदगर्भितमन्त्रादय. ॥

[आम्नायसहिता]

[१] आत्मरक्षा:—

परमेष्ठिनमस्कार सार नवपदात्मकम् ।
आत्मरक्षाकरवज्रपञ्जराभ स्मराम्यहम् ॥ १ ॥
ॐ नमो अरिहताणं, शिरस्क [1]शिरसि स्थितम् ।
ॐ नमो स[2]व्वसिद्धाण, मुखे मुख[3]पट वरम् ॥ १ ॥
ॐ नमो आयरियाण, अङ्गरक्षातिशायिनी ।
ॐ नमो उवज्झायाण, आयुध हस्तयोर्दृढम् ॥ २ ॥
ॐ नमो लोए सव्वसाहूण, मोचके पादयो शुभे ।
एसो पच न[4]मुक्कारो, शिलावज्र[5]मयी तले ॥ ३ ॥
सव्वपावप्पणासणो, वप्रो [6]वज्रात्मना बहि ।
मगलाण च सव्वेसिं, खा[7]दिराङ्गारखातिका ॥ ४ ॥
स्वाहान्त च पद ज्ञेय, पढम होइ[8] मगल ।
वप्रोपरि वज्रमय, पिधान देहरक्षणे[9] ॥ ५ ॥
महा[10]प्रभावा रक्षेय, क्षुद्रोपद्रवना[11]शिनी ।
परमेष्ठिप[12]दोद्भूता कथिता पूर्वसूरिभि ॥ ६ ॥[13]

[२] इन्द्रकवच:—

"ॐ नमो [14]अरिहताण ह्रॉ हृदय रक्ष रक्ष हु फट् स्वाहा ।
ॐ नमो सिद्धाण ह्रीं शिरो रक्ष रक्ष हु फट् स्वाहा ।
ॐ नमो आयरियाण ह्रूं शिखा रक्ष रक्ष हु फट् स्वाहा ।

ॐ नमो उवज्झायाण ह्रौं [15]एहि एहि भगवति ! वज्रकवचवज्रिणि रक्ष रक्ष हु फट् स्वाहा ।

ॐ नमो लोए सव्वसाहूण ह्रू [16] क्षिप्र साधय साधय वज्रहस्ते(स्त) शूलिनि दुष्टाद् रक्ष रक्ष हु फट् स्वाहा ।

एसो पच न[17]मुक्कारो वज्रशिलाप्राकार , सव्वपावप्पणासणो अ[18]ग्निमयी परिखा, मगलाण च सव्वेसिं महावज्राग्निप्राकार , पढम हवइ मगल उपरि वज्रशिला ॥"

इन्द्रकवचमिद आत्मरक्षायै उपाध्यायादिभि स्मरणीयम् ॥

[३] वशीकरणमन्त्र[19]—

"ॐ ह्रीं नमो अरिहताण, ॐ ह्रीं नमो सिद्धाण, ॐ ह्रीं नमो आयरियाण, ॐ ह्रीं नमो उवज्झायाण, ॐ ह्रीं नमो लोए सव्वसाहूण अमुक वशीकुरु वशीकुरु स्वाहा ॥"

वार २१ भणित्वा वस्त्रे ग्रन्थिर्दीयते वशीभवति ।

---

१ शिर सस्थितम् J । २ L प्रतौ 'सव्व' शब्दो नास्ति । ३ °पटाम्बरम् R । ४ नमोक्कारो R । ५ मही तले J, मयि तले L । ६ वज्रमयो बहि VL । ७ गादिरा R । ८ हवइ L । ९ °रक्षणम् J । १० °प्रभावर J । ११ °नाशनी JV । १२ °ष्ठिमङ्गलमयी क° JL । १३ V प्रतावयमधिको पाठ —यथैव कुरुते रक्षा परमेष्टिपदै सह । तस्य न स्याद् भयो व्याधिराधिश्चापि कदाचन ॥ इति परमेष्टिस्तुति ॥ १४ अरहताण R । १५ हिं J, हु R । १६ ह्रीं V । १७ °नमोक्कारो R । १८ P प्रतौ टिप्पण्याम्–अग्नि पूर्णा । १९ मन्त्रेण प्र° I ।

[४] भयनिवारणमन्त्रः—

"ॐ नमो अरहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं, ॐ नमो आयरियाणं, ॐ नमो उवज्झायाणं, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, ॐ अर्हं पार्श्वअर्हते ह्रीँ नमः । ॐ ह्रीँ क्लीँ भगवती शत्रुभयविनाशिनी मम राजभयं दण्डभयं मन्त्रिभयं सर्वदुष्टव्यन्तरभयं उपशामय उपशामय हर हर ह्रीँ स्वाहा ॥"

सर्ववारमेकचेतसा स्मर्यते ।

[५] सर्वकर्मकरमन्त्रः—

"ॐ नमो अरहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं, ॐ नमो आयरियाणं, ॐ नमो उवज्झायाणं, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, ॐ नमो नाणाय(णस्स), ॐ नमो दंसणाय(णस्स), ॐ नमो चरित्ताय-(त्तस्स), ॐ त्रैलोक्यवशङ्करी ह्रीँ स्वाहा ॥"

सर्वकर्मकरमन्त्रः, कालापानीयेन छण्टनं पानं च, लावण्य-चक्षुः-शिरोऽर्द्धशिरोऽर्त्यादिपु कार्येषु ।

[६] ज्वरनिवारणमन्त्रः—

" ॐ ह्रीँ नमो लोए सव्वसाहूणं ॥"

इत्यादि प्रतिलोमतः पञ्चपदैः ॐ ह्रीँ पूर्वैः ["ॐ ह्रीँ णं हू सा व्व स ए लो मो न ह्रीँ ॐ ।"] पट्यादौ ग्रन्थि दत्वा १०८ परिजप्य आच्छाद्यते ज्वर उत्तरति, यावज्जपनं तावद् धूप उद्ग्राह्यः, परं नूतनेन कार्यः ।

[७] महापन्निवारणमन्त्रः—

"ॐ ह्रीँ नमो अरहंताणं, ॐ ह्रीँ नमो [सव्व] सिद्धाणं, ॐ ह्रीँ नमो आयरियाणं, ॐ ह्रीँ नमो उवज्झायाणं, ॐ ह्रीँ नमो लोए सव्वसाहूणं ॥"

एषा पञ्चचत्वारिंशदक्षरा विद्या यथा स्वयमपि न श्रूयते तथा स्मर्तव्या । दुष्टचौरादिसङ्कटे महापत्स्थाने च शान्त्यै, जलवृष्ट्यै चोपांशु गुण्यते ।

[८] विद्यासिद्धिमन्त्रः—

" ॐ ह्रीँ श्रीँ अरिहंत-सिद्ध-आयरिय-उवज्झाय-सव्वसाहु-सव्वधम्मतित्थयराणं ॐ नमो भगवईए सुयदेवयाए संतिदेवयाणं सव्वपवयणदेवयाणं दसण्हं दिसापालाणं पंचण्हं लोगपालाणं ॐ ह्रीँ श्रीँ सर्वजनमोहनं कुरु कुरु, सर्वजनवशं कुरु कुरु, विज्जासिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ॥"

नवकोष्ठक

सिद्ध २	आयरिय ३	उवज्झाय ४
दसदिस-पालाण ९	अरिहत १	सव्वसाहू ५
सव्वपवयण-देवता ८	शातिदेवता ७	श्रुतदेवता ६

नवपुष्पाण्यनुक्रमेण निक्षिप्यन्ते, दशममूर्ध्वमुखाङ्गुल्या गगने तथा क्षेप्यं यथैककोष्ठे पतति, अनेन क्रमेण दशाग्रोत्तरशतानि जातिपुष्पैः सिद्धिः ।

[९] वन्दिमोचनमन्त्रः—

"णं हू सा व्व स ए लो मो न, णं या ज्झा व उ मो न, णं या रि य आ मो न, णं द्धा सि मो न, णं ता हं रि अ मो न ॥"

इति विपर्ययगुणनाद् वन्दिमोक्षः । कार्यव्यतिरेकेण न गु(ग)णनीयम् । स्वस्थश्चेदेवं गु(ग)णयति तदा[11] प्रत्युत(तो) वन्दिमापद्यते ।

---

१ °भय पचउलभयं दुस्सथियभयं उप° RLV । २ °कदैतत् स° J । ३ अरिह° JV । ४ कलपा° J । ५ पायनं VR । ६ °शिर आर्त्या° J । ७ J प्रतौ 'ॐ' नास्ति । ८ पटी ग्रन्थि R । ९ R प्रतौ टिप्पण—'ताव ऊतारवानो मत्र' इति । १० महास्थाने JV । ११ तदा च्युत व° R ।

चतुर्थ्यां चतुर्दश्यां वा शनौ यन्ठीप धूलीचिहुर्टी भृत्वा क्षिप्यते पञ्चपरमेष्ठिभणनपूर्वक वार ३ 'फूक' दीयते स वशीभवति ।

परमेष्ठिगु(ग)णनपूर्वं सम्मुखे, ततो दक्षिणे, ततो वामे 'फूक' दीयते, ततो वातप्रहता इव घनघटा सर्वे शत्रवो राजकुले विनश्यन्ति ।

[१०] सर्वकर्मकरमन्त्र'—

"ॐ नमो अरिहताण, ॐ नमो सिद्धाण, ॐ नमो आयरियाण, ॐ नमो उवज्झायाण, ॐ नमो लोए सव्वसाहूण, ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्र स्वाहा ॥"

सर्वकर्मकर , फलोदकादिषु योज्य ।[1]

[११] कर्मक्षयङ्करमन्त्रः—

आद्य पद ब्रह्मरन्ध्रे, द्वितीय भाले, दक्षिणश्रवणे तृतीय, तुर्यमवटौ, पञ्चम वामकर्णे, चूलापदानि दक्षिणशङ्खादिविदिक्षु, इति पद्मावर्त्तनाप , कर्मक्षयातिरेकाय मन स्थैर्यहेतुत्वात् ।

[१२] ग्रामप्रवेशमन्त्र'—

"ॐ नमो अरिहताण, ॐ नमो भगवईए चदाइमहाविज्जाए भचट्ठाए गरे गरे हुलु हुलु चुलु चुलु मयूरवाहिनीए स्वाहा ॥"

एयाए विज्जाए ग्रामप्रवेशे[2] सत्तवार[3]जैवियाए अन्नपाणलाभो हवइ[4], पर पढम चउत्थेण पास नाहजम्मदिणे सयवार जवेयव्वा, तओ पउजियव्वा, पर पच्छावि दसमीए दसमीए जहासत्ति तवो कायव्वो ।

[१३] महासकलीकरण.—

'पढम हवइ मगल' वज्रमयीं शिला मस्तकोपरि, 'नमो अरिहताण' अङ्गुष्ठयो , 'नमो सिद्धाण' तर्जन्यो , 'नमो आयरियाण' मध्यमयो , 'नमो उवज्झायाण' अनामिकयो , 'नमो लोए सव्व साहूण' कनिष्ठिकयो , 'एसो पचनमुक्कारो' वज्रमय प्राकार , 'सव्वपावप्पणासणो' जलभृता खातिकाम्, 'मगलाण च सव्वेसिं' खदिराङ्गारपूर्णां खातिकामात्मनश्चिन्तयेत् । महासकलीकरणम् ।

[१४] महारक्षा'—

'ॐ नमो अरिहताण ज्म्ल्व्र्यूँ हृदय रक्ष रक्ष ह्राँ स्वाहा' [हृदये], 'ॐ नमो सिद्धाण भ्म्ल्व्र्यूँ शिरो रक्ष रक्ष ह्रूँ (ह्रीँ) स्वाहा' [शिरसि], 'ॐ नमो आयरियाण स्म्ल्व्र्यूँ शिखा रक्ष रक्ष ह्रैँ (ह्रूँ) स्वाहा' [शिखायाम्] 'ॐ नमो उवज्झायाण हम्ल्व्र्यूँ एह्येहि भगवति वज्रकवच रक्ष रक्ष ह्रैँ (ह्रौँ) स्वाहा [कवचम्], 'ॐ नमो लोए सव्वसाहूण क्ष्म्ल्व्र्यूँ सर्वदुष्टान् निवारय निवारय ह्र स्वाहा ॥"—महारक्षा ।

[१५] सर्वकामदमन्त्र.—

"ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्र अ सि आ उ सा ।" प्रत्यन्तरे-"अ सि आ उ सा नम स्वाहा ॥"[5] इति [पाठ] दृश्यते ।

[१६] सर्वशामदमन्त्रः—

"ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हं अ सि आ उ सा नम ॥"

द्वावपि मन्त्रौ सर्वशामनौ । अत्रापि प्रथममन्त्रेण शाकिनीनिग्रह ।

---

१ एष मन्त्र J प्रतौ नास्ति । २ JPV प्रतिषु टिप्पण्याम्-'ग्रामप्रवेश मन्त्र' इति । ३ जवियाए P । ४ भवइ । ५ साहिर्गं R । ६ ह्रँ इति पाठ P प्रतावेवोपलभ्यते ।

[१७] वन्दिविमोचनमन्त्रः—

"ॐ नमो अरिहंताणं ज्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो सव्वसिद्धाणं भ्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो आयरियाणं म्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो उवज्झायाणं ह्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं क्ष्म्ल्व्यूँ नमः ॥" इत्यपि, प्रत्यन्तरे-'अमुकस्य मम वा वन्दिमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा ॥'

पार्श्वनाथप्रतिमाऽग्रे जातीपुष्पैः ५०० ऊर्ध्वस्थितो जपेत् । पट्टके मन्त्रं लिखित्वा तदुपरि पुष्पमोक्षणं, यद्वा कस्तूरीसिश्रमष्या श्रीपर्णीपट्टेऽमुं मन्त्रं विलिख्य, ततो जातीपुष्प ५०८ ऊर्ध्वस्थैर्मन्त्रं भाणं भाणं पट्टकोर्ध्वं मुञ्चीत, श्रीपार्श्वनाथप्रतिमाया महाभोगपूर्वं दिन ३ प्रत्यहं ५०८ पुष्पजापः एवं वन्दिमोक्ष आदेशश्च ।

[१८] महारक्षामन्त्रः—

"ॐ नमो अरहंताणं ज्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो सव्वसिद्धाणं भ्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो आयरियाणं स्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो उवज्झायाणं ह्म्ल्व्यूँ नमः, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं क्ष्म्ल्व्यूँ सर्वदुष्टान् निवारय निवारय स्वाहा ॥" इति महारक्षार्थम् ।

[१९] वन्दिविमोचनमन्त्रः—

"अमुकस्य ग्रहमोक्षं कुरु कुरु स्वाहा क्ष्म्ल्व्यूँ नमः ॥"

ठवणी ऊपरि स्थालं मुक्त्वा श्रीपार्श्वनाथप्रतिमायां कर्पूरश्रीखण्डादिचर्चितायां जातीपुष्पैः शतपत्रपुष्पैर्वा ५०८ जापो भोगादिपूर्वं वन्दिमोक्षो भवति, नात्र संशयः । शुचिर्भूत्वा दिन ३ कुर्यात् । प्रतिदिनं पञ्चशतानि प्रत्यग्रजातीपुष्पैरेकाग्रमना जपेत्, ततः सिद्ध्यति ।

एषामेव पञ्चानां पदानामोंपूर्वाणां नमोऽन्तानां स्वाभिमुखफणिमुद्रया भूजमूर्ध्वीकृत्याष्टोत्तरशतजापात् सूरत्राणवन्दितोऽपि मोक्षः, सुप्ते जने जापः ॥

'वट्टकला अरिहंता' इत्यादिन्यायादर्हदस(श)रीरा(र्या)चार्योपाध्यायमुनिसन्धिवशाद् वा पञ्चपरमेष्ठिमयमोङ्कारं ध्यायेद्, दिक्-काल-मुद्राऽऽसनविभागो मन्त्राधिराजवत् ।

वर्णविभागस्त्वेवम्—

'पीतं स्तम्भेऽरुणं वश्ये, क्षोभणे विद्रुमप्रभम् ।
अभिचारेऽञ्जनाकारं, विद्वेषे धूमधूमलम् ॥
सारस्वते विशे शान्तौ, कर्मघाते शशिप्रभम् ।
लाभार्थं हरितं भाले, विधिवत् प्रणवं स्मरेत् ॥

[२०] सर्पभयनिवारणमन्त्रः—

"ॐ गुरु(रवे)नमः, परमगुरु(रवे) नमः, ॐ नमो सिद्धाणं, पवेलं पवेलं जावज्जीवं अहिणा न डसियं (डसिज्जइ) ॥"

दीपोत्सवे चतुर्दश्यां १००८ जापेन साधनं, वर्षं यावत् सर्पभयं (यो) न भवति, शुभाशुभं कथयति, साधयता पादप्रोञ्छने उपवेष्टव्यम् ।

[२१] षोडशाक्षरी विद्या—

"अरिहंत-सिद्ध-आयरिय-साहू ॥"

षोडशाक्षर्याऽस्याः विद्यायाः २०० जापे चतुर्थफलम् ।

---

१ J प्रतौ 'सव्व' पदं नास्ति । २ 'लोए साहूणं' R, तस्या टिप्पण्या 'सव्वसाहूणं' इत्यपि पाठान्तरमिति लिखितम् । ३ JLV प्रतिषु 'वा' पदं नास्ति । ४ जातिपुष्पै R । ५ श्रीपर्णप° J । ६ जतिपुष्प R ७ जाप आदेशश्च JL । ८ 'निवारय' इति एकवारं JV प्रत्योः । ९ °जातिपुष्पैः JLV । १० °मुद्रायां भु° JV । ११ कर्मश्वेते J ।

[२२] कल्याणकरमन्त्र[1]—

नाभिपद्मे 'अ', मस्तकाम्भोजे 'सि', मुखाम्भोजे 'आ', हृत्पद्मे 'उ', कण्ठपद्मे 'सा'-सर्वे कल्याणकारी जाप ।

[२३] रक्षामन्त्रः—

"ॐ नमो अरहंताणं' नाभौ, 'ॐ नमो सिद्धाणं' हृदये, 'ॐ नमो आयरियाणं' कण्ठे, 'ॐ नमो उवज्झायाणं' मुखे, 'ॐ नमो सव्वसाहूणं' मस्तके, 'सर्वाङ्गेषु मां अह्म (अस्मान्) वा रक्ष रक्ष हिलि हिलि मातङ्गिनी (नि !) स्वाहा ॥"—मन्त्र ।

[२४] दुष्टनिवारणमन्त्रः—

"ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा सर्वदुष्टान् स्तम्भय स्तम्भय, मोहय मोहय, जम्भय जम्भय, अन्धय अन्धय, बधिरय बधिरय, मूकवत् कारय कारय कुरु कुरु ह्रीं दुष्टान् ठ ठ ठ ।"

मुष्टिं बध्वा दुष्टविषये स्मरणम्।

[२५] रक्षामन्त्रः—

"ॐ ह्रीं नमो अरहंताणं पादौ रक्ष रक्ष, ॐ ह्रीं नमो सिद्धाणं कटीं रक्ष रक्ष, ॐ ह्रीं नमो आयरियाणं नाभिं रक्ष रक्ष, ॐ ह्रीं नमो उवज्झायाणं हृदयं रक्ष रक्ष, ॐ ह्रीं नमो लोए कण्ठं रक्ष रक्ष, ॐ ह्रीं नमो सव्वसाहूणं ब्रह्माण्डं रक्ष रक्ष, ॐ ह्रीं एसो पंचनमुक्कारो शिखां रक्ष रक्ष ॐ ह्रीं सव्वपावप्पणासणो आसनं रक्ष रक्ष, ॐ ह्रीं मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं आत्मचक्षु परचक्षु रक्ष रक्ष ॥" मन्त्र इति ।

[२६] विद्वेषमन्त्र.—

"ॐ ह्रीं श्रीँ अ सि आ उ सा अनाहतविद्ये ह्रीँ हूं देवदत्तयोर्विश्लेषं कुरु कुरु स्वाहा ॥"

एष मन्त्रः सप्ताहं जप्यते १०८, ततः श्मशानाङ्गारखरलिण्डरस-धत्तूररसैः काकपिच्छेन लेखिन्या भूर्जे लिखित्वा मार्गे निक्षिप्यते, परस्परं विरोधो भवति।

[२७] तस्करभयनिवारणमन्त्रः—

"ॐ नमो अरहंताणं आभिणि मोहिणि मोहय मोहय स्वाहा।"

मार्गे गच्छद्भिरियं विद्या स्मर्तव्या, तस्करदर्शनमपि न भवति ॥

एतद्यन्त्रमध्ये आत्मानं दीप्ततेजसं ध्यायेत्, ततः पूर्वाशाभिमुखः पूर्वं पूर्वदलादारभ्याग्राक्षरं मन्त्रं जपेत्, ११०० जपेत्। ततः आग्नेयदलादारभ्यामुमेव मन्त्रं जपेत्, ११००, एवमन्यदलेष्वपि यावदीशानदलं, एवमष्टरात्रं जापे कृते दुष्टव्यन्तरादिसर्वप्रत्यूहशान्तिः । सर्वकष्टनिवारणयन्त्रमिदं सम्यग्दृष्टिभिः कार्यं, न त्वन्यैः ।

[२८] जलस्तम्भनमन्त्रः—

"‡ॐ नमो अरहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं ॐ नमो आयरियाणं, ॐ नमो उवज्झायाणं, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, हुलु हुलु कुलु कुलु चुलु चुलु मूलु मूलु स्वाहा ॥"

अस्य जापात् मत्स्य-तिङ्गादिजीवहत्यारक्षा। अत्र मन्त्रे सप्रणवा पञ्चपदी, ततो विद्या-एव वर्णा ५८। अस्मिन् स्मर्यमाणे हन्ता जन्तून् हन्तुं न शक्नोति‡ ।

"[6]ॐ नमो सिद्धाणं चाउयसि अचगाल सक्को त्ति।"

---

१ मुखाब्जे R । २ हृत्पद्मे JV । ३ स्मारणा R । ४ 'ह्रीं नमो एसो' R । ५ रक्षमन्त्र इति JV । ‡‡ एतच्चिह्नान्तर्गतः पाठः R प्रतावेवोपलभ्यते । ६ 'ॐ' इतत आरभ्य 'सक्को त्ति' पर्यन्तपाठः मन्त्ररूपः JV प्रतयोरेवोल्लिखितः ।

तत् किमपि स्यात्, एतेन जीवो जीवघातात् छूटति वन्दिमोक्षश्च । तत्पार्श्वाज्ञापने[1] स्वयं श्रीपर्णीपट्टस्थादिलिखितं पञ्चनमस्कारवलकचक्रमर्पयेद्, एवं जालस्तम्भः ॥

[२९] सर्वभयप्रणाशनमन्त्रः—

"ॐ थंभेइ जलं" इत्यादि "घोरुवसग्गं मम अमुकस्य (स्स) वा पणासओ स्वाहा ॥" इयं गाथा चन्दनादिद्रव्यैः पटे लिखित्वा नवकारभणनपूर्वकं वार १०८ स्मर्तव्या, पूज्या च सुगन्धिपुष्पैरक्षतैर्वा, रक्षा वा कार्या, सर्वभयप्रणाशः ।[2]

[३०] वप्पभट्टिसारस्वतमन्त्रः—

"ॐ ह्रीँ अ सि आ उ सा नमः, अर्हँ वाचिनि सत्यवादिनि वाग्वादिनि वद वद, मम वक्त्रे व्यक्तवाचया (वाचा) ह्रीँ सत्यं ब्रूहि ब्रूहि सत्यं वद वद, अस्खलितप्रचारं सदेवमनुजासुरसदसि अर्हँ अ सि आ उ सा नमः स्वाहा ॥" लक्षजापेन सिद्धिः वप्पह(भ)ट्टि सारस्वतम् ।

[३१] विद्यासिद्धिमन्त्रः—

"ॐ नमो हिरीए बंभीए भगवईए सिज्झउ मे भगवई महाविज्जा, ॐ बंभी महाबंभी स्वाहा ॥"
लक्षं पूर्वसेवायां जपः, तत्र त्रिसन्ध्यं सदा जपः ॥

[३२] पञ्चतत्त्वरक्षामन्त्रः—

"क्षिप ॐ स्वाहा ॥" इति पञ्चतत्त्वरक्षापूर्वं कार्यः, प्राङ्मुखं च ध्यानम्, एष विधिः सर्वसारस्वतोपयोगी ज्ञेयः ॥

[३३] त्रिभुवनस्वामिनी विद्या—

"ॐ अर्हते उत्पत उत्पत स्वाहा ॥" त्रिभुवनस्वामिनीविद्या । एवं हृत्पुण्डरीके १०८ नमस्कारं जपन् चतुर्थफलमासादयति ॥

[३४] दुष्टक्षयविक्रयलाभमन्त्रः—

"नट्ठट्ठमयट्ठाणे पणट्ठकम्मट्ठनट्ठसंसारे ।
परमिट्ठिनिट्ठियट्ठे अट्ठगुणाधीसरं वंदे ॥"

श्मशानाङ्गारेण कृष्णपुष्पाणि कृत्वा राजिकालवणधूंसकनिम्बपत्रकटुतैलगुग्गुलेन सह होमयेत्, प्रतिदिनं शत ३०० होमः कार्यः, पादोनप्रहारोऽर्द्धमारम्भणीयो दिनैः ७ दुष्टक्षयो भवति । वार २१ क्रयाणकमश्वादि वाऽभिमन्त्रयेद् विक्रयो भवति, ग्राहकस्तत्रैवोपढौकते ॥

[३५] श्रुतदेवीमन्त्रः—

"पूर्वं पञ्चपरमेष्ठिपदानि-"ॐ नमो भगवईए सुयदेवयाए सव्वसुयमायाए वारसंगपवयणजणणीए सरस्सईए सच्चवाइणि सुवण्णवण्णेः ॐ अवतर अवतर देवि ! मम सरीरं पविस, पुच्छंतस्स मुहं पविस सव्वजणमयहरीए अरिहंतसिरीए सिद्धसिरीए आयरियसिरी उवज्झायसिरी सव्वसाहुसिरी दंसणसिरी नाणसिरी चरित्तसिरी स्वाहा ॥"

[३६] चिन्तामणिमन्त्रः-

"ॐ अ सि आ उ सा चुलु चुलु हुलु हुलु कुलु कुलु मूलु मूलु इच्छियं मे कुरु कुरु स्वाहा ॥" चिन्तामणिमन्त्रः १२००० जापः ॥

---

१ °ज्ञापने R । २ J प्रतौ टिप्पण्याम्-बुद्धि वधारणमन्त्र छे श्रीश्रुतदेवतानो छे । गाथा आ रीते छे —

"ॐ थंभेइ जलं जलणं चिंतियमित्तो वि पंचनवकारो ।
अरि-मारि-चोर-राउलघोरुवसग्गं पणासेइ ॥ स्वाहा ॥"

[३७] त्रिभुवनस्वामिनी महाविद्या–

"ॐ ह्रीँ श्रीँ अर्हँ क्लीँ असिआउसा चुलु चुलु कुलु कुलु हुलु हुलु मूलु मूलु इच्छिय मे कुरु कुरु स्वाहा ॥" त्रिभुवनस्वामिनी महाविद्या ॥

[३८] प्रमादनमन्त्रः–

"पचहिँ परमिट्ठिहिँ खीलियओ डीलियओ रट्टि ॥"

वार २१ जप्यन्ते, दर्शनादेव रुष्ट प्रसीदति, विरूप न चटति, स्तभ्यते स ॥

[३९] पञ्चाङ्गुलीसकलीकरणः–

नमस्कारपञ्चपदै पञ्चाङ्गुलीन्यस्ते सकलीकरण क्रियते-"ॐ नमो अरहताण ह्रीँ स्वाहा" अङ्गुष्ठे। "ॐ नमो सिद्धाण ह्रीँ स्वाहा" तर्जन्याम् । "ॐ नमो आयरियाण ह्रूँ स्वाहा" मध्यमायाम् । "ॐ नमो उवज्झायाण ह्रैँ स्वाहा" अनामिकायाम् । "ॐ नमो लोए सव्वसाहूण ह्र स्वाहा" कनिष्ठिकायाम् ॥

वेलात्रयमङ्गुलीपु जप्यते । एतत् कृत्वा सिद्धचक्र ध्यायेत्, गोरोचना-चन्दनादिना स्थाले यन्त्र लिखेत्। पुष्पे २१ जाप, एकासन, ब्रह्मचर्यं, सुप्यते, तत स्वार्थ(सर्वार्थ)सिद्धि ॥

--एवं वारत्रयमङ्गुलीपु विन्यस्य एवमेव च मस्तकस्योपरि पूर्व दक्षिणापरोत्तरभागेपु विन्यस्य च जप कार्य । सर्वमन्त्रसाधारणो विधिरयम् ॥

[४०] लाभकरमन्त्र —

"ॐ क्षाँ ह्रा नमो अरिहताण, ॐ क्षीँ ह्रीँ नमो सव्वसिद्धाण, ॐ क्षूँ ह्रूँ नमो आयरियाण, ॐ क्षौँ ह्रौँ नमो उवज्झायाण, ॐ क्ष ह्रँ नमो लोए सव्वसाहूण इति मन्त्राक्षरगर्भपञ्चपरमेष्ठिन् । आपद हन हन, संपद उपनय उपनय, शत्रूणा स्तम्भ कुरु कुरु स्वाहा ॥"

सङ्कटादिपु लाभाय चेम १०८ स्मरेत् ॥

[४१] समीहितपूरणमन्त्रः—

"ॐ ह्रीँ अरिहताण सिद्धाण सूरीण उवज्झायाण साहूण मम ऋद्धि वृद्धि समीहित कुरु कुरु स्वाहा ॥" शुचिना प्रात साय वार ३२ स्मृति ॥

[४२] सरस्वतीसाधनमन्त्र'—

"ऐँ क्लीँ ह्सौँ बालात्रिपुरायै नम ॥" नित्यजाप ॥

[R आदर्शे हारीयास्य —] मन्त्र बप्पभट्ट(ट्टि)सूरिसारस्वत ३ लक्ष जाप महाव्रतधारिणा भाव्य, तत्सदृशो भवति । 'कलमरालविहङ्गमवाहना ' इति स्तोत्रकर्ता ।

[४३] सिद्धविद्या—

"ॐ नमो अरिहताण तिलोयपूइयाण सत्तमयवज्जियाण अमरनररायमहियाण अणाइनिहणो सिव दिसउ स्वाहा ॥" एषा सिद्धविद्या ॥

[४४] दुष्टादिनिवारणमन्त्र'—

"ॐ ह्रीँ नमो अरिहताण" ५ पदकम् ।

दुष्टो न प्रभवति, अवरिसणादिपूत्पवेपु तदा सहस्र १ जप्यते, अगुरुश्चोद्ग्राहनीय ॥

[४५] लाभमन्त्र.—

"ॐ ह्रीँ नमो अरिहताण अरे अरिणि [अरिणि] मोहिणि [मोहिणि] मोहय मोहय स्वाहा ॥"

लाभमन्त्र, १०८ वारजाप ॥

[४६] वशीकरणमन्त्रः—

ॐ ह्रीँ अरिहंताणं अरे अरिणि अरिणि मोहिणि मोहिणि सर्वं मम वशीकुरु वशीकुरु स्वाहा ॥" १०८ जापः ।

[४७] मोहनमन्त्रः—

"ॐ नमो अरिहंताणं अरे अरिणि मोहिणि अमुकं मोहय मोहय स्वाहा ॥"

खटिकया श्रीखण्डेन वा इदं यन्त्रं लिखित्वाऽमुना मन्त्रेण श्वेतपुष्पैः श्वेताक्षतैर्जपेत्, यमाश्रित्य जापः क्रियते स वश्यो भवति ॥

[४८] लाभकरमन्त्रः—

"ॐ नमो अरिहंताणं अहो ! अर्हं स्वाहा ॥"

अनेन वार १०८ स्मृतेन कायोत्सर्गस्थस्य स्वस्य बाह्वोरूर्ध्वीभवनम् ॥

[४९] घण्टाकर्णमन्त्रः—

"ॐ घण्टाकर्णो महावीरः सर्वव्याधिविनाशनः ।
विस्फोटकभये प्राप्ते रक्ष रक्ष महाबल ! ॥"

भूर्जे कुङ्कुम-गोरोचनया जातिलेखिन्या कूपस्य नद्या वा तटे उपविश्य लिखेत् । ततोऽनेन द्वितीयमन्त्रेण—

[५०] स्फोटकविरूपतानिवारणमंत्रः—

"ॐ नमो अरिहंताणं ह्राँ स्वाहा, ॐ नमो सिद्धाणं ह्रीँ स्वाहा, ॐ नमो आयरियाणं ह्रूँ स्वाहा, ॐ नमो उवज्झायाणं ह्रौँ स्वाहा, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः स्वाहा ॥"

सुगन्धिपुष्पैः १०८ जापं दत्त्वा कषायवस्त्रेण रक्षां वेष्टयित्वा स्फोटकसंजातपात्रस्य गले बाह्वोर्विबद्ध्यते, स्फोटकाः विरूपा न भवन्ति, विरूपा अपि भव्याः भवन्ति ।[1]

[५१] विघ्नक्षयङ्करमहामन्त्रः—

"ॐ ह्रीँ नमो अरिहंताणं ५ ॥"

[५२] विघ्नक्षयङ्करमहामन्त्रः—

"ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्रः नमो अरिहंताणं—एवं ५ ॥"

द्वावपि महामन्त्रौ विघ्नक्षयाय सिद्धौ ॥

[५३] सर्वार्थसिद्धिकरी विद्या—

"ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्रः अ सि आ उ सा स्वाहा ॥ सर्वार्थसिद्धिः ॥

[५४] शुचिविद्या—

"ॐ नमो अरिहंताणं ॥"

[५५] सर्वरक्षामन्त्रः—

"ॐ नमो अरिहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं, ॐ नमो आयरियाणं, ॐ नमो उवज्झायाणं, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, एसो पंचनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॐ ह्रीँ ह्रूँ फट् ॥" सर्वरक्षामन्त्रमिदम् ।

---

१ आ मंत्रना विधिपूर्वक जपथी स्फोटक (फोडा) मटी जाय छे ।

[५६] चौरभयनिवारणमन्त्रः—

"ॐ नमो अरिहंताण धणु धणु महाधणु स्वाहा ॥"

एन मन्त्र स्वललाटे ध्यायेत्, चौरस्तम्भो भवति। तथैव खटिकया लिखित्वा वामहस्तेन (?) भङ्क्त्वा मुष्टिर्बध्यते। वामहस्ते धनुरस्तीति ध्येये चोरा मन्त्रिण न पश्यन्ति, स चौरान् पश्यति॥

[५७] स्वप्नविद्या—

"ॐ ह्रीं अर्हं नम क्ष्वीं ह्रीं स्वाहा ॥"

चन्दनेन हस्तौ लिप्त्वाऽय मन्त्रो जप्त १०८ रात्रौ शयितस्य स्वप्ने शुभाशुभ कथयति।

[५८] चतुर्थफलमन्त्रः—

"ॐ अर्हं अ सि आ उ सा नमो अरिहंताण नम ॥"

एव हृत्पुण्डरीके जपेत् १०८ चतुर्थफलमासादयति।

[५९] स्वप्नविद्या—

"ॐ गुरुभ्यो नम, ॐ परमगुरुभ्यो नम ॥"

इति मन्त्रादौ पठित्वा सर्वमन्त्रेण तेल १०८ परिजप्य मुखाभ्यङ्गे सुप्तस्य स्वप्नो भवति, तपो विशेषश्च कार्य। तैलशालिगन्धमूल घृष्ट्वा तैलमध्ये क्षिप्त्वा तेन मुखाभ्यङ्गे परस्यापि स्वप्न ॥

[६०] प्रत्यङ्गारोपणमन्त्रः—

"ॐ ह्रीं अर्हं निर्वृताय नम ॥" प्रत्यङ्गारोपणमन्त्र ॥

[६१] लक्ष्मीप्राप्तिमन्त्रः—

"ॐ ह्रीं ह्रैं अर्हं नमो अरिहंताण ह्रीं नम ॥"

त्रिसन्ध्यमष्टोत्तरशत श्वेतपुष्पैरेकान्तस्थाने जापेन क्रियमाणेन सर्वसपत्करी लक्ष्मीर्भवति।

[६२] सर्वाभ्युदयमन्त्रः—

"ॐ ह्रीं श्रीं ईं ऐं अर्हं अर्हं क्लीं ब्लूं ब्लू नम ॥"

सर्वाभ्युदयहेतु परमेष्ठिमयोऽयम् ॥

[६३] शत्रुनिवारणमन्त्रः—

'ॐ ह्रीं श्रीं अमुक दुष्ट साधय साधय असिआउसा नम ॥"

वार १०८ जापे शत्रुरुपशाम्यति।

[६४] सर्वरोगहरमन्त्रः—

"ॐ नमो आमोसहिपत्ताण, ॐ नमो खेलोसहिपत्ताण ॐ नमो जल्लोसहिपत्ताण स्वाहा ॥"

फला(ल)पानीय सर्वरोगहरणम् ॥

[६५] व्रणस्वास्थ्यमन्त्रः—

"जिणाण जावयाण न य पूई न सोणिय एएण सच्चवाएण वण मा पचओ मा दु खओ मा फुट्टओ स्वाहा, ॐ ठ स्वाहा ॥"

रक्षामभिमन्त्र्य नवव्रणे पुन लगाड्यते खड्गादिघातेषु घृत रक्षा वाऽभिमन्त्र्य दीयते पीडाऽपि न भवति, द्रुत व्रण स्वच्छ भवति ॥

[६६] विषहरमन्त्रः—

"ॐ ह्रीं पञ्चपरमेष्ठिने नम ॥"

अयं मन्त्रो धवलध्यानपूर्वं दष्टव्रणे वार २१ विधिना जप्ते विषमपहरति श्रीपार्श्वनाथस्मरणपूर्वम् ॥

[६७] रोगनिवारणमन्त्रः—

"ॐ नमो अरिहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं, ॐ नमो आयरियाणं, ॐ नमो उवज्झायाणं, ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, ॐ नमो आमोसहिपत्ताणं, ॐ नमो खेलोसहिपत्ताणं, ॐ नमो विप्पोसहिपत्ताणं, ॐ नमो सव्वोसहिपत्ताणं एएसिं नमोकारं किच्चा जमियं विज्जं पउंजामि सा मे विज्जा पसिज्झउ स्वाहा ॥"

रोगविमुक्तये वासाद्यभिमन्त्रणम् ॥
[R आदर्शे हांशिया-टिप्पण्यां लिखितमिदम्—
"नमोऽस्तु गुरुचन्द्राय यत्करस्पृष्टमूर्धनि ।
आविर्भवति भव्येऽस्मिन्नपि वाक्यसुधार[स]म् ॥"]
निस्सेससाइणी-गहविणासणी जिणवरेहिं णिद्दिट्ठा ।
णवयारपंचसहियाण ओलीविज्जा पउंजेह ॥

[६८] ओलीविद्या—

"ॐ नमो अरिहंताणं, ॐ नमो सिद्धाणं, ॐ नमो आयरियाणं, ॐ नमो उवज्झायाणं ॐ नमो लोए सव्वसाहूणं, ॐ ह्रीँ नकुलीनाम् ॥"

[६९] स्वप्नविद्या—

"ॐ नमो भगवते चन्द्रप्रभाय, लब्धानन्तचतुष्टयाय, ह्रीँ श्रीँ क्लीँ ह्सौँ अ सि आ उ सा नमः ॥" रात्रित्रयजापादादेशः ॥

[७०] विसूचिकास्तम्भनमन्त्रः—

"ॐ नमो भगवते नमो अरिहंताणं, नमो जिणाणं, ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्रः अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रैँ अ सि आ उ सा झ्रौँ झ्रौँ स्वाहा ॥" जापः वार १०८ कृत्वा जलं पाययेत् विसूचिकास्तम्भनम् ॥

[७१] ज्वरस्तम्भनमन्त्रः—

"ॐ नमो भगवते नमो अरिहंताणं, नमो ओहिजिणाणं ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्रः अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय ह्रीँ अ सि आ उ सा झ्रौँ झ्रौँ स्वाहा ॥" वार १०८ ज्वरस्तम्भनं करोति ॥

[७२] गगनगमनमन्त्रः—

'ॐ आदि 'ह्रीँ हीनः' 'पञ्चबीजैः' ततः 'सर्वसिद्ध्यै नमः ॥'

पुष्पलक्ष १ जापः वृक्षे सिक्कं कृत्वा १०८ तणी वद्धं, तत्रारूढो अग्निकुण्डे होमयेत्, एकधा तेन पादास्त्रोत्स्यन्ते खे गमनम् ।

"ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्रः अ सि आ उ सा सर्वसिद्ध्यै नमः"

[७३] महामन्त्रः—

इच्छामि० । इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! महामन्त्रतणी सरणा करिसिउं—

"नमो अरिहं०——हवइ मंगलं ।

ॐ क्षीँ रीँ रीँ नमो अरिहंताणं, ॐ क्षीँ रीँ रीँ नमो सिद्धाणं ॐ क्षीँ रीँ रीँ नमो आयरियाणं, ॐ क्षीँ रीँ रीँ नमो उवज्झायाणं, ॐ क्षीँ रीँ रीँ नमो लोए सव्वसाहूणं ।" एवं ९।

"ॐ नमो भगवते श्रीपुण्डरीकप्रथमगणधर-प्रथमसिद्धसंसिद्धसुहारिसहो असुहो संसिद्धि (?) स्वाहा २।"

"ॐ नमो श्रीगोतमस्वामिने सर्वेलब्धिसपन्नाय सर्वार्थसिद्धिं मम कुरु कुरु स्वाहा ३ ।"

"ॐ नमो वर्द्धमानाय उग्गए उग्गजम्मए जये विजये अपराजिए अपराजिओ भवामि स्वाहा ३।"

"ॐ नमो गातमस्वामिने सर्वेलब्धिसपन्नाय सव्वट्ठसिद्धिं मम कुरु कुरु स्वाहा ।"

"ॐ श्रीं रीं रक्ष हरि रक्ष इलिय गिलिय हूर्सों हूस्क्लों हूर्सों हस ३ ।

"ॐ प क्षि स्वा हा ।

"ॐ नमो अरिहताण, ॐ नमो सिद्धाण । पद ५ । अशुचि शुचि भवामि स्वाहा ।

"ॐ नमो अरिहताण रीं रि(ह)द्य हरि हरि सरो हु फट् स्वाहा । नमो सिद्धाण रीं रि(ह)द्य हरि हरि सरो हु फट् स्वाहा । नमो आयरियाण रीं रि(ह)द्य सिद्धाण हरि हरि सरो हु फट् स्वाहा । नमो उवज्झायाण रीं रि(ह)द्य हरि हरि सरो हु फट् स्वाहा । नमो लोए सव्वसाहूण क्षिप्र सिद्धदुष्ट हृप्ते वज्रते सूल आतमरक्ष सर्वरक्ष हु फट् स्वाहा ॥" मूलमन्त्र ।

"ॐ क्ष्मीं रीं नमो अरिहताण । पद ५ ।

"ॐ क्ष र एसो पचनमुक्कारो-मगल । इति महामन्त्र

"रक्ष रक्ष आपद हन हन, समद उपनय उपनय, शत्रूणा स्तम्भन कुरु कुरु स्वाहा ॥"

[७४] शुचिविद्या—

"ॐ नमो अरिहताण, ॐ नमो सिद्धाण, ॐ नमो आयरियाण, ॐ नमो उवज्झायाण, ॐ नमो सव्वसाहूण, ॐ नमो आगासगामिणीण ॐ ह क्ष नम ॥" शुचिविद्या ॥

[७५] आत्मरक्षामन्त्रः—"क्षि प ॐ स्वा हा, हा स्वा ॐ प क्षि ॥" आत्मरक्षा ॥

[७६] सकलीकरणमन्त्रः—

"ॐ कु रु कु ले स्वा हा, हा स्वा ले कु रु कु ॐ ॥" सकलीकरणमन्त्र ।

[७७] दिग्बन्धनमन्त्रः—

"अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अ अः ॐ चण्ड हु फट् स्वाहा ॥" दिग्बन्ध ॥

[७८] आत्मरक्षामन्त्र—पञ्चपरमेष्ठिमुद्रा कृत्वा—

"ॐ अट्ठेवय अट्ठसय अट्ठसहस्स च अट्ठकोडीओ ।
रक्खतु मे सरीर देवासुरपणमिया सिद्धा ॥ स्वाहा ॥
"ॐ थमेइ जल जलण चिंतियमित्तो वि पचनवकारो ।
अरि मारि-चोर-राउलघोरुवसग्ग पणासेउ ॥ स्वाहा ॥
"ॐ पन्नत्ती-गधारी महाकाली अप्पडिहय-रोहिणिया ।
वज्जकुसि वज्जसिखला देवी माणसि महमाणसिया ॥ विज्जादेवीओ ॥
अया देवी सिद्धाइयाओ सव्वसुरमहिड्ढिमहि [या] ।
वेयावच्च-सतिकरा देवा देवीओ मम रक्खतु ॥ स्वाहा ॥"

आत्मरक्षामन्त्र । एतदनन्तर शङ्खमुद्रया नमस्कारत्रयभणनपूर्वक बृहद्वर्धमानविद्या स्मर्यते। ततस्तर्जनीमुद्रया लघुवर्धमानविद्या चिन्त्यते ॥

[७९] अभ्युत्तारणमन्त्र —

"ॐ जूं ज्झं क्ष्मूं फट् स्वाहा, ॐ क्षों क्ष्मीं क्ष्मूं श्रीं क्ष ॥" अभ्युत्तारणमन्त्र ॥

[८०] प्रत्यङ्गिराविद्या—"ॐ ह्रीं प्रत्यङ्गिरे मम स्व स्वस्ति शान्ति कुरु कुरु स्वाहा॥"

[८१] परविद्याच्छेदिनी प्रत्यङ्गिरामहाविद्या—

"ॐ ह्रीं प्रत्यङ्गिरे महाविद्ये येनचित् पाप कृत कारित अनुमत वा नश्यतु तस्य हि तत्पाप गच्छतु, ॐ ह्रीं प्रत्यङ्गिरे महाविद्ये स्वाहा ॥" परविद्याच्छेदिनी ॥

[अ] "ॐ क्षेत्रपालाय स्वाहा, ॐ ब्रह्मादिभ्य रक्ष रक्ष स्वाहा ॥

एतदनन्तर नमस्कारत्रयभणनपूर्वक तर्जनीमुद्रया लघुवर्धमानविद्या चिन्त्यते । तत पार्श्वनाथमुद्रया पूर्वोक्त प्रत्यङ्गिराविद्याद्वय, तदनु—

कुसुमुग्गमो य सुगइआउयबंधद्दुमस्स निव्विग्घं।
उवलंभचिंधममलं विसुद्धसद्धम्मसिद्धीए ॥ ८ ॥

अन्नं च—

एयस्स जहाविहिविहियसव्वआराहणापयारस्स।
कामियफलसंपायणपहाणमंतस्स च पभावा[1] ॥ ९ ॥
सत्तू वि होइ मित्तो तालउड[2]विसं पि जायए अमयं।
भीमाडवी य वियरइ चित्तरयं[3] वासभवणं व ॥ १० ॥
चोरा वि रक्खगत्तं उविंति साणुग्गहा हवंति गहा।
अवसउणा वि हु सुहसउणसाहणिज्जं जणंति फलं ॥ ११ ॥
जणणीओ इव न कुणंति डाइणीओ वि थेवमवि पीडं।
पहवंति न[4] रुद्दा मंत-तंत-जंतप्पयारा वि ॥ १२ ॥
पंकयपुंजु व्व सिही [5]सीहो गोमाउय व्व वणहत्थी।
मिगसावु व्व विहावइ पंचनमुक्कारसामत्था ॥ १३ ॥
एत्तो[6] चिय सुमरिज्जइ निसियणउट्ठाणखलणपडणेसु।
सुरखेयरपभिईहिं एसो परमाएँ भत्तीए ॥ १४ ॥

पक्षी छे, दरिद्रताना कंदने मूळथी उखेडी नाखवा माटे वराह—सूकरनी दाढा छे, प्रथम उत्पन्न थता सम्यक्त्वरत्नने माटे रोहणाचलनी धरणी छे, सुगतिना आयुष्य—बंधरूपी वृक्षनो ए पुष्पोद्गम छे अने विशुद्ध एवा सद्धर्मनी सिद्धिने ओळखवानुं निर्मळ चिह्न छे ॥ ६ थी ८ ॥

वळी, शास्त्रोक्त विधि मुजब आचराया छे आराधनाना सर्व प्रकारो जेना एवा अने कामित फळोनुं संपादन करवामां प्रधान मंत्रभूत एवा आ मंत्रना प्रभावथी शत्रु पण मित्र बनी जाय छे, तालपुट विष पण अमृत बनी जाय छे अने भयंकर जंगल मनने आनंद आपनार वासभवन जेवुं बनी जाय छे ॥ ९—१०॥

चोरो पण रक्षकपणाने पामे छे, ग्रहो अनुग्रह—कृपा करवावाळा थाय छे अने अपशकुन पण शुभ शकुनथी मेळववा योग्य (सारां) फळो आपनारा बनी जाय छे ॥ ११ ॥

माताओनी माफक डाकिणीओ पण थोडी पण पीडाने करती नथी, तेमज भयंकर एवा मंत्र, तंत्र अने यंत्रना प्रकारो पण कांई करी शकता नथी ॥ १२ ॥

पंच—नमस्कारना सामर्थ्यथी अग्नि कमळना पुंज जेवो, सिंह शियाळ जेवो अने वनहस्ती मृगना बच्चा जेवो बनी जाय छे ॥ १३ ॥

ए कारणे सुर, खेचर वगेरे बेसतां, ऊठतां, स्खलना पामतां के पडतां परमभक्तिपूर्वक आ नमस्कारनुं स्मरण कराय छे ॥ १४ ॥

---

1 पभावो S। 2 तालवुड° S। 3 °रइं वा° S J। 4 निरुद्धा S। 5 सिंहो S। 6 इत्तुच्चिय S।

किञ्च—

धन्नाण मनोभवणे सद्धावहुमाणगट्टिनेहिल्लो।
मिच्छत्ततिमिरहरणो वियरइ नवकारवरदीवो ॥ १५ ॥
जाण मणनणनिगुंजे रमइ नमुक्कारकेसरिकिसोरो।
ताण अणिट्ठदोघट्टघट्टघडण न नियडेइ ॥ १६ ॥
ता निविडनिगडघडणा गुत्ती ता वज्जपंजरनिरोहो।
नो जाव जवि जविओ पचनमुक्कारवरमतो ॥ १७ ॥
दप्पिट्ठदुट्ठनिट्ठुरसुरुट्ठदिट्ठी वि तान होइ परो।
नवकारमतचितणपुव्व न पलोइओ जाव ॥ १८ ॥
मरणरणगणगणसगमे गमे गामनगरमाईण।
एय सुमरताण ताण सम्माणण च भवे ॥ १९ ॥

तहा—

जलमाणमणिप्पहफुल्लफारफणिनडफणागणाहितो।
पसरतकिरणभरभग्गमीमतिमिरम्मि पायाले ॥ २० ॥
चिंताणतरघडमाणमाणसाणंदिइंदियत्था ज।
विलसति दाणवा किर त खु नमुक्कारफुरियलवो ॥ २१ ॥

वळी, मिथ्यात्वरूपी अधकारने हरनारो एवो आ नमस्काररूपी श्रेष्ठ दीपक, जेमा श्रद्धारूप दिवेट अने वहुमानरूपी तेल छे ते, धन्य पुरुषोना मनरूपी भवनमा शोभे छे ॥ १५ ॥

जेमना मनरूपी वन–निकुंजमा नमस्काररूपी केसरी किशोर–सिंहनु वचु रमे छे, तेमने अनिष्ट रूप हाथीओना टोळानो सयोग थतो नथी ॥ १६ ॥

निविड–मजबूत वेडीओनी घटना छे जेमा तेवु केदखानु तथा वज्रपजरनो निरोध त्या सुधी ज पीडा करे छे के, ज्या सुधी पच–नमस्काररूपी श्रेष्ठ मत्र जपवामा आव्यो नथी ॥ १७ ॥

बीजानी दर्पिष्ठ–अभिमानी, दुष्ट, निष्ठुर अने अत्यत रुष्ट एवी दृष्टि पण त्या सुधी ज होय छे के, ज्या सुधी ते नमस्कार-मत्रना चिंतनपूर्वक जोवायो नथी ॥ १८ ॥

मरण, रणागण अने महोना समागम वखते के ग्राम–नगर आदिना गमन वखते, नमस्कार मत्रनु स्मरण करनाराओने रक्षण अर्थात् शरणनी अने सम्माननी प्राप्ति थाय छे ॥ १९ ॥

तथा जाज्वल्यमान मणिनी प्रभा वडे प्रफुल्ल एवी विशाळ सर्पनी फणाना समूहथी प्रसार पामता किरणोना भारथी नाश पाम्यो छे भयकर अधकार ज्यानो, एवा पाताललोकमा चिंतवतानी साथे ज प्राप्त थाय छे चित्ताह्लादक इन्द्रियना विषयो जेमने एवा दानवोनो जे विलास छे ते तो नवकारना विलसितनो एक लेश मात्र छे ॥ २०–२१ ॥

---

1 ताण S। 2 पद्पद्पदणा S। 3 परा J। 4 पुव्वि J। 5 इसा जाव S J।

जं पि य विसिट्ठपयवी[1] विज्जाविन्नाणविणयनयनिउणं ।
अखलियपसरं[2] पसरंतकंतजसभरियभुवणयलं ॥ २२ ॥
अच्चंतणुरत्तकलत्तपुत्तपामुक्खसयलसुहिसयणं ।
आणापडिच्छणुच्छाहिदच्छगिहिकम्मकारिजणं ॥ २३ ॥
अच्छिन्नलच्छिविच्छड्डसामिभोइत्तवियरणपहाणं ।
रायामच्चाइविसिट्ठलोयपयई[3]बहुमयं च ॥ २४ ॥
जहचिंतियफलसंपत्तिसुंदरं दिन्नदुकहचमक्कं ।
पाविज्जइ मणुयत्तं तं च नमुक्कारफललेसो ॥ २५ ॥
जं[4] चिय सव्वंगपहाणलडहचउसट्ठिसहसविलयाणं ।
बत्तीससहस्समहप्पभावभासंतसामंतं ॥ २६ ॥
पवरपुरसरिसछन्नवइगामकोडीकडप्पदुप्पसरं ।
सुरनयरसरिसपुरवरविसत्तरीसहससंखालं ॥ २७ ॥
बहुसंखखेडकव्वडमडंबदोणमुहपमुहबहुवसिमं ।
दीसंतकंतसुंदरसंदणसंदोहदिन्नदिहिं ॥ २८ ॥
परचक्कचप्पणाण[5]प्पदप्पपाइक्कचक्कसंकिन्नं ।
पगलंतगंडमंडलपयंडदोघट्ट[6]यघट्टिल्लं ॥ २९ ॥

वळी, विशिष्ट पदवी, विद्या, विज्ञान, विनय अने न्यायथी निपुण, स्खलना वगर विस्तारवाळुं, प्रसार पामता मनोहर यशथी भराई गयुं छे भुवनतल जेमां, अत्यन्त अनुरक्त एवा कलत्र अने पुत्र आदि सकल सुखी स्वजनवाळुं, आज्ञानी राह जोतां उत्साही अने चतुर गृह-कर्म करनार परिजनवाळुं, अविच्छिन्न लक्ष्मीना विस्तारयुक्त एवुं स्वामीपणुं, भोगीपणुं अने दानीपणुं, तेना वडे राजा, मंत्री आदि विशिष्ट लोक अने प्रजाजन वडे बहुमान करायेलुं, यथाचिंतित फलप्राप्ति वडे सुंदर अने विरोधी लोकोना चित्तने पण चमत्कार पमाडे एवुं मनुष्यपणुं जे प्राप्त थाय छे, ते पण नमस्कारना फलनो एक लेश छे ॥ २२ थी २५ ॥

वळी, सर्व अंगोए प्रधान शोभायुक्त चोसठ हजार अंतःपुरवाळुं, बत्रीस हजार मोटा प्रभावशाळी सामंत राजाओना आधिपत्यवाळुं, मोटा नगर सरखा छन्नु क्रोड गामना विस्तारवाळुं, देवनगर समान बहोत्तेर हजार श्रेष्ठ नगरोवाळुं, बहु-संख्यक खेड, कब्बड, मडंब, द्रोणमुख वगेरे घणी वस्तीओवाळुं, देदीप्यमान, मनोहर अने सुंदर एवा रथोना समुदायथी युक्त राजमार्गोवाळुं, दुश्मनना समुदायने चगदी नाखवाने समर्थ एवा पायदळनी सेनाना समुदायवाळुं, अत्यन्त मदझरतां छे गंडस्थल जेना एवा प्रचंड हाथीओवाळुं, मन अने पवनथी पण चंचल तथा कठोर खुरीओवडे खोदी नाख्युं छे पृथ्वीतल जेनणे एवा तरल तुरंगो–घोडाओनी माळावाळुं, सोळ हजारनी

1 °पइई J। 2 °रं कत पसरतज° S। 3 °इ पयई व J। 4 ज पिय S। 5 °णप्पसत्तिपा° S J। 6 °घट्टघट्टिलं S।

मणपवणचवलकखरखुरुक्खयक्खोणितरलतुरगाल ।
सोलससहस्सपरिसघजक्खरक्खापरिक्खित्त ॥ ३० ॥
नवनिहिचउदसरयणप्पभावपाउब्भवतसयलत्थ ।
छक्खडभरहखित्ताहिवत्तण लब्भए भुवणे ॥ ३१ ॥
त पि हु किर सद्धासलिलसेयपरिवड्डियस्स तस्सेव ।
पचनमुक्कारतरुस्स को वि फलविलसियविसेसो ॥ ३२ ॥
ज पि य सियदेवसुयसवुयसुरसयणसुदरुच्छगे ।
सिप्पिपुंडते मुत्ताहल व उववज्जई तत्तो ॥ ३३ ॥
आजम्म रम्मतणू आजम्मंमुदग्गजोव्वणावत्थो ।
आजम्म रोगजरारयसेयविवज्जियसरीरो ॥ ३४ ॥
आजम्म न्हारुवसड्डिमसरुहिराइतणुमलविमुक्को ।
आजम्म अमिलायतमछवरदेवदूसधरो ॥ ३५ ॥
उत्ततजच्चकचणतरुणदिवायरसमप्पहसरीरो ।
पचप्पहरयणाहरणकिरणकब्बुरियदिसिचक्को ॥ ३६ ॥
अक्खडगडमडललुलतकुडलप्पहापहासिल्लो ।
रमणीयरमणअमरणरमणीगणमणहरो कि च ॥ ३७ ॥
गहचक्कमिक्केल्ल पाडेउ भूयल भमाडेउ ।
सयलकुलाचलचक्क चूरेउ तह य लीलाए ॥ ३८ ॥

सत्याबाण्ग यक्षोना समुदायथी सुरक्षित, नवनिधि अने चौद रत्नोना प्रभावथी प्रादुर्भाव पामता सकल अर्थोवालु अने भुवनोमा छ खड भरतक्षेत्रनु अधिपतिपणु जे प्राप्त थाय छे, ते खरेखर, श्रद्धा सलिलना सिंचनथी परिवर्धित एवा पच-नमस्काररूपी वृक्षना कोई एक फळना विलासनो ज विशेष छे ॥ २६ थी ३२ ॥

वळी, छीपोलीना पडनी मध्यमा रहेल मुक्ताफळनी जेम श्वेत अने दिव्य वस्त्रथी ढकायेली देवशय्यामा सुदर अग सहित जे उत्पन्न थाय छे अने उत्पन्न थया बाद आजन्म सौभाग्य अने युवावस्था युक्त, आजन्म रम्य शरीर, आजन्म रोग, जरा, रज अने स्वेद रहित शरीरयुक्त, आजन्म स्नायु-नस, वसा-चरबी, मास अने रुधिर वगेरे शरीरना मलथी विमुक्त तथा आजन्म म्लान न थाय एवी पुष्पमाला अने श्रेष्ठ देवदूष्यने धारण करनार तथा खूब तपावेला उत्तम जातिवाळा काचन अने तरुण सूर्य समान छे शरीरनी शोभा जेनी, पाच प्रकारना रत्नमय आभरणोना किरणोथी कावरचीतरु छे दिक्चक्र जेने, लटकता कुडलोनी प्रभाथी प्रकाशमान छे अखडित गड-मडल जेने, रमणीय रमणशील देवरमणीओना समुदायना मनने हरण करणार,

---

1 °सरव्वर s । 2 °सुदरच्छगे । 3 °पुंडतो मु s । 4 °म्ममुह° s । 5 सरिच्छ° s J ।

माणसपमुहमहासरसरियादहसायराण सलिलाइं ।
पलयपवणो[1] व्व समकालमेव सत्तो वि सोसेउं ॥ ३९ ॥

तिलुक्कपूरणत्थं झत्ति विउव्वियमहल्लबहुरूवो ।
परमाणुमित्तरूवो वि तह य होउं लहु समत्थो ॥ ४० ॥

तह[2] एक्ककरंगुलिपंचगस्स पत्तेयमग्गभागेसु ।
मेरुपणगाउं[3] एक्केक्कमिक्ककालं धरणसत्तो ॥ ४१ ॥

किं बहुणा संतं पि हु असंतयं तह असंतमवि संतं ।
वत्थू[4] एक्कखण च्चिय दरिसेउमलंकरेउं[5] वा ॥ ४२ ॥

नमिरसुरविसर[6]सिरमणिमऊहरिंछोलिविच्छुरियपाओ ।
भूभंगाइट्ठपहिट्ठसंभमुट्ठिंतपरिवारो ॥ ४३ ॥

चिंताणंतर सहस त्ति संघडंताणुकूलविसयगणो ।
अणवरयरइरसाविलविलासकरणिक्कदुल्ललिओ ॥ ४४ ॥

निम्मलओहिन्नाणानिमेसदिट्ठीइं[7] दिट्ठदट्ठव्वो ।
समकालोदयसमुविंतसयलसुहकम्मपयइ य ॥ ४५ ॥

रिद्धिप्पबंधबंधुरविमाणमालाहिवत्तणं सुइरं ।
पालइ अखलियपसरं सुरलोए किर सुरिंदो वि ॥ ४६ ॥

एकहेला वडे ग्रहचक्रने पाडवा अने भूतलने भमाडवामां समर्थ, लीलापूर्वक सकल कुलाचलना समुदायने चूरवा अने मानस–प्रमुख महासरोवर, सरिता, द्रह अने सागरोना पाणीने प्रलयकालना पवननी जेम एकीसाथे शोषवामां पण समर्थ, मोटा अने घणा एवा वैक्रियरूपो वडे एकीसाथे त्रण लोकने पूरवामां, तथा परमाणु मात्र स्वरूप करवामां पण जे समर्थ, एक हाथनी पांच आंगळीओ ऊपर प्रत्येकना अग्र भागमां एकीसाथे पांचेय मेरुने धारण करवामां समर्थ–वधारे शुं कहेवुं? एक क्षणमां सत् वस्तुने असत् अने असत् वस्तुने सत् देखाडवाने अने करवाने निश्चयथी समर्थ तथा नमता एवा देवसमूहना मस्तक ऊपर रहेल मणिना किरणनी श्रेणि वडे व्याप्त छे चरणो जेना, भ्रूभंग वडे आदेश करायेलो अने हर्षित थयेलो ससंभ्रमपणे ऊभो थतो छे परिवार जेनो, चिंतवतांनी साथे तरत ज संघटित थतो छे अनुकूळ विषयोनो समुदाय जेने, रतिना रस वडे भरपूर विलास करवामां निरंतर अनुरक्त, निर्मल अवधिज्ञान अने अनिमेष दृष्टि वडे जोया छे जोवायोग्य पदार्थो जेणे, समकाळे उदय पामेली छे सघळी शुभकर्मनी प्रकृतिओ जेने तथा ऋद्धिना प्रबंधथी मनोहर एवा विमानोना समुदायोनुं प्राप्त थयुं छे अधिपतिपणुं जेने, अस्खलित प्रसरवाळो

---

1 °पवणु व्व S। 2 तह इक्क° S। 3 °उ इक्के° S। 4 वत्थू इक्क° S। 5 °उं च S J। 6 °विसुरसिरिस° 7 °ट्ठीए S।

तं पि असेसं जाणसु सम्म सब्भावगब्भविहियस्स ।
पंचनमुक्काराराहणस्स लीलाइ य लवु त्ति ॥ ४७ ॥
उड्ढाहोतिरियतिलोगरंगमज्झम्मि अइसयविसेसो ।
दव्वं खेत्त काल भाव च पडुच्च चुज्जकरो ॥ ४८ ॥
दीसइ सुणिज्जए वा जो को वि हु कह वि कस्स विजियंस्स ।
सव्वो वि सो नमुक्कारसरणमाहप्पनिप्फन्नो ॥ ४९ ॥
जलदुग्गे थलदुग्गे पव्वयदुग्गे मसाणदुग्गे वा ।
अन्नत्थ वि दुग्गपए ताणं सरणं नमुक्कारो ॥ ५० ॥
वसियरणुच्चाडणथोभणेसुं परखोभथभणाईसु ।
एसो चिय पच्चलउ तहा पउत्तो नमुक्कारो ॥ ५१ ॥
मंतंतरपारद्धाइ जाइ कज्जाइ ताइं विसमाइं ।
ताण चिय नियसुमरणपुव्वारद्धाण सिद्धिकरो ॥ ५२ ॥
ता सयलाओ सिद्धीओ मंगलाइ च अहिलसंतेण ।
सव्वत्थ सया सम्मं चिंतेयव्वो नमुक्कारो ॥ ५३ ॥

सुरेन्द्र पण लाबा काळ सुधी जे देवलोकनु पालन करे छे, ते सघळु सद्भावपूर्ण पच–नमस्कारनी थयेली आराधनानी लीलानो ज एक लव-अश छे, एम जाणो ॥ ३३ थी ४७ ॥

ऊर्ध्व, अधो अने तिर्च्छा स्वरूप त्रण लोकरूपी रंगमडपमा द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावने आश्रयीने जे कोईने, जे काई, जे कोई विजयी जीवनो आश्चर्यजनक अतिशयविशेष देखाय छे अथवा सभळाय छे, ते सर्व पण नमस्कारना स्मरणनो ज एक महिमा जाणवो ॥ ४८–४९ ॥

जळदुर्गमा, स्थळदुर्गमा, पर्वतदुर्गमा, स्मशानदुर्गमा, अथवा अन्यत्र पण दुर्ग एटले कष्ट-पदमा एक नवकार ज त्राण अने शरण छे ॥ ५० ॥

वशीकरण, उच्चाटन, थोभण, क्षोभ अने स्तंभन आदि कार्योमा विधिपूर्वक सदा प्रयुक्त थयेलो नमस्कार ज समर्थ छे ॥ ५१ ॥

अन्य मत्रोथी प्रारभेला जे कार्यो मुश्केल बन्या होय ते सर्व पण नमस्कारना स्मरणपूर्वक प्रारभेला होय तो शीघ्र सिद्ध थाय छे ॥ ५२ ॥

ते कारण माटे सकल सिद्धिओ अने मगलोने इच्छता आत्माए सर्वत्र सदा सम्यक् प्रकारे नवकारने चिंतववो जोईए ॥ ५३ ॥

---

1 दव्वं सित्तं S । 2 वि जगस्स S J । 3 °मु मुज्झोम° S J । 4 एसु चिय पचलओ S J । 5 °ई सव्वाई S J । 6 सिद्धिउ J ।

जागरणसुयणछीयणचिट्ठणचंकमणखलणपडणेसु ।
एस किर परमसंतो अणुसरियव्वो पयत्तेणं ॥ ५४ ॥
जेणेस नमुक्कारो दत्तो पुन्नाणुबंधिपुन्नेणं ।
नारयतिरियगइओ तस्सावस्सं निरुद्धाओ ॥ ५५ ॥
न स पुणरुत्तं पावइ कयाइ किर अयसनीयगोत्ताइं ।
जम्मंतरे वि दुलहो तस्स न एसो नमुक्कारो ॥ ५६ ॥
जो पुण सम्मं गुणिउं नरो नमुक्कारलक्खमक्खंडं ।
पूएइ जिणं संघं बंधइ तित्थयरनामं सो ॥ ५७ ॥
हुंति नमुक्कारपभावओ य जम्मंतरे वि किर तस्स ।
जाईकुलरूवारुग्गसंपयाओ पहाणाओ ॥ ५८ ॥
ताव न जायइ चित्तेण चिंतियं पत्थियं च वायाए ।
काएण य पारद्धं जाव न सरिओ नमुक्कारो ॥ ५९ ॥
अन्नं च ईमाउ च्चिय न होइ मणुओ कयाइ संसारे ।
दासो पेसो दुभगो नीओ विगलिंदिओ चेव ॥ ६० ॥

जागतां, सूतां, छींकतां, बेसतां, चालतां, स्खलना पामतां के नीचे पडतां आ परममंत्रने ज आदरपूर्वक निश्चये अनुसरवो जोईए—वारंवार स्मरण करवो जोईए ॥ ५४ ॥

पुण्यानुबंधी पुण्यवाळा जे आत्माए आ नवकारने प्राप्त कर्यो छे, तेनी नरक अने तिर्यंच गतिओ अवश्य रोकाई गई छे ॥ ५५ ॥

वळी, कह्युं छे के, आ नमस्कार जेणे क्यांईथी पण निश्चये प्राप्त कर्यो छे तेने वारंवार अपयश अने नीच गोत्र आदिनी प्राप्ति थती नथी तथा जन्मांतरमां पण तेने फरीवार आ नमस्कारनी प्राप्ति दुर्लभ थती नथी ॥ ५६ ॥

वळी, जे मनुष्य एक लाख नमस्कारने अखंडपणे गणे तथा श्रीजिनेश्वरदेव अने संघनी पूजा करे, ते तीर्थंकर—नामकर्म बांधे छे ॥ ५७ ॥

नमस्कारना प्रभावथी जन्मांतरमां पण प्रधान जाति, कुल, रूप, आरोग्य अने संपदाओ निश्चयथी प्राप्त थाय छे ॥ ५८ ॥

चित्तथी चिंतवेलुं, वचनथी प्रार्थेलुं अने कायाथी प्रारंभेलुं कार्य त्यां सुधी ज थतुं नथी के ज्यां सुधी आ नमस्कार स्मरवामां आव्यो नथी ॥ ५९ ॥

वळी, आ नमस्कारथी मनुष्य संसारमां कदी पण दास, प्रेष्य, दुर्भग, नीच के विकलेन्द्रिय-अपूर्ण इन्द्रियवाळो थतो नथी ॥ ६० ॥

---

1 इमाओ च्चिय S ।

इहपरलोयसुहयरो इहपरलोयदुहदलणपच्चलओ।
एस परमिट्ठिविभैनो[1] भत्तिपउत्तो नमुक्कारो ॥ ६१ ॥
किं वन्निएण बहुणा त नत्थि जयम्मि ज किर न सक्को।
काउ एस जियाण भत्तिपउत्तो नमुक्कारो ॥ ६२ ॥
जइ ताव परमदुलहं सपाडइ परमपयसुहं पि इमो।
ता तदणुसग्गसज्झे[2] तदन्नसुक्खम्मि का गणणा ? ॥ ६३ ॥
पत्ता पाविस्संती पावति य परमपयपुर जे ते।
पंचनमुक्कारमहारहस्स सामत्थजोगेण ॥ ६४ ॥
सुचिर[3] पि तवो तविय चिन्न चरण सुय च बहुपढियं।
जइ ता न नमुक्कारे रई तओ तं गयं विहल ॥ ६५ ॥
चउरगाए सेणाएँ नायगो दीवगो जहा होइ।
तह भावनमुक्कारो दंमणतवनाणचरणाण ॥ ६६ ॥
भावनमुक्कारविवज्जियाइं जीवेण अकयकज्जाइं।
गहियाणि य मुक्काणि य अणंतसो दव्वलिंगाइं ॥ ६७ ॥
तम्हा नाऊणेव जत्तेण तुम पि भावणासार।
आराहणाकयमणो मणम्मि सुदर ! तयं धरसु ॥ ६८ ॥

परमेष्ठीना वैभववाळो भक्तिप्रयुक्त आ नमस्कार आ लोक अने परलोकमा सुखने करनारो छे तथा आ लोक अने परलोकना दु खने दळवामा समर्थ छे ॥ ६१ ॥

वळी, वधारे वर्णन करवाथी शु ? आ जगतमा तेवु काई ज नथी के जे खरेखर भक्तिपूर्वक-प्रयुक्त आ नमस्कार वडे जीवोने प्राप्त न थाय ॥ ६२ ॥

परम दुर्लभ एवा परम-पदना सुखोने पण जो आ पमाडे, तो तेना अनुपगथी अन्य साध्य सुखोनी तो गणना ज शी ? ॥ ६३ ॥

परमपदपुर–मोक्षने जेओ पाम्या छे, पामशे अने पामे छे, ते सर्वे पच नमस्काररूपी महारथना सामर्थ्य-योगे ज छे ॥ ६४ ॥

लावा काळ सुधी तपने तप्यो, चारित्रने पाळ्यु, अने घणा शास्त्रोने भण्यो पण जो नमस्कारमा प्रेम न लाग्यो तो ते सघळु निष्फळ गयु (जाणवु) ॥ ६५ ॥

चतुरगी सेनामा जेम सेनानी दीपक समान छे, तेम दर्शन–ज्ञान–चारित्र अने तपनी आराधनामा भाव–नमस्कार दीपक समान छे ॥ ६६ ॥

भाव-नमस्कार रहित जीवे अनतीवार न कराय एवा कार्योने अने द्रव्यलिंगने निष्फळपणे ग्रहण कर्यां तेमज मूक्या, एम समजीने हे सुदर ! तु आराधनामा एक मनवाळो बनी भावपूर्वक ते (भावनमस्कार)ने मनमा धारण कर ॥ ६७–६८ ॥

1 °विभवो S। 2 °गमज्झे J। 3 °र पि तवो S, °र च तवो J।

संविग्गेणं मणसा अक्खलियफुडमणहरेण य सरेण ।
पउमासणिओ करबद्धजोगमुद्दो य काएणं ॥ ८३ ॥
सम्मं संपुन्नं चिय समुच्चरिज्जा सयं नमुक्कारं ।
उस्सग्गेणेस विही अह बलगलणा तहा न पहू ॥ ८४ ॥
तन्नामाणुग 'अ सि आ उ स'त्ति पंचक्खरे तहवि सम्मं ।
निहुयं पि परावत्तिज्ज कह वि अह तत्थ वि असत्तो ॥ ८५ ॥
ता झाएज्जा[1] 'ॐ' इति संगहिया जं इमेण अरहंता ।
असरीरा आयरिया उवज्झाया[2] मुणिवरा सव्वे ॥ ८६ ॥
एयन्नामाइनिपन्न[3]वन्नसंधिप्पओगओ जम्हा ।
सव्वन्नुपहे[4] एसो 'ॐ'कारो किर विणिद्दिट्ठो ॥ ८७ ॥
एयज्झाणा परमिट्ठिणो[5] फुडं झाइया भवे पंच ।
अहवा जो एयं पि हु झाएउं होज्ज[6] असमत्थो ॥ ८८ ॥
सो पासट्ठियकल्लाणमित्तवग्गेण पंचनवकारं ।
निसुणिज्ज पढिज्जंतं हिययम्मि इमं च भावेज्जा[7] ॥ ८९ ॥
एसो स सारगंठी एस स को वि हु दुलंभलंभु त्ति ।
एसो स इट्ठसंगो[8] एयं तं परमतत्तं ति ॥ ९० ॥

अंत समये संवेगशील मन वडे, अस्खलित, स्पष्ट अने मधुर स्वर वडे तथा करबद्ध योग-मुद्राथी युक्त, शरीरने पद्मासनमां राखीने सम्यक् प्रकारे संपूर्ण नमस्कारनुं स्वयं उच्चारण करवुं ए उत्सर्ग विधि छे; अथवा बळ घटवाथी जो तेम करवा समर्थ न होय, तो परमेष्ठीओना नामने अनुसरनारा 'अ–सि–आ–उ–सा' एवा पांच अक्षरोने सम्यक् प्रकारे मौनपणे परावर्त्तन-जाप करे, जो कोई कारणे तेम करवा पण अशक्त होय तो 'ॐ' एवा एक अक्षरनुं ध्यान करे, कारण के–ए अक्षरो वडे अरिहंत, अशरीरी, आचार्य, उपाध्याय, अने सर्व मुनिवरो संगृहीत थयेला छे। ए पांचेय नामोनी आदिमां रहेला अक्षरोनी संधिना प्रयोगोथी निश्चये आ ॐकार बनेलो छे, एम सर्वज्ञ परमात्माओए आदेश कर्यो छे। एनुं ध्यान करवाथी निश्चयपूर्वक पांचेय परमेष्ठीओनुं स्पष्टपणे ध्यान कर्युं छे अथवा जे ए(एक अक्षर)नुं ध्यान करवाने पण समर्थ नथी ते पासे रहेला कल्याण मित्रोना समुदाय पासेथी पंचनमस्कारने सांभळे अने सांभळती वखते हैयामां आ प्रमाणे भावना करे ॥ ८३ थी ८९ ॥

आ नमस्कार ए सारनी गांसडी छे, आ नमस्कार ए मने इष्टनो समागम छे अने आ नमस्कार ए एक परमतत्त्व छे ॥ ९० ॥

---

1 झाइज्जा S। 2 उज्झाया S J। 3 °निसन्न° S। 4 °न्नुएहि एसो S। 5 परमेट्ठिणो S। 6 झाएउ होइ S। 7 भाविज्जा S। 8 °गो इयं S।

अहह तडत्थो जाओ नूणं भवजलहिणो अहं अज्ज ।
अन्नह कहि अह कह व एस एव समो जोगो ॥ ९१ ॥
धन्नो ह जेण मए अणोरपारम्मि भवसमुद्दम्मि ।
पचन्ह नमुकारो अचिंतचिंतामणी पत्तो ॥ ९२ ॥
किं नाम अज्ज अमयत्तणेण सव्वंगियं परिणओ ह ।
कि वा सयलसुहमओ कओ अकंडेर्ण केणावि ॥ ९३ ॥
इय परमसमरसापत्तिपुव्वमायन्निओ नमुकारो ।
निहणइ किलिट्ठकम्म विस व सियधारणाजोगो ॥ ९४ ॥
जेणेस नमुकारो सरिओ भावेण अतकालम्मि ।
तेणाहूय सुक्ख दुक्खस्स जलजली दिन्नो ॥ ९५ ॥
एसो जणओ जणणी य एस एसो अकारणो बधू ।
एसो मित्त एसो परमुवयारी नमुकारो ॥ ९६ ॥
सेयाण पर सेय मंगल्लाण च परममगल्ल ।
पुन्नाण परमपुन्न फल फलाण[3] नमुकारो ॥ ९७ ॥

अहो हो ! आजे हु भवसमुद्रना तटने पाम्यो छु, अन्यथा क्या हु ? क्या आ ? अने क्या मारो तेनी साथेनो सरखो योग होय ॥ ९१ ॥

हु धन्य छु के, जेणे अनादि–अनत भवसमुद्रमा अचिंत्य चिंतामणि एवा पाच–परमेष्ठीनो नमस्कार प्राप्त कर्यो छे ॥ ९२ ॥

शु हु आजे सर्व अगोमा अमृतपणु पाम्यो छु ? अथवा अकाळे ज शु कोईए मने सकल सुखमय कर्यो छे ? ॥ ९३ ॥

ए रीते परम शमरसापत्तिपूर्वक आचरेलो नमस्कार, शीत धारण(शीतोपचार)नो प्रयोग जेम विषने हणे तेम क्लिष्ट–कर्मोने हणी नाखे छे ॥ ९४ ॥

अतकाळे जेणे आ नमस्कारनु भावपूर्वक स्मरण कर्यु छे, तेणे सुखने आमत्रण आप्यु छे अने दुःखने तिलाजलि दीधी छे ॥ ९५ ॥

आ नमस्कार ए पिता छे, ए ज माता छे, ए ज अकारण बधु छे, ए ज मित्र छे अने ए ज परम उपकारी छे ॥ ९६ ॥

कल्याणमा परम कल्याण, मागलिकोमा परम मागलिक, पुण्योमा परमपुण्य अने फळोमा परमरम्य फळ पण आ नमस्कार ज छे ॥ ९७ ॥

---

1 समाओगो ह ज । 2 °ढे वि क ह ज । 3 °ण परमरम्म ह ।

तह एस नमुक्कारो इहलोगगिहाउ जीवपहियाणं ।
परलोयपहपयट्टाण परमपत्थयणसारिच्छो ॥ ९८ ॥
जह जह तस्स वणरसो परिणमइ मणम्मि तह तह कमेण ।
खयमेइ कम्मगंठी नीरनिहित्तामकुंभु व्व ॥ ९९ ॥
तव नियमसंजमरहो पंचनमुक्कारसारहिपउत्तो ।
नाणतुरंगमजुत्तो नेइ नरं निव्वुईनयरं ॥ १०० ॥
जलणो वि होज्ज सीओ पडिपहहुत्तं[1] वहिज्ज सुरसरिया ।
न य नाम निज्जइ इमो परमपयपुरं नमुक्कारो ॥ १०१ ॥
आराहणापुरस्सरमणन्नहियओ विसुद्धसुहलेसो ।
संसारु[2]च्छेयकरं ता मा सिढिलसु नमुक्कारं ॥ १०२ ॥
एसो हि नमुक्कारो कीरइ नियमेण मरणकालम्मि ।
जं जिणवरेहिं दिट्ठो संसारुच्छेयणसमत्थो[3] ॥ १०३ ॥
अक्खेवेणं कम्मक्खओ[4] तह य मंगलागमो नियमा ।
तंकाल[5] चिय सम्मं पंचनमुक्कारकरणफलं ॥ १०४ ॥

तथा आ लोकरूपी घरथी नीकळीने परलोकना मार्गे प्रवर्त्तेला जीवरूपी पथिकोने आ नमस्कार परम पथ्यदन—भाता तुल्य छे ॥ ९८ ॥

जेम जेम तेना वर्णोनो रस मनमां परिणाम पामे छे, तेम तेम क्रमे करीने पाणीमां स्थापन करेला काचा कुंभनी माफक जीवनी कर्मग्रंथी क्षयने पामे छे ॥ ९९ ॥

पंच-नमस्काररूपी सारथि जेमां हांकनार छे, अने ज्ञानरूपी घोडा जेमां जोडायेला छे, एवो तप, नियम अने संयमरूपी रथ मनुष्यने निर्वृति नगरीए लई जाय छे ॥ १०० ॥

अग्नि कदाच शीतल थई जाय अने सुर—सरिता—गंगा कदाच सांकडा मार्गवाळी थई वहेवा मांडे परंतु आ नमस्कार परमपदपुर—मोक्षे न लई जाय, ए बने नहीं ॥ १०१ ॥

अनन्य हृदय अने विशुद्ध लेश्या वडे आराधन करायेलो आ नमस्कार संसारनो उच्छेद करनारो छे, ए कारणे तेमां शिथिल न थाओ—तेना ऊपरनो आदर मंद न करो ॥ १०२ ॥

मरणकाले विधिपूर्वक [स्मरण] करातो आ नमस्कार संसारनो उच्छेद करवाने समर्थ छे, एम खरेखर, श्रीजिनेश्वरोए जोयेलुं छे ॥ १०३ ॥

पंच-नमस्कारने [स्मरण] करवानुं तात्कालिक फळ अक्षेपे एटले शीघ्रताथी कर्मनो क्षय करे छे अने निश्चितपणे मंगळ करे छे ॥ १०४ ॥

---

1 °त्तं च होज्ज S J । 2 ससारच्छेय° S । 3 °समट्ठो J । 4 °ओं य तह मं° S । 5 तक्कालिं चिय S, तक्कालि चिय J ।

कालतरभावि फलं तहविहमिहभवियमन्नभविय च ।
इहभवियमत्थकामा उभयभंयसुहावहा सम्म ॥ १०५ ॥
इहभवसुहावहा तत्थ ताव अकिलेसभवणओ ताण ।
आरुग्गपुव्वग तह निविग्घं ताण माणणओ ॥ १०६ ॥
परभवसुहावहा पुण सुत्तविहीए सुठाणविणिओगा ।
पचनमुक्कारफल अह भन्नइ अन्नभवियं पि ॥ १०७ ॥
जइ वि न तज्जम्मे चिय सिद्धिगमो कह वि जायइ तहावि ।
पत्तनमुक्कारा इक्कसिं पि किं किर न विराहिता ॥ १०८ ॥
उत्तमदेवेसु तहा कुलेसु विउलेसु अतुलसुहकलिया ।
हिडित्ता पज्जते सिज्झति व चेव विहुयरया ॥ १०९ ॥
इह पुण परमत्थेण नाणावरणाइयाण कम्माण ।
पइखणमणतपुग्गलविगमम्मी जायमाणम्मी ॥ ११० ॥
पाउणइ नमुकारस्स पढमवन्न नवकारमह सेसे ।
वन्ने पत्तेय चिय तहऽणतविसुद्धिसब्भावे ॥ १११ ॥
एव इक्केक पि हु अक्खरमचतकम्मखयलब्भं ।
जस्स स कह न वंछियफलदाई होइ नवकारो ॥ ११२ ॥

ते(नमस्कार)नु काळातर भावि फळ बे प्रकारनु छे–१ आ भव सबधी अने २ अन्य भवसबधी । आ भव सबधी फळ बने भवमा सम्यक् सुखने आपनारा अर्थ–कामनी प्राप्तिरूप छे। तेमा अर्थ–काम आ भवमा सुखने आपनारा एटले–अक्लेश के अल्प–क्लेशथी मळनारा, रोग रहित अने विघ्नरहितपणे उपभोगमा आवनारा (थाय छे) तथा परभवमा सुखने आपनारा छे एटले सूत्रोक्त विधि मुजब सुदर स्थानमा सत्क्षेत्रोमा विनियोग करवाथी थाय छे। हवे अन्य भवसबधी पच–नमस्कारनु फळ ए छे के–नमस्कारने पामेला अने तेनी जरा पण विराधना नहि करनारा आत्माओ जो कोई कारणसर ते ज भवने विषे सिद्धगतिने न पामे, तो उत्तम देवपणे उत्पन्न थाय छे अने त्याथी विपुल कुलोमा अतुल सुखथी युक्त एवु मनुष्यपणु मेळवे छे ॥ १०५ थी १०९ ॥

ज्ञानावरणीय आदि कर्मोना अनत पुद्गलो प्रतिक्षण दूर थवाने कारणे परमार्थथी नमस्कारना प्रथम अक्षर 'न'कारनो लाभ थाय छे। शेष प्रत्येक अक्षरोनो लाभ पण क्रमे करीने अनतगुणनी विशुद्धि थवाथी थाय छे ॥ ११० थी १११ ॥

ए रीते जेनो एकेक पण अक्षर अत्यत कर्मक्षय थवाथी मळे छे, ते नमस्कार कोने वाछित फळदायी न थाय ? ॥ ११२ ॥

---

1 °भवसु° S । 2 परम सु° J । 3 °ओगो J । 4 अह भन्नइ S । 5 तज्जम्म J । 6 जायए तह वि S J । 7 इक्क पि किर तमविराहिंता J । 8 किर तमविराहिंता S ।

एवं च उभयलोगे वि सुक्खमूलं इमं मुणेऊण ।
आराहणाभिलासी भद्द ! तुमं सइ सरिज्ज जओ ॥ ११३ ॥
पंच[1]न्ह नमुक्कारो जीवं मोएइ भवसहस्साओ ।
भावेण कीरमाणो होइ पुणो बोहिलाभाय ॥ ११४ ॥
पंचन्ह नमुक्कारो धन्नाण भवक्खयं करिंताणं ।
हि[2]ययम्मि अणुमुयंतो विसुत्तियावारओ होइ ॥ ११५ ॥
पंचन्ह नमुक्कारो एवं खलु वन्निओ महत्थु त्ति ।
जो मरणम्मि उवगए अभिक्खणं कीरए बहुसो ॥ ११६ ॥
सत्त पण सत्त य नवक्खर-पमाण-पयड-पंचपयं ।
ति[3]त्तीसक्खरचूलं सुमरह नवकारवरमंतं ॥ ११७ ॥
इय संविग्गसिरोमणिजिणेसरायरियपायपंकयब्भसलो ।
भणइ जिणचंदसूरी दूरीकयकलिमलं नमुक्कारफलं ॥ ११८ ॥

इति पञ्चनमस्कारफलस्तोत्रम् ।

ए प्रमाणे बंने लोकमां आ (नमस्कार) सुखनुं मूळ छे, एम जाणीने, आराधनानी अभिलाषावाळा हे भद्र ! तुं एनुं सदा स्मरण कर; कारण के पंचपरमेष्ठीने करेलो नमस्कार जीवने हजारो भवोथी मुकावे छे, तथा भावपूर्वक स्मरण कराय तो ते बोधिलाभ माटे थाय छे ॥ ११३ थी ११४ ॥

पांच परमेष्ठीओने करेलो नमस्कार धन्य पुरुषोने भवनो क्षय करावे छे अने हृदयथी तेने नहि छोडनारने ते विस्रोतसिका एटले उन्मार्गे जता चित्तने वारनारो बने छे ॥ ११५ ॥

ए रीते पंच नमस्कार महान् अर्थवाळो छे एम शास्त्रोमां वर्णन करेलुं छे, अने ए कारणे मरण अवसर आवे त्यारे तेनुं निरंतर अने वारंवार स्मरण कराय छे ॥ ११६ ॥

ते सात, पांच, सात, सात, अने नव अक्षर प्रमाण छे, अने प्रगट पांच पदोवाळा अने तेत्रीस अक्षर प्रमाण श्रेष्ठ चूलिकावाळा उत्तम श्रीनमस्कार–मंत्रनुं तमे निरंतर स्मरण (ध्यान) करो ॥ ११७ ॥

ए रीते संविग्नशिरोमणि श्रीजिनेश्वरसूरिना चरण–कमलने विषे भ्रमर समान **श्रीजिनचंद्रसूरि,** पापमळने दूर करीने नवकारनुं फळ कहे छे ॥ ११८ ॥

---

1 पंचपइ न° J । 2 हिययं अ° S J । 3 अक्खरतित्तीसवरचूलं S J ।

(स्तोत्र–परिचय)

आ स्तोत्रनी मूळ नकल जैन साहित्यविकास मंडळना संग्रहमां हती, ते परथी अहीं संपादित करी अनुवाद साथे आपवामां आवेल छे ।

S संज्ञाथी जै सा वि म नी नकल जे मूळ आदर्श तरीके राखवामां आवी छे ।

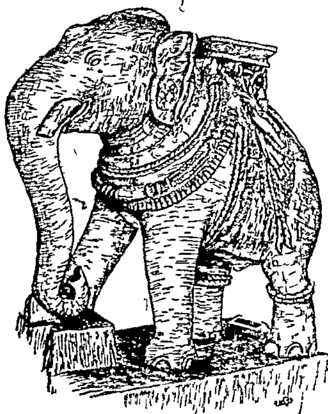
J संज्ञाथी श्री जिनविजयजी मुनिए छपावेला फोर्मो ऊपरथी पाठांतरो लीधा छे ।

आ स्तोत्रना 'नमुक्कारफलपगरण' अने 'वुड्ढनमुक्कारफलथुत्तं' एवां नामो पण मळे छे ।

केटलाक आचार्योए आ स्तोत्रनी गाथाओने पोतानी कृतिमां प्रमाण तरीके नोंधी छे ज्यारे केटलाक संग्रहात्मक ग्रंथोमां आ स्तोत्रनी गाथाओनो संग्रह करेलो जोवामां आवे छे ।

आ स्तोत्रना कर्ता श्रीजिनचंद्रसूरि, जेओ श्रीजिनेश्वरसूरिना शिष्य हता एम आ स्तोत्रनी छेल्ली ११८ मी गाथामां नोंधवामां आव्युं छे ।

तेओ श्रीअभयदेवसूरिना वृद्ध सतीर्थ्य हता । श्रीअभयदेवसूरिनी विनंतिथी 'संवेगरंगशाला' (आराधना) नामक ग्रंथ प्राकृतमां रच्यो छे, तेनुं संशोधन श्रीप्रसन्नचंद्रसूरि, श्रीगुणचंद्र अने श्रीजिनवल्लभगणिए कर्युं हतुं ए ज जिनचंद्रसूरिए आ स्तोत्रनी रचना करेली छे । आ स्तोत्रमां नमस्कारनुं फळ विशद अने सचोट रीते दर्शाववामां आव्युं छे ।



[१९]

पंचनमुक्कारफलं।

घण[1]घाइकम्ममुक्का अरहंता तह य सव्वसिद्धा य।
आयरि[2]यउवज्झाया पवरा तह सव्वसाहू य ॥ १ ॥
एयाण नमुक्कारो पंचन्ह वि पवरलक्खणधराणं।
भवियाण होइ सरणं संसारे संसरंताणं ॥ २ ॥
उड्ढम[3]हे तिरि[4]यम्मि जिणनवक्कारो पहाण[5]ओ नवरं।
नर-सुर-सिवसुक्खाणं [सु]कार[6]णं इत्थ [7]भवणम्मि ॥ ३ ॥
तेण इमो निच्चं चिय पढिज्ज[8] सुत्तुट्ठिएहिं अणवरयं।
होइ च्चिय दुहदलणो सुहज[9]णओ भवियलोयस्स ॥ ४ ॥
जाए[10] वि जो पढिज्जइ जेण[11] य जायस्स होइ[12] बहुरिद्धी।
अवसाणे वि पढिज्जइ जेण [13]मओ [14]सुग्गइं जाइ ॥ ५ ॥
आवइहिं पि पढिज्जइ जेण[15] य लंघेइ आवइसयाइं।
रिद्धीहिं पि[16] पढिज्जइ जेण[17] य सा जाइ वित्थारं ॥ ६ ॥

अनुवाद।

घनघाती कर्मोथी रहित अरिहंतो, सर्वसिद्धो, प्रवर एवा आचार्यो, उपाध्यायो तेमज सर्व–साधुओ–ए रीते श्रेष्ठ लक्षणने धारण करनारा ए पांचेय परमेष्ठीओने करेलो नमस्कार संसारमां भटकता भव्य–प्राणिओने शरणरूप छे ॥ १–२ ॥

ऊर्ध्वलोक, अधोलोक अने तिर्यग्लोकमां श्रीजिन(कथित) नवकार प्रधान छे तथा मनुष्यनां सुखो, देवनां सुखो अने मोक्षनां सुखोनुं परम कारण छे ॥ ३ ॥

ते कारणे सूतां अने ऊठतां निरंतर नवकार(मंत्र)ने गणवो जोइए। ते निश्चयपूर्वक भव्य–लोकोनां दुःखोने हणनारो अने सुखोने उत्पन्न करनारो छे ॥ ४ ॥

जन्मसमये जो ते भणवामां आवे तो जन्म लेनारने बहु संपत्ति आपनारो थाय छे अने मृत्यु समये जो भणवामां आवे तो मृत्यु पछी सुगतिने आपनारो थाय छे ॥ ५ ॥

आपत्तिना समये पण जो तेने भणवामां आवे तो सेंकडो आपत्तिओथी पार पमाय छे अने संपत्तिना समये भणवामां आवे तो ते संपत्तिओ विस्तार पामे छे ॥ ६ ॥

---

1 °घायकम्मुका J। 2 °रिया उ° N। 3 °महो S; °मह A। 4 °यलोए जि° A। 5 °णवो न° S। 6 °णं एत्थ A। 7 भुव° S। 8 °ढियइ A; °ज्जए J। 9 °जणणो भ° S J। 10 °एहिं जो J। 11 जेणेव J। 12 °इ फलरिद्धि A। 13 मुओ J। 14 सोगइं A। 15 जेणेव N। 16 सो प° A। 17 जेणेसा A।

न[1] य बीहंति सुराणं विज्ञाहरदेवँनरवरिंदाण।
जाण[2] इमो नवकारो सांस व्व पइट्ठिओ कंठे ॥ ७ ॥
जह अहिणा दट्ठाणं गारुडमंतो विसं पणासेइ।
तह नवकारो मंतो पावविसं नासइ असेसं ॥ ८ ॥
किं एस महारयणं किं वा चिंतामणि व्व नवकारो।
किं कप्पद्दुमसरिसो नहु नहु ताण पि अहिययरो ॥ ९ ॥
चिंतामणिरयणाइं कप्पतरू ईक्कजम्मसुहहेऊ।
नवकारो पुण पवरो सग्गपवग्गाण दायारो ॥ १० ॥
ज किंचि परमतत्तं परमप्पयकारणं च जं किंपि[8]।
तत्थ[9] इमो नवकारो झाइज्जइ परमजोगीहिं ॥ ११ ॥
जो गुणइ लक्खमेगं पूएइ विहीइ जिणनमुक्कारं।
तित्थयरनामगुत्तं सो बधइ नत्थि संदेहो ॥ १२ ॥
*जो पुण लक्खमणूणं परिअट्टेऊण पूअए संघं।
सो तइयभवे सिज्झइ अहवा सत्तट्ठमे जम्मे ॥ १३ ॥

आ नवकारने श्वासनी माफक जे कंठने विषे धारण करे छे, ते देवताओथी बीता नथी अने विद्याधर के चक्रवर्तीओथी पण भय पामता नथी ॥ ७ ॥

जेम गारुडमंत्र सर्पथी करडायेलाना विषनो नाश करे छे, तेम नवकार मंत्र समग्र पापरूपी विषनो नाश करे छे ॥ ८ ॥

शु आ नवकार महारत्न छे? अथवा चिंतामणिरत्न के कल्पवृक्ष समान छे? नहि, नहि ए तो तेनाथी पण वधारे श्रेष्ठ छे, कारण के चिंतामणिरत्न वगेरे अने कल्पतरु तो एक जन्मना सुखना कारण छे, ज्यारे श्रेष्ठ एवो नवकार तो स्वर्ग अने मोक्षने आपनारो छे ॥ ९–१० ॥

जे काई परमतत्त्व छे अने जे कोई परम पदनु कारण छे, तेमा पण ते नवकारनु परम योगीओ चिंतवन करे छे (मतलब के बधामा सारभूत नवकार ज छे।) ॥ ११ ॥

जे एक लाख नवकारने गणे छे अने विधिपूर्वक श्रीजिनेश्वरदेवने पूजे छे, ते श्रीतीर्थंकर नाम–गोत्रने बाधे छे, एमा सदेह नथी ॥ १२ ॥

वळी, जे निश्चयपूर्वक लाख नवकार गणीने संघनी पूजा करे छे, ते त्रीजे भवे अथवा सातमा के आठमा जन्ममा सिद्ध थाय छे ॥ १३ ॥

---

1 न व सिरि हुंति S J, नव सिरि हवति A। 2 ताण A। 3 °र नेयन° J। 4 नव य N। 5 जेण S। 6 सासु व्व S, निच चिअ J। 7 एगज° A J। 8 किंचि S। 9 तत्थ वि सो S, तत्थ वि जिणन° A। 10 कारो S। * नास्तीय गाथा Y आदर्शे विना कस्मिंश्चित् प्रतौ। * A आदर्शे २३ अङ्काङ्किताया गाथाया अङ्क १८।

सट्ठिसयं विजयाणं पवराणं जत्थ सासओ कालो।
तत्थ वि जिणनवकारो इय[1] एस पढिज्जए निच्चं ॥ १४ ॥
एरावएसु[2] पंचसु पंचसु भरहेसु सु च्चिय पढंति।
जिणनवकारो पवरो[3] सासयसिवसुक्खदायारो ॥ १५ ॥
जेण मरंतेण[4] इमो नवकारो पाविओ कयत्थेण।
सो[5] देवलोए[6] गंतुं परमपयं तं पि पावेइ ॥ १६ ॥
एसो अणाइकालो अणाइजीवो अणाइजिणधम्मो।
तइया वि ते पढंता एयं[7] च्चिय जिणनमुक्कारं[8] ॥ १७ ॥
जे केई[9] गया मुक्खं गच्छंति य केवि[10] कम्ममलमुक्का।
ते[11] सव्वेवि य जाणसु[12] जिणनवकारप्पभावेण[13] ॥ १८ ॥
नहु[14] किंचि तस्स पहवइ डाइणि-वेयाल[15]-रक्ख-मारिभयं।
नवकारपभावेणं नासंति य[16] सयलदुरियाइं ॥ १९ ॥

पांच महाविदेह क्षेत्रना उत्तम १६० विजयो छे के जेमां शाश्वत (एकसरखो सुखनो) समय छे, तेमां पण आ प्रसिद्ध श्रीजिन-नवकार निरन्तर भणाय छे ॥ १४ ॥

पांच भरत अने पांच ऐरवत क्षेत्रमां पण शाश्वत सुखने आपनारो आ ज नवकारमंत्र गणाय छे ॥ १५ ॥

मरती वखते जे कृतार्थ पुरुषे आ नवकार-मंत्रने प्राप्त कर्यो छे, ते देवलोकमां जाय छे अने परम-पदने पण पामे छे ॥ १६ ॥

आ काळ अनादि छे, आ जीव अनादि छे अने आ जिन-धर्म पण अनादि छे, त्यारथी लईने (अनादि काळथी) आ जिन-नवकार ते भव्य-जीवो वडे भणाय छे। (अर्थात् आ नमस्कार शाश्वत छे।) ॥ १७ ॥

जे कोई मोक्षमां गया छे, अने जे कोई कर्म-मलथी रहित बनीने मोक्षमां जाय छे, ते सर्वे श्रीजिन-नवकारना प्रभावथी गया छे, एम निश्चयपूर्वक समजो ॥ १८ ॥

नवकारना प्रभावथी डाकिनी, वेताल, ग्रह अने मरकी वगेरेनो भय कांई करी शकतो नथी, तथा बधां पापो नाश पामे छे ॥ १९ ॥

---

1 एसो व पढिज्जए पढमं A, एसो पढिज्जए नवरं J। 2 एरावएहिं पंचहिं, पंचहिं भरएहिं सु S: एरवएहिं पंचहिं, पंचहिं सु A। 3 मंतो J। 4 °ते य इमो N। 5 सो गंतुं दिवलोयं A। 6 °लोइ गंतुं S। 7 एसु च्चिय S। 8 °कारो N। 9 के वि गया N A। 10 केइ A। 11 ते सव्वे च्चिय S; तेसु च्चिय J। 12 जाणह A। 13 °वेणं S। 14 न हु तस्स किंचि प° S; न य कि A। 15 °रिक्ख° A। 16 व्व A।

वाहि-जल-जलण-तक्कर-हरि-करि-संगाम विसहरभयाइं ।
नासंति तक्खणेण जिणनवकारप्पभावेण ॥ २० ॥
इय एसो नवकारो भणिओ सुर-सिद्ध-खयरपमुहेहिं ।
जो पढइ भत्तिजुत्तो सो पावइ परमनिव्वाणं ॥ २१ ॥[2]
अडवि-गिरि-रन्नमज्झे भय पणासेइ[3] सुमरिओ [4]संतो ।
रक्खइ भवियसयाइं माया जह पुत्तभंडाइं ॥ २२ ॥*
थंभेइ जल जलण चिंतियमित्तो वि पंचनवकारो ।
अरि-मारि-चोर-राउल-घोरुवसग्ग पणासेइ ॥ २३ ॥[5]
*हिअयगुहाए नवकारकेसरी जाण संठिओ निच्चं ।
[6]कम्मट्ठगंठिदोघट्टथट्टय ताण परिणट्ठं ॥ २४ ॥[7]
*धन्नाण मनोभवणे सद्धानहुमाणनेहचुड्डिल्लो ।
मिच्छत्ततिमिरहरणो वट्टइ नवकारवरदीवो ॥ २५ ॥
*नवकाराओ अन्नो सारो मंतो न अत्थि तीलोए ।
तम्हा अणुदिण च्चिय झायव्वो परमभत्तीए ॥ २६ ॥

श्री जिन–नवकारना प्रभावथी व्याधि, पाणी, अग्नि, चोर, सिंह, हाथी, संग्राम अने सर्प आदिना भयो तत्काळ नाश पामे छे ॥ २० ॥

देवताओ, सिद्धो अने विद्याधरोए आ नवकारने गण्यो छे । जे कोई भक्तिपूर्वक आने भणे छे, ते परम–निर्वाण (मोक्ष) ने पामे छे ॥ २१ ॥

जंगल, पर्वत के अरण्यनी मध्यमां स्मरण करायेलो आ नवकार भयनो नाश करे छे अने माता जेम पुत्र–दौहित्रोनुं रक्षण करे छे तेम आ सेंकडो भव्योनुं रक्षण करे छे ॥ २२ ॥

आ पंच नमस्कार चिंतववा मात्रथी पण पाणी अने अग्निने थंभावी दे छे तथा शत्रु, मरकी, चोर अने राजाओना घोर उपसर्गोनो अत्यंत नाश करे छे ॥ २३ ॥

जेओना हृदयरूपी गुफामां नमस्काररूपी केसरी सिंह सदा रहेलो छे, तेओना आठ कर्मनी गांठरूप हाथीओनो समूह समस्त प्रकारे नाश पामेलो छे ॥ २४ ॥

वळी, मिथ्यात्वरूपी अंधकारने हरनारो एवो आ नमस्काररूपी श्रेष्ठ दीपक, जेमां श्रद्धारूप दिवेट अने बहुमानरूपी तेल छे, ते धन्य पुरुषोना मनरूपी भवनमां शोभे छे ॥ २५ ॥

त्रणे जगतमां आ नवकारथी बीजो साररूप मंत्र नथी, तेथी अत्यंत भक्तिपूर्वक निरंतर तेनुं ध्यान करवुं जोईए ॥ २६ ॥

---

1 इ सासय ठाणं J । 2 एषा २१ अङ्कस्था गाथा A प्रतौ २७ । 3 इ चिंतिओ मंतो A । 4 मंतो S । 5 एषा २३ अङ्काङ्किता गाथा A प्रतौ २१ । * एतच्चिह्नाङ्कितं गाथाचतुष्कं J आदर्शे नास्ति । 6 दुट्ठट्ठकम्मदो A । 7 २८ गाथा A प्रतौ २२ अङ्काङ्किता ।

[२०]

सिरिजिणदत्तसूरिविरइयं

नमुक्काररहस्सथवणं ॥

ॐ नमो अरहंताणं भगवंताणं तिलोगनाहाणं ।
जिणचंदाणं तिहुअणगुरूण तिजइक्कसाराणं ॥ १ ॥
तेलुक्कमंगलाणं तेलुक्कुत्तमग्रुणीसराणं च ।
तिहुअणच्चिअमहाणं चरित्तसुअधम्मपभवाणं ॥ २ ॥
ॐ सिरि–हिरि–धिइ–कित्तिओ बुद्धी–लच्छीओ सिद्धि-रिद्धीओ ।
सव्वदेवयाओ जिणपवयण–विज्जमाईणं ॥ ३ ॥
भवणवई–वणयराणं जोइसियाणं विमाणवासीणं ।
देवा देवीओ वा सक्काइया सुरिंदा य ॥ ४ ॥
तस्सामाणिय-दिसि लोगदेवा य तायतीसा य ।
परिसोववन्नगा तह सव्वे वि सुरा सुरीओ अ ॥ ५ ॥
गह-रिक्ख-तारगाणं देवा देवीओ तिरियलोगम्मि ।
झंभग - मुक्खिय- (सुखित्त)-गिह-देस-दव्वसमयाण भावाणं ॥ ६ ॥
रक्खंतु मे सरीरं सव्वभया असेस-देवाणं ।
भूय-पिसायाईणं, खुद्दाणं तिरिय-मणुयाणं ॥ ७ ॥

अनुवाद

त्रणे जगतना नाथ, जिनचंद्र, त्रिभुवनगुरु, त्रणे जगतमां अनन्य सारभूत, त्रणे लोकमां मंगलस्वरूप, त्रणे लोकमां उत्तम मुनीश्वर, त्रिभुवनपूजित होवाने कारणे श्रेष्ठ (त्रणे भुवन वडे सत्कारित अने पूजित), चरित्र अने श्रुतधर्मना उद्भवस्थानरूप एवा श्रीअरिहंत भगवंतोने हुं ॐ कारपूर्वक नमस्कार करूं छुं ॥ १–२ ॥

ॐ श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, सिद्धि अने ऋद्धि देवीओ, जिन प्रवचन अने विद्या वगेरेनी सर्व देवताओ (प्रवचनदेवीओ, विद्यादेवीओ वगेरे सर्व देवताओ); भवनपति, व्यंतर, ज्योतिष्क अने विमानवासीना सर्व देवो तेमज देवीओ तथा शक्रेन्द्र वगेरे देवेन्द्रो; इन्द्रना सामानिक देवो, दिक्पाल देवो, लोकपाल देवो, त्रायस्त्रिंश देवो तथा पर्षदामां रहेला सर्व देवो अने देवीओ; तिर्च्छालोकमां रहेला ग्रह-नक्षत्र-ताराओना देवो अने देवीओ, जृंभक देवताओ, सुंदर क्षेत्र, घर, देश, द्रव्य, काल अने भावना[1] देवो अने देवीओ–ए सर्वे मारा शरीरनुं सकल (दुष्ट) देवोना, भूत–पिशाच वगेरेना, क्षुद्र तिर्यंचो अने मनुष्योना सर्व भयोथी (तेओए करेला उपद्रवोना कारणे उत्पन्न थता सर्व भयोथी) रक्षण करो ॥ ३–७ ॥

---

१ कोई मुनिमा पवित्र भाव उत्पन्न थयो होय तो देवताओ तेनी रक्षा करे छे ।

आहीण वाहीण रोगायकाण णट्ठभावाण (?)।
चक्खुसमुणतह (?) साइणि-जोडणिकयाण महा ॥ स्वाहा ॥ ८ ॥
ॐ आयद्ध (आएज्ज) सोहग्ग सुजय विज्ञ(ण)य च सुजससामित्त।
सुमइत्त-सुसीलत्त, सुसजमत्त सुसमत्त ॥ ९ ॥
सन्नाणं सुचरित्त कुणतु तह परममगलत्त च।
ईसरियत्तसुद(ह)त्त पणयाण भव्वसत्ताण ॥ १० ॥
अरिहंत सिद्ध-आयरिय-उवज्झायाण च सव्वमाहू य (सव्वसाहूण)।
केवलिपन्नत्ताण सुअधम्म च (म्माण) चरित्तधम्माण (सुअधम्मचरित्तधम्माण)॥११॥
एएसिं पभावेण सिज्झतु समीहियाणि सव्वाणि।
अम्हाण सुगुरुजिणदत्तसुद्धधम्मनिरयाण ॥ १२ ॥

तथा राक्षससमूहो, शाकिनी, जोगणी वगेरेथी कराता आधि, व्याधि, रोग, आतक अने नष्टभावोथी (?) मारा शरीरनु रक्षण करो ॥ ८ ॥

ॐ सर्व देवो अने देवीओ! प्रणत एवा भव्य प्राणीओने आयुष्य, सौभाग्य, सुजय, विजय, सुयश, स्वामित्व, सुमति, सुशील, सुसयम, सुसम्यक्त्व, सत्ज्ञान अने सुचरित्र आपो, तथा (तेमनु) परम मगल, ऐश्वर्य अने सुख करो ॥ ९–१० ॥

श्री अरिहतो, सिद्धो, आचार्यो, उपाध्यायो अने सर्व साधुओ, केवलिप्रज्ञप्त श्रुतधर्म अने चारित्रधर्म—ए सर्वना प्रभावथी परम गुरु श्रीजिनेश्वर भगवते आपेल (उपदेशेल) शुद्ध धर्ममा तत्पर एवा अमारा सर्व समीहित (वाछित) सिद्ध थाओ ॥ ११–१२ ॥ (छेल्ली गाथामा कर्ताए 'जिणदत्त' एवु निजनाम श्लेषथी योज्यु छे।)

परिचय

आ स्तवन 'शेठ आणदजी कल्याणजी पेढी हस्तक जैन श्वेताम्बर भडार—लींबडीनी प्रति न ३३२४ (दा न ११८) नी एक पानानी प्रति उपरथी सपादित करीने आपवामा आव्यु छे।

आ स्तोत्रना कर्ता प्रसिद्ध जैनाचार्य श्रीजिनदत्तसूरि छे। तेओ प्रतिभाशाळी तत्त्वज्ञ अने मान्त्रिक हता। तेमनो जन्म स ११३२ मां धोळकामा थयो हतो। तेमना पितानु नाम मत्री वाछिग अने मातानु नाम वाहडदेवी हतु। स ११४१ मा तेमणे दीक्षा लइ सोमचद्र मुनि नाम धारण कर्युं।

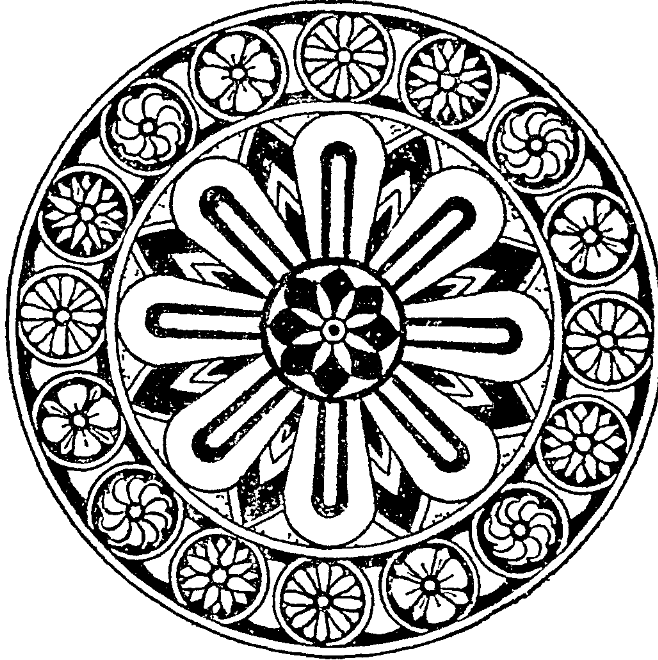
अभ्यासकाळमा तेमनी बुद्धिनी तीव्रता भणावनारने मुग्ध करी दे एवी हती। एक वखत तेमने भणावनार पडिते 'नवकार' नी व्युत्पत्ति करता कह्यु के—'न विद्यते वकारो यत्र स नवकार'।' त्यारे आ बुद्धिशाळी सोमचद्र मुनिए ए व्युत्पत्तिने खोटी ठरावता जवाब आप्यो के—'नवकरण नवकार'।' भणावनार पडित आ जवाबथी चकित थई गया।

आचार्य थया पछी तेओ जिनदत्तसूरि नामथी प्रसिद्धि पाम्या। तेमणे चैत्यवासीओ सामे प्रबळ हाथे काम लीधु हतु अने सिद्धातचर्चामा प्रभावशाळी शब्दोथी सिद्धातस्वातत्र्य प्रगट कर्युं हतु। तेमनी विद्वत्ताथी अजमेरनो राजा अर्णोराज आकर्षायो हतो।

तेमनी मांत्रिक शक्ति माटे तेमना चरित्रमां अनेक प्रसंगो नोंधायेला छे । अहीं एकाद प्रसंगनो उल्लेख करीशुं ।

श्रीजिनदत्तसूरि ज्यारे रुद्रपल्ली तरफ विहार करी रह्या हता त्यारे मार्गे आवता एक गाममां आव्या । एक श्रावक, जेने कोई व्यंतर पीडा करतो हतो, ते तेमनी पासे आव्यो अने तेनो उपाय पूछयो । सूरिजीए उपयोग दईने जोयुं तो ते व्यंतर मंत्र–तंत्रथी पण असाध्य हतो, त्यारे सूरिजीए ते श्रावकने 'गणधरसप्ततिका' रचीने टिप्पणमां लखी आप्युं के, 'तुं थाना उपर दृष्टि स्थिर करजे' श्रावके ज्यारे ए रीते कर्युं त्यारे ते व्यंतर खूब पीडा पामतो एना खाटला पासे आव्यो तो खरो पण शरीरमां प्रवेश करी शक्यो नहीं । बीजा दिवसे ते श्रावकना घरना बारणा सुधी आव्यो अने त्रीजे दिवसे ते आवी ज न शक्यो । आ रीते सूरिजीए ए श्रावकनी व्यंतरपीडा दूर करी हती ।

सूरिजीए अनेक ग्रंथोनी रचना करी छे; तेमां तेमनी मौलिक प्रतिभानां दर्शन थाय छे । ए सूरिजीए 'मंत्र'विदर्भित आ स्तवन रच्युं छे । आ स्तोत्र प्रभावक मनाय छे ।



[२१]

सिरिजयचंदसूरिविरइय

पण्हगब्भं पंचपरमिट्ठिथवण ॥

रेहाहि को तीहि ? को विणयरसजुओ ? सम्मओ वेइ ? चक्कं
किं रूव ? मंतबीअ किमिह सिवकए ? निक्किव(कि)णो को ? सुहं कि ? ।
पूअत्थ वा पय कि ? भणह पडकए केरिस कि निमित्त ?
कि सिद्धतस्स आई ? सयलसुहकर कि पय ? झायए त ॥ १ ॥ [स्रग्धरावृत्तम्]

' णमो अरिहताणं ।' [शृङ्खलाजातिस्त्रिगतश्च]

वृत्तिः—रेखाभि तिसृभि ण इति प्राकृ[त]त्वाद् लोप । नमतीति नमो 'अच्' इत्यनेनाच्, विनीतो **नमो** नन्ता भवति । सम्मदो हर्षो ब्रूते, तस्य सबोधन हे मोद ! । अरा अस्य सन्तीत्यरि चक्रम् । मन्त्रबीज 'अर्हं' अकार विनाऽपि 'र्हं' इत्यपि भवति । निष्कृतो(पो) हन्ता । सुख त्राण । पूजार्थं **नम**' पदम् । पटस्य कारणमर्हं योग्य वदन्ति । अ(आ)गमस्य आदि **'णमो अरिहताण'** इति ॥ १ ॥

अनुवाद

(१)

अ ['शृखलाजाति' नामक चित्रबध [जूओ चित्र न० ५] वडे प्रकट थता 'णमो अरिहताण ' पद सबधी प्रश्नोत्तरो ।]

रीति–१

(१) प्रश्न–त्रण रेखाओथी बनेलो अक्षर कयो ? उत्तर–ण ।

(२) प्रश्न–विनयना रसथी भरेलो शब्द कयो ? उत्तर णमो–(नम)–नमस्कार ।

(३) प्रश्न–समद-हर्षना पर्याय शब्दनु आमत्रण शु ? उत्तर–मोअ ! –(मोद !)–आनद ।

(४) प्रश्न–चक्रवाचक शब्दनो पर्याय शब्द कयो ?
उत्तर–अरि–(अरिन्) –अर एटले आरा जेमा होय ते ।

(५) प्रश्न–कल्याण माटे उपयोगी मत्रबीज कयु ? उत्तर–रिह –(र्हं) –र्हं ।

(६) प्रश्न–कृपा वगरनो माणस शु कहेवाय ? उत्तर–हता–(हन्ता)–मारनार, हिंसक ।

(७) प्रश्न–सुख शु छे ? उत्तर–ताण–(त्राण)–रक्षण ।

आ ['त्रिगत' वडे 'णमो अरिहताण' पद प्रकट थाय छे, ते सबधी प्रश्नोत्तरो]

रीति–२

(१) प्रश्न–पूजाने माटे कयो शब्द वपराय छे ? उत्तर–णमो–(नम)–नमस्कार ।

(२) प्रश्न–मत्रपटना निर्माणमा कारणभूत कोण मनाय छे ? उत्तर–अर्हं-'अरिहताण' ए पद ।

रीति–३

(१) प्रश्न–आगमोनु आदि पद कयु ? उत्तर–णमो अरिहताण ।

किं रूवं अड्ढविंदं हवइ ? दुहयरी का ? हरो आह सत्ता
सेवित्ता कं च सिद्धा ? किमु भणिय जिणो संपवज्जेइ दिक्खं ? ।
अत्थीणं वेइ खुद्दो किमु ? भणइ ससी केरिसं कामिचित्तं ?
अंतद्धाणं अणंतं किमिह ? विजयए मंगलं किं च वीअं ? ॥ २ ॥

'णमो सिद्धाणं ।'　[पञ्चकृत्वो गतिः ।]

वृत्तिः—आच(ढ्य) वृन्दं न मुष्णातीत्येवं शीलं **नमोषिद्धाणं** च तृप्तं भवति । दुःखकरी **न** **मा** अलक्ष्मीः, नञ्समासार्थो न शब्दोऽस्ति, तेन समासः । उः शिवस्तस्य संबोधनं हे ओ! प्राक् सन्धौ **नमो** इति । सिद्धानामाज्ञा पालयित्वा सिद्धा भवन्ति । **'नमो सिद्धाणं'** इति भणित्वा जिनो दीक्षा प्रतिपद्यते । क्षुद्रः कृपणः **न** इति भणति । माश्चन्द्रः प्राकृते सम्बोधने **मो** इति । सह इना कामेन

रीति–४

(१) प्रश्न– सकल (जीवनिकायोने) सुख अपानार पद कयुं ?
उत्तर–'णमो अरिहंताणं' तेनुं ध्यान धराय छे । ×

(२)

['पंचकृत्वो गति' नामक चित्रजाति वडे 'णमो सिद्धाणं' पद प्रकट थाय छे ते संबंधी प्रश्नोत्तरो]

रीति–१

(१) प्रश्न–आढयवृंद–धनिकोनो समूह केवो होय छे ?
उत्तर–ण मोसि–(न मोषिन्) –कदी पण चोरी न करनारो ।
(२) प्रश्न–वळी केवो होय छे ? उत्तर–धाणं–(धानं)–तृप्त परिपूर्ण मनवाळो । *

रीति–२

(१) प्रश्न–दुःख करनारी शी वस्तु गणाय छे ?
उत्तर–ण मा–(न मा)–अलक्ष्मी–दारिद्र्य ।
(२) प्रश्न–शिवनो पर्यायवाचक अक्षर जे 'उ' तेनुं संबोधनमां शुं रूप थाय ?
उत्तर–ओ ! (अहीं 'ण मा' अने 'ओ' नी संधि करवाथी 'णमो' पद थाय छे, अथवा 'णमा' अने शिवनो पर्यायवाची जे 'उ' तेनी संधि करवाथी पण 'णमो' पद थाय छे ।)

× आ श्लोकमा **ण–णमो–मोअ–अरि–रिहं–हंता–ताणं**–आ शब्दो प्रश्नोना उत्तरवडे प्राप्त थाय छे अने तेमा क्रमशः पहेला–पहेला अक्षरोने शृंखला–साकळनी आकृतिमां लखवाथी **णमो अरिहंताणं** पद प्रकट थाय छे, तेथी तेने **शृंखलाजाति** नामक बंध मानवामा आवे छे, तथा ते ज **णमो अरिहंताणं** पद बीजी, त्रीजी अने चोथी रीतिए पण प्रश्नोना उत्तरोथी प्रकट थाय छे । एटले ते त्रिर्गत–त्रण प्रकारोथी गत–प्राप्त मनाय छे । तेनी चित्र–जातिमां गणना थाय छे । जूओ चित्र नं० ५ ।

* अहीं चित्रकाव्यने लीधे **द्धाणं**ने बदले **धाणं**नो प्रयोग छे, अथवा **इद्धाणं–(इद्धाज्ञ)**–ओजस्वी आज्ञा करनारा, एम समजवु ।

पानाण के ? जिणाण किमु करिअ सुही क मुणी ? माण-मोहा
किं रूवा णाइ-णता ? विउलधणभरो वड्डए केरिसाण ? ।
विज्ञाविन्नाणभागी हवइ सुनिउणो केरिसो ? केसि किं वा
थंभेई नीरमाई ? पयमणहमह ज्ञायए त मणेण ॥ ३ ॥

'णमो आयरियाण ।' [चतुःकृत्वो गतिः ।]

वर्तते यत् तत् सत् क्लीनत्वाद् ह्रस्व । अन्तद्धाणमिति पदमन्त विना द्धाणमिति द्धा । द्वितीय मङ्गलम् 'न(ण)मो सिद्धाण' इति विजयते ॥ २ ॥

वृत्ति॰—पानाः पापा पापमन्तस्तेषा नमोदा अहर्षा भवन्तीति योग । जिनानामाज्ञामाचर्य

---

(३) प्रश्न–प्राणीओ कोने सेवीने सिद्ध थया ?
उत्तर–सिद्धाण (सिद्धाज्ञा)–सिद्धोनी आज्ञाने ।

रीति–३

(१) प्रश्न–जिनो दीक्षा ग्रहण करती वखते शु कहे छे ? उत्तर–णमो सिद्धाण ।

रीति–४

(१) प्रश्न–याचकने जोईने क्षुद्र माणस शु कहे छे ? उत्तर–ण–(न)–नथी ।
(२) प्रश्न–प्राकृतमा चद्रना पर्यायवाचक मास् शब्दनु सबोधनमा शु रूप थाय ?
उत्तर–मो !–(म !)–हे चद्र !
(३) प्रश्न–कामी पुरुषनु चित्त केवु होय छे ?
उत्तर–सि–(सि–कामयुक्त) कामदेवनो पर्यायवाची अक्षर जे 'इ' ते जेने सह–'स'–साथे रहेलो छे, तेवु ।
(४) प्रश्न–अतद्धाण' आ पदने अणत एटले 'अत' पद रहित राखीए तो शु थाय ?
उत्तर–'द्धाण'–ए पद ।

रीति–५

(१) प्रश्न–मगलोमा बीजु मगल कयु ?
उत्तर–'णमो सिद्धाण' ए पद । ते विजयने पामे छे *।

(३)

['चतु कृत्वो गति' नामक चित्र–जाति सबधी प्रश्नोत्तरो ।]

रीति–१

(१) प्रश्न–पापी पुरुषो केवा होय छे ? उत्तर–ण मोआ–(न मोदा) हर्ष वगरना ।
(२) प्रश्न–जिनोनी आज्ञाने शु करवाथी सुखी थवाय छे ?
उत्तर–आयरिय–(आचर्य)–पालन करीने ।

---

* आ श्लोकमा 'णमो सिद्धाण' पद विविध प्रश्नोना उत्तरमा पाच रीते प्रकट थाय छे, तेथी तेने 'पचकृत्वो गति पाच प्रकारे प्रकटलु मनाय छे ।

किं वक्कालंकिइसि ? किमु विहुरवयं ? कं करित्ताण विन्नू ?
आयाणं किं अउव्वं विन्नरिअमिह को किं व पाठेइ पुव्विं ? ।
को भावं वेइ ? को वा हणइ ? अहभरा केरिसाणं जणाणं ?
झाइज्जंतं पयं किं हणइ दुहभरं ? नीलवण्णं तिसंझं ॥ ४ ॥

'णमो उवज्झायाणं ।' [गतागतं द्विर्गतश्च ।]

पालयित्वा मुनिः सुखी भवति । समानदीर्घत्वेऽकारस्य पुनर्ग्रहणम् । मान-मोहाववाद्यनन्तौ आद्यन्ताक्षर-वर्जितौ । किंरूपा णमो इति विपुलधनंभरो वर्धते । आयऋतानां लाभप्राप्तानां 'रिपिग् गतौ' इति धातौ **आयरित्तानां** वा स एवार्थः । विद्यादिभागी भवति **नमो** नन्ता आचार्याणामिति । स्तभ्नाति नीरा-द्युपसर्गान् 'जल-जलणाई सोलसपयत्थं आयरिया' इति वचनात् ॥ ३ ॥

वृत्तिः—किं व णं इति वाक्यालङ्कृतौ । विधुरजनस्य भयभीतजनस्य वच **ओ** इति ।

(३) प्रश्न—मुनि शानुं पालन करे छे ?
उत्तर—'आणं—(आज्ञां)—आज्ञानुं, जिनेश्वरोनी आज्ञानुं ।

रीति–२

(१) प्रश्न—'माण-मोह' आ बन्ने शब्दोमां पहलानो पहेलो अक्षर 'मा' अने बीजानो अक्षर 'ह' आ बन्ने छोडी दईए तो शुं रूप थाय ?
उत्तर 'णमो'—ए पद ।

(२) प्रश्न—विपुल धननो समूह केवाओनो वधे छे ?
उत्तर—आयरियाणं—(आयऋतानां—आयरितानां)—आय एटले लाभ, अने ऋत—रित—प्राप्त, लाभ पामेलाओनो ।

रीति–३

(१) प्रश्न—कुशल माणस कोना प्रत्ये केवो थईने विद्या अने विज्ञाननो भागी थाय छे ?
उत्तर—णमो आयरियाणं—(नमः × आचार्याणाम्) आचार्यो प्रत्ये नम्रतावाळो ।

रीति–४

(१) प्रश्न—कोना स्मरणथी जल—ज्वलनादि नष्ट थाय छे ?
उत्तर—'णमो आयरियाणं पदना । [ते माटे कह्युं छे के—'जल-जलणाइ-सोलस पयत्थं थंभंतु आयरिआ' वाणी, आग वगेरे सोळ पदार्थोनुं आचार्य भगवंतो स्तंभन करो ।]
※ ते पवित्र पदनुं हुं ध्यान धरूं छुं ।

(४)

['गतागत' अने 'द्विर्गत' नामक चित्रकाव्य वडे 'णमो उवज्झायाणं' पद प्रकट थाय छे ते संबंधी प्रश्नोत्तरो ।]

× नमतीति नम —नन्ता-नम्रतावाळो ।

※ आ श्लोकमाथी चार रीते 'णमो आयरियाणं' पद प्रश्नोना उत्तर वडे प्रकट थाय छे। तेथी तेने 'चतुःकृत्वो गति' कह्युं छे.

उपाध्यायाज्ञा कृत्वा विज्ञो भवति । आयाण अपूर्वम्, न विद्यते पूर्व प्रथमो वर्णो यत्र तदपूर्वं यणा (याण)मिति, विपरीत च तत् 'ण या' इति भवति । अज्झावओ अध्यापक, ओमिति पूर्वमादौ छात्रान् पाठयति । अभाववाची न इति मोचन मोको भावाकर्त्रोर्घञिति घञ्, न मोको मुक्तिरित्यर्थ । वज्झा-याण हत्याना हत्याकारिणा जनाना पापसमूहान् 'मरगयभा उवज्झायाण' इति पदम् ॥ ४ ॥

रीति-१ (गत)

(१) प्रश्न-कयो वर्ण वाक्यालकार मनाय छे ? उत्तर-'ण'-ए वर्ण ।

(२) प्रश्न-विधुर एटले भयमीत माणसनो (आकस्मिक) उच्चार शो ? उत्तर-ओ ! ।

(३) प्रश्न-माणस शु करवाथी विज्ञ बने छे ?

उत्तर-'उवज्झायाण'-(उपाध्यायाज्ञा)-उपाध्याय भगवतोनी आज्ञानु पालन करवाथी ।

रीति-२-(आगत-विपरीत आववु)

(१) प्रश्न-पूर्वाक्षरथी रहित 'आयाण' एटले 'याण' ने ऊलटु करीए तो शु रूप थाय ?

उत्तर-'णया'-एवु थाय ।

(२) प्रश्न-कोण भणावे छे ? उत्तर-अज्झावउ-(अध्यापक)-अध्यापक-उपाध्याय ।

(३) प्रश्न-(अध्यापक) सर्व प्रथम शु भणावे छे ? उत्तर-ॐ-(ओम्)-ए मन्त्र ।

(४) प्रश्न-अभाव माटे शु (कयो अक्षर) बोलाय छे ? उत्तर-ण-(न) नकार ।

[तात्पर्य के 'ण याज्झावउ ओमूण' आ पदोने ऊलटी रीते बोलावाथी 'णमो उवज्झायाण' पद प्रकटे छे ।]

रीति-३-(द्विर्गत-(अ))

(१) प्रश्न-हत्या कोण करे छे ? उत्तर-णमोउ-(नमोक)*-जेनी मुक्ति नथी ते ।

(२) प्रश्न-केवा माणसोना पापना समुदायो वधे छे ?

उत्तर-वज्झायाण (हत्याकानाम्) † वध करनाराओना ।

रीति-४ (आ)

(१) प्रश्न-कया नीलवर्ण पदनु त्रणे सध्याओमा ध्यान करवाथी दु खनो समूह नाश पामे छे ?

उत्तर-'णमो उवज्झायाण' ए पदनु ध्यान करवाथी ।

['मरगयभा उवज्झाया'-नीलवर्णवाला उपाध्यायो, आ वचनथी ।] +

* मोचन मोक । न मोको मुक्तिर्यस्य स न मोक -जेनी मुक्ति नथी ते । † वज्झा-(स्त्री०) हत्या-वध, घात (पाइयसद्दमहण्णवो) । + आ श्लोकमा 'णमो उवज्झायाण' पदनी 'गत' अने 'आगत' एम बे प्रकारे प्राप्ति थाय छे, तेथी तेने 'गतागत' कह्यु छे अने त्रीजी तेमज चोथी रीतिना प्रश्नोत्तरो वडे पण आ ज पद थाय छे ते माटे ते 'द्विर्गत' कहेवाय छे ।

किं सुक्खं ? किं गुणड्ढं ? किमिह रसयरं ? किं हणंतीह वाहा ?
धन्नं किं विंति लोआ ? किमवि पभणए वंजणं ? सीअलं किं ? ।
निंदत्थं बेइ जीवं कमह जणगणो कं व देसं ? जिणिंदा
भासंते किं पयं ? जं अणवरयमहो झाणजुग्गं मुणीणं ॥ ५ ॥

'णमो लोए सव्वसाहूणं ।' [अष्टदलकमलम् ।]

वृत्तिः—किं सुखं न ऋणम् । ऋकारस्याकारे तल्लोपे च सति न ऋणमिति ऋणाभावे सौख्यम् । मुनीना भावो मौनम् । मुनित्वं श्रामण्यगुणाढ्यं 'मौनं सर्वार्थसाधनम्' इति वचनात्, मौ[नं वच]ना भावो वा लोणं लवणरसः । [ह]रिणं घ्नन्ति व्याधाः । स ए...त्य विशेष......वणं जलं काननं वा सो ण श्वा [ज]ननिन्दार्थं जनो ब्रूते एष श्वेति । कं वा देशं देशविशेषं जनगणो ब्रूते हूणमिति । जिनेन्द्राः कं पदमुपदिशन्ति यदनवरतं निरन्तरं ध्यानयोग्यं मुनीनां **'न(ण)मो लोए सव्वसाहूणं'** इति ॥ ५ ॥

---

(५)

[विविध प्रश्नोना उत्तर वडे प्रकट थता पदोना आद्य वर्णोथी 'णमो लोए सव्वसाहूणं' पद प्रकटे छे, ते आ रीते—]

(१) प्रश्न—सुख शुं छे ? उत्तर—णणं—× (न ऋणं—नर्णं)—करज न होय ते ।
(२) प्रश्न—गुणथी विशिष्ट शुं छे ? उत्तर—मोणं—(मौनं)—मुनिपणुं मौन—(वचनगुप्ति) ।
(३) प्रश्न—उत्तम रसवाळुं शुं छे ? उत्तर—लोणं—(लवणं)—मीठुं ।
(४) प्रश्न—शिकारीओ कोने हणे छे ? उत्तर—एणं—मृगने ।
(५) प्रश्न—लोको धान्यने शुं कहे छे ? उत्तर—सणं—(शणं)—शण नामनुं धान्य ।
(६) प्रश्न—व्यंजनने माटे कयो शब्द वपराय छे ? अथवा शीतल शुं छे ?
उत्तर—वणं×—(वण्णं)—(वर्णः) व्यंजन अथवा वणं—(वन)—जल के जंगल ।
(७) प्रश्न—निंदा माटे कया जीवने सरखावे छे ? उत्तर—साणं—(श्वानं)—कूतराने ।
(८) प्रश्न—जनसमूह कया देश (देशविशेष)ने कहे छे—निंदे छे ।
उत्तर—हूणं—(हूणम्)—हूणने । (हूण ए देशविशेषनुं नाम छे) ।
(९) प्रश्न—मुनिओने सतत ध्यान करवा योग्य कया पदने जिनेश्वरो उपदेशे छे ?
उत्तर—'णमो लोए सव्वसाहूणं—'ए पदने* ।

× ण+अण—ऋणं । प्राकृत संधिना नियम प्रमाणे अहीं एक 'अ' नो लोप थवाथी 'णण' थाय छे । × **वण** आ पदमा एक ज **व** छे त्या चित्रकाव्यने लीधे **सव्व** मा रहेला बे **व** माथी एकने छोडी दीधो छे. * श्लोकमा णणं, मोणं, लोणं, एणं, सणं, वणं, साणं, हूणं, आ पदोना पहेला अक्षरोथी पद 'णमो लोए सव्वसाहूणं'पद प्रकट थाय छे ।

एव जे परमिट्ठिपचगपयप्पण्हेसु ताई जणा
जाणित्ता पइवासर निअमणे धारति झायति अ ।
तेसिं दुट्ठतमट्ठकम्मविगमा तेलुक्कप्पद्दुमो
एसो सो परमिट्ठिमंतपवरो दिज्जा सुह सासय ॥ ६ ॥ [शार्दूलविक्रीडितम् ।]

वृत्तिः—एव जे० सुगम, नवर परमेष्ठिं (?) परमेष्ठिपञ्चकपदप्रश्नेपु तानि परमेष्ठिपदानि पञ्च ज्ञात्वा निजमनसि धारयन्ति च ध्यायन्ति च, तेपामेव श्रीपञ्चपरमेष्ठिमन्त्र त्रैकोक्यकल्पद्रुम शाश्वत सुख करोत्विति ॥ ६ ॥

इति प्रश्नगर्भं पञ्चपरमेष्ठिस्तवन भट्टारकप्रभुश्रीजयचन्द्रसूरिविरचितमिति ॥ श्री ॥

---

(६)

आ रीते पच परमेष्ठी मन्त्रना पाच पदोना प्रश्नोमा गूथायेला पाचे पदोने जे लोको जाणीने हमेशा पोताना मनमा धारण करे छे अने तेमनु ध्यान धरे छे तेमना घणा दुष्ट आठे कर्मो दूर थाय छे । ते आ त्रण लोकमा कल्पवृक्षरूप श्रेष्ठ परमेष्ठी मत्र शाश्वत सुखने आपो ॥ ६ ॥

[पाच नबरना श्लोकमा विविध प्रश्नोना उत्तर–पदो वडे जे 'अष्टदलकमलवध' प्रकट थाय छे [ते माटे जूओ चित्र न० ६ नी आकृति]

(स्तोत्र–परिचय)

आ स्तोत्रनी एक मात्र प्रति भाडारकर ओरियन्टल रीसर्च ईन्स्टीटयूट–पूनाना सग्रह–सेक्शन न १३ मायी एक पानानी प्रति मळी आवी ते ऊपरथी अहीं सपादित करवामा आव्यु छे ।

स्वोपज्ञ टीकावाळा आ स्तोत्रनी रचना श्रीजयचद्रसूरिए करी छे, जे टीकानी अते आपेली पुष्पिका उपरथी जणाय छे ।

आ श्रीजयचद्रसूरि श्रीसोमसुदरसूरिना शिष्य हता । तेओ स १४९६ मा विद्यमान हता । तेमना हाथे प्रतिष्ठित मूर्तिओ उपरना लेखो स १५०६ सुधीना मळ्या छे । पोतानी प्रकाड विद्वत्तायी तेमने 'कृष्णसरस्वती' अगर 'कृष्णवागदेवता' नु विरुद मळ्यु हतु । तेमणे पोताना शिष्योने काव्यप्रकाश, सन्मतितर्क जेवा दुरूह ग्रथो भणाव्या हता । तेमना उपदेशथी श्रीमाली पर्वत नामना श्रेष्ठीए एक लाख (श्लोक) प्रमाण ग्रथो लखाव्या हता ।

श्रीजयचदसूरिए रचेला ग्रथो पैकी (१) प्रत्याख्यानस्थानविवरण, (२) सम्यक्त्वकौमुदी अने (३) प्रतिक्रमणविधि–जाणवामा आव्या छे ।

आ छ श्लोकात्मक काव्य उपरथीये तेमनी विद्वत्तानो परिचय मळे छे । तेमणे छ श्लोकमा पचपरमेष्ठीना प्रश्नोने श्रृखलाजातिव्रिर्गत, पचकृत्वो गति, चतुष्कृत्वो गति, गतागतद्विर्गत, अष्टदलकमल वगेरे चित्रात्मक काव्यथी आ स्तोत्रने गूथ्यु छे । साहित्यना प्रकारमा भात पाडे एवी आ स्तोत्रनी रचना छे ।

आ स्तोत्रने अनुवाद साथे अहीं आपवामा आव्यु छे । तेना वे चित्रो न ५–६ मा आपेला छे ।

[२२]

चउव्विहज्झाणथुत्तं ।

[चतुर्विधध्यानस्तोत्रम् ।]

पिण्डत्थं च पयत्थं रूवत्थं रूववज्जियसरूवं ।
तत्तं परमिट्ठिमयं गुरूवइट्ठं थुणिस्सामि ॥ १ ॥
नमः सिद्धंतसमिद्धो चउदलियाहारचक्कि(क्क)मज्झठिओ ।
पणवो परमिट्ठिमओ पणतत्तजुओ सुहं देउ ॥ २ ॥
चक्के साहिट्ठाणे छकोणे मज्झठिओ पयाहिणओ ।
सत्तसरमहमंतो झाइज्झंतो दुहं हरउ ॥ ३ ॥
मणिपूरचक्कि अडदलि मज्झदिसासु च पंचपरमिट्ठी ।
विदिसासु नाण-दंसण-चारित्त-तवाइं झाएमि ॥ ४ ॥
सोलससरसोलसए महविज्जा विज्जदेविकलियदले ।
चक्के अणाहयक्खे गोयमसामिं नमंसामि ॥ ५ ॥

अनुवाद ।

ध्याननुं स्वरूप चार प्रकारनुं छे–(१) पिंडस्थ, (२) पदस्थ, (३) रूपस्थ अने (४) रूपातीत–ते प्रकारे परमेष्ठीमय वर्णो (अक्षरो) वडे केवी रीते ध्यान थाय ते गुरुए जे प्रमाणे उपदेश्युं छे ते प्रमाणे स्तवीश ॥ १ ॥

मूलाधारचक्रनां चार पत्रो छे, ते 'नमः सिद्धम्' ना चार अक्षरोथी समृद्ध छे अने कर्णिकामां प्रणव (ॐकार) जे पंचपरमेष्ठीना पांच वर्ण (प्रथमाक्षर)थी निष्पन्न छे–तेनुं ध्यान सुख आपनारुं थाय छे (जूओ चित्र नं. ७) ॥ २ ॥

स्वाधिष्ठानचक्र छ खूणानी आकृतिवाळुं छे। ते आकृतिनी मध्यथी लईने प्रदक्षिणामां (फरतां क्रमशः) "णमो अरिहंताणं" ए सप्ताक्षरी महामंत्र छे ते प्रकारे ध्यान धरवामां आवे तो ते दुःखने हरनारुं नीवडे छे (जूओ चित्र नं० ८) ॥ ३ ॥

मणिपूरचक्र आठ पत्रवाळुं छे । तेनी मध्यमां "श्रीअर्हद्‌भ्यो नमः" तथा दिशाओमां "श्रीसिद्धेभ्यो नमः" "श्रीसूरिभ्यो (श्रीआचार्येभ्यो) नमः" "श्रीउपाध्यायेभ्यो नमः" "श्रीसर्वसाधुभ्यो नमः"–ए पंच परमेष्ठी; तेमज विदिशाओमां "श्रीदर्शनाय नमः" "श्रीज्ञानाय नमः" "श्रीचारित्राय नमः" "श्रीतपसे नमः" ए प्रकारे छे तेम हुं ध्यान करुं छुं (जूओ चित्र नं० ९) ॥४॥

अनाहतचक्र सोळ पत्रवाळुं छे । तेमां षोडशाक्षरी "अरिहंत-सिद्ध-आयरिय-उवज्झाय-साहू" महाविद्या छे, तेमज सोळ स्वरोथी सूचित (सोळ) विद्यादेवीओथी युक्त एवां सोळ पत्रो छे, तेनी कर्णिकामां "श्रीगौतमस्वामिने नमः" छे, ते प्रकारने हुं नमस्कार करुं छुं (जूओ चित्र नं० १०) ॥ ५ ॥

चउवीसदेव-जिणजणणि जक्ख-जक्खिणिपवित्तपत्तम्मि ।
मुद्धे विसुद्धचक्के झाएमि सयावि जिणसत्तिं ॥ ६ ॥
बत्तीसदले ल[ल]णाचक्के वत्तीससुरवइसमिद्धा ।
ह-रहियवजणसिद्धा सरस्सई मह सुह देउ ॥ ७ ॥
ह-ळ-क्षजुआ पणव-नमंतकलिआ य तिदलचक्कम्मि ।
आणक्खे एगक्खर महविज्जा सयलसिद्धिकरी ॥ ८ ॥
अ सि आ उ सा नमंता सोमकलारूवसोमचक्कम्मि ।
सोमसियवन्नझाणेण झाइआ हुंति सिवहेऊ ॥ ९ ॥
चक्कम्मि बंभविंदु त्ति नामए बंभनाडिसहभूए ।
झाणापुरियपणवो भवियाण कुणउ कल्लाणं ॥ १० ॥
सिरिहंसनादचक्के हंस विसुद्धफलिहसकास ।
जो पिक्खइ गलिअमणो तस्स वसे सयलसिद्धिओ ॥ ११ ॥

विशुद्धचक्र जे कठमा छे अने जेना चोवीश पत्रो छे तेमा चोवीश देव (तीर्थंकरो), तथा जिनेश्वरोनी चोवीश माताओ, तेमना चोवीश यक्षो अने चोवीश यक्षणीओ तथा कर्णिकामा जिन-शक्ति एटले "अर्हं नम" छे तेम हु सदा ध्यान करु छु (जूओ चित्र न० ११) ॥ ६ ॥

ललनाचक्र जेना बत्रीश पत्रो छे, ते बत्रीश इद्रोथी समृद्ध अने 'ह' रहित एटले 'क' थी 'स' पर्यंत (३२) तेमज ते मत्रथी ("सरस्वत्यै नम" थी) सिद्ध थती सरस्वती देवी मने सुख आपो (जूओ चित्र न० १२) ॥ ७ ॥

आज्ञाचक्रने त्रण पत्रो छे, तेमा 'ह' 'ळ' 'क्ष' थी युक्त अने 'ॐ नम' थी आकलित (ह्रींकाररूपी) एकाक्षरी महाविद्या समग्र सिद्धिने आपनारी छे (जूओ चित्र न० १३) ॥ ८ ॥

सोमचक्र, जे सोमकळा (अर्धचन्द्रनी आकृति) स्वरूप छे, तेमा "अ सि आ उ सा नम" मत्रनु चद्र जेवा श्वेतवर्णरूपे ध्यान करता ते शिवना (एटले मोक्षना) कारणरूप बने छे (जूओ चित्र न० १४) ॥ ९ ॥

ब्रह्मबिंदुचक्र, जे ब्रह्मनाडी (सुषुम्णा नाडी) साथे सयुक्त छे—तेनु प्रणवथी आपूरित ध्यान भव्य पुरुषोनु कल्याण करे छे (जूओ चित्र न० १५) ॥ १० ॥

श्रीहंसनादचक्रमा हस (जीव) ने अत्यत शुद्ध स्फटिक (मणि) जेवो,* जे गलित मनवाळो

* सरखावो श्रीहेमचन्द्रसूरिरचित 'योगशास्त्र'—

"अर्हन्त मूर्धनि ध्यायेत् शुद्धस्फटिकनिर्मलम् ॥
तद्ध्यानावेशत सोऽह सोऽहमित्यालपन्मुहु ।
नि शङ्कमेकता विद्यादात्मन परमात्मन ॥" (प्र० ८, श्लो० १४, १५)

शुद्ध स्फटिकनी माफक निर्मळ एवा परमेष्ठी अरिहतने मस्तक विशे चिंतववा, पछी ध्यानना आवेशमां 'सोऽहम् सोऽहम्' एम वारंवार बोलतां बोलतां परमात्मा साथे पोताना आत्मानी एकता नि शक चिंतववी ।

चउव्विहझ्झाणगयं परमिट्ठिमयपहाणतरतत्तं ।
झायइ अणवरयं सो पावइ परमाणंदं ॥ १२ ॥

इति चतुर्विधध्यानस्तोत्रम् ॥

क्षीणवृत्तिवाळो योगी पुरुष ध्यान करे छे तेवा (योगीने) समग्र सिद्धिओ वशीभूत थाय छे (जूओ चित्र नं० १६) ॥ ११ ॥

ध्यानना चार प्रकार (पिंडस्थ, पदस्थ, रूपस्थ अने रूपातीत) प्रमाणे सालंबन (एटले वर्णात्मक) अने निरालंबन (वधारे सूक्ष्म थतुं आलंवन विनानुं) ध्यान (ध्याता अने ध्यान ए वंनेनो अभाव थतां ध्येय साथे ज एकरूप वनी जाय एवुं) जे अविरतपणे करे छे ते परम आनंदने प्राप्त करे छे ॥ १२ ॥

(स्तोत्र-परिचय)

वार गाथानुं आ स्तोत्र स्व० श्रीमोहनलाल भगवानदास झवेरीना संग्रहमांथी, तेमनां विधवा सुधाबहेने आपेलुं; जेमां आ स्तोत्र संवंधी चक्रोनी रेखाओ पण दोरेली हती। ए स्तोत्रने अनुवाद साथे संपादन करी ते रेखाचक्रोने चित्रनी रीते व्यवस्थित करी दश चक्रो आपवामां आव्यां छे।

कुंडलिनीना विषयमां जैनाचार्योए जे थोडुं घणुं खेडाण कर्युं छे तेमां आ स्तोत्र भात पाडे एवुं छे। जैनेतर साहित्यमां कुंडलिनीना उत्थान माटे षट्चक्रभेद वहु जाणीती परंपरा छे पण आ स्तोत्रमां दश चक्रोनी जैन दृष्टिए माहिति आपी छे। आ माटे जैन साहित्यमां विशिष्ट माहिती होवी जोईए परंतु ते हजी प्राप्त थई नथी।

प्राकृतभाषामां रचायेला आ स्तोत्रना कर्ता कोण हशे ते पण जाणी शकायुं नथी।

वळी सरखावो 'पातञ्जलयोगदर्शन' "क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनतासमापत्तिः ॥ (१.४१.)

जेम शुद्ध थयेलो स्फटिक मणि ते ते उपाधिना सान्निध्यथी ते ते उपाधिना रूपने पामे छे तेम ध्येयातिरिक्त सकल वृत्ति जेनी निरुद्ध थई गई छे एवुं शुद्ध चित्त...सकल आलंवन विशे पूर्ण एकाग्र थवाथी, ते ते आलंवनना प्रकारने पामवारूप तदञ्जनता पामे छे ॥

* सरखावो हे० च० 'योगशास्त्र'—

"एवं क्रमशोऽभ्यासावेशाद् ध्यानं भजेन्निरालम्बम् ।
समरसभावं यातः परमानन्दं ततोऽनुभवेत् ॥ (प्र० ११, श्लो० ५)

—आ प्रमाणे मनने उच्चता प्राप्त करवाना क्रमे अभ्यासनी प्रवलताथी निरालंवन ध्यान करे तेथी समरसभाव-परमात्मानी साथे अने अभिन्नपणे लय पामवा रूपने पामी ते पछी परमानंदपणुं अनुभवे ॥

[२३]

सिरिजिणकित्तिसूरिरइयं

सोववण्णवक्खासमेयं

पंचपरमिट्ठिनमुक्कारमहथुत्तं ।

॥ ॐ ॥ श्रीजिनाय नमः ॥

जिनं विश्वत्रयीवन्द्यमभिवन्द्य विधीयते ।
परमेष्ठिस्तवव्याख्या गणितप्रक्रियान्विता ॥ १ ॥

तत्रादावभिधेयगर्भां समुचितेष्टदेवतानमस्काररूपमङ्गलप्रतिपादिकां गाथामाह—

परमिट्ठिनमुक्कारं थुणामि भत्तीइ तन्नवपयाणं ।
पत्थारं भंगसंखा नट्ठुद्दिट्ठाइकहणेणं ॥ १ ॥

व्याख्या—परमेष्ठिनोऽर्हदादयस्तेषां नमस्कारः श्रुतस्कन्धरूपो नवपदाष्टसंपदाऽष्टषष्ट्यक्षरमयो महामन्त्रविशेषस्तं भक्त्या स्तवीमि ।

तस्य नमस्कारस्य नवसंख्यानां पदानां प्रस्तारो भङ्गसंख्यानष्टोद्दिष्टमादिशब्दादनुपूर्व्यादिगुणनं-महिमा च एतेषां कथनेन ॥ १ ॥

शब्दार्थ—हुं परमेष्ठी-नमस्कारने–तेना नवपदोना प्रस्तार, भंगसंख्या, नष्ट, उद्दिष्ट वगेरे कहेवा वडे भक्तिपूर्वक स्तवुं छुं ।

विवेचन—द्वादशांगीना सारस्वरूप पंचनमस्कार के परमेष्ठि-नमस्कारनी स्तवना जैन महर्षिओए अनेक प्रकारे करेली छे । कोईए तेना तत्त्वने आगमस्वरूपनी दृष्टिए प्रकाश्युं छे, कोईए तेने निमित्त, ग्रह, गणित, मंत्र अने तंत्रनी दृष्टिए निहाळी विविध प्रकारे प्रकाश्युं छे, ज्यारे श्रीजिनकीर्तिसूरि महाराजे नमस्कारने गणितनी दृष्टिए निहाळी तेना गूढ रहस्यने प्रकाश्युं छे ।

स्तोत्रनी आ प्रथम गाथामां विषयनुं निरूपण करतां तेओ जणावे छे के, आ स्तोत्रमां हुं नवपदोनो प्रस्तार, तेनी भंगसंख्या, नष्ट, उद्दिष्ट अने आदिपदथी आनुपूर्वी, अनानुपूर्वी अने पश्चानुपूर्वी केवी रीते थाय ते दर्शावीश ।

अहीं ए स्पष्ट करवुं जरूरी छे के, उपर्युक्त विषयनिर्देश प्रमाणे प्रथम विवेचन नवपदोना प्रस्तारनुं करवुं जोईए पण ते विषय घणो लंबाणवाळो होई स्तोत्रकर्ताए तेनुं विवेचन बाकी राख्युं छे अने त्यार पछीना विषयोने क्रमशः समजाव्या छे ॥ १ ॥

तत्रादौ प्रथमोपन्यस्तमपि वहुवक्तव्यप्रस्तारमुल्लङ्घ्य स्वल्पवक्तव्ये भङ्गपरीमाणे करणमाह—

एगाईण पयाणं गणअंताणं परोप्परं[1] गुणणे ।
अणुपुव्विपमुहाणं भंगाणं हुंति संखा[2] उ ॥ २ ॥

एता एव भङ्गसंख्या गाथाभिराह[3]—

एगस्स एगभंगो [4]दोण्हं दो चेव तिण्ह छब्भंगा ।
चउवीसं च चउण्हं विसुत्तरसयं च पंचण्हं ॥ ३ ॥

व्याख्या—इह गणः स्वाभिमतः पदसमुदायः । तत एकादीनां पदानां द्विक-त्रिक-चतुष्क-पञ्च-कादिगणपर्यन्ताना स्थापितानां परस्परं[5] गुणने ताडने आनुपूर्व्यादिभङ्गानां[6] संख्याः स्युः । तथाहि एकादीनि पदानि नवपर्यन्तानि क्रमेण स्थाप्यन्ते १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ । अत्र मिथो गुणनं[7] यथा[8]—अत्राद्यस्य एककरूपस्य पदस्य द्वितीयाभावेन मिथो गुणनाभावादेक एव भङ्गः १ । तथा एकक-द्विकयो[9]र्गुणने जातौ द्वौ, द्विकगणनस्य भङ्गसंख्या २ । द्वौ त्रिभिर्गुणितौ जाताः षडेषा त्रिकगणस्य भङ्गसंख्या[10] ३ । ततः षट् चतुर्भिर्गुणिता जाताश्चतुर्विंशतिरेषा चतुष्कगणस्य भङ्गसंख्या[11] ४ । ततश्चतुर्विंशतिः पञ्चभिर्गुणिता जातं विंशत्युत्तरं शतम् । एषा पञ्चकगणस्य भङ्गसंख्या[12] ५ । विंशत्युत्तरं शतं षड्भिर्गुणितं[13] जातानि सप्तशतानि विंशत्युत्तराणि, एषा षट्कगणस्य भङ्गसंख्या[14] ६ । इयं च सप्तभिर्गुणिता जाता पञ्च सहस्राश्चत्वारिंशदधिका एतावती सप्तकगणस्य भङ्गसंख्या[15] ७ । इयं अष्टभिर्गुणिता जाताऽष्टकगणस्य भङ्गसंख्याश्चत्वारिंशत्सहस्राणि[16] त्रिशतानि विंशत्युत्तराणि[17] ८ । एते भङ्गा नवभिर्गुणिता जातास्तिस्रो लक्षाः द्वाषष्टिः[18] सहस्राः, अशीत्युत्तराण्यष्टौ[19] शतानि चैषा नमस्कारनवपदानामानुपूर्व्यनानुपूर्वी-पश्चानुपूर्वीभङ्गानां संख्याः[20] ९ ॥ २ ॥

श०—एक वगेरे पदोनी परस्पर गणना अंत सुधी गुणवाथी आनुपूर्वी वगेरे भंगोनी संख्या थाय छे. ॥ २ ॥

वि०—जेटला पदोना भंग काढवा होय तेटला पदोना समुदायने अहीं **गण** समजवो । दाखला तरीके—पांच पदोना भंग काढवा होय तो १, २, ३, ४ अने ५ नी संख्याने गण समजवो, अने नवपदोना भंग काढवा होय तो १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ अने ९ संख्याने गण समजवो । तात्पर्य के पहेलेथी छेल्ले सुधीना अंकोनुं गुणन करवाथी भंगनी संख्या प्राप्त थाय छे । स्तोत्रकार त्रीजी, चोथी अने पांचमी गाथामां ए रीते प्राप्त थयेली भंगनी संख्या दर्शावे छे ॥ २ ॥

श०—एक गणनी भंगसंख्या एक छे, वेनी भंगसंख्या वे छे, त्रणनी भंगसंख्या छ छे, चारनी भंगसंख्या चोवीश छे अने पांचनी भंगसंख्या एकसो वीस छे । छनी भंगसंख्या सातसो

---

1 परप्परं गुणणो S । 2 संखाओ । 3 °राह—।३।४।५ ॥ 4 दुण्हं P । 5 °स्परगणनेनाऽऽहत आ° J । 6 आनुपूर्व्यादीनां भ° J । 7 °थोगणनं J । 8 यथा—एकस्य प° J । 9 एक—द्वि° J । 10 °संख्या ६ । J । 11 °संख्या २४ । J । 12 °संख्या १२० । J । 13 षड्गुणितं A । 14 °संख्या ७२० । J । 15 °संख्या ५०४० । J । 16 °त्वारीणि शतानि J । 17 °राणि ४०३२० । J । 18 द्विषष्टिस° J । 19 अशीत्यधिकान्यष्टौ A । 20 संख्या ३६२८८० ।

सत्त य सयाणि वीसा छण्ह पणसहस चत्तसत्तण्ह ।
चालीससहस तिसया विसुत्तरा हुति अट्ठण्ह ॥ ४ ॥
लक्खतिग नासट्ठीसहस्स अट्ठ य सयाणि तह असिई ।
नवकारनवपयाण भगयसखा मुणेयव्वा ॥ ५ ॥

व्याख्या—गाथात्रय स्पष्टम् ॥ ३,४,५ ॥

एषा भङ्गाना नामान्याह—

तत्थ पढमाऽणुव्वी चरमा पच्छाणुपुव्विआ नेया ।
सेसा उ मज्झिमाओ अणाणुपुव्वीओ सव्वाओ ॥ ६ ॥

व्याख्या—स्पष्टा । अत्र पञ्चपदीमाश्रित्य विंशत्युत्तरशतभङ्गकयन्त्रक लिख्यते[8] ॥ ६ ॥ स्थापना यथा—

आनुपूर्वीक्रमकोष्ठकम् ।

१२३४५	१२३५४	१२४५३	१२४५२	२३४५१
२१३४५	२१३५४	२१४५३	३१४५२	३२४५१
१३२४५	१३२५४	१४२५३	१४२५२	२४३५१
३१२४५	३१२५४	४१२५३	४१३५२	४२३५१
२३१४५	२३१५४	२४१५३	३४१५२	३४२५१
३२१४५	३२१५४	४२१५३	४२१५२	४३२५१
१२४३५	१२५३४	१२५४३	१३५४२	२३५४१
२१४३५	२१५३४	२१५४३	३१५४३	३२५४१
१४२३५	१५२३४	१५२४३	१५३४२	२५३४१
४१२३५	५१२३४	५१२४३	५१३४२	५२३४१
२४१३५	२५१३४	२५१४३	३५१४२	३५२४१
४२१३५	५२१३४	५२१३४	५४१४२	५३२४१
१३४२५	१३५२४	१४५२३	१४५३२	२४५३१
३१४२५	३१५२४	४१५२३	४१५३२	४२५३१
१४३२५	१५३२४	१५४२३	१५४३२	२५४३१
४१३२५	५१३२४	५१४२३	५१४३२	५२४३१
३४१२५	३५१२४	४५१२३	४५१३३	४५२३१
४३१२५	५३१२४	५४१२३	५४१३२	५४२३१
२३४१५	२३५१४	२४५१३	३४५१२	३४५२१
३२४१५	३२५१४	४२५१३	४३५१२	४३५२१
२४३१५	२५३१४	२५४१३	३५४१२	३५४२१
४२३१५	५२३१४	५२४१३	५३४१२	५३४२१
३४२१५	३५२१४	४५२१३	४५३१२	४५३२१
४३२१५	५३२१४	५४२१३	५४३१२	५४३२१

वीस छे, सातनी भगसख्या पाच हजार चालीस छे, आठनी सख्या चालीस हजार त्रणसो वीस छे अने नवकारना नवपदोनी भगसख्या त्रण लाख वासठ हजार आठ सो ऐंसी छे ॥ ३–५ ॥

1 सत्तर्ण्ह A । 2 अट्ठन्ह A । 3 लक्खतिग A । 4 °सख्या° उमु० A । 5 मा उ अ° A । 6 °णुपुव्वी स° A । 7 सव्वा उ A । 8 त यथा A ।

अथ प्रस्तारमाह—

अणुपुव्विभंगहिट्ठा जिट्ठं ठविअग्गओ उवरि सरिसं ।
पुव्विं जिट्ठाइकमा सेसे मुत्तुं समयभेयं ॥ ७ ॥

व्याख्या—आनुपूर्वीभङ्गस्य पूर्वन्यस्तस्योपलक्षणत्वादनानुपूर्वीभङ्गस्यापि पूर्वन्यस्तस्याधस्ताद् द्वितीयपङ्क्ताविलर्थः । ज्येष्ठं[3] सर्वप्रथमं अङ्कम्, स्थापय इति क्रिया सर्वत्र योज्या । तथाऽग्रतः, उपरीति–उपरितनपङ्क्तिसदृशमङ्कराशिमिति गम्यम्; स्थापय । तथा पूर्वमिति यत्र ज्येष्ठः स्थापितस्ततः पूर्वभागे

वि०—आ संख्या केवी रीते प्राप्त थाय छे ते समजी लईए । नव सुधीनी संख्याना भंग काढवा होय तो प्रथम १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९–ए रीते अंक लखवा । तेना गणो नीचे प्रमाणे बनशे—

गण	संख्या	गुणनसंख्या	
एक	१	१=	१
द्विक	१ २	१×२=	२
त्रिक	१ २ ३	१×२×३=	६
चतुष्क	१ २ ३ ४	१×२×३×४=	२४
पंचक	१ २ ३ ४ ५	१×२×३×४×५=	१२०
षट्क	१ २ ३ ४ ५ ६	१×२×३×४×५×६=	७२०
सप्तक	१ २ ३ ४ ५ ६ ७	१×२×३×४×५×६×७=	५०४०
अष्टक	१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८	१×२×३×४×५×६×७×८=	४०३२०
नवक	१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९	१×२×३×४×५×६×७×८×९=	३६२८८०

तेनुं गुणन करतां ऊपर प्रमाणे फळ आवशे; ते दरेक गणनी भंगसंख्या ऊपर आपेली गुणनसंख्या मुजब जाणवी ॥ ३–५ ॥

श०—आ भंगो पैकी प्रथम भंगसंख्याने 'आनुपूर्वी' छेल्ली भंगसंख्याने 'पश्चानुपूर्वी' अने बाकीनी वचली भंगसंख्याओने 'अनानुपूर्वी' जाणवी ॥ ६ ॥

वि०—अहीं गणितनी जे परिभाषा समजावी छे ते नीचेनां दृष्टांतथी बराबर समजाशे । पंचक गणनो प्रस्तार करीए तो १२० भंग नीचे मुजब उपर्युक्त कोष्ठक छे (कोष्ठक मूलमां आप्युं छे ते प्रमाणे अहीं समजी लेवुं ।) ॥ ६ ॥

उपर्युक्त कोष्टकमी प्रथम संख्या १२३४५ छे तेने 'आनुपूर्वी' कहेवामा आवे छे । छेल्ली संख्या ५४३२१ छे तेने 'पश्चानुपूर्वी' कहेवामा आवे छे अने २१३४५ थी ४५३२१ सुधीनी वचली ११८ संख्याओने 'अनानुपूर्वी' कहेवामा आवे छे । आ सख्याओ केवी रीते बनाववी तेनी प्रक्रिया हवे पछीनी गाथाओमा दर्शावी छे ।

श०—आनुपूर्वी भांगानी नीचे आगली पंक्तिमां ज्येष्ठ अंकनी स्थापना करो । आगळ उपर समान अंकनी स्थापना करो अने समयभेद (जेनी व्याख्या आगळ आवशे तेने) छोडीने बाकीना अंकोने क्रमथी पहेला मूको (एटले अनानुपूर्वीनी संख्या तैयार थशे) ॥ ७ ॥

---

1 पूर्वं न्य° J । 2 पूर्वं न्य° J । 3 °ष्ठं प्रथमं A ।

पश्चाद्भाग इत्यर्थ । ज्येष्ठानुज्येष्ठादिक्रमात् । शेषान् स्थापय अङ्कानिति गम्यम् । वक्ष्यमाणगाथारीत्या सदृशाङ्कस्थापना। समयभेदस्त मुक्त्वा टालयित्वेत्यर्थ । तत्र पञ्चपदीमाश्रित्योदाहरण, यथा–१,२,३,४,५। एषा आनुपूर्वी। अत्र एककस्य सर्वज्येष्ठत्वेन तस्यापरज्येष्ठाभावान्न किञ्चित् तदध स्थाप्यते। ततो द्विकस्यैकको ज्येष्ठ स्यादत स तदध स्थाप्यते। अग्रत उपरीति–उपरितनपङ्क्तिसदृशोऽङ्कराशि १,२,३,४,५ रूप स्थाप्यते। शेषोऽत्र द्विकस्तत स पूर्वं स्थाप्य । जाता [1]द्वितीया पङ्क्ति २, १,३,४,५। अथ तृतीयपङ्क्तावाद्यस्य द्विकस्यैकको ज्येष्ठोऽस्ति, पर तस्मिन् स्थाप्यमानेऽग्रत उपरितनाङ्क १,२,३,४,५ रूपस्थापने सदृशाङ्कस्थापनारूप समयभेद स्यात्। ततो द्विको[4] विमुच्यते। एककस्य ज्येष्ठाभावात् तत्त्याग । तत एकक द्विक[5] च मुक्त्वा त्रिकस्य ज्येष्ठो द्विकोऽस्ति स तदध स्थाप्यते। अग्रत उपरिसदृशौ ४,५ रूपावङ्कौ स्थाप्यौ, पूर्वं च शेषावेककत्रिकौ ज्येष्ठादिक्रमात् स्थाप्यौ। जाता तृतीया पङ्क्ति १,३, २,४,५। अथ चतुर्थपङ्क्तौ एककस्य ज्येष्ठाभावात् त मुक्त्वा त्रिकस्याधो ज्येष्ठ स्थाप्यते, पर तथा समयभेद स्यात्, ततो द्विक त्यक्त्वा सर्वज्येष्ठ एकक स्थाप्य । अग्रत उपरितनसदृश २,३,५ रूपा अङ्का स्थाप्या, शेषश्चात्र त्रिक स पूर्वं स्थाप्य । जाता चतुर्थी पङ्क्ति ३,१,२,४,५ । एवमनया प्रक्रियया तावज्ज्ञेय यावच्चरमपङ्क्तौ पञ्चक-चतुष्क-त्रिक-द्विकैका ५,४,३,२,१ ॥ ७ ॥

अथ प्रस्तारे करणान्तर विवक्षु प्रस्तावनागाथामाह—

एगाईण पयाणं उड्ढअहोआययासु पंतीसु ।
पत्थारकरणमवरं भणामि परिवट्टअंकेहिं ॥ ८ ॥

व्याख्या—इहैकादीना पदानामूर्ध्वाध आयता पङ्क्तय प्रस्तीर्यन्ते। ततस्तासु पङ्क्तिषु प्रस्तारस्य करणमपर भणामि परिवर्ताङ्कै । इह यस्या यस्या पङ्क्तौ यावद्भिर्यावद्भिर्वारैरेकैक पद परावर्त्यते तस्या तस्या पङ्क्तौ तदङ्कसख्याया परिवर्त इति सज्ञा ॥ ८ ॥

वि०—श्रीमानतुगसूरिविरचित 'नवकारसारथवण' (पचपरमेष्ठिनमस्कारस्तव) नी २३ थी २६ मी गाथाना विवेचनमा आ वस्तु विस्तारथी समजावेली छे, तेथी अहीं तेनु पुनः विवेचन करता नथी ॥ ७ ॥

शु०—एक, बे, त्रण वगेरे पदोनी उपर अने नीचे लावी पक्तिओमा परिवर्ताकद्वारा हु प्रस्तारनी बीजी विधिने कहु छु ॥ ८ ॥

वि०—भगसख्यानो प्रस्तार बीजी रीते पण थाय छे, ते आ प्रमाणे—१, २, ३ वगेरे अंकोनी उपर अने नीचे लावी पक्तिओ खेंचवी अने तेनी नीचे परिवर्ताक मूकवा आ परिवर्ताक केवी रीते मूकवा ते नवमी गाथामा दर्शावे छे ॥ ८ ॥

---

1 एकक्रम A। 2 सदृशाङ्क° A। 3 द्वितीयपङ्क्ति A। 4 को मु° J। 5 द्विक च द्विकोऽस्ति A J। 6 °वेकत्रिकौ A। 7 यस्या पङ्क्तौ J। 8 यावद्भिर्वारैरे J।

तत्र पूर्वपरिवर्ताङ्कनयने करणमाह—

अंतंकेण विभत्तं गणगणियं लद्धु[1] अंकसेसेहिं[2] ।
भइअव्वो[3] परिवट्टो[4] नेया नवमाइपंतीसु ॥ ९ ॥

व्याख्या—गणस्य गच्छस्य प्रस्तावादत्र नवकरूपस्य गणितं विकल्पभङ्गसंख्या ३६२८८० रूपं तदन्त्याङ्केनात्र[5] नवकरूपेण भक्त लब्धाङ्कः[6] ४०३२० ततो नवमपङ्क्तावयं परिवर्तो ज्ञेयः । कोऽर्थः ? अस्यां पङ्क्तावेतावद्[7] एतावतो वारान् नवमाष्टम-सप्तमादीनि पदान्यधोऽधो न्यस्यानि[8], तथा लब्धोऽङ्कः ४०३२० रूपः, शेषैरष्टभिर्भज्यते । लब्धं ५० । ४० । अयमष्टमपङ्क्तौ परिवर्त्तः । अस्य च शेषैः सप्तभिर्भागे लब्धं ७२० । सप्तमपङ्क्तावयं परिवर्तः । अस्य च प्राग्वत् शेषैः षड्भिः भागे लब्धं १२०, षष्ठपङ्क्तौ परिवर्तोऽयम् । तस्य च पञ्चभिर्भागे लब्धं २४ । पञ्चमपङ्क्तौ परिवर्तः । अस्य चतुर्भिर्भागे लब्धं ६ । चतुर्थपङ्क्तौ परिवर्तः । अस्य तु त्रिभिर्भागे लब्धं २ । तृतीयपङ्क्तौ परिवर्तः । अस्य द्वाभ्यां भागलब्धः १ । द्वितीयपङ्क्तौ परिवर्तः । तस्याप्येकेन भागे लब्ध एकः प्रथमपङ्क्तौ परिवर्तः ॥ ९ ॥

अथ एतानेव परिवर्तान् प्रकारान्तरेणानयति—

पुव्वगणभंगसंखा अहवा उत्तरगणम्मि परिवट्टो ।
नियनियसंखा नियनियगणअंतंकेण भत्ता वा ॥ १० ॥

व्याख्या—अथवाशब्दः प्रकारान्तरे । पूर्वगणस्य या भङ्गसंख्या एकस्य[9] एकभंग इत्यादिका सैवोत्तरगणे[10], परिवर्त्तस्तु तुल्य इत्यर्थः । तथाहि—एककरूपस्य पूर्वगणस्य या भङ्गसंख्या एकरूपा सैवोत्तर-

---

શ૦—ગણના ગણિતને છેલ્લા અંકે ભાગવાથી જે સંખ્યા ભાગમાં આવે તેને બાકીના અંકોનો ક્રમશઃ ભાગ દેવો જોઈએ । આ રીતે જે ભાગ આવે તેને નવમ આદિ પંક્તિઓના પરિવર્તાંક જાણવા ॥ ९ ॥

વિ૦—નવક (નવ અંકના ગણ)ની ભંગસંખ્યા ३६२८८० છે, તે પહેલાં કહેવાઈ ગયું છે । આ ભંગસંખ્યાનો પ્રસ્તાર કરીએ તો તેમાં છેલ્લો અંક ९ આવે છે × । તેનાથી ભંગસંખ્યાનો એટલે ३६२८८० ને ભાગીએ તો ભાગમાં ४०३२० આવે । આ તેના પરિવર્તાંક જાણવા । તાત્પર્ય કે, નવકના પ્રસ્તારમાં નવનો આંક છેલ્લા કોઠામાં ४०३२० વાર આવે । આ જ રીતે અષ્ટકના પરિવર્તાંક કાઢવા હોય તો ४०३२० ને ८ થી ભાગવા જોઈએ । તેમ કરતાં ५०४० ની સંખ્યા આવે છે તે તેનો પરિવર્તાંક છે । આ રીતે ક્રમશઃ ભાગ દઈએ તો દરેક ગણમાં પરિવર્તાંકની સંખ્યા નીચે મુજબ થાય ॥ ९ ॥

१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	१	२	६	२४	१२०	७२०	५०४०	४०३२०

શ૦—અથવા પૂર્વગણની જે ભંગસંખ્યા છે, તે ઉત્તરગણમાં પરિવર્ત તરીકે જાણવી । અથવા પોતપોતાની ભંગસંખ્યામાં ગણના છેલ્લા અંકનો ભાગ દેવાથી પરિવર્ત સંખ્યા પ્રાપ્ત થાય છે ॥१०॥

---

1 लद्ध अंकसमेहि A । 2 अंकुसे V । 3 अव्वा प° V । 4 °वट्टा ने° V । 5 °ङ्केन न° A । 6 लब्ध. ४० A । 7 °वत एता° J । 8 न्यासमीयति, ततो स° J । 9 °एगस्स एगभंगो° J । 10 नेव्ययतयं प° J । × પંચકની ભંગસંખ્યાનો પ્રસ્તાર કરતા છેલ્લો અંક ५ આવે છે, તેમ નવકની ભંગસંખ્યાનો પ્રસ્તાર કરતા છેલ્લો અંક ९ આવે છે ।

गणे द्विरूपे परिवर्त्त । तथा द्विकगणस्य भङ्गसख्या द्वयरूपा उत्तरगणे त्रिकरूपे परिवर्त्तोऽपि द्वयरूप । तथा त्रिकगणे भङ्गा षट्, ततश्चतुर्थगणे परिवर्त्तोऽपि षट्करूपेण । तथा चतुर्थगणे भङ्गा २४ । पञ्चमगणे परिवर्तोऽपि २४ । एवमग्रतोऽपि ज्ञेयम् ॥

अथोत्तरार्द्धेन परिवर्त्तानयने तृतीयप्रकारमाह–'नियनिय' इति । अथवा निजनिजगणस्य भङ्गसख्या निजनिजेन गणस्यान्त्याङ्केन भक्ता परिवर्त्त स्यात् । तथाहि–एकगणस्य सख्या एकरूपा सान्त्याङ्केनात्रैक-रूपेण भक्ता लब्ध एक, अयमाद्यपङ्क्तौ परिवर्त्त । तथा द्विकगणे भङ्गसख्या द्वयरूपा सा द्विकगणस्या-न्त्याङ्केन द्विरूपेण भक्ता, लब्ध एक, ततोऽत्र परिवर्त्ताङ्क एक एव । तथा त्रिकगणे भङ्गसख्या षट्-स्वरूपा सा त्रिकगणस्यान्त्येनाङ्केन त्रिकरूपेण भक्ता लब्धौ द्वौ त्रिकगणे परिवर्त्त । तथा चतुष्कगणे सख्या २४ रूपा तस्यान्त्याङ्केन चतुष्करूपेण भक्ता लब्धा षट् । अत्राय परिवर्त्त एवमग्रतो ज्ञेयम् ॥ १० ॥

अथैतानेव परिवर्त्तान्[12] आनुपूर्व्याऽनानुपूर्व्या गाथाबन्धेनाह—

इगं-इगं दु-छं-चउवीस विसुत्तरसंय च सत्तसयवीसा ।
पणसहसा चालीसा चत्तसहस्सा तिसयवीसा ॥ ११ ॥

व्याख्या—स्पष्टा । इय परिवर्त्तस्थापना ॥ ११ ॥

वि०—अथवा शब्दथी अहीं परिवर्तांक काढवानी बीजी बे रीतो सूचवी छे, ते आ प्रमाणे—

(१) पूर्वगणनी जे भगसख्या होय तेने उत्तरगणनी परिवर्तसख्या जाणवी ।

पाचमी गाथाना विवेचनमा गणनी भगसख्या नीचे प्रमाणे जणावेली छे—

गण	भंगसख्या	गण	भगसख्या
एक	१	षट्क	७२०
द्विक	२	सप्तक	५०४०
त्रिक	६	अष्टक	४०३२०
चतुष्क	२४	नवक	३६२८८०
पचक	१२०		

अहीं एक ए पूर्वगण छे ने द्विक ए उत्तरगण छे तो द्विकनी परिवर्त सख्या १ जाणवी । द्विक ए पूर्वगण छे अने त्रिक ए उत्तरगण छे तो त्रिकनी परिवर्त सख्या २ जाणवी । त्रिक ए पूर्वगण छे ने चतुष्क ए उत्तरगण छे तो चतुष्कनी परिवर्त सख्या ६ जाणवी । आ प्रमाणे अष्टक ए पूर्वगण छे अने नवक ए उत्तरगण छे तो नवकनी परिवर्त सख्या ४०३२० जाणवी ।

(२) पोतपोतानी भगसख्यामा गणना छेल्ला अकनो भाग देवाथी परिवर्त सख्या प्राप्त थाय छे ।

गण अने भगसख्या उपर जणावेली छे, तेने आ नियम लागु करता नीचे प्रमाणे परिवर्तां-कनी सख्या प्राप्त थाय छे —

---

1 °रूपपरि° J । 2 °गणभङ्गा J । 3 'तत' नास्ति J । आदर्शे । 4 °रूप । J । 5 चतुष्कगणे J । 6 गणस्याङ्केन A । 7 °त्रैकरू° A । 8 एक आद्य° J । 9 °न भक्ता J । 10 °स्यान्त्यङ्केन A । 11 °रूपा सान्त्या° A । 12 °तान् पूर्वानुपूर्व्या A ।

अथ परिवर्त्तैः प्रस्तुतां प्रस्तारयुक्तिं गाथाद्वयेनाह—

परिवट्टंकपमाणा अहो अहो अंतिमाइपंतीसु।
अंतिमपभिईअंका ठविज्ज वज्जिय समयभेयं॥ १२॥
जा सयलभंगसंखा नवरं पंतिसु दोसु पढमासु।
कम्म अकम्मओ दुन्ह वि सेसे अंके ठविज्जासु॥ १३॥

व्याख्या—स्वस्वपरिवर्त्ताङ्कप्रमाणास्तत्संख्यातुल्यवारान् पश्चानुपूर्व्या अन्त्यादिषु पङ्क्तिष्वन्त्यप्रभृतीनङ्कानधोऽधः स्थापयेत्। समयभेदं वर्जयित्वा सकलभङ्गसंख्यापूर्त्तिं यावत्। नवरं प्रथमपङ्क्तिद्वये प्रथमद्वितीयपङ्क्त्योरित्यर्थः। शेषमङ्कद्वये क्रमोत्क्रमाभ्यां स्थाप्यम्। पञ्चपदान्याश्रित्य भावना यथा—अत्रान्त्या पङ्क्तिः पञ्चमी, तस्यां च चतुर्विंशतिरूपः परिवर्त्ताङ्कस्ततश्चतुर्विंशतिवारानन्त्योऽङ्कः पञ्चकरूपः स्थाप्यः। ततश्चतुष्क-त्रिक-द्विकैककाक्रमेण चतुर्विंशति-[2]चतुर्विंशतिवारानधोऽधः स्थाप्याः। यावज्जाता सकलभङ्गसंख्या विंशत्युत्तरशतरूपा संपूर्णा। ततश्चतुर्थपङ्क्तौ षट्करूपपरिवर्त्ताङ्कः। समयभेदकारिणमन्त्यमपि पञ्चकं मुक्त्वा चतुष्क-त्रिक-द्विकैकका: षट्षड्वारान् स्थाप्याः। ततः षड्वारान् पञ्चकः स्थाप्यः। ततः समयभेदकरं चतुष्कं

गण	भंगसंख्या		गणनो छेल्लो अंक		परिवर्तांक
एक	१	–	१	=	१
द्विक	२	–	२	=	१
त्रिक	६	–	३	=	२
चतुष्क	२४	÷	४	=	६
पंचक	१२०	÷	५	=	२४
षट्क	७२०	÷	६	=	१२०
सप्तक	५०४०	÷	७	=	७२०
अष्टक	४०३२०	–	८	=	५०४०
नवक	३६२८८०	–	९	=	४०३२०

अगियारमी गाथामां आ परिवर्तांकनी संख्या स्पष्टपणे जणावेली छे॥ १०॥

श०—एक, एक, वे, छ, चोवीस, एकसो वीस, सातसो वीस, पांच हजार चालीस, तथा चालीस हजार त्रणसो वीस (ए अनुक्रमे गणनी परिवर्तसंख्या छे।)

वारमी अने तेरमी गाथामां भंगसंख्यानो प्रस्तार करवानी विधि दर्शावी छे॥ ११॥

श०—पोतपोताना परिवर्तांक प्रमाणे अर्थात् जेटली तेमनी संख्या छे, तेटलीवार पश्चानुपूर्वी वडे प्रथमपंक्तिमां छेल्लेथी लईने अंकोने नीचे नीचे मूकवा, परंतु तेमां समयभेदने छोडी देवो। (अर्थात् एक सरखा वे अंको पासे पासे न मूकवा।)॥ १२॥

1 °पूर्वीलादिषु J। 2 नास्ति 'चतुर्विंशति' पदं A प्रतौ।

[इय परिवर्तस्थापना]

१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	१	२	६	२४	१२०	७२०	५०४०	४०३२०

मुक्त्वा पञ्चक-त्रिक-द्विकैका षट्षट्संख्यान् वारान् स्थाप्या । तत समयभेदकर त्रिक मुक्त्वा पञ्चक-चतुष्क-द्विकैका षट्षट्सख्या स्थाप्या । तत समयभेदकर द्विक मुक्त्वा पञ्चक-चतुष्क त्रिकैकका षट्षट्संख्या स्थाप्या । तत समय-भेदकमेकक त्यक्त्वा पञ्चक-चतुष्क-त्रिक-द्विका तावतस्तावतो वारान् स्थाप्या । जाता चतुर्थी पङ्क्ति सपूर्णा ।

अथ तृतीयपङ्क्तौ द्विकरूपपरिवर्ताङ्क तत पञ्चक चतुष्क च समयभेदकर मुक्त्वा त्रिक-द्विकैकका द्विर्द्वि स्थाप्या । तत पञ्चक त्रिक च मुक्त्वा चतुष्क-द्विकैकका द्विर्द्वि स्थाप्या । ततश्चतुष्क-त्रिकैकका ततश्चतुष्क त्रिक-द्विकास्तत पञ्चक-द्विक-द्विका, एवमन्त्यादयोऽङ्का समयभेदकरानङ्कान् मुक्त्वा द्विर्द्वि स्थाप्या । तावद् यावत् संपूर्णा तृतीया पङ्क्ति स्यात् । आदिपङ्क्तिद्वये च शेषानङ्को पूर्वभङ्गे क्रमात् द्वितीयभङ्गे तूत्क्रमात् स्थाप्यौ । यावद् द्वे अपि पङ्क्ती संपूर्णे स्याताम् ॥ १३ ॥

समयभेदस्वरूपमाह—

जम्मि य निक्खित्ते खलु सो चेव हविज्ज अकविन्नासो ।
सो होइ समयभेओ वज्जेयव्वो पयत्तेण ॥ १४ ॥

व्याख्या—स्पष्टा ॥ १४ ॥

शु०—उपरना अकोने त्या सुधी मूकवा के ज्या सुधी यथा भगोनी सख्या पूरी थई जाय। अहीं विशेषता एटली समजवी के प्रथम बे पक्तिओमा बाकीना बे अकोने क्रम अने उत्क्रमथी मूकवा ॥१३॥

वि०—अहीं भगोनो प्रस्तार करवानी जे विधि दर्शावी छे ते बराबर समजी लईए । दाखला तरीके पाच पदना भगनो प्रस्तार करवो छे तो पचकनी परिवर्ताक सख्या लेवी ।

ऊपर जणाव्या मुजब पचकनी परिवर्ताक सख्या २४ छे, तो पश्चानुपूर्वी क्रमथी एटले ५, ४, ३, २, अने १ ना अंकोने छेल्ला अंक तरीके चोवीस चोवीस वार लखवा ते आ प्रमाणे—

जूओ पृ० ४०८ परना कोष्टको ।

शु०—जे अंको मूकवाथी ते ज अक-रचना एटले बने सरखा अको पासे पासे आवी जाय तेने समयभेद जाणवो ते अहीं प्रयत्न-पूर्वक छोडी देवो ॥ १४ ॥

---

1 'पञ्चक' पदं नास्ति A प्रतौ । 2 'मुक्त्वा' नास्ति P, A प्रत्यन्तरे । 3 चतुष्कमपास्य त्रिक-द्विकास्तता A । 4 'समयभेदकर' पदं न विद्यते A प्रतौ ।

हवे ४ नो परिवर्तांक छ छे तेथी वीजा अंकनी स्थापना पश्चानुपूर्वी क्रमथी ६ वार करवी। ते नीचे प्रमाणेः

१	----५	----४	----३	----२	----१
२	----५	----४	----३	----२	----१
३	----५	----४	----३	----२	----१
४	----५	----४	----३	----२	----१
५	----५	----४	----३	----२	----१
६	----५	----४	----३	----२	----१
७	----५	----४	----३	----२	----१
८	----५	----४	----३	----२	----१
९	----५	----४	----३	----२	----१
१०	----५	----४	----३	----२	----१
११	----५	----४	----३	----२	----१
१२	----५	----४	----३	----२	----१
१३	----५	----४	----३	----२	----१
१४	----५	----४	----३	----२	----१
१५	----५	----४	----३	----२	----१
१६	----५	----४	----३	----२	----१
१७	----५	----४	----३	----२	----१
१८	----५	----४	----३	----२	----१
१९	----५	----४	----३	----२	----१
२०	----५	----४	----३	----२	----१
२१	----५	----४	----३	----२	----१
२२	----५	----४	----३	----२	----१
२३	----५	----४	----३	----२	----१
२४	* ----५	----४	----३	----२	----१

१	----४५	----५४	---५३	---५२	---५१
२	----४५	----५४	---५३	---५२	---५१
३	----४५	----५४	---५३	---५२	---५१
४	----४५	----५४	---५३	---५२	---५१
५	----४५	----५४	---५३	---५२	---५१
६	----४५	----५४	---५३	---५२	---५१
७	----३५	----३४	---४३	---४२	---४१
८	----३५	----३४	---४३	---४२	---४१
९	----३५	----३४	---४३	---४२	---४१
१०	----३५	----३४	---४३	---४२	---४१
११	----३५	----३४	---४३	---४२	---४१
१२	----३५	----३४	---४३	---४२	---४१
१३	----२५	----२४	---२३	---३२	---३१
१४	----२५	----२४	---२३	---३२	---३१
१५	----२५	----२/	---२३	---३२	---३१
१६	----२५	----२४	---२३	---३२	---३१
१७	----२५	----२४	---२३	---३२	---३१
१८	----२५	----२४	---२३	---३२	---३१
१९	----१५	----१४	---१३	---१२	---२१
२०	----१५	----१४	---१३	---१२	---२१
२१	----१५	----१४	---१३	---१२	---२१
२२	----१५	----१४	---१३	---१२	---२१
२३	----१५	----१४	---१३	---१२	---२१
२४	----१५	----१४	---१३	---१२	---२१

त्यार पछी फल्गुनो परिवर्तांक वे छे, तेथी त्रीजा अंकनी स्थापना पश्चानुपूर्वी क्रमथी वे वार करवी। ते आ प्रमाणेः

१	--३४५	--३५४	--४५३	--४५२	--४५१
२	--३४५	--३५४	--४५३	--४५२	--४५१
३	--२४५	--२५४	--२५३	--३५२	--३५१
४	--२४५	--२५४	--२५३	--३५२	--३५१
५	--१४५	--१५४	--१५३	--१५२	--२५१
६	--१४५	--१५४	--१५३	--१५२	--२५१
७	--४३५	--५३४	--५४३	--५४२	--५४१
८	--४३५	--५३४	--५४३	--५४२	--५४१
९	--२३५	--२३४	--२४३	--३४२	--३४१
१०	--२३५	--२३४	--२४३	--३४२	--३४१
११	--१३५	--१३४	--१४३	--१४२	--२४१
१२	--१३५	--१३४	--१४३	--१४२	--२४१
१३	--४२५	--५२४	--५२३	--५३२	--५३१
१४	--४२५	--५२४	--५२३	--५३२	--५३१
१५	--३२५	--३२४	--४२३	--४३२	--४३१
१६	--३२५	--३२४	--४२३	--४३२	--४३१
१७	--१२५	--१२४	--१२३	--१३२	--२३१
१८	--१२५	--१२४	--१२३	--१३२	--२३१
१९	--४१५	--५१४	--५१३	--५१२	--५२१
२०	--४१५	--५१४	--५१३	--५१२	--५२१
२१	--३१५	--३१४	--४१३	--४१२	--४२१
२२	--३१५	--३१४	--४१३	--४१२	--४२१
२३	--२१५	--२१४	--२१३	--३१२	--३२१
२४	--२१५	--२१४	--२१३	--३१२	--३२१

बाकीना वे अंकोने क्रम अने उत्क्रमथी स्थापवा। एम करतां पांच पदना भंगनो पूर्ण प्रस्तार थाय छे, ते आ प्रमाणेः

१	१२ ३४५	१२ ३५४	१२ ४५३	१३ ४५२	२३ ४५१
२	२१ ३४५	२१ ३५४	२१ ४५३	३१ ४५२	३२ ४५१
३	१३ २४५	१३ २५४	१४ २५३	१४ ३५२	२४ ३५१
४	३१ २४५	३१ २५४	४१ २५३	४१ ३५२	४२ ३५१
५	२३ १४५	२३ १५४	२४ १५३	३४ १५२	३४ २५१
६	३२ १४५	३२ १३४	४२ १५३	४३ १५२	४३ २५१
७	१२ ४३५	१२ ५३४	१२ ५४३	१३ ५४२	२३ ५४१
८	२१ ४३५	२१ ५३४	२१ ५४३	३१ ५४२	३२ ५४१
९	१४ २३५	१५ २३४	१५ २४३	१५ ३४२	२५ ३४१
१०	४१ २३५	५१ २३४	५१ २४३	५१ ३४२	५२ ३४१
११	२४ १३५	२५ १३४	२५ १४३	३५ १४२	३५ २४१
१२	४२ १३५	५२ १३४	५२ १४३	५३ १४२	५३ २४१
१३	१३ ४२५	१३ ५२४	१४ ५२३	१४ ५३२	२४ ५३१
१४	३१ ४२५	३१ ५२४	४१ ५२३	४१ ५३२	४२ ५३१
१५	१४ ३२५	१५ ३२४	१५ ४२३	१५ ४३२	२५ ४३१
१६	४१ ३२५	५१ ३२४	५१ ४२३	५१ ४३२	५२ ४३१
१७	३४ १२५	३५ १२४	४५ १२३	४५ १३२	४५ २३१
१८	४३ १२५	५३ १२४	५४ १२३	५४ १३२	५४ २३१
१९	२३ ४१५	२३ ५१४	२४ ५१३	३४ ५१२	३४ ५२१
२०	३२ ४१५	३२ ५१४	४२ ५१३	४३ ५१२	४३ ५२१
२१	२४ ३१५	२५ ३१४	२५ ४१३	३५ ४१२	३५ ४२१
२२	४२ ३१५	५२ ३१४	५२ ४१३	५३ ४१२	५३ ४२१
२३	३४ २१५	३५ २१४	४५ २१३	४५ ३१२	४५ ३२१
२४	४३ २१५	५३ २१४	५४ २१३	५४ ३१२	५४ ३२१

* अहीं वीजा अंकमां ४ नी स्थापना करता समयभेद थाय छे, माटे ३ नी स्थापना करी छे, ए रीते सर्वत्र समजी लेवुं।

अथ नष्टानयने करणमाह—

नट्ठंको भाइज्जइ परिवट्टेहिं इहऽन्तिमाईहिं ।
लद्धा अंताइगया तयग्गिम जाण नट्ठ तु ॥ १५ ॥
इगसेसे सेसंका ठाविज्ज कमेण सुन्नसेसम्मि ।
लद्ध कुरु इगहीण उक्कमओ ठवसु सेसके ॥ १६ ॥

व्याख्या—नष्टाङ्को नष्टरूपस्य सख्याङ्क सोऽन्त्यादिभि परिवर्त्ताङ्कैर्भज्यते यल्लभ्यते तदङ्कसख्या अन्त्यादयो अङ्का गता ज्ञेया । कोऽर्थ नष्टरूपत [1] पूर्वं तावत् सख्या अन्त्यादयस्तस्या पङ्क्तौ परिवर्त्ताङ्क-सख्यावारान् स्थित्वा तत उत्थिता इत्यर्थ । ततस्तेभ्य पश्चानुपूर्व्या यदग्रेतनमङ्करूप तन्नष्ट ज्ञेयम् । कोऽर्थस्तन्नष्टकथने [2] तत्र तत्र पङ्क्तौ लेख्यमित्यर्थ । एव क्रियमाणे यद्येक शेष स्यात् तदा शेषरूपाणि लिखितरूपादवशिष्टानि क्रमेण स्थाप्यानि, प्रथमादिपङ्क्तिषु [3] क्रमेण लेख्यानीत्यर्थ । तथा यदि शून्य शेष स्यात् तदा लब्धाङ्क एकेन हीन कार्य । तत एकहीनलब्धाङ्कसख्या अन्त्यादयोऽङ्कास्तस्या पङ्क्तौ गता ज्ञेया । पूर्वस्थापिता सप्रत्युत्थिता इत्यर्थ । तेभ्य पश्चानुपूर्व्याऽग्रेतन नष्ट रूप ज्ञेयम् । इति प्राग्लिखित-नष्टरूपेभ्य शेषा अङ्का प्रथमादिपङ्क्तिषूत्क्रमेण लेख्या ।

अत्र पञ्चपदीमाश्रित्योदाहरण यथा—त्रिशत्तम रूप नष्ट तत् कीदृशमिति केनापि पृष्टम् । ततोऽत्र त्रिशदन्त्यपरिवर्तेन चतुर्विंशतिरूपेण भज्यते । लब्ध एक, शेषा षट् । ततो पञ्चमपङ्क्तौ पञ्चकरूप गतम् । कोऽर्थ ? चतुर्विंशतिवारान् स्थित्वा सप्रति पङ्क्तित उत्थितमित्यर्थ । तस्माच्च पश्चानुपूर्व्याऽग्रेतन चतुष्करूप नष्ट ज्ञेयम् । सप्रति वर्त्तन इत्यर्थ । अतश्चतुष्को नष्टस्थाने पञ्चमपङ्क्तौ स्थाप्य । तथा शेषस्य षट्कस्य चतुर्थपङ्क्तिसत्केन षट्करूपपरिवर्त्तेन भागे लब्ध एक, शेषस्थाने शून्यम् । ततो लब्धमेकहीन क्रियते । जात लब्धस्थानेषु शून्य ततश्चतुर्थपङ्क्तावद्याप्येकमपि रूप गत नास्ति । ततोऽन्त्यमेव पद पञ्चकरूप नष्ट ज्ञेयम् । शेषा अङ्का एक-द्विक-त्रिका उत्क्रमेण स्थाप्या । यथा—३,२,१,५,४ । इद त्रिशत्तम रूप ज्ञेयम् ।

वि०—पदरमी अने सोळमी गाथामा नष्टाक काढवानी विधि दर्शावी छे । नष्टाक एटले नहि कहेवायेला अको तेने शोधी काढवानी रीति ते नष्टांकनी विधि ॥ १८ ॥

श०—नष्टाक अर्थात् नष्टरूपनो जे सख्याक छे, तेमा अत्यादि (अतथी शरू करेला) परिवर्तांकोनो भाग देवामा आवे छे, तेथी जे भागफल आवे छे, तेनी अकसख्या प्रमाणे अत्यादि अकोने गत (गयेला) अने तेनी आगळना अकने नष्ट जाणवो ॥ १५ ॥

श०—एक शेष रहेता बाकीना अकोने (प्रथम वगेरे पक्तिओमा) क्रमथी मूकवा अने शून्य शेष रहे तो ते भागफलमाथी एक घटाडी नाखवो, अने बाकीना अकोने क्रमभेदथी मूकवा ॥ १६ ॥

---

1 नष्टरूप० J । 2 तस्मो प० A । 3 पङ्क्तिषु । तथा J ।

अथ द्वितीयमुदाहरणं यथा—चतुर्विंशतितमं रूपं नष्टं तत् कीदृशमिति पृष्टे चतुर्विंशतेरन्त्यपरिवर्त्तेन २४ रूपेण भागे लब्ध एकः, शेषं शून्यम्। ततः पूर्वोक्तयुक्त्या शून्यशेषत्वाल्लब्धमेकहीनं क्रियते। जातं लब्धस्थानेऽपि शून्यम्। ततः पञ्चमपङ्क्तावप्येकमपि रूपं गतं नास्ति। ततोऽन्त्य एव पञ्चक-रूपोऽङ्कः स्थाप्यः। शेषा[2] अङ्का एक-द्विक-त्रिक-चतुष्का उत्क्रमात् स्थाप्याः। यथा—४,३,२,१,५। इदं चतुर्विंशतितमं रूपम्।

तृतीयमुदाहरणं यथा—सप्तनवतितमं रूपं नष्टं, ततः सप्तनवतेरन्त्यपरिवर्त्तेन २४ रूपेण भागे लब्धाश्चत्वारः, शेष एकः। अतः पञ्चमपङ्क्तावन्त्यादयश्चत्वारोऽङ्का गता ज्ञेयास्तेभ्योऽग्रेतन एकको नष्ट-स्थाने लेख्यः, एकशेषत्वाच्छेषा अङ्काः क्रमाल्लेख्याः, यथा—२,३,४,५,१। इदं सप्तनवतितमं रूपम्।

अथ चतुर्थमुदाहरणं यथा—पञ्चाशत्तमं रूपं नष्टम्। ततः पञ्चाशतोऽन्त्यपरिवर्त्तेन २४ रूपेण भागे लब्धौ द्वौ। ततोऽन्त्यपङ्क्तावन्त्यादारभ्य द्वावङ्कौ गतौ। तदग्रेतनस्त्रिको नष्टस्थाने लेख्यः। तथा शेषस्य द्विकस्य चतुर्थपङ्क्तिपरिवर्त्तेन षट्करूपेण भागे किमपि न लभ्यते। ततोऽत्र चतुर्थपङ्क्तौ एकमपि रूपं गतं नास्ति। अतोऽन्त्यपञ्चक एव नष्टस्थाने लेख्यः। ततस्तृतीयपङ्क्तौ शेषस्य द्विकस्य परिवर्त्तेन द्वयरूपेण भागे लब्ध एकः, शेषं शून्यम्। ततो लब्धमेकहीनं क्रियते। जातं लब्धस्थानेऽपि शून्यम्, अतस्तृतीयपङ्क्तौ[3] वेकमपि रूपं गतं नास्ति। ततः पञ्चकस्य चतुर्थपङ्क्तौ स्थापितत्वेन पुनः स्थापने समय-भेदः स्यादिति तं मुक्त्वाऽन्त्योऽङ्कश्चतुष्क एव स्थाप्यः। शेषौ ३/२ २/१ रूपावुत्क्रमेण स्थाप्यौ। यथा—२,१,४,५,३। इदं पञ्चाशत्तमं रूपम्।

वि०—नष्टांक काढवानी रीति थोडा उदाहरणोथी वधारे स्पष्ट समजाशे। दाखला तरीके-पंचपदना प्रस्तारनुं त्रीशमुं रूप शोधी काढवुं होय तो अंत्य परिवर्तांक एटले चोवीशथी तेने भाग देवो जोईए, ते आ प्रमाणे:—३०÷२४=१, शेष ६।

अहीं भागफळ १ आव्युं एटले छेल्लो अंक गयेलो छे, तात्पर्य के ६ नो अंक गयो छे अने ४ नो अंक नष्ट छे; एटले त्रीशमी संख्यानो छेल्लो अंक ४ छे। अहीं ६ शेष रह्या छे, अने आगळनो परिवर्तांक ६ छे, तेथी ६ थी भागवा जोईए :—६—६=१।

तेम करतां शेष शून्य आवे छे एटले भागफळमांथी १ घटाडवो जोईए :—१—१=०।

आ रीते भागफळमां पण शून्य आवे छे, एटले अहीं एके अंक गत नथी, एटले अंत्य अंक ५ मूकवो जोईए। आ प्रमाणे छेल्ला बे अंको ५ अने ४ प्राप्त थया। हवे शेषमां पण शून्य रहे छे, तेथी आगळना अंको उत्क्रमथी मूकवा जोईए। ते आ प्रमाणे:—३२१। एम करतां त्रीशमी संख्यामां नीचेना अंको प्राप्त थाय छे:—३ २ १ ५ ४।

(२) हवे पंचपदना प्रस्तारनुं चोवीशमुं रूप शोधी काढवुं होय तो अंत्य परिवर्तांक एटले चोवीशथी तेने भाग देवो जोईए, ते आ प्रमाणे:—२४÷२४=१।

तेम करतां शेष शून्य रहे छे, एटले भागफळमांथी १ घटाडवो जोईए :—१—१=०।

---

1 'अपि'नास्ति J प्रतौ। 2 शेषाङ्काः J। 3 पङ्क्तावपि J।

पञ्चममुदाहरण यथा—पञ्चपष्टितम रूप नष्टम् । तत पञ्चपष्टेरन्त्यपरिवर्तेन भागे लब्धौ द्वौ । तत पञ्चक-चतुष्करूपो । अत्र द्वौ अङ्कौ गतौ । ताभ्यामग्रेतनस्त्रिको नष्टस्थाने लेख्य । शेषाणा सप्तदशाना चतुर्थपङ्क्तिपरिवर्तेन भागे लब्धौ द्वौ । पञ्चक-चतुष्करूपौ द्वौ अङ्कौ गतौ । तदग्रेतनस्त्रिकश्चेत स्थाप्यते तदा समयभेद स्यादिति त मुक्त्वा द्विक स्थाप्य । शेषाणा पञ्चाना तृतीयपङ्क्तिपरिवर्तेन भागे लब्धौ द्वौ, शेप एक । अत्रापि पञ्चक-चतुष्कौ द्वावङ्कौ गतौ तदग्रेतनयोस्त्रिक द्विकयो स्थापने समयभेद इति तौ त्यक्त्वा एकक स्थाप्य । एकशेपत्वाच्छेपौ द्वावङ्कौ क्रमेण स्थाप्यौ । यथा ४,५,१,२,३ । इद पञ्चपष्टितम रूपम् ।

तथा षष्ठमुदाहरणम्—सप्तम रूप नष्टम् । तत्र सप्तानामन्त्यपरावर्तेन चतुर्विंशत्या भागो नाऽऽप्यते । ततोऽत्रेकमपि रूप गत नास्तीति पञ्चक एव स्थाप्य । अथ सप्ताना चतुर्थपङ्क्तिपरिवर्तेन षट्करूपेण भागे लब्ध एक, शेपश्चैक । तत एकोऽन्त्योऽङ्कोऽत्र गत 'नट्ठुद्दिट्ठविहाणे' इत्यादि-वक्ष्यमाण[१७]गाथया वर्जितत्वात् । पञ्चमपङ्क्तिस्थित पञ्चको गतमध्ये न गण्यते । ततोऽन्त्योऽङ्कोऽत्र चतुष्करूप एव गत । तदग्रेतनस्त्रिकश्च नष्टस्थाने लेख्य । एकशेपत्वाच्छेपा अङ्का क्रमेण लेख्या । यथा—१,२,३,४,५ ।

अथ सप्तममुदाहरण यथा—एकचत्वारिंशत्तम रूप नष्टम् । एकचत्वारिंशतोऽन्त्यपरिवर्तेन भागे लब्ध एक । तत एकोऽन्त्योऽङ्क पञ्चको गत तदग्रेतनचतुष्को नष्टस्थाने लेख्य । ततश्चतुर्थपङ्क्तिपरिवर्तेन ६ रूपेण शेपसप्तदशाना भागे लब्धो द्वौ । 'नट्ठुद्दिट्ठ' इत्यादिगाथया वर्जितत्वाच्चतुष्क टालयित्वा शेपावन्त्या

आ रीते भागफळमा पण शून्य आवे छे, एटले अहीं एके अक गत नथी, तेथी अत्य अक ५ नष्ट छे, अर्थात् चोवीशमी सख्यानो छेल्लो अक ६ छे । हवे शेषमा पण शून्य रहे छे, तेथी आगळना अको उत्क्रमथी मूकवा जोईए, ते आ प्रमाणे –४ ३ २ १ । एम करता चोवीसमी सख्याना नीचेना अको प्राप्त थाय छे –४ ३ २ १ ५ ।

(३) हवे पाच पदना प्रस्तारनु सत्ताणुमु रूप शोधी काढवु होय तो अत्य परिवर्ताक एटले चोवीशथी तेने भाग देवो जोईए, ते आ प्रमाणे –९७–२४=४, शेष १ ।

अहीं भागफळ ४ आव्यु छे, एटले छेल्ला चार अको गयेला छे, तात्पर्य के ५–४–३–२ ना अंको गया छे, अने १ नो अक नष्ट छे, एटले सत्ताणुमी सख्यानो छेल्लो अक १ छे । हवे शेषमा एक छे, तेथी आगळना अको क्रमथी मूकवा जोईए, ते आ प्रमाणे –२ ३ ४ ५ ।

एम करता सत्ताणुमी सख्यामा नीचेना अको प्राप्त थाय छे –२ ३ ४ ५ १ ।

(४) हवे पाच पदना प्रस्तारनु पचासमु रूप शोधी काढवु होय तो अत्य परिवर्ताक एटले चोवीसथी तेने भाग देवो जोईए, ते आ प्रमाणे –५०–२४=२, २ शेष ।

अहीं भागफळ बे आव्यु छे, एटले छेल्ला बे अको गयेला छे, तात्पर्य के ५ अने ४ अको गया छे अने ३ नो अक नष्ट छे, एटले पचासमी सख्यानो छेल्लो अक ३ छे । अहीं २ शेष रह्या छे अने आगळनो परिवर्ताक ६ छे, तेथी २ ने ६ थी भाग देवो जोईए –२–६=०, शेष २ ।

---

1 'अत्र' नास्ति A प्रतौ । एतच्चिह्नान्तर्गत पाठ J प्रतौ न विद्यते । 2 द्वौ गतौ A । 3 तत्रैक° J । 4 एषोऽन्त्य प J ।

दारभ्य द्वावङ्कौ पञ्च-त्रिकरूपौ गतौ। ततस्तदग्रेतनो द्विकश्चतुर्थपङ्क्तौ लेख्यः। तथा शेषाणां पञ्चानां तृतीयपङ्क्तिपरिवर्त्तेन २ रूपेण भागे लब्धौ द्वौ। अत्रापि 'नट्ठुद्दिट्ठ' इत्यादिगाथारीत्या टालितत्वेन चतुष्कं त्यक्त्वा शेषौ द्वावङ्कौ [2]पञ्चक-त्रिकौ गतौ। तदग्रेतनो[3]द्विको नष्टस्थाने लिख्यते। परमेवं समयभेदः स्यादिति तं मुक्त्वा तृतीयपङ्क्तौ तदग्रेतन एकको लिख्यते। एकशेषत्वाच्छेषावङ्कौ त्रिक-पञ्चकौ क्रमेण लेख्यौ। यथा–३,५,१,२,४। इदं एकचत्वारिंशत्तमं रूपम्। एवं सर्वोदाहरणेषु ज्ञेयम्॥ १५–१६॥

परंतु वेमां ६ नो भाग लागी शकतो नथी एटले अहीं एकेय अंक गत नथी, एटले अंत्य अंक ५ मूकवो जोईए। आ प्रमाणे छेल्ला वे अंको ५ अने ३ प्राप्त थया। हवे शेष रहेला २ मां आगळनो परिवर्तांक २ छे, तेथी २ ने २ थी भाग देवो जोईए :–२–२=१।

तेम करतां शेष शून्य आवे छे एटले भागफळमांथी १ घटाडवो जोईए :–१–१=०।

आ रीते भागफळमां पण शून्य आव छे, एटले अहीं एके अंक गत नथी, एटले अंत्य अंक ५ मूकवो जोईए–५ ५ ३। आम पांचने मूकतां पांच–पांच सरखा अंको पासे आवे छे एटले ते समयभेद थयो माटे ते पांचने छोडी देवो जोईए। आ प्रमाणे छेल्ला त्रण अंको ४ ५ ३ प्राप्त थया।

हवे शेषमां पण शून्य रहे छे, तेथी आगळना अंको उत्क्रमथी मूकवा जोईए :–२ १।

एम करतां पचासमी संख्यामां नीचेना अंको प्राप्त थाय छे :–२ १ ४ ५ ३।

(५) हवे पंचपदना प्रस्तारनुं पांसठमुं रूप शोधी काढवुं होय तो अंत्य परिवर्तांक एटले चोवीसथी तेने भाग देवो जोईए, ते आ प्रमाणे :–६५÷२४=२, शेष १७।

अहीं भागफळ वे आव्युं छे एटले छेल्ला वे अंको गयेला छे, तात्पर्य के ५ अने ४ अंको गया छे अने ३ नो अंक नष्ट छे, एटले पांसठमी संख्यानो छेल्लो अंक ३ छे। अहीं १७ शेष रह्या छे अने आगळनो परिवर्तांक ६ छे तेथी १७ ने ६ थी भाग देवो जोईए :–१७÷६=२, शेष ५।

अहीं पण भागफळ बे आव्युं छे, एटले छेल्ला वे अंको गयेला छे, तात्पर्य के ५ अने ४ अंको गया छे–अने ३ नो अंक नष्ट छे, परंतु छेल्ला अंक ३ ने पहेलां फरीवार ३ मूकतां समयभेद थाय छे, तेथी ते ३ छोडीने तेनी आगळना अंक २ ने मूकवो जोईए। ए प्रमाणे छेल्ला वे अंको ३ अने २ प्राप्त थया। अहीं ५ शेष रह्या छे, एटले आगळनो परिवर्तांक २ छे, तेथी ५ ने २ थी भाग देवो जोइए :–५÷२=२, शेष १।

अहीं पण भागफळ वे आव्युं छे, एटले छेल्ला वे अंको गयेला छे, तात्पर्य के ५ अने ४ अंको गयेला छे। हवे एनी आगळना ३ मूकवा जतां ३ ३ २ एवो समयभेद थाय छे अने तेनी आगळना २ ने मूकवा जतां पण २ ३ २ एवो समयभेद थाय छे तेथी ते बंने अंकोने छोडीने १ अंक मूकवो जोईए। ए प्रमाणे छेल्ला त्रण अंको १ ३ २ प्राप्त थया। हवे शेषमां एक बाकी छे,

---

1 °श्चतुष्कप° J। 2 'पञ्चकत्रिकौ' इति पदं J प्रतौ नास्ति। 3 °तनो द्विको J।

अथोद्दिष्टानयने करणमाह—

अतांइगयअंका नियनियपरिवट्टताडिया सव्वे ।
उद्दिट्ठभगसखा ऽगेण सहिया मुणेयव्वा ॥ १७ ॥

व्याख्या—यावन्तोऽङ्का सर्वपङ्क्तिष्वन्त्यादयो गता स्यु । कोऽर्थ [1] स्वस्वपरिवर्ताङ्कसख्यावारान् वर्तित्वोत्थिता स्यु । तेऽङ्का स्वस्वपरिवर्ताङ्केस्ताडिता गुणिता । पश्चादेकयुतोद्दिष्टभङ्गसख्या स्यात् । उदाहरण यथा–२,३,४,५,१ । इद कतिथमिति केनापि पृष्ट—अत्रान्त्यपङ्क्तौ दृष्ट एककोऽन्त्योऽन्त्यादय पश्चानुपूर्व्या पञ्चक-चतुष्क-त्रिक-द्विकरूपाश्चत्वारो अङ्का गता । ततश्चत्वार पञ्चमपङ्क्तिपरिवर्तेन २४ रूपेण गुणिता जाता षण्णवति । तथा चतुर्थपङ्क्तौ दृष्ट । पञ्चकोऽतोऽत्र गताङ्काभाव । तृतीयपङ्क्तौ दृष्टश्चतुष्कोऽत्र पञ्चको गत स्यात्, पर 'नट्ठुद्दिट्ठ 'इत्यादिगाथया वर्जितत्वाद् गतमध्ये न गण्यते, तेनात्रापि गताङ्काभाव । एव द्वितीयपङ्क्तौ पञ्चक-चतुष्कौ प्रथमपङ्क्तौ च पञ्चक-चतुष्क-त्रिका गता स्यु । पर वर्जितत्वेन गताङ्केषु न गण्यन्तेऽतस्तत्रापि गताङ्काभाव । तत षण्णवतिरेकयुता जाता सप्तनवति । तत इद सप्तनवतितम रूपम् ।

तथा–३,२,१,५,४ । इद कतिथमिति पृष्टे—अत्रान्त्यपङ्क्तौ दृष्टश्चतुष्क । तत एको पञ्चकरूपोऽङ्को गत । तत एकश्चतुर्विंशत्या परिवर्तेन गुण्यते जाता २४ । चतुर्थपङ्क्तौ पञ्चकस्य दृष्टत्वाद् गतोऽङ्क कोऽपि नास्ति । तृतीयपङ्क्तौ दृष्ट एकक 'नट्ठुद्दिट्ठ ' इत्यादिनोंऽपादितत्वात् पञ्चक-चतुष्कौ गताङ्कमध्ये न गण्येते । ततस्त्रिक द्विकरूपौ द्वावेव गतौ । द्वौ च स्वपरिवर्तेन द्विकरूपेण गुणितौ जातौ चत्वार ।

तेथी आगळना अंको क्रमथी मूकया जोईए–४ ५ । एम करता पासठमी सख्यामा नीचेना अको प्राप्त थाय छे ४ ५ १ ३ २ ।

नष्टाकनी विधि दर्शाव्या पछी सोत्रकारे सत्तरमी गाथामा उद्दिष्टाक (अमुक अक रचना भग प्रस्तारना केटलामा रूपे छे ते)नी विधि दर्शावी छे ॥ १६ ॥

शु०—अतिनथी माडीने गयेला बधा अंकोनो ज्यारे पोतपोताना परिवर्ताकोथी गुणाकार करवामा आवे अने तेमा एक जोडी देवामा आवे,' त्यारे उद्दिष्ट भगनी सख्या प्राप्त थाय छे ॥१७॥

वि०—कोईए एम पूछ्यु के–२ ३ ४ ५ १ केटलामो भग छे ? तात्पर्य के, तेनो उद्दिष्टाक शु ? तो उपर जणावेली रीति प्रमाणे तेने शोधी शकाशे ।

२ ३ ४ ५ १ नी सख्याना छेल्लो अक १ छे, एटले ५, ४, ३ अने २ ए चार अंको पोतानु स्थान छोडी गया छे, तेथी गताक सख्या ४ छे, तेने पाचमी पक्तिना परिवर्ताक २४ थी गुणता ९६ आव्या, अर्थात् ९६ रूपो नीकळी गया छे अने तेनी पछीनु आ रूप छे । हवे चोथा स्थानना ५ छे, एटले तेमा एक पण गताक नथी । त्रीजा स्थानमा ४ रहेलो छे, अही ५ गताक

---

1 °वर्त्तेन° ३। 2 °तोऽत्र° ३। 3 °ते च स° ३।

पूर्वचतुर्विंशतिमध्ये क्षिप्ता जाताः २८। द्वितीयपङ्क्तौ दृष्टो द्विकोऽत्रापि पञ्चक-चतुष्कयोः प्राग्वद् वर्जितत्वादेक एव त्रिकरूपोऽङ्को गतः। स स्वपरिवर्तनैकरूपेण गुणितो जात एक एव। पूर्वाष्टाविंशतिमध्ये क्षिप्तो जातैकोनत्रिंशत्। प्रथमपङ्क्तौ तु प्राग्वत् पञ्चक-चतुष्कयोर्वर्जितत्वेन गतोऽङ्कः कोऽपि नास्ति। एकोनत्रिंशदेकेन युता जाता त्रिंशत्। तत इदं त्रिंशत्तमं रूपम्।

तथा २,३,४,१,५। अयं कतिथो भङ्ग इति केनापि पृष्टम्—अत्रान्त्यपङ्क्तौ पञ्चकस्य दृष्टत्वान्न कोऽपि गतोऽङ्कः। चतुर्थपङ्क्तौ प्राक्तनरीत्या पञ्चकस्य वर्जितत्वाच्चतुष्क-त्रिक-द्विकरूपास्त्रयोऽङ्का गताः। ततस्त्रयः स्वपरिवर्त्तन ६ रूपेण गुणिता जाता १८। तृतीयपङ्क्तौ पञ्चकस्य वर्जितत्वाद् गतोऽङ्को नास्ति। एवं द्वितीय-प्रथमपङ्क्त्योरपि। ततोऽष्टादशैकेन युता १९। अयमेकोनविंशो भङ्गः।

तथा—२,१,४,५,३। अयं कतिथ इति पृष्टे—अत्रान्त्यपङ्क्तौ त्रिकस्य दृष्टत्वात् पञ्चक-चतुष्करूपौ द्वावङ्कौ गतौ। ततो द्वौ स्वपरिवर्त्तन २४ रूपेण गुणितौ जाताः ४८। चतुर्थपङ्क्तौ पञ्चकस्य दृष्टत्वेन गतोऽङ्को नास्ति। तृतीयपङ्क्तावपि पञ्चकस्य प्रोक्त[1]रीत्या वर्जितत्वान्न कोऽपि गतोऽङ्कः। द्वितीयपङ्क्तौ पञ्चक-चतुष्क-त्रिकाणा[2]मपोदितत्वाद् द्विकरूप एक एव गतोऽङ्कः। स एकेन गुणितो जात एक एव। ४८ मध्ये क्षिप्तो जाता एकोनपञ्चाशदेकयुताः जाताः पञ्चाशत्। अयं पञ्चाशत्तमो भङ्ग इति वाच्यम्। एवं सर्वत्र ज्ञेयम्॥ १७॥

होई शके परंतु 'नट्ठुदिट्ठ' शब्दथी शरू थती अढारमी गाथामां पूर्वस्थापित अंकोने (पश्चानुपूर्वीथी गणतां) वर्जवानुं कह्युं छे, तेथी ५ नी गणना गतांकमां करवानी नथी। हवे बीजा स्थानमां ५ अने ४ तथा पहेला स्थानमां ५, ४ अने ३ गतांक होई शके, परंतु ऊपर जणाव्यो ते अढारमी गाथावाळो नियम अहीं पण लागु पडे छे, तेथी एक पण गतांक गणवानो नथी। आ रीते प्राप्त थयेली ९६ नी संख्यामां १ जोडवाथी ९७ नी संख्या आवे छे, ते अहीं उद्दिष्टांक छे।

एक बीजा उदाहरणथी आ वस्तु वधारे स्पष्ट करीए :—

१५२४३ आ केटलामो भंग छे? एम पूछवामां आवे तो अहीं पांचमा स्थानमां त्रण छे, तेथी ५ अने ४ आ बे अंको गया छे माटे पांचना परिवर्तांक २४ नो २ थी गुणाकार करवो जोईए, तेम करतां २४×२=४८ आव्या।

हवे चोथा स्थानमां ४ छे, तेथी अहीं ५ नो एक अंक गयो तेथी चारना परिवर्तांक ६ नो १ थी गुणाकार करवो जोईए ६×१=६।

हवे ४८ मां ६ ऊमेर्या तो ४८ + ६ = ५४ थया। हवे त्रीजा स्थानमां २ छे। अहीं ३—४—५ आ त्रण अंको जवा जोईए, परंतु ४ अने ३ आ अंको पूर्वस्थापित होवाथी गतांकोनी गणनामां आवता नथी, तेथी ५ नो एक ज अंक गत समजवानो छे। त्रीजा स्थाननो परिवर्तांक २ छे, तेथी २ नो १ नी साथे गुणाकार करतां—२×१=२ आव्या।

---

1 प्राक्तनरीत्या J। 2 °मुपादि° J।

गताङ्कगुणनेऽपवादमाह—

नट्ठुद्दिट्ठविहाणे जे अंका अतिमाइपतीसु ।
पुव्विं ठविआ नहि ते गयङ्कगणणे गणिज्जंति ॥ १८ ॥

व्याख्या—नष्टोद्दिष्टविधौ येऽङ्का पाश्चानुपूर्व्यान्त्यादिषु पङ्क्तिषु पूर्वं स्थापिता भवन्ति ते गताङ्कसंख्याया क्रियमाणाया न गण्यन्ते । अन्त्यादारभ्याङ्कक्रमादायाता अपि टाल्यन्ते, ते ह्यन्त्यादिषु पङ्क्तिषु स्थितत्वेनापरपङ्क्तिष्वद्यापि नाधिकृता[1], अतस्तान् टालयित्वा गताङ्काना संख्या कार्येत्यर्थ । भावना नष्टोद्दिष्टोदाहरणेषु कृता ॥ १८ ॥

अथ कोष्ठकप्रकारेण[2] नष्टोद्दिष्टे आनिनीषु पूर्वं कोष्ठकस्थापनामाह—

पढमाए इगकोट्ठो उड्ढअहोआययासु पतीसु ।
एगेगवड्ढमाणा कोट्ठा सेसासु सव्वासु ॥ १९ ॥

व्याख्या—[3]इहोर्ध्वाऽध आयता कोष्ठपङ्क्तयो रेखाभि क्रियन्ते, तत्र प्रथमपङ्क्तावेक एव कोष्ठक, शेषपङ्क्तिषु पूर्वपङ्क्तित[4] उत्तरोत्तरपङ्क्तिष्वधस्तात् सत्स्वयेकैकवर्द्धमाना कोष्ठका कार्या ॥ १९ ॥

अथ कोष्ठकेष्वङ्कस्थापनामाह—

इगु आइमपंतीए सुन्ना अन्नासु आइकोट्ठेसु ।
परिवट्टा बीएसु दुगाइगुणिआ य सेसेसु ॥ २० ॥

व्याख्या—आदिमपङ्क्तौ प्रथमकोष्ठके एक एव स्थाप्य । अन्यासु द्वितीयादिपङ्क्तिष्वाद्यकोष्ठकाष्टकेषु[5] शून्यान्येव स्थाप्यानि द्वितीयेषु कोष्ठकेषु परिवर्ताङ्का स्थाप्या । तथा द्वितीय कोष्ठकेषु त

---

५४ मा बे उमेरता ५४ + २ = ५६ थया । हवे बीजा स्थानमा ५ छे, तेथी अहीं कोई गतांक नथी । प्रथम स्थानमा एक छे, तेथी अहीं ५, ४, ३, २, गतांक होई शके, परंतु ते पूर्वस्थापित होवाथी अहीं तेनी गणना करवानी नथी । तात्पर्य के कुलसंख्या ५६ आवी तेमा एक उमेरता ५७ थया, तेथी आ रूप ५७ मुं छे ॥ १७ ॥

श०—नष्ट अने उद्दिष्टांक शोधवाना प्रसंगे, अंतिम आदि स्थानमा जे अंकोनी पूर्वस्थापना करी छे तेने गतांको गणतामा आवता नथी ॥ १८ ॥

वि०—सरल छे । नष्ट अने उद्दिष्टनुं स्वरूप कोठाथी पण आवे छे । तेनो विधि ओगणीसमी गाथामा जणावेलो छे ॥ १८ ॥

श०—ऊपर अने नीचे लांबी लींटीओ खेंचवाथी पहेली पंक्तिमा एक कोठो थाय छे अने बाकीनी सर्व पंक्तिओमा अनुक्रमे एक एक वधारे थाय छे ॥ १९ ॥

वि०—ऊभी अने आडी लीटीओ दोरवाथी कोठा बने छे । तेमा पहेली पंक्तिमा एक

---

1 पङ्क्तिष्वद्यापि J । 2 कोष्ठकारेण A । 3 इहोर्ध्वाऽध A । 4 पूर्वपूर्व उत्त० A । 5 कोष्ठकेषु A ।

एव द्विगुणाः, चतुर्थेषु त एव त्रिगुणाः, पञ्चमेषु चतुर्गुणाः, षष्ठेपु पञ्चगुणाः, सप्तमेषु पड्गुणाः, अष्टमेषु सप्तगुणाः, नवमे कोष्ठकेष्वष्टगुणाः ॥ २० ॥

कोष्ठकपङ्क्तिस्थापनायन्त्रकम् ।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
	१	२	६	२४	१२०	७२०	५०४०	४०३२०
		४	१२	४८	२४०	१४४०	१००८०	८०६४०
			१८	७२	३६०	२१६०	१५१२०	१२०९६०
				९६	४८०	२८८०	२०१६०	१६१२८०
					६००	३६००	२५२००	२०१६००
						४३२०	३०२४०	२४१९९०
							३५२८०	२८२२४०
								३२२५६०

कोठो थाय, वीजी पंक्तिमां वे कोठा थाय, त्रीजामां त्रण थाय, एवी रीते नवमी पंक्तिमां नव कोठा थाय, ते आ प्रमाणे :—

	प्रथमपंक्ति	वीजी पंक्ति	त्रीजी पंक्ति	चोथी पंक्ति	पांचमी पंक्ति	छठ्ठी पंक्ति	सातमी पंक्ति	आठमी पंक्ति	नवमी पंक्ति
पहेलो कोठो									
वीजो कोठो									
त्रीजो कोठो									
चोथो कोठो									
पाचमो कोठो									
छट्ठो कोठो									
सातमो कोठो									
आठमो कोठो									
नवमो कोठो									

आ कोठाओमां अंकनी स्थापना शी रीते करवी ते एवे पछीनी गाथाओमां जणाव्युं छे ॥१९॥

श०—प्रथम पंक्तिना प्रथम कोठामां एकनी स्थापना करवी अने शेष पंक्तिओना प्रथम कोठामां शून्यनी स्थापना करवी। वीजा कोठाओमां परिवर्ताकोनी तथा शेष कोठाओमां वे आदिथी गुणित अंकनी स्थापना करवी ॥ २० ॥

वि०—प्रथम पंक्तिमां एक ज कोठो छे, तेमां एकनी स्थापना करवी अने वीजी पंक्तिओना प्रथम कोठाओमां शून्यनी स्थापना करवी, ते आ रीते ।

	प्रथम पंक्ति	वीजी पंक्ति	त्रीजी पंक्ति	चोथी पंक्ति	पांचमी पंक्ति	छठ्ठी पंक्ति	सातमी पंक्ति	आठमी पंक्ति	नवमी पंक्ति
प्रथम कोठो	१	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ नष्टोद्दिष्टविधौ कोष्ठेष्वङ्कगुणनरीतिमाह—

पुव्वट्ठिअंके मुत्तु गणियव्वा अंतिमाइपंतिसु ।
कोट्ठाओ उवरिमाओ आय काऊण लहु अंक ॥ २१ ॥
अहवा जिट्ठ अक आय काऊण मुंत्तु ठविअंके ।
पंतीसु अंतिमाइसु हिट्ठिमकोट्ठाउ गणिअव्व ॥ २२ ॥

व्याख्या—यथा प्राङ्नष्टोद्दिष्टविधौ पश्चानुपूर्व्योऽन्त्यादिपङ्क्तिषु येऽङ्का पूर्वस्थिता स्युस्ते गताङ्केषु न गण्यन्ते स्म । तथाऽत्रापि तान् मुक्त्वा लघु लघुमङ्कमादिं कृत्वोपरितनकोष्ठकाद् गणनीयम् । पश्चानुपूर्व्या नवाष्ट-सप्त-षट्-पञ्च-चतुरादिभिरङ्कैः कोष्ठका अङ्कनीया इत्यर्थः । अथवा ज्येष्ठं ज्येष्ठमङ्कमादिं कृत्वाऽधस्तनकोष्ठकाद् गणनीयम्, पूर्वानुपूर्व्या एक-द्वि-त्रि-चतुः-पञ्चादिभिरङ्कैः कोष्ठका अङ्कनीया इत्यर्थः । नष्टाद्यानयनेऽयमर्थः स्पष्टो भावी ॥ २१–२२ ॥

बीजा कोठामा परिवर्तांकोनी स्थापना करवी ते आ प्रमाणे –

बीजो कोठो	१	२	६	२४	१२०	४२०	५०४०	४०३२०

त्रीजा कोठामा परिवर्तांक करता बमणी रकम स्थापवी, ते आ प्रमाणे –

त्रीजो कोठो	४	१२	४८	२४०	१४४०	१००८०	८०६४०

चोथा कोठामा परिवर्तांक करता त्रण गुणी, पाचमा कोठामा परिवर्तांक करता चार गुणी, छट्ठा कोठामा परिवर्तांक करता पाच गुणी, सातमा कोठामा परिवर्तांक करता छ गुणी, आठमा कोठामा परिवर्तांक करता सात गुणी अने नवमा कोठामा परिवर्तांक करता आठ–गुणी राखवी ते आ प्रमाणे —॥ २० ॥

चोथो कोठो	१८	७२	३६०	२१६०	१५१२०	१२०९६०
पांचमो कोठो		९६	४८०	२८८०	२०१६०	१६१२८०
छट्ठो कोठो			६००	३६००	२५२००	२०१६००
सातमो कोठो				४३२०	३०२४०	२४१९२०
आठमो कोठो					३९२८०	२८२२४०
नवमो कोठो						३२२५६०

शा०—पूर्व रहेला अंकोने छोडीने तथा लघु अंकोथी लईने उपरना कोठाथी अंतिम आदि पंक्तिओमा गणना करवी जोईए ॥ २१ ॥

वि०—हवे नष्ट अने उद्दिष्टनी रचनाना कोठाओमा अंकने गणवानी रीत बतावे छे—

जेम पहेला नष्ट अने उद्दिष्टनी रचनामा पश्चानुपूर्वीथी अंतिम आदि पंक्तिओमा जे अंक पहेला रहेला हता, ते गतांकोमा गणवामा नहोता आव्या, तेम अहीं पण पहेला रहेला अंकोने

---

1 मुत्तु ८।

अथ नष्टानयनमाह—

पइपंति एगकोट्ठय-अंकग्गहणेण जेहिं जेहिं सिआ।
मूलइगंकजुएहिं नट्ठंको तेसु खिव अक्खे ॥ २३ ॥
अक्खट्ठाणसमाइं पंतीसु अ तासु नट्ठरूवाइं।
नेयाइं सुन्नकोट्ठयसंखासरिसाइं सेसासु ॥ २४ ॥

व्याख्या—इह प्रतिपङ्क्ति एकैक एव कोष्ठकाङ्को[1] ग्राह्यः। ततो यैर्यैः कोष्ठकाङ्कैः[2] परिवर्तसत्कैर्मूलपङ्क्तिसत्कैकयुतैर्नष्टाङ्को नष्टभङ्गसंख्या स्यात। तेपु तेपु कोष्ठकेष्वभिज्ञानार्थे हे शिष्य! त्वं अक्षान क्षिप-स्थापय ॥ अथ द्वितीयगाथार्थः कथ्यते–

छोडीने लघु–अंकोने आदिमां करीने उपरना कोठाथी गणतरी करवी जोईए। मतलब के, पश्चानुपूर्वीथी नव, आठ, सात, छ, पांच, चार वगेरे अंकोथी कोठाओने भरवा जोइए ॥ २१ ॥

श०—अथवा ज्येष्ठ अंकथी लईने अने मूकेला अंकोने छोडीने नीचेना कोठाथी अंतिमथी लईने पंक्तिओमां गणना करवी जोइए ॥ २२ ॥

वि०—मोटा मोटा अंकोथी लईने नीचेना कोठाथी गणतरी करवी जोईए, मतलव के, पूर्वानुपूर्वीथी एक, वे, त्रण, चार, अने पांच वगेरे अंकोथी कोठाओने भरवा जोईए, नष्ट वगेरे लावती वखते आ विपय स्पष्ट थई जशे ॥ २२ ॥

श०—प्रत्येक पंक्तिमां एक कोठाना अंकने ग्रहण करीने तेमां एक ऊमेरवाथी जे जे कोठाओना अंको तथा मूल पंक्तिना अंकोथी नष्टांक थई जाय ते कोठाओमां अक्षोने--कल्पितने मूको ॥ २३ ॥

नष्ट लाववानी विधि—

वि०—आ विधिमां प्रत्येक पंक्तिमां कोठाना एक एक अंकने ज लेवो जोईए, तेथी कोठाना परिवर्तांकमां रहेला जे जे अंकोनी साथे मूल पंक्तिना एकने जोडी देवाथी नष्टांक अर्थात नष्ट भांगानी संख्या थई जाय, ते ते कोठाओमां चिह्न माटे अक्षोने मूकवा जोईए ॥ २३ ॥

श०—ते पंक्तिओमां अक्षस्थाननी समान नष्टरूप जाणवुं जोईए, तथा वाकीनी पंक्तिओमां शून्य कोठानी संख्या प्रमाणे नष्टरूप जाणवुं जोईए ॥ २४ ॥

वि०—अक्षोथी युक्त जे कोठाओ छे, ते कोठाओनी संख्या प्रमाणे, एटले के, अक्षोथी युक्त कोठाओनी पहेली, वीजी, त्रीजी, चोथी अने पांचमी इत्यादि जे संख्याओ छे ते ज संख्या ते पंक्तिओमां नष्ट रूपोनी पण जाणवी। सारांश के, जे अक्षोथी युक्त कोठो छे ते ज नष्टरूप छे शेष पंक्तिओमां अर्थात् अक्षोथी रहित पंक्तिओमां शून्य कोठानी संख्यानी माफक नष्ट रूपोने लखवा जोईए।

---

1 कोष्ठाङ्कः A। 2 कोष्ठाङ्कैः A।

अक्षस्थानान्यक्षाक्रान्ता कोष्ठकास्तै समानि सङ्ख्यया तुल्यानि। कोऽर्थ [2] अक्षाक्रान्तकोष्ठकाना प्रथमो [1]द्वितीयस्तृतीयश्चतुर्थ पञ्चम इत्यादिरूपा या सङ्ख्या तासु पङ्क्तिषु नष्टरूपाणामपि सैव सङ्ख्या ज्ञेया। यावतिथोऽक्षाक्रान्त कोष्ठकस्तावतिथ नष्टरूपमित्यर्थ । शेषास्वक्षानाक्रान्तपङ्क्तिषु शून्यकोष्ठक-सङ्ख्यातुल्यानि नष्टरूपाणि लेख्यानि। उदाहरण यथा–त्रिंशत्तमो भङ्गो नष्ट । स कीदृश [2] इति केनापि पृष्टम्। तत पञ्चपदकोष्ठकयन्त्रके पञ्चमपङ्क्तिस्थ २४, तृतीयपङ्क्तिस्थ ४, द्वितीयपङ्क्तिस्थ १, अङ्कैर्जाता २९। मूलपङ्क्तिस्थ १ युतत्वे जाता [3]३० सा नष्टस्य भङ्गस्य सङ्ख्या। ततोऽभिज्ञानार्थमेतेषु कोष्ठकेष्वक्षा क्षिप्ता । तत पञ्चमपङ्क्तौ सर्वलघु पञ्चकमादिं कृत्वा स्थित पञ्चक एव च पश्चानुपूर्व्या पञ्चम-चतुर्थ इत्यादिगुणनेऽक्षाक्रान्तकोष्ठके स्थितश्चतुष्क । तत पञ्चमपङ्क्तौ नष्टस्थाने चतुष्को लेख्य । चतुर्थीपङ्क्ति-रक्षैर्नाऽऽक्रान्ताऽत सर्वलघु पञ्चकमादिं कृत्वा गणने शून्यकोष्ठके स्थित पञ्चक एव चतुर्थपङ्क्तौ नष्टस्थाने लेख्य । तथा तृतीयपङ्क्तौ पञ्चक-चतुष्कौ लघू अपि पूर्वं स्थापितत्वेन मुक्त्वा शेष त्रिकमेव लघुमादिं कृत्वा गणनेऽक्षाक्रान्तकोष्ठके स्थित एककोऽत स एव तृतीयपङ्क्तौ नष्टस्थाने स्थाप्य । तथा द्वितीयपङ्क्तौ प्राग्वत् पञ्चक-चतुष्को पूर्वं स्थितौ विमुच्य तल्लघु त्रिकमादिं कृत्वा गणनेऽक्षाक्रान्तस्थाने स्थितो द्विक स एव तत्र नष्टो लेख्य । एवमाद्यपङ्क्तावपि त्रिक लघुमादिं कृत्वा गुणनेऽक्षाक्रान्ते [7]कोष्ठके स्थितस्त्रिक

दाखला तरीके—त्रीसमो भागो नष्ट छे ते कयो छे?

पाच पदना कोठाना यत्रमा पचमी पक्तिमा २४ छे, त्रीजी पक्तिमा चार छे, बीजी पक्तिमा एक छे। आ बधाने जोडवाथी ओगणत्रीस थया। तथा मूल पक्तिना एकने जोडवाथी दस थया, अर्थात् आ नष्ट भागानी सख्या आवी, तेथी ओळखवा माटे आ कोठाओमा अक्षोने नाखो। पछी पांचमी पक्तिमा सर्व लघु पाचथी लईने पश्चानुपूर्वी वडे पाचमो, चोथो वगेरे गणता अक्षथी युक्त कोठामा चार रहेला छे तेथी पाचमी पक्तिमा नष्ट स्थानमा चारने मूकवो जोईए। चोथी पक्ति अक्षोथी युक्त नथी तेथी सर्व लघु पाचथी लईने गणतरी करता शून्य कोठामा रहेला पाचने ज चोथी पक्तिमा नष्ट स्थानमा लखवो जोईए। तथा त्रीजी पक्तिमा पाच अने चार जो के लघु छे तो पण पूर्वमा रहेला होवाथी तेमने छोडीने शेष त्रण लघुने आदि करीने गणतरी करवाथी अक्षथी युक्त कोठामा एक रहेलो तेथी तेने ज त्रीजी पक्तिमा नष्ट समजवो जोईए। तथा बीजी पक्तिमा पहेलानी माफक पहेला रहेला पाच अने चारने छोडीने लघु त्रणने आदिमा करीने गणतरी करवाथी अक्षथी युक्त स्थानमा बे रहेला छे, तेथी बीजी पक्तिमा बेने ज नष्ट स्थानमा लखवो जोईए। एवी ज रीते प्रथम पक्तिमा पण लघुत्रिकने आदिमा करीने गणतरी करता अक्षथी युक्त स्थानमा त्रण रहेला छे, तेथी प्रथम पक्तिमा त्रणने ज नष्ट स्थानमा समजवो जोईए। आवी रीते ३, २, १, ५, ४–आ त्रीसमो भागो थयो। आवी ज रीते ज्येष्ठ ज्येष्ठ अकने आदिमा करीने नीचेना कोठाओथी गणतरी करवाथी एवु ज नष्टनु स्वरूप चाली जाय छे। जेम जूओ—

---

1 द्वितीयचतुर्थ A। 2 °रूपाया स० A। 3 '३०' इति सङ्ख्याङ्क A प्रतौ नास्ति। 4 कृत्वा पश्चा° J। 5 °च्च लघु J। 6 गनने J। 7 'कोष्ठके' पद नास्ति J प्रतौ।

स एवाद्यपङ्क्तौ नष्टो ज्ञेयः—इति जातस्त्रिंशत्तमो भङ्गः ३, २, १, ४, ५ । एवं ज्येष्ठं ज्येष्ठमङ्कमादिं कृत्वाऽधस्तनकोष्ठकाद् गणनेऽपीदृशमेवेदं नष्टरूपमायाति । यथान्त्यपङ्क्तौ सर्वज्येष्ठमेककमादौ कृत्वाऽधस्तनकोष्ठकाद् गणनेऽक्षाक्रान्तस्थानेस्थितश्चतुष्कः, ततः स एव नष्टो लेख्यः । चतुर्थपङ्क्तौ पूर्वं पञ्चमपङ्क्तिस्थापितं चतुष्कं टालयित्वाऽधस्तनकोष्ठकात् सर्वज्येष्ठमेककमादिं कृत्वा गणनेऽक्षाक्रान्तत्वाभावाच्छून्यकोष्ठके स्थितः पञ्चक एव नष्टस्थाने लेख्यः । तृतीयपङ्क्तौ तथैव गणने अक्षाक्रान्तस्थाने स्थित एककोऽतः स एव तत्र नष्टो लेख्यः । द्वितीयपङ्क्तौ प्राग्वज्ज्येष्ठमप्येककं पूर्वस्थापितत्वात् टालयित्वा शेष ज्येष्ठं द्विकमादिं कृत्वा गणने अक्षाक्रान्तस्थाने स्थितो द्विक. स एव तत्र नष्टो लेख्यः । आद्यपङ्क्तौ सर्वज्येष्ठावेकक-द्विकौ पूर्वस्थापितत्वेन त्यक्त्वा ज्येष्ठत्रिकमादौ दत्त्वा गणनेऽक्षाक्रान्तस्थाने स्थितस्त्रिकस्ततः स एव नष्टो लेख्यः । ३, २, १, ५, ४ । ईदृशं त्रिंशत्तमं रूपं ज्ञेयम् । अनया रीत्या सर्वनष्टरूपाणि ज्ञेयानि ॥ २३-२४ ॥

अथोद्दिष्टके करणमाह—

उद्दिट्ठभंगअंकप्पमाणकोट्ठेसु संति जे अंका ।
उद्दिट्ठभंगसंखा मिलिएहिं तेहिं कायव्वा ॥ २५ ॥

व्याख्या—उद्दिष्टो यो भङ्गस्तस्य ये अङ्काः नमस्कारपदाभिज्ञानरूपा एक-द्वि-त्रि-चतुरादिकास्तत्प्रमाणास्तत्सख्यास्तावतिथा इत्यर्थः । ये कोष्ठास्तेषु ये अङ्काः परिवर्त्ताङ्काः सन्ति तैः सर्वैरेकत्रमीलितै-

---

अन्त्य पंक्तिमां सर्वज्येष्ठ एकने आदिमां करीने नीचेना कोठाथी गणतरी करतां अक्षथी युक्त स्थानमां चार स्थित छे, तेथी अक्षाक्रान्त स्थानमां चारने ज नष्ट स्थानमां मूकवो जोईए। चोथी पंक्तिमां पहेलां पांचमी पंक्तिमां मूकेला चारने छोडीने नीचेना कोठाथी सर्व ज्येष्ठ एकने आदिमां करीने गणतरी करवाथी अक्षथी युक्त न होवाथी शून्य कोठामां रहेला पांचने ज नष्ट स्थानमां लखवो जोईए। त्रीजी पंक्तिमां ते ज प्रमाणे गणतरी करवाथी अक्षथी युक्त स्थानमां एक रहेलो छे तेथी तेने (१) ज नष्ट स्थानमां लखवो जोइए। बीजी पंक्तिमां पहेलांनी माफक पहेला मूकेला होवाने लीधे ज्येष्ठ पण एकने छोडीने शेष ज्येष्ठ वेने आदिमां करीने गणतां अक्षथी युक्त स्थानमां वे रहेला छे तेथी तेने (२) ज अक्षथी युक्त स्थानमां लखवो जोइए, प्रथम पंक्तिमां पहेला मूकेला होवाथी सर्व ज्येष्ठ एक अने वेने छोडीने ज्येष्ट त्रिकथी लइने गणतरी करतां अक्षथी युक्त स्थानमां त्रण छे तेथी तेने अहीं प्रथम पंक्तिमां लखवो जोईए जेथी ३२१५४—आवुं त्रीसमुं रूप थयुं ॥ २४॥

श०—उद्दिष्ट भांगाना अंको प्रमाणेना कोठाओमां जे आंकडाओ रहेला छे, ते वधाने मेळ्वीने उद्दिष्टभांगानी संख्या वनाववी जोइए ॥ २५ ॥

वि०—हवे उद्दिष्टनी विधि काठाओनी रीते वतावे छेः—

उद्दिष्ट (वतावेलो) जे भांगो छे, तेना जे नमस्कारपद चिह्नरूप एक, वे, त्रण, चार वगेरे अंको छे, तेटला जे काठोओ छे, तेमां जे परिवर्तांक छे, ते वधाओनो सरवाळो करवाथी उद्दिष्ट-भंगनी संख्या जणाई आवे छे।

---

1 'स' पदं नास्ति J प्रतौ ।

उद्दिष्टभङ्गस्य सख्या स्यात् । उदाहरण यथा—३, २, ४, १, ५ । अथ कतिथो भङ्ग इति पृष्टे केनचित् । अत्र पञ्चमपङ्क्तौ दृष्ट पञ्चक सर्वलघु पञ्चकमादौ दत्त्वोपरितनकोष्ठकाद् गणने शून्ये कोष्ठे स्थित पञ्चकस्ततोऽत्र न किञ्चिल्लभ्यते । चतुर्थपङ्क्तौ दृष्ट एकक पूर्वपञ्चमपङ्क्तौ स्थितत्वेन पञ्चक लघु क्रमोपगतमपि त्यक्त्वा चतुष्क लघुमादौ दत्त्वा गणने एकाक्रान्तकोष्ठकस्थिता लब्धा १८, तृतीयपङ्क्तौ दृष्टश्चतुष्क प्राग्वत् पञ्चमपङ्क्तौ स्थितत्वेन पञ्चक त्यक्त्वा लघु क्रमागतमपि चतुष्काक्रान्तकोष्ठकस्थं लब्धं शून्य, द्वितीयपङ्क्तौ दृष्टो द्विक, तत प्रोक्तरीत्या पञ्चक चतुष्कौ लघू अपि त्यक्त्वा लघु त्रिकमादौ दत्त्वा गणने द्विकाक्रान्तकोष्ठे लब्ध एकक । आद्यपङ्क्तौ दृष्टस्त्रिकस्तत प्राग्वत् पञ्चक चतुष्कौ मुक्त्वा त्रिकमादौ दत्त्वा गणने त्रिकाक्रान्तकोष्ठे लब्ध एकक । सर्वलब्धाङ्कमीलने जाता २०, ततोऽय विंशतितमो भङ्ग ।

ज्येष्ठ ज्येष्ठमङ्कमादौ कृत्वाऽधस्तनकोष्ठकाद् गणनेऽपीयमेव सख्या । यथा—पञ्चमपङ्क्तौ दृष्ट पञ्चकस्तत सर्वज्येष्ठमेककमादौ दत्त्वाऽधस्तनकोष्ठकाद् गणने पञ्चकाक्रान्तकोष्ठे लब्ध शून्यम् ० । चतुर्थपङ्क्तौ दृष्ट एकक, त ज्येष्ठत्वादादौ दत्त्वाऽधस्तनकोष्ठकाद् गणने लब्धा एककाक्रान्तकोष्ठेऽष्टादश । तृतीयपङ्क्तौ दृष्टश्चतुष्क सर्वज्येष्ठमप्येकक पूर्वस्थितत्वेन मुक्त्वा ज्येष्ठ द्विकमादौ दत्त्वाधस्तनकोष्ठकाद

दाखला तरीके—३२४१५ आ कयो भग छे? एम पूछता उत्तरमा अहीं पाचमी पक्तिमा पाच देखाय छे, तेथी सर्व लघु पाचने आदिमा करीने उपरना कोठाथी गणवाथी शून्य कोठामा पाच रहेला छे, माटे अहीं लब्धाक कोई नथी। चोथी पक्तिमा एक छे, पहेला पाचमी पक्तिमा मूकेलो होवाने कारणे क्रमागत पण लघु पचकने छोडीने लघु चारने आदिमा करीने गणतरी करवाथी एकथी युक्त कोठामा अढार लब्धाक आव्या । त्रीजी पक्तिमा चार छे, अहीं पण पहेलानी माफक पाचने छोडी ते लघु चारने आदिमा करीने गणतरी करवाथी चारथी युक्त कोठामा रहेलो शून्य लब्धाक आव्यो। बीजी पक्तिमा बे छे तेथी प्रथम करेली विधि प्रमाणे लघु एवा पाच अने चारने छोडीने लघु त्रणने आदिमा करीने गणतरी करता बेथी युक्त कोठामा लब्धाक एक आव्यो। प्रथम पक्तिमा त्रण देखाय छे, तेथी पूर्वानुसार पाच अने चारने छोडीने लघु त्रिकने आदिमा करीने गणतरी करता त्रणथी युक्त कोठामा लब्धाक एक आव्यो । बधा लब्धाकोने मेळववाथी वीस थया, तेथी आ वीसमो भागो छे।

ज्येष्ठ ज्येष्ठ अकने आदिमा करीने नीचेना कोठाथी गणता पण आ ज सख्या आवे छे, जेम के—

पाचमी पक्तिमा पाच छे, तेथी सर्व ज्येष्ठ एकने आदिमा करीने नीचेना कोठाथी गणतरी करता पाचथी युक्त कोठामा शून्य लब्धाक आव्यो। चोथी पक्तिमा एक देखाय छे, ज्येष्ठ होवाने लीधे तेने आदिमा करीने नीचेना कोष्ठकथी गणतरी करता एकथी युक्त कोठामा अढार लब्धाक थया। त्रीजी पक्तिमा चार देखाय छे, तेथी पूर्वस्थित होवाने लीधे सर्व ज्येष्ठ पण एकने छोडीने ज्येष्ठ द्विकने आदिमा करीने नीचेना कोठाथी गणतरी करता चारथी युक्त कोठामा शून्य लब्धाक

---

1 क्रमागत° J। 2 प्राग्वत् पचक त्यक्त्वा J। 3 'लब्धा' इति पाठ A प्रतौ नास्ति। मिलन J
4 'उपेते' पद नास्ति A प्रतौ 5 दत्त्वा J प्रतौ। 6 'अपि' पद नास्ति J प्रतौ।

जं छम्मासियवरिसियतवेण तिव्वेण झिज्झए पावं ।
नमुक्कारअणणुपून्वीगुणणेण तयं खणद्धेण ॥ २७ ॥
जो गुणइ अणणुपुव्वीभंगे सयलेवि सावहाणमणो ।
दढरोसवेरिएहिं बद्धो वि स मुच्चए सिग्घं ॥ २८ ॥
एएहिं अभिमंतियवासेणं सिरसि खित्तमित्तेणं ।
साइणि-भूअप्पमुहा नासंति खणेण सव्वगहा ॥ २९ ॥
अन्ने वि य उवसग्गा रायाइभयाइँ दुट्ठरोया य ।
नवपयअणाणुपुव्वीगुणणेणं जंति उवसामं ॥ ३० ॥
तवगच्छमंडणाणं सीसो सिरिसोमसुंदरगुरूणं ।
परमपयसंपयत्थी जंपइ नवपयथयं एयं ॥ ३१ ॥
पंचनमुक्कारथयं एयं सेयंकरं तिसंझमवि ।
जो झाएइ लहइ सो जिणकित्तियमहिमसिद्धिसुहं ॥ ३२ ॥

व्याख्या—एताः सप्तापि स्पष्टार्थाः ॥

एष श्रीपञ्चपरमेष्ठिनमस्कारमहामन्त्रः सकलसमीहितार्थप्रापणकल्पद्रुमाभ्यधिकमहिमा शान्तिक-पौष्टिकाद्यष्टकर्मकृद् ऐहिक-पारलौकिकसकलसमीहितार्थसिद्धये यथाश्रीगुर्वाम्नायं ध्यातव्यः ॥२६–३२॥

श्रीमत्तपागणनभस्तरणेर्विनेयः, श्रीसोमसुन्दरगुरोर्जिनकीर्त्तिसूरिः ।
स्वोपज्ञपञ्चपरमेष्ठिमहास्तवस्य, वृत्तिं व्यधाज्जलधि-नन्द-मनुप्रमाब्दे (१४९४) ॥ १ ॥

इति श्रीजिनकीर्त्तिसूरिविरचिता नमस्कारस्तववृत्तिः ।

श्लो०—जे पाप छ महिनाना के वर्षभरना उग्र तपथी नाश पामे छे, ते पाप नमस्कार-मंत्रथी अनानुपूर्वीने गणवाथी अडधी क्षणमां विलीन थाय छे ॥ २७ ॥

श्लो०—जे मनुष्य एकाग्रचित्ते अनानुपूर्वीना बधाय भांगाओने गणे छे, ते अतिरोषे भरायेला दुश्मनोथी बंधायेलो होवा छतां पण शीघ्र ज मुक्तदशाने पामे छे ॥ २८ ॥

श्लो०—आनाथी अभिमंत्रित वासक्षेप मस्तक ऊपर नाखवा मात्रथी शाकिनी–भूत वगेरे तथा बधा ग्रहो क्षणभरमां नष्ट थई जाय छे ॥ २९ ॥

श्लो०—नवपदोनी अनानुपूर्वीने गणवाथी बीजा पण उपद्रवो, राज वगेरेना भय तथा दुष्ट रोगो शान्त थई जाय छे ॥ ३० ॥

तपगच्छना आभूषण समान श्रीसोमसुंदर गुरुना शिष्य अभिलाषी, परम–पद (मोक्ष)रूप सम्पत्तिना आ नव–पद–स्तोत्र (पंच–परमेष्ठि–नमस्कार–स्तोत्र)ने कहे छे ॥ ३१ ॥

सुखकर एवा पंचनमस्कार–स्तोत्रनुं जे त्रणे काळे ध्यान करे छे ते, जेनी महिमा स्वयं जिनेश्वरोए वर्णवी छे एवा मोक्ष–सुखने पामे छे । (आ श्लोकमां "जिनकीर्ति") ए प्रमाणे कर्ताए पोतानुं नाम पण सूचित कर्युं छे ॥ ३२ ॥

परिचय

आ स्तोत्रनी अनेक प्रतिओ हस्तलिखित जैन ज्ञानभंडारोमांथी मळी आवे छे। जैनानंद पुस्तकालय–सूरत, डेला जैन उपाश्रय ज्ञानभंडार–अमदावाद, वर्धमान जैन आगममंदिर–पालीताणा, शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढी हस्तक–शेठ अंबालाल चूनीलाल ज्ञानभंडार–पालीताणा, श्री विजयमोहनसूरीश्वरजी जैन ज्ञानभंडार–पालीताणा, भांडारकर रीसर्च इन्स्टीट्यूट–पूना, पूज्य आगमप्रभाकर मुनिराज श्री पुण्यविजयजी महाराजश्रीनो संग्रह तेमज श्री जिनविजयजी मुनिनो संग्रह वगेरे भंडारोमांथी एक करतां वधु प्रतिओ, जेनी संख्या २४–२५ जेटली थाय छे, ते प्राप्त करी हती। अहीं तेमांनी चार प्रतिओने सामे राखीने मूळपाठ तेमज पाठांतरो लेवामां आव्या छे।

- J संज्ञावाळी प्रति ते श्री जिनविजयजी मुनिए संपादित करी छपावेल स्तोत्रना फॉर्म्स।
- V संज्ञाथी श्री जिनविजयजी मुनिए जेनी उपरथी पाठांतरो लीधा ते प्रति।
- A संज्ञाथी जैनानन्द पुस्तकालय–सूरतना ज्ञानभंडारनी नं. २४०७ नी ७ पत्रोनी प्रति, जेनी फोटोस्टेटिक कॉपी जैन साहित्य विकास मंडळना संग्रहमां छे, ते प्रतिने आदर्श तरीके लेवामां आवी छे।
- P संज्ञाथी जैनानंद पुस्तकालय–सूरतनी नं. २३९४ नी प्रतिमांथी पाठांतरो लेवामां आव्या छे।

आ स्तोत्र टीका अने हिंदी अनुवाद साथे 'मंत्रराजगुणमहोदधि' नामे ले. पं. श्री जयदयाळ शर्मा, बिकानेरथी प्रसिद्ध थयुं छे।

आ स्तोत्रनी स्वोपज्ञव्याख्या साथे रचना करनार श्री जिनकीर्तिसूरि छे। तेमणे मूळ स्तोत्रनी ३१ मी गाथामां पोताना गुरु श्री सोमसुंदरसूरिनो उल्लेख कर्यो छे अने टीकामां आ स्तोत्रनी रचनानो संवत् १४९४ नोंध्यो छे।

गुरु श्री सोमसुंदरसूरिए तेमने देवकुलपाटमां आचार्यपदवी आपी हती। ए पदवीनो महोत्सव देवकुलपाटकना लाखा राजा (वि. सं. १४३९–१४७५) ना मान्य श्रेष्ठी वीशलना पुत्र चंपक श्रेष्ठीए कर्यो हतो। श्री जिनकीर्तिसूरिए गिरनार उपर वेदरनगरना पातशाहना मान्य श्रेष्ठी पूर्णचंद्र कोठारीए बंधावेला जिनमंदिरनी प्रतिष्ठा करी हती।

श्री जिनकीर्तिसूरिए रचेला ग्रंथोमां नीचे मुजबना ग्रंथो उपलब्ध थाय छे–(१) नमस्कारस्तव–स्वोपज्ञ व्याख्यासहित, (२) उत्तमकुमारचरित, (३) श्रीपालगोपालकथा, (४) चंपकश्रेष्ठिकथा, (५) पंचजिनस्तवन, (६) धन्यकुमारचरित–दानकल्पद्रुम, सं. १४९८, (७) श्राद्धगुणसंग्रह।

आ स्तोत्र गणित विषयनुं होवाथी गाथाओना शब्दार्थ आपवा मात्रथी वाचकोने समजवामां मुश्केली पडे एम हतुं तेथी तेनुं सविस्तर विवेचन अहीं आपवामां आव्युं छे।

'नमस्कारव्याख्यानटीका'मां जणाव्युं छे के, पंच परमेष्ठीना जाप पूर्वानुपूर्वी, अनानुपूर्वी अने पश्चानुपूर्वीपूर्वक गणवाथी चूडामणिशास्त्र अथवा निमित्तथी सिद्धि प्राप्त थाय छे। आ दृष्टिए आ स्तोत्रनुं महत्त्व विशेष प्रकारे छे।

[२४]

परमेट्ठिथयं ।

ओमिति नमो भगवओ अरिहंत-सिद्धायरिय-उवज्झाय ।
वरसव्वसाहुमुणि-संघ-धम्मतित्थप्पवयणस्स ॥ १ ॥
सप्पणव-नमो तह भगवईइ सुयदेवयाइ सुहयाए ।
सिवसंतिदेवयाणं सिवपवयणदेवयाणं च ॥ २ ॥
इंदागणि-जम-नेरइय-वरुण-वाउ-कुबेर-ईसाणं ।
बंभो नागु त्ति दसण्हमवि य सुदिसाण पालाणं ॥ ३ ॥
सोम-यम-वरुण-वेसमण-वासवाणं तहेव पंचण्हं ।
तह लोगपालयाणं सूराइगहाण य नवण्हं ॥ ४ ॥
साहंतस्स समक्खं मज्झमिणं चेव धम्मणुट्ठाणं ।
सिद्धिमविग्घं गच्छउ जिणाइनवकारओ धणियं ॥ ५ ॥

अनुवाद

ॐ पूज्य अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्व उत्तम साधुओ, मुनिओ, संघ, धर्म, तीर्थ अने प्रवचनने नमस्कार थाओ ॥ १ ॥

वळी, सुखने आपनारी भगवती श्रुतदेवताने, शिव अने शांति आपनार (शांति) देवताओने, तेमज शिव (मंगल) प्रवचन (अधिष्ठायक) देवताओने प्रणव—ॐ पूर्वक नमस्कार थाओ ॥२॥

वळी, पोतानी दिशानुं पालन करनारा इंद्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर, ईशान, ब्रह्म अने नाग—ए दशे दिक्पालोने ॐ पूर्वक नमस्कार थाओ ॥ ३ ॥

वळी, सोम, यम, वरुण, वैश्रवण (कुबेर) अने वासव—ए पांचने, लोकपाल देवोने तथा सूर्य आदि नवग्रहो (सूर्य, चंद्र, मंगळ, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु अने केतु) ने पण ॐपूर्वक नमस्कार थाओ ॥ ४ ॥

जिन आदि (ने करेला) नमस्कारना प्रभावथी, उपर्युक्त बधानी समक्ष थतुं आ मारुं धर्मानुष्ठान निर्विघ्नपणे अत्यंत (उत्कृष्ट) सिद्धिने पामो ॥ ५ ॥

परिचय

आ 'परमेष्ठिस्तव' 'प्रतिष्ठाविधि' मांथी मळ्युं छे । प्रतिष्ठाविधि, दीक्षाविधि वगेरे धर्मानुष्ठानो करतां विघ्नोना निवारण अर्थे आ स्तोत्रनो पाठ करवामां आवे छे ।

आ स्तोत्रमां मंत्र—विद्या गूंथेली छे । आ स्तोत्र पछी आपवामां आवेला **'गणिविज्जा'** स्तोत्रनी शरुआतमां जे 'गणिविद्या' आपेली छे ते आ स्तोत्रनो विद्योद्धार छे । एटले ए विद्यानो अहीं अलग पाठ आप्यो नथी ।

आ स्तोत्रनो साधनविधि अने महिमा 'गणिविद्या' स्तोत्रथी समजी लेवो । स्तोत्रना कर्ता विशे कंई निर्देश मळ्यो नथी ।

[२५]

सिरिगणिविज्जाथुत्त ॥

॥श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

अथ गणिविज्जा—"ॐ[1] नमो भयवओ अरिहंत-सिद्ध-आयरिय-उवज्झाय-सव्वसाहु-धम्म तित्थपवयणस्स, ॐ नमो भगवईए सुयदेवयाए संतिदेवयाए सव्वपवयण-देवयाणं दसण्हं दिसापालाणं पचण्हं लोगपालाणं च[2] (? ठ ठ) स्वाहा॥"

एयाए विज्जाए हिअयनिहित्ताए धम्मकज्जाइं ।
जो आरभेइ पुरिसो स एत्र पयमुत्तमं लहई ॥ १ ॥
जेसिमिमो उवएसो गुरूहिं संकेइओ हि उवएसा ।
ते पुज्जा भुवणस्स वि भवंति अइरेण कालेण ॥ २ ॥
एयम्मि सिद्धभुवणत्थपरममंगल्लपवरकल्लाणे ।
पंचपरमेट्ठिकित्तणमंतक्खरबीअगब्भम्मि ॥ ३ ॥
अरिहंतपवयणाधारसव्वजगजीवहिअकरुवएसे ।
कहियव्वे सोयव्वे धन्नाण मई परिप्फुरई ॥ ४ ॥
इह-परलोगस्स कए सविसेसत्थं गुरूवएसेण ।
जो नामं जवइ पुरिसो सो लहई सव्वकज्जाइं ॥ ५ ॥

अनुवाद

गणिविद्या—"ॐ[1] नमो भयवओ अरिहंत-सिद्ध-आयरिय उवज्झाय-सव्वसाहु-धम्मतित्थपवयणस्स, ॐ नमो भगवईए सुयदेवयाए संतिदेवयाए सव्वपवयणदेवयाणं दसण्हं दिसापालाणं पंचण्हं लोगपालाणं चं (? ठ ठ) स्वाहा ॥"

आ (गणि) विद्याने हृदयमां स्थापन करवापूर्वक जे पुरुष धर्मकार्योनो आरंभ करे छे, ते खरेखर उत्तमपदने प्राप्त करे छे ॥ १ ॥

श्री जिनवचनमांथी गुरुए जेओने आ (विद्यानो) उपदेश आप्यो छे तेओ थोडा ज समयमां जगतने पूज्य थाय छे ॥ २ ॥

सिद्ध छे भुवनना अर्थो जेमां, परम मंगल अने परम कल्याणरूप, पंचपरमेष्ठिकीर्तन, मंत्राक्षरो अने मंत्रबीजथी गर्भित (एवी आ विद्याने बतावनार) श्रीअरिहंत परमात्माना शासनना आधारभूत अने जगतना सर्व जीवोने हितकर एवा आ उपदेशने विषे कहेवामां तेमज सांभळवामां धन्य आत्माओनी मति स्फुरायमान थाय छे। (कथन अने श्रवण धन्य आत्माओने ज प्राप्त थाय छे ।) ॥ ३–४ ॥

गुरुना उपदेशथी आ लोक अने परलोकने माटे जे कोइ पुरुष आ विद्याने विशेष अर्थ सहित (अर्थज्ञानपूर्वक) जपे छे ते सर्व कार्योने प्राप्त करे छे—सिद्ध करे छे ॥ ५ ॥

---

१ ॐ ह्रीं णमो २ लोगपालाणं ॐ ह्रीं अरिहंत देवं नमः —आ १ अने २ पाठांतर महाप्राभाविक नवस्मरण पृ ७८ मां आपेल छे ३ कित्तण-अर्हां। देवनागसुवण्ण०' इत्यादिनी जेम अनुस्वार लाक्षणिक छे।

एयं तं किं पि परं गूढत्थं परमकारणं जेण ।
सिज्झंति सयलहियइच्छियाइं विन्नायमित्तेण ॥ ६ ॥
एयस्स कए लोओ गंधसहस्साणुवालणे मूढो ।
अणुदियह पराय(इ)ज्जइ उवएसब्भासपरिहीणो ॥ ७ ॥
सो उवएसब्भासो अणाइसिद्धो जिणिंदसमयम्मि ।
फुरइ सुसाहु-सावयजणस्स नन्नस्स भुवणित्थ ॥ ८ ॥
जह केवलिपन्नत्तं परलोगहियं तहा कयत्थेण ।
तं नज्जइ उवएसो तत्थ य कीरिज्जइब्भासो ॥ ९ ॥
धम्मदिसादेसविऊ पंचपरमिट्ठिसंथवाहिगमो ।
तिहुयणपुन्नपसत्थो समत्थ(त्त)सुत्तत्थपरमत्थो ॥ १० ॥
अरिहंताण य वयणे ठियकप्पमणुत्तरे महाभागे ।
सुस(ससु)रासुरजगमहिए ठाऊण दढं पयत्तेणं ॥ ११ ॥
जो अब्भसिज्जंतं पुण तग्गयमणसो जहुत्तविहिणा उ ।
छम्मासब्भंतरओ सो पावइ विउलरिद्धीओ ॥ १२ ॥

आ ते कांइ पण परम गूढार्थ छे अथवा परम कारण छे, के जेने जाणवामात्रथी सकल मनोवांछितोनी सिद्धि थाय छे ॥ ६ ॥

आ (मनोवांछित)ने पामवा माटे मूढ लोको हजारो औषधिओनुं अनुपालन (संमिश्रणादि रासायणिक प्रक्रियाओ) करे छे (बीजो अर्थः–हजारो ग्रंथोनुं परिशीलन करे छे); छतां उपदेश अने अभ्यासथी रहित एवा ते प्रतिदिवस पराजित थाय छे–खेद पामे छे ॥ ७ ॥

ते उपदेश अने अभ्यास श्रीजिनशासनमां अनादि–सिद्ध छे, सुविहित साधुओ अने श्रावकजनोने ते स्फुरे छे, आ जगतमां अन्य कोईने ते स्फुरायमान थतो नथी ॥ ८ ॥

परलोकने विषे हितकर एवा केवलिप्रज्ञप्त तत्त्वने जेवी रीते कृतार्थ आत्मा जाणे छे, तेवी रीते कृतार्थ आत्मा वडे ज आ उपदेश जाणी शकाय छे अने तेमां अभ्यास (प्रयत्न) करी शकाय छे ॥ ९ ॥

धर्म, दिशा अने देशनो जाणकार, पांच परमेष्ठिना संस्तवना बोधवाळो, त्रण भुवनमां पुण्य वडे प्रशस्त अने समस्त सूत्रार्थना परमार्थने पामेलो एवो जे महाभाग्यशाली पुरुष, सुर तथा असुरो सहित एवा जगत वडे पूजित अने अनुत्तर एवा श्रीअरिहंत परमात्माना वचनमां रहेला कल्प (आम्नाय)मां प्रयत्न वडे पोताना आत्माने दृढपणे स्थापीने यथोक्त विधि वडे तद्गत मनवाळो (थईने) अभ्यास करे ते छ मासनी अंदर विपुल ऋद्धिओने पामे छे ॥ १०-११-१२ ॥

उज्झियपावपसंगो धम्मम्मि कयागमो जिअकसाओ ।
कम्मकलंकविमुक्को खणे खणे होइ विमलप्पा ॥ १३ ॥
जइ तब्भवे न सिज्झइ उत्तमदेवत्तण पि सो लहइ ।
दट्ठूण सुकुलजम्मं जिणसासणबोहिसजुत्त ॥ १४ ॥
हिय[इ]च्छियाण लोए सामी सो होइ सव्वसुक्खाण ।
दारिद्दवाहिजोग सुविणे वि न पिच्छए दुक्ख ॥ १५ ॥
उट्ठाइ न पडिवक्खो सत्तुब्भावट्ठिओ कहवि होइ (कोइ) ।
सो तक्खण विलिज्जइ सूरालोएण तुहिणु व्व ॥ १६ ॥
कलि-कलह-वेमणस्सं अब्भक्खाण च सोगसंताव ।
न सुणेइ नेव पिच्छइ सव्वत्थ जसो लहइ किर्त्ति ॥ १७ ॥
ए उवएसु कत्ता सिरिमहापुरिससभव जम्म ।
तिहुअणसिसा(ला)हणिज्ज पाएण लहंति किं बहुणा ? ॥ १८ ॥
दव्वत्थओ अ भावत्थओ य इत्तो पवत्तए लोए ।
विहिणेय भयमाणा भविआ सिज्झंति बुज्झंति ॥ १९ ॥
नायव्वायरियव्वे परूवियव्वे य जेसि न विसाओ ।
इत्थ जहोवइट्ठे त एव आराहगा भणिया ॥ २० ॥

जेणे पाप प्रसगनो त्याग कर्यो छे, जेणे धर्ममा ज्ञानपूर्वक प्रयत्न कर्यो छे, जेणे कषायोने जीत्या छे, जे कर्मकलकथी विमुक्त छे अने जेनो आत्मा क्षणे क्षणे निर्मल थई रह्यो छे, एवो ते जो तद्भवमा मोक्ष न पामे तो उत्तम देवपणु प्राप्त करे छे, (ने पछी) श्री जिनशासननी (मा कहेल) बोधियी युक्त एवा (सारा कुलमा) जन्मने पामीने लोकमा मनोवाछित सर्व सुखोनो स्वामी थाय छे, दारिद्र्य अने व्याधिसहित एवा दु खने ते स्वप्नमा पण जोतो नथी, शत्रुभावे रहेलो कोई पण तेनो विरोधी उत्पन्न थतो नथी, अथवा कदाच कोई (पूर्वनो) होय तो ते जेम सूर्यना तापथी हिम गळी जाय तेम (ते विरोधी) गळी जाय छे–नाश पामे छे ॥ १३–१४–१५–१६ ॥

कलि-कलह-वैमनस्य-अभ्याख्यान-शोक अने सताप तेना साभळवामा के जोवामा आवता नथी, ते सर्वत्र यश अने कीर्तिने मेळवे छे ॥ १७ ॥

वधु शु कहेवु ?– आ उपदेश प्रमाणे करनार श्रीमहापुरुष (तीर्थंकर, गणधरादि)पणानु कारण अने त्रणे भुवनमा प्रशसनीय एवा जन्मने प्राप्त करे छे ॥ १८ ॥

आनाथी (उपदेशथी) जगतमा द्रव्यस्तव अने भावस्तवनी प्रवृत्ति थई छे, आने विधि-पूर्वक भजता भव्यो सिद्ध थाय छे, बुद्ध थाय छे ॥ १९ ॥

जेओने यथोपदिष्ट (पूर्वोक्त अर्थने) विषे जाणवामा, आचरवामा अने प्ररूपवामा विषाद-खेद थतो नथी तेओने ज आराधक कह्या छे ॥ २० ॥

नाऊण आयरिज्जइ आयरमाणो य जं परूवेइ ।
तं होइ जणादेयं तम्हा तियगस्स वि कमेण ॥ २१ ॥
सिक्खा जहोवइट्ठा पंडियपुरिसेण होइ घेतव्वा ।
सारसमुच्चयठिइ कप्पवरियचिंताहिगमणेण ॥ २२ ॥
तं मूलुत्तरगुणचरणकरणसम(म्म)त्तनाणसुद्धीए ।
पवरतरसुक्खपुरं दुल्लहलंभं भवारन्ने ॥ २३ ॥
एसो हु धम्मतित्थो सासयसुक्खाभिलासजीवाणं ।
उप्पन्नकेवलेहिं उवइट्ठो जिणवरिंदेहिं ॥ २४ ॥
एवं (नं) भइऊण नरा अणाइकालप्पवाहरूवेणं ।
बहवे सिद्धा बुद्धा मुत्ता पत्ता परं ठाणं ॥ २५ ॥
सयलसमीहियकरणीक्कचित्तचिंतामणिं नमंसेह ।
पंचपरमिट्ठिरूवं कम्मक्खयकारणं इण्हिं ॥ २६ ॥
काऊण नमोक्कारं भूअ-भविस्साण वट्टमाणाणं ।
भरहेरवय-विदेहे सासयलोए ठिअजिणाणं ॥ २७ ॥
"ॐ नमोत्थु भयवओ जइ-गिहधम्मस्स चउविगप्पस्स ।
सम्मदंसणमूलस्स धम्मतित्थस्स य तहेव ॥ २८ ॥

तेथी जाणीने आचराय अने आचरण करतो जे प्ररूपे ते लोकोने आदेय थाय छे; ते त्रिकना (ज्ञान-आचार-प्ररूपणाना) क्रमे ज लोकने माटे आदेय थाय छे ॥ २१ ॥

पंडित पुरुषे सारसमुच्चय अने स्थिति कल्प विषे(?) चिंतनपूर्वकना बोध वडे, यथोपदिष्ट शिक्षा ग्रहण करवी जोईए ॥ २२ ॥

मूलोत्तर गुणरूप चरण, करण, सम्यक्त्व (सम्यग्दर्शन) अने ज्ञाननी शुद्धिथी सहित एवी उपर्युक्त शिक्षा भवारण्यमां दुष्प्राप्य छे अने श्रेष्ठ प्रकारना सुखोनुं नगर (स्थान) छे ॥ २३ ॥

जेमने केवलज्ञान उत्पन्न थयुं छे एवा जिनेंद्रोए शाश्वत सुखना अभिलाषी आत्माओने माटे आ धर्मतीर्थ (उपदेश) कह्युं छे ॥ २४ ॥

आ धर्मतीर्थने सेवीने घणा मनुष्यो अनादिकालथी प्रवाहरूपे सिद्ध थया, बुद्ध थया, मुक्त थया अने परमस्थानने पाम्या ॥ २५ ॥

(हवे) सकल समीहितने पूर्ण करवामां अद्वितीय विलक्षण चिंतामणिरूप अने कर्मक्षयना कारणभूत एवा पंचपरमेष्ठिस्वरूपने तमे नमन करो ॥ २६ ॥

(ते आ रीते—)

भूत-भविष्य अने वर्तमान कालना, भरत–ऐरवत अने विदेह क्षेत्रना तेमज *शाश्वत लोकमां रहेला जिनोने नमस्कार करीने (नीचे मुजब मन्त्रोच्चारण करवुं) ॥ २७ ॥

"ॐ नमोत्थु भयवओ जइ–गिहधम्मस्स चउविगप्पस्स ।
सम्मदंसणमूलस्स धम्मतित्थस्स य तहेव ॥ २८ ॥

---

* देवलोकादिमा रहेली शाश्वत जिनप्रतिमाओने नमस्कार करीने–

"ॐ नमोत्थु भयवओ सव्वस्स वि पवयणस्स जणस्स य।
सुयसतीदेवयाए पवयणदेवाण सव्वेसिं ॥ २९ ॥
"ॐ नमोत्थु भयवओ इदाइदिसाहिवजुहुत्तनामाण।
धणयाइवासवताण लोगपालाण पचण्ह ॥ ३० ॥
"ॐ नमोत्थु भयवओ महइमाहवीरवद्धमाणसामिस्स।
भवजलहितारणसह तित्थमिण देसिय जेण ॥ ३१ ॥"
केसरसचय चउ-अट्ठपत्त-सोलसदल तिपागार।
गणिविज्जापढमपय तत्थ समोसरणविन्नासो ॥ ३२ ॥
जो आराहिउमिच्छे देव धम्मं च तत्तचिंताए।
तस्सेमो उवएसो सम्मत्तणुजाइणे सिट्ठो ॥ ३३ ॥
कयकिच्चो वि नमसइ तित्थयरो केवले समुप्पण्णे।
जेणे(स)य भओ इत्तो परम सरण जए नत्थि ॥ ३४ ॥

"ॐ नमोत्थु भयवओ सव्वस्स वि पवयणस्स जणस्स य।
सुयसतीदेवयाए पवयणदेवाण सव्वेसिं ॥ २९ ॥
"ॐ नमोत्थु भयवओ इदाइदिसाहिवजुहुत्तनामाण।
धणयाइवासवताण लोगपालाण पचण्ह ॥ ३० ॥
"ॐ नमोत्थु भयवओ महइमहावीरवद्धमाणसामिस्स।
भवजलहितारणमह तित्थमिण देसिय जेण ॥ ३१ ॥"

[ऊपरनी मन्त्राक्षर गर्भित गाथाओमा चार प्रकारनो धर्म, धर्मतीर्थ, प्रवचन, श्रुतदेवता, शातिदेवता, प्रवचनदेवता, इन्द्रादि दिक्पालो, लोकपालो अने आ धर्मतीर्थना उपदेशक श्रीवर्धमान-स्वामीने नमस्कार छे।]

वच्चे केसराना समूह युक्त (कर्णिका सहित) पछी अनुक्रमे चार-आठ अने सोळ पत्र युक्त, त्रण प्राकारवाळु कमल चितववु, तेमा (वच्चे) गणिविद्याना प्रथमपद अने समवसरणनी स्थापना करवी ॥ ३२ ॥

जे सम्यक्त्वनो अनुयायी (सम्यक्त्वी) तत्त्वचितापूर्वक देव अने धर्मनु आराधन करवा इच्छे छे, तेना माटे आ उपदेश कह्यो छे ॥ ३३ ॥

कृतकृत्य एवा श्रीतीर्थंकर भगवत केवलज्ञान उत्पन्न थया पछी पण जे कारणथी (आ धर्म) तीर्थने नमस्कार करे छे (ते कारणथी) आ तीर्थ मान्य छे, (पूज्य छे), एनाथी उत्तम बीजु शरण जगतमा नथी ॥ ३४ ॥

विहिधारणा-समाही-मंडल-मुद्दासणं च एयस्स ।
जो नाहि तस्स जए म ठाइ संवट्टमुहो तस्स ॥ ३५ ॥
असई-कुसील-निह्नव-गब्भपरिस्सावि-गुरुवहणहत्थे ।
परदारियपाउत्ते सिज्जासंथारसंघट्टे ॥ ३६ ॥
एएसिं पंचमहापावकम्मकारीण संगमं दूरं ।
वज्जित्तु झायमंतं सव्वभयपणासणं कुणइ ॥ ३७ ॥
पज्झरइ चंदकंतीं अमयं कलसो सु(मु)हेण पल्ह(स)त्थो ।
झचऊवसन्हाओ (?) तेणाहं जाव पिच्छामि ॥ ३८ ॥
खीरसमुद्दे धवलं जोयणपरिमंडलं महापउमं ।
आरूढो तत्थाहं गुरूवएसप्पभावेणं ॥ ३९ ॥
अट्ठमहारिद्धीओ हिरि-सिरि-लच्छि-कंति-बुद्धीओ ।
जय-विजया य जयंती विअरइ अपराजिया वि तहिं ॥ ४० ॥
झाएमि महाइसयं सव्वभयपणासणं महामंतं ।
पसमाहाण सु(मु)हो पउमासण-जोगमुद्दाए ॥ ४१ ॥
"ॐ नमोत्थु भयवओ सप्परिवाराण भुवणनाहाण ।
जेसिं संथवणेणं धम्मज्झाणं थिरं होइ ॥ ४२ ॥"

जे आ (विद्या)नां विधि, धारणा, समाधि, मण्डल, मुद्रा अने आसनने जाणे छे तेना मुखने बंद करनार (तेने वादादिमां पराजित करनार) आ जगतमां कोई रहेतो नथी (?) ॥ ३५ ॥

अनेकवार कुशीलसेवी, निह्नव, गर्भपात करनार, स्वहस्ते गुरुजननो वध करनार अने परदाराए वापरेल शय्या संथारादिनो संघट्ट करनार (परदारासेवी ?)– ॥ ३६ ॥

आ पांच महापापकर्म करनाराओना समागमने दूरथी वर्जीने ध्यान करातो आ विद्या सर्व भयनो नाश करे छे ॥ ३७ ॥

आ ध्यानना प्रभावथी हुं जेमांथी चंद्र जेवी कान्तिवाळुं अमृत झरी रह्युं छे, एवा प्रशस्त कळशने जोउं छुं (?) ॥ ३८ ॥

पछी, क्षीरसमुद्रमां एक योजनना घेरावावाळुं एक श्वेत महापद्म हुं जोउं छुं अने तेनी उपर श्रीसद्गुरुना उपदेशना प्रभावथी हुं आरूढ थयो छुं (एम चिंतवुं छुं) ॥ ३९ ॥

त्यां ह्री, श्री, लक्ष्मी, कांति, बुद्धि, जया, विजया, जयंती अने अपराजिता देवीओ (मने) अष्ट महाऋद्धिओने आपे छे (ए प्रमाणे जोउं छुं.) ॥ ४० ॥

त्यां प्रशमना आधान (प्राप्ति)ना सुखवाळो हुं महा अतिशयवाळा अने सर्व भयोनो नाश करनारा महामंत्रनुं पद्मासन अने योगमुद्राए ध्यान करुं छुं ॥ ४१ ॥

(ते मन्त्राक्षरो नीचे मुजब छे:—)

"ॐ नमोत्थु भयवओ सप्परिवाराण भुवणनाहाण ।
जेसिं संथवणेणं धम्मज्झाणं थिरं होइ ॥ ४२ ॥"

[अहीं परिवार सहित भुवनना नाथो (?) ने नमस्कार छे, जेओना स्तवनथी धर्मध्यान स्थिर थाय छे]

धम्मज्झाणम्मि निरतरेगचित्तप्पवत्तजोगाण ।
भवियाण सया देहे देवा सनिज्झय दिंति ॥ ४३ ॥
पुत्थयकमलविहत्था सुयदेवी अक्खसुत्तवरहारा ।
कणयकमडलुकुसुम सतिकरी देवया भणइ ॥ ४४ ॥
विस मत्थ चोर राउल-गह-भूयभय च तुज्झ देहम्मि ।
जम्मसए वि न होही एसा रक्खा कयम्हेहि ॥ ४५ ॥
असमाहाण देहे जायइ थेव पि जेण केणावि ।
त न कयाई होही मतधरो एस अन्नो त्ति ॥ ४६ ॥
पाएहि रक्खपालो कणकमयको हुआसणो जाणू ।
उर-नाहि-हिअयपही दो पाया (हत्था) पासमुहसीस ॥ ४७ ॥
धणपालो जयपालो अच्छुत्ता भयवई य वइरुट्टा ।
देवा हरिणि (ण) गमेसी वज्जधरो रक्खए सयय ॥ ४८ ॥
'ॐ आँ ट्रॉं णॉं आँ ॐ ह्रीं श्रीं क्षिप ॐ स्वाहा ।'
मतमवागरणपय विज्जाण एत्तकोडीण ॥ ४९ ॥
एएहिं अक्खरेहि अब्भुएहिं मत विज्जाण ।
ज ज धरइ त त [चित्ते ?] साहइ धुव पुरिसो ॥ ५० ॥

धर्मध्यानमा निरतर एकचित्ते जेमना योगो प्रवृत्त थया छे, ते भव्यात्माओना शरीरमा सदाकाळ देवो सानिध्य करे छे ॥ ४३ ॥

जेना हाथमा पुस्तक अने कमळ छे, जे अक्षसूत्र (माळा) अने श्रेष्ठ हारने धारण करे छे ते श्रुतदेवी अने जे कनकनु कमण्डलु अने पुष्प धारण करे छे ते शान्ति(करी) देवता कहे छे —॥ ४४ ॥

'अमे तारा शरीरमा आ रक्षा करी छे तेथी सैंकडो जन्ममा पण तारा शरीरमा विष, शस्त्र, चोर, राजा, ग्रह अने भूतनो भय नहीं थाय' ॥ ४५ ॥

जो कोई पण विरोधी साधकना देहमा अल्प पण असमाधि (पीडा) उत्पन्न करवाना प्रयत्न करे तो पण साधकने असमाधि थाय नहीं, कारणके आ मत्रधर साधक कोई विलक्षण (श्रेष्ठ) छे (?) ॥ ४६ ॥

पगोनी कनकमृगना चिह्नवाळो रक्षापाळ, जानुओनी अग्निदेवता अने छाती नाभि, हृदय, बे हाथ, बे पडखा, मुख अने मस्तकनी अनुक्रमे धनपाल (कुबेर), जयपाल (?), अच्छुप्ता, भगवती वैरोट्या, हरिणगमेषी अने इन्द्र सतत रक्षा करे छे ॥ ४७-४८ ॥[1]

'ॐ आँ ट्रॉं णॉं आॅं ॐ ह्रीं श्रीं क्षिप ॐ स्वाहा'—आने (आ मत्रने) करोडो विद्याओनु अव्याकरण (जेनी व्याख्या न थई शके एवु[2]) पद मानेलु छे (अर्थात् आमा करोडो विद्याओ रहेली छे) ॥ ४९ ॥ (?)

मत्रविद्याओना आ अद्भुत अक्षरोथी पुरुष चित्तमा जे जे (इच्छा) धारण करे छे ते ते सर्व निश्चये सिद्ध करे छे ॥ ५० ॥

---

१ आ देवताओनो ते ते स्थानोमां न्यास करवाना होय एम लागे छे प्रस्तुतमां न्यासना स्थानोनी न देवताओनी संख्यानो मेळ मळतो नथी 'कणकमयको' नो अन्वय अने 'पही' नो अर्थ बेसतो नथी

२ जेनु महत्त्व शब्दो न वर्णवी शक एवुं

एसा विज्ञा कज्जप्पसाहणकरी तह वसीकरणं।
थंभण-मोहण-जोहण-उच्चाडण-मारणाईअं ॥ ५१ ॥
पढमपए ठकारं मंडलबंधम्मि सोलसपयाइं।
इक्किकपरममंतो गुरूवएसेण जो सरइ ॥ ५२ ॥
इंद-महिंद समेण वि जोइज्जइ तस्स न य मुहं कुवियं।
किं पुण माणुसमित्तो जो तक्खणि किंकरो होइ ॥ ५३ ॥
वज्झिज्ज खुद्दसिद्धी परलोगविरोहिणीओ पावाओ।
संतिय-पुट्ठियकज्जं मुत्तूण न किंचि कायव्वं ॥ ५४ ॥
सयलमणोरहसिद्धीपुन्नसमागमफलं च नियमेण।
जो जाणइ उवएसं नमंति देवा वि तं पुरिसं ॥ ५५ ॥

[इति] गणिविज्जाए द्वितीयं (प्रथमं) पदम् ॥

आ विद्या कार्यनुं प्रसाधन करनारी छे, वळी वशीकरण, स्तम्भन, मोहन, योधन, उच्चाटन अने मारण आदि पण करे छे ॥ ५१ ॥

प्रथमपद वच्चेनी कर्णिकामां 'ठ' कार अने मण्डलबन्धमां आ विद्याना सोळ पदो चिंतववा, ते एक एक पद परम मंत्र छे। गुरुना उपदेशथी जे आवी रीते स्मरे छे ते इन्द्र अने महेन्द्र जेवाओने पण पोताना कार्यमां जोडी शके छे, ते वखते इन्द्रादिनुं मुख कदीपण कुपित थतुं नथी, (अर्थात् तेओने क्रोध न आवे परंतु हर्षपूर्वक तेओ कार्य करे) तो पछी मनुष्यमात्रनुं तो शुं कहेवुं ? ए तो तत्क्षण तेनो किंकर बनी जाय छे॥ ५२–५३ ॥

परलोकनी विरोधी अने पापरूप एवी क्षुद्र सिद्धिओनो त्याग करवो जोईए। शांतिक अने पौष्टिक कर्म सिवाय बीजुं कर्म आ विद्याथी करवुं न जोईए ॥ ५४ ॥

सकल मनोरथोनी सिद्धि अने पुण्यनो समागम ए जेनुं निश्चित फळ छे एवा आ उपदेशने जे जाणे छे ते पुरुषने देवो पण नमे छे ॥ ५५ ॥

परिचय

राधनपुरना श्रीलावण्यविजय जैन ज्ञानभंडारमांथी आ स्तोत्रनी बे हस्तलिखित प्रतिओ–डा. नं. २७, प्रति नं. १२५७ अने प्रति नं. १२५८ मळी हती। एक प्रति बीजी प्रतिना उतारारूप होवाथी तेमां कोई पाठभेद मळ्यो नथी।

नमस्कारमंत्रनुं ध्यान करवा पहेलां शुं करवानी जरूरत छे ए विशे आ स्तोत्र सारो ख्याल आपे छे। आमां नमस्कारमंत्र अंगे 'उपदेश' अने 'अभ्यास' माटे खास भारपूर्वक कहेवामां आव्युं छे अने तेनो महिमा पण बतावबामां आव्यो छे, पछी 'गणिविद्या' नु वर्णन अने महिमा बताव्यो छे।

खरुं जोतां प्रत्येक विद्या अने मंत्र नमस्कारपूर्वक गणवामां आवे तो फळे छे, तेम आ 'गणिविद्या' पण छे अने तेम करवाथी फळदायक बने छे। आ स्तोत्रना कर्ता विशे माहिती मळती नथी।

[२६]

पंच-महा-परमिट्ठि-संथयं ॥

तियसिंद- नरिंदनमसियाण निद्दह्वघाय (इ) कम्माण ।
निज्जियरिउनिग्गहाण नमो नमो जिणवरिंदाण ॥ १ ॥
तिहुयणसिहरम्मि पय (इ) ट्ठियाण निट्ठवियमलकलङ्काण ।
सासयसुहनिलयाण नमो नमो सव्वसिद्धाण ॥ २ ॥
पचविहायारसमुद्दपारपत्ताण गुणमयकाण ।
आयरियाण च तहा नमो नमो नाणसूरीण ॥ ३ ॥
सयलसुओयहिपारगयाण उवएसदाणदक्खाण ।
निच्चमुवज्झायाण नमो नमो खवियमोहाण ॥ ४ ॥
अइदुद्धराइ पच वि धारंति महव्वयाइ जे मुणिणो ।
तियलोयबंधवाण नमो नमो सव्व-साहूण ॥ ५ ॥
इय 'पचमहापरमिट्ठि-सथय' जे कुणति भावेण ।
पावंति ते अपावा, अजियसुहं निव्वुइ अइरा ॥ ६ ॥

अनुवाद

देवेन्द्रो अने नरेन्द्रोथी नमस्कार करायेला, घातिकर्मोने भस्म करनारा अने वैरी-समूहने जितनारा श्रीजिनेश्वरोने नमस्कार हो, नमस्कार हो ॥ १ ॥

त्रण लोकना अग्रभाग उपर रहेला, कर्ममलरूप कलंकना अतने पामेला, शाश्वत सुखोना स्थानरूप सर्व सिद्धोने नमस्कार हो, नमस्कार हो ॥ २ ॥

पाच प्रकारना आचाररूपी समुद्रना पारने पामेला, गुणचद्ररूप-(चद्र समान उज्ज्वल गुणवाळा), तथा ज्ञानरूप सूर्यथी शोभता एवा आचार्योने नमस्कार हो, नमस्कार हो ॥ ३ ॥

समग्र श्रुतज्ञानरूपी समुद्रना पारने पामेला, उपदेश देवामा चतुर अने मोह-अज्ञाननो नाश करनारा एवा उपाध्यायोने नित्य नमस्कार हो, नमस्कार हो ॥ ४ ॥

अति दुर्धर एवा पाचे महाव्रतोने जे मुनिओ धारण करे छे, तथा त्रण लोकना बधु एवा सर्व साधुओने नमस्कार हो, नमस्कार हो ॥ ५ ॥

आ 'पच-महापरमेष्ठि-सस्तव' ने भावपूर्वक जे भणे छे, ते पापथी रहित बनीने अजेय सुखवाळा मोक्षने जल्दी पामे छे ॥ ६ ॥

परिचय

आ स्तोत्र प्राचीन हस्तलिखित पत्र उपरथी मळी आव्यु छे । एना कर्ता विशे जाणवामा आव्यु नथी ।

[२७]

पंचपरमिट्ठि—जयमाला ॥

मणुयणाइंदसुरधरियछत्तत्तया, पंच-कल्लाण-सुक्खावली पत्तया ।
दंसणं णाण-ज्झाणं अणंतं बलं, ते 'जिणा' दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥ १ ॥
जेहिं झाणग्गिबाणेहिं अइथड्डयं, जम्म-जर-मरण-णयरत्तयं दड्डयं ।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महां[1] दिंतु 'सिद्धा' वरं णाणयं ॥ २ ॥
पंचहाचार-पंचग्गिसंसाहया, बारसंगाइसुयजलहिं अवगाहयां[2] ।
मोक्खलच्छी महंती महं ते सया, 'सूरिणो' दिंतु मोक्खंगयासंगयां[3] ॥ ३ ॥
घोरसंसारभीमाडवीकाणणे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे ।
णट्ठमग्गाण जीवाण पहदेसया, वंदिमो ते 'उवज्झाय' अम्हे सया ॥ ४ ॥
उग्गतवयरणकरणेहिं छीणंगया, धम्मवरझाणसुक्क झाणं गया ।
णिब्भरं तवसिरीए समालिंगया, 'साहवा (साहू)' ते महा मोक्खपहमग्गया ॥५॥

अनुवाद

जेमना उपर मनुष्यो, नागेन्द्रो अने देवताओ वडे त्रण छत्रो धारण करायां छे; जेओ गर्भ, जन्म, व्रत, केवलज्ञान अने मोक्ष ए पांच कल्याणको वडे जगतने सुखश्रेणी आपे छे; तथा जेओ अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तध्यान अने अनन्तबलने प्राप्त थयेला छे ते जिनेन्द्रो 'अरिहंत भगवंतो' अमने परम मंगल आपो ॥ १ ॥

जेओए पोताना ध्यानरूपी अग्निबाणोथी अत्यंत गर्वित (दुर्जेय) एवां जन्म, जरा तथा मरणरूपी त्रणे नगरो बाळी नाख्यां छे तथा जेओए शाश्वत मोक्षस्थानने प्राप्त कर्युं छे ते उत्तम 'सिद्ध भगवंतो' अमने केवळज्ञान आपो ॥ २ ॥

दर्शनाचार, ज्ञानाचार, तपाचार, वीर्याचार अने चारित्राचार—आ पांच प्रकारना आचार-रूपी पंचाग्नि तपनी साधना करनारा, द्वादशांगादि श्रुतसागरमां अवगाहन करनारा अने मोक्षनी अंगता (कारणता-साधनता) ने पामेला एवा 'आचार्य भगवंतो' अमने सदा मोक्षरूपी महालक्ष्मी आपो ॥ ३ ॥

तीक्ष्ण अने विकराळ नखवाळो पापरूपी सिंह जेमां छे एवा घोर संसाररूपी भयानक वनमां (मिथ्यात्व वडे) सुमार्गने भूली आमतेम भटकता जीवोने (मोक्षमार्गरूप कल्याणकारी) सुमार्ग बतावनारा 'उपाध्याय भगवंतो' ने अमे सदा वंदीए छीए ॥ ४ ॥

जेमनुं शरीर घोर तपश्चर्या वडे क्षीण थयुं छे, जेओ श्रेष्ठ एवा धर्मध्यानमां तथा शुक्ल-ध्यानमां लीन छे, तथा तपरूपी लक्ष्मीए जेमनुं गाढ आलिंगन कर्युं छे ते 'साधु भगवंतो' अमने मोक्षमार्गमां प्रवृत्त करो ॥ ५ ॥

---

१ उत्तमाः । २ अवगाहकाः । ३ मोक्षाङ्गतासंगताः ।

एएण थोत्तेण जो पंचगुरू वदए, गुरुयससारघणवेल्लि सो छिंदए ।
लहइ सो सिद्धसुक्खाइनरमाणण, कुणइ कम्मिंधणपुजपज्जालण ॥ ६ ॥
अरिहा सिद्धाइरिया उवज्झाया साहू पचपरमेट्ठी ।
एयाण णमुक्कारो, भवे भवे मम सुह दिंतु ॥ ७ ॥

आ स्तोत्रवडे जे पच–परमेष्ठिओने वदन करे छे ते विस्तृत ससारनी गहन वेल्डीने कापे छे, तथा सिद्धसुखादि उत्तम मन्मानने पामे छे अने कर्मरूपी इधनना समूहने बाळी नाखे छे ॥ ६ ॥

अरिहतो, सिद्धो, आचार्यो, उपाध्यायो अने साधुओ ए पाच परमेष्ठी (उत्कृष्ट पदमा स्थित) छे । आ (पाच परमेष्ठीओने) करेलो नमस्कार मने भवोभवमा कल्याण आपो ॥ ७ ॥

परिचय

आ स्तोत्र 'पूजनरत्नाकर' प्रकाशक –जैन सिद्धात ग्रथमाला, देहली, (पुष्प ३) ना पृष्ठ ७८ उपरथी लेवामा आव्यु छे । तेमा पच परमेष्ठीना गुणो बताववामा आव्या छे । आ स्तोत्रना कर्ता विशे जाणवा मळ्यु नथी, पण कोई दिगबर जैनाचार्यनी रचना जणाय छे ।



नवकारलहुकुलकं ॥

अणेगजम्मंतरसंचिआणं, दुहाण सारीरय-माणसाणं ।
कत्तो हि भव्वाण हविज्ज नासो, न जाव पत्तो नवकारमंतो ॥ १ ॥
मंताण मंतो परमो इमुत्ति, धेयाण धेयं परमं इमुत्ति ।
तत्ताण तत्तं परमं पवित्तं, संसारसत्ताण दुहाहयाणं ॥ २ ॥
नामाइ मंगलाणं पढमं चिय मंगलं नमुक्कारो ।
अवणेइ वाहि-तक्कर-जलणाइ भयाइं सव्वाइं ॥ ३ ॥
हरइ दुहं कुणइ सुहं जणइ जसं सोसए भवसमुद्दं ।
इहलोअ-पारलोइअसुहाण मूलं नमुक्कारो ॥ ४ ॥
अट्ठेव य अट्ठसया, अट्ठसहस्सं च अट्ठ कोडीओ ।
जो गुणइ भत्तिजुत्तो, सो तईयभवे लहइ मुक्खं ॥ ५ ॥
भो अण्णसमए सयणे विबोहणपवेसणे अ भयवसणे ।
पंचनमुक्कारो खलु समरिज्जइ सव्वकज्जेसु ॥ ६ ॥
नवकारइक्कअक्खर पावं फेडेइ सत्तअयराणं ।
पण्णासं च पएणं, सागरपणसय समग्गेण ॥ ७ ॥

अनुवाद

भव्य मनुष्योए ज्यां सुधी नवकारमंत्रने प्राप्त कर्यो नथी त्यां सुधी अनेक जन्मोमां एकठां करेलां तेमनां शारीरिक अने मानसिक दुःखोनो नाश शी रीते थाय ? ॥ १ ॥

दुःखोथी आघात पामेला संसारी मनुष्योने माटे आ (नवकार मंत्र) मंत्रोमां परममंत्र छे, ध्यान करवा योग्यमां आ परमध्येय छे अने तत्त्वोमा परमपवित्र तत्त्व छे ॥ २ ॥

नाम, स्थापना, द्रव्य अने भाव मंगलोमां आ नमस्कार प्रथम मंगल छे; केमके ते रोग, चोर अने अग्नि वगेरे बधा भयोने दूर करे छे ॥ ३ ॥

ते मंत्र दुःख हरे छे, सुख आपे छे, यश उत्पन्न करे छे, संसाररूप समुद्रने शोषी ले छे। एटले आलोक अने परलोकनां सर्व सुखोनुं मूळ आ नवकारमंत्र छे ॥ ४ ॥

जे भक्तिवाळो मानवी आठ, आठसो, आठ हजार, अगर आठ करोडवार आ मन्त्रनो जाप करे छे ते त्रीजे भवे सिद्धि प्राप्त करे छे ॥ ५ ॥

जमतां, सूतां, ऊठतां, (नगर वगेरेमां) प्रवेश करतां, भय आवी पडतां के दुःखमां— यावत् बधां कार्योमां आ पंच नमस्कारनुं खरेखर स्मरण करवुं जोईए ॥ ६ ॥

नमस्कारनो एक अक्षर सात सागरोपमनुं पाप नाश करे छे, एक पद वडे पचास सागरोपम अने समग्र नवकार वडे पांचसो सागरोपमनुं पाप नाश थाय छे ॥ ७ ॥

नवकाराओ अन्नो सारो मंतो न अत्थि तिअलोए ।
तम्हा य अणुदिण चिय झायव्वो परमभत्तीए ॥ ८ ॥
नवकारसमो मंतो सितुंजयसमो गिरी ।
वीतरागसमो देवो न भूतो न भविस्सई ॥ ९ ॥

इति नवकारलघुकुलकम् ॥

निहणइ सव्वभयाइं अह सव्व हणइ समइ विग्घाइं ।
समरिज्जंतो हिअए नवकारो नत्थि संदेहो ॥ १ ॥

त्रण लोकमां नवकारथी सारभूत (प्रधान) अन्य कोई मंत्र नथी, तेथी प्रतिदिन परमभक्तिथी तेनुं ध्यान करवुं जोईए ॥ ८ ॥

(आ जगतमां) नवकार जेवो मंत्र, शत्रुंजय जेवो गिरि अने वीतराग जेवा देव बीजा कोई थया नथी अने थशे पण नहीं ॥ ९ ॥

अलमां—

हृदयमां भावपूर्वक स्मरण करातो नवकार सर्व भयोनो नाश करे छे, सर्व पापोनो नाश करे छे अने सर्व विघ्नोने शमावे छे, एमां लेश पण संदेह नथी ॥ १ ॥

परिचय

आ 'नमस्कार लघुकुलक' नी एक पानानी हस्तलिखित प्रति श्रीमुक्ताबाई ज्ञानमंदिर, डभोईना हस्तलिखित ज्ञानभंडारमांथी मळी हती । आ कुलकनी गाथाओ एककर्तृक लागती नथी । संभवत आ गाथाओनो संग्रह छे ।

वळी आ प्रतिनी साथे 'घणघाइ०' पदथी शरू थतुं २८ गाथानुं जे स्तोत्र अगाऊ आप्युं छे ते पण हतुं, तेमां ए स्तोत्रनुं 'श्रीनवकार बृहत् कुल्क' एवुं नाम आप्युं छे ।



[२९]

भत्तपरिन्नासंदब्भो ॥

(१)

आराहणापुरस्सरमणन्नहियओ विसुद्धलेसाओ ।
संसारक्खयकरणं तं मा मुंची नमुक्कारं ॥ ७६ ॥ ३५१ ॥

अरिहंतनमुक्कारो इक्कोवि हविज्ज जो मरणकाले ।
सो जिणवरेहिं दिट्ठो संसारुच्छेअणसमत्थो ॥ ७७ ॥ ३५२ ॥

मिंठो किलिट्ठकम्मो नमो जिणाणंतिसुकयपणिहाणो ।
कमलदलक्खो जक्खो जाओ चोरुत्ति सूलिहओ ॥ ७८ ॥ ३५३ ॥

भावनमुक्कारविवज्जिआइं जीवेण अकयकरणाइं ।
गहियाणि अ मुक्काणि अ अणंतसो दव्वलिंगाइं ॥ ७९ ॥ ३५४ ॥

आराहणापडागागहणे हत्थो भवे नमोक्कारो ।
तह सुगइमग्गगमणे रहुव्व जीवस्स अप्पडिहो ॥ ८० ॥ ३५५ ॥

अन्नाणीऽवि अ गोवो आराहित्ता मओ नमुक्कारं ।
चंपाए सिट्ठिसुओ सुदंसणो विस्सुओ जाओ ॥ ८१ ॥ ३५६ ॥

अनुवाद

तेथी विशुद्ध लेश्यापूर्वक आराधनामां पुरस्सर (अग्रेसर, प्रगतिशील) बनीने अने अनन्य हृदयवाळो थईने तुं संसारक्षयने करनार नमस्कारने मूकीश नहीं ॥ ७६ ॥

मरणकाळे जो अरिहंतने एक पण नमस्कार थाय तो ते संसारनो नाश करवाने समर्थ छे एम जिनेश्वरोए कहेलुं छे ॥ ७७ ॥

कठोर कर्म करनारो 'चोर' छे तेथी शूळीथी हणाएलो, 'नमो जिणाणं' ए पदनुं मरण समये सारी रीते ध्यान करतो महाव्रत 'कमलदल' नामे यक्ष थयो ॥ ७८ ॥

भाव नमस्कार वगरना पोताना कर्तव्यनी सिद्धि वगरना (निष्फळ) द्रव्यलिंगो जीवे अनंतवार ग्रहण कर्या अने मूक्या ॥ ७९ ॥

जीवने आराधना-पताका ग्रहण करवामां नमस्कार हाथ समान छे अने सुगतिरूप मार्गे जवामां अस्खलित रथ समान छे ॥ ८० ॥

अज्ञानी एवो गोवाळीओ पण नमस्कारनी आराधना करीने मरण पाम्यो, तेथी चंपानगरमां सुदर्शन नामे प्रसिद्ध श्रेष्ठीपुत्र थयो ॥ ८१ ॥

(२)

एअस्स पभावेणं पालिज्जतस्स सइ पयत्तेण.।
जम्मंतरेऽवि जीवा पावंति न दुक्खदोगच्च ॥ १६६ ॥ ४४१ ॥
चिंतामणी अउव्वो एअमपुव्वो अ कप्परुक्खुत्ति ।
एअ परमो मतो एअ परमामयसरिच्छ ॥ १६७ ॥ ४४२ ॥
अह मणमदिरसुदरफुरतजिणगुणनिरजणुज्जोओ ।
पचनमुक्कारसमे पाणे पणओ विसज्जेइ ॥ १६८ ॥ ४४३ ॥
परिणामविसुद्धीए सोहम्मे सुरवरो महिड्ढीओ ।
आराहिऊण जायइ भत्तपरिन्न जहन्न सो ॥ १६९ ॥ ४४४ ॥
उक्कोसेण गिहत्थो अच्चुअकप्पमि जायए अमरो ।
निव्वाणसुह पावइ साहू सव्वट्ठसिद्धिं वा ॥ १७० ॥ ४४५ ॥

अनुवाद

हमेशा आदरपूर्वक साधना कराता एवा आ नमस्कारमत्रना प्रभावथी, जीवो अन्य जन्मोमा पण दु ख अने दुर्भाग्यने पामता नथी ॥ ४४१ ॥

आ (मत्र) अपूर्व चिंतामणि छे, अपूर्व कल्पवृक्ष छे, परम मत्र छे अने परम अमृत समान छे ॥ ४४२ ॥

श्रीजिनेश्वर भगवतना गुणोनो निर्मळ उद्योत जेना मनोमदिरमा स्फुरायमान छे, एवो ते धैर्यवान पुरुष पचनमस्कारनी साथे प्राणो छोडे छे ॥ ४४३ ॥

जो ते गृहस्थ होय अने परिणामनी विशुद्धिपूर्वक भक्तपरिज्ञानी आराधना करे, तो ते जघन्यथी सौधर्म (प्रथम) देवलोकमा महर्द्धिक श्रेष्ठ देव थाय छे अने उत्कृष्टथी अच्युत कल्पमा (१२ मा देवलोकमा) देव थाय छे। जो ते साधु होय तो जघन्यथी सौधर्म देवलोक अने उत्कृष्टथी निर्वाणसुख अथवा सर्वार्थसिद्ध विमान पामे छे ॥ ४४४–४४५ ॥

परिचय

जीवने अनादिकाळथी आहार साथे गाढ सबध छे। एक गतिमाथी बीजी गतिमा वक्रगतिए जाय त्यारे जीव एक–बे के त्रण समय आहार वगर रहे छे, पण ए काई महत्त्वनु नथी। आहार एटले ससार एम कहेवु होय तो कही शकाय। ससारथी छूटवु होय तो आहारथी छूटवु अनिवार्य छे। ए केवी रीते छूटाय तेनो सुदर विधि 'भक्तपरिज्ञा'मा समजाव्यो छे।

आ पयन्नाना कर्ता परमात्मा श्री महावीरस्वामीना शिष्य श्री वीरभद्रमुनि छे। प्रस्तुतमा नमस्कार सबधी सदर्भ तारवी प्रकट करेल छे।

[३०]

पंचसुत्तसंदब्भो ॥

जावज्जीवं मे भगवंतो परमतिलोगनाहा अणुत्तरपुण्णसंभारा खीणरागदोसमोहा अचिंतचिंतामणी भवजलहिपोया एगंतसरणा अरिहंता सरणं ॥

तहा पहीणजरामरणा अवेअकम्मकलंका पणट्ठवावाहा केवलनाणदंसणा सिद्धिपुर-निवासी निरुपमसुखसंगया सव्वहा कयकिच्चा सिद्धा सरणं ॥

तहा पसंतगंभीरासया सावज्जजोगविरया पंचविहायारजाणगा परोवयारनिरया पउमाइ-निदंसणा झाणज्झयणसंगया विसुज्झमाणभावा साहू सरणं ॥

[–'पंचसुत्त'–पावपडिग्घायगुणबीजाहाणसुत्त (१)—]

अनुवाद

ऐश्वर्यादि ऋद्धिवाळा (भगवंत), त्रणे लोकना (योग–क्षेम करनारा) समर्थ नाथ (रक्षक), अनुत्तर (उंचामां उंचा तीर्थंकरनामकर्म वगेरे) पुण्यना निधान, राग–द्वेष–मोह जेओना निर्मूल क्षय थया छे तेवा, अचिन्त्य सुखने विना मागे आपनारा माटे चिंतामणिथी पण अधिक, संसार–समुद्रने तरवा नौका समान अने एकांते शरण करवा योग्य, एवा अरिहंतोनुं मारे जीवुं (मुक्त न थाउं) त्यांसुधी शरण थाओ! अरिहंतो मने शरण आपो!

तथा, जेओनां जरा मरण सर्वथा क्षीण थयां छे, कर्मरूपी कलंक जेओने वेदवानां नथी, सर्व प्रकारनी व्याबाधाओ (पीडाओ–दुःखो) जेमनी नाश पामी छे, संपूर्ण ज्ञान अने दर्शन जेओने प्रगट थयां छे, जेओ सिद्धिपुर नामना नगरमां (मोक्षमां) रहेला छे, जगतना कोई सुखनी उपमा जेमां न घटे तेवा अनुपम सुखने जेओ पामेला (भोगवी रह्या) छे अने जेओ सर्वथा कृतकृत्य छे (जेओने हवे कंई कर्तव्य शेष रह्यु नथी), ते सिद्धोनुं मारे (जावज्जीव) शरण थाओ।

तथा, प्रशांत अने गंभीर आशय (हृदय) वाळा, सर्व सावद्य (पाप) व्यापारथी निवृत्त थयेला, पंचविध आचारने (ज्ञानाचारादिने) यथार्थ जाणनारा, परोपकार करवामां रक्त, पद्म (कमळ) वगेरेनी उपमावाळा, शुभध्यान अने शास्त्राध्ययनमां सतत उद्यमवाळा अने जेओना भावो उत्तरोत्तर विशुद्ध थया करे छे, तेवा साधुओनुं मारे (जावज्जीव) शरण थाओ !

परिचय

आ सूत्र घणुं ज प्राचीन छे। एना कर्ता कोई समर्थ पूर्वधर महर्षि होवा जोईए। आमां पांच सूत्रो आपीने साधुओने अत्यंत उपयोगी हकीकतोनुं वर्णन कर्युं छे। तेमांथी आ संदर्भ, जे नमस्कार विषयने उपयोगी जणायो ते तारवीने अर्थ साथे अहीं प्रगट कर्यो छे।

[३१]

अंगविज्जापइण्णय-संदब्भो

णमो अरहंताण, णमो सव्वसिद्धाण, णमो आयरियाण, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूण, णमो महापुरिसस्स महतिमहावीरस्स सव्वण्णू-सव्वदरिसिस्स।

इमा भूमीकम्मस्स विज्जा-"इदिआली इंदिआलि माहिंदे मारुदि स्वाहा, णमो महापुरिसदिण्णाए भगवईए अंगविज्जाए सहस्सपागरणाए खीरिणिविरणउदुंबरिणिए सह सर्वज्ञाय स्वाहा, सर्वज्ञाधिगमाय स्वाहा, सर्वकामाय स्वाहा, सर्वकर्मसिद्ध्यै स्वाहा।"

क्षीरवृक्षच्छायाया अष्टमभक्तिकेन गुणयितव्या, क्षीरेण च पारयितव्यम्, सिद्धिरस्तु। भूमिकर्मविद्याया उपचारः—चतुर्थभक्तिकेन कृष्णचतुर्दश्या ग्रहीतव्या, षष्ठेन साधयितव्या अहतवस्त्रेण कुससत्थरे ॥ १ ॥

"णमो अरहताण, णमो सिद्धाण, णमो आयरियाण, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्वसाहूण, णमो आमोसहिपत्ताण, णमो विप्पोसहिपत्ताण, णमो सव्वोसहिपत्ताण, णमो संभिन्नसोयाण, णमो खीरस्सवाण, णमो मधुस्सवाण, णमो कुट्ठबुद्धीण, णमो पदबुद्धीण, णमो अक्खीण महाणसाण, णमो रिद्धिपत्ताण, णमो चउदसपुव्वीण, णमो भगवईए महापुरिसदिन्नाए अंगविज्जाए सिद्धे सिद्धाणुमए सिद्धासेविए सिद्धचारणाणुचिन्ने अमियबले महासारे महाबले अगदुवारधरे स्वाहा।" छट्ठग्गहणी, छट्ठसाधणी, जापो अट्ठसय, सिद्धा भवइ ॥ २ ॥

अनुवाद

'णमो अर० थी ०सव्वदरिसिस्स' सुधीनो एक मंत्र छे। ते पछी 'इदिआली' थी 'स्वाहा' सुधी भूमिकर्मनी विद्या छे, तेनी विधि आ प्रकारे छे—

क्षीरवृक्षनी (उंबराना झाडनी, वडना झाडनी, पींपळना झाडनी के रायणना झाडनी) छायामा बेसीने अट्ठमनु तप करीने आ विद्यानो जाप करवो। तपना अंते खीरथी पारणु करवु। आथी भूमिकर्मविद्या सिद्ध थाय छे।

भूमिकर्मविद्यानो उपचार–ग्रहणविधि एवो छे के –एक उपवास करीने काळी चौदशना दिवसे आ विद्याने ग्रहण करवी अने छठ–बे उपवास–करीने तेनी साधना करवी। साधनाकाळमा वस्त्रो अखंड (सीव्या विनाना, दग्धादि दोष रहित) वापरवा, तथा शय्या माटे घासना संथारानो उपयोग करवो।

'णमो अर० थी स्वाहा०' सुधीनी विद्या छे। छठ एटले बे उपवास करीने आ विद्या ग्रहण करवी अने छठ–बे उपवास करीने तेनी साधना करवी अने एकसो ने आठवार तेनो जाप करता आ विद्या सधाय छे।

"णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो महापुरिसदिण्णाय अंगविज्जाए, णमोक्कारयित्ता इमं मंगलं पउंजइस्सामि, सा मे विज्जा सव्वत्थ पसिज्झउ, अत्थस्स य धम्मस्स य कामस्स य इसिसस्स आदिच्च-चंद-णक्खत्त-गहगण तारागणाण जोगो जोगाणं णभम्मि य जं सच्चं तं सच्चं इधं मज्झं इध पडिरुवे दिस्सउ, पुढवि-उदधि-सलिल-अग्गि-मारुएसु य सव्वभूएसु देवेसु जं सच्चं तं सच्चं ईध मज्झ पडिरुवे दिस्सउ ।"

[-अंगविज्जा- 'तत्थ पढमं गजवंधेणं संगहणीपडलं, पृष्ठ ८]

'णमो अरहंताणं....... दिस्सउ ।', ए मंत्र छे ।

परिचय

प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, बनारस तरफथी ताजेतरमां एटले वि. सं. २०१४ मां मुनिराज श्रीपुण्यविजयजी महाराजे संपादित करेल 'अंगविज्जापइण्णय' नामे फलादेशनो महाकाय ग्रंथ प्रगट थयो । तेमां अनेक विषयो परत्वे फलादेश सूचव्या छे । ए जोतां भारतीय वाङ्मयमां आवो ग्रंथ हजी सुधी मळी आव्यो नथी ।

आ ग्रंथना कर्ताए पोतानुं नाम क्यांय पण प्रगट कर्युं नथी एटले तेनो समय पण चोक्कस थई शक्यो नथी। भूमिकालेखक डॉ. मोतीचंदे ए ग्रथनी रचना कुषाणकाळमां थयानुं अनुमान कर्युं छे।

आ ग्रंथमांथी नमस्कारविषयक त्रणेक मंत्रोनो अहीं संग्रह कर्यो छे ।



[३२]

श्रीमद्हरिभद्रसूरिरचित-संबोधप्रकरणग्रन्थादाचार्यादि-स्वरूपसंदर्भः ॥

सूरिस्वरूपम्—

देस-कुल-जाई रूवी, संघयणी धिइजुओ अणाससी ।
अविकत्थणो अमाई, थिरपरिवाडी गहियवक्को ॥ ९४ ॥
जियपरिसो जियनिद्दो, मज्झत्थो देस-कालभावन्नू ।
आसण्णलद्धपइभो, नाणाविहदेसभासण्णू ॥ ९५ ॥
पंचविहे आयारे, जुत्तो सुत्तत्थ तदुभयविहिन्नू ।
आहरणहेउउवणयणयणिउणो गाहणाकुसलो ॥ ९६ ॥
ससमय-परसमयविऊ, गंभीरो दित्तिमं सिवो सोमो ।
गुणसयकलिओ एसो, पवयणउवएसओ सुगुरू ॥ ९७ ॥
अट्ठविहा गणिसंपय आयाराई चउव्विहिक्किका ।
चउहा विणयपवित्ती, छत्तीसगुणा इमे गुरुणो ॥ ९८ ॥

आचार्यनु स्वरूप- अनुवाद

आर्य देश, उत्तम कुळ अने उत्तम जातिमा जन्म पामेला, सौन्दर्यवान्, दृढसंघयणवाळा, धृतिमान् (धैर्यवंत), नि स्पृही, हित–मित बोलनारा (विकथा न करनारा), मायारहित, स्थिर-परिपाटीवाळा (परिचित ग्रंथोने सूत्र, अर्थ अने तदुभयथी अस्खलित रीते सदा धारण करनारा), आदेय वाक्यवाळा (जेमनु वचन सौने मान्य होय एवा), जितपर्षद् (पर्षदा जीतनार अर्थात् राज्यसभादिमा पण क्षोभ न पामनारा), जितनिद्र (निद्राने जीतनार अर्थात् अप्रमत्त), मध्यस्थ (शिष्यादिने विषे समान भाववाळा), देश, काळ अने भावने जाणनारा, अत्यंत प्रतिभाशाळी (शीघ्रप्राप्त बुद्धिवाळा अर्थात् परवादीना गमे ते प्रश्ननो उत्तर शीघ्रत आपवामा समर्थ), भिन्न भिन्न देशोनी भाषाओने जाणनारा, पाच प्रकारना आचारथी युक्त, सूत्र, अर्थ अने तदुभयने जाणनारा (उत्सर्ग अने अपवादने निपुण रीते कहेनारा), दृष्टातो, हेतुओ, उपनयो, नयो वगेरेनी निरूपणामा निपुण, ग्राहणामा (अर्थात् शिष्योने सूत्रादि ग्रहण करावयामा) कुशळ, स्व–सिद्धात अने पर–सिद्धातमा निष्णात, गंभीर (खेदने सहन करनारा), दीप्तिमान (बीजाओथी अपराजित-अधृष्य), शिव (मोक्षना हेतु होवाथी अथवा तेओ जे प्रदेशमा रहे ते प्रदेशमा मारि वगेरे रोगो शात थई जता होवाथी मगळभूत), सौम्य (सर्व लोकोना नयन अने मनने प्रिय) अने विनयादि सेंकडो गुणोथी युक्त एवा आचार्य भगवान जिनवचनना उपदेशक होय छे । (तात्पर्य के उपर्युक्त गुणोथी युक्त एवा आचार्य ज उपदेशने माटे योग्य होय छे ।) ॥ ९४–९७ ॥

आठ प्रकारनी गणिसंपदा छे । ते दरेकना आचारादि चार चार प्रकार छे । विनयप्रवृत्ति चार प्रकारे छे । आ आचार्यना ३६ गुणो छे । (३२ प्रकारनी गणिसंपदा + ४ प्रकारनी प्रवृत्ति = ३६ गुण*) ॥ ९८ ॥

---

* १ आचार २ श्रुत ३ शरीर ४ वचन ५ वाचना ६ मति ७ प्रयोगमति अने ८ संग्रहपरिज्ञा—एम आठ प्रकारनी गणिसंपदा छे आ आठ गणिसंपदाओना आचार आदि ३२ भेदो छे विशेष जाणवा माटे जुओ — श्रीजिनभद्र क्षमाश्रमणगणिविरचित ‘ जितकल्पसूत्र ’नु स्वोपज्ञभाष्य, गाथा १६० थी २०६ विनय प्रतिपत्ति ४ प्रकारे छे —१ आचारविनय २ श्रुतविनय ३ विक्षेपणविनय अने ४ दोषनिघातविनय विशेष माटे जुओ —‘जितकल्पसूत्र, स्वोपज्ञभाष्य’, गाथा २१३ थी २४० ऊपरना ३६ स्थानोनु वर्णन जितकल्पभाष्यमां सुंदर रीते आपवामां आव्यु छे ।

सूरेरर्हत्स्वरूपत्वम्—

सो भावसूरि तित्थयरतुल्लो जो जिणमयं पयासेइ ।
जिणमयमइक्कमंतो, सो काउरिसो न सप्पुरिसो ॥ १४७ ॥
हिंडइ नो भिक्खाए, तित्थयरो तित्थभावसंपत्तो ।
तहिं जाइ न भिक्खट्ठा, सूरी वत्थासणाईणं ॥ १४८ ॥
जं समए जावइयं पवयणसारं लहेइ तं सव्वं ।
अरिहमिव तहावाई सुद्धं निस्संसओ सव्वं ॥ १४९ ॥
जह अरिहा ओसरणे, परिसाइमज्झट्ठिओ पढमजामे ।
वक्खाणइ सो अण्णं, सूरी वि तहा न अन्नत्थ ॥ १५० ॥
जह तित्थगरस्साणा, अलंघणिज्जा तहा य सूरीणं ।
न य मंडलिए भुंजइ, तित्थयरो तहा य आयरिओ ॥ १५१ ॥
सव्वेसिं पूयणिज्जो, तित्थयरो जहा तहा य आयरिओ ।
परिसहवग्गे अभीओ, जिणु व्व सूरी वि धम्मकए ॥ १५२ ॥

आचार्यनुं अरिहंतस्वरूप—

जे श्री जिनेश्वर प्रभुना धर्मने प्रकाशित करे छे ते भावआचार्यने श्री तीर्थंकर तुल्य कह्या छे; परंतु जे श्री जिनमतनुं उल्लंघन करे छे ते कापुरुष (कायर पुरुष–पामर) छे, सत्पुरुष नथी ॥ १४७ ॥

तीर्थभावने प्राप्त थयेल एवा श्री तीर्थंकर भगवंत भिक्षार्थे जता नथी तेम आचार्य पण वस्त्र, अशन आदिनी भिक्षा माटे जता नथी ॥ १४८ ॥

सिद्धान्तने विशे जेटलो (अथवा जे काळे जेटलो सिद्धान्तनो) सार वर्ते छे तेटलो सर्व सार प्राप्त करी श्री अरिहंत भगवंतनी जेम आचार्य सर्वशुद्ध सिद्धांतना रहस्यने निःसंशयपणे यथार्थ रीते समजावे छे ॥ १४९ ॥

समवसरणमां पर्षदाओनी मध्यमां रहेला श्रीअरिहंत भगवंत जेम प्रथम प्रहरमां व्याख्यान आपे छे तेम आचार्य (गणधर) पण तेवी ज रीते त्यां श्रीअरिहंतनी देशना पछी व्याख्यान आपे छे, पण बीजे स्थाने नहि ॥ १५० ॥

जेम तीर्थंकरनी आज्ञा अलंघनीय छे तेम आचार्यनी आज्ञा पण अलंघनीय छे। जेम श्री तीर्थंकर भगवंत मांडलीमां भोजन करता नथी तेम आचार्य भगवंत पण मांडलीमां भोजन करता नथी ॥ १५१ ॥

जेम श्रीतीर्थंकर भगवंत सर्वने पूज्य छे तेम आचार्य भगवंत पण सर्वने पूज्य छे। तेमज परीषहना समूहमां धर्म माटे जेम श्रीतीर्थंकर भगवंत निर्भय छे तेम आचार्य भगवंत पण निर्भय छे ॥ १५२ ॥

चिंतइ न लोगकज्ज, विकत्थण कुणइ नेव सलाव ।
इक्को चिट्ठइ धम्मज्झाणे निस्सगयारत्तो ॥ १५३ ॥
एव तित्थयरसम, नवहा सूरीण भासिय समए ।
तस्साणाए वट्टणमुब्भावणमित्थ धम्मस्स ॥ १५४ ॥

× × ×

सव्वोवि अरिहदेवो, सगुरु गुरू भणइ नाममित्तेण ।
तेसिं सुद्धसरूव, पुण्णविहुणा न पावति ॥ १५८ ॥

उपाध्यायस्वरूपम्—

सम्मत्तनाणसजमजुत्तो सुत्तत्थतदुभयविहिण्णू ।
आयरियठाणजुग्गो, सुत्त वाए उवज्झाओ ॥ १८६ ॥
थिरसघयणी जाइविसिट्ठकुलव जिइदिओ भद्दो ।
नो हीणअगुवंगो, नीरोगी वायणादक्खो ॥ १८७ ॥
गुरुदत्तपरममतो, दिक्खोवट्ठावणापइट्ठासु ।
दक्खो लक्खगुणेहिं, सजुओ वायगो भणिओ ॥ १८८ ॥
थिरकरणा पुण थेरो, पवित्तिवावारिएसु कज्जेसु ।
जो जत्थ सीयइ जई, सतवलो त थिर कुणइ ॥ १८९ ॥

(श्री तीर्थंकर भगवतनी जेम) आचार्य भगवत पण लोकनु कार्य चिंतवता नथी (अर्थात् जनसमुदायनी सामान्य प्रवृत्तिओमा निरर्थक रस लेता नथी) तेमज विकथा के सलाप (निरर्थक वार्तालाप) करता नथी । नि सगपणामा तत्पर एवा आचार्य तो धर्मध्यानमा एकाकीपणे लीन रहे छे ॥ १५३ ॥

ए प्रमाणे सिद्धातमा आचार्यना नव कल्प तीर्थंकर तुल्य कह्या छे, एवा आचार्यनी आज्ञामा वर्तवु ते अहीं धर्मनी प्रभावना (उन्नति) छे ॥ १५४ ॥

वधा ज लोको 'अरिहत ते देव,' 'सुगुरु ते गुरु' (अथवा जैनमतवर्ती वधा सप्रदायना लोको अरिहतने देव अने पोताना गुरुने सुगुरु)—एम नाममात्रथी कहे छे, पण पुण्यविहीन एवा ए जनो तेमनु शुद्ध स्वरूप जाणी शकता नथी ॥ १५८ ॥

उपाध्यायनु स्वरूप—

सम्यक्त्व, ज्ञान अने चारित्रथी युक्त, सूत्र अर्थ अने ते उभयनी विधिने जाणनार, तेमज आचार्यपदने योग्य एवा उपाध्याय सूत्र भणे छे अने भणावे छे ॥१८६॥

स्थिर(दृढ) सघयणवाळा, उत्तम जाति तेमज उत्तम कुळवाळा, जितेन्द्रिय, भद्र, अगोपागनी विकलताथी रहित, नीरोगी, वाचना आपवामा कुशळ, गुरूए आपेल परममत्रने धारण करनारा, दीक्षा, वडीदीक्षा (उपस्थापना) अने प्रतिष्ठाना कार्योमा निपुण अने लाखो गुणोथी युक्त उपाध्याय कह्या छे ॥ १८७–१८८ ॥

जो कोई साधु प्रवर्तके नियोजेला कार्योमा वळ्वान होवा छता सीदाय (अर्थात् दुर्बल मनवाळो बने) तो तेने (उपाध्याय) स्थिर करे छे। (आ रीते साधुने पोताना कार्योमा) स्थिर करता होवाथी (उपाध्याय) 'स्थविर' कहेवाय छे ॥ १८९ ॥

सम्मत्त-नाण-चरणाइसु वत्थाईसु तह विहारेसु ।
सव्वेसु सहायत्तं, किच्चा संजमथिरो कुणइ ॥ १९० ॥
तव संजमजोगेसु, जो जोगो तत्थ तं पवत्तेइ ।
असुहं च निवत्तेइ, गणतत्तिल्लो पवित्तीओ ॥ १९१ ॥
संघस्सावि पवत्तइ, आयरियाईहि जुंजिओ संतो ।
वच्छल्लपभावणाइसु, महत्तकारी पवित्तीओ ॥ १९२ ॥
सुपुण्णजोगवाही, कालग्गहणपभिइअणुट्ठाणो ।
उज्जमइ उज्जमावइ, जहजुग्गं सो गणी गच्छे ॥ १९३ ॥ इत्यादि ॥

मुनिस्वरूपम्—

गीयत्था संविग्गा, निस्सल्ला चत्तगारवासंगा ।
जिणमयउज्जोयकरा सम्मत्तपभावगा मुणिणो ॥ २२७ ॥
उस्सग्गमग्गनिरया बीयपयनिसेविणो वि कारणओ ।
तो पुण मूलगुणम्मि, उत्तरगुणेसु वि सइ कइया ॥ २२८ ॥
पवज्जं संपत्तं सुपरिक्खिऊण कुलवंता ।
गिहिवासे वि असंगा, ते साहु चरित्तभद्दकरा ॥ २२९ ॥ इत्यादि ॥

[३, अधिकारः]

सम्यक्त्व, ज्ञान अने चारित्रमां तेमज वस्त्रादि विषयोमां के विहारमां—ए सर्वमां सहाय आपीने संयममां स्थिर करे ते ('स्थविर' कहेवाय छे) ॥ १९० ॥

तप, संयम अने योगमां जे साधु जेने योग्य होय (एटले जेवा तप वगेरेने योग्य होय) ते साधुने तेमां प्रवर्तावे अने अशुभ कार्यथी निवारे ते 'प्रवर्तक' गणनी चितावाळो (गच्छनो हितचिंतक) कह्यो छे ॥ १९१ ॥

आचार्ये वात्सल्य प्रभावना वगेरे कार्योमां प्रवर्तकने नियुक्त कर्ये छते, संघने पण तेवा कार्योमां प्रवर्तावे, ते महत्त्वनां कार्यो करनार 'प्रवर्तक' कहेवाय छे ॥ १९२ ॥

संपूर्ण योगोने वहन करेला होय तथा कालग्रहण वगेरे (योगना) अनुष्ठानवाळा होय अने पोते गच्छमां यथायोग्य योगमां उद्यम करे अने बीजाओने करावे ते 'गणी' कहेवाय छे ॥१९३॥

मुनिस्वरूप—

मुनि महात्माओ गीतार्थ, संविग्न, शल्यविनाना, चार प्रकारना गारवथी रहित, श्रीजिनमतनो उद्योत करनारा अने सम्यक्त्वना प्रभावक होय छे ॥ २२७ ॥

(वळी मुनिओ) उत्सर्गमार्गमां निरत होय छे, परंतु कारणवशात् बीजा पदने (एटले अपवादने) सेवनारा होय तेमां पण मूलगुणने विषे अने उत्तरगुणने विषे पण कदाचित् एकाद वार ज (अपवादने सेवे छे) ॥ २२८ ॥

जेओ कुळवान छे, जेओ गृहवासमां पण असंग (अनासक्त) हता अने जेओए प्राप्त थयेल प्रव्रज्यानी सारी रीते परीक्षा करीने (प्रव्रज्या माटे पोतानी शक्ति आदिनो विचार करीने) तेने ग्रहण करी छे, ते साधु महात्माओ चारित्रने सुंदर रीते पाळनारा बने छे। (अथवा बीजो अर्थः— आचार्यादिए सारी रीते परीक्षा कर्या पछी जेओ दीक्षाने पाम्या छे एवा ..) ॥ २२९ ॥

परिचय

आ प्रकरणना कर्ता याकिनीमहत्तरासूनु आचार्यशिरोमणि **श्री हरिभद्रसूरि** महाराज छे। तेमना नामथी कोण अपरिचित होय ? जेन साहित्यमा तेमनु स्थान घणु ज ऊचु छे।

वि स नी छट्ठी शताब्दीमा (मतातरे आठमी शताब्दीमा) तेओ विद्यमान हता एम इतिहासज्ञ पुरुषो कहे छे। तेमनो जन्म मेवाडना चित्तोडनगरना एक राजपुरोहितने त्या थयो हतो अने तेओ बाल्य कालमा ज न्याय, व्याकरण वगेरे अनेक विषयोना पारगत बन्या हता।

तेमणे दीक्षा केवी रीते लीधी वगेरे तेमना चरित्रथी जाणी लेवु। दीक्षा पछी तेमणे जेन दर्शननो सर्वांगीण सुदर रीते अभ्यास कर्यो अने तेओ तेमा निष्णात बन्या। तेओश्रीनी जेन दर्शन प्रत्येनी श्रद्धा अने बहुमान केवा उच्च प्रकारना हता, ते तेमना ग्रथो ज कही आपे छे। विधि प्रत्ये पण तेमनो आदरभाव उच्च कोटिनो हतो। तेओनी कृतिओने जोईने केवळ जन विद्वानो ज मुग्ध बने छे एवु नथी, जेनेतर विद्वानो पण ते कृतिओनी मुक्तकठे प्रशसा करे छे। तेओए आगमो उपर अनेक टीकाओ रची छे अने दर्शन, योग, वगेरे विषयोमा पण अनेक स्वतत्र ग्रथोनु सर्जन कर्यु छे।

जेन समाज उपर तेमना एटला बधा उपकार छे के जेनु वर्णन ज न करी शकाय।

'सबोधप्रकरण'मा देवतत्त्व, गुरुतत्त्व (सुगुरु अने कुगुरुनु स्वरूप), सम्यक्त्व, श्रावकधर्म, सज्ञा, लेश्या, ध्यान, आलोचना वगेरेनु सुदर वर्णन छे। ए ग्रथमाथी आचार्य, उपाध्याय अने मुनि सबधी उपयोगी सदर्भ तारवीने अनुवाद साथे अहीं प्रगट करीए छीए।



प्रवचनसारोद्धार-तट्टीका-संदर्भः ॥

मूलकर्ता–श्रीनेमिचन्द्रसूरिः — टीकाकर्ता–श्रीसिद्धसेनसूरिः ॥

पंचपरमेट्ठिमंते पए पए सत्त संपया कमसो ।
पज्जंतसत्त[दह]क्खरपरिमाणा अट्ठमी भणिया ॥ ७९ ॥

टीका— तत्र '**पंचपरमेट्ठी**'त्यादि, पञ्चपरमेष्ठिमन्त्रे पदे पदे—विवक्षिताभिधेययुक्ते '**नमो अरहंताणं**' इत्यादिके, न पुनः सुप्तिङ्युक्ते, सप्त संपदः क्रमशो विज्ञेयाः, अष्टमी पुनः पर्यन्ते सप्तदशाक्षरप्रमाणा '**मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं**' इति स्वरूपा भणिता गणधरादिभिः, अन्ये तु पर्यन्तवर्तिनीस्तिस्रः सम्पद एव मन्यन्ते, यथा—'**एसो पंच नमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो**' इति षोडशाक्षरप्रमाणा षष्ठी सम्पत्, '**मंगलाणं च सव्वेसिं**' इत्यष्टाक्षरघटिना सप्तमी संपत्, '**पढमं हवइ मंगलं**' इति नवाक्षरनिष्पन्ना अष्टमी सम्पत्, यदुक्तम्—

अंतिमचूलाइतियं सोलसअट्ठनवक्खरजुयं चेव ।
जो पढइ भत्तिजुत्तो सो पावइ सासयं ठाणं ॥

इति, एवमैर्यापथिक्यादिष्वपि सम्पद्विपये यथायथं मतान्तराणि मतिमद्भिर्मन्तव्यानीति ।

अत्र च यद्यपि '**हवइ-होइ**' इत्यनयोरर्थं प्रति न कश्चिद् विशेषः । '**होइ मगल**' इति च पाठे श्लोको नाधिकाक्षरो भवति तथापि '**हवइ**' इत्येव पठितव्यम्, यतो **नमस्कारवलयका**दिग्रन्थेपु—

अनुवाद

पंचपरमेष्ठीमंत्रमां पदे पदे एकेक संपदा कहेली छे। एम सात संपदा अने छेल्ली आठमी संपदा सत्तर अक्षर संख्यानी जणावेली छे ॥ ७९ ॥

टीका—परमेष्ठीमंत्रमा जणावेलां पदो 'नमो अरिहताणं' वगेरेमां सात संपदाओ क्रमशः बतावेली छे। आठमी संपदा 'मंगलाणं च सव्वेसि पढमं हवइ मगलं'—ए सत्तर अक्षरोनी छे, एम गणधर भगवतादिए कहेलुं छे।

बीजा केटलाक छेवटनी त्रण संपदाओ माने छे। जेम के—

१. एसो पचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो—ए सोळ अक्षर प्रमाणनी छठ्ठी सपदा छे।

२. मगलाणं च सव्वेसि—ए आठ अक्षर प्रमाणनी सातमी संपदा छे।

३. पढम हवइ मंगलं—ए नव अक्षरोथी उत्पन्न थयेली आठमी संपदा छे। कह्युं छे के—

छेल्ली त्रण चूलिकामां अनुक्रमे सोळ, आठ अने नव अक्षरोवाळी संपदाओ छे। भक्तिमान् जे जीव तेने भणे छे ते शाश्वत एवा स्थानने–मोक्षने पामे छे।

आ प्रकारे ईर्यापथिकी वगेरेमां पण संपदा विशे बुद्धिमानोए मतांतरो जाणी लेवा।

अही जो के 'हवइ' अने 'होइ' ए बेमा अर्थनी दृष्टिए कोईपण भेद नथी। वळी, 'होइ मगल' ए प्रमाणे पाठमा श्लोक अधिक अक्षरवाळो थतो नथी, (श्लोकना चरणना आठ अक्षरो बराबर जळवाई रहे छे। 'पढम हवइ मगलं'—ए पाठमा जेम नव अक्षर थाय छे तेम।) छता 'हवइ' ए पाठ ज भणवो जोईए; केमके 'नमस्कारवलयक' वगेरे ग्रथोमा कह्युं छे के—

सकलमन्त्ररत्नानामुत्पत्त्याकरस्य प्रथमस्य कल्पितपदार्थकरणैककल्पद्रुमस्य विषविषधरशाकिनीडाकिनी-याकिन्यादिनिग्रहनिरवग्रहस्वभावस्य सकलजगद्वशीकरणाकृष्ट्याद्यव्यभिचारिप्रौढप्रभावस्य चतुर्दशपूर्वाणां सारभूतस्य पञ्चपरमेष्ठिनमस्कारस्य व्याख्याया प्रस्तुताया तथाविधप्रयोजनोद्देशेन यन्त्रपद्मादिविरचनाया प्रस्तुताया यदा द्वात्रिंशद्दल पद्ममालिख्यते प्रतिदल च श्लोकसम्बन्ध्येकैकमक्षर निवेद्यते तदा नाभौ त्रयस्त्रिंशत्तममक्षरमवश्य निवेश्य अन्यथा नाभिभाग शून्य एव स्यात्, मात्रयापि च हीने यन्त्रपद्मादौ लिख्यमाने महामन्त्रे तत्साध्यविशिष्टाभीष्टपरिपूर्णफलानवाप्तेरिति 'हवइ'इत्ययमेव पाठो युक्त । तथा चैतत् संवादिपूर्वाचार्यकृतप्रकरणवचनम्—

> अट्ठसट्ठि अक्खरपरिमाणु, जिणसासणि नवकार पहाणु ।
> अतिमचूला तिन्नि पसिद्धा, सोलस अट्ठ-नवक्खररिद्धा ॥

इत्यादि, ततो नात्राभिमानवर्तिन केनापि कृतमिति विमर्शनीय निर्मत्सरैरिति । तथा प्रथम पदेषु ज्ञातेषु यस्या सपदि यावन्ति पदानि भवन्ति तस्या तावन्ति सुखेनैव ज्ञायन्त इति ॥

(पृ० १५१६)

सर्व मत्रजोनी उत्पत्तिनी खाणस्वरूप, श्रेष्ठ, इच्छित पदार्थोने सिद्ध करवामा अद्वितीय कल्पद्रुम समान, विष, विषधर-सर्प, शाकिनी, डाकिनी, याकिनी आदिनो निग्रह करवामा स्वतत्र स्वभाववाळा, समग्र जगतनु वशीकरण, आकर्षण वगेरे करवामा अव्यभिचारी प्रौढ प्रभाववाळा, चौदपूर्वोना सारभूत—एवा पचपरमेष्ठीनमस्कारनी प्रस्तुत व्याख्यामा एवा प्रकारनो ('हवइ' पाठ भणवानो) उद्देश छे । कारणके यत्रना पद्मो वगेरेनी रचना समये बत्रीश दलनु पद्म बनाववामा आवे छे तेमा प्रत्येक दल-पत्रमा श्लोक सबधी एकेक अक्षर मूकवामा आवे छे त्यारे नाभिमा-वच्चे तेत्रीशमो अक्षर अवश्य मूकवो जोइए, जो एम करवामा न आवे तो वचलो भाग खाली रहे । यत्रपद्मादिमा महामत्रनी एक पण मात्रा ओछी मूकवामां आवे तो तेना साध्यरूप विशिष्ट जे सकल्प तेना पूरेपूरा फळनी प्राप्ति थाय नहीं । आथी 'हवइ' ए प्रकारनो ज पाठ उचित छे । वळी, पूर्वाचार्ये रचेला प्रकरणमा आ सबधमा जणाव्यु छे के—

अडसठ अक्षरोनु जेनु परिमाण छे एवो नवकार जिनशासनमा प्रधान-मुख्य छे । छेल्ली त्रण चूलिकाओ प्रसिद्ध छे जे अनुक्रमे सोळ, आठ अने नव अक्षरोथी समृद्ध छे ।

आ प्रकारे कहेलु छे । आथी आ वचन कोइए सर्वथा नाथी ऊठता कहेलु नथी एम मत्सर-अभिमान रहित एवा विद्वानोए विचारवु जोइए । वळी, प्रथम पदो जाणता, जे सपदामा जेटला पदो थाय छे ते सपदामा तेटला पदो सुखपूर्वक जाणी शकाय छे ।

परिचय

श्रीनेमिचन्द्रसूरिए 'प्रवचनसारोद्धार' नामे प्रकरणग्रथ बारमी शताब्दीमा रच्यो छे, जेमा प्रवचन-शासनना विविध पदार्थोनो सग्रह कर्यो छे । तेना उपर तेरमा शतकमा थयेला श्रीसिद्धसेन-सूरिए मोटी टीका रची छे ।

ए ग्रथमाथी नमस्कार सबधी सदर्भ टीका सहित नारवीने अनुवाद साथे अहीं प्रगट कर्यो छे ।

आ सदर्भमा नमस्कारनी सपदाओ अने 'होइ' 'हवइ' पाठनी मीमासा करी निर्णय आप्यो छे अने तेत्रीस अक्षरनी चूलिकाना ध्यानना सुदर प्रक्रिया बतावी छे ।

आ नेमिचन्द्रसूरिए बीजा अनेक ग्रथोनी रचना करी छे ।

[३४]

सिरिसिद्धरिसिसरइय 'चंदकेवलिचरिय' संदब्भो ॥

(१)

ससिधवला अरिहंता, सिद्धा वरपम्मरागसंकासा ।
कणगाभा आयरिआ, उवज्झाया पुण पियंगुनिहा ॥ ४५ ॥
अंजणमणिप्पहा तह, लोए सव्वे वि साहुणो विविहा ।
इय परमेट्ठिपयाइं, पंच वि झाइज्जइ विहिणा ॥ ४६ ॥
एयाण नमुक्कारो, पंचण्हं होइ मंगलं पढमं ।
उड्ढमहोतिरियम्मि वि, एसु च्चिय सासओ मंतो ॥ ४७ ॥
एरवएहिं पंचहिं, पंचहिं भरहेहिं संपढिज्जइ अ ।
अईयअणागयकाले, एसो च्चिय जिणनमुक्कारो ॥ ४८ ॥
सट्ठिसयं विजयाणं, पवराणं जत्थणाइजिणधम्मो ।
सासयकालो वट्टइ, तत्थ विमो (विसो) चेव नवकारो ॥ ४९ ॥[1]
जम्मि वासरे पढिज्जइ, जेणिह जीयस्स होइ फलरिद्धी ।
अवसाणे वि पढिज्जइ, जेण मओ सग्गइं जाइ ॥ ५० ॥[2]

अनुवाद

(१)

(श्रीचंद्रकुमारे मुनि पासेथी सम्यक्त्व स्वीकार्युं ते वखते मुनिए नवकार विषे जणाव्युं के हे राजन्!—)

अरिहंतो चंद्रमा जेवा श्वेतवर्णवाळा छे, सिद्धो श्रेष्ठ पद्मराग जेवा रक्तवर्णवाळा छे, आचार्यो सुवर्ण जेवा (पीळा) वर्णवाळा छे। वळी, उपाध्यायो प्रियंगु जेवा (नील) वर्णवाळा छे अने सर्व विविध साधुओ पण अंजनमणि जेवा श्याम वर्णवाळा छे। आ पांचेय परमेष्ठिपदोनुं विधिपूर्वक ध्यान करवुं जोईए ॥ ४५–४६ ॥

ए पंच-परमेष्ठीने करेलो नमस्कार प्रथम मंगल छे अने ऊर्ध्वलोक, अधोलोक तथा तिर्यग्लोकमां पण आ ज शाश्वत मंत्र छे ॥ ४७ ॥

पांच भरत अने पांच ऐरावतमां भूत अने भविष्यकाळमां पण आ जिन-नमस्कारनुं ज सम्यक् पठन कराय छे ॥ ४८ ॥

प्रवर एवा एकसो ने साठ विजयो के ज्यां जिन धर्म अनादि काळथी शाश्वतरूपे प्रवर्ते छे, त्यां पण आ ज नमस्कार छे ॥ ४९ ॥

जन्मदिवसे आ नमस्कार-मंत्र भणाय तो जीवने (आ जन्ममां) समृद्धि प्राप्त थाय छे अने मरण समये भणाय तो मृत जीव सद्गतिमां जाय छे ॥ ५० ॥

१ सरखावो—'पंचनमुक्कार फल' गाथा. १४. २ सरखावो—'पंचनमुक्कार फल' गाथा ५,६.

आवईहिं पि पढिज्जइ, जेण य लघेइ आवइसयाइं।
रिद्धीइ पि पढिज्जइ, जेण य सा होइ नित्थिण्णा ॥ ५१ ॥[1]
जह अहिणा दट्ठाण, गारुडमतो विस पणासेइ।
तह नवकारो मतो, पावविस नासइ असेस ॥ ५२ ॥
कि एस कामकुभो, कि वा चिंतामणीहुय नवकारो।
किं कप्पतरू एसो, न हु न हु ताणपि अहिययरो ॥ ५३ ॥[3]
कामघडो देवमणी, सुरुक्खो एगजम्मसुहहेऊ।
नवकारो पुण पवरो, सग्गपवग्गाण दायारो ॥ ५४ ॥[4]
सत्तरि कोडाकोडीसायरमाणे इमम्मि मोहणीये।
कोडाकोडी सेसे, नवकारो * मुहजिओ होइ ॥ ५५ ॥
ज किपि परमतत्त, परमप्पयकारण च ज किंचि।
तत्थ इमो नवकारो, झाइज्जइ परमजोगीहिं ॥ ५६ ॥
पवन-हरिया ऽरिहा (ॐ ह्रीँ अर्हं) इइ, मतहनीयाणि सप्पहावाणि।
सव्वेसिं तेसिं मूल, इक्को नवकारवरमतो ॥ ५७ ॥

आपत्तिओमा पण भणाय तो सेकडो आपत्तिओथी पार उतारे छे। सपत्तिमा भणाय तो सपत्तिओनो निस्तार थाय छे ॥ ५१ ॥

जेम सर्पवडे करडायेलाना विषनो गारुडमत्र नाश करे छे तेम नवकार-मत्र समग्र पापरूपी विषनो नाश करे छे ॥ ५२ ॥

शु आ (नमस्कार) कामकुभ छे? अथवा चिंतामणि छे? अथवा तो आ कल्पतरु छे? नहि, नहि, तेनाथी पण अधिक फळ आपनारो छे ॥ ५३ ॥

केमके कामघट, चिंतामणि के कल्पवृक्ष तो एक जन्म माटे ज सुखना कारणभूत छे, पण अत्युत्तम नमस्कार तो स्वर्ग अने मोक्षने आपनारो छे ॥ ५४ ॥

सित्तेर कोडाकोटी सागरोपम मोहनीयकर्ममाथी एक कोडाकोटी सागरोपम कर्म बाकी रहे त्यारे जीव आ नमस्कारने उन्मुख बने छे (नवकारने पामे छे) ॥ ५५ ॥

जे कइपण परमतत्त्व छे, जे कइ पण परमपदनु कारण छे, ते सर्वनी आदिमा आ नमस्कारनु उत्कृष्ट योगीओ वडे ध्यान कराय छे ॥ ५६ ॥

प्रणव ॐ, ह्रींकार ह्रीँ तथा अर्हद्बीज अर्हं वगेरे जे प्रभावशाळी बीजमत्रो छे ते सर्वेनु मूळ एक श्रेष्ठ नवकार-मत्र छे ॥ ५७ ॥

---

१ सरखावो— पचनमुक्कार फल गाथा ५ ६　२ सरखावो—'पचनमुक्कार फल' गाथा ८　३ सरखावो— 'पचनमुक्कार फल' गाथा ९　४ सरखावो—'पचनमुक्कार फल' गाथा १०　* 'नवकार मुहजि(जी)ओ होइ' प्रत्यन्तरे।

जो गुणइ तत्थ लक्खं, पूएइ विहीइ जिणनमुक्कारं।
तित्थयर-नामगुत्तं, सो बंधइ नत्थि संदेहो ॥ ५८ ॥[1]
अट्ठेवय अट्ठसया, अट्ठसहस्सं च अट्ठकोडीओ।
जो गुणइ भत्तिजुत्तो, सो तइयभवे लहइ सिद्धिं ॥ ५९ ॥
करआवत्तिहिं जो, पंचमंगलं साहुपडिम (१२) संखाए।
नववारा आवत्तइ, छलंति तं नो पिसायाई ॥ ६० ॥
न य तस्स किंचि पहवइ, डाइणि-वेयाल-रक्ख-मारिभयं।
नवकारपहावेण य, नासंति असेसदुरियाइं ॥ ६१ ॥
थंभेइ जलं जलणं, चिंतियमित्तो वि पंचनमुक्कारो।
अरि-मारि-चोर-राउल-घोरुवसग्गं पणासेइ ॥ ६२ ॥
अडवि-गिरि-जलहिमज्झे, भयं पणासेइ चिंतिओ एसो।
रक्खइ भवियसयाइं, माया जह पुत्त भंडाइं (डिंभाइं) ॥ ६३ ॥
आहि-जर-वाहि-तक्कर-हरि-करि-संगाम-विसहरभयाइं।
नासंति तक्खणेणं, जिणनवकारप्पहावेणं ॥ ६४ ॥
हियय गुहाए नवकारकेसरी जाण संठिओ निच्चं।
कम्मट्ठगंठि दोघट्टघट्टयं ताण परिणट्ठं ॥ ६५ ॥

तेमां जे (भविक) आ जिन-नमस्कार-मंत्रनो तीर्थमा लाख वार जाप करे छे अने विधिसर पूजन करे छे, ते तीर्थकर नाम-गोत्रकर्मने बांधे छे तेमां संदेह नथी ॥ ५८ ॥

आठ, आठसो, आठ हजार के आठ करोडवार जे भक्तिपूर्वक (नमस्कार-मंत्र) गणे छे, ते त्रीजा भवमा सिद्धिने प्राप्त करे छे ॥ ५९ ॥

करावर्त्त (शंखावर्तादि) वडे वार संख्याथी नव वार जे पंच-मंगल-नमस्कारनो जाप करे छे, तेने पिशाच वगेरे बाधा पहोचाडता नथी ॥ ६० ॥

अने डाकिनी, वेताल, राक्षस के मरकी वगेरेना भयो तेने कंइ पण करी शकता नथी, तथा आ नमस्कार-मंत्रना प्रभावथी सघळां पापो (अशुभ कर्मो) नाश पामे छे ॥ ६१ ॥

आ पच-नमस्कार चिंतनमात्रथी ज जल अने अग्निने थंभावे छे, तथा शत्रु, महामारी, चोर अने राजकुलवडे थता घोर उपद्रवनो नाश करे छे ॥ ६२ ॥

जगलमां, पर्वत उपर के समुद्रनी मध्यमां आवेला भयनो आ नमस्कार स्मरणमात्रथी नाश करे छे अने जेम माता पोतानां नानां बाळकोनु रक्षण करे छे, तेम नवकार सेंकडो भविकोनु रक्षण करे छे ॥ ६३ ॥

आ जिन-नमस्कारना प्रभावथी आधि-मानसिक चिंता, ज्वर, अन्य व्याधि, चोर, सिंह, हाथी संग्राम, सर्प आदिना भयो तत्काल नाश पामे छे ॥ ६४ ॥

जेमनी हृदयरूपी गुफामां नमस्काररूपी केसरी सिंह निरतर वसे छे, तेमना आठ कर्मनी ग्रंथिओरूप हाथीओनो समूह नासी जाय छे ॥ ६५ ॥

---

१ सरखावो—'पंचनमुक्कार फल' गाथा १२

नवकारइक्कअक्खर, पाव फेडेइ सत्तअयराण ।
पन्नास च पएण, पणसय सागर समग्गेण ॥ ६६ ॥
जे के वि गया मुक्खं, गच्छंति य केइ कम्ममलमुक्का ।
ते सव्वे वि य जाणसु, जिणनवकारप्पहावेण ॥ ६७ ॥
जिणसासणस्स सारो, चउदसपुव्वाण जो समुद्धारो ।
जस्स मणे नवकारो, ससारो तस्स किं कुणइ ? ॥ ६८ ॥
परमेट्ठिनमुक्कारो, पणतीसक्खरजुओ सया पवरो ।
एसो य महामंतो, तुट्ठो चिंतियफल देई ॥ ६९ ॥
[श्रीचन्द्रकेवलिचरित्रे द्वितीयोऽधिकारः, पृष्ठ २४]

[प्रकाशक जैनधर्म प्रसारक सभा, भावनगर वि स १९९३]

(२)

तथापि प्राणनाथ ! प्राक्, श्रुत श्रीगुरुवक्त्रत. ।
नवकारमहामन्त्रमाहात्म्यमवधार्यताम् ॥ ४७ ॥
शीर्षे कुर्या. शिरस्क च, मुखे मुखपट तथा ।
काये च कवच वज्रमायुध हस्तयोर्दृढम् ॥ ४८ ॥

नमस्कारनो एक अक्षर सात सागरोपमना पापने दूर करे छे, एक पदथी पचास सागरोपमनु पाप अने समग्र (सपूर्ण) नवकारवडे पाचसो सागरोपमनु पाप दूर थाय छे ॥ ६६ ॥

(आज सुधी) जे कोइ मोक्षमा गया छे, अने आजे पण कर्ममलथी रहित थइने जे कोइ मोक्षमा जाय छे, (तथा भविष्यमा जे कोई पण मोक्षमा जशे,) ते सर्वे आ जिन-नमस्कारना प्रभावथी ज, एम जाणवु ॥ ६७ ॥

जिन-शासननो सार अने चौद पूर्वनो समुद्धार एवो नमस्कार जेना मनमा रमे छे, तेने ससार शु करी शके ? ॥ ६८ ॥

पात्रीश अक्षरोथी युक्त आ पच परमेष्ठी नमस्कार सदा उत्कृष्ट महामत्र छे अने (आराधना वडे) तुष्ट थयेलो आ नमस्कार इच्छित फळने आपे छे ॥ ६९ ॥

(२)

तथापि हे प्राणनाथ ! पूर्वे श्रीगुरु महाराजना मुखथी साभळेल नमस्कार-महामत्रना महिमानु तमे अवधारण करो । (४७)

('नमो अरिहताण' ए पदथी) मस्तक उपर शिरस्त्राण एटले लोढानो टोप छे, ('नमो सिद्धाण' ए पदथी) मुख पर मुखपट एटले बुकानी छे, ('नमो आयरियाण' ए पदथी) शरीर पर कवच एटले बख्तर पहेरेलु छे, ('नमो उवज्झायाण' ए पदथी) बन्ने हाथोमा वज्र जेवु मजबूत

पादयोः पादरक्षां चामीभिः पञ्चपदैः क्रमात् ।
आत्मरक्षा विधातव्या, चतुश्चूलापदैस्तथा ॥ ४९ ॥
शिला वज्रमयी भूमौ, वप्रो वज्रमयो बहिः ।
खातिकाङ्गारसंपूर्णा, वप्रोर्ध्वं वज्रमण्डपः ॥ ५० ॥
कर्तव्या बाह्यरक्षेयं, दिनं प्रति निरन्तरम् ।
सङ्ग्रामे सङ्कटे मार्गे, रक्षां कुर्या विशेषतः ॥ ५१ ॥
एतन्मन्त्राधिराजस्य, प्रभावाद् यान्ति दूरतः ।
चौरारि-व्याल-वेतालादिभयान्यखिलान्यपि ॥ ५२ ॥
नित्यमस्माच्च जायन्ते, संपदो हि पदे पदे ।
तदेतद्ध्यानतो भद्रं, वर्ततां तव वर्त्मनि ॥ ५३ ॥

[श्रीसिद्धर्षिरचित–श्रीचन्द्रकेवलिचरितस्य द्वितीयाधिकारे संदर्भः ।]
[प्रकाशक: जैनधर्म प्रसारक सभा, भावनगर, वि. सं. १९९२]

हथियार छे अने ('नमो लोए सव्वसाहूण' ए पदथी) पगमा रक्षा माटेनी मोजडीओ छे; एम धारीने क्रमशः आ पांचे पदोथी आत्मरक्षा करवी। अने ए ज प्रकारे चार चूलिकापदोथी—एटले ('एसो पंचनमुक्कारो' ए पदथी) भूमितल उपर वज्रमयी शिला छे, ('सव्वपावप्पणासणो' ए पदथी) बहार वज्रमय किल्लो छे, ('मंगलाणं च सव्वेसिं' ए पदथी) अंगाराथी भरेली खाई छे अने ('पढम हवइ मगलं' ए पदथी) किल्ला उपर ऊचो वज्रनो मंडप छे एम धारीने प्रतिदिन निरतर आ प्रकारे 'बाह्यरक्षा' करवी। अने युद्धमां, संकट वखते, मार्गमां विशेष करीने रक्षा करवी। (४८ थी ५१)*

आ मन्त्राधिराजना प्रभावथी चोर, शत्रु, सर्प, वेताल वगेरेथी थता सर्व भयो दूरथी ज चाल्या जाय छे। (५२)

आ मंत्रथी हमेशा पगले पगले संपत्तिओ प्राप्त थाय छे; तेथी नमस्कारना आवा प्रकारना ध्यानथी प्रयाणमार्गमां तमारु कल्याण थाओ। (५३)

परिचय

'उपमितिभवप्रपचाकथा' नामना विशाळकाय कथाग्रथनी रचना करनार अने एवा बीजा अनेक ग्रथोना कर्ता तरीके प्रसिद्धि पामेला श्रीसिद्धर्षिगणिए 'चंद्रकेवलिचरित' नामे ग्रंथनी रचना वि. सं. ९७४ मा करी छे। तेमांथी नमस्कारविषयक बे संदर्भो, जेमां प्रथम संदर्भ प्राकृतमा अने बीजो संदर्भ संस्कृतमा छे, ते तारवीने अहीं अनुवाद साथे प्रगट कर्या छे।

आ ए ज सिद्धर्षिगणि छे के जेओ बौद्धो पासे तेमना सिद्धांतो भणवा गयेला त्यारे श्री हरिभद्रसूरिए रचेली 'ललितविस्तरावृत्ति'थी प्रतिबोध पामीने बौद्ध बनतां बची गयेला। श्रीहरिभद्रसूरिए करेला आ उपकारनो तेमणे पोताना ग्रंथमां तेमने 'धर्मबोधकर' कही मानभेर उल्लेख कर्यो छे।

---

* सरखावो—संस्कृत विभागमा 'आत्मरक्षानमस्कारस्तोत्र'।

[३५]

सिरिदेवभद्दसूरिरइय'कहारयणकोस'संदब्भो ॥

(१)

कयसम्मत्तथिरत्तो, जइ वि नरो तह वि वछिय वत्थु ।
पचनमोकारे चिय, भत्तिपरो पावए परम ॥ १ ॥
अरहंता सिद्धा सूरिणो य उवज्झाय साहुणो चेव ।
परमिट्ठिणो हु एते, एयन्नमण नमोक्कारो ॥ २ ॥
एत्तो च्चिय एयाण, कीरंतो सायर नमोक्कारो ।
एसो समग्गकल्लाणकारण, जायइ जियाण ॥ ३ ॥
एक्केक्कमक्खर पि हु, पचनमोक्कारसतिय जीवो ।
बहु-बहुतर-बहुतम पावखयवसा लहइ भावेण ॥ ४ ॥
सूरो इव तिमिरभर, पहणइ चिंतामणि व्व दोगच्च ।
चिंतियमित्तो य इमो, भयवग्ग नासइ समग्ग ॥ ५ ॥

अनुवाद

(१)

सम्यक्त्वमा स्थिर वृत्तिवाळो पुरुष पण 'पच-नमस्कार' प्रत्ये भक्तिवाळो होय, तो ज परमवाञ्छित पामे छे ॥ १ ॥

अरिहतो, सिद्धो, आचार्यो, उपाध्यायो अने साधुओ ए पाच ज परमेष्ठीओ छे। एमने नमन करवु ते नमस्कार छे ॥ २ ॥

ए पाच परमेष्ठीओ होवाना कारणे ज एमने आदर विनय सहित करवामा आवतो ए नमस्कार जीवोना समग्र कल्याणना कारणभूत बने छे ॥ ३ ॥

आ पचनमस्कारना एक एक अक्षरने पण जीव भावपूर्वक ज्यारे ज पामे छे के त्यारे बहु-बहुतर-बहुतम पापक्षय थई गयो होय ॥ ४ ॥

जेम सूर्य अधकारना समूहनो नाश करे छे, चिंतामणि-रत्न दारिद्र्यने दूर करे छे तेम चिंतववा मात्रथी ज आ नमस्कार सर्व भयोना समूहने समग्रपणे नाश करे छे ॥ ५ ॥

तहा हि—

नाभिद्दवइ दवो तं, दूमइ न मयाहिवो सुकुद्धो वि ।
सप्पो वि नाभिसप्पइ, न वि चंपइ मत्तपीलू वि ॥ ६ ॥
सत्तू वि तं न बाहइ, न विराहइ भूय-साइणिगणो वि ।
चोरेइ तक्करो न वि, न कमइ तं वारिपूरो वि ॥ ७ ॥
अहवा किमित्तिएणं ? इहपरलोए स वंछियं लहइ ।
जस्स मणे नवकारो, 'सिरिदेवो' एत्थुदाहरणं ॥ ८ ॥
[कहारयणकोसो—सामन्नगुणाहिगारो, पृष्ठ–५५]

(२)

ता तज्जुग्गयमुवलब्भ, साहुणा चंदणं व मलयाओ ।
नंदणवणाउ कप्पद्दुमं, व जलहीउ अमयं व ॥ १३१ ॥
पारगयपणीयाओ, पावयणाओ पहाणओ परमो ।
'पंचपरमेट्ठिमंतो', उवइट्ठो इट्ठसिद्धिकरो ॥ १३२ ॥

जेमके—

(जे पुरुष आदरपूर्वक अने विनय-सहित पंच-परमेष्ठीओने नमस्कार करे छे तेने) दावानल स्पर्शी शकतो नथी, क्रोधे भरायेलो सिंह पण तेने ईजा करी शकतो नथी, सर्प पण तेनी पासे आवी शकतो नथी, मदोन्मत्त हाथी पण तेने हानि करी शकतो नथी, शत्रु पण तेने पीडा करी शकतो नथी, भूत अने शाकिनीओनो समुदाय पण तेने डरावी शकतो नथी, चोर तेने लूंटी शकतो नथी अने पाणीनुं पूर पण तेने ओळंगी शकतुं नथी ॥ ६-७ ॥

अथवा आटलाथी ज शुं ? जेना मनमां नमस्कार छे, ते आ लोक अने परलोकमां पोतानु वांछित पामे छे। **श्रीदेव राजा** अहीं दृष्टांत छे ॥ ८ ॥ *

(२)

त्यार पछी ए मुनिराजे ते(राजा)नी योग्यता जाणीने मलयपर्वत उपरथी चंदन, नंदनवनमांथी कल्पवृक्ष अने समुद्रमांथी अमृतनी जेम श्रीतीर्थंकर भगवते प्ररूपेला उत्तम प्रवचनमांथी इष्टसिद्धि करनार परम पंचपरमेष्ठिनमस्कार-मंत्रने उपदेश्यो ॥ १३१-१३२ ॥

---

* दृष्टांत माटे जुओ—'कथारत्नकोष', कथानक १० मुं

सम्मत्तनिचलत्त परम नरनाह ! नवरि कायव्व ।
उच्छुलय व्व न किरिया, एयनिउत्ता फल देइ ॥ १३३ ॥
अन्न च 'पच-मगल-सुयखधो' एस गिज्झए समए ।
पढमुचारो सत्थाण, दिव्वमताण पणवो व्व ॥ १३४ ॥
एसो य उद्दिसिज्जइ जिणभवणे नदिविरयणापुव्व ।
तो कीरतुववासा पढम चिय पच एगसरा ॥ १३५ ॥
तो अट्ठ अबिलाइ दिज्जइ नवकारवायणा तत्तो ।
तिहिं उववासेहिं ततोऽणुन्नवणा कीरइ इमस्स ॥ १३६ ॥
इह साहुपए नव अक्खराइ पचेव हुति सिद्धपए ।
अरिहताइपएसु, पत्तेय सत्त सेसेसु ॥ १३७ ॥
अरिहताई पच वि, पयाइ बीयाइ परममताण ।
एयाणुवरिं चूला, 'एसो पच'त्ति एमाई ॥ १३८ ॥
तेत्तीसक्खरमाणा, इमा य तेत्तीसपयडणपहाणा (?) ।
एव [एस] समप्पइ, फुडमक्खरअट्ठसट्ठीए ॥ १३९ ॥

हे राजन् ! तो पण सम्यक्त्वमा निश्चलपणु उत्तम रीते धारण करवु जोईए । शुद्ध समकित विनानी क्रिया शेरडीनी लतानी माफक फळ आपती नथी ॥ १३३ ॥

वळी, दिव्य मत्रोमा प्रणवनी जेम जिनमत शास्त्रोना प्रथम उच्चार तरीके 'पचमगलमहाश्रुतस्कध' ग्रहण कराय छे ॥ १३४ ॥

श्रीजिनमदिरमा नदिनी रचना करीने, पचपरमेष्ठी नमस्कारनी उद्देशविधि करी शकाय छे । ते माटे वाचना लेनारे प्रथम एकीसाथे पाच उपवास करवाना होय छे । त्यार पछी आठ आयबिल करवाना होय छे । आटलु तप कर्या पछी नवकारनी वाचना आपी शकाय छे । ते पछी त्रण उपवासे नवकारनी अनुज्ञा कराय छे ॥ १३५ १३६ ॥

आ मत्रमा साधुपदमा नव अक्षरो छे अने सिद्धपदमा पाच ज अक्षरो छे । बाकीना 'अरिहत' वगेरे पदोमा सात सात अक्षरो छे । जे कोई उत्तम मत्रो छे ते बधाना बीजरूप आ 'अरिहत' वगेरे पाचे पदो छे । ते पाच पदो उपर 'एसो पचनमुक्कारो' वगेरे चूलिका छे ॥ १३७-१३८ ॥

अने आ चूलिका तेत्रीश अक्षर प्रमाण छे । ए प्रमाणे (उपरना पाचे पदोना पात्रीश अक्षरो साथे) आ पचपरमेष्ठी नमस्कारमत्र अडसठ अक्षरो वडे विधिपूर्वक सपूर्ण थाय छे ॥ १३९ ॥

एवं पढिओ एसो, विहीए लक्खेण सेय-सुरहीणं ।
कुसुमाणं पुण जविओ, भव्वेण तदेगचित्तेणं ॥ १४० ॥
वियरइ भुवणब्भरहियं, तित्थंकर-चक्कि-गणहरपयं पि ।
जह तह सुलभाणं, पुण का वत्ता सेसवत्थूण ? ॥ १४१ ॥
अंतोऽरिहंतविन्नास दाहिणावत्त-सिद्धमाईणं ।
ज्झाणं व एत्थ किच्चं, निच्चं परमेट्ठिमुद्दाए ॥ १४२ ॥
करआवत्ते जो पंचमंगलं साहुपडिमसंखाए ।
नव वारा आवत्तइ, छलंति नो तं पिसायाई ॥ १४३ ॥
एयप्पभावमहवा, सव्वं सव्वन्नुणो चिय मुणंति ।
तल्लेसुद्देसं पुण, पत्थिव ! तुह किं पि उवइट्ठं ॥ १४४ ॥

(कहारयणकोसो—सामन्नगुणाहिगारो—कथानक १० मुं. पृ. ६२ अ)

(३)

अह केवलिणा सिट्ठो, सिरिदेवनराहिवस्स माहिंदे ।
सुरसिरिलाभो सुजवियपंच-नमोक्कारमाहप्पा ॥ २३१ ॥
तत्तो सुकुलुप्पत्ती, कइवयभवभमणओ य सिवलाभो ।
इय 'पंचनमोकारो,' सारो नीसेसधम्मस्स ॥ २३२ ॥

आ प्रमाणे आ नमस्कार-मंत्रने विधिपूर्वक भणीने जे भव्यात्मा लाख श्वेत अने सुगधी पुष्पो चढाववापूर्वक एकाग्र-चित्तथी जपे छे तेने ते नमस्कार-मत्र त्रण भुवनमा गौरवशाली एवा तीर्थकरपद, गणधरपद के चक्रवर्तिपदने पण आपे छे। तो पछी जे अल्प प्रयत्ने सुलभ एवी बीजी वस्तुओनी शी कथा ? ॥ १४०-१४१ ॥

वच्चे अरिहंत-पदने स्थापवु अने दक्षिणावर्तना क्रमथी सिद्ध वगेरेना पदोने गोठववां। आ रीते परमेष्ठी मुद्रा करीने ए नवकार-मंत्रनु नित्य ध्यान करवु जोईए ॥ १४२ ॥

वळी, जे मनुष्य अंगुलिओना आवर्तवडे वार वार नवकार नव वखत गणे छे तेने पिशाच वगेरे छळी शकता नथी ॥ १४३ ॥

आ नमस्कार-मंत्रना पूरेपूरा प्रभावने तो सर्वज्ञ भगवान ज जाणे छे। हे राजन् ! में तो तने तेनो कांईक लेशमात्र प्रभाव ज कही वताव्यो छे ॥ १४४ ॥

(३)

ते पछी केवलीए कह्यु के—सारी रीते जपेला पच-नमस्कार-मंत्रना माहात्म्यथी श्रीदेव राजाने माहेन्द्र नामना स्वर्गमां देवताई ऋद्धिनी प्राप्ति थई छे ॥ २३१ ॥

त्यांथी च्यव्या पछी ते कोई सारा कुळमां जन्म लेशे अने पछी केटलाक (थोडाक) भवोमां फरीने तेने निर्वाणनो लाभ थशे, ए प्रमाणे पंच नमस्कार-मंत्र समग्र धर्मनो सार छे ॥ २३२ ॥

*किञ्च—

एकैकोऽप्यभिवाञ्छितानि वितरेद् ध्यातोऽर्हदादिर्मुदा,
सज्ज्येष्ठाः परमेष्ठिनः किमु पर पञ्चापि चानुस्मृता' ?
तत् कः स्वस्य रिपुः ? स्वरिच्छति न कः ? काङ्क्षेत मोक्ष न कः ?
योऽस्मिन् श्रीपरमेष्ठिपञ्चकनमस्कारे न बद्धादरः ॥ १ ॥
किं दानै' ? किमु भूरिशास्त्रपठनैः ? किं देवपादार्चनैः ?
किं ध्यानैस्तपसा च किं ? किमथवा कूटैर्विवेकैरपि ?
चेत् ससारसरित्पतौ तरिसमा नैवास्ति कल्याणभू-
र्भक्ति' श्रीपरमेष्ठिपञ्चकनमस्कारे नृणा निश्चला ॥ २ ॥
वह्न्युद्दीप्तगृहादनर्घमणिवज्जन्येष्वमोघास्त्रवत्,
सिन्धौ मज्जदनल्पनौफलकवत् पातेऽथवाऽऽलम्बनम् ।
गृह्णन् पञ्चनमस्कृतिं सकलमप्यन्यद् विहायादराद्,
जीवो जीवितविघ्नकेऽपि न भवत्येवापदामास्पदम् ॥ ३ ॥
स्थिति-गति सुख दुःख-स्वप्न निद्रान्त हर्म्याऽ
टवी(वि)-निशि दिनपातोत्पातवेलासु येषाम् ।
व्रजति न परमेष्ठिश्रेष्ठमन्त्रो मनस्त-
स्त इह भवसमुद्राद् द्राग् बहिष्ठाद् भवन्ति ॥ ४ ॥
(कहारयणकोसो – कथानक १० मु. पृ. ६६ आ)

श्री अरिहतादि एक एकनु पण प्रसन्नतासहित ध्यान करवामा आवे तो ते अभिवाञ्छितोने आपे छे, तो पछी अनुक्रमे वारवार स्मरण करायेला सत्पुरुषोमा ज्येष्ठ एवा पाचेय परमेष्ठिओ शु न आपे ?

तेथी, पोतानो शत्रु कोण छे ? स्वर्गने कोण इच्छतो नथी ? मोक्षनी आकांक्षा विनानो कोण छे ? (उत्तर—) जे आ पचपरमेष्ठिनमस्कारमा आदरवाळो नथी ते ॥ १ ॥

ससार-समुद्रमा नौका समान अने सर्व कल्याणोनी जन्मभूमि एवा श्रीपचपरमेष्ठी नमस्कारने विषे भक्ति नथी तो दान देवाथी शु ? घणा शास्त्रो भणवाथी शु ? देवोनी अर्चनाथी शु ? ध्यान धरवाथी शु ? तप तपवाथी शु ? अने कृत्रिम विवेक करवाथी पण शु ? ॥ २ ॥

आगथी सळगता घरमाथी जेम कोई महामूल्य रत्नोने ज साथे राखे, लडाईमा अमोघ अस्त्रने ज साथे राखे, दरियामा बूडतो माणस जेम होडीना मोटा पाटियानो ज आश्रय ले, पडतो माणस आलबनने ज पकडी ले तेम जीवसग्राममा जीव बीजु बधु छोडीने एक मात्र पचनमस्कार मत्रनो ज आदरपूर्वक आश्रय ले तो ते कदी पण आपत्तिओनु भाजन बनतो नथी ॥ ३ ॥

बेसता, चालता, सुखमा, दुःखमा, स्वप्नमा (ऊघता), जागता, घरमा, जगलमा, रात्रे, दिवसे, पतन वखते के उत्थान वखते (अर्थात् गमे ते प्रसगे) जेमना मनमाथी (पच) परमेष्ठी–महामत्र दूर नथी थतो तेओ ससार-समुद्रमाथी शीघ्र बहार थाय छे। (अर्थात् निर्वाण मेळवे छे।) ॥ ४ ॥

(कथारत्नकोष–'श्रीदेवनृप' कथानक १० मु पृ ६६ आ)

---

* आ श्लोको संस्कृत विभागमां लई शकाय तेम छे, पण सदर्भना एकविषयता जाळववा माटे अहीं लीधा छे।

[३६]

सिरिपउमसीहमुणिविरइय 'णाणसार'संदब्भो ॥

झाएह तिप्पयारं अरुहं कम्मिंधणाण णिद्दहणं ।
पिंडत्थं च पयत्थं रूवत्थं गुरुपसाएण ॥ १८ ॥ १ ॥

णियणाहिकमलमज्झे परिट्ठियं विप्फुरंतरवितेयं ।
झाएह अरुहरूवं झाणं तं मुणह पिंडत्थं ॥ १९ ॥ २ ॥

झायह णियसिरमज्झे भालयले हिययकंठदेसम्मि ।
जिणरूवं रवितेयं पिंडत्थं मुणह झाणमिणं ॥ २० ॥ ३ ॥

अट्ठमवग्गचउत्थं सत्तमवग्गस्स वीयवण्णेण ।
अक्कंतमुवरि सुण्णसुसंयुयं मुणह तं तच्चं ॥ २१ ॥ ४ ॥

एयं च पंच सत्त य पणतीसा जहकमेण सियवण्णा ।
झायह पयत्थझाणं उवइट्ठं जोयजुत्तेहिं ॥ २२ ॥ ५ ॥

अनुवाद

श्रीसद्गुरुनी कृपाथी कर्मरूपी इन्धनने बाळी नाखवा माटे दावानळ समान, पिंडस्थ, पदस्थ अने रूपस्थ एम त्रण प्रकारे श्रीअरिहंत परमात्मानुं ध्यान करो ॥ १८ ॥ (१)

पोताना नाभिकमल (मणिपूरचक्र) नी मध्यमां स्थापन करेला अने सूर्यसमान स्फुरायमान तेजवाळा श्री अरिहंत भगवंतना स्वरूपनुं ध्यान करो । एवा ध्यानने तमे पिंडस्थध्यान जाणो ॥ १९ ॥ (२)

वळी शिरे (सहस्रारमां), भालतले (आज्ञाचक्रमां), हृदय (अनाहतचक्र)मां तेम ज कंठदेश (विशुद्धचक्र) मां सूर्यसमान तेजवाळा श्रीअरिहंत भगवंतना स्वरूपनुं ध्यान करो । एवा ध्यानने तमे पिंडस्थध्यान जाणो ॥ २० ॥ (३)

सातमा वर्गना बीजा वर्ण 'र्' थी (उपर नीचे) आक्रान्त अने शून्य एटले बिन्दुथी युक्त एवो आठमा वर्गनो चोथो वर्ण जे 'ह' (अर्थात् 'र्हं') ते तत्त्व छे ॥ २१ ॥ (४)

योगी पुरुषोए कहेलु क्रमशः पाच (नमो सिद्धाणं), सात (नमो अरिहंताणं) अने पांत्रीश (नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाण, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूण,) श्वेत रगवाळा वर्णोनुं पदस्थ ध्यान करो ॥ २२ ॥ (५)

मुणिसखा पचगुणा ख(प)णनाई तह य पवण गयणंता ।
एदे य धवलवण्णा कायव्वा झाणमग्गेण ॥ २३ ॥ ६ ॥
णिसिऊण पचवण्णा पचसु कमलेसु पचठाणेसु ।
झाएह जहकमेणं पयत्थझाण इम भणिय ॥ २४ ॥ ७ ॥
सत्तक्खर च मत सत्तसु ठाणेसु णिससु सियवण्ण ।
सिद्धसरूप च सिरे एय च पयत्थझाणु त्ति ॥ २५ ॥ ८ ॥
अट्ठदलकमलमज्झे अरुह वेढेह परमबीयेहि ।
पत्तेसु तह य वण्णा दलतरे सत्तवण्णा य ॥ २६ ॥ ९ ॥
गणहरवलयेण पुणो मायाबीएण धरयलक्कत ।
ज ज इच्छह कम्म सिज्झइ त त खणद्धेण ॥ २७ ॥ १० ॥
घणघाइकम्ममहणो अइसयवरपाडिहेरसयुत्तो ।
झाएह धवलवण्णो अरहतो समवसरणत्थो ॥ २८ ॥ ११ ॥

---

७ × ५ = ३५ वर्णोनी आदिमा प्रणव एटले 'ॐ' कारने मूकवो अने पवन एटले 'स्वा' अने गगन एटले 'हा' ने अते मूकवा (अर्थात्–ॐ नमो अरिहताण, नमो सिद्धाण, नमो आयरियाण, नमो उवज्झायाण, नमो लोए सव्वसाहूण स्वाहा) । ए बधा वर्णोने ध्यानमा मग्न रहेला साधके धवल वर्णना चिन्तववा ॥ २३ ॥ (६)

पाच स्थानमा (नाभि, मस्तक, वदन, कठ अने हृदयमा) रहेल पाच कमलमा अनुक्रमे पाच वर्णो (अ-सि-आ उ सा अथवा नमो सिद्धाण)ने स्थापीने ध्यान करो। एवा ध्यानने पदस्थध्यान कहेल छे॥२४॥(७)

श्वेतवर्णवाळा सात अक्षरना मत्रने सात स्थानो (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा अने सहस्रार चक्रो)मा स्थापन करो अने सिद्धना स्वरूपने शिर एटले ब्रह्मरध्रमा स्थापन करो । आने पदस्थध्यान कहेल छे ॥ २५ ॥ (८)

आठ पत्रवाळा कमळनी मध्य (कर्णिका)मा परम बीजो (ॐ ह्रीं अर्हं)थी अरिहतने वेष्टित करो तेमज ए कमळना पत्रोमा क्रमश आठ वर्णो (वर्गना प्रथमाक्षर-अ क-च-ट-त-प-य-श) अने बे दलोनी सधिमा 'नमो 'अरिहताण' ए सात वर्णो स्थापित करवा । पछी ते कमळने गणधरवलय (श्रीसिद्धचक्र बृहद् यत्रमा बतावेल ४८ लब्धिपदो)थी वेष्टित करवु । आ रीते बनेला समग्र यत्रने (उपर) मायाबीज ('ह्रीं'),(अने नीचे 'क्रौं' थी साडात्रण आटा) वडे वेष्टित करवो । आवा प्रकारनु ध्यान करनार जे जे इच्छे, ते ते क्षणार्द्धमा सिद्ध थाय छे ॥ २६–२७ ॥ (९–१०)

घनघाति कर्मोना नाशक, श्रेष्ठ प्रातिहार्यादि अतिशयोथी युक्त, समवसरणमा विराजमान अने श्वेतवर्णवाळा एवा श्रीअरिहत परमात्मानु ध्यान करो ॥ २८ ॥ (११)

परिचय–दिगबराचार्य श्री पद्मसिंहमुनिए 'ज्ञानसार' नामनु प्रकरण ६३ गाथात्मक प्राकृतमा रच्यु छे । तेमाथी नमस्कार सबधी सदर्भ लईने अहीं अनुवाद साथे प्रकट कर्यु छे ।

आ प्रकरण श्रीमाणिक्यचद्र जैन दिगबर ग्रथमाला पुस्तक १३ मा प्रकट थयु छे । ए प्रकरणने अते कर्ताए तेनो रचनासमय नीचेनी गाथामा नोंध्यो छे—

सिरिविक्कमस्स काले दशसयछासी जुयम्मि वहमाणे ।
सावण सियणवमीए अवयणयरम्मि कयमेयम् ॥

— वि स १०८६ ना श्रावण सुदि ९ ना दिवसे अबयनगरमा आ रच्यु ।

[३७]

सिरिरयणसेहरसूरिविरइय- 'सिरिसिरिवालकहा'तो सिद्धचक्कयंतोद्धारविहिसंदब्भो

श्रीक्षमाकल्याणगणिकृतव्याख्यासमेतः ॥

अरिहं सिद्धायरिया उवज्झाया साहूणो य सम्मत्तं ।
नाणं चरणं च तवे इअ पयनवगं परमतत्तं ॥ १९१ ॥ १ ॥

व्याख्या—नवपदनामान्याह—अर्हन्तः १, सिद्धाः २, आचार्याः ३, उपाध्यायाः ४, साधवः ५, च–पुनः सम्यक्त्वं ६, ज्ञानं ७, चरणं–चरित्रं ८, च–पुनः तपः ९; इत्येतत् पदानां नवकं परमतत्त्वं वर्त्तते ॥ १९१ ॥ (१)

एएहिं नवपएहिं रहिअं अन्नं न अत्थि परमत्थं ।
एएसु च्चिय जिणसासणस्स सव्वस्स अवयारो ॥ १९२ ॥ २ ॥

व्याख्या—एतैः नवभिः पदै रहितो–वर्जितोऽन्यः परमार्थस्तात्त्विकोऽर्थो नास्ति, एतेष्वेव–नवपदेषु सर्वस्य जिनशासनस्य–जिनमतस्य अवतारः–अवतरणमस्ति ॥ १९२ ॥ (२)

जे किर सिद्धा सिज्झंति जे अ जे आवि सिज्झइस्संति ।
ते सव्वे वि हु नवपयझाणेणं चेव निब्भंतं ॥ १९३ ॥ ३ ॥

व्याख्या—किलेति–निश्चितं ये जीवा अतीते काले सिद्धाः मुक्तिं गताः, ये च वर्तमानकाले सिद्ध्यन्ति, ये चापि अनागते काले सेत्स्यन्ति–सिद्धिं यास्यन्ति, हुः पादपूरणे ते च सर्वेऽपि निर्भ्रान्तं निस्सन्देहं नवपदध्यानेनैव, न तु तद्व्यतिरेकेणेत्यर्थः ॥ १९३ ॥ (३)

एएसिं च पयाणं परमेगयरं च परमभत्तीए ।
आराहिऊण णेगे संपत्ता तिजयसामित्तं ॥ १९४ ॥ ४ ॥

व्याख्या—च–पुनः एतेषां पदानां मध्याद् एकतरं अन्यतममेकं पदं परमभक्त्या अराध्य संसेव्य अनेके जीवाः त्रिजगत्स्वामित्वं सम्प्राप्ताः सकलकर्मक्षयेण त्रिभुवनस्वामिनो जाता इत्यर्थः ॥ १९४ ॥ (४)

अनुवाद

अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, सम्यक्त्व (दर्शन), ज्ञान, चारित्र अने तप ए नवपदो परमतत्त्व एटले ध्येयरूप छे ॥ १९१ ॥ (१)

आ नवपदोथी रहित एवुं अन्य ते परमार्थ नथी । (तात्पर्य के जे आ नवपदोथी सहित होय ते ज परमार्थ छे) । ए (नवपदो)मां ज समग्र जिनमतनुं अवतरण छे ॥ १९२ ॥ (२)

खरेखर, जेओ सिद्ध थया छे, जेओ सिद्ध थाय छे अने जेओ सिद्ध थशे—ते बधाये निश्चयपूर्वक आ नवपदना ध्यान वडे ज (सिद्ध थया छे, थाय छे अने थशे) एमां संदेह नथी ॥ १९३ ॥ (३)

आ नवपदोमांथी एकाद पदनीये परमभक्तिथी आराधना करतां (कर्मक्षय थवाथी) अनेक मनुष्योए त्रणे जगतनुं स्वामीपणुं प्राप्त करेलुं छे ॥ १९४ ॥ (४)

एएहि नवपएहि सिद्ध सिरिसिद्धचक्कमेयं ज ।
तस्सुद्धारो एसो पुव्वायरिएहि निद्दिट्ठो ॥ १९५ ॥ ५ ॥

व्याख्या—एतैर्नवभि पदै सिद्ध-निष्पन्न यदेतत् श्रीसिद्धचक्र, तस-सिद्धचक्रस्य एष उद्धार पूर्वोचार्यैर्निर्दिष्ट—कथित ॥ १९५ ॥ (५)

गयणमकलिआय(व)त उड्ढाहसर मनाय-बिंदु-कलं ।
सपणवबीआणाहयमतसर सरह पीढम्मि ॥ १९६ ॥ ६ ॥

व्याख्या—अथ ग्रन्थकार एकादशगाथाभि सिद्धचक्रोद्धारविधिमाह—' गयणे ' त्यादि, अत्र गगनादिसंज्ञा मन्त्रशास्त्रेभ्यो ज्ञेया, तत्र गगनशब्देन 'ह' इत्यक्षरमुच्यते, 'पीढम्मि' त्ति मूलपीठे—यन्त्रस्य सर्वमध्ये 'ह' इत्यक्षर यूय स्मरत, इह च स्मरणमेवाधिकृतम् । स्मरणस्याशक्यत्वे पदस्थध्यानसाधनार्थं मनोज्ञद्रव्यैर्बहिःफापट्टादौ लिखनमपि पूर्वाचार्यराम्नातम् । एवमग्रेऽप्यूह्येत । तत्रादौ 'ह' काराक्षर लेखनीय-मिति प्रकृतम्, तत्कीदृशम् ? इत्याह—अस्य अकाराक्षरस्य कलिका व्याकरणसज्ञामयी वक्रा 'ऽ' इत्यक्षर-रूपा, तयाऽन्त—सहित, आदा कलिकया युक्त ततो'ऽह' इति स्यात । पुन तद्गगनबीज कीदृशम् ?—'उड्ढाहसर' ऊर्द्ध्वाध सह रेण—रकारेण वर्तत इति सर हकारस्योर्ध्वमधश्च रकारो दीयते, ततो'ऽर्ह' इति जातम् । पुन कीदृश तत् ? 'सनादबिन्दुकल' नादोऽर्द्धचन्द्राकारोऽक्षरस्योपरि अनुनासिक बिन्दु-कला च पूर्णोऽनुस्वार ततो नादश्च बिन्दुकला च ताभ्या सहित ततो 'ऽर्हँ' इति जात, पुन कीदृशम् ? 'सपणवबीयाणाहय' प्रणव 'ॐ'कार, बीज'ह्रीँ'कार, अनाहत च कुण्डलाकार, ततश्च द्वन्द्वस्तै सहितम् ।

आ नवपदोथी सिद्ध एवु जे आ श्रीसिद्धचक्र छे, तेनो पूर्वना आचार्योए कहेल आ (वक्ष्यमाण) उद्धार छे' ॥ १९५ ॥ (५)

[अहीं अनुवादमा व्याख्याना विवेचननो पण समावेश कर्यो छे]

मूळपीठ एटले यत्रना मध्यभागमा गगन एटले 'ह', (ते 'ह' कारनी आगळ) 'अ' कलिका एटले अकार अवग्रह 'ऽ' रूपे' तथा ते 'ह'कारना ऊपर अने नीचे 'र' कार एटले 'ऽर्ह' पद थाय । ते ('ह'कार)नी ऊपर नाद (अर्धचन्द्राकार अनुनासिक रूपे) अने बिन्दुकला (पूर्ण अनुस्वार रूपे) स्थापन करवी । तेथी 'ऽर्हँ' थयु ।' (जूओ यत्र-चित्र न० १७) तेने प्रणव एटले 'ॐ'कार, बीज एटले ह्रीँ'कार अने अनाहत एटले बे कुटल '၇' थी वेष्टित करवो' ।

---

१ अहीं बतावेल यत्रनो आम्नाय, जो के स्मरणमां लाववानो अधिकार छे परंतु एवु स्मरण अशक्य होय तो पदस्थ ध्याननी साधना माटे वस्त्रपट ऊपर सारां शुद्ध द्रव्योथी आलेखन करवानु पूर्वाचार्योए जणाव्यु छे ।

२ अहीं टीकाकारे—'अकाराक्षरस्य कलिका व्याकरणसंज्ञामयी वक्रा 'ऽ' इत्यक्षररूपा' अर्थात् अकार अक्षरनी कलिका एटले व्याकरणनी संज्ञावाळी वक्र 'ऽ' आकृति, जेने अवग्रह कहेवामां आवे छे— एवु निरूपण कर्यु छे । ज्यारे श्रीसिंहतिलकसूरि ते अवग्रहरूप वक्राकृति अकार स्वय भुजगाकृति एटले सर्पाकृति कुण्डलिनी रूपे छे (केटलाक यत्रोमां वक्राकृति 'ऽ' नो व्याकरणना नियमो मुजब लोप करी नाखवामां आवे छे) ते दर्शावे छे—

"अकारो भुजगाकृत्या कुण्डली निश्व (रश्च ?) जन्मभू ।
तत्परो ह शिव स्यात्मा राजते अर्हमित्यत ॥
प्रायो यन्त्रे परे ह स्यात् कुण्डलीज मभूज्झित ।
अहमित्यादिगणानादूर्ध्वं रत्नत्रयाश्रय ॥"

३ 'सिरिसिरिवाल कहा' नी टीकामां कह्यु छे के 'नादश्च बिन्दुकला च ताभ्या सहितम्' एथी श्री टीकाकार भगवान 'बिन्दुकला'ने एक ज वस्तु माने छे बीजु नादनी व्याख्या करतां तेओ कहे छे के 'नादोऽर्द्धचन्द्राकारोऽक्षरस्योपरि अनुनासिक' अर्थात् अक्षर उपर अर्धचन्द्राकारे (˘) मूकातो जे अनुनासिक ते नाद छे । बिंदुकलाने तेओ पूर्ण अनुस्वार ( ) कहे छे (बिन्दुकला च पूर्णोऽनुस्वार) । आ बधुं कथन को२ मत-विशेषने आश्रयीने होय एम लागे छे ।

अत्राम्नायः—'ऽर्ह्' इति वीजं 'ॐ'कारोदरे न्यसेत्, एतच्च वीजद्वयं 'ह्रीँ'कारोदरे न्यसेत् ततश्च 'ह्रीँ' कारस्येकारस्वरात् रेखां पश्चाद् वालयित्वा द्विःकुण्डलाकारेणाऽनाहतेन तद्बीजत्रयमपि वेष्टयेत्, पुनः कीदृशम् ?—'अन्त्यस्वरं'—अन्त्ये स्वराः—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः—एते षोडश यस्य तत्, पूर्वोक्तस्य सर्वतः स्वरान् न्यसेदित्यर्थः, इत्येतावत् कर्णिकायां ध्येयम् ॥ १९६ ॥ (६)

झायह अडदलवलये सपणव-मायाइए सुवाहंते ।
सिद्धाइए दिसासुं विदिसासुं दंसणाईए ॥ १९७ ॥ ७ ॥

व्याख्या—अथ पीठं लिखित्वा तत्पार्श्वे वृत्तमण्डलं लिखेत्, तदुपरि अष्टदलकमलाकारं वलयं लिखेत्, तत्राष्टदलवलये चतुर्षु दिक्पत्रेषु प्रणव-मायादिकान् स्वाहान्तान् सिद्धादिकान् चतुर्थीबहुवचनान्तान् ध्यायत, प्रणव—'ॐ'कारो, माया—'ह्रीँ'कारस्तौ आदी येषां ते तान्, तथा 'स्वाहा' अन्ते येषां ते तान्। लिखनविधिः यथा—'ॐ ह्रीँ सिद्धेभ्यः स्वाहा' पूर्वस्यां १, 'ॐ ह्रीँ आचार्येभ्यः स्वाहा' दक्षिणस्यां २, 'ॐ ह्रीँ उपाध्यायेभ्यः स्वाहा' पश्चिमायां ३, 'ॐ ह्रीँ सर्वसाधुभ्यः स्वाहा' उत्तरदिग्दले ४,

---

अहीं आम्नाय आ प्रमाणे छे—'ऽर्ह्' ए वीजने 'ॐ'कारना उदरमां मूकवो अने ते वंने ('ऽर्ह्' अने ॐकार) ने 'ह्रीँ'कारना उदरमां आलेखवा । पछी 'ह्रीँ'कारना 'ई'कार स्वरनी रेखाने पाछळ वाळीने वे आवर्तथी—कुंडलाकारे (अनाहतरूपे) ते त्रणे वीजनुं वेष्टन करी लेवुं । अनाहत पछी सोळ स्वरो (अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः) वर्तुळाकारे स्थापन करवा—आ रीते यंत्रनी कर्णिकानुं ध्यान (आलेखन) करवुं ॥ १९६ ॥ (६)

आ रीते पीठ आलेखीने तेने फरतुं गोळाकार वलय करवुं । ते वलयने फरती कमळनी आठ पांखडीओ दोरवी । ते आठ पांखडीओ पैकी चार दिशाओ तरफनी चार पांखडीओमां प्रणव एटले 'ॐ' कार अने माया एटले 'ह्रीँ'कार तेमज अंते 'स्वाहा' पूर्वक 'सिद्ध' आदि पदोनुं चतुर्थी बहुवचन पूर्वक ध्यान (माटे आलेखन) करवुं अने (ते प्रमाणे) दर्शन आदि पदोनुं विदिशानी पांखडीओमां ध्यान (माटे आलेखन) करवुं । ते आ प्रमाणेः—

केटलाक मंत्रशास्त्रोमां नाद, विंदु अने कला ए त्रण भिन्न पदार्थो मानवामा आव्या छे त्या नाद (Δ), विंदु(˙) अने कला (˘) ने आ रीते–(Δ̤) आलेखवामां आव्या छे । आवी जातना आलेखनवाळा यंत्रो पण मळे छे ।

आ विषयमा आचार्य भगवंत **श्री सिंहतिलकसूरि 'मंत्रराजरहस्य'** मां कहे छे के—

रपरं हं त्रिकोणरूढं ईस्वरखण्डेन्दुविन्दुनादाढ्यम्। आज्ञाचक्रे पश्यति वह्निपुरेशाक्षिपरसंज्ञे ॥

ते (साधक) वह्निपुर अने ईशाक्षि एवी अन्य संज्ञाओ छे जेने एवा आज्ञाचक्रमा (आ चक्र भ्रूमध्यमां आवेलुं छे) 'र्' छे पर जेने एवा 'ह्' ने ('ह्' ने) त्रिकोणथी रूढ (जेना ऊर्ध्वभागमा त्रिकोण छे एवो) तथा ई स्वर, चंद्रकला, विन्दु अने नादथी संपन्न जुए छे. अहीं 'ह्रीँ' नुं ध्यान छे.

४ श्रीसिंहतिलकसूरि अनाहत विशे जणावता कहे छे के :—

नादो भृङ्गध्वनिरिव शङ्खिन्युत्थस्त्वनाहतो नादः ॥

—मन्त्रराजरहस्य, प्रथम प्रस्थान, श्लो० ८० ह. लि. ॥

तथैव विदिक्षु दर्शनादीनि चत्वारि पदानि ध्यायत । तचल्लिखनविधिस्त्वयं–'ॐ ह्रीँ दर्शनाय स्वाहा' आग्नेयकोणे १, 'ॐ ह्रीँ ज्ञानाय स्वाहा' नैर्ऋत्या २, 'ॐ ह्रीँ चारित्राय स्वाहा' वायव्ये ३, 'ॐ ह्रीँ तपसे स्वाहा' ईशानकोणे ४, अनेन क्रमेण लिखेत् । एवं अष्टदलं प्रथमवलयम् ॥ १९७ ॥ (७)

वीयवलयम्मि अडदिसि दलेसु साणाहए सरह वग्गे ।
अंतरदलेसु अट्ठसु झायह परमिट्ठिपढमपए ॥ १९८ ॥ ८ ॥

व्याख्या—प्रथमवलयबाह्यतो मण्डलाकारं षोडशदलं न्यसेत् । तत्र द्वितीयवलये अष्टसु एकान्तरितदिग्दलेषु सानाहतान्–अनाहतबीजसहितान् अष्टौ वर्गान् 'अ, क, च, ट, त, प, य, श'–रूपान् क्रमेण लिखित्वा यूयं स्मरत, तत्र प्रथमवर्गे षोडश वर्णाः कवर्गादिषु पञ्चसु प्रत्येकं पञ्च पञ्च वर्णाः अन्तिमवर्गद्वये प्रत्येकं चत्वारो वर्णाः, ततोऽष्टसु वर्गाणामन्तरदलेषु परमेष्ठिपदानि–'ॐ नमो अरिहंताणं' इत्येवंरूपाणि ध्यायत, अष्टस्वपि अंतरदलेषु 'ॐ नमो अरिहंताणं' इत्येवं लिखेदित्यर्थः । एवं द्वितीयवलयम् ॥ १९८ ॥ (८)

---

१ 'ॐ ह्रीँ सिद्धेभ्य स्वाहा'[1] — आ प्रमाणे पूर्वदिशामां लखवु ।
२ 'ॐ ह्रीँ आचार्येभ्य स्वाहा' — आ प्रमाणे दक्षिणदिशामां लखवु ।
३ 'ॐ ह्रीँ उपाध्यायेभ्य स्वाहा' — आ प्रमाणे पश्चिमदिशामां लखवु ।
४ 'ॐ ह्रीँ सर्वसाधुभ्य स्वाहा' — आ प्रमाणे उत्तरदिशामां लखवु ।
५. 'ॐ ह्रीँ दर्शनाय स्वाहा' — आ प्रमाणे अग्निकोणमां लखवु ।
६ 'ॐ ह्रीँ ज्ञानाय स्वाहा' — आ प्रमाणे नैर्ऋत्यकोणमां लखवु ।
७ 'ॐ ह्रीँ चारित्राय स्वाहा' — आ प्रमाणे वायव्यकोणमां लखवु ।
८ 'ॐ ह्रीँ तपसे स्वाहा' — आ प्रमाणे ईशानकोणमां लखवु ।

आ प्रमाणे आठ पांखडीवाळुं वलय आलेखवुं ॥ १९७ ॥ (७) [प्रथम वलय]

पहेला वलयनी बहार सोळ पांखडीवाळुं मंडलाकारे करवुं बीजुं वलय आलेखवुं । ते सोळ पांखडीओ पैकीनी एकांतरित आठ दिशाओ तरफनी आठ पांखडीओमां अनाहत (द्विकुंडलाकार) बीज साथे अनुक्रमे आठ वर्गो–अ क च ट त प य श–लखीने तेनुं ध्यान करवुं ।

प्रथम वर्गमां सोळ वर्णो (अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः –स्वरो), कवर्ग आदि पांचमां पांच पांच वर्णो (कवर्ग–क ख ग घ ङ, चवर्ग–च छ ज झ ञ, टवर्ग–ट ठ ड ढ ण, तवर्ग–त थ द ध न, पवर्ग–प फ ब भ म–व्यंजनो) अने छेल्ला यवर्ग (य र ल व) तेमज शवर्ग (श ष स ह)–बेमां चार चार वर्णो लखवा ।

ते आठे वर्गोना अंतरनी–वच्चे वच्चेनी आठे पांखडीओमां 'ॐ नमो अरिहंताणं' पद लखवुं ॥ १९८ ॥ (८) [बीजुं वलय] ।

---

१ केटलाक प्रसिद्ध थयेला पटोमां 'ॐ ह्रीं श्री सिद्धेभ्य स्वाहा' आलेखेलुं जोवामां आवे छे परंतु अहीं मूळ के व्याख्यामां 'श्री' पाठनो निर्देश करेलो नथी । वळी दर्शन आदि पदोमां उपर्युक्त व्याख्यामां दर्शावेल पाठथी भिन्न 'ॐ नमो दंसणस्स, ॐ नमो नाणस्स, ॐ नमो चरित्तस्स, ॐ नमो तवस्स', एवो पाठ पण आपेलो जोवामां आवे छे ।

तइअवलए वि अडदिसि दिप्पंत अणाहएहिँ अंतरिए।
पायाहिणेण तिहि पंतिआहिँ झाएह लद्धिपए॥ १९९ ॥ ९ ॥

व्याख्या—तृतीयवलयेऽपि अष्टसु दिक्षु अष्टावनाहतान् लिखेत्, ततो द्वयोर्द्वयोरन्तराले द्वे द्वे लब्धिपदे, एवमष्टस्वप्यन्तरेषु षोडश लब्धिपदानि प्रथमपङ्क्तौ, एवं षोडशैव द्वितीयपङ्क्तौ, एवमेव तृतीयपङ्क्तौ। इत्थं दीप्यमानैरष्टभिरनाहतैरन्तरितानि—व्यवहितानि प्रादक्षिण्येन तिसृभिः पङ्क्तिभिः—श्रेणिभिरष्टचत्वारिंशल्लब्धिपदानि यूयं ध्यायत ॥ १९९ ॥ (९)

ते पणव-बीअ-अरिहं नमो जिणाणं ति एवमाईआ।
अडयालीसं णेआ सम्मं सुगुरूवएसेणं ॥ २०० ॥ १० ॥

व्याख्या—ते इति प्राकृतत्वान्नपुंसकस्य पुंस्त्वं, तानि लब्धिपदानि प्रणवः—ॐ कारो, बीजं—ह्रीङ्कारोऽर्हमिति सिद्धिबीजम्। एतत्पूर्वकं नमो जिणाणमिति पदं 'ॐ ह्रीँ अर्हं नमो जिणाणं' इत्येवमादीनि अष्टचत्वारिंशत्सङ्ख्यानि सम्यक् सुगुरोरुपदेशेन ज्ञेयानि। एतेषां नामानि माहात्म्यानि च लब्धिकल्पादवसेयानि, इह त्वाराधनविधिं विना पुस्तकलिखने दोष इति न लिखितानि ॥ २०० ॥ (१०)

त्रीजा वलयमां आठे दिशाओमां आठ अनाहत द्विकुंडलाकार '() ' बीज आलेखवा। ते बे अनाहतोनी अंतराले— पडखे (त्रण पंक्तिओ एटले वलयोमां) बे बे लब्धिपदो लखवां, ए प्रकारे आठे अंतरालमां सोळ लब्धिपदो प्रथम पंक्तिमां, बीजां सोळ लब्धिपदो बीजी पंक्तिमां अने त्रीजां सोळ लब्धिपदो त्रीजी पंक्तिमां लखवां—आ प्रकारे देदीप्यमान एटले तेजस्वी आठ [1]अनाहतोनी अंतराले प्रदक्षिणारूपे त्रण पंक्तिमां अडतालीस लब्धिपदोनुं ध्यान (माटे आलेखन करवुं) ॥ १९९ ॥ (९)

ते लब्धिपदो प्रणव एटले 'ॐ'कार, बीज एटले 'ह्रीँ' कार अने 'अर्हँ'ए सिद्धिबीज पूर्वक 'नमो जिणाणं' इत्यादि (ॐ ह्रीँ अर्हँ नमो जिणाणं ए रीते) अडतालीस लब्धिपदो गुरुना उपदेशथी सारी रीते जाणी लेवा[2]। आ लब्धिपदोनुं माहात्म्य 'लब्धिकल्प' थी जाणी लेवुं। अहीं आराधनाविधि सिवाय एम ने एम लब्धिपदो बतावबामां—पुस्तकमां लखवामां दोष छे तेथी लख्यां नथी। ॥ २०० ॥ (१०)

---

१ अनाहत ॐपूर्वक ह्रीँपूर्वकना पण मळे छे।

२ १. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो जिणाणं। २. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो ओहिजिणाणं। ३. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो परमोहिजिणाणं। ४. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो सव्वोहिजिणाणं। ५. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो अणंतोहिजिणाणं। ६. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो कुट्ठबुद्धीणं। ७. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो बीयबुद्धीणं। ८. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो पयाणुसारीणं। ९. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो आसीविसाणं। १०. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो दिट्ठिविसाणं। ११. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो संभिन्नसोयाणं। १२. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो सयंसंबुद्धाणं। १३. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो पत्तेयबुद्धाणं। १४. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो बोहिबुद्धाणं। १५. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो उज्जुमईणं। १६. ॐ ह्रीँ अर्हँ णमो विउलमईणं।

(आ सोळ लब्धिपदो पहेली पंक्तिमां मूकवां)

त तिगुणेण मायाबीएण सुद्धसेयवण्णेणं ।
परिवेढिऊण परिहीइ तस्स गुरुपायए नमह ॥ २०१ ॥ ११ ॥

व्याख्या—तत्पीठादि लब्धिपदान्त त्रिगुणेन शुद्धश्वेतवर्णेन मायाबीजेन–ह्रीङ्कारेण परिवेष्टय परित –समन्ताद्वेष्टयित्वा तस्य परिधौ गुरुपादुका –गुरुपादन्यासान् यूय नमत । अत्राय भाव – सर्वयन्त्रस्योर्ध्व 'ह्रीँ' कार विलिख्य तस्य ईकारात् सर्वयन्त्रपरिक्षेपरूपा रेखा निर्वालयित्वा चतुर्थरेखार्द्धप्रान्ते 'क्रौँ' इत्यक्षर लिखेत् । तस्य च परिधौ अष्टौ गुरुपादुका , पादुकाशब्दो यद्यपि नामकोशे उपानद्वाचक उक्त , तथापि रूढ्या पादन्यासार्थोऽपि बोध्य , बहुस्थानेपु तथा दर्शनात् ॥ २०१ ॥ (११)

तेने (उपर्युक्त अर्थात् मूलपीठथी लब्धिपदो सुधीना त्रण वलयोना आलेखनने) त्रिगुण अने शुद्ध श्वेत वर्णवाळा मायाबीज एटले ह्रींकार वडे चारे तरफथी वींटी लेवु । ते पछी तेनी परिधिमा गुरुपादुकाओ[1] एटले गुरुना चरणकमलनो न्यास (वलयाकारे) करवो ।

अर्थात् समग्र यन्त्रनी उपरना मथाळेथी ह्रींकार आलेखीने तेना ईकारथी शरू करेली रेखाने मूळपीठ वगेरे वलयोनी आसपास कुडलाकारे त्रण आटा दईने वाळवी अने चोथो आटो अड्धो दईने छेडे 'क्रौँ'कार (अकुशबीज) ने आलेखवु । ॥ २०१ ॥ (११)

१७ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो दसपुव्वीण ।	१८ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो चउद्दसपुव्वीण ।
१९ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो अट्ठगनिमित्तकुसलाण ।	२० ॐ ह्रीँ अर्हं णमो विउव्वणइड्ढिपत्ताण
२१ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो विज्जाहराण ।	२२ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो चारणलद्धीण ।
२३ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो पण्हसमणाण ।	२४ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो आगासगामीण ।
२५ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो खीरासवीण ।	२६ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो सप्पियासवीण ।
२७ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो महुआसवीण ।	२८ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो अमियासवीण ।
२९ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो सिद्धायणाण ।	३० ॐ ह्रीँ अर्हं णमो भगओ महइ महावीरवद्धमाणबुद्धरिसीणं ।
३१ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो उग्गतवाण ।	३२ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो अक्खीणमहाणसियाण ।

(आ सोळ लब्धिपदो बीजी पक्तिमा मूकवा ।)

३३ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो वद्धमाणाण ।	३४ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो दित्ततवाण ।
३५. ॐ ह्रीँ अर्हं णमो तत्ततवाण ।	३६ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो महातवाण ।
३७ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो घोरतवाण ।	३८ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो घोरगुणाणं ।
३९. ॐ ह्रीँ अर्हं णमो घोरपरक्कमाण ।	४० ॐ ह्रीँ अर्हं णमो घोरगुणबभयारीण ।
४१ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो आमोसहिपत्ताण ।	४२. ॐ ह्रीँ अर्हं णमो खेलोसहिपत्ताण ।
४३ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताण ।	४४ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताण ।
४५. ॐ ह्रीँ अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताण ।	४६ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो मणबलीणं ।
४७ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो वयणबलीण ।	४८ ॐ ह्रीँ अर्हं णमो कायबलीण ।

(आ सोळ लब्धिपदो त्रीजी पक्तिमा मूकवा ।)

('लब्धिस्तप'मा आ पाठक्रममा थोडो फेरफार छे, जूओ 'सूरिमन्त्रकल्पसदोह' पृ ६८ मूलभाग)

1 जो के पादुकानो अर्थ पगनी चाखडी अथवा जोडा थाय छे, पण अहीं पादुका एटले चरण–पगलां समजवो, कमके परपराथी एवो अर्थ पण स्थळे स्थळे करवामां आव्यो छे ।

अरिहं-सिद्ध-गणीणं-गुरु-परमादिट्ठणंतसुगुरूणं ।
दुरणंताण गुरूण य सपणव-बीयाओ ताओ य ॥ २०२ ॥ १२ ॥

व्याख्या—अथाष्टगुरुपादुका एवाह—अर्हतां पादुकाः १, सिद्धानां पादुकाः २, गणीनां—आचार्याणां ३, गुरूणां—पाठकानां ४, परमगुरूणां ५, अदृष्टगुरूणां ६, अनन्तगुरूणां ७, दुरणंताणंति—अनन्तानन्तगुरूणा च ८, इत्येवमष्टानामपि ताः पादुकाः सप्रणवबीजाः—प्रणवबीजाभ्यां सहिताः ॐ ह्रीँयुता इत्यर्थः, 'ॐ ह्रीँ अर्हत्पादुकाभ्यो नमः' इत्थं सर्वा अपि लिखेत् ॥ २०२ ॥ (१२)

रेहादुगकयकलसागारामिअमंडलं व तं सरह ।
चउदिसि विदिसि कमेणं जयाइ-जंभाइकयसेवं ॥ २०३ ॥ १३ ॥

व्याख्या—रेखाद्विकेन यन्त्रोर्ध्वभागाद् वामदक्षिणनिर्गताऽन्योऽन्यग्रथितप्रान्तरेखाद्विकेन कृतं यत् कलशाकारं अमृतमण्डलं तद्वत् तत् सरत—कलशाकारं लिखेदित्यर्थः । किंविशिष्टं तत् ?—चतुर्दिक्षु विदिक्षु च क्रमेण जयादिकाभिः चतसृभिः जया १, विजया २, जयन्ती ३, अपराजिताभिः ४; तथा जम्भादिभिर्जम्भा १, स्तम्भा २, मोहा ३, वन्धाभिः ४; कृता सेवा यस्य तत् । तत्र जयादिकाश्चतस्रः क्रमेण पूर्वादिदिक्षु जम्भादिका आग्नेय्यादिषु विदिक्षु लिखेत् ॥ २०३ ॥ (१३)

(हवे ए आठ गुरुपादुकाओ जणावे छे—) १ अरिहंतोनी पादुकाओ, २ सिद्धोनी पादुकाओ, ३ गणी एटले आचार्योनी—गणधरोनी पादुकाओ, ४ गुरु एटले पाठक—उपाध्यायोनी पादुकाओ, ५ परम गुरुओनी पादुकाओ, ६ अदृष्ट गुरुओनी पादुकाओ, ७ अनंत गुरुओनी पादुकाओ अने ८ दुरन्तानन्त एटले अनंतानन्त गुरुओनी पादुकाओने प्रणव एटले ॐकार अने बीज ह्रीँकार पूर्वक लखवी ।

(ते आ प्रकारे—

१. ॐ ह्रीँ अर्हत्पादुकाभ्यो नमः । २. ॐ ह्रीँ सिद्धपादुकाभ्यो नमः ।
३. ॐ ह्रीँ गणधरपादुकाभ्यो नमः । ४. ॐ ह्रीँ गुरुपादुकाभ्यो नमः ।
५. ॐ ह्रीँ परमगुरुपादुकाभ्यो नमः । ६. ॐ ह्रीँ अदृष्टगुरुपादुकाभ्यो नमः ।
७. ॐ ह्रीँ अनन्तगुरुपादुकाभ्यो नमः । ८. ॐ ह्रीँ अनन्तानन्तगुरुपादुकाभ्यो नमः) ॥ २०२ ॥

यंत्रना ऊपरना भागथी डाबी तरफथी अने जमणी तरफथी एम बे रेखाओ नीकळे छे । छेल्ले बंने रेखाओना छेडे मळी जतां जे आकृति थाय ते कलशाकार 'अमृतमंडळ' छे एवुं ध्यान करवुं ।

ते यंत्रनी चार दिशाओ अने विदिशाओमां क्रमशः जया अने जंभा वगेरे यंत्रनी सेवा करे छे ते रीते (वलयाकारे) आलेखन करो । (ते आ प्रकारे—

दिशाओमां	विदिशाओमां
१. ॐ ह्रीँ जयायै नमः ।	**२. ॐ ह्रीँ जम्भायै नमः ।**
३. ॐ ह्रीँ विजयायै नमः ।	**४. ॐ ह्रीँ स्तम्भायै नमः ।**
५. ॐ ह्रीँ जयन्त्यै नमः ।	**६. ॐ ह्रीँ मोहायै नमः ।**
७. ॐ ह्रीँ अपराजितायै नमः ।	**८. ॐ ह्रीँ वन्धायै नमः) ॥ २०३ ॥**

सिरिविमलसामिपमुहाहिट्ठायग-सयलदेव-देवीण ।
सुहगुरुमुहाओ जणिअ ताण पयाण कुणह झाण ॥ २०४ ॥ १४ ॥

व्याख्या—श्रीविमलस्वामीति नाम्ना सौधर्मदेवलोकवासी श्रीसिद्धचक्रस्याधिष्ठायक तत्प्रमुखा येऽधिष्ठायका सकला —समस्ता देवा देव्यश्चक्रेश्वर्याद्या तासा ध्यान सुगुरुमुखात् ज्ञात्वा 'ताण' त्ति तत्सम्बन्धिना 'पयाण' ति मन्त्रपदाना ध्यान यूय कुरुत, एतेषा नामानि कलशाकारस्योपरि सर्वतो लिखेत् । 'ॐ ह्रीँ विमलस्वामिने नम ' इत्यादि लिखेदित्यर्थ ॥२०४॥ (१४)

त विज्जादेवि-सासणसुर-सासणदेविसेविअदुपासं ।
मूलगह कठणिहि चउपडिहार च चउवीर ॥ २०५ ॥ १५ ॥
दिसिवाल-खित्तवालेहिं सेविअं धरणिमडलपइट्ठ ।
पूयंताण नराण नूण पूरेइ मणइट्ठ ॥ २०६ ॥ १६ ॥

व्याख्या—अथ तमित्यादि गाथायुगमस्य व्याख्या, तत् सिद्धचक्र कर्तृ पूजयता नराणा नून—निश्चित मन इष्ट—मनसोऽभीष्ट पूरयति, इति द्वितीयगाथान्त्यपादद्वयेन सम्बन्ध, किंविशिष्ट तत् ? —विद्यादेव्यो—रोहिण्याद्या षोडश, शासनसुरा गोमुखयक्षादयश्चतुर्विंशति, शासनदेव्यश्चक्रेश्वर्याद्या चतुर्विंशतिरेव, ततो, विद्यादेवीभि शासनसुरै शासनदेवीभिश्च सेवितौ द्वौ पार्श्वौ वामदक्षिणौ यस्य तत् । पुन कीदृशम् ? —'मूलगह' ति मूले—कलशस्य मूले ग्रहा —सूर्यादयो यस्य तत्, तथा कण्ठे—गलस्थाने निधयो नवसङ्ख्याका नैसर्प्पकाद्या आगमप्रसिद्धा यस्य तत्, तद् यथा —

" नैसर्प्प १, पाण्डुकश्चाथ २, पिङ्गल ३, सर्व्वरत्नक ४ ।
महापद्म ५, काल ६, —महाकालौ ७, माणव ८—शङ्खकौ ९ ॥ १ ॥"

विमलस्वामी वगेरे (सौधर्मदेवलोकवासी सिद्धचक्र यन्त्रना) अधिष्ठायक देवो अने देवीओ (चक्रेश्वरी वगेरे)ना ध्यान (मांडेनु आलेखन) गुरुमुखथी सांभळीने करवु अने ते सबधी मन्त्रपदोनु ध्यान (आलेखन) करवु । (ते आ प्रकारे—

१ ॐ ह्रीँ विमलवाहनाय नम । २ ॐ ह्रीँ चक्रेश्वर्यै नम ।
३ ॐ ह्रीँ अप्रसिद्धाधिष्ठायकाय नम । ४ ॐ ह्रीँ गणिपिटकयक्षराजाय नम ।
५ ॐ ह्रीँ धरणेन्द्राय नम । ६ ॐ ह्रीँ कपर्दियक्षाय नम ।
७ ॐ ह्रीँ शारदायै नम । ८ ॐ ह्रीँ शान्तिदेवतायै नम ।
९ ॐ ह्रीँ अप्रतिचक्रायै नम । १० ॐ ह्रीँ ज्वालामालिन्यै नम ।
११ ॐ ह्रीँ त्रिभुवनस्वामिन्यै नम । १२ ॐ ह्रीँ देवतायै नम ।
१३ ॐ ह्रीँ वैरोट्यायै नम । १४ ॐ ह्रीँ पद्मावत्यै नम ।
१५ ॐ ह्रीँ कुरुकुल्लायै नम । १६ ॐ ह्रीँ अंबिकायै नम ।
१७ ॐ ह्रीँ कुबेरदेवतायै नम । १८ ॐ ह्रीँ कुलदेवतायै नम ॥२०४॥ (१४)

ते सिद्धचक्र पूजन करनारा मनुष्योना मनोवांछितो पूरा करे छे, ते विद्यादेवीओ (रोहिणी वगेरे सोळ वलयाकारे) अने शासनदेवो (गोमुख वगेरे चोवीश यक्षो) तेमज शासनदेवीओ वडे सेवायेलु छे । (चक्रेश्वरी वगेरे चोवीश यक्षिणीओ एकज वलयमा बे पडखे) लखवी ।

नम ' इति लिखेत् । अस्य लिखने सम्यग्विधिश्चास्याम्नायविन्मुखाद् यथा लिखितचक्राद् वाऽवसेय ॥ ॥२०५॥२०६॥(१५–१६)

एय च सिद्धचक कहिअ विज्जाणुवायपरमत्थं ।
नाएण जेण सहसा सिज्झति महंतसिद्धिओ ॥ २०७ ॥ १७ ॥

व्याख्या—एतच्च सिद्धचक्र विद्यानुवादो – दशम पूर्व तस्य परमार्थरूप – रहस्यभूतमित्यर्थ, येन ज्ञातेन सहसा – सद्यो महत्य सिद्धयो – अणिमाद्या सिद्ध्यन्ति ॥२०७॥ (१७)

वळी कलशना मूलमा (नीचे)नव ग्रहोना नाम आलेखवा, ते आ प्रमाणे–

१ ॐ सूर्याय नम । २ ॐ सोमाय नम । ३ ॐ भौमाय नम ।
४ ॐ बुधाय नम । ५ ॐ बृहस्पतये नम । ६ ॐ शुक्राय नम ।
७ ॐ शनैश्चराय नम । ८ ॐ राहवे नम । ९ ॐ केतवे नम ।

वळी कठमा–गळे नव निधिओना नाम आलेखवा, ते आ प्रमाणे–

१ ॐ नैसर्पिकाय नम । २ ॐ पाण्डुकाय नम । ३ ॐ पिङ्गलाय नम ।
४ ॐ सर्वरत्नाय नम । ५ ॐ महापद्माय नम । ६ ॐ कालाय नम ।
७ ॐ महाकालाय नम । ८ ॐ माणवकाय नम । ९ ॐ शङ्खाय नम ।

वळी, चार प्रतीहारोना नाम (चार दिशाओमा) लखवा, ते आ प्रमाणे–

१ ॐ कुमुदाय नम (पूर्वमा), २ ॐ अञ्जनाय नम (दक्षिणमा), ३ ॐ वामनाय नम (पश्चिममा), अने ४ ॐ पुष्पदन्ताय नम (उत्तरमा)।

वळी, चार वीरोना नाम (चार दिशाओमा, ऊपरनी माफक लखवा, ते आ प्रमाणे–

१ ॐ माणिभद्राय नम (पूर्वमा), २ ॐ पूर्णभद्राय नम (दक्षिणमा), ३ ॐ कपिलाय नम (पश्चिममा) अने ४ ॐ पिङ्गलाय नम (उत्तरमा)।

वळी, दश दिक्पालना नाम (ते ते दिशाओमा) लखवा, ते आ प्रमाणे–

१ ॐ इन्द्राय नम (पूर्वमा), २ ॐ अग्नये नम (अग्निमा), ३ ॐ यमाय नम (दक्षिणमा), ४ ॐ नैर्ऋताय नम (नैर्ऋत्यमा), ५ ॐ वरुणाय नम (पश्चिममा), ६ ॐ वायवे नम (वायुमा), ७ ॐ कुबेराय नम (उत्तरमा), ८ ॐ ईशानाय नम (ईशानमा)। ९ (सौथी ऊपर पूर्वदिशामा), ॐ ब्रह्मणे नम । १० (सौथी नीचे पश्चिमदिशामा) ॐ नागाय नम ।

अने क्षेत्रपाल देवनु वायुखूणामा आलेखन करवु।—आ बधा (देवता)ओथी सेवायला (यन्त्रने 'ल' अने 'क्षि' अक्षर युक्त) धरणीमडल (चोरस) मा प्रतिष्ठित (स्थापन) करवु।—आ प्रकारनु यन्त्र पूजा करनारा मनुष्योना मनोवाछितो पूरे छे ॥ २०५॥ २०६॥ १५–१६ ॥

आ सिद्धचक्र 'विद्यानुवाद' नामना (दशमा पूर्वना) रहस्यरूप छे, जेने जाण्यु होय तो महान् (अणिमा आदि) सिद्धिओ जल्दीथी सिद्ध थाय छे ॥ २०७ ॥ (१७)

एयं च विमलधवलं जो झायइ सुक्कझाणजोएण ।
तव-संजमेण जुत्तो सो पावइ निज्जरं विउलं ॥ २०८ ॥ १८ ॥

व्याख्या—एतच्च विमलं—निर्मलं अत एव धवलं उज्ज्वलं श्रीसिद्धचक्रं यः पुमान् शुक्लध्यानयोगेन उज्ज्वलध्यानव्यापारेण ध्यायति स विपुलां—विस्तीर्णां निर्जरां प्राप्नोति बहुकर्मक्षयं करोतीत्यर्थः, कीदृशः सः ?—तपःसंयमाभ्यां युक्तः ॥ २०८ ॥ (१८)

अक्खयसुक्खो मुक्खो जस्स पसाएण लब्भए तस्स ।
झाणेणं अन्नाओ सिद्धीओ हुंति किं चुज्जं ॥ २०९ ॥ १९ ॥

व्याख्या—अक्षयं सुखं यस्मिन् स ईदृशो मोक्षो यस्य श्रीसिद्धचक्रस्य प्रसादेन प्राणिभिर्लभ्यते तस्य ध्यानेन अन्याः सिद्धयो भवन्ति, तत्र किञ्चोद्यं—किमाश्चर्यमित्यर्थः ॥ २०९ ॥ (१९)

एयं च परमतत्तं परमरहस्सं च परममंतं च ।
परमत्थं परमपयं पन्नत्तं परमपुरिसेहिं ॥ २१० ॥ २० ॥

व्याख्या—एतच्च परमतत्त्वं—उत्कृष्टं तत्त्वम्, च—पुनः परमं रहस्यं—गोप्यं, च—पुनः परमो मन्त्रः, पुनः परमार्थः, पुनः परमपदं परमपुरुषैर्भगवद्भिः प्रज्ञप्तं—प्ररूपितम् ॥ २१० ॥ (२०)

तत्तो तिजयपसिद्धं अट्ठमहासिद्धिदायगं सुद्धं ।
सिरिसिद्धचक्कमेअं आराहह परमभत्तीए ॥ २११ ॥ २१ ॥

व्याख्या—ततस्तस्मात् कारणात् भो भो भव्याः ! त्रिजगति—लोकत्रये प्रसिद्धम्, अणिमाद्यष्टमहासिद्धिदायकं शुद्धं—निर्मलम् एतत् श्रीसिद्धचक्रं परमभक्त्या यूयं आराधयत सेवध्वम् ॥२११॥(२१)

निर्मल होवाना कारणे ज उज्ज्वल एवा आ सिद्धचक्रनुं जे पुरुष शुक्लध्यानना योगथी ध्यान धरे छे ते तप अने संयमथी भारे निर्जरा एटले अनेक कर्मोनो क्षय करे छे ॥ २०८ ॥ (१८)

जेमां अक्षय सुख रहेलुं छे एवो मोक्ष, जे (सिद्धचक्र)ना प्रसादथी (प्राणीओने)मळे छे तेना ध्यानथी बीजी (लौकिक) सिद्धिओ पण प्राप्त थाय एमां तो नवाई ज शी ? ॥ २०९ ॥ (१९)

आ (सिद्धचक्र) परमतत्त्व (ध्येय) छे, परमरहस्यरूप एटले गोपनीय छे (गमे तेवा मानवीने देवा योग्य नथी), आ परममंत्र छे, परम अर्थवाळुं छे, परम पदोवाळुं छे, तेनुं उत्कृष्ट एवा आप्त पुरुषोए निरूपण कर्युं छे ॥ २१० ॥ (२०)

आ कारणथी जगतमां प्रसिद्ध, अने अणिमा वगेरे आठ सिद्धिओने आपनार, निर्मळ एवा आ सिद्धचक्रनी तमे आराधना करो ॥ २११ ॥ (२१)

सिरिसिरिवालकहा संदर्भपरिचय

बृहद्गच्छीय श्रीहेमतिलकसूरिना शिष्य श्रीरत्नशेखरसूरिए वि. सं. १४२८ मां प्राकृतमां 'सिरिसिरिवालकहा' नामे ग्रंथ रच्यो छे। तेना उपर खरतरगच्छीय श्रीक्षमाकल्याणगणिए व्याख्या पण रची छे।

आ ग्रंथमां कथानी साथोसाथ सिद्धचक्रयंत्रालेखनविधि, पंचपरमेष्ठी आराधन, स्तुत्यात्मक नवपदनां नवक—ते पैकी परमेष्ठीनवक वगेरे नमस्कारविषयक उपयोगी संदर्भो टीका साथे तारवीने अनुवाद सहित अहीं प्रगट कर्या छे।

'सिद्धचक्रयंत्र' जे श्रीयशोविजयजी महाराजे अमने प्रसिद्धि अर्थे आप्युं छे ते पण अहीं प्रगट करीए छीए।

सिरिरयणसेहरसूरिविरइयसिरिसिरिवालकहातो पंचपरमिट्ठिपयाराहणविहिसंदब्भो ॥

त सोऊण अइगरुअभत्तिसत्तीहि सजुओ राया ।
अरिहताइपयार्ण करेइ आराहणा एव ॥ ११६९ ॥

अव० —तद्राज्ञीवचन श्रुत्वाऽतिगुरुकेऽतिमहत्यौ ये भक्तिशक्ती, ताभ्या सयुत –सहितो राजा एव–वक्ष्यमाणप्रकारेण, अर्हदादिपदाना आराधना करोति ॥ ११६९ ॥

नवचेईहरपडिमा जिण्णुद्धाराइविहिविहाणेण ।
नाणाविहपूआहि अरिहंताराहण कुणइ ॥ ११७० ॥

अव० —तथाहि –नव चैत्यगृहाणि –नव संख्यानि जिनगृहाणि, नव प्रतिमा , नव जीर्णोद्धारा इत्यादिना विधिना विधान –निर्मापण तेन, तथा नानाविधा –अनेकप्रकारा या पूजास्ताभिरर्हत – अर्हत्पदस्याराधना करोति ॥ ११७० ॥

('सिरिसिरिवालकहा'मा नवपदोनी आराधनाना प्रसगे श्रीपाल महाराजा विधिपूर्वक तपस्या करे छे त्यारे राणी मयणासुदरीए श्रीपाल महाराजाने जणाव्यु के, 'तमने मोटी राजलक्ष्मी मळी छे त्यारे तमे शक्ति अने भक्ति अनुसार नवपदोनी पूजा आराधना करी तमारा मनोरथोने पूरा करो ।') आ प्रकारे ते राणीनु वचन साभळीने अतिभक्ति अने महाशक्तिवाळा (श्रीपाल) महाराजा अरिहत वगेरे पदोनी आराधना आ प्रकारे करे छे—॥ ११६९ ॥

अरिहत भगवतना नव चैत्यो, नव प्रतिमाओ, नव जीर्णोद्धारो वगेरे विधिपूर्वक करावीने तथा विविध प्रकारनी पूजाओ वडे ते अरिहतपदनी आराधना करे छे । ॥ ११७० ॥

विवेचन—अरिहतपदनी आराधना करवा माटे अरिहत भगवतना नव सख्या प्रमाण चैत्यो, नव प्रतिमाओ, नव जीर्णोद्धारो करवा जोइए, तथा महोत्सवपूर्वक स्नात्रपूजा, पचप्रकारी, अष्टप्रकारी, सत्तर प्रकारी, एकवीश प्रकारी, एकसो आठ प्रकारी, अने सर्वतोभद्रा नामनी पूजाओ करवी-भणाववी जरूरी छे ।

अरिहत भगवतोए सिद्धदशानी प्राप्तिनो मार्ग बताव्यो छे माटे ज तेमनो बोध करावनार अरिहतपदनी आराधना करवानु विधान करवामा आवेलु छे ।

अरिहतपदनी आराधना माटे अरिहत आदि भगवतोनी आराधना माटे मूर्तिओनु अवलबन जरूरी छे, केमके एवी मूर्तिओ आत्मदशाना आदर्शरूपे मानवामा आवेली छे, तेनाथी आत्मामा परमात्मभावनो ख्याल आवे छे । एवा परम आत्माओनी मूर्तिओ भराववी होय त्यारे खास करीने तीर्थंकर अवस्थामा तेओ सिंहासनमा विराजमान होय तेवी कराववामा आवे छे ।

सिद्धाणवि पडिमाणं कारावणपूअणापणामेहिं ।
तग्गयमणझाणेणं सिद्धपयाराहणं कुणइ ॥ ११७१ ॥

अव० — सिद्धानामपि याः प्रतिमाः, तासां कारापणं – निर्मापणं, पूजना – अर्चना, प्रणामः – नमस्कारस्तैस्तथा, तद्गतेन – तेपु सिद्धेपु प्राप्तेन मनसा यद् ध्यानं, तेन सिद्धपदस्याराधनां करोति ॥११७१॥

भत्ति-बहुमाण-वंदण-वेयावच्चाइकज्जमुज्जुत्तो ।
सुस्सूसणविहिनिउणो आयरियाराहणं कुणइ ॥ ११७२ ॥

अव० — भक्तिः – मनसि निर्भरा प्रीतिः, बहुमानः – बाह्यप्रतिपत्तिः, वन्दन – वैयावृत्त्ये प्रसिद्धे

तीर्थंकरो ज्यारे समवसरणमां विराजमान होय त्यारे योगमुद्रामां रहेला होवाथी ते समयनी मूर्तिओ योगमुद्रावाळी करावाय छे अने तीर्थंकरोनुं निर्वाणकल्याणक पर्यंकासन के कायोत्सर्ग आसने ज थतुं होवाथी ए समयनी मूर्तिओ पर्यंकासनवाळी अथवा कायोत्सर्गासनवाळी बनाववामां आवे छे; केमके पर्यंक आसन के कायोत्सर्ग आसन ए सिद्धदशानां सूचक छे ।

आवी प्रतिमाओ कराववाथी तथा अरिहंतनी भावपूर्वक पूजाओ करवाथी अरिहंतपदनी आराधना थाय छे । ॥ ११७० ॥

ते श्रीपाळ महाराजा सिद्ध भगवंतोनी प्रतिमाओ भरावीने, तेमनी पूजा करीने, तेमने प्रणाम करीने तथा ते सिद्ध भगवंतोनी अंदर मनने परोववारूप ध्यान करीने **सिद्धपदनी** आराधना करे छे । ॥ ११७१ ॥

विवेचन–सिद्धपदनी आराधना करवा माटे सिद्ध भगवंतोनी प्रतिमाओ, तेमनां चैत्यो अने जीर्णोद्धारो करावबा तेमज तेमनी पूजाओ भणाववी तथा सिद्धि प्राप्त थई होय तेवां स्थानोमां अगर अन्य स्थळोमां सिद्ध भगवंतने वंदन करवापूर्वक तेमनुं एकाग्रचित्तथी ध्यान करवुं जोईए ।

सिद्ध भगवंत तो अरूपी एटले निरंजन-निराकार छे तेथी तेमनी आकृति बनाववानो कोई संभव ज नथी । छतां तीर्थंकरोना जन्म समये तेमनां जे जे लांछनो होय तेवा लांछनोवाळी मूर्ति ते अरिहंत-तीर्थंकरनी मूर्ति कहेवाय छे ज्यारे लांछनो विनानी मूर्तिओ होय ते सिद्ध भगवंतनी मानवामां आवे छे ।

सिद्ध भगवंतनी प्रतिमाओ भराववामां तेमना आसनो विशे कोई नियम नथी तेथी ते कोई पण आसनवाळी बनावी शकाय; पण तेमां वीतरागभावदर्शक आकार होवो जरूरी छे ।

तत्त्वतः अरिहंतोनी पोतानी आराध्यता पण तेमना निर्वाणकल्याणक एटले सिद्धदशाने उद्देशीने ज होय छे । आथी सिद्धपदनी आराधनामां सिद्ध भगवंतनुं अने अरिहंतपदनी आराधनामां सिद्धदशा प्राप्त करवा माटेनुं एकाग्रचित्ते ध्यान करवानुं अहीं 'ध्यान' शब्दथी सूचवेलुं होय एम जणाय छे । वळी, आचार्य आदि पदोनी आराधनामां पण तेओ सिद्ध भगवंत अने अरिहंतनी सिद्धदशानुं एकाग्रपणे ध्यान करता होवाना कारणे आचार्य आदि पदोनी आराधना करवामां आवे छे । एवुं रहस्य अहीं स्फुट थाय छे । ॥ ११७१ ॥

इत्यादिकार्येषु युक्त — उद्यत, तथा शुश्रूषणस्य — सेवनस्य यो विधिस्तत्र निपुण — दक्ष, एवम्भूत सन् आचार्यपदाराधना करोति ॥ ११७२ ॥

ठाणासणवसणाई पढत पाढतयाण पूरतो ।
दुविहभत्ति कुणतो उवज्झायाराहणं कुणइ ॥ ११७३ ॥

अव० — पठता पाठयता च साध्वादीना स्थानासन-वसनादि — निवासस्थान-भोजन-वस्त्रादि-पूरयन् द्रव्य-भावभेदतो द्विविधा भक्ति कुर्वन् उपाध्यायपदाराधना करोति ॥ ११७३ ॥

भक्ति, बहुमान, वदन, वैयावृत्त्य वगेरे कार्योमा प्रयत्नशील अने शुश्रूषा करवामा कुशळ एवा (श्रीपाल) महाराजा आचार्यपदनी आराधना करे छे । ॥ ११७२ ॥

विवेचन—आचार्यपदनी आराधना करवा माटे भक्ति एटले मानसिक प्रीति, भक्तिथी उत्पन्न थतु बहुमान एटले बाह्य प्रतिपत्ति, वदन एटले नामस्मरण, स्तुति, नमन आदि तथा मन, वचन, कायानी शुभ प्रवृत्ति, वैयावृत्त्य एटले व्यापृतभाव अर्थात् धर्मसाधन निमित्ते अन्न वगेरेनु विधिपूर्वक सपादन एटले मेळवी आपवु अने शुश्रूषा एटले आरोग्य माटेनी परिचर्या एटले मावजत— आ बधु करवामा कुशळता दाखवी उद्यमशील बनवु जोइए ।

जिनेश्वर भगवतना निर्वाण पछी आचार्य भगवत शासनना सर्वाधिकारी मनाय छे । तेथी जेम जिनेश्वर भगवतो शासन प्रवर्तावबाना कारणे उपकारी होवाथी आराध्य छे अने सिद्ध भगवतो निरजन निराकार, ज्योतिस्वरूप होवाथी आत्माना साध्य चिदुरूपे होवाथी आराध्य छे, तेम आचार्य भगवतो शासनना अने मोक्षना मुख्य अगरूप होवाथी तेमनी गणतरी परमेष्ठीमा ज करेली छे तेथी तेओ पण आराधवायोग्य छे ।

आचार्यपदनी आराधना अरिहत अने सिद्ध भगवत करता जुदी रीते बतावी छे । ते आराधनामा भक्ति अने बहुमानपूर्वक पचीश आवश्यकवाळु अने बत्रीश दोषरहित वदन करवानु विधान छे ।

वळी, आचार्यपदनी आराधना करता आचार्य भगवतनी प्रतिमा के पूजानु अवलबन लेवानु जणावेलु नथी, केमके शासन आचार्य भगवतनी विहरमान दशा विनानु होतु नथी । तेथी साक्षात् आचार्य भगवतनी एटले भाव आचार्यनी भक्ति, बहुमान, वदन वगेरे द्वारा आराधना करवी जोईए, अने एम करता 'एगम्मि पूइयम्मि सव्वे ते पूइया होइ' एक भावाचार्यनी पूजा द्वारा सारा जगतना भावाचार्योनु पूजन थयेलु गणाय छे, कारणके भावनिक्षेपानी अराधनाथी बधाये निक्षेपानु आराधन थयानु मानी लेवामा आव्यु छे । ॥ ११७२ ॥

ते महाराजा आगमोने भणनारा तेमज भणावनारा साधु-साध्वीओने माटे निवासस्थान एटले उपाश्रयो, आहार अने वस्त्रोनी जरूरियातने पूरी पाडीने द्रव्य तेमज भाव एम बे प्रकारे भक्ति करीने उपाध्यायपदनी आराधना करे छे । ॥ ११७३ ॥

विवेचन—उपाध्यायपदनी आराधना माटे भणनारा साधुओ अने भणावनारा उपाध्यायो माटे निराकुळ स्थानमा उपाश्रयो बनाववा अने तेमने भोजन, वस्त्र, पुस्तक वगेरेनी सामग्री आपवारूप द्रव्य अने भावपूर्वकनी भक्ति करवी जोईए ।

अभिगमण-वंदण-नमंसणेहिं असणाइ-वसहिदाणेहिं ।
वेयावच्चाईहिँ अ साहुपयाराहणं कुणइ ॥ ११७४ ॥

अव० — अभिगमणं — सम्मुखगमनं, वन्दनं — स्तुतिः, नमसनं-नमस्कारकरणं, तैस्तथा; अशनादीनां वसतेश्च दानैश्च पुनर्वैयावृत्त्यादिभिः साधुपदाराधना करोति ॥ ११७४ ॥

आगमोना निर्युक्ति वगेरेना अर्थोनुं अध्यापनकार्य तो आचार्य भगवंतो ज करे छे त्यारे समग्र आगमोनां मूळ सूत्रोनुं अध्यापनकार्य उपाध्याय भगवंतोना शिरे होय छे । वळी, गच्छना साधुओनुं पालन-पोषण करवानी मुख्य फरज पण उपाध्याय भगवंतो ज बजावे छे ।

वाचना पृच्छना, परावर्तना अनुप्रेक्षा अने धर्मकथारूप स्वाध्याय करनारा साधुओने उपाध्याय भगवंतो भणावे त्यारे अध्ययन अने अध्यापन माटे निराकुल वातावरण अने भोजन, वस्त्र, पुस्तक वगेरेनी योग्य सामग्री भावपूर्वक पूरी पाडवाथी तेमज भणनारा साधुओए उपाध्याय भगवंत प्रत्ये भक्ति बतावबाथी उपाध्यायपदनी आराधना करी शकाय छे ।

आचार्यपदनी पेठे उपाध्यायपदनी आराधना पण साक्षात् उपाध्यायनी आराधनाथी थाय छे माटे तेमनी मूर्ति वगेरेथी करवानुं जणाववामां आव्युं नथी । ॥ ११७३ ॥

ते महाराजा अभिगमन, वंदन अने नमस्कार करवावडे भोजन वगेरे तथा निवासस्थान देवावडे अने वेयावच्च आदि करवा वडे साधुपदनी आराधना करे छे । ॥ ११७४ ॥

विवेचन—साधुपदनी आराधना करवा माटे अभिगमन एटले साधु भगवंतने वंदन करवा माटे सामे जवुं, तथा गाममां प्रवेश करता होय त्यारे तेमनुं भावपूर्वक सामैयुं करवुं, वंदन एटले अभिवादन अर्थात् मन, वचन अने कायानी प्रशस्त प्रवृत्ति करवी, नमस्यन एटले नमन के पूजन वगेरे करवुं, तेमज ते साधु भगवंतोने अशन आदि एटले अशन (भोजन), पान, खादिम, स्वादिम, वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण, संथारियां, दंडक वगेरे संयमसाधनानां उपकरणो देवां, तेमज तेमने ऊतरवा माटे वसति एटले उपाश्रयनां स्थानो आपवां अने वेयावच्च एटले धर्मसाधन निमित्ते अन्न वगेरे विधिपूर्वक मेळवी आपवां जोईए ।

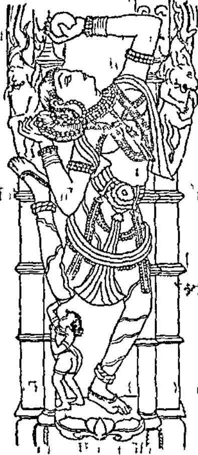
आचार्य अने उपाध्यायपदवी प्राप्त करनारा महापुरुषो पहेलेथी ज साधुपणामां होय छे एटले आचार्य, उपाध्याय वगेरे पदवीओ प्राप्त करवाथी तेमनामां साधुपणानी न्यूनता आवती नथी, बल्के ते विशेषपणे विकास पामे छे । तेथी ज आवश्यकनिर्युक्ति (गाथा १०१८) मां पूर्वपक्षकारे सिद्ध भगवंत अने साधु भगवंतमां पंचपरमेष्ठीना नमस्कारनो एक दृष्टिए समावेश कर्यो छे । वळी, 'पंचसूत्र', 'चउसरणपयन्ना' अने प्रतिक्रमणसूत्र वगेरेमां आचार्य अने उपाध्याय भगवंतने मंगळ, लोकोत्तम अने शरण्य तरीके जुदा न गणावतां साधुपदमां तेमनो समावेश कर्यो छे ।

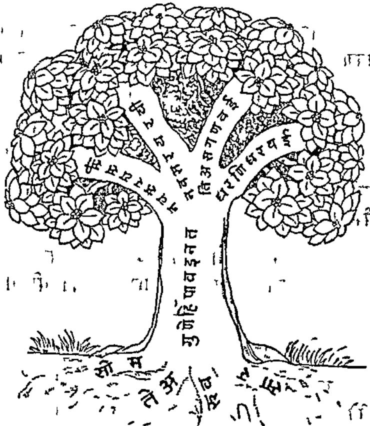
साधुपदनी आराधना माटे पदस्थ एवा आचार्य अने उपाध्याय भगवंतोनी जेम मूलोत्तर गुणना धारक गीतार्थ अने गीतार्थनी निश्रावाळा साधुओनी सामे जइने वंदन वगेरे करवानुं विधान आ गाथामां करेलुं छे ।

वळी, श्रमण महात्माओना नामस्मरण एटले जाप करतां ये तेमने वंदन, नमस्कार करवानुं फळ विशेष छे एम जणाववामां आव्युं छे । ॥ ११७४ ॥

संदर्भ-परिचय

पचपरमेष्ठीना पदोनी आराधना केवी रीते कराय ए सबधे केटलाय समयथी अमारी शोध चालु हती। यद्यपि श्रीरत्नशेखरसूरिरचित 'सिरिसिरिवालकहा' मांथी 'सिद्धचक्रयन्त्रालेखनविधि' अने 'पंचपरमेष्ठिनवक'नो सदर्भ, तारवीने अनुवाद विवेचन साथे प्रस्तुत ग्रंथ माटे सग्रह करी लीधो छता तेमा ज पचपरमेष्ठीना पदोनी आराधनाविधि हशे एवो ख्याल आव्यो न होतो। ज्यारे 'सिद्धचक्र'नी फाईलो उपर अचानक दृष्टि पडी त्यारे नवपदोनी सक्षिप्त छता विशिष्ट आराधनाविधि ('सिद्धचक्र' वर्ष ३, अक १३, १४, १५) वाचवामा आवी। तेमांथी 'सिरिसिरिवालकहा'ने सामे राखीने 'पचपरमेष्ठिपदाराधनविधि'नो छ गाथात्मक सदर्भ अवचूरि साथे तारवीने तेनो अनुवाद लख्यो; परतु गाथाओनो केवळ शब्दार्थ आराधकोनी जिज्ञासा माटे पूरतो न जणाता तेना उपर यथाशक्ति विवेचन आपवानो प्रयास कर्यो छे।





[३९]

श्रीमद्रत्नशेखरसूरिरचित 'सिरिसिरिवालकहा'न्तर्गत-पञ्चपरमेष्ठिनः पञ्चनवकात्मकः संदर्भः च ॥

सेसतिभवेहिं मणुएहिं जेहिं विहियारिहाइठाणेहिं ।
अज्जिज्जइ जिणगुत्तं, ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२१८ ॥

व्याख्या—शेषाः—अवशिष्टास्त्रयो भवा येषां ते पुनर्विहितानि—कृतानि सेवितानीति यावत् अर्हदादिस्थानानि—विंशतिस्थानकानि यैस्ते तथा तैः, एवं भूतैर्यैर्जिनगोत्रं—जिननामकर्म अर्ज्यते—उपार्ज्यते तान् अर्हतोऽहं प्रणिपतामि नमस्कुर्वे ॥ १२१८ ॥

जे एगभवंतरिया रायकुले उत्तमे अवयरंति ।
महसुमिणसूइअगुणा ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२१९ ॥

व्याख्या—ये एकभवान्तरिता उत्तमे राजकुले अवतरन्ति, कीदृशा ये ? महास्वप्नैश्चतुर्दशभिः सूचिता ज्ञापिता गुणा येषां ते तथा, तानर्हतः प्रणिपतामि—प्रणमामि ॥ १२१९ ॥

जेसिं जम्मम्मि महिसं दिसाकुमारीओ सुरवरिंदा य ।
कुव्वंति पहिट्ठमणा ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२२० ॥

व्याख्या—येषां जन्मनि महिमां महिमानं वा दिक्कुमार्यः षट्पञ्चाशत्, सुरवरेन्द्राश्च चतुष्षष्टिः प्रहृष्टं प्रकर्षेण हर्षितं मनो येषां ते प्रहृष्टमनसः सन्तः कुर्वन्ति, तानर्हतः प्रणिपतामीति पूर्ववत् ॥ १२२० ॥

आजम्मं पि हु जेसिं देहे चत्तारि अइसया हुंति ।
लोगच्छेरयभूया ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२२१ ॥

अरिहंत—

ज्यारे त्रण भव बाकी रहे त्यारे मनुष्यभवमां अरिहंत वगेरे (वीश) स्थानकनुं आराधन करीने जेमणे तीर्थंकर नामकर्म उपार्ज्युं छे ते अरिहंतोने हुं प्रणाम करुं छुं ॥ १२१८ ॥

छेल्ला भवमां (माताने आवेलां) चौद महास्वप्नो वडे सूचित गुणवाळा जेओ उत्तम राजकुळमां अवतरे छे ते अरिहंतोने हुं प्रणाम करुं छुं ॥ १२१९ ॥

जेओना जन्मसमये अत्यंत हर्षित मनवाळां छप्पन दिक्कुमारीओ अने चोसठ इंद्रो आवीने जन्म-उत्सव करे छे ते अरिहंतोने हुं प्रणाम करुं छुं ॥ १२२० ॥

व्याख्या — हु इति निश्चित, येषा देहे – शरीरे आजन्मापि जन्मत आरभ्यापि लोके आश्चर्यभूताश्चत्वारोऽतिशया भवन्ति, 'तेषा च देहोऽद्भुतरूपगन्ध' इत्यादयस्तानर्हत प्रणिपतामि ॥ १२२१ ॥

जे तिहुनाणसमग्गा खीणं नाऊण भोगफलकम्म ।
पडिवज्जति चरित्त ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२२२ ॥

व्याख्या — ये त्रिभिर्ज्ञानै – मतिश्रुतावधिभि समग्रा – सम्पूर्णा सन्तो भोग फल यस्य तद्भोगफल कर्म क्षीण ज्ञात्वा चारित्र प्रतिपद्यन्ते – अङ्गीकुर्वन्ति तानर्हत प्रणिपतामि ॥ १२२२ ॥

उवउत्ता अपमत्ता सिअझाणा खवगसेणि हयमोहा ।
पावंति केवल जे ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२२३ ॥

व्याख्या — ये उपयुक्ता – उपयोगयुता पुनरप्रमत्ता – प्रमादरहिता पुन सित – शुक्ल ध्यान येषा ते सितध्याना अत एव क्षपकश्रेण्या हतो मोहो यैस्ते तथा, ईदृशा सन्त केवलज्ञान प्राप्नुवन्ति, तानर्हत प्रणिपतामि ॥ १२२३ ॥

कम्मक्खइया तह सुरकया य जेसिं च अइसया हुंति ।
एगारसगुणवीस ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२२४ ॥

व्याख्या — च – पुन, येषा कर्मक्षयजा – कर्मक्षयोत्पन्ना एकादश अतिशया भवन्ति, तथा सुरै – देवै कृताश्च एकोनविंशतिरतिशया भवन्ति, तानर्हत प्रणिपतामि ॥ १२२४ ॥

जे अट्ठपाडिहारेहिं सोहिआ सेविया सुरिंदेहिं ।
विहरंति सया काल ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२२५ ॥

व्याख्या — ये 'अष्टप्रातिहार्यै' अशोकवृक्षादिभि शोभिता, पुन सुरेन्द्रै सेविता सदाकाल विचरन्ति, तानर्हत प्रणिपतामि ॥ १२२५ ॥

जन्मथी माडीने जेमना देहमा जगतमा आश्चर्यभूत एवा चार अतिशयो* होय छे ते अरिहतोने हु प्रणमु छु ॥ १२२१ ॥

त्रण ज्ञानथी परिपूर्ण एवा जे भगवतो भोगावळीकर्मने क्षीण थयेलु जाणीने चारित्ररूप निवृत्तिमार्गने आदरे छे ते अरिहतोने हु प्रणाम करु छु ॥ १२२२ ॥

चारित्रधर्ममा सदा उपयोगी, अप्रमत्त, शुक्लध्यानवाळा तथा क्षपकश्रेणि उपर आरूढ थई मोहने हणी जे केवळज्ञानने प्राप्त करे छे ते अरिहतोने हु प्रणाम करु छु ॥ १२२३ ॥

कर्मना क्षयथी उत्पन्न थयेला अगियार अतिशयो तथा देवोए करेला ओगणीस अतिशयो जेमने होय छे ते अरिहतोने हु प्रणाम करु छु ॥ १२२४ ॥

आठ प्रातिहार्यो वडे शोभता तथा सुरनायको वडे सेवाता एवा जे सदाकाळ विचरे छे ते अरिहतोने हु नमस्कार करु छु ॥ १२२५ ॥

---

* चार अतिशयो –

१ चर्मचक्षुथी जोइ न शकाय ए रीते अरिहत भगवतो आहार अने निहार करे छे ।

२ तेओनु शरीर परसेवो, मेल, रोगथी रहित अने सुदर होय छे ।

३ तेओ गायना दूधनी धारा जेवा श्वेत मांस अने रुधिरने धारण करे छे ।

४ तेओना श्वास अने उच्छ्वास मदार अने पारिजातना पुष्पोथी उत्पन्न थती सुरभि जेवा होय छे ।

पणतीसगुणगिराए जे अ विबोहं कुणंति भव्वाणं ।
महिपीढे विहरंता ते अरिहंते पणिवयामि ॥ १२२६ ॥

व्याख्या — पञ्चत्रिंशद्गुणाः यस्यां सा पञ्चत्रिंशद्गुणा या गीः — वाणी तया, ये च भव्यानां विबोधं — विशिष्टज्ञानं कुर्वन्ति, कीदृशाः सन्तः ? महीपीठे — पृथ्वीपीठे विचरन्तस्तानर्हतः प्रणिपतामि ॥ १२२६॥

अरहंता वा सामन्नकेवला अकयकय समुग्घाया ।
सेलेसीकरणेणं होऊणमयोगिकेवलिणो ॥ १२२७ ॥

व्याख्या — अर्हन्तः तीर्थङ्करा वा — अथवा सामान्यकेवलिनः, अकृतः कृतो वा समुद्घातः — केवलिसमुद्घातो यैस्ते तथा एवम्भूता ये योगीन्द्राः शैलेशीकरणेन — आत्मप्रदेशस्थिरीकरणरूपेण अयोगिकेवलिनो भूत्वा ॥ १२२७ ॥

जे दुचरिमम्मि समए दुसयरिपयडीओ तेरस अ चरमे
खविऊण सिवं पत्ता ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२२८ ॥

व्याख्या — द्विचरमे — आयुःक्षयसमयात् प्राक्तने समये द्वासप्तति ७२ प्रकृतीर्नामाद्यघातिकर्मोत्तर — प्रकृतीः क्षपयित्वा चः — पुनश्चरमे समये त्रयोदशप्रकृतीः क्षपयित्वा शिवं — मोक्षं प्राप्ताः, ते सिद्धा मे — मह्यं मुक्तिं ददतु ॥ १२२८ ॥

चरमंगतिभागोणावगाहणा जे अ एगसमयम्मि ।
संपत्ता लोगग्गं ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२२९ ॥

व्याख्या — चरमा — अन्तिमा, अङ्गस्य — शरीरस्य त्रिभागेन ऊनावगाहना — देहमानं येषां ते तथा, ये च ईदृशाः सन्तः एकस्मिन् समये लोकाग्रं सम्प्राप्तास्ते सिद्धा मे सिद्धिं ददतु ॥ १२२९॥

पुव्वपओग असंगा बंधणछेया सहावतो वावि ।
जेसिं उड्ढा हु गई ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२३० ॥

व्याख्या — पूर्वप्रयोगतो धनुर्मुक्तबाणवत्, तथाऽसङ्गात् — निःसङ्गतया कर्ममलापगमेन अलाबु-

---

पृथ्वीपीठ उपर विचरता जेओ पांत्रीश गुणोथी युक्त एवी वाणी वडे भव्यजनोने प्रतिबोध करे छे ते अरिहंतोने हुं प्रमाण करुं छुं ॥ १२२६ ॥

सिद्ध—

केवळी समुद्घात करीने अथवा कर्या सिवाय अरिहंतो के सामान्य केवळीओ शैलेशीकरण वडे अयोगी केवळी थई आयुष्यना छेल्ला बे समयमांना पहेले समये बोंत्तेर प्रकृतिओने खपावी अने छेल्ले समये तेर प्रकृतिओने खपावी जेओ मोक्षमां गया छे ते सिद्ध भगवानो मने मोक्ष आपो ॥ १२२७–२८ ॥

चरम शरीरना त्रीजा भागे न्यून अवगाहनावाळा जेओ एक ज समयमां लोकना अग्रभागे जई पहोंचे छे ते सिद्ध भगवंतो मने मोक्ष आपो ॥ १२२९ ॥

धनुष्यमांथी छूटेला बाणनी पेठे पूर्वप्रयोगथी, तुंबडानी पेठे असंगपणाथी, एरंडाना फळनी

द्रव्यवत्, तथा बन्धनच्छेदात्—कर्मबन्धनच्छेदनेन एरण्डफलवत्, तथा स्वभावतो वापि धूमवत्, येषां ऊर्ध्वा गति प्रवर्तते ते सिद्धा मे सिद्धिं ददतु ॥ १२३० ॥

ईसीपब्भाराए उवरिं खलु जोयणम्मि लोगंते ।
जेसिं ठिई पसिद्धा ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२३१ ॥

व्याख्या—ईषत्प्राग्भाराया —सिद्धिशिलाया उपरि खलु निश्चयेन एकस्मिन् योजने लोकान्तो ऽस्ति, तत्र येषा स्थिति —अवस्थान प्रसिद्धमस्ति ते सिद्धा मे सिद्धिं ददतु ॥ १२३१ ॥

जे अ अणंता अपुणब्भवा य असरीरया अणाबाहा ।
दंसणनाणुवउत्ता ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२३२ ॥

व्याख्या—च—पुन येऽनन्ता , पुनरपुनर्भवा न विद्यते पुनर्भवो येषा ते तथा, पुनरशरीरका—न विद्यते शरीर येषा ते, तथा पुनरनाबाधा न विद्यते आबाधा—पीडा येषा ते तथा, पुनर्दर्शन च ज्ञान च दर्शनज्ञाने तयोरुपयुक्ता दर्शन ज्ञानोपयुक्ता , येषा प्रथमसमये ज्ञानोपयोगो द्वितीयसमये दर्शनोपयोगोऽस्ति, ते सिद्धा मे सिद्धिं ददतु ॥ १२३२ ॥

जेऽणंतगुणा विगुणा इगतीसगुणा अ अहवं अट्ठगुणा ।
सिद्धाणंतचउक्का ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२३३ ॥

व्याख्या—ये सिद्धा अनन्तगुणा—अनन्ता ज्ञानादयो येषु ते तथा, पुनर्विगुणा—विगता वर्णादयो गुणा येभ्यस्ते तथा, च पुनरेकत्रिंशत्—संस्थान-वर्णादिप्रतिषेधरूपा एव गुणा येषु ते तथा, अथवाऽष्टगुणा—अष्टकर्मक्षयसमुद्भवा अष्टौ गुणा येषु ते तथा, पुन सिद्ध—निष्पन्नम्, अनन्तचतुष्क—प्रागुक्तलक्षण येषा ते तथा, ते सिद्धा मे सिद्धिं ददतु ॥ १२३३ ॥

जह नगरगुणे मिच्छो जाणंतोऽवि हु कहेउमसमत्थो ।
तह जेसिं गुणे नाणी, ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२३४ ॥

पेठे बंधन-छेदथी अने धूमाडानी पेठे ऊर्ध्वगमन स्वभावथी जेमनी ऊर्ध्वगति थाय छे ते सिद्ध भगवानो मने शिवसुख आपो ॥ १२३० ॥

(सिद्धशिलानी उपर एक योजन गया बाद लोकनो अंतभाग आवेलो छे। त्यां जेमनी स्थिति प्रसिद्ध छे अर्थात् त्यां जेओ सदाकाळ रहे छे ते सिद्ध भगवंत मने शिवसुख आपो ॥ १२३१ ॥

जेओ अनंत छे, जे फरी जन्म लेता नथी, जेओ शरीरथी रहित छे, जेमने (शरीर न होवाथी) कोई प्रकारनी पीडा के उपद्रव नथी तथा ज्ञान अने दर्शनना उपयोगथी जेओ युक्त छे एवा ते सिद्ध भगवंतो मने मुक्ति आपो ॥ १२३२ ॥

जेओ (ज्ञानादि) अनंतगुणवाळा छे, तेमज (रूप, रस, गंध, स्पर्श आदि) गुणोथी रहित होवाथी जेओ निर्गुण पण छे, तथा जेओ एकत्रीश अथवा आठ गुणोवाळा छे अने जेओ अनंतचतुष्कथी युक्त छे ते सिद्ध भगवंतो मने मुक्ति आपो ॥ १२३३ ॥

व्याख्या—यथा—म्लेच्छो नगरगुणान्—प्रासादनिवासमधुररसभोजनादीन् जानन्नपि अन्येषां म्लेच्छानां पुरस्तात् कथयितुम् असमर्थः—समर्थो न भवति, तथा—तेन प्रकारेण येषां सिद्धानां गुणान् जानन्नपि ज्ञानी कथयितुं न समर्थो भवति, ते सिद्धा मे सिद्धिं ददतु ॥ १२३४ ॥

जे अ अणंतमणुत्तरमणोवमं सासयं सयाणंदं ।
सिद्धिसुहं संपत्ता ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥ १२३५ ॥

व्याख्या—ये च सिद्धिसुखं—मुक्तिसुखं सम्प्राप्तास्ते सिद्धा मे—मह्यं सिद्धिं ददतु, कीदृशं सिद्धिसुखं ?—'अनन्तं' न विद्यते अन्तो-नाशो यस्य तत्तथा, पुनः 'अनुत्तरं' न विद्यते उत्तरम्—उत्कृष्टं यस्मात् तत् तथा, पुनः अनुपमं न विद्यते उपमा यस्य तत् तथा, पुनः 'सदानन्दं' सदा—सर्वस्मिन् काले आनन्दो यत्र तत् तथा ॥ १२३५ ॥

जे पंचविहायारं आयरमाणा सया पयासंति ।
लोयाणणुग्गहत्थं ते आयरिए नमंसामि ॥ १२३६ ॥

व्याख्या—ये ज्ञानादिपञ्चविधाचारम्, आचरन्तो लोकानामनुग्रहार्थं सदा प्रकाशयन्ति—प्रकटीकुर्वन्ति तान् आचार्यान् अहं नमस्यामि—नमस्करोमि ॥ १२३६ ॥

देसकुलजाइरूवाइएहिं बहुगुणगणेहिं संजुत्ता ।
जे हुंति जुगे पवरा ते आयरिए नमंसामि ॥ १२३७ ॥

व्याख्या—ये देशकुलजातिरूपादिकैर्बहुभिर्गुणानां गणैः—समूहैः संयुक्ताः—सहिताः सन्तः युगे प्रवराः—मुख्या भवन्ति, तानाचार्यान् अहं नमस्यामि ॥ १२३७ ॥

जेम भील नगरना गुणोने जाणतो होवा छतां पण कही शकतो नथी तेम जेमना गुणोने जाणता होवा छतां पण ज्ञानीपुरुषो कही शकता नथी ते सिद्ध भगवंतो मने शिवसुख आपो ॥१२३४॥

जे सुखनो अंत-नाश नथी, जेनाथी उत्कृष्ट बीजुं सुख नथी; जे सुखनी उपमा आपी शकाय एवी नथी, जेमां सदाकाळ आनंद छे (अर्थात् संसारनां समग्र सुखनो अनंत वर्ग करीने सिद्धना एक प्रदेशना सुखनी साथे तेनी तुलना करवामां आवे तो पण तेनी बराबरी न करी शके) एवा सिद्धिसुखने पामेला सिद्ध भगवंतो मने मुक्ति आपो ॥ १२३५ ॥

आचार्य—

पंचविध आचारने (ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार अने वीर्याचार) सदा आचरता एवा जेओ भव्य जनोना अनुग्रहने माटे तेनो उपदेश आपे छे ते आचार्य महाराजने हुं नमस्कार करुं छुं ॥ १२३६ ॥

देश, कुळ, जाति अने रूपादिक बहुगुणोना समुदायथी जेओ संयुक्त छे अने जेओ पोताना युगमां श्रेष्ठ गणाय छे ते आचार्य महाराजने हुं नमस्कार करुं छुं ॥ १२३७ ॥

जे निच्चमप्पमत्ता विगहविरत्ता कसायपरिचत्ता।
धम्मोवएससत्ता ते आयरिए नमसामि ॥ १२३८ ॥

व्याख्या—ये नित्यम् अप्रमत्ता—प्रमादरहिता, पुन विकथा—राजकथादिकाख्याभ्यो विरक्ता, पुन परित्यक्ता कषाया—क्रोधादयो यैस्ते तथा, पुनर्धर्मोपदेशे सक्ता—लग्ना यद्वा शक्ता—समर्थास्तानाचार्यान् नमस्यामि ॥ १२३८ ॥

जे सारणवारणचोयणाहिँ पडिचोयणाहिँ निच्चंपि।
सारंति निय गच्छं ते आयरिए नमसामि ॥ १२३९ ॥

व्याख्या—ये आचार्या सारणा-वारणा-चोदनादिभि पुन प्रतिचोदनादिभिर्नित्यमपि निज गच्छं सारयन्ति, तत्र विस्मृतस्य सारणं सारणा अशुद्धं पठतो वारणं वारणा, अध्ययनाद्यर्थं प्रेरणं चोदना, कठोरवचनै प्रेरणं प्रतिचोदना, इत्थं सारणादिभिर्ये स्वगच्छस्य रक्षणं कुर्वन्ति तानाचार्यान् नमस्यामि ॥ १२३९ ॥

जे मुणियसुत्तसारा, परोवयारिक्कतप्परा दिंति।
तच्चोवएसदाणं ते आयरिए नमसामि ॥ १२४० ॥

व्याख्या—मुणितो—ज्ञात सूत्राणां सारो यैस्ते तथा, अत एव परोपकारे एवैकस्मिन् तत्परा सन्तो ये तत्त्वोपदेशदानं ददति, तानाचार्यान् नमस्यामि ॥ १२४० ॥

अत्थमिए जिणसूरे केवलिचंदेऽवि जे पईवु व्व।
पयडंति इह पयत्थे ते आयरिए नमसामि ॥ १२४१ ॥

व्याख्या—जिन—अर्हन्नेव सूर—सूर्यस्तस्मिन् 'अस्तमिते' अस्तं गते सति पुन केवली—सामान्यकेवली स एव चन्द्रस्तस्मिन्नपि अस्तमिते सति प्रदीप इव ये इह—लोके पदार्थान् प्रकटयन्ति-प्रकटीकुर्वन्ति, तानाचार्यान् नमस्यामि ॥ १२४१ ॥

जेओ हमेशा (पोताना कर्तव्यमा) प्रमादरहित होय छे, विकथाओथी वर्जित रहे छे, कषायोथी दूर रहे छे अने धर्मनो उपदेश आपवामा तत्पर रहे छे ते आचार्य महाराजोने हु नमस्कार करु छु ॥ १२३८ ॥

जे सारणा, (आचारनी वारवार याद आपे छे) वारणा, (आचार भूलता होय तो रोके छे), चोयणा (आचार माटे प्रेरणा करीने तेमा जोडे छे) अने पडिचोयणा वडे निरतर स्वगच्छनी संभाळ राखे छे ते आचार्य महाराजने हु वदु छु ॥ १२३९ ॥

जेमणे सूत्रोनो सार-रहस्य-जाणी लीधो छे अने तेथी जेओ एक मात्र परोपकारमा ज तत्पर रहीने तत्त्वोना उपदेशनु दान आपे छे ते आचार्य महाराजोने नमस्कार करु छु ॥ १२४० ॥

जिनेश्वररूपी सूर्यनो अने सामान्य केवळीरूप चन्द्रनो अस्त थया पछी आ मनुष्यक्षेत्रमा दीपकनी पेठे जेओ तत्त्वनो प्रकाश करे छे ते आचार्य भगवतोने हु नमस्कार करु छु ॥ १२४१ ॥

ते पावभरक्कंते, निवडंते भवमहंधकुवम्मि ।
नित्थारयंति जीए ते आयरिए नमंसामि ॥ १२४२ ॥

व्याख्या—पापस्य यो भरः—अतिशयस्तेन आक्रान्तान् अत एव भवः—संसार एव यो महानन्धकूपस्तस्मिन् निपततो जीवान् ये निस्तारयन्ति तानाचार्यान्नमस्यामि ॥ १२४२ ॥

जे माय-ताय-बांधवपमुहेहिंतोऽवि इत्थ जीवाणं ।
साहंति हिअं कज्जं ते आयरिए नमंसामि ॥ १२४३ ॥

व्याख्या—अत्र—अस्मिन् संसारे ये आचार्या जीवानां मातृ-तात-बान्धवप्रमुखेभ्यो—जननी-जनक-भ्रात्रादिभ्योऽपि अधिकं कार्यं साधयन्ति, तानाचार्यान् नमस्यामि ॥ १२४३ ॥

जे बहुलद्धिसमिद्धा साइसया सासणं पभावंति ।
रायसमा निच्चिंता ते आयरिए नमंसामि ॥ १२४४ ॥

व्याख्या—बहुभिर्लब्धिभिः समृद्धाः—समृद्धिमन्तः, अत एव सह अतिशयैर्वर्त्तन्ते इति सातिशयाः सन्तो ये शासनं—जिनमतं प्रभावयन्ति—दीपयन्ति, कीदृशाः—ये राजसमा—नृपतुल्याः, अत एव निर्गता चिन्ता येभ्यस्ते निश्चिन्तास्तानाचार्यान् नमस्यामि ॥ १२४४ ॥

जे बारसंगसज्झायपारगा धारगा तयत्थाणं ।
तदुभयवित्थाररया तेऽहं झाएमि उज्झाए ॥ १२४५ ॥

व्याख्या—ये द्वादशाङ्गस्वाध्यायस्य पारगाः—पारगामिनः पुनः तदर्थानां—द्वादशाङ्ग्या अर्थानां धारकाः, पुनः तदुभयस्य—सूत्रार्थरूपस्य विस्तारे रता—रक्तास्तानुपाध्यायानहं ध्यायामि ॥ १२४५ ॥

पाहाणसमाणेऽवि हु कुणंति जे सुत्तधारया सीसे ।
सयलजणपूयणिज्जे तेऽहं झाएमि उज्झाए ॥ १२४६ ॥

पापना भारथी आक्रान्त थयेला अने तेथी ज संसाररूपी ऊंडा अंधारिया कुवामां पडता प्राणीओनो जे उद्धार करे छे ते आचार्य महाराजने हुं नमस्कार करुं छुं ॥ १२४२ ॥

जेओ संसारना जीवोनुं माता, पिता तथा भाई वगेरेथी ये अधिक हितकार्य साधे छे ते आचार्य महाराजोने हुं नमस्कार करुं छुं ॥ १२४३ ॥

जेओ बहु लब्धिओथी (शक्तिओथी) समृद्ध छे अने तेथी ज अतिशयोवाळा होवाथी जेओ (जैन) शासनने दीपावे छे एवा राजवीओ समा निश्चिंत आचार्योने हुं प्रणाम करुं छुं ॥ १२४४ ॥

उपाध्याय—

जेओ सूत्ररूप द्वादशांगीना स्वाध्यायमां पारंगत थयेला छे, तेमज द्वादशांगीना अर्थना जेओ जाणकार छे, तेमज ते बन्नेनो एटले द्वादशांगीरूप सूत्र अने तेना अर्थनो विस्तार (प्रचार) करवामां जेओ तत्पर छे ते उपाध्याय भगवंतोनुं हुं ध्यान धरुं छुं ॥ १२४५ ॥

व्याख्या—ये गुरवो हु—इति निश्चितं पाषाणसमानान्—प्रस्तरतुल्यानपि शिष्यान् सूत्रधारया—सूत्ररूपतीक्ष्ण शस्त्रधारया सकलजनाना—सर्वलोकाना पूजनीयान् कुर्वन्ति, तानुपाध्यायान् अह ध्यायामि ॥ १२४६ ॥

मोहाहिदट्ठनट्ठप्पनाणजीवाण चेयण दिंति ।
जे केऽवि नरिंदा इव तेऽह झाएमि उज्झाए ॥ १२४७ ॥

व्याख्या—मोह एव अहि—सर्पस्तेन दष्टा, अत एव नष्टमात्मज्ञान येषा ते नष्टात्मज्ञाना, एवम्भूता ये जीवास्तेभ्यो ये केऽपि गुरवं चेतना—चैतन्य ददति, के इव ?—नरेन्द्रा इव—विषवैद्या इव, तानुपाध्यायानह ध्यायामि ॥ १२४७ ॥

अन्नाणवाहिविहुराण पाणिण सुअरसायण सार ।
जे दिंति महाविज्ञा तेऽह झाएमि उज्झाए ॥ १२४८ ॥

व्याख्या—अज्ञानमेव व्याधि—रोगस्तेन विधुरा पीडितास्तेभ्य प्राणिभ्य सार—प्रधान श्रुतमेव रसायन—महारोगनाशकौषध ये महावैद्या इव गुरवो ददति तानुपाध्यायानह ध्यायामि ॥ १२४८ ॥

गुणवणभजणमणगयदमण कुससरिसनाणदाण जे ।
दिंति सया भवियाण तेऽह झाएमि उज्झाए ॥ १२४९ ॥

व्याख्या—गुणा एव वनानि तानि भञ्जन्तीति गुणवनभञ्जना ये मदा—जातिमदादयोऽष्टौ ते एव गजा—हस्तिनस्तेषा दमने—वशीकरणे अङ्कुशसदृश यद् ज्ञान तस्य दान ये गुरवो भव्येभ्य सदा ददति तानुपाध्यायान् अह ध्यायामि ॥ १२४९ ॥

दिणमास जीवियताइ सेसदाणाइ मुणिउ जे नाण ।
मुत्तिं दिंति सया तेऽह झाएमि उज्झाए ॥ १२५० ॥

व्याख्या—शेषदानानि दिनमासजीवितान्तानि 'मुणिउ' ज्ञात्वा ये गुरव सदा मुक्त्यन्त ज्ञान ददति, तान् उपाध्यायानह ध्यायामि, दिन च मासश्च जीवित च—दिनमासजीवितानि तेषु

जेओ पाषाण जेवा (जडबुद्धि) शिष्योने पण सूत्रनी तीक्ष्ण धारा वडे समग्र मनुष्योना पूजनीय बनावे छे ते उपाध्याय भगवतोनु हु ध्यान धरु छु ॥ १२४६ ॥

मोहरूपी सर्पे डसवाथी जेमना ज्ञान प्राण नष्ट थई गया छे एवा जीवोने विषवैद्यनी जेम जेओ नवु चैतन्य आपे छे ते उपाध्यायजी महाराजनु हु ध्यान धरु छु ॥ १२४७ ॥

अज्ञानरूप व्याधिथी पीडित थयेला प्राणीओने महावैद्यनी पेठे जेओ श्रुतज्ञानरूपी श्रेष्ठ रसायण आपे छे ते उपाध्याय भगवतोनु हु ध्यान धरु छु ॥ १२४८ ॥

भव्य जीवोना गुणरूप वननो नाश करनारा मदरूपी (जाति वगेरे आठ प्रकारना) हाथीओनु दमन करवामा अकुश समान एवु जे ज्ञान तेनु सदाकाळ दान आपनार उपाध्याय भगवतोनु हु ध्यान धरु छु ॥ १२४९ ॥

(ज्ञानदान सिवायना) बीजा दानो दिवसो सुधी, महिनाओ सुधी के जीवनपर्यंतना होय छे

अन्तो येषां तानि शेषदानानि सन्ति इति ज्ञात्वा मुक्तौ अन्तो यस्य तत् मुक्त्यन्तं ज्ञानं—श्रुतज्ञानदानं ये ददति तानहं ध्यायामीति भावः ॥ १२५० ॥

अन्नाणंधे लोयाण, लोयणे जे पसत्थसत्थमुहा ।
उग्घाडयंति सम्मं, तेऽहं झाएमि उज्झाए ॥ १२५१ ॥

व्याख्या—ये गुरवोऽज्ञानेन अन्धानि, लोकाना लोचनानि—नेत्राणि प्रशस्तशास्त्रमुखात् लोचनपक्षे प्रशस्तशस्त्रमुखात् सम्यक् उद्घाटयन्ति, तानुपाध्यायान् अहं ध्यायामि ॥ १२५१ ॥

बावन्नवण्णचंदणरसेण जे लोयपावतावाइं ।
उवसामयंति सहसा तेऽहं झाएमि उज्झाए ॥ १२५२ ॥

व्याख्या—द्वापञ्चाशद्वर्णा एव चन्दनरसः तेन ये गुरवः सहसा—अकस्मात् लोकानां पापतापान् उपशामयन्ति, तानुपाध्यायानहं ध्यायामि ॥ १२५२ ॥

जे रायकुमरतुल्ला गणतत्तिपरा अ सूरिपयजुग्गा ।
वायंति सीसवग्गं तेऽहं झाएमि उज्झाए ॥ १२५३ ॥

व्याख्या—ये राजकुमारतुल्याः, च-पुनः गणतृप्तिपरागणसमाधानकरणतत्पराः तथा सूरिपदस्य-आचार्यपदस्य योग्याः शिष्यवर्गं वाचयन्ति शिष्यवर्गाय वाचनां ददति, तानुपाध्यायानहं ध्यायामि ॥१२५३॥

जे दंसण-नाण-चरित्तरूवरयणत्तएण इक्केण ।
साहंति मुक्खमग्गं ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२५४ ॥

व्याख्या—ये दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूपरत्नत्रयेण मोक्षमार्गं साधयन्ति, कीदृशेन दर्शन-ज्ञान-चारित्रत्रयेण?—'एकेन' एकीभावं गतेन सम्मिलितेनेत्यर्थः, त्रयाणामेकत्वं विना मोक्षमार्गो न सिद्ध्यतीति भावः, तान् सर्वान् साधून् अहं वन्दे ॥ १२५४ ॥

एम जाणीने मोक्षमां जाय त्यांसुधी चाले एवुं ज्ञानदान जे सदाकाळ आपे छे ते उपाध्याय भगवंतोनुं हुं ध्यान धरुं छुं ॥ १२५० ॥

अज्ञानथी अंध बनेला जीवोनां नेत्रोने जेओ सारां शास्त्रो द्वारा (चिकित्सापूर्वक) सारी रीते उघाडे छे (शास्त्ररूपी शस्त्रो वडे तेमनां नेत्रपडळोने छेदीने प्रकाश आपे छे) ते उपाध्याय भगवंतोनुं हुं ध्यान धरुं छुं ॥ १२५१ ॥

बावन अक्षररूप (चौद स्वर, तेत्रीश व्यंजन, ळ, क्ष, ज्ञ—ए त्रण बहुमान्य वर्णो, अनुस्वार अने विसर्ग) चंदनना रसवडे लोकोना पापरूप तापने एकदम शमावी दे छे ते उपाध्याय भगवंतोनुं हुं ध्यान धरुं छुं ॥ १२५२ ॥

युवराज समान (एटले भविष्यमां आचार्यरूप राजपदवी प्राप्त करवाना छे), गच्छनुं समाधान करवामां तत्पर अने आचार्यपदने लायक एवा जेओ शिष्यवर्गने वाचना आपे छे ते उपाध्याय भगवंतोनुं हुं ध्यान धरुं छुं ॥ १२५३ ॥

साधु

दर्शन, ज्ञान अने चारित्ररूप अनुपम रत्नत्रयी वडे जेओ मोक्षमार्गने साधे छे ते बधा साधुमहाराजोने हुं वंदन करुं छुं ॥ १२५४ ॥

गयदुविहदुट्ठझाणा जे झाइअधम्म सुक्कझाणा य ।
सिक्खति दुविहसिक्खं ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२५५ ॥

व्याख्या — गते द्विविधे — द्विप्रकारे दुष्टध्याने — आर्त — रौद्राख्ये येभ्यस्ते गतद्विविधदुष्टध्याना , च — पुन ध्याते धर्म-शुक्ल ध्याने यैस्ते तथाभूता सन्तो ये द्विविधशिक्षा — ग्रहणा-सेवनारूपा शिक्षन्ते, तान् सर्वान् साधून् वन्दे ॥ १२५५ ॥

गुत्तित्तएण गुत्ता तिसल्लरहिया तिगारवविमुक्का ।
जे पालयति तिपइ ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२५६ ॥

व्याख्या — गुप्तित्रयेण — मनोवाक्कायगुप्तिलक्षणेन गुप्ता — गुप्तिमन्त पुनस्त्रिभि शल्यै — मायाशल्यादिभि रहिता — वर्जितास्तथा त्रिभिर्गारवै — ऋद्धिगारवादिभिर्विमुक्ता सन्तो ये त्रिपदीं — ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूपा पालयन्ति, तान् सर्वान् साधूनह वन्दे ॥ १२५६ ॥

चउविहविगहविरत्ता जे चउविहचउकसायपरिचत्ता ।
चउहा दिसति धम्म ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२५७ ॥

व्याख्या — चतुर्विधाभ्य — चतुष्प्रकाराभ्य विकथाभ्यो — राजकथादिभ्यो विरक्ता , पुन चतुर्विधा — अनन्तानुबन्ध्यादिभेदाच्चतुष्प्रकारा ये चत्वार कषाया — क्रोधादयस्ते परित्यक्ता यैस्ते तथा, ईदृशा सन्तो ये दानादिभेदाच्चतुर्द्धा — चतुर्भि प्रकारैर्धर्मं दिशन्ति — प्ररूपयन्ति, तान् सर्वान् साधूनह वन्दे ॥ १२५७ ॥

उज्झिअपचपमाया निज्जिअपंचिंदिया य पालेति ।
पचेव [य] समिईओ ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२५८ ॥

व्याख्या — उज्झिता — त्यक्ता पञ्च प्रमादा — मद्यादयो येस्ते तथा, च पुन निर्जितानि पञ्चेन्द्रियाणि येस्ते निर्जितपञ्चेन्द्रिया सन्त पञ्चैव समिती पालयन्ति तान् सर्वान् साधून् वन्दे, च पादपूरणे ॥ १२५८ ॥

जेमने बे प्रकारना (आर्त्त अने रौद्र) दुष्ट ध्यानो नष्ट थया छे अने जेओ धर्मध्यान तेमज शुक्लध्याननु ध्यान धरे छे तेमज बे प्रकारनी शिक्षा एटले *ग्रहणशिक्षा तथा आसेवना शिक्षाओने जेओ शीखे छे ते सर्व साधुओने हु वदन करु छु ॥ १२५५ ॥

जेओ त्रण (मन, वचन अने कायानी) गुप्तिओथी रक्षायेल छे, त्रण (माया, निदान अने मिथ्यात्व) शल्योथी रहित छे, त्रण (ऋद्धि, रस अने शाता) गारवोथी मुक्त छे अने जेओ त्रिपदी (एटले ज्ञान, दर्शन अने चारित्र)नु पालन करे छे ते बधा साधु महाराजोने हु वदन करु छु ॥ १२५६ ॥

जेओ चार प्रकारनी विकथाथी (स्त्रीकथा, भोजनकथा, देशकथा अने राजकथा) विरक्त छे, चार प्रकारना कषायना (क्रोध, मान, माया अने लोभ) त्यागी छे, अने चार प्रकारनो उपदेश (दान, शीयळ, तप अने भावना) करे छे ते बधा साधु महाराजोने हु वदन करु छु ॥ १२५७ ॥

पाच प्रमादना (मद्य, विषय, कषाय, निद्रा अने विकथा) परिहारी, अने पाच इन्द्रियो (स्पर्शन, रसन, घ्राण, नयन अने श्रवण) ना विजेता एवा जेओ पाच समितिओनु (ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभडमत्तनिक्षेपनासमिति अने परिष्ठापनिकासमिति) पालन करे छे ते बधा साधु महाराजोने हु वदन करु छु ॥ १२५८ ॥

---

*ग्रहणशिक्षा एटले शास्त्रोनु ज्ञान मेळववु अने आसेवनाशिक्षा एटले पालन करवु ।

छज्जीवकायरक्खणनिउणा हासाइछक्कमुक्का जे ।
धारंति अ वयछक्कं ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२५९ ॥

व्याख्या — षड् जीवकायानां पृथिव्यादीनां रक्षणे निपुणाः—दक्षाः, च—पुनः हास्यादिषट्‌काद् मुक्ताः—रहिताः सन्तो ये व्रतषट्कं—प्राणातिपातविरमणादिरात्रिभोजनपर्यन्तं धारयन्ति, तानित्यादि प्राग्वत् ॥ १२५९ ॥

जे जियसत्तभया गयअट्ठमया नवावि बंभगुत्तीओ ।
पालंति अप्पमत्ता ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२६० ॥

व्याख्या — जितानि इहलोकभयादीनि सप्तभयानि यैस्ते तथा, गता अष्टौ मदाः जातिमदादयो येभ्यस्ते गताष्टमदाः, पुनः अप्रमत्ताः—प्रमादरहिताः सन्तो ये नवापि ब्रह्मगुप्तीः पालयन्ति, तान् सर्वान् साधून् वन्दे ॥ १२६० ॥

दसविहधम्मं तह बारसेव पडिमाओ जे अ कुव्वंति ।
बारसविहं तवोवि अ ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२६१ ॥

व्याख्या — च-पुनः ये दशविधं—दशप्रकारं धर्मं—क्षान्त्यादिकं तथा द्वादशैव प्रतिमाः—साधुसम्बन्धिनीः कुर्वन्ति—धारयन्ति, च-पुनः द्वादशविधं तपोऽपि अनशनादिकं कुर्वन्ति, तान् सर्वान् साधूनहं वन्दे ॥ १२६१ ॥

जे सतरसंजमंगा, उव्वूढाट्ठारसहससीलंगा ।
विहरंति कम्मभूमिसु ते सव्वे साहुणो वंदे ॥ १२६२ ॥

व्याख्या — सप्तदशभेदः—संयमः अङ्गे—शरीरे येषा ते तथा, पुनरुद्व्यूढानि—उत्कर्षेण धृतानि अष्टादशसहस्रशीलाङ्गानि यैस्ते तथा, एवम्भूताः सन्तो ये कर्मभूमिषु पञ्चदशसु विहरन्ति—विचरन्ति, तान् साधून् अहं वन्दे ॥ १२६२ ॥

जेओ छ प्रकारना जीवनिकायो (पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति अने त्रस) नुं रक्षण करवामां कुशळ छे, हास्यादिक षट्कथी (हास्य, रति, अरति, शोक, भय अने जुगुप्सा) जेओ मुक्त छे अने जेओ छ व्रतोने (प्राणातिपातविरमण, मृषावादविरमण, अदत्तादानविरमण, मैथुनविरमण, परिग्रहविरमण अने रात्रिभोजनविरमण) प्राणनी पेठे धारण करे छे ते सर्व साधुजनोने हुं वंदन करुं छुं ॥ १२५९ ॥

जेमणे इहलोकभय वगेरे सात भयोने जीती लीधा छे, जेमनामांथी आठ प्रकारना (जाति वगेरे) मदो चाल्या गया छे अने जेओ नव प्रकारनी ब्रह्मचर्यनी गुप्तिओनुं प्रमाद विना पालन करे छे ते बधा साधु महाराजोने हुं वंदन करुं छुं ॥ १२६० ॥

जेओ दश प्रकारनो यतिधर्म, बार प्रकारनी साधु संबंधी प्रतिमाओ अने बार प्रकारनां तपनुं आराधन करे छे ते सर्व साधु महाराजोने हुं वंदन करुं छुं ॥ १२६१ ॥

सत्तर प्रकारना संयमने पाळता अने अढार हजार शीलांगने धारण करता जेओ कर्मभूमिमां विचरे छे ते सर्व साधु महाराजोने हुं वंदन करुं छुं ॥ १२६२ ॥

उपदेशमाला संदब्भो

(गाहा)

उक्कोसो सज्झाओ, चउदस–पुव्वीण बारसगाइ ।
तत्तो परिहाणीए, जाव तयथ्थो नमोकारो ॥ १ ॥
जलणाइ-भए सेस, मोत्तु इकपि जह महारयण ।
घिप्पइ सगामे वा, अमोह–सत्थ जह तहेह ॥ २ ॥
मोत्तुपि बारसग, स एव मरणमि कीरए जम्हा ।
अरहत नमोकारो, तम्हा सो बारसगत्थो ॥ ३ ॥
सव्वंपि बारसंग, परिणाम-विशुद्धि हेउ मित्ताग ।
तक्कारण-मित्ताओ, किह न तयथ्थो नमोकारो ॥ ४ ॥
न हु तंमि देसकाले सक्को बारसविहो सुयक्खधो ।
सव्वो अणुचिंतेउ, घतपि समत्थ-चित्तेण ॥ ५ ॥

चौद पूर्वधरोने उत्कृष्ट स्वाध्याय बार अगोनो होय छे। त्यारपछी अनुक्रमे घटता घटता छेवटे द्वादशागीनो सार जे नमस्कार महामत्र तेनो स्वाध्याय होय छे ॥ १ ॥

(कारणके) अग्नि आदिनो भय आवी पडे त्यारे बीजी तमाम वस्तुओने पडती मूकीने जेम एक महारत्नने ग्रहण करवामा आवे छे तथा जेम सग्रामनी अदर बीजा शस्त्रोने छोडी दइने एक जे अमोघ शस्त्र होय ते ग्रहण करवामा आवे छे तेम अहीं पण मरण उपस्थित थाय त्यारे (ए अवस्थामा द्वादशागीनु स्मरण अशक्य होवाने लीधे) द्वादशागीने छोडीने नमस्कारमत्रनु ज स्मरण करवामा आवे छे। तेथी अरिहत (आदि पचपरमेष्ठीओ)ने करेलो नमस्कार ए द्वादशागीनो सार छे ॥ २–३ ॥

कारणके आखी ये द्वादशागी परिणामनी विशुद्धिने माटे ज छे अने नवकार पण परिणामनी विशुद्धिनु कारणमात्र छे। एटले नमस्कारमत्रने द्वादशागीनो सार केम न कही शकाय ? (अर्थात् द्वादशागीनु जे कार्य परिणामविशुद्धि ते नमस्कारमत्रथी पण थतु होवाने लीधे नमस्कारमत्र ए द्वादशागीनो सार छे एम अवश्य कही शकाय) ॥ ४ ॥

कारणके मरण आदि आवी पडे त्यारे अत्यत समर्थ चित्तवाळा (चौद पूर्वधरो) पण ते देश काळमा (ते अवस्थामा) समग्र द्वादशागीनु अनुचिंतन करी शकता नथी। (परममगलभूत पचपरमेष्ठिनमस्कारमत्रनु ज मात्र ते अवस्थामा स्मरण करी शकाय छे। माटे नमस्कारमत्र ए द्वादशागीनो सार छे) ॥ ५ ॥

नामाइ-मंगलाणं, पढमं चिय मंगलं नमोकारो ।
अवणेइ वाहि-तक्कर-जलणाइ-भयाइं सव्वाइं ॥ ६ ॥
हरइ दुहं कुणइ सुहं, जणइ जसं सोसए भव-समुद्दं ।
इहलोय-पारलोइय-सुहाण मूलं नमोकारो ॥ ७ ॥

नाम आदि मंगळोमां (नाम, स्थापना, द्रव्य तथा भावमंगळमां) नमस्कार ए प्रथम (अर्थात् उत्कृष्ट) मंगळ छे । अने ते व्याधिभय, चोरभय, अग्निभय आदि सर्व भयोने दूर करे छे ॥ ६ ॥

नमस्कार मंत्र दुःखने हरे छे, सुखने करे छे, यशने फेलावे छे, तथा संसारसमुद्रने सुकवी नाखे छे । नमस्कार महामंत्र आ लोक अने परलोकनां तमाम प्रकारनां सुखोनुं मूळ छे ॥ ७ ॥

उपदेशमाला (पुष्पमाला) संदर्भ परिचय

प्रद्युम्न नामे सचिवे पोतानो वधो वैभव तजी दई मलधारी श्री अभयदेवसूरि पासे दीक्षा लीधी अने जैन शास्त्रोनो अभ्यास करीने मलधारी हेमचंद्रसूरि नामथी प्रसिद्धि मेळवी । तेओ सं. ११६४ मां विद्यमान हता ।

सिद्धराज जयसिंह तेमनो भक्त हतो । अने तेमना उपदेशथी राजाए जैन शासननी प्रभावनानां कार्यो कर्यां हतां । पाटणथी शत्रुंजय अने गिरनार तीर्थ माटे नीकळेला संघमां आ हेमचंद्रसूरि साथे हता । वणथलीमां रा'खेंगारे पैसा पडाववाना इरादे संघने रोक्यो हतो त्यारे राजा आ आचार्यनी वाणीथी प्रतिबोध पाम्यो हतो अने संघने जवाने माटे अनुज्ञा आपी हती ।

आ मलधारी हेमचंद्रसूरिए अनेक मोटा ग्रंथोनी रचना करी छे । ते पैकी उपदेशमाला, जेनुं बीजुं नाम 'पुष्पमाला' छे तेमांथी नवकार संबंधी संदर्भ लईने अनुवाद साथे अहीं प्रकट कर्यो छे ।



श्रीमद्हेमचन्द्रसूरिविरचितस्य प्राकृतद्व्याश्रयमहाकाव्यस्य श्रीपूर्णकलशगणिरचितटीकोपेतस्य सप्तमसर्गस्य संदर्भः ।

सोअनसा रोतूण वि रोत्तुमणा विम्हरन्ति रोत्तव्वं ।
दट्ठूण जाण मुत्तिं, अरहताण नमो ताण ॥ ५२ ॥

व्याख्या — शोकवशात् स्वबन्धुवियोगसमुद्भवद् स्वपरतन्त्रत्वाद् रुदित्वापि रोदन कृत्वापि रोदितुमनस रोदनपरायणचेतस प्राणिन येषा मूर्ति वपुर्दृष्ट्वा रोदितव्य विपन्नस्वबान्धवादिक विसरन्ति न स्मृतिपथमानयन्ति तेभ्योऽर्हद्भ्यो नम नमस्कारोऽस्तु ॥ ५२ ॥

जे दट्ठव्वे दट्ठुं, इन्दो काहीअ लोअणसहस्स ।
दसणतत्ति काउ, अरिहताण नमो ताण ॥ ५३ ॥

व्याख्या — यान् द्रष्टव्यान् लोकातीतसौभाग्यादियुक्तत्वाद् वीक्षणीयान् द्रष्टु दर्शनाय लोचनसहस्रमिन्द्र अकरोत् अकार्षीत् चकार वा । दर्शनमपि किमर्थमित्याह । दर्शनेन निर्निमिषवीक्षणेन तृप्ति आत्मन संतोष कर्तुम् । तेभ्योऽर्हद्भ्यो नम ॥ ५३ ॥

काऊण कायव्व, कम्मं काहिन्ति जे ण पुणरुत्त ।
जगबोहमिच्छिराण, अरहताण नमो ताण ॥ ५४ ॥

व्याख्या — कर्तव्य सकलकर्मक्षय कृत्वा ये 'पुणरुत्तम्' इति भूयोऽपि न कर्म करिष्यन्ति कर्तारो वा । वीतरागत्वाद् न मुक्तिमपहाय बुद्धवत् स्वदर्शनतिरस्कारनिवारणाय इह जन्म आसाद्य पुनरपि कर्म भन्स्यन्तीत्यर्थ । तेभ्यो जगद्बोधमेपितृभ्य अभिलापुकेभ्योऽर्हद्भ्यो नम ॥ ५४ ॥

अनुवाद

(अरिहत भगवत[1])

(पोताना बाधवोना वियोगथी थयेला) शोकने लीधे रडीने पण रडवानी इच्छावाळा अर्थात् सतत रुदन कर्या करता माणसो जेमनी मूर्तिना दर्शन करीने रोदितव्य एटले मरेला बाधव आदिने भूली जाय छे ते अरिहत भगवतोने मारो नमस्कार हो ॥ ५२ ॥

(अलौकिक सौभाग्य आदि गुणोने लीधे खास) दर्शनीय जे भगवानना दर्शन करवा माटे तथा दर्शन करीने आत्मतृप्ति करवा माटे इद्रे हजार आखो बनावी ते अरिहतोने मारो नमस्कार हो ॥ ५३ ॥

(सकलकर्मक्षयरूप) कर्तव्य करीने जे फरीथी कर्म करता (अर्थात् बाधता) नथी अने जे जगतने प्रतिबोध करवानी अभिलाषावाळा छे ते अरिहतोने नमस्कार थाओ ॥ ५४ ॥

---

१ इंद्रने संस्कृत भाषामा सहस्राक्ष (हजार आंखवाळो) कहेवामा आवे छे ए दृष्टिए अहीं ग्रंथकार घटना करी छे।

जो अणुगच्छइ जच्छइ, छिन्दिउमच्छइ तणुं च तेसिं पि।
अणभिन्दिअभावाणं, अरहंताणं नमो ताणं ॥ ५५ ॥

व्याख्या — योऽनुगच्छति भक्त्या पृष्ठलग्नः प्रयाति। तथा यो यच्छति सादरं स्ववस्तु ददाति। यस्तु तनुं छेत्तुमास्ते। तेष्वपि 'अभिन्नभावेभ्यो निर्विशेषमनस्केभ्यस्तेभ्यो जगत्प्रसिद्धेभ्योऽर्हद्भ्यो नमः' ॥ ५५ ॥

सविहे न जाण कुज्झइ जुज्झइ मुज्झइ भवे अगिज्झन्तो।
देही बुज्झइ सिज्झइ, अरहंताणं नमो ताणं ॥ ५६ ॥

व्याख्या — येषा सविधे समीपे भवे अगृध्यन् गार्ध्यमगच्छन्। संसारविरक्तो भवन्निति यावत्। देही जन्तुर्न क्रुध्यति न कोपं गच्छति। तथा न युध्यते न युद्धं करोति यतो न मुह्यति न मोहमुपगच्छति। मोहमूलत्वात् क्रोधयुद्धयोः। किन्तु बुध्यते अवगततत्त्वो भवति। तथा च सति सिध्यति सिद्धो भवति। तेभ्योऽर्हद्भ्यो नमः ॥ ५६ ॥

रुन्धिअकरणं रुम्भिअपवणं रुज्झिअमणं अपडिएहिं।
झायव्वाण मुणीहिं, अरहंताणं नमो ताणं ॥ ५७ ॥

व्याख्या — रुद्धकरणम्। रुद्धपवनम्। रुद्धमनः कृतेन्द्रियोच्छ्वासनिःश्वासचित्तनिरोधं यथा भवति, एवमपतितैः ध्यानाद् असवलितैर्मुनिभिर्ध्यातव्येभ्यस्तेभ्यः प्रसिद्धेभ्योऽर्हद्भ्यो नमः ॥ ५७ ॥

सडिअरया कढिअमला, वड्ढिअतवतेअवेढिअङ्गा य।
जाणज्ज वि वरमुणिणो, अरहंताणं नमो ताणं ॥ ५८ ॥

व्याख्या — सन्नरजसः गलितवध्यमानकर्माणः। क्वथितमलाः भस्मीकृतवद्धकर्माणः। यतो वृद्धं वृद्धिं गतं यत् तपस्तेजस्तेन वेष्टितं व्याप्तम् अङ्गं येषा ते तथा च वरमुनयः अद्यापि दुष्षमाकालेऽपि वर्तन्ते येषामर्हताम्। यन्मतसंस्थिता इत्यर्थः। तेभ्योऽर्हद्भ्यो नम. ॥ ५८ ॥

(भक्तिथी) जे पाछळ पाछळ फरे छे, आदरपूर्वक जे दान दे छे तथा (द्वेषथी) शरीर कापवा माटे जे तैयार थई जाय छे ते वधा प्रकारना माणसो ऊपर जेमना मनमां भेदभाव नथी ते अरिहंतोने नमस्कार थाओ। (अर्थात् भक्त तथा द्वेपी वंने ऊपर जेमनी समानदृष्टि छे ते वीतराग अने वीतद्वेष अरिहंतोने मारो नमस्कार थाओ) ॥ ५५ ॥

जेमनी पासे (जवाथी) संसार ऊपर विरक्त थयेलो मनुष्य क्रोध करतो नथी, युद्ध करतो नथी, तेमज मोह पण पामतो नथी; परंतु तत्त्वनो जाणकार वने छे अने मोक्ष प्राप्त करे छे ते अरिहंतोने मारो नमस्कार हो ॥ ५६ ॥

इंद्रियो, श्वासोच्छ्वास तथा मननो रोध करीने अस्खलितपणे ध्यान धरता मुनिवरो जेमनुं ध्यान धरे छे ते अरिहंतोने मारो नमस्कार हो ॥ ५७ ॥

जेमनां वंधातां कर्मो गळी गयां छे, अने जेमणे पहेलां वांधेलां कर्मोने भस्मसात् कर्यां छे तथा वधेला तपना तेजथी जेमनुं अंग व्याप्त छे एवा श्रेष्ठ मुनिवरो जेमना शासनमां आजे पण विद्यमान छे ते अरिहंतोने मारो नमस्कार हो ॥ ५८ ॥

दुक्कडसवेल्लिअओ, भवपासोव्वेढणोज्जओ लोओ ।
उव्वेल्लिज्जइ जेहि, अरहताण नमो ताण ॥ ५९ ॥

व्याख्या — दुष्कृतेन अशुभकर्मणा सवेष्टितो व्याप्त । पर भवपाशोद्वेष्टने संसारबन्धनमोक्षणे उद्यत कृतप्रयत्नो लोको यैरुद्वेष्ट्यते बन्धनमुक्त क्रियते तेभ्योऽर्हद्भ्यो नम । 'दुक्कड' इत्यत्र आर्षत्वात् तस्य ड ॥ ५९ ॥

जे झाउ संपज्जइ, अणरिज्जिरसिज्जिराण सा सिद्धी ।
ते वचामो सरण, नचिरमचिरमणा सिद्धे ॥ ६० ॥

व्याख्या — यान् ध्यात्वा स्मृत्वा अखेत्तृस्वेतृणाम् अखेदनस्वेदनशीलाना खेद-स्वेदरहितानाम् इति यावत् । अस्माक सा सिद्धि तत् सिद्धत्व सपद्यते । तान् सिद्धान् नर्तितृ नर्तनशीलम् । भक्तिवशाद् उत्कलिकाकलितम् इत्यर्थ । तथा मदितृ तोषणशील मनो येषा ते तथाभूता वय शरण व्रजाम । 'झाउ' इत्यत्र सेवनक्रियापेक्षया प्राकाल्यम् न सपद्यते इत्यपेक्षया । तच्च भावितमेवेति ॥ ६० ॥

आणदरोविराण जेसु नमन्ताण होइ नोव्वेगो ।
धाइ समुह च मुत्ती ताण नमो सव्वसिद्धाण ॥ ६१ ॥

व्याख्या — यान् आनन्दरोदितृणा हर्षाश्रुविमोचनशीलाना सता नमता नमस्कुर्वता न उद्वेगो भवति । किन्तु यान् नमता मुक्ति समुखम् अभिमुख च धावति सत्वरम् आयाति । तेभ्य सर्वसिद्धेभ्यो नम । 'जेसु' इति 'द्वितीया-तृतीययो सप्तमी' [३ १३५] इति सप्तमी ॥ ६१ ॥

कुपहे धावन्ति असादिम च सादन्ति तेहि वि सम जो ।
धावइ खाइ अ त पि हु बोहन्ते झामि आयरिए ॥ ६२ ॥

व्याख्या — ये कुपथे अमार्गे । अनीतावितति यावत् । धावन्ति । तथा ये खाद्यते यत् तत् खाद तस्य भाव खादत्व, न विद्यते खादत्व यस्य तत् तथा अखाद्य वस्तु खादन्ति । तैरपि सम यो धावति कुपथे गच्छति, खादति अभक्षणीय भक्षयति च । हु इति निश्चितम् । तमपि तादृशमपि प्राणिन स्वय अधर्म अधर्मविप्रलब्ध च । अस्मादृशम् इत्यथ । बोधयतो धर्मदेशनया सन्मार्गे प्रवर्तयत, आचार्यान् ध्यायामि ससरामि ॥ ६२ ॥

अशुभ कर्मोथी वींटायेला होवा छता जे लोको ससारना बधनमाथी मुक्त थवानो प्रयत्न करी रह्या छे तेमने ससारना बधनमाथी मुक्त करनार अरिहतभगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ५९ ॥

(सिद्ध भगवत—)

जेमनु ध्यान धरवाथी खेद अने स्वेद (परसेवो) विनाना अमने ते सिद्धपदनी प्राप्ति थाय छे ते सिद्ध भगवानने अमे नाचता हृदये तथा सतुष्टहृदये शरणे जईए छीए ॥ ६० ॥

जेमने आनदना अश्रुपातपूर्वक नमस्कार करता उद्वेग नथी थतो पण उल्टी मुक्ति सामी दोडी आवे छे ते सर्व सिद्ध भगवतोने नमस्कार थाओ ॥ ६१ ॥

(आचार्य भगवत—)

उन्मार्गे दोडनारा माणसोनी साथे जे दोडे छे तथा अभक्ष्य खानार माणसनी साथे जे अभक्ष्य खाय छे तेवा माणसने पण जे प्रतिबोध पमाडे छे ते आचार्य भगवतोनु हु ध्यान धरु छु ॥ ६२ ॥

६३

कम्माइं वोसिरन्ता, अतुट्टिरेणं तवेण सक्कन्ता ।
अफुडिअ अचलिअमहिमा आयरिआ दिंतु ते बोहिं ॥ ६३ ॥

व्याख्या—कर्माणि व्युत्सृजन्तः आत्मनो दूरीकुर्वन्तः । ननु अनादिकालालीनकर्मणां कथं व्युत्सर्ग इत्याह । अत्रोटिना अच्छिद्रुरेण । संपूर्णेनेति यावत् । तपसा शक्नुवन्तः सामर्थ्यं बिभ्रतः । अस्फुटितः अन्यौजसा अखण्डितः अत एव अचलितः अकम्पितः । स्थिर इत्यर्थः । महिमा माहात्म्यं येषां ते तथा । ते सर्वप्रसिद्धा आचार्या बोधिं जिनधर्मावाप्तिं ददतु प्रयच्छन्तु ॥ ६३ ॥

फुट्टिअमोहो लोओ चल्लइ अपमिल्लिअव्वओ मोक्खे ।
जेहिं अपमीलिअच्छं पेच्छामो ते उवज्झाए ॥ ६४ ॥

व्याख्या—यैः कृत्वा स्फुटितः विदारितो मोहो येन स तथा । अपमीलितव्रतः उद्बुद्धचारित्रः लोको मोक्षे चलति गच्छति । तान् उपाध्यायान् अपमीलिताक्षं निर्निमेषनयनं यथा भवति एवं पश्यामः । उपाध्यायदर्शने वयं सतृष्णा इत्यर्थः ॥ ६४ ॥

अणउम्मिल्लिअ नाणोम्मीलणआ हरिसपसविरा लोए ।
सुअ जलमोज्झाया पवरिसन्तु वित्थरिअगुणभरिआ ॥ ६५ ॥

व्याख्या—अनुन्मीलितम् अनुद्भूतं यज्ज्ञानं तस्य उन्मीलना व्यञ्जकाः । हर्षं प्राणिप्रमोदं प्रसवितारः जननशीलाः । विस्मृताः सर्वत्र प्रसृता ये गुणास्तैर्भृताः निचिता उपाध्याया लोके जनमध्ये श्रुतमेव निर्मलपावित्र्यहेतुत्वाद् जलं प्रवर्षन्तु । निर्वृतिफलोत्पत्तये अस्मभ्यं प्रयच्छन्त्वित्यर्थः ॥ ६५ ॥

नो रूसइ नो तूसइ जेऊण मणं लयम्मि जो नेन्तो ।
मोत्तुं भवं विणीअं तं साहुजणं नमंसामि ॥ ६६ ॥

व्याख्या—यो भवं मोक्तुं त्यक्तुं मनो जित्वा वशीकृत्य लये साम्यावस्थायां नयन् सन् नो रुष्यति अमित्रे रोषं न करोति । नो तुष्यति, मित्रे तोषं न करोति । तं विनीतं जितेन्द्रियं साधुजनं नमस्यामि ॥ ६६ ॥

अखंड तपथी कर्मोने दूर करता, सामर्थ्यने धारण करता, तथा अखंड अने अचल छे महिमा जेमनो एवा आचार्यो बोधि-सम्यक्त्व आपो ॥ ६३ ॥

(उपाध्याय भगवंत—)

जेमना लीधे मोह दूर थवाथी अने चारित्र प्रगट थवाथी लोको मोक्ष तरफ प्रयाण करे छे ते उपाध्याय भगवंतोनुं अमे अनिमेष नयने दर्शन करीए छीए ॥ ६४ ॥

अप्रगट ज्ञानने व्यक्त करनारा, हर्षने फेलावनारा तथा विस्तृत गुणोथी परिपूर्ण एवा उपाध्याय भगवंतो लोकोमां श्रुतज्ञानरूपी जलनी वृष्टि करो ॥ ६५ ॥

(साधु भगवंत—)

संसारनो त्याग करवा माटे मनने जय करीने मनने लय पमाडता जेओ शत्रु उपर रोष करता नथी तेमज जेओ मित्र उपर राग धरता नथी ते साधु जनोने हुं नमस्कार करुं छुं ॥ ६६ ॥

उप्पाइअसद्दहणो असद्दहाणे वि देइ जो बोहिं ।
संसारनासिरो हं त साहु चिय विहेमि गुरु ॥ ६७ ॥

व्याख्या —अश्रद्धाने जिनप्रणीतजीवादिपदार्थे तथेति प्रत्ययरहितेऽपि उत्पादितश्रद्धान जनितास्तिक्यबुद्धिर्यो बोधिं ददाति । ससाराद् नाशिता नशनशीलोऽह तमेव साधु गुरु विदधामि ॥६७॥

पश्च वि अरहन्ताइ परमेट्ठी झाह झाअह किमन्नं ।
होऊण निव्विकप्पा पसमरया होअऊण तहा ॥ ६८ ॥

व्याख्या —भो भव्या निर्विकल्पा एते ध्येया न वेति सशयरहिता भूत्वा तथा प्रशमरता उपशमपरा भूत्वा पञ्चापि अर्हदादीन् ध्यायत । किमन्य हरिहरादिक ध्यायत । हरि-हरादिध्यानम् अपहाय अर्हद्ध्यानपरा भवतेति भाव ॥ ६८ ॥

(जिनेश्वरोए प्ररूपेला पदार्थो उपर) श्रद्धा विनाना मनुष्यने पण श्रद्धालु बनावता जेओ बोधि-सम्यक्त्व आपे छे ते साधु भगवतने ससारथी मुक्त थवा माटे प्रयत्न करतो हु गुरु तरीके स्वीकारू छु ॥ ६७ ॥

(हे भव्यजीवो ! मनमा) कोइ पण जातनो विकल्प कर्या सिवाय अर्थात् नि शक थईने तेमज प्रशमपरायण थइने अर्थात् प्रशमरसमा निमग्न बनीने अरिहत आदि पाचे परमेष्ठि भगवतोनु ध्यान धरो । बीजानु शा माटे ध्यान धरो छो ? अर्थात् बीजानु ध्यान तजीने अरिहतादि पाच परमेष्ठिओनु ध्यान करवामा परायण थाओ ॥ ६८ ॥

प्राकृतद्व्याश्रय संदर्भ परिचय

साहित्यना विद्वानने आचार्य श्रीहेमचद्रसूरिनो परिचय आपवो ए तो सूर्यनी सामे आरसी धरवा जेवी वात गणाय, छता प्रसगवश तेमना समय विषे ख्याल आपवो जरूरी छे ।

तेओ स ११४५ मा जन्म्या हता अने मात्र छ-सात वर्षनी उमरे तेमणे श्रीदेवचद्रसूरि पासे दीक्षा लीधी । जैनतत्त्वज्ञान तेमज अनेक शास्त्रोनो अभ्यास करी हेमचद्रसूरि नामे प्रसिद्धि मेळवी । तेमणे वाङ्मयना लगभग बधा विषयो उपर काबू मेळव्यो हतो। आ महान अभ्यासीए व्याकरण, छद, साहित्य, कोश, न्याय योग वगेरे विषयना ग्रथोनी रचना करी छे, महाकाव्यो पण रच्या छे।

व्याकरणविषयक 'द्व्याश्रय'काव्यनी सस्कृत अने प्राकृत भाषामा रचना करी छे । तेमाथी प्राकृत द्व्याश्रयमा नमस्कारविषयक केटलीक सुदर गाथाओ जोवामा आवी ते अमे अहीं समही तेना अनुवाद साथे प्रगट करी छे ।

आ सिवाय तेमना बीजा केटलाय ग्रथोना सदर्भो अमे लीधा छे, जे सस्कृत विभागमा छे ।



[४२]

सिरिजिणदत्तसूरिविरइयस्स सिरिसमयसुंदरगणिकय-वक्खोपेयस्स 'तं जयउ' थवणस्स संदब्भो ।

अथ प्रथमपरमेष्ठिनं वर्णयन्नाह—

नासियसयलकिलेसा, निहयकुलेसा पसत्थसुहलेसा ।
सिरिवद्धमाणतित्थस्स, मंगलं दिंतु ते अरिहा ॥ २ ॥

व्याख्या—ते अर्हन्तः प्रथमपरमेष्ठिनः श्रीवर्धमानतीर्थस्य—श्रीमहावीरसंघस्य मङ्गलं कल्याणं ददतु । किंविशिष्टा अर्हन्तः? 'नासियसयलकिलेसा' नाशिताः सकलाः क्लेशा यैस्ते नाशितसकलक्लेशाः । पुनः किंविशिष्टा अर्हन्तः? 'निहतकुलेसा' निहताः कुलेश्या अप्रशस्तकृष्णादिलेश्याः, पुनः किंविशिष्टा अर्हन्तः? 'पसत्थसुहलेसा' प्रशस्ताः शुभाः शुक्ला लेश्या येषा ते प्रशस्तशुभलेश्याः । अथवा प्रशस्ताः सुखाः सुखकारिण्यो लेश्या येषा ते प्रशस्तसुखलेश्याः ॥ २ ॥

अथ द्वितीयपरमेष्ठिनः सिद्धान् स्तुवन्नाह—

निद्दड्ढकम्मबीया, बीआ परमिट्ठिणो गुणसमिद्धा ।
सिद्धा तिजयपसिद्धा, हणंतु दुत्थाणि तित्थस्स ॥ ३ ॥

व्याख्या—द्वितीयाः परमेष्ठिनः सिद्धाः—तीर्थस्य चतुर्विधसंघस्य दौस्थ्यानि घ्नन्तु नाशयन्तु । किंविशिष्टाः सिद्धाः? 'निद्दड्ढकम्मबीआ' निर्दग्धानि निर्मूलितानि भस्मसात्कृतानि कर्माण्येव बीजानि यैस्ते निर्दग्धकर्मबीजाः । पुनः किंविशिष्टाः सिद्धाः? 'गुणसमिद्धा' गुणैरेकत्रिंशद्भिः समृद्धाः गुणसमृद्धाः । एकत्रिंशद्गुणानां गाथे इमे—

'पडिसेहेण संठाणे, वण्णे गंध-रस-फास-वेए अ ।
पण-पण-दु-पणट्ठ-तिहा, इगतीस अकायसंगरुहा ॥ १ ॥'

अनुवाद

(अरिहंत भगवंत—)

समस्त क्लेशोने दूर करनारा, कुलेश्या-कृष्ण, कापोत आदिनो नाश करनारा, प्रशस्त शुभ लेश्या-शुक्ल लेश्यावाळा एवा (प्रथम परमेष्ठी) अरिहंत-भगवंतो श्रीवर्धमानस्वामीना संघनुं कल्याण करो ॥ २ ॥

(सिद्ध भगवंत—)

जैन शासनना बीजा परमेष्ठी, जेमणे कर्मबीजोने बाळी नाख्यां छे, गुणोथी समृद्ध छे अने त्रण जगतमां प्रसिद्ध छे एवा सिद्ध भगवंतो श्रीवर्धमानस्वामीना संघनां पापोने हणी नाखो ॥ ३ ॥

अह्वा०—'कम्मे नव दरिसणमि चत्तारि आउए पच आइमे अते ।
सेसे दो दो भेया खीणाभिलावेण इगतीस ॥ २ ॥ [*आवश्यकसग्रहणि]

अनयोर्गाथयो व्याख्यान यथा—त्र्यस्र १—चतुरस्र २—वर्तुल ३—मण्डल ४—यताना ५ पञ्चाना सस्थानाना प्रतिषेध । एव पञ्चाना वर्णाना कृष्णादीना प्रतिषेध १० । तथा गन्धस्य सुरभ्यादि-भेदद्वयस्य प्रतिषेध १२ । तथा रसादीना कटुकादीना पञ्चाना प्रतिषेध १७ । तथा स्पर्शाना शीतादीना अष्टाना प्रतिषेध २५ । तथा वेदाना त्रिविधाना पुरुषादिवेदाना प्रतिषेध २८ । अकायो देहाभाव २९ । असगम सगरहित ३० । अरुहश्च जन्म-मरणाभाव ३१ ॥ इति प्रथमगाथाव्याख्यानम् ॥ १ ॥

द्वितीयगाथाव्याख्यान यथा—नव भेदा दर्शनावरणीयस्य ९ । चत्वारो भेदा आयुष १३ । पञ्च भेदा ज्ञानावरणीयस्य १८ । पुन पञ्च भेदा अन्तरायस्य । शेषे अनुक्ते वेदनीयस्य भेदद्वय सातासात-रूपम्, मोहनीयस्यापि भेदद्वय चारित्रमोहनीय १—दर्शनमोहनीय २ । चेति २७ । नामकर्मणोऽपि भेदद्वय शुभनामकर्म १—अशुभनामकर्मेति २ । २९ । तथा गोत्रस्यापि भेदद्वय उच्चैर्गोत्र नीचैर्गोत्र चेति २ । ३१ ॥ अत्र गाथाया 'खीणाभिलावेण' इति पाठात् क्षीणाभिलापेन ३१ भेदा वाच्या । कोऽर्थ ? ज्ञानावरण कर्म यस्य क्षीण १, दर्शनावरण कर्म यस्य क्षीण २, इत्येव पदद्वय सर्वत्र वाच्यम् । पुन किंविशिष्टा सिद्धा 'तिजयपसिद्धा' त्रिजगत्प्रसिद्धा ॥ ३ ॥

अथ तृतीयपरमेष्ठिन आचार्यान् स्तुवन्नाह—

आयारमायरता, पचपयार सया पयासता ।
आयरिया तह तित्थ, निहयकुतित्थ पयासतु ॥ ४ ॥

व्याख्या—आचार्या आचारे साधव आचार्या तृतीयपरमेष्ठिन 'तीर्थं' चतुर्विधसघरूप प्रकाश-यन्तु स्फुरत्प्रभावनाप्रभाभि उद्द्योतयन्तु । किं कुर्वन्त आचार्या ? पञ्चप्रकार आचार स्वय आचरन्त परे-भ्यश्च सदा—निरन्तर प्रकाशयन्त । पञ्चाचारा प्रस्तूयन्ते—ज्ञानाचार १, दर्शनाचार २, चारित्राचार ३, तप आचार ४, वीर्याचारश्चेति ५ । किंविशिष्ट तीर्थं ? 'निहतकुतीर्थं' निहत कुतीर्थं येन तत् ॥ ४ ॥

अथ चतुर्थपरमेष्ठिन श्रीउपाध्यायानाह—

सम्मसुअवायगा वायगा य सिअवायवायगा वाए ।
पवयणपडिणीअकए-हणतु सव्वस्स सघस्स ॥ ५ ॥

व्याख्या—वाचका श्रीउपाध्याया चतुर्थपरमेष्ठिन सर्वस्य सघस्य प्रवचनप्रत्यनीकान्—जिन-

---

(आचार्य भगवत—)

पाच प्रकारना आचारोनु पालन करनारा अने तेनो सदा प्रकाश—उपदेश आपनारा एवा आचार्य भगवतो कुतीर्थी—मिथ्यावादनो नाश करनार एवा जैनशासनने प्रकाशित करो ॥ ४ ॥

(उपाध्याय भगवत—)

सम्यक् श्रुतना वाचक अने स्याद्वादना प्ररूपक एवा उपाध्याय भगवतो सकल सघना जिन प्रवचनना शत्रुओनो वादमा पराभव करो ॥ ५ ॥

---

१ "अहवा कम्मे णव दरिसणमि चत्तारि आउए पच । आइम अते सेसे दो दो खीणाभिलावेण इगतीस ॥' इति हरिभद्रसूरिरचितायामावश्यकवृत्तौ पाठ । समवसरणस्तवटीकाया तु "अथवा—नव दरिसणम्मि चत्तारि आउए पच अमे अते । सेसे दो भेया खीणाभिलावेण गुणतीस ॥' इति पाठ उद्धृत इति ध्येयम् ॥ * इदं गाथाद्वय हरिभद्रसूरिरचिताया मावश्यकसूत्रवृत्तौ 'तानेवोपदर्शयन्नाह सग्रहणिकार' इत्युल्लिख्योद्धृतं श्रीमद्भिर्हरिभद्रसूरिभि । [पृ० ६६३]

शासनप्रद्वेषिणः अपनयन्तु—निर्द्धाटयन्तु । क ? वादे परदर्शनिभिः समं वादे प्रारब्धे सतीति शेषः । किंविशिष्टा वाचकाः ? 'सियवायवायगा' स्याद्वादं वदन्तीत्येवंशीलाः स्याद्वादवादकाः । पुनः किंविशिष्टा वाचकाः ? सम्यक् श्रुतवाचकाः सम्यक्प्रकारेण यथा तीर्थङ्करगणधरैरर्थ-सूत्राभ्यामुपदिष्टं तथैव वाचका उपदेशदातारः ॥ ५ ॥

अथ पञ्चमपरमेष्ठिनः साधून् स्तुवन्नाह—

निव्वाणसाहणुज्जयसाहूणं जणिअसव्वसाहज्जा ।
तित्थपभावगा ते, हवंतु परमिट्ठिणो जइणो ॥ ६ ॥

व्याख्या—ते यतिनः पञ्चमाः परमेष्ठिनः तीर्थप्रभावकाः भवन्तु । तीर्थस्य चतुर्विधसंघस्य प्रभावकाः उद्द्योतकारकाः । किंविशिष्टा यतिनः ? 'निव्वाणसाहणुज्जयसाहूणं जणियसव्वसाहज्जा' निर्वाणं मोक्षस्तस्य साधनं ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूपं, तत्र उद्यता उद्यमकर्तारो ये साधवः ते निर्वाणसाधनोद्यत-साधवः, तेषां जनितं—उत्पादितं सर्वसाहाय्यं—तपस्यादि कुर्वतां सांनिध्यं यैस्ते ॥ ६ ॥

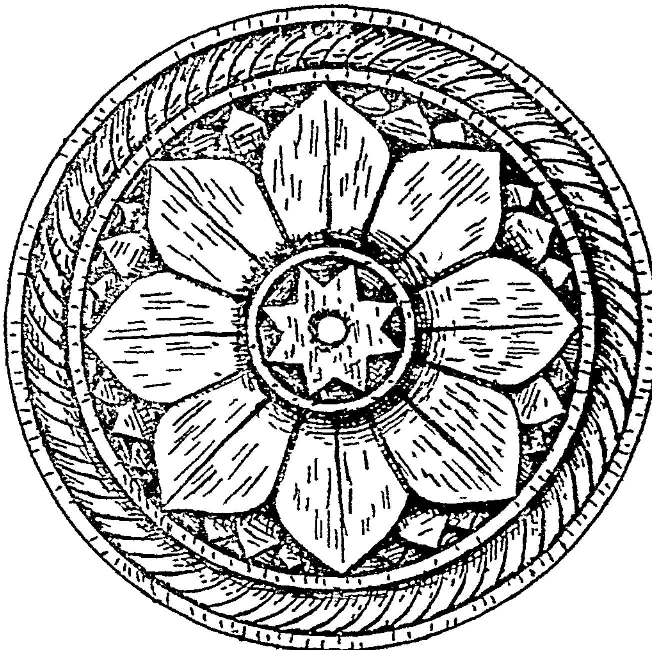
(साधु भगवंत—)

निर्वाण—मोक्षनी साधनामां उद्यमशील साधुओने सर्व प्रकारनी सहाय आपनारा एवा ते (पांचमा) परमेष्ठी साधुओ तीर्थना प्रभावक बनो ॥ ६ ॥

'तं जयउ' स्तोत्र संदर्भ परिचय

खरतरगच्छमां श्रीजिनदत्तसूरि नामे एक प्रसिद्ध विद्वान आचार्य थया जेमणे जैन शासनना उत्थानमां महत्त्वनो फाळो आप्यो छे । तेमणे केटलाक ग्रंथो रच्या छे तेमज केटलांक मंत्रमय स्तोत्रोनी पण रचना करी छे । तं जयउ स्तोत्र एमनी ज रचना छे; अने खरतरगच्छीओने मान्य एवां सात स्मरणो तेमणे रच्यां छे तेमां आ स्तोत्रनी गणना छे ।

आ स्तोत्रमां पंचपरमेष्ठीओनी माहिती आपेली छे, जे नमस्कार विषयने उपयोगी होवाथी तेनी टीका अने अनुवाद साथे ए स्तोत्र प्रगट कर्युं छे ।



[४३]

सिरिदेविंदसूरिविणिम्मिय–'सुदसणाचरिय' संदब्भो।

[अरिहंताइवण्णनं]

रागद्दोसकसाए, दुज्जयपंचिंदियाणि करणतिय।
जेहिं इमे अरी हणिया, अरिहंता मज्झ ते सरणं ॥ १ ॥
णागिंदसुरिंदचंदखयरिंदविहियपूय जे।
अरहंति तह सिद्धगइ, अरहंता मज्झ ते सरणं ॥ २ ॥
खविऊण पुण्णपावं, सयलमणिच्च मुणेवि णाणेणं।
जे पत्ता परमपय, ते सिद्धा मे सया सरणं ॥ ३ ॥
चरणकरणप्पहाणा, समिईगुत्तीसु निच्चमुज्जुत्ता।
समसत्तुमित्तचित्ता, ते मज्झ सया मुणी सरणं ॥ ४ ॥
पंचासव पचिंदियनिग्गहणो चउकसायविजयपरो।
जो केवलिपण्णत्तो, धम्मो सो होउ मह सरणं ॥ ५ ॥

अनुवाद

रागद्वेषरूप कषायो, जीती न शकाय एवा पचेंद्रियना विषयो अने मन, वचन तेमज कायारूप त्रण करणो—आ शत्रुओने जेमणे हण्या छे ते अरिहंत भगवान मारु शरण छे ॥ १ ॥

नागेंद्रो, सुरेंद्रो, चद्र अने विद्याधरोए करेली पूजाने जेओ योग्य छे तथा जे मोक्षगतिनी योग्यतावाळा छे, ते अरिहंतो मारु शरण छे ॥ २ ॥

पुण्य अने पापने खपावी, बधुये अनित्य छे एम ज्ञानथी जाणीने, उत्कृष्ट स्थानने जे प्राप्त थया छे ते सिद्ध भगवानो सदा मारु शरण छे ॥ ३ ॥

जे चरण अने करणमा श्रेष्ठ छे, समिति अने गुप्तिमा जे हमेशा उद्यमशील छे अने शत्रु तेमज मित्रमा समान चित्तवाळा छे ते मुनिओ सदा मारु शरण छे ॥ ४ ॥

पाच आश्रव अने पाच इंद्रियोनु दमन करावनार, चार कषायने जीतावववामा तत्पर अने केवलीओए जे उपदेशेलो छे ते धर्म मारु शरण हजो ॥ ५ ॥



[४४]

श्राद्धदिनकृत्यान्तर्गतो नमस्कारविषयकः संदर्भः ।

निसा-विरामंमि विबुद्धएणं, सुसावएणं गुण-सायरेणं ।
देवाहिदेवाण जिणुत्तमाणं, किच्चो पणामो विहिणायरेणं ॥ ८ ॥
सिज्जाट्ठाणं पमुत्तूणं, चिट्ठिज्जा धरणीयले ।
भावबंधुं जगन्नाहं, नमुक्कारं तओ पढे ॥ ९ ॥
मंताण मंतो परमो इमुत्ति, घेयाण घेयं परमं इमुत्ति ।
तत्ताण तत्तं परमं पवित्तं, संसार-सत्ताण दुहाहयाणं ॥ १० ॥
ताणं अन्नं तु नो अत्थि, जीवाणं-भव-सायरे ।
बुड्डंताणं इमं मुत्तुं, नमुक्कारं सुपोययं ॥ ११ ॥
अणेग-जंमंतर-संचियाणं, दुहाण सारीरिय-माणसाणं ।
कत्तो अ भव्वाण भविज्ज नासो, न जाव पत्तो नवकार-मन्तो ॥ १२ ॥
जलणाइ-भए सव्वं, (सेसं) मुत्तुं एगंपि जहा महारयणं ।
अहवारिभए गिण्हइ, अमोहसत्थं जह तहेह ॥ १३ ॥

अनुवाद

रात्रिने अंते चार घडी जेटली रात्रि बाकी रहे त्यारे जागृत थईने गुणना समुद्र एवा सुश्रावके देवाधिदेव जिनेश्वर भगवंतोने विधि तथा बहुमानपूर्वक नमस्कार करवो जोइए ॥ ८ ॥

सुवानुं स्थान जे पलंग तथा पथारी वगेरे तेनो त्याग करीने जमीन उपर बेसीने अथवा उभा रहीने भावबंधु (सर्वदा सहायकारी होवाथी परमार्थथी बंधु) अने जगतना नाथ एवा नमस्कार-मंत्रनुं स्मरण करे ॥ ९ ॥

(कारणके) दुःखथी पीडाता सांसारिक जीवोने माटे आ नमस्कारमंत्र बधा ज मंत्रोमां परममंत्र छे, बधाज ध्येयोमां परमध्येय (= ध्यान करवा लायक) छे अने बधा तत्त्वोमां परम पवित्र तत्त्व छे ॥ १० ॥

भवसागरमां डूबता जीवोने आ नमस्कारमंत्ररूपी वहाण सिवाय बीजुं कंइ ज रक्षण करनार नथी ॥ ११ ॥

अनेक जन्मोमां बांधेलां, तथा शारीरिक अने मानसिक दुःखोमां कारणभूत एवां कर्मोनो भव्यजीवोने ज्यां सुधी नमस्कारमंत्रनी प्राप्ति न थाय त्यां सुधी नाश क्यांथी थाय ? ॥ १२ ॥

अग्नि आदिनो भय आवी पडे त्यारे बधी (धान्य आदि) वस्तुओनो त्याग करीने एकपण महारत्नने जेम लई लेवामां आवे छे, तथा शत्रुनो भय उपस्थित थाय त्यारे अमोघशस्त्रने जेम

---

१ श्राद्धदिनकृत्यनी अवचूरिने अनुसरीने आ भावार्थ आपवामा आव्यो छे ।

मुत्तुपि बारसंग, स एव मरणंमि कीरए जम्हा ।
अरिहंत-नमुक्कारो तम्हा सो बारसंगत्थो ॥ १४ ॥
तप्पणईण तम्हा, अणुसरियव्वो सुहेण चित्तेण ।
एसो य नमुक्कारो, कयन्नुय मन्नमाणेण ॥ १५ ॥
नवकारओ अन्नो, सारो मंतो न अत्थि तियलोए ।
तम्हा हु अणुदिण चिय, पढियव्वो परम भत्तीए ॥ १६ ॥
उरगाईण वि मंता, अविहीए उ अहिजिया ।
विसजओ न नासंति, तम्हा उ विहिणा पढे ॥ १७ ॥
इह लोगंमि तिदंडी, सादिव्व माउलिंग-वणमेव ।
परलोए चंडपिंगल हुंडियजक्खो य दिट्ठंता ॥ १८ ॥

(श्राद्धदिनकृत्य पृ १०)

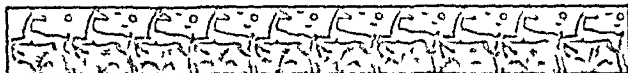
ग्रहण करवामां आवे छे तेम मृत्यु उपस्थित थाय त्यारे द्वादशांगीनुं स्मरण न करतां अरिहंत आदि पंचपरमेष्ठीना नमस्कारनुं ज स्मरण करवामां आवे छे तेथी नमस्कारमंत्र ए द्वादशांगीनुं रहस्य छे ॥ १३–१४ ॥

माटे तेना प्रकाशक अरिहंत आदिना नमस्कारमंत्रनुं पोताने कृतज्ञ माननार श्रावके शुभ-चित्तथी स्मरण–ध्यान करवुं जोईए ॥ १५ ॥

त्रण जगतमां नवकारथी सारो बीजो कोई मंत्र नथी, माटे प्रतिदिवस परमभक्तिथी नमस्कारमंत्रनुं पठन करवुं जोईए ॥ १६ ॥

सर्प आदिना पण मंत्रो अविधिपूर्वक जपवामां आवे तो विषनो नाश करी शकता नथी, माटे नमस्कारमंत्रनुं विधिपूर्वक स्मरण करवुं जोईए ॥ १७ ॥

नमस्कारमंत्रना स्मरणथी आ लोकमां प्राप्त थतां फळ विषे [1]त्रिदंडी, सादिव्य तथा मातुलिंग-वननां दृष्टांत छे, अने परलोकमां प्राप्त थतां फळ विषे चंडपिंगल तथा हुंडिक यक्षनां दृष्टांतो छे ॥१८॥



१ आ दृष्टांतो जुओ पृ. १६० थी १६१ मां आवी गयेलुं छे तेथी त्यां जोई लेवुं।

चउसरणपयन्नासंदब्भो

अमरिंदनरिंदमुणिंदवंदिअं वंदिउं महावीरं
कुसलाणुबंधि बंधुरमज्झयणं कित्तइस्सामि ॥ ९ ॥ १ ॥

चउसरणगमण दुक्कडगरिहा सुकडाणुमोअणा चेव ।
एस गणो अणवरयं कायव्वो कुसलहेउत्ति ॥ १० ॥ २ ॥

अरिहंत सिद्ध साहू केवलिकहिओ सुहावहो धम्मो ।
एए चउरो चउगइहरणा सरणं लहइ धन्नो ॥ ११ ॥ ३ ॥

अह सो जिणभत्तिभरुत्थरंतरोमंचकंचुअकरालो ।
पहरिसपणउम्मीसं सीसंमि कयंजली भणइ ॥ १२ ॥ ४ ॥

मंगलस्मरण अने उपोद्घात—

सुर अने असुरना इन्द्रो, मानवोना इन्द्र–चक्रवर्तीओ, तेमज साधुजनोमां सर्वश्रेष्ठ श्रुत-केवलीओ वगेरे सघळाए जे परमात्माना चरणकमळमां भक्तिपूर्वक सदा नमन करे छे ते देवाधि-देव श्री महावीर परमात्माने नमस्कार करीने कुशलना कारणभूत अने ए ज कारणे सुंदर एवा आ अध्ययनने हुं कहीश ॥ ९ ॥ १ ॥

आ अध्ययनमां त्रण वस्तुओ कहेवानी छे । ते आ प्रमाणे छेः—

विधिपूर्वक श्री अरिहंत परमात्मा आदि चार शरणांनो स्वीकार, पूर्वकृत दुष्कर्मनी शल्य-रहितपणे निन्दा, अने स्व तेमज परना सुकृतनी शुभभावनापूर्वक अनुमोदना; आ त्रणेय अधिकारो कुशलना कारणरूप छे । माटे ज ते सदाकाल करवा योग्य छे । धर्मनो प्रारंभ आ त्रण मौलिक गुणोथी थाय छे ॥ १० ॥ २ ॥

श्री अरिहंत भगवंतो, श्री सिद्धभगवंतो, श्री निर्ग्रन्थ साधुपुरुषो अने सुखने आपनार श्री जिनकथित धर्म आ चारेय शरणस्थानो–शरणांओ; देव, नरक, तिर्यंच अने मनुष्यगतिनां दुःखोने दूर करनार छे । धन्यवान पुरुष ज आ शरणांओने पामी शके छे ॥ ११ ॥ ३ ॥

श्री अरिहंत भगवंतोनुं शरण–

श्री जिनेश्वरभगवंतोनी भक्तिना समूहथी उल्लासना योगे विकस्वर बनेली रोमराजीथी उन्नत–शोभतो ते भाग्यवान आत्मा अतिहर्षपूर्वक मस्तक पर अंजलि करीने श्री अरिहंत भगवंतोना शरणना स्वीकार माटे आ मुजब कहे छे ॥ १२ ॥ ४ ॥

रागद्दोसारीण हंता कम्मट्ठगाइअरिहंता ।
विसयकसायारीण अरिहंता हुंतु मे सरणं ॥ १३ ॥ ५ ॥
रायसिरिमवकसित्ता तवचरणं दुच्चरं अणुचरित्ता ।
केवलसिरिमरिहंता अरहंता हुंतु मे सरणं ॥ १४ ॥ ६ ॥
थुइवंदणमरिहंता अमरिंदनरिंदपूअमरहंता ।
सासयसुहमरहंता अरहंता हुंतु मे सरणं ॥ १५ ॥ ७ ॥
परमणगयं मुणंता जोइंदमहिंदझाणमरिहंता ।
धम्मकहं अरहंता अरहंता हुंतु मे सरणं ॥ १६ ॥ ८ ॥
सव्वजिआणमहिंसं अरहंता सच्चवयणमरहंता ।
बंभव्वयमरहंता अरहंता हुंतु मे सरणं ॥ १७ ॥ ९ ॥
ओसरणमवसरित्ता चउतीसं अइसए निसेवित्ता ।
धम्मकहं च कहंता अरहंता हुंतु मे सरणं ॥ १८ ॥ १० ॥
एगाइ गिराऽणेगे संदेहे देहिणं समं छित्ता ।
तिहुयणमणुसासंता अरिहंता हुंतु मे सरणं ॥ १९ ॥ ११ ॥

सर्व दुःखोना मूल कारण राग[1] अने द्वेषरूप शत्रुओनो नाश करनारा, आठ कर्मो वगेरेनो[2] नाश करनारा, अने विषयकषायोने हणनारा–जीती लेनारा श्री अरिहंत भगवंतो मने शरण हो ॥ १३ ॥ ५ ॥

सर्व प्रकारनी राज्यलक्ष्मीनो त्याग करीने अने सामान्य साधुओथी दुश्चर एवा तपने तपीने जेओ केवलज्ञानरूपी लक्ष्मीने योग्य बन्या, ते श्री अरिहंत देवो मने शरण हो ॥ १४ ॥ ६ ॥

त्रणे जगतना लोकोनी स्तुति तेमज वंदनाने योग्य, वळी इन्द्रो, चक्रवर्तीओ, वगेरेनी पूजाने योग्य, अने शाश्वतसुख–मोक्ष सुखने योग्य एवा श्री अरिहंतदेवोनु मने सर्वदा शरण हो ॥१५॥७॥

केवळज्ञानना योगे अन्य सर्वजीवोना मनमा रहेला सव भावोने जाणनारा, तेमज योगीओना इन्द्रो (श्री गणधरदेवादि) अने देवेन्द्रो वगेरेना परम ध्येय अने परम कल्याणने करनारी धर्मकथाना उपदेश माटे परम योग्य एवा[3] श्री अरिहंत देवो मने शरण हो ॥ १६ ॥ ८ ॥

सर्वजीवोनी पारमार्थिक दया–अहिंसाना पालन माटे परम योग्य, सत्यवचन माटे परम योग्य, तेमज ब्रह्मव्रतना पालन वगेरे माटे सर्वथा योग्य छे एवा त्रिलोकनाथ श्री अरिहंतदेवो मने शरण हो ॥ १७ ॥ ९ ॥

देवोना समुदाये भक्तिथी रचेला समवसरणमा विराजमान थईने अने चोत्रीश अतिशयोने वीतरागभावे सेवीने पात्रीश गुणयुक्त मनोहर वाणीथी धर्मकथाने कहेनारा श्री अरिहंत देवो मने शरण हो ॥ १८ ॥ १० ॥

एक ज वचनथी, एक ज काळे, देवो, मनुष्यो अने तिर्यंचोना अनेक प्रकारना संशयोने छेदीने त्रणेय लोकपर अनुशासन करता श्री अरिहंत देवोनु मने निरंतर शरण हो ॥ १९ ॥ ११ ॥

१ राग त्रण प्रकारनो छे- कामराग, स्नेहराग अने दृष्टिराग । अथवा, आसक्ति ते राग छे । परद्रोहनो अध्यवसाय ते द्वेष छे । अथवा, अप्रीति ते द्वेष छे । २ 'वगेरे' पदथी परीषह, वेदना, उपसर्ग वगेरे लेवाना छे । ३ वाणी पांत्रीश गुणोथी युक्त होवाना कारणे ।

वयणामएण भुवणं निव्वावंता गुणेसु ठावंता ।
जिअलोअमुद्धरंता अरिहंता हुंतु मे सरणं ॥ २० ॥ १२ ॥
अच्चब्भुयगुणवंते निअजससससहरपसिअदिअंते ।
निअयमणाइअणंते पडिवन्नो सरणमरिहंते ॥ २१ ॥ १३ ॥
उज्झिअजरमरणाणं समत्तदुक्खत्तसत्तसरणाणं ।
तिहुअणजणसुहयाणं अरिहंताणं नमो ताणं ॥ २२ ॥ १४ ॥
अरिहंतसरणमलसुद्धिलद्धसुविसुद्ध सिद्धबहुमाणो ।
पणयसिररइयकरकमलसेहरो सहरिसं भणइ ॥ २३ ॥ १५ ॥
कम्मट्ठक्खयसिद्धा साहाविअनाणदंसणसमिद्धा ।
सव्वट्ठलद्धिसिद्धा ते सिद्धा हुंतु मे सरणं ॥ २४ ॥ १६ ॥
तिअलोअमत्थयत्था परमपयत्था अचिंतसामत्था ।
मंगलसिद्धपयत्था सिद्धा सरणं सुहपसत्था ॥ २५ ॥ १७ ॥

वचनरूप अमृतथी त्रणेय जगतना जीवोनी• वेदनाने शमावता तेमज तेमने गुणना मार्गे स्थापता अने ए रीते जीवलोकने संसाररूप भयंकर कुवामांथी उद्धरता श्री अरिहंतदेवो मने शरण हो ॥ २० ॥ १२ ॥

अति आश्चर्यकारी गुणोथी शोभता अने पोताना यशरूप चन्द्रथी सर्व दिशाओना अन्तभाग सुधी प्रकाशने विस्तारता तेमज शाश्वत, अनादि, अनन्त एवा श्री अरिहंतदेवोना शरणने हुं स्वीकारुं छुं ॥ २१ ॥ १३ ॥

जरा–वृद्धावस्था अने मरणथी सर्वथा रहित, अनेक प्रकारनां दुःखोथी पीडाता आत्माओनां साचा शरण–आश्रयरूप अने त्रणेय लोकना जीवोने सुख आपनारा एवा श्री अरिहंतदेवोने हुं नमुं छुं ॥ २२ ॥ १४ ॥

श्री सिद्ध भगवंतोनुं शरण–

आ मुजब श्री अरिहंत देवना शरणथी कर्ममलनी शुद्धि थवाना योगे, जेने श्री शुद्धस्वरूपमय सिद्ध भगवंतो प्रत्ये पूर्ण बहुमान प्रगट थयुं छे ते पुण्यवान आत्मा भक्तिथी नमेला पोताना मस्तकने विषे करकमलोवडे अंजलि करीने हर्षसहित आ रीतिए कहे छे ॥ २३ ॥ १५ ॥

आठेय प्रकारना कर्मना क्षयवडे सिद्ध थयेला, स्वाभाविक निरावरण एवा ज्ञान अने दर्शनवडे समृद्ध अने सर्व अभिलषित अर्थो अने लब्धिओनी प्राप्तिथी सिद्ध–कृतकृत्य एवा श्री सिद्धभगवंतोनुं मने शरण हो ॥ २४ ॥ १६ ॥

त्रण लोकना मस्तकपर–सिद्धशिलानी उपर रहेला, परमपदे(मोक्षमां) रहेला, अचिन्त्य सामर्थ्यवाळा, परममंगलभूत सिद्धिपदे रहेला अने परम-अनंत-अव्याबाध सुखना कारणे प्रशस्त एवा श्री सिद्धभगवंतो मने शरण हो ॥ २५ ॥ १७ ॥

मूलुक्खयपडिवक्खा अमूढलक्खा सजोगिपच्चक्खा ।
साहाविअत्तसुक्खा सिद्धा सरण परममुक्खा ॥ २६ ॥ १८ ॥
पडिपिल्लिअपडिणीया समग्गझाणग्गिदड्ढ भवबीआ ।
जोईसरसरणीया सिद्धा सरण सु(स)मरणीया ॥ २७ ॥ १९ ॥
पावियपरमाणंदा गुणनीसदा विदिन्नभवकंदा ।
लहुईकयरविचदा सिद्धा सरण खविअदंदा ॥ २८ ॥ २० ॥
उवलद्धपरमबंभा दुल्लहलंभा विमुक्कसरंभा ।
भुवणघरधरणखंभा सिद्धा सरण निरारंभा ॥ २९ ॥ २१ ॥
सिद्धसरणेण नयबंभहेऊसाहुगुणजणिअअणुराओ ।
मेइणिमिलंतसुपसत्थमत्थओ तत्थिम भणइ ॥ ३० ॥ २२ ॥
जिअलोअबंधुणो कुगइसिंधुणो पारगा महाभागा ।
नाणाइएहिं सिवसुक्खसाहगा साहुणो सरण ॥ ३१ ॥ २३ ॥

जेमणे कर्मरूप भावशत्रुओनु मूळथी उन्मूलन कर्युं छे, जेओ अमूढलक्ष्य–सदा उपयोगशील छे, वळी जेओना स्वरूपनो प्रत्यक्ष अनुभव सयोगी केवलज्ञानीओ ज फक्त करी शके छे अने जेमणे स्वाभाविक सुख प्राप्त कर्युं छे ते परममुक्त एवा श्रीसिद्धभगवतो मने शरण हो ॥ २६ ॥ १८ ॥

जेमणे रागद्वेष रुप अतरग शत्रुओने जीत्या छे, जेमणे शुक्लध्यान रूप अग्निथी भवबीज (ज्ञानावरणीयादि कर्म) ने बाळी नाख्यु छे, जेओ योगीश्वरो (गणधरादि)ना पण शरणीय छे अने जेओ मुमुक्षुओना ध्येय छे, एवा श्री सिद्धभगवतो मने शरण हो ॥ २७ ॥ १९ ॥

परम आनंदने प्राप्त थयेला, सकलगुणोना नि स्यन्द–साररूप, विदारित कर्यो छे ससारनो (मोहनीय कर्मरूप) कद जेमणे एवा अने लोकालोकप्रकाशक श्री केवलज्ञान रूप प्रकाशना कारणे सूर्यचद्रने पण अल्पप्रभावाळा करनारा तथा क्षपित कर्यां छे राग–द्वेष वगेरे द्वद्वो एवा श्री सिद्धभगवतो मने शरण हो ॥ २८ ॥ २० ॥

परमब्रह्मरूप केवलज्ञानने पामेला, वळी जगतमा सौथी दुर्लभ गणाता मुक्तिपदरूप लाभने प्राप्त थयेला, सर्व प्रयोजनो निष्पन्न थवाना कारणे समारभथी रहित, पोताने शरणे आवेला दुर्गतिमा पडता जीवो माटे स्थिर आधार रूप होवाथी जीवलोकरूप घरना आधारभूत स्तभसमा–तथा कृतकृत्य होवाथी कोईपण प्रकारना आरभथी रहित एवा श्री सिद्ध भगवतो मने शरण हो ॥ २९ ॥ २१ ॥

श्री साधु भगवतोनु शरण—

आ मुजब भक्तिपूर्वकना श्रीसिद्धभगवतोना शरणना योगे नैगमादि नयोथी उपलक्षित जे ब्रह्म–श्रुतज्ञान तेना कारण जे विनयादि साधु गुणो, तेमना प्रत्ये उत्पन्न कर्यो छे अनुराग जेणे एवो ते भक्तिथी नमवाना कारणे प्रशस्त बनेला पोताना मस्तकने धरणीपर मूकीने आ रीतिए कहे छे ॥ ३० ॥ २२ ॥

षड्जीवनिकायरूप जीवलोकना साचा बधु, कुगतिरूप महासमुद्रना तीरे रहेला, अनेक लब्धिओथी सपन्न होवाना कारणे महाभाग, सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप रत्नत्रयीनी आराधनाना योगे मोक्षना सुखने साधनारा, श्री साधु भगवतो मने शरण हो ॥ ३१ ॥ २३ ॥

केवलिणो परमोही विउलमई सुअहरा जिणमयंमि ।
आयरिअ उवज्झाया ते सव्वे साहुणो सरणं ॥ ३२ ॥ २४ ॥
चउदसदसनवपुव्वी दुवालसिक्कारसंगिणो जे अ ।
जिणकप्पअहालंदिअ परिहारविसुद्धिसाहू अ ॥ ३३ ॥ २५ ॥
खीरासवमहुआसवसंभिन्नस्सोअकुट्ठबुद्धी अ ।
चारणवेउव्विपयाणुसारिणो साहुणो सरणं ॥ ३४ ॥ २६ ॥
उज्झियवइरविरोहा निच्चमदोहा पसंतमुहसोहा ।
अभिमयगुणसंदोहा हयमोहा साहुणो सरणं ॥ ३५ ॥ २७ ॥
खंडिअसिणेहदामा अकामधामा निकामसुहकामा ।
सुपुरिसमणाभिरामा आयारामा मुणी सरणं ॥ ३६ ॥ २८ ॥
मिल्हिअविसयकसाया उज्झियघरघरणिसंगसुहसाया ।
अकलिअहरिसविसाया साहू सरणं गयपमाया ॥ ३७ ॥ २९ ॥
हिंसाइदोससुन्ना कयकारूण्णा सयंभुरुप्पण्णा ।
अजरामरपहखुण्णा साहू सरणं सुकयपुण्णा ॥ ३८ ॥ ३० ॥

केवलज्ञानसंपन्न, परमावधिज्ञानसंपन्न, विपुलमति मनःपर्यवज्ञानना धारक, तेमज जिनमार्गमां रहेला आचार्यो, उपाध्यायो वगेरे अत्यंत प्रसिद्ध एवा सर्व साधु भगवंतो मने शरण हो ॥ ३२ ॥ २४ ॥

वळी चौदपूर्वधरो, दशपूर्वधरो, नवपूर्वधरो, बार अंगना धारक, अगियार अंगना धारक, जिनकल्पिको तथा यथालन्दिक अने परिहारविशुद्धि संयमवाळा सर्व निर्ग्रन्थ साधुभगवंतो मने शरण हो ॥ ३३ ॥ २५ ॥

तथा क्षीराश्रवलब्धिसंपन्न, मध्वाश्रवलब्धिसंपन्न, संभिन्नश्रोतोलब्धिसंपन्न, कोष्ठबुद्धिसंपन्न, चारणलब्धिसंपन्न, वैक्रियलब्धिसंपन्न अने पदानुसारी लब्धिवाळा सर्व साधु भगवंतो मने शरण हो ॥ ३४ ॥ २६ ॥

वैर विरोधथी रहित, सदा द्रोहविनाना सर्वदा प्रसन्नतापूर्ण मुखथी शोभता, ज्ञानादि प्रशस्त गुणोना समूहने धारण करनारा अने मोहने हणनारा श्री साधु भगवंतोनुं शरण हो ॥ ३५ ॥ २७ ॥

जेमणे स्नेहनां बंधन छेदी नांख्यां छे, जेओ विषयासक्ति अने घरवासथी रहित छे (अथवा जेओ कामना हेतु एवा रम्य मंदिरोथी रहित छे अथवा जेओ कामना धाम-स्थान नथी अथवा जेओ अकाम–विकार राहित्यना धाम छे), मोक्षसंबंधी सुखनी अभिलाषा राखनारा, सत्पुरुषोना मनने आनन्द आपनारा अने आत्मामां रमण करनारा श्रीसाधु भगवंतो मने शरण हो ॥ ३६ ॥ २८ ॥

पांचेय इन्द्रियोना विषयोने तेमज चार प्रकारना कषायोने दूर करनारा, घर तथा स्त्रीना संगथी थता सुखास्वादने तजनारा, हर्ष के शोक आदिथी रहित अने अप्रमत्त एवा श्री साधु भगवंतो मने शरण हो ॥ ३७ ॥ २९ ॥

हिंसादि दोषोथी रहित जीवलोक प्रत्ये करुणार्द्र चित्तवाळा स्वयंभूरमण समुद्र जेवी विशाळ रुचि (सम्यग्दर्शन) अने प्रज्ञावाळा, अजरामर पथ मोक्षने बतावनारा, शास्त्रोमां निपुण अने सुंदर रीते कर्युं छे पुण्य जेमणे एवा श्री साधु भगवंतो मने शरण हो ॥ ३८ ॥ ३० ॥

कामविडंबणचुक्का कलिमलमुक्का विमुक्कचोरिक्का ।
पावरयसुरयरिक्का साहू गुणरयणचच्चिक्का ॥ ३९ ॥ ३१ ॥
साहुत्तसुट्ठिया ज आयरिआई तओ य ते साहू ।
साहुभणिएण गहिया तम्हा ते साहुणो सरणं ॥ ४० ॥ ३२ ॥
अरिहत्तं अरिहंतेसु ज च सिद्धत्तणं च सिद्धेसु ।
आयारं आयरिए उज्झायत्तं उवज्झाए ॥ ५६ ॥ ३३ ॥
साहूण साहुचरिअं देसविरइं च सावयजणाणं ।
अणुमन्ने सव्वेसिं सम्मत्तं सम्मदिट्ठीणं ॥ ५७ ॥ ३४ ॥
सुहपरिणामो निच्चं चउसरणगमाइ आयरं जीवो ।
कुसलपयडीउ बंधइ बद्धाउ सुहाणुबंधाओ ॥ ५९ ॥ ३५ ॥
मन्दाणुभावा बद्धा तिव्वाणुभावाउ कुणइ ता चेव ।
असुहाउ निरणुबंधाउ कुणइ तिव्वाउ मन्दाओ ॥ ६० ॥ ३६ ॥
ता एय कायव्वं बुहेहिं निच्चंपि संकिलेसम्मि ।
होइ तिकालं सम्मं असंकिलेसम्मि सुकयफलं ॥ ६१ ॥ ३७ ॥

विषयविकारनी विटंबणाओथी रहित, पापमलथी रहित, चोरी अदत्तादान वगेरेथी रहित वळी पापरूप रजना कारणभूत मैथुन–विषयक्रीडाथी रहित तथा गुणस्वरूप रत्नोनी कान्तिथी शोभता श्री साधुभगवंतो मने शरण हो ॥ ३९ ॥ ३१ ॥

साधुपणामां सुस्थित होवाथी आचार्यादि पण साधु गणाय छे, तेथी 'साधु' कहेवाथी तेमनो पण समावेश थई जाय छे । ए सर्व साधु भगवंतो मने शरण हो ॥ ४० ॥ ३२ ॥

श्री अरिहंतना धर्मतीर्थना प्रवर्तनादि अरिहंतपणानी श्रीसिद्धोना स्वरूप रमणतारूप सिद्धपणानी, श्री आचार्योना पंचाचारपालनादि आचार्यपणानी, श्री उपाध्यायोना सिद्धान्ताध्यापनादि उपाध्यायपणानी, श्रीसाधुओने साधुक्रियादि साधुपणानी, श्रावकजनोना देशविरति आदि श्रावकपणानी अने श्री सम्यग्दृष्टि आत्माओना सम्यग्दर्शनगुणनी हु अनुमोदना करु छु ॥ ५६–५७ ॥ ३३–३४ ॥

फळनो सामान्य निर्देश—

सर्व काल शुभ परिणामवाळो महानुभाव आत्मा चार शरणाओनो स्वीकार, दुष्कृतनी गर्हा अने सुकृतनी अनुमोदना–आ त्रणेय प्रकारनी वस्तुना सेवनथी पुण्य प्रकृतिओने बांधे छे । तथा ते बांधेल प्रकृतिओने शुभ अनुबंधवाळी करे छे ॥ ५९ ॥ ३५ ॥

तथा पूर्वे बांधेली मन्द अनुभाववाळी पुण्य प्रकृतिओने तीव्र अनुभाववाळी करे छे, पूर्वे बांधेल अशुभ प्रकृतिओने निरणुबंध (उत्तर काळमां विपाक वखते दुःख न आपी शके तेवी) करे छे, तथा पूर्वे बांधेल तीव्र रसवाळी ते प्रकृतिओने मन्दरसवाळी करे छे ॥ ६० ॥ ३६ ॥

आ कारणे पंडित पुरुषोए संक्लेश–रोगादिना समये आ त्रणेय वस्तुओनु आराधन निरंतर करवु जोइए । असंक्लेश अवस्थामां पण आत्मजागृतिने माटे त्रणेय संध्याए आ वस्तुओनु सेवन करवु जोइए, कारण के आ वस्तुओनु सेवन सुकृतना उपार्जनरूप फलनु निमित्त छे ॥ ६१ ॥ ३७ ॥

परिचय

प्रकीर्णक ग्रंथोमां 'चउसरणपयन्ना' ग्रंथ अत्यंत प्रसिद्ध छे। तेना रचयिता चरमतीर्थपति श्रमणभगवान श्री महावीर प्रभुना पवित्र हस्ते दीक्षाने प्राप्त थयेला श्रीवीरभद्र मुनि छे। ग्रंथनी भाषा सुंदर छे। अनुप्रासादि अलंकारो पण तेमां छे। गाथाओनो भाव पण बहु गंभीर छे। तेमांथी प्रस्तुत ग्रंथने उपयोगी एवी गाथाओ अनुवाद साथे अहीं रजू करी छे।

प्रकीर्ण

नासेइ चोर-सावय-विसहर-जल-जलण-बंधण भयाइं ।
चिंतिज्जंतो रक्खस-रण-राय-भयाइं भावेण ॥ १ ॥

—(श्रीमहानिशीथ)

जामिणि-पच्छिम-जामे, सव्वे जग्गन्ति बाल-वुड्ढाइ ।
परमिट्ठि-परम-मंतं, भणंति सत्तट्ठवाराओ ॥ २ ॥

—(यतिदिनचर्या)

थुइ-वंदणमरहंता, अमरिंद-नरिंद-पूयमरहंता ।
सासयसुहमरहंता, अरहंता हुंतु मे सरणं ॥ ३ ॥

—(श्रीचतुःशरण)

पंच-नमुक्कार-समं अंते वच्चंति जस्स दण पाणा ।
सो जइ न जाइ मुक्खं, अवस्स वेमाणिओ होइ ॥ ४ ॥

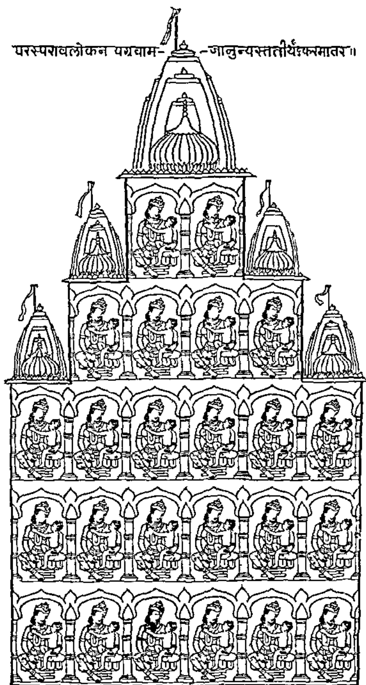
—(प्रकीर्ण)

भावथी चिंतन करातो आ नमस्कार चोर, श्वापद, विषधर, जल, अग्नि, बंधन, राक्षस, रण-संग्राम अने राजा तरफथी थता भयोनो नाश करे छे ॥ १ ॥

रात्रिना पाछला प्रहरे बाल, वृद्ध आदि सघळा (मुनिओ) जाग्रत थइ जाय छे अने परमेष्ठि-परममंत्रने सात-आठवार भणे छे ॥ २ ॥

जेओ स्तुति अने वंदनने योग्य छे, अमरेन्द्रो अने नरेन्द्रोनी पूजाने योग्य छे तथा शाश्वत सुखने योग्य छे, ते श्रीअरिहंतभगवंतो मने शरण आपनारा थओ ॥ ३ ॥

अंत समये जेना दस प्राणो पंच-नमस्कारनी साथे जाय छे, ते जो मोक्षने न पामे तो अवश्य वैमानिक देव थाय छे ॥ ४ ॥



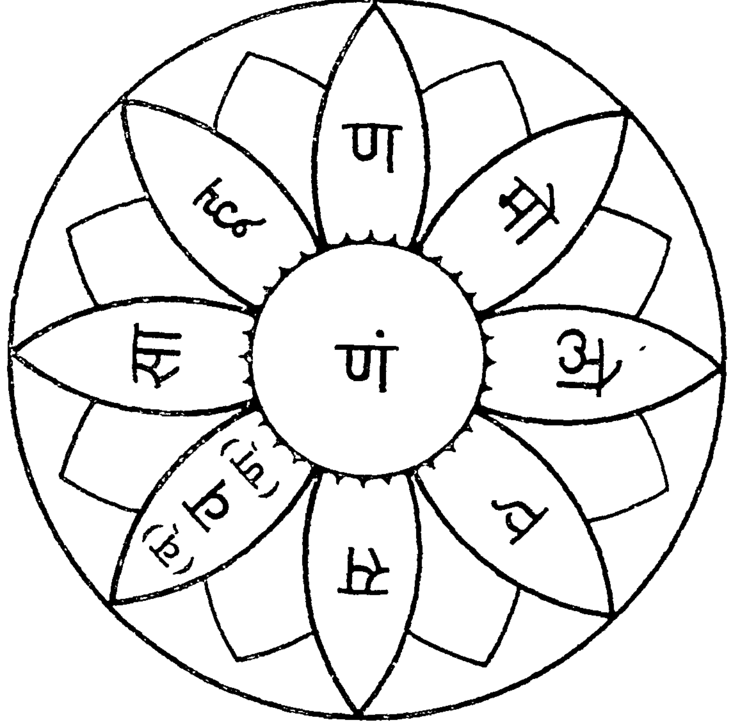
यन्त्र-चित्र न ४]　　[पृष्ठ २२० प ३

शृंखलाजाति चित्रबंध



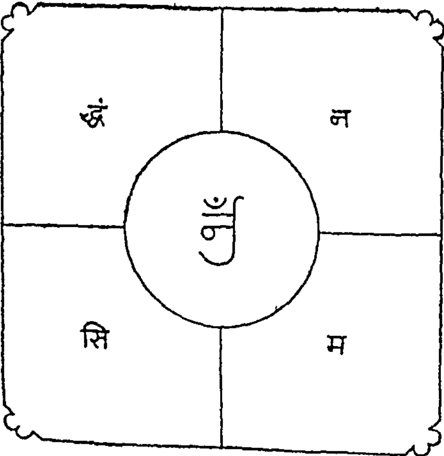
यंत्र-चित्र न. ५] [पृष्ठ : ३८९, पं. १५

अष्टदलकमलबंध



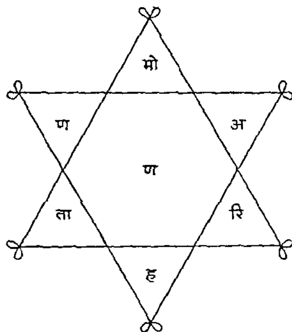
यंत्र-चित्र नं. ६] [पृष्ठ : ३९५, प. १४

गुदलिङ्गमध्ये आधारचक्र प्रथमम् ।



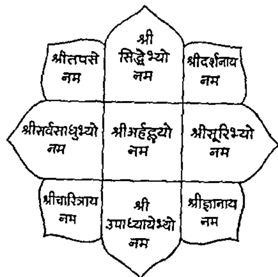
यंत्र-चित्र नं. ७] [पृष्ठ : ३९६, प. २०

लिङ्गमूले स्वाधिष्ठानचक्र द्वितीयम् ।



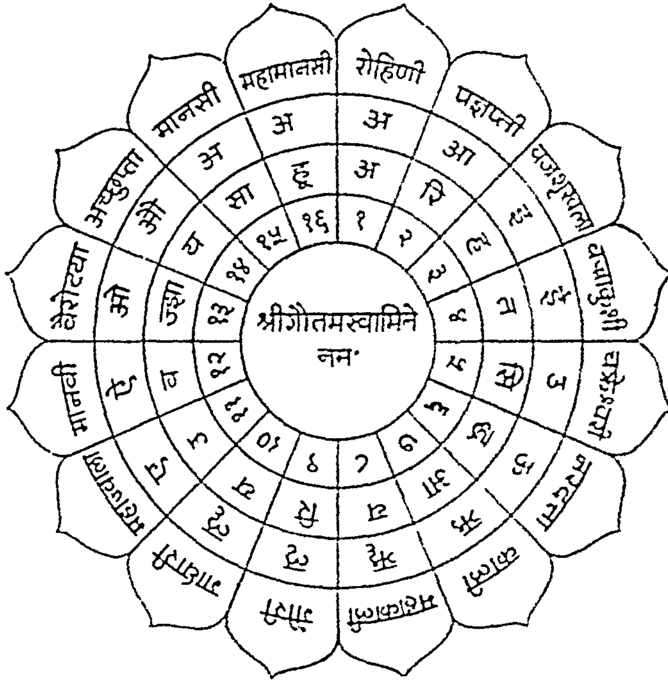
यन्त्र-चित्र न ८] [पृष्ठ ३१८, प २२

नाभौ मणिपूरचक्र तृतीयम ।



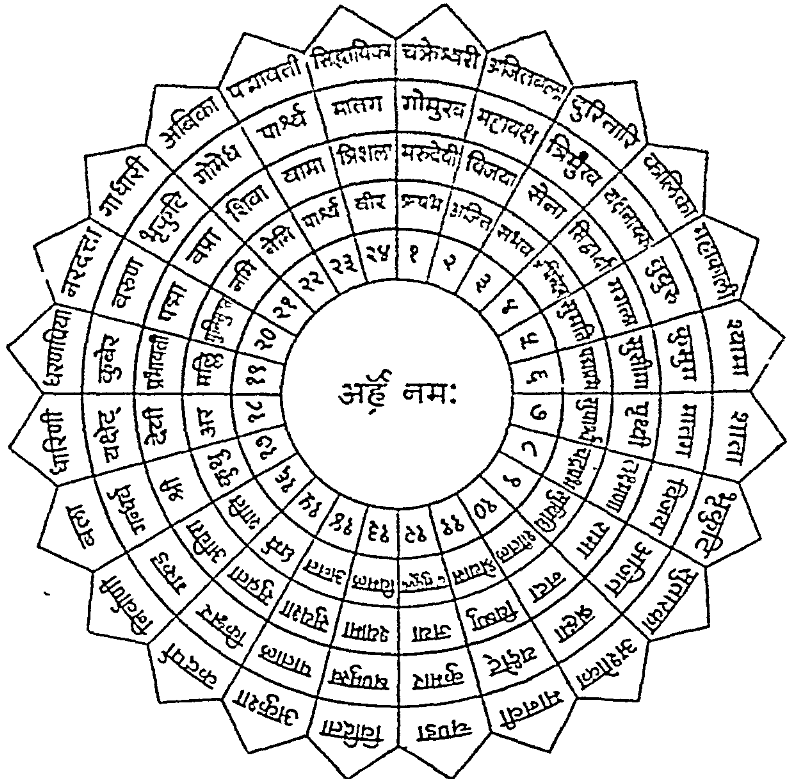
यन्त्र-चित्र न ९] [पृष्ठ ३१८, प २७

हृदये अनाहतचक्रं चतुर्थम ।



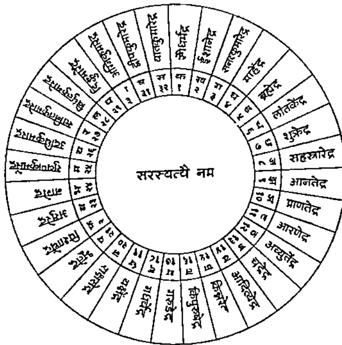
यत्र-चित्र न. १०] [पृष्ठ : २९६, प. ३१

कण्ठे विशुद्धिचक्रं पञ्चमम् ।



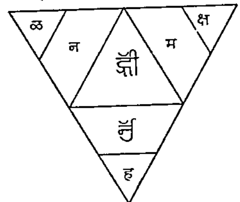
यंत्र-चित्र नं. ११] [पृष्ठ : २९७, पं. १५

षष्ठिकाया ललनाचक्र षष्ठम् ॥



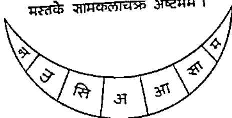
यन्त्र-चित्र न १२] [पृष्ठ ३९७, प १८

भ्रूमध्ये आज्ञाचक्र सप्तमम ।



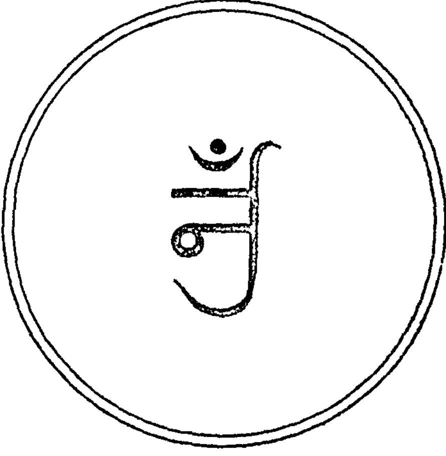
यन्त्र-चित्र न १३] [पृष्ठ ३९७, प २०

मस्तके सामकलाचक्र अष्टमम ।



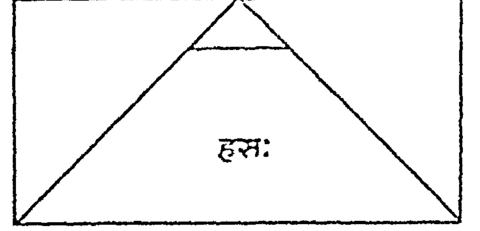
यन्त्र-चित्र न १४] [पृष्ठ ३९७, प २१

ब्रह्मद्वारे ब्रह्मबिन्दुचक्र नवमम् ।

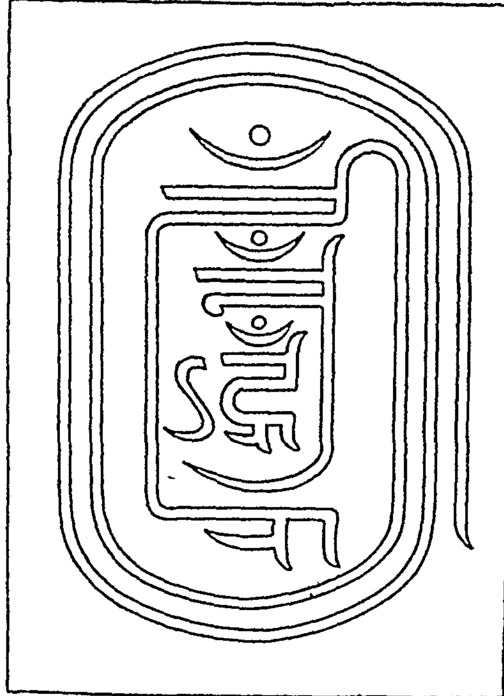


यन्त्र-चित्र नं. १५] [पृष्ट : ३९७, प. २५

ब्रह्मद्वारोपरि हसनादचक्रं दशमम् ।

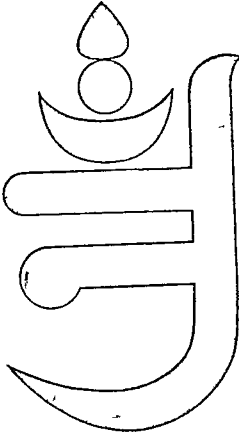


यन्त्र-चित्र नं. १६] [पृष्ठ : ३९८, प. ५

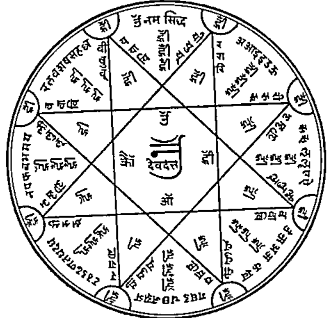


यंत्र-चित्र नं. १७] [पृष्ठ : ४६७, पं. २१

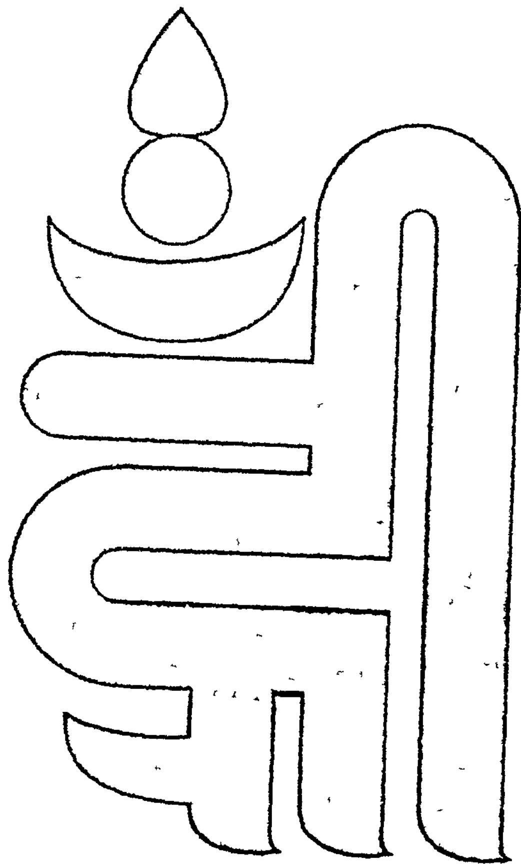
ॐकार



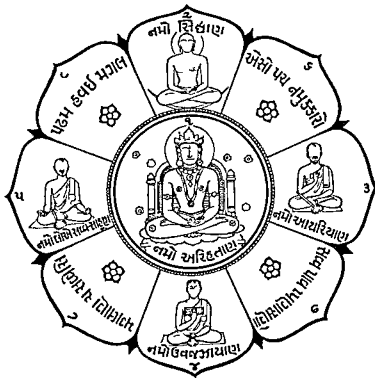
ॐकारयन्त्रम्



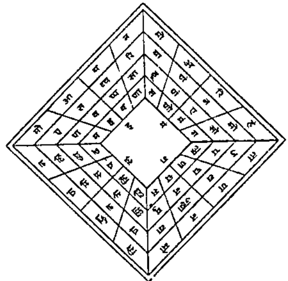
ह्रींकार।



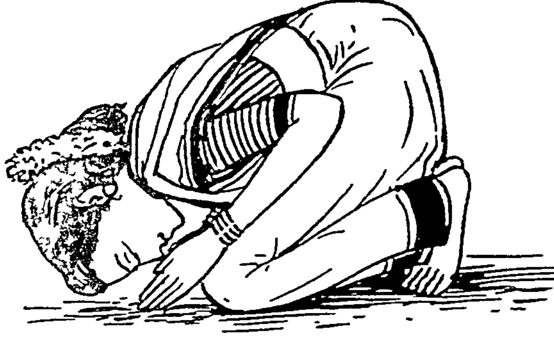
નમસ્કાર-યંત્ર



गीर्वाणयंत्रम् ।



१. पणिवयामि (कायिक नमस्कार)
२. थोसामि (वाचिक नमस्कार)
३. नमो (मानसिक नमस्कार)
४. कित्तणं (स्मरण नमस्कार)









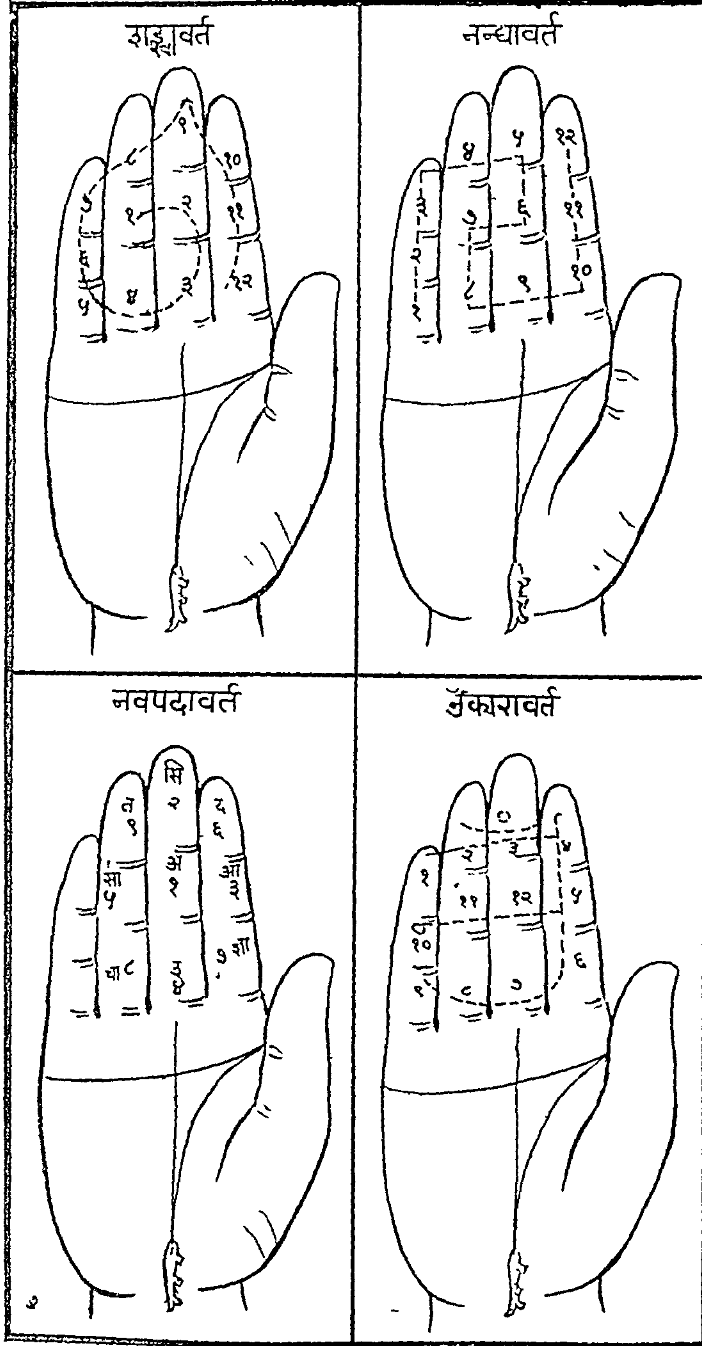


५ नमसणाय (द्रव्यसमपण नमस्कार)
६ सरण (आत्मसमपण नमस्कार)
७ उवणमे (विनय नमस्कार)
८ पणमामि (आध्यात्मिक नमस्कार)

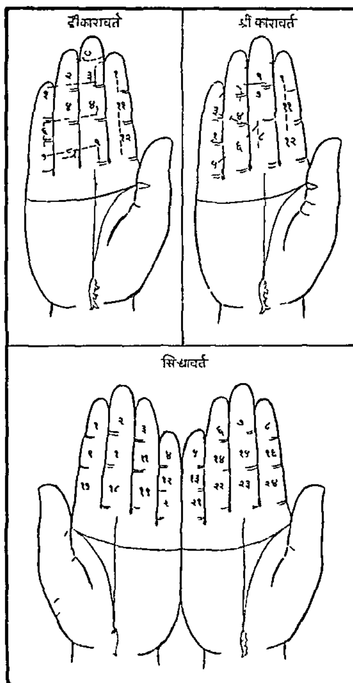




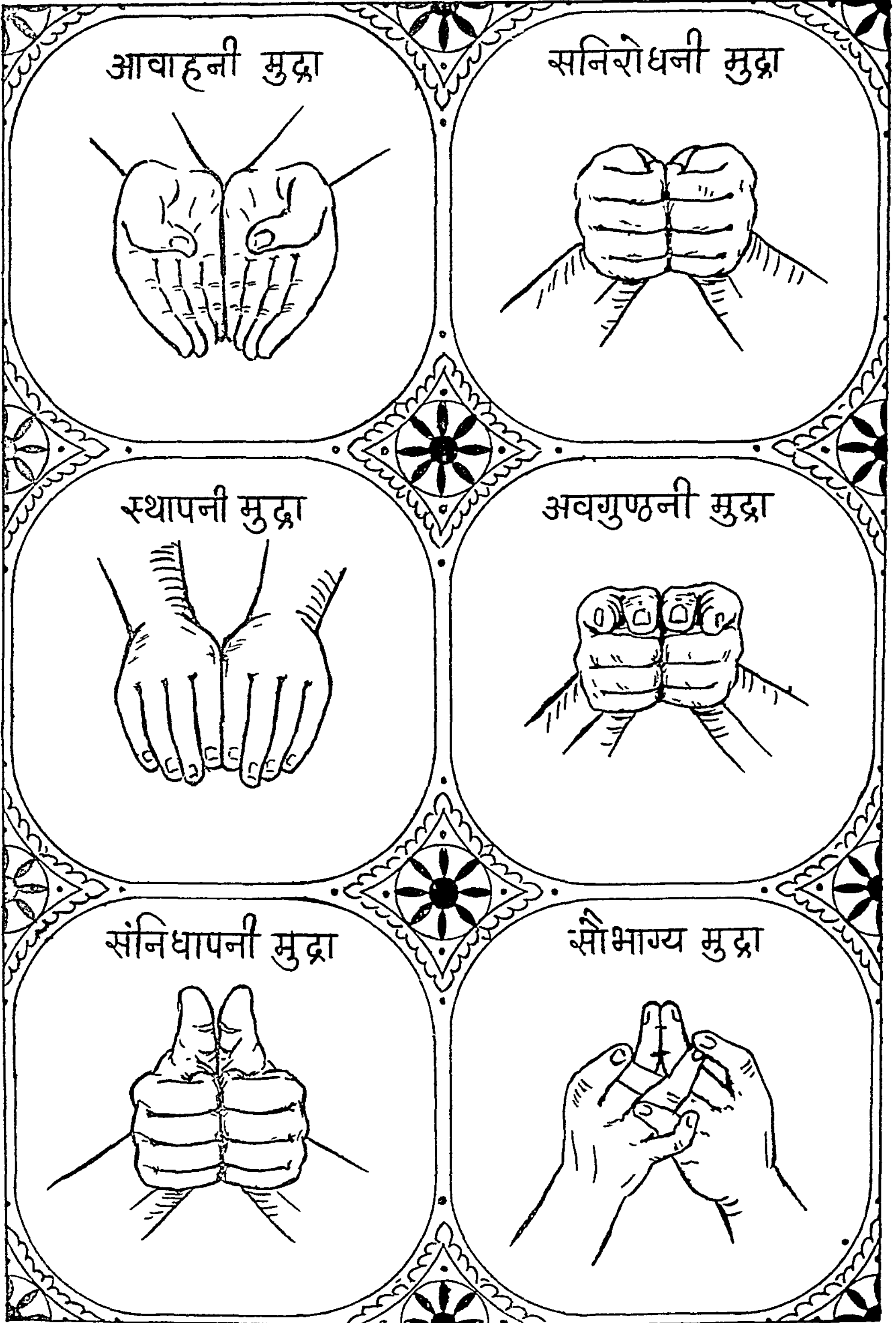




शङ्ख-नन्दि-नवपद-ॐकाररूपावर्तचतुष्कम्



ह्रीँ श्रीँ सिद्धात्मसमानत्रिस्रम्



मुद्राषट्कम्

नमो अरिहंताणं

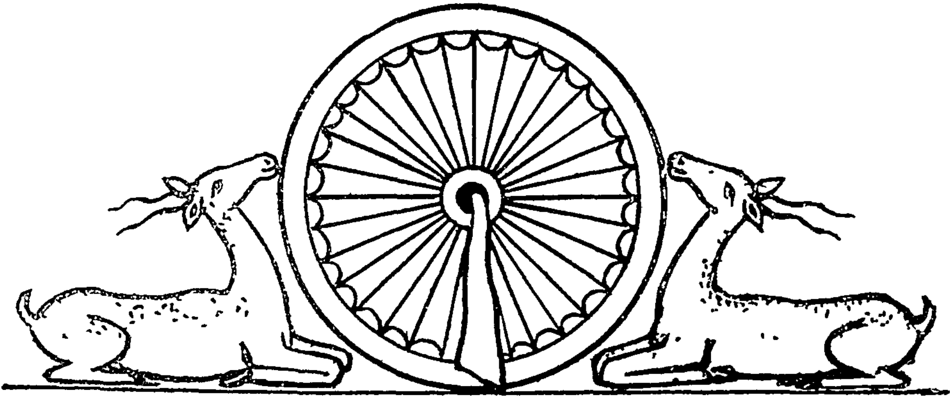
नमो आयरियाणं

(शेठ कान्तिलाल ईश्वरलालना सौजन्यथी)

रमेछिपत्रर नमस्कारप्रथिवरायसूत्रपरी

वापीयन्त्रम् ।

			न	मो	अ	र			
			ह	ता	ण	न			
		मो	सि	द्धा	ण	न	मो		
आ	य	रि	या	ण	न	मो	उ	व	ज्झा
या	ण	न	मो	लो	ए	स	व्व	सा	हू
ण	ए	सो	पं	च	न	मु	क्का	रो	स
व्व	पा	व	प्प	णा	स	णो	म	ग	ला
		ण	च	स	व्वे	सि	प		
			ढ	म	ह	व			
			इ	मं	ग	लं			



शुद्धिपत्रक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०५	७	इवा	इवी
,,	१२	भुजाओ उपर	भुजाओना मध्यभागमा
,,	१५	पठी–अगूठामा	पछी–बन्ने अगूठामा (बे अगूठा जोडीने)
,,	१६	तर्जनीमा	बन्ने तर्जनीमा
,,	१७	मध्यमामा	बन्ने मध्यमामा
,,	१८	अनामिकामा	बन्ने अनामिकामा
,,	१९	कनिष्ठामां	बन्ने कनिष्ठामा
,,	२२	पछी–डावा पडखामा	पछी–ॐ उच्चारणपूर्वक डाबा हाथ वडे डावे स्कंधे
,,	२४	जमणा पडखामा	जमणे स्कंधे
,,	२५	जमणा पडखामा	जमणे स्कंधे
,,	२७	डावा पगमा	डावे स्कंधे
,,	२७	'कु' नो न्यास करवो।	'कु' नो न्यास करवो। अने 'ॐ' कहेवु।
,,	२८	"कुरुकुल्ले स्वाहा"	"ॐ कुरुकुल्ले स्वाहा"
१०६	३	एह्यहि	एहि एहि
,,	३०	उपाडीने	भावपूर्वक अवतारीने (उतारीने)
१०७	१	सनिधिन्यास	सनिधिन्यास
,,	५	गृह्ण गृह्ण	गृहाण गृहाण
,,	६	सन्नीवितापान्न	सन्नीवनापान्न
,,	८	सुरभि–कृताञ्जली	सुरभि–अञ्जलि
,,	२३	परमेष्ठीमुद्रा	परमेष्ठिमुद्रा
,,	२४	अन्जलीमुद्रा	अञ्जलिमुद्रा
,,	२६	(एटले मेरुपूर्वक जाप करवो,)	×
,,	२६	नहीं, दात	नहीं अने दात
१०८	२	पसि-उड	पसिज्जउ
,,	१७	याचनाचाय	वाचनाचार्य
,,	१८	वधमानविद्याना	वर्धमानविद्याना
१०९	१	मह्इ महानद्धमाणसामिस्स	महइमहावीरवद्धमाणसामिस्स
,,	३	[जप्त्वा]	[जपित्वा]
,,	६	वार जप्त्वा	वार जपित्वा
,,	७	नातीफल	नातीफल
,,	९	मह्इ महानद्धमाणसामिस्स	महइमहावीरवद्धमाणसामिस्स
,,	११	उत्तपरोन्नुत्यामुपयासो	उत्तरासंगुत्यामुपनासा
,,	१०	मह्इ महानद्धमाणसामिस्स	महइमहावीरवद्धमाणसामिस्स
,	२२	जान्नु पूव	×
,,	२	मह्इ महावद्धमाणसामिस्स	महइमहावीरवद्धमाणसामिस्स

× आ शब्दो रद समजवा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११०	१	त्रव्यति	त्रुट्यति
,,	१	स्वपिति	स्वपीति
,,	२	द्युते च दैवा°	द्यूते सदैवा°
,,	७	नसीत्रना कारणे	सदैव
१११	१९	(९–८५९)	(९–८९५)
,,	२७	करेली	करेली
११२	१	उप्पन्नाणुप्पन्नो	उप्पन्नाऽणुप्पन्नो
,,	१	नयाऽऽइ निगमस्सऽणुप्पन्नो	नयाऽऽइनिगमस्सऽणुप्पन्नो
,,	१२	कारणो छे, अने बीजा	कारणो छे, ऋजुसूत्रनये पहेलुं कारण (समुत्थान) छोडीने शेष बे (वाचना अने लब्धि) कारणो छे, अने शेप
,,	१८	कयी	कई
,,	२६	श्रुतावरणना कर्मोनो क्षय	श्रुतावरणीय (नमस्कारश्रुतावरणीय) कर्मोनो क्षयोपशम
११३	८	अध्ययन ग्रहण करवु,	×
,,	८	तेनुं श्रवण करवुं	तेनु श्रवण करवुं,
,,	८	अथवा	×
,,	२८	सत् मात्रग्राही आदि नैगम नयनी	सत्मात्रग्राही आदि नैगमनयनी
११४	१	भावोवउत्त	भावोवउत्तु
११५	२	द्रव्यने माटे	द्रव्यने माटे (धनादि अर्थे)
,,	१०	रगायेल	उपहत
,,	१०	भावथी	उपयोगसहित
,,	१३	भावपूर्वक	उपयोगपूर्वक
११६	२	के अंतमा	×
,	१७	आ रीते . . मळ्यु नही[१] ।	पालके[१] आवो नमस्कार कर्यो हतो, तेनाथी ते इष्ट फळ पाम्यो नहीं।
,,	१८-२०	पण बहारथी पामे छे।	पण परिस्थितिविशेपना कारणे द्रव्यसकोच करी शके नही, आवी रीते नमस्कार करनार अनुत्तर विमान-वासी देवोनी पेठे फळ पामे छे।
,,	२४-२५	भावसकोच एकाते .कारण छे।	भावसकोच प्रधान छे अने द्रव्यसकोच पण तेनी (भावनी) शुद्धि माटे ज छे।
११७	२	कियच्चिर[५]	किच्चिर[५]
,,	३	अ जीवाण	उ जीवाण
,,	७-८	कर्मथी बंधायेला करे छे।	विशुद्ध आत्माओने द्रव्य अने भावनी शुद्धि द्वारा करातो नमस्कार तेमना जेवा बनवाना आदर्शने सफळ करे छे।
,,	२४	तेथी जीव नमस्कार छे।	तेथी नमस्कारना ज्ञाननी लब्धिथी युक्त अथवा ते लब्धि माटे योग्य एवो जे जीव ते नमस्कार छे।
,,	२६	द्रव्यास्तिकाय	द्रव्यास्तिक
,,	२६	गुणाश्रित	×

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११७	२६	पर्यायास्तिकाय	पर्यायास्तिक
,,	२८	१ द्रव्यनय ... अभिप्राय छे।	१ द्रव्यनय प्रधानपणे द्रव्यने ज ग्रहण करे छे, ज्यारे गुणोने ते उपचारथी माने छे।
११८	१३	(जीवस्वरूप ... ।)	संग्रहनयना मते जीवस्वरूप ... ।
,,	१८	सत्य	प्रधान
,,	२१	२ सर्व ... छे।	२ स्कंध पंचास्तिकायात्मक होय छे।
११९	८	घडाना हेतु	घटनिमित्तक
,,	१७	करवा	करवो
,,	२०	करवा	करवो
,,	२२	अजीवोनो	अजीवनो
,,	२४	अजीवोनो	अजीवनो
,,	२६ २७	तेनो स्वामीमात्र वस्तुना एटले ए पण	×
,,	२७	शुद्धतर	अशुद्धतर (अहीं हारिभद्रीय आवश्यकमां 'शुद्धतर' एवो पाठ छे, पण ते अशुद्ध छे विशेषावश्यक भाष्य गाथा २८८० मां 'अशुद्धतर' एवो पाठ छे आ पाठ बराबर छे)
,,	२९	मते ते नमस्कार	मते नमस्कार
१२०	१	खओवसमो	खओवसमे
,	४	पण शब्द नथी।	×
,,	७	कारण	×
,,	११	कर्मोने	कर्मोनो
,,	१४	सर्वघाती स्पर्धको सर्व	सर्व सर्वघाती स्पर्धको
,,	१	देशघाती स्पर्धकोना अनंतमा	विशुद्धिनी अपेक्षाए देशघाती स्पर्धकोना क्षय पामता अनंतमा
,,	२१	ज्ञानावरण कर्मोमांथी	×
,,	२४	आवश्यक छे।	आवश्यक छे,
,,	२४	मिथ्यात्वकर्मना	मिथ्यात्वमोहनीयकर्मना
,	२५	आत्मस्वरूप	श्री नमस्कार महामंत्र
,,	२६	मिथ्यात्वनो ... अथवा	सम्यक्त्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय अने मिथ्यात्व मोहनीयकर्मनो (अर्थात् दर्शनत्रिकनो)
१२०	१२	सिद्धिलशिलामां	सिद्धशिलामां
,,	१६	एवा स्थानने प्राप्त थया	×
१२०	११	नमीने	नमेलो हुं
,,	२३	प्रकारे	प्रकार
१३१	१२	रागद्वेषकषाए ... वुच्चति ॥	रागद्दोसकसाए, इंदिआणि य पंचवि। परीसहे उवसग्गे, नामयंता नमोऽरिहा ॥
,,	१२	मुदल्लाओ	मुद्दल्लीओ
१३३	८	उवग्ग	उवसग्ग

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३५	४	सिज्ज्ञ°	सज्झ°
१३६	८	ने	ते
१३९	१८	तपासनी	तापसनी
१४१	९	अलेहे³	अ लेहे³
१४६	१	धणु त्ति भागो अ कोस छब्भाओ	धणुत्तिभागो अ कोसछब्भाओ
,,	४	जइ	जह
,,	६	तम्मी	तम्मि
,,	१२	त्रणसो ने तेत्रीश धनुष्यनो	त्रणसो ने तेत्रीश धनुष्य अने एक धनुष्यनो
१४७	१	धणु त्ति भागो	धणुत्तिभागो
,,	५	साहीआ	साहिआ
,,	२९	श्रुतमा	सामान्य श्रुतमा
१४८	१७	तेवा	तेना
१४९	१	जाणती	जाणंति
,,	१०	द्रव्योना	पदार्थोना
,,	११	दर्शने वडे चारे बाजुएथी	दर्शन वडे सर्वत्र सपूर्णपणे
१५०	१५	बधाये समयने एकत्रित करवामा	सर्वकालना समयथी गुणवामा
१५१	४	अणुहुती	अणुहुंति
१५२	१५	आचरणा करे	आचरणा करे अने करावे
,,	२३	एकभाविक	एकभविक
,,	२५	भावाचार्य	द्रव्याचार्य
,,	२५	ते लौकिक	भावाचार्यना लौकिक
१५३	४	पुमो	पुणो
,,	२५	'उप्'	'उप् + अधि'
१५४	२	उवझाया	उवज्झाया
,,	८	कीरमणो	कीरमाणो
,,	१५	ते सूत्ररूप द्वादशाग	ते द्वादशागने सूत्ररूपे
१५५	८	हुती	हुंति
,,	१३	करेलो	उपाध्यायने करेलो
१५६	२	सदायकिच्चुज्जयाण	सदा य किच्चुज्जयाण
,,	२५	करेलो	साधुओने करेलो
१५७	९	संसारवर्ती आचार्य,	ससारवर्ती अरिहंत, आचार्य अने
१५९	१९	बंनो	बंने
१६०	२	सकुल°	सुकुल°
,,	८	ए शुभ	ए नमस्कार करनार जीवो शुभ
,,	१०	तेनी	तेनी अभिरतिनी
,,	१०	सिद्ध	सिद्धि
१६५	२२	'तालप्रलंब'	'तालपलंब'
,,	२३	तालवृक्षने… ..पण	तालवृक्षादि
,,	२४	(तोड्या विना अथवा कापेला)	(तोड्या विनाना अथवा न कापेला)
,,	२५	'तालप्रलंब'	'तालपलंब'

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६६	१	अणियोग	अणुयोग
,,	१७ १८	तेमां 'भू' कहे छे।	तेमां धातु 'भू सत्तायां' वपराय छे। ते (धातु) सकल अर्थवाचक शब्दोनुं मूळ कारण छे।
,,	२८	शब्दना	शब्दोथी
१६७	२	अज्ञानन्धनानि	अज्ञानान्धनानि
,,	२	उत्तमथल्म्	उत्तमथमल्म्
,,	४	द्रव्व	द्रव्य
,,	१३	करे, घात करे,	करे, हनन करे, घात करे
,,	१७ १८	साद्र अने कठण स्वरूप	घन अने कठिन रूपे
,,	२२	अथवा	अने
,,	२६	करे	करावे
,,	३२	जेनी द्वारा	जेथी
,,	३२	जे करता	जेमां
१६८	५	अणिओग	अणुयोग
,,	११	जिनेंद्र	जिनेंद्र
,,	३१	होवा छतांये	होय त्यारे
१६९	८	मिथ्याविरति-	मिथ्यात्वाविरति-
,,	१४	थनारा	थतो
,,	२९	बनी	घटी
,,	३२	बनी	घटी
१७०	२	लब्धगस्या°	लब्धस्या°
,,	२५	शरासारना	×
,,	२७	बराबर	सिद्ध
,,	३१	छद्मस्थ अर्थात् अल्पज्ञानीओनां	छद्मस्थनां
१७१	४	दशना°	दर्शना°
,,	२१	समीचीनता आवी शकती नथी, अने समीचीनता	सम्यक्त्व आवी शकतुं नथी अने सम्यक्त्व
,,	२८	मावि	मत्य
१७२	१४	नथी	नथी, तेथी माहात्म्य अनंतगुणुं छे।
,,	२२	'जिनेन्द्रदेवने नमस्कार थाओ'	'णमो जिणाणं'
,,	२६	परमेष्ठी	×
,,	३२	मंगल विनयने करीने पण	मंगल अने विनयने करीने
१७३	३	लड्डुपारया	लड्डु पारया
,,	७	मप्यानवाने	मध्येऽवजाने
१७४	१८	आ सूत्र नथी। आर्थी	आ पद्गत्याख्यान सूत्र नथी। ते
,,	२६	बनावनारा	वपराय
,,	२८	परंतु	अने
१७५	३	सत्वेनाम्मय	सत्वेनास्मात्
,,	४५	पदपरनारतीयसीतान°	पदपरनारदेयान°
,,	२३	आचरण कर्म	आचारक कर्म,

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७६	९	°सम्यक्त्वदान–	°सम्यक्त्व–दान–
,,	१०	णिद्दड्ढ°	णिद्धड्ढ°
,,	१०	वित्थिण्णाणाणसा°	वित्थिण्णाण्णाणसा°
,,	१२	तीहि	तिहि
,,	१६	मादक	माफक
,,	१८	पूजाने योग्य	पूजाने (अथवा अतिशय अने पूजाने) योग्य
,,	१८	अर्हन्	'अर्हन्'
,,	१८-२१	केमके. ...समजवी जोईए।	देव, असुर अने मनुष्योने प्राप्त थयेली पूजाओथी च्यवन, जन्म, दीक्षा, केवल अने निर्वाण ए पाच कल्याणकोमा देवोए करेली पूजाओने अथवा अतिशयोने योग्य होवाथी 'अर्हन्' कहेवाय छे। (अथवा–देव, असुर अने मनुष्योने प्राप्त थयेल पूजाओथी च्यवन, जन्म, दीक्षा, केवल अने निर्वाण ए पाच कल्याणकोमा देवो वडे करायेल अधिक अतिशयवाळी पूजाओने योग्य होवाथी 'अर्हन्' कहेवाय छे।)
,,	२२	अनंतज्ञान,	प्रगट थयेल अनतज्ञान.
,,	२३	प्रगट थता	×
,,	२४	अहीं	अहीं ज
,,	२५	रह्या	रह्या
,,	२७	गया	रह्या
,,	२९	दोषोनी	दोषरूप
,,	३१	समुद्रमाथी	समुद्रने
१७७	२४	होता ?	होतो ?
,,	२५	सत्त्व	सत्ता
,,	२८	सत्त्वरूप	सत्तारूपे
,,	३०	सत्त्वनी	सत्तानी
१७८	१५	स्वभावनुं	स्वभावनो
,,	१६	गुणनुं	गुणनो
१७९	५	वहि	वहिः
,,	१३	जमणे	जेमणे
,,	१४	लीधा छे, जे	लीधा छे, जेओ वज्रशिलाथी निर्मित अभग्न प्रतिमानी जेम अभेद्य सस्थान (आकृति) वाळा छे, सर्व अवयवो वडे जेओ
,,	१५	सपूर्ण	सर्व
,,	१५	जे	तेओ (सिद्धो)
,,	१६	ते सिद्ध छे	×
,,	२१	समुद्र समान	समुद्रनी जेम
,,	२९	फलायेली	फेलायेली
,,	२९	आचरण	(दोषोनुं) स्मारण

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८०	२	सग्रहानुग्रह°	सग्रहनिग्रह°
,,	८	मिय पसु	मियपसु
,,	८	सूरुप्पि	सूर्यादि
,,	१८	अनुग्रह	निग्रह
,,	२४	पराक्रमी	दुर्धर्ष
,,	२४	स्वाभिमानी अथवा उन्नत	कमशत्रु प्रत्ये शूर
,,	२४	महाप्रकृति	महानतोना भारने वहन करवामा समर्थ
,,	२५	मृग समान सरळ, पशु समान	मृग पशु समान
,,	२५ २६	नथी विचरनारा	सर्वत्र अप्रतिबद्ध विहारवाळा
,,	३०	वसतिका	वसति
,,	३२	संपूर्ण	सर्व
१८१	७	,,	,,
,,	१४	,,	,,
,,	१८	सिद्धि	सिद्ध
,,	२१	ज्यारे	जो
,,	२४	स्थित	×
,,	२५	अग्रगर, बीजु आवरण	अग्रगर अने आवरण
,,	२६	जराथी आविर्भाव	जरायी रत्नाकरोनो आविर्भाव
,,	२६	एम	×
,,	२७	अग्रगर रत्नोना वारीना	रत्नोना वार्वीना अग्रगर
,,	३०	येनल	×
१८२	७	मंजातथैनत् प्रमाग°	मनातथैतत्प्रमाग°
,,	१८	रहेता	हाना छता
,,	२०	सिद्धोमा	सिद्धा विषे (आत्मोमा)
,,	२१	अधिकाना कारणे	अधिकना उत्पन्न करनार
१८३	३	धम्मपद	धम्मपद
,,	८	धम्मपान	धम्ममाग
,,	०	[illegible]	[illegible]
१८४	३	अहन्नमस्कारावलिका	अर्हन्नमस्कारावलिका
,,	६	°मगूच्य अनगार°	[illegible]°
,,	१८	[illegible]	पग
,,	१०	रहेता [illegible]	पग
,,	२०	[illegible]	प[illegible]
,,	२१	[illegible]थी [illegible] एवा	[illegible] (महान गुरुना) [illegible]
,,	२४	[illegible] (गुरुना) [illegible]	सुविरम
,,	२७	शिखरमा	शिखर पर
,,	२७	सिंहासन उपर	सिंहासनथी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७८	१२	पञ्चपुप्फाणि	पञ्च पुप्फाणि
,,	१	कमल	मकर
,,	२१	कुमार	कुमार
,,	३२	पुसम्मि	पुसम्मि
,,	७	" ॐ जूँस "	ॐ जूँ स
२७९	२१	सिवरहि	सियवरेहि (सियमुरहिं)
,,	३३	तस्से य	तस्सेया
,,	३६	अवयरिणिऊण	अवयरिऊण
२८०	२	एहोहि	एहि एहि
,,	६	हु	हुँ
,,	८	पूया	पूय
,,	१३	सुवर्णादिशान्	सुवर्णावतान्
,,	१५	°धिष्ठिना	°धिष्ठिना
२८१	१	वागश्वरि	वागीश्वरि
,,	१	ईश्वरा	ईश्वरी
,,	४	ह्रौ ह्रौ	(ह्रौ ह्रौ)
,,	९	हस	हस
,,	१०	नामी°	नाभि°
,,	११	वैतत्°	वेत°
,,	११	हृदि विरुचता	हृदि च विरुचता
,,	२३	वकारा	वरा (निधय)
,,	२७	स्वनारेण	स्वामद्वारेण
,,	२८	भूरुवि	भूरिवि
,,	२१	वामस्नाचिरा	वामस्नाचिरां
,,	३१	°तुद्रा	°मुद्रया
२८२	१	(स्वेते) स्मारय	(स्वर) अमृत स्मारय
,,	१	स	सँ
,,	७	फ पमा (?)	फल्गुणा
,,	८	पूआ	पूआ
,,	१०	माणुतर्दि	मारयतुडि
२८३	१२	अद्दुल	अद्दुलरा
,,	१६	जिणओ	जिणउ
,,	२१	निर्णिर्दि	णवरणि
२८४	३	अग°	असरा
,,	८	तिमिरंजणाआ	तिमि मराआ
२८	१	गुरुवमिणो	गुरुविम्मा
२८६	०	मयागाहार	मयानाहार
२८७	३	योहिंपुप्पमुणान	सासनूपुममुणां
२९०	११	सव पोणाय	सव पोणाय

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३३३	२८	प्रसिज्झउ	पसिज्झउ
,,	२०	"ॐ अवतर सोमे	"ॐ अवतर, अवतर सोमे
,,	२१	ॐ वग्गु निवग्गु	ॐ वग्गु वग्गु निवग्गु
३३४	२	°गणधारा°	°गणधरा°
,,	४	अक्षरप्रमाण	अक्खरपमाण
,,	१६	निक्खत्त	णिक्खत्त
३३५		भावनमस्कार	भावनमस्कार
,,	८	त्रैलोक्यद्रव्य°	त्रैलोक्य द्रव्य°
,,	१२	भविष्यभेदेन	भविष्यन्भेदेन
,,	२१	ह्रानिरुद्ध	ह्रौँनिरुद्ध
,,	२०	धनाय	निधय
३३६	१२	भवसिद्धि य पुरिसाण	भवसिद्धियपुरिसाण
,,	१३	भवसिद्धि य महिलाण	भवसिद्धियमहिलाण
,,	१६	हल	टग
,,	२८	द्वितीयेऽपि	द्वितयेऽपि
३६९	-	त्रिनियन्त्रै	वि त्रिनत्रै
,,	१८	निर्व्यो	पण
,,	२४	नो कायों पग	निपम काया पग
३७०	१	बसता,	बसता, ऊभा, ऊभा रहेला,
३७२	१६	(आकारवाळो)	(प्रमाणवाळो)
,,	२०	(काय)	×
३७३	२४	मरण थाते	काग एवा सकण (सावधान पुरुष), मरण थाते
,,	२४	नमे ते सकण सावधान पुरुष	×
३७४	२	बरबद्ध	बन्नद्ध
३७५	१८	माळ करे छे	मगळु आगमन करे छे
३७७	१२	निगमम्मी जयमागम्मी	निगमम्मि नायमाम्मि
,,	२१	करवाथी	पामनार
,,	२६	मेळवे छे	मेळवे छे अने परे ते कमलि थाते सिद्धिगतिने पामे छे
३७८	६	अणुसुयता	सुम्मुनता
,,	९	उत्त पग सत्त य	सत्त पग सत्त सत्त य
,,	१०	दिग्गात्मिका	विभोत्थिग
,,	१०	टगागो ज्वा नितरे	निता उगाग नमना
,,	२६	पापगळने कहे छे	दूर करते छ पापमल नाशथी एवा तारना फळ कहे छ
३८०	२०	मनुष्यना	सहस्र पुरुषो मनुष्यना
३८२	३	नरस्तु तु	मरस्तु एतु
,,	४	गाइ अने मारी	गाय अने मार्ग
३८३	११	ऽद्धि°	°धि

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४००	११	द्विकगगनस्य	द्विकगगस्य
४०१	१	३१४-२	२१४ २
,,	१८	१४२५३	१४३५३
,,	१०	३१५४३	३१५४२
,,	२२	५२१३४	५३१४२
,,	२३	५४१४२	५३१४२
,,	२८	४५१ ३	४५१२२
४०२		सवप्रथम	(सत्र) प्रथम
४०४	७	५०।४०।	५०४०।
४०६	१२	तत　　स्थाप्य ।	×
४०७	१०	द्विकास्तत	त्रिकास्तत त्रिक-द्विक-एका तत
,,	१०	त्रिका,	एका,
४०९	३	अत्यान्यस्तम्या	अन्त्यान्यतम्या
,,	२०	त्रिशानम	त्रिंशत्तम
४१०	२	लब्ध	[illegible]
,,	१४	पद्भ्यो वेकमपि	पद्भ्यानेकमपि
४११	१०	[१७]	[१८]
,,	१२	३,४,५।	४, ३, ५।
४१५	१८	४ ५ १ ३ २।	४ ५ १ ३ २।
४१८	६	वर्मिन्या	वर्जितया
,,	२०	२×२=२	२×१=२
४१०	४	पाश्चनु	पश्चानु
,,	१७	द्वितीय कोष्ठकनु	तृतियकोष्ठकेनु
४१७		आय	आर
,,	४	आय	आर
,,	१२	४२०	७२०
४१९	३	स्थित प्रकार एव प	×
४२०	१	४, ५।	५, ४।
,,	२७	काउओनी	काढाआनी
४२४	२४	मद्य	मद्य (नी गराव असरा)
,,	२७	अभिगारी,	×
,,	२८	सागरचिना	सागरचिना अभिगारी
,,	२९	सुगारग	भेदस्कर
४३	२	ज्ञानिश	[illegible]
,,	२०-२१	(चनेभगी यगेर) प्रकार—	(चाभरी धार)ना पानग पगुन्ना थी गद्गुरुना पुरेयी रपणी परशु। भार ९ं पत्न (गा मन) नो प्रकार छ—
,,	२०	सिगाहनाय	[illegible]
,,	२७	देयताये	भरियाये

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४८३	२२	मोगानठीकमने	भोगकमने
,,	२२ २३	चारित्ररूप छे	चारित्रनो अगीकार करे छे
,,	२४	उपयागी	उपयोगवाळा
,,	२८	सुरनायसो	सुरखो
,,	१	१ चमचक्षुथी करे छे।	१ श्री अरिहंत भगवानना आहार अने निहार चमचक्षुवाळा जोई शकता नथी।
,,	३२	३ तेओ धारण करे छे।	३ तेओनु मांस अने रुधिर गायना दूधनी धारा जेवु श्वेत होय छे।
४८४	२६	प्रकृतिओने	कर्मप्रकृतिओने
,,	२९	शरीरना	शरीरनी अवगाहना (देहमान)थी
,,	३०	अवगाहनावाळा	अवगाहनावाळा थईने
,,	२९ ३०	अग्रभागे छे	अग्रभागे पाम्या छे
४८६	१०	पण ज्ञानीपुरुषो	केवली भगवंतो पण
४८७	२४ २	जे सारणा, पडिचोयणा वडे	जेओ स्मारणा (कोईने विस्मृति थता तेने स्मृति करावनी), वारणा (अशुद्ध मार्गथी वारवु), चोयणा (अध्ययनादि माटे प्रेरणा करवी) अने प्रतिचोयणा (प्रसगवशात् कठोर वचनादि वडे पण प्रेरणा करवी) वडे
४८८	१८	सुत्तधारया	सुत्तधारए
,,	२२	जेओ ससारना	जओ आ ससारमा
,,	२८	[illegible]	धारक
४८९	१३	°मगा°	°मग्ग°
४९०	२१	अक्षररूप	वर्णरूप
,,	२८	प्राप्त करवाना छे	माटे योग्य
,,	३२	स्थान,	एकीभावने प्राप्त (मिश्रित) स्थान,
४९१	१	शाइअधम्म सुरशाणा	शाइअधम्मसुरशाणा
४९२	२१ २२	सत्तर प्रकारना वन्न [illegible] ॥ १२६२ ॥	सत्तर प्रकारना [illegible] देहवाळा अने [illegible] हजार [illegible] वन्न [illegible] साधु भगवन्तो [illegible] ॥ [illegible] ॥
४९	२ २६	(अलौकिक मारो	(अलौकिक सौभाग्य [illegible] [illegible]
,,	२०	[illegible]	[illegible]
४९६	११	[illegible]	[illegible]
,,	[illegible]	संसार	[illegible] संसार
,,	[illegible]	[illegible]	[illegible]
,,	[illegible]	मुनिओ [illegible] छे	मुनिगण [illegible]